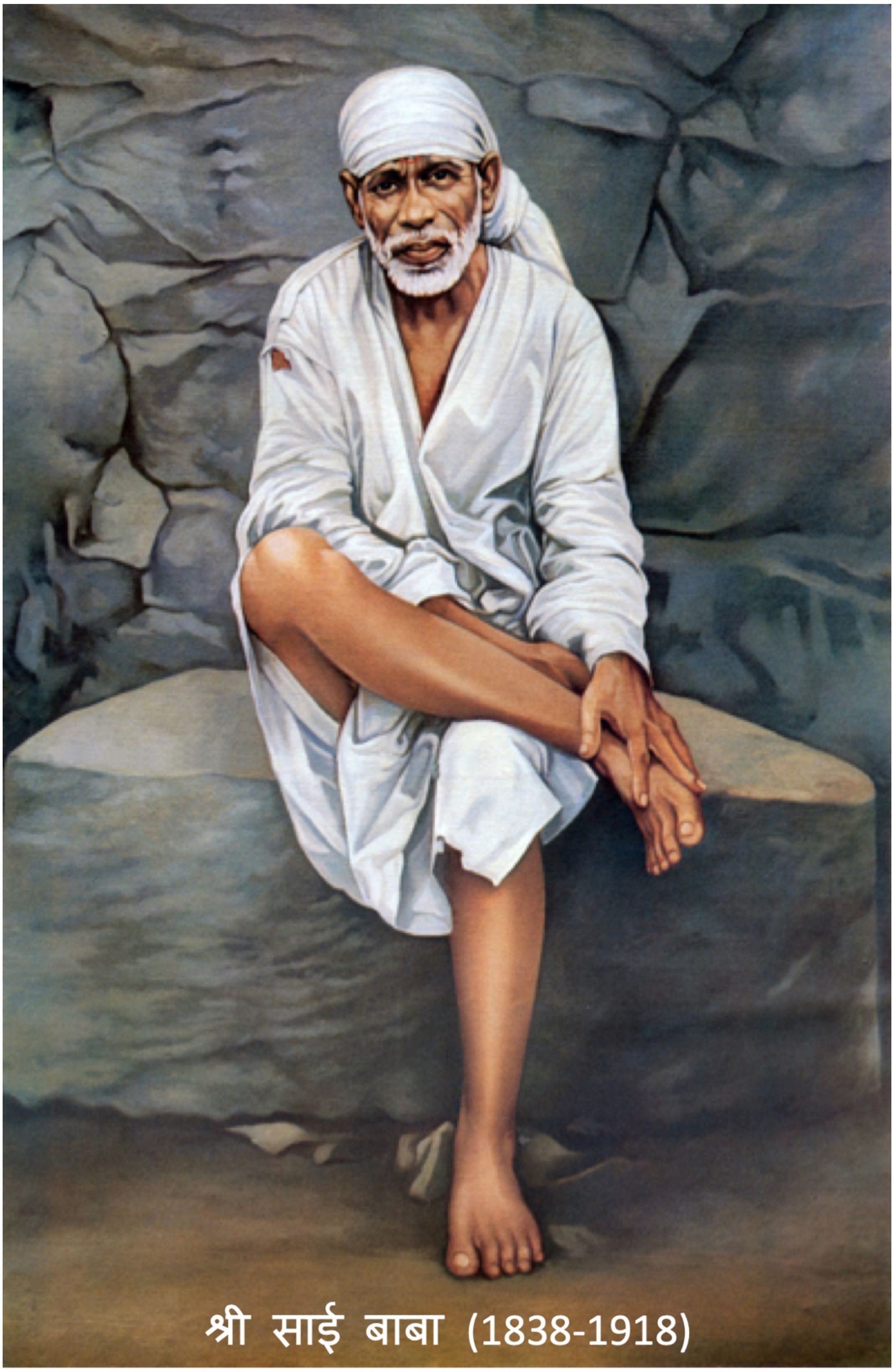
श्री साई बाबा (1838-1918)

कै० श्री गोविन्दराव रघुनाथ दाभोलकर

(1856-1929)

कृत

श्री साईसच्चरित

हिन्दी अनुवाद,

द्वारा

चन्द्र प्रकाश सिंह,

न्यासी, श्री साईबाबा कर्मयोगभक्तिज्ञान संस्थान,

आशियाना, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

तकनीकी सहाय्य

डा० प्रिन्स शैवाल सिंह,

पी. एच. डी. कार्नेगी मेलन यूनिवर्सिटी, यू. एस. ए.

प्रकाशक

श्रीमती माधुरी सिंह,

प्रबन्ध न्यासी,

श्री साईंबाबा कर्मयोगभक्तिज्ञान संस्थान

(लोक धर्मार्थ न्यास)

जे-44, आशियाना कालोनी, लखनऊँ, उत्तर प्रदेश, भारत

+91 9415789869, +91 9415789888

Web: shrisaibabatrustlko.org

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका......5

श्री साईसच्चरित (श्री साईंबाबा की जीवनी व शिक्षाएं)......9

प्राक् वक्तव्य,......11

लेखक का वक्तव्य-......13

// अथ श्री साईसच्चरित प्रारम्भ (मंगलाचरण) //......15

// अध्याय दूसरा (कथा प्रयोजन, नामकरण)//......24

// अध्याय तीसरा (ग्रन्थप्रयोजनानुज्ञापन)//......35

// अध्याय चौथा (श्री साईं समर्थ अवतरण)//......45

// अध्याय पांचवा (श्री साईपुनःप्रकटीभवन)//......56

// अध्याय छठवां (श्रीराम जन्मोत्सवादि कथन) //......64

// अध्याय सातवां (विविध कथा निरूपण)//......72

// अध्याय आठवां (श्री साई समर्थावतरण) //......79

// अध्याय नवां (आज्ञावज्ञाविघ्नपंचसूनादिपातकक्षा तथा भक्ततर्खड कथा निरूपण) //......87

// अध्याय दसवां (श्री साई समर्थ महिमान) //......95

// अध्याय ग्यारहवां (श्री साई महिमा वर्णन) //......103

// अध्याय बारहवां (श्री संत घोलप- रामदर्शन) //......111

// अध्याय तेरहवां (भीमाजी क्षय निवारण) //......122

// अध्याय चौदहवां (रतनजी-साई समागम) //........133
// अध्याय पन्द्रहवां (चोळकर शर्कराख्यान) //........144
// अध्याय सोलहवां (ब्रह्मज्ञान कथन) //........150
// अध्याय सत्रहवां (ब्रह्मज्ञान कथन) //........161
// अध्याय अट्ठारहवां (मदनुग्रह) //........170
// अध्याय उन्नीसवां (मदनुग्रह) //........179
// बीसवां अध्याय (ईशावस्य भावार्थ बोधन) //........192
// इक्कीसवां अध्याय (अनुग्रह करण) //........199
// बाइसवां अध्याय (अपमृत्यु निवारण) //........206
// तेइसवां अध्याय.(गुरु भक्त लीला दर्शन) //........217
// अध्याय चौबीसवां (विनोद विलास) //........229
// अध्याय पच्चीसवां (भक्ताभीष्ट संपादन)//........238
// अध्याय छब्बीसवां (अपस्मारात्म हत्या निवारण तथा निज गुरुपद स्थिरीकरण) //........246
// अध्याय सत्ताइसवां (दीक्षा अनुग्रह दान) //........253
// अध्याय अठ्ठाइसवां (दृष्टान्त कथन) //........264
// अध्याय उन्तीसवां (स्वप्न कथा) //........276
// अध्याय तीसवां (नवसादिकथाकथन) //........287
// अध्याय इकत्तीसवां (दर्शन महिमा)//........294
// अध्याय बत्तीसवां (गुरुमहिमा वर्णन) //........303

// अध्याय तैंतीसवां (उदी प्रभाव) //...313

//अध्याय चौंतीसवां (उदी महिमा) //...327

// अध्याय पैंतीसवां (चिकित्सा खंडन-विभूति मंडन)//.......................................337

// अध्याय छत्तीसवां (साई सर्वव्यापकता तदाशीर्वचन साफल्यता) //..............350

// अध्याय सैंतीसवां (चावडी वर्णन) //...360

// अध्याय अड़तीसवां (हांडी वर्णन) //..373

// अध्याय उन्तालिसवा (गीता विशिष्ट श्लोकार्थ निवेदन तथा समाधि मन्दिर निर्माण) //..383

// अध्याय चालीसवां (उद्यापन कथा कथन) //...394

// अध्याय इकतालिसवां (साईं कृपा अनुग्रह दान) //......................................404

// अध्याय बयालीसवां (श्री साईंनाथ निर्याण)//..414

// अध्याय तैंतालिसवां(श्री साईंनाथ निर्याण) //...423

// अध्याय चौवालीसवाँ (श्री साईंनाथ निर्याण) //..434

// अध्याय पैतालीसवां (श्री गुरुचरण महिमा) //...445

// अध्याय छियालीसवां (काशीगयागमन अजाजन्मकथन) //............................453

// अध्याय सैतालीसवां (श्री साईंमुखश्रुत कथाकथन)//......................................461

// अध्याय अड़तालीसवां (साशंकभक्तानुग्रह करण) //.......................................472

// अध्याय उन्चासवां (संत परीक्षण - मनोनिग्रहण) //......................................482

// अध्याय पचासवां (अज्ञाननिरसन)//...493

// अध्याय इक्यावनवां (भक्तत्रयवृत्तकथन) //...506

// अध्याय बावनवां (ग्रंथ सिंघावलोकन)// *520*

// अध्याय तिरपनवां (अवतरणिका) // *526*

// श्री सद्गुरु साईं बाबा के वचन // *538*

श्री साईसच्चरित (श्री साईंबाबा की जीवनी व शिक्षाएं)

श्री साई सच्चरित एक पवित्र पोथी है। इसके प्रत्येक अध्याय में कर्म योग भक्ति व ज्ञान का मर्म, लेखक द्वारा चित्त में स्थिर करने का प्रयास किया गया है। इस ग्रंथ में 53 अध्याय व 9308 पद हैं। इसका प्रकाशन 1929 में पहली बार हुआ। इस पोथी के एक-एक मराठी शब्द का हिन्दी अनुवाद गद्य में पूर्ण निष्ठा के साथ करने का प्रयास किया गया है। इस ओवी पोथी का शुभारम्भ महाराज साईंनाथ के देहधारी रहते उनकी प्रत्यक्ष अनुज्ञा लेकर किया गया था, किन्तु इसका प्रकाशन लेखक श्री गोविन्दराव रघुनाथ दाभोलकर की मृत्यु के पश्चात् 1929 में हुआ |

श्रद्धेय माता जी स्वर्गीया श्रीमती मोदक देवी तथा पूज्य पिता जी स्वर्गीय श्री श्याम लाल सिंह की चिरस्मृति में समर्पित ----------

प्राक् वक्तव्य,

माननीय न्यायमूर्ति श्री के० एल० शर्मा जी

(पूर्व न्यायाधीश, उच्च न्यायालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत)

श्री साई सच्चरित नामक पुनीत ग्रन्थ श्री गोविन्दराव रघुनाथ दाभोलकर द्वारा मराठी भाषा में वर्ष 1929 में लिखा गया था, जिसका पाठन महाराष्ट्र प्रदेश के साईं बाबा के भक्तों द्वारा अत्यधिक सम्मान के साथ किया जाता है, परन्तु साईंबाबा के हिन्दी भाषी प्रान्तों में रहने वाले भक्तों के लिए इस पुनीत पोथी का हिन्दी अनुवाद परम भक्त एवं सरस्वती देवी के वरदान और प्रतिभा से सम्पन्न मेरे मित्र श्री चन्द्र प्रकाश सिंह द्वारा किया गया, जिसका प्राक् वक्तव्य लिखने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

श्री साईं सच्चरित नामक पुनीत पोथी के लेखक भक्त श्री दाभोलकर ने श्री साईंबाबा के जीवनकाल में ही उनकी अनुमति एवं आशीर्वाद प्राप्त करके 1922 के चैत्र मास में ग्रंथ का लेखन कार्य प्रारम्भ किया था और वर्ष 1929 के ज्येष्ठ मास में 52वाँ अध्याय पूर्ण किया, परन्तु इस पोथी का अन्तिम 53वाँ अध्याय उनके द्वारा नहीं लिखा जा सका क्योंकि 15 जुलाई, 1929 को श्री दाभोलकर जी का स्वर्गवास हो गया । इसलिए 53वाँ अध्याय श्री साईंबाबा के भक्त श्री बालकृष्ण विश्वनाथ देव ने लिखा जिसमें इस पुनीत पोथी के 52 अध्ययों का सरांश लेखबद्ध किया गया है। मूल लेखक श्री दाभोलकर जी इस ग्रन्थ

में श्री साईंबाबा के जीवन, कृत्यों, विचारों, उपदेशों और मूलमंत्र "सबका मालिक एक है", "मानवता सबका धर्म है" आदि का उल्लेख अपने भक्तिरस से सिंचित करते हुए जनमानस के समक्ष प्रस्तुत किया है। श्री दाभोलकर जी ने स्वयं अपनी अनुभूतियों को ऐसे मार्मिक ढंग से दर्शाया है कि भक्त गद्गद् हो जाते हैं और श्री साईंबाबा के दर्शन सहज हो जाते हैं।

श्री चन्द्र प्रकाश जी ने इस पुनीत पोथी का अनुवाद प्रामाणिक रूप से सरल हिन्दी भाषा में करके बहुत सराहनीय कार्य किया है, जबकि श्री सिंह को मराठी भाषा की औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं हुई है। श्री सिंह उत्तर प्रदेश सरकार में उप चीनी आयुक्त के एक वरिष्ठ पद के कर्तव्यों व दायित्वों को सुचारु रूप से निष्पादित करते हुए भी समय निकालकर इस पोथी का अनुवाद तीव्रगति और सफलता से कर दिखाया है, जिसके लिये मैं उन्हें कोटिशःबधाइयाँ देता हूँ। श्री सिंह और उनकी पत्नी श्रीमती माधुरी सिंह एवं उनकी पुत्रियाँ सभी श्री साईंबाबा के निष्ठावान परमभक्त हैं और श्री साईंबाबा का विशाल मन्दिर एक न्यास के अन्तर्गत लखनऊ में स्थापित किया है। यही कारण है कि श्री सिंह ने सबका सहयोग लेते हुए इस कठिन अनुवाद कार्य को बड़ी श्रद्धा और निष्ठा से इतना उत्तम किया है कि हिन्दी भाषी प्रान्तों के भक्तगण गद्गद् होकर इसे ही मूल ग्रन्थ समझ लेंगे। श्री दाभोलकर की मराठी भाषा में व्यक्त अनुभूतियों का अनुवाद बहुत ही मौलिक प्रतीत होता है जिसके लिये भक्तगण श्री सिंह की भूरिभूरि प्रशंसा करते रहेंगे।

मुझे आशा और पूर्ण विश्वास है कि श्री साई सच्चरित के अनुवाद से हिन्दी भाषी भक्तगण तथा जनमानस बहुत लाभान्वित होंगे तथा श्री साईंबाबा के मूल मंत्रों और उपदेशों के अनुसार कार्य करते हुए अपने जीवन को सुखी बनायेंगे है तथा मानव समाज का कल्याण करेंगे।

लेखक का वक्तव्य -

श्री साईं सच्चरित मार्ग दर्शक, कष्ट निवारक, आनन्दवृत्ति प्रदायक व ज्ञानबर्द्धक पावन पोथी है, जिसे कै० गोविन्दराव रघुनाथ दाभोलकर ने मराठी भाषा में लिखा है। श्री साईंबाबा के देहधारी रहते उनसे प्रत्यक्ष अनुज्ञा लेकर इस पोथी का शुभारम्भ किया गया था। लेखक स्वयं अनन्य साईंभक्त, कवि और वेदान्ती थे। वे दिनरात साईं चरणों में लीन रहते थे। लेखक को ग्रन्थ प्रारम्भ करने की अनुज्ञा देते हुए बाबा ने कहा था-

"………. कथा, वार्ता, अनुभव आदि का वास्तविक संग्रह करें ।। 75-2 ।। संग्रह करना अच्छा होता है, उसमें मेरा सहयोग है। यह तो केवल निमित्त मात्र है, मैं अपनी कहानी स्वयं लिखूगा ।।76-2।।"

श्री साईंबाबा धर्मों से परे हैं, सच्चिदानन्द । उनका स्मरण करने मात्र से उनकी प्रत्यक्ष उपस्थिति की अनुभूति होती है। अपने-अपने कर्मों का फल निश्चित व्यवस्था के अन्तर्गत भोगने के लिये हम बाध्य हैं। फिर साईं किस लिये ? साईं इसलिये कि संकट में जब बुद्धि भ्रमित हो जाती है, मार्ग अस्पष्ट हो जाता है, भय और निराशा से जीव त्रस्त हो जाता है, तब साईं के स्मरण मात्र से एक शक्ति का स्फुरण होता है, जो भ्रम, अस्पष्टता, भय व निराशा को समूल नष्ट करके जीव को सम्बल प्रदान करती है। यह शक्ति है परमात्मा, अल्लाह या गॉड, जो इन्द्रियातीत है, बुद्धि से परे मात्र एहसास ।

असंख्य अनुभूतियाँ असंख्य लोगों की हैं। वे शरीरी थे तब भी लोगों ने उनमें प्रकृति को अनुशासित करते पुरुष विशेष को देखा था और अब जब उन्हें समाधि लिए इतने वर्ष बीत गए हैं, तब भी परमात्म स्वरूप में जीवों पर कृपा करते रहते, उनकी अनुभूति लोगों को होती हैं। उन्हें किसी दायरे में नहीं बाँधा जा सकता। सर्वव्यापकता, सर्वज्ञता तथा सर्वशक्तिमानता उनके सहज गुण हैं। सद्गुरु कहें, किन्तु किसी को दीक्षा नहीं दी, हिन्दू कहें तो मस्जिद में आजीवन रहे "अल्लाह मालिक' जपते हुए, मुसलमान कहें तो अग्नि पूजा आजीवन करते रहे और संसारी कहें तो सर्वव्यापकता, सर्वज्ञता व सर्वशक्तिमानत कैसे। उन्होंने सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रहमचर्य तथा अपरिग्रह को प्रेम की अंजलि में भर-भर कर ऊदी के रूप में खूब बाँटा और दक्षिणा के रूप में श्रद्धा व सबूरी की अपेक्षा की।

मूल मराठी पोथी में प्रस्तुत कर्मयोगभक्तिज्ञान रूपी खजाने को हिन्दी भाषी भक्तों को उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इसका हिन्दी अनुवाद, इस प्रकार, करने का विनम्र प्रयास किया गया है कि भाव में कुछ भी दोष न आने पाये। इसीलिए मराठी भाषा के उन शब्दों को जिनका प्रयोग संस्कृत अथवा हिन्दी में सर्वमान्य है बदलने से परहेज किया गया है। प्रारम्भ में मूल ग्रन्थ की भाषा व भाव को समझने में डा० इन्द्रा खेर द्वारा किया गया अंग्रेजी भाषा में अनुवाद अत्यधिक उपयोगी रहा । वस्तुतः इसी ग्रन्थ के अध्ययन के बाद हिन्दी अनुवाद करने की इच्छा मेरे मन में जागृत हुई। नमन करता हूँ उन्हें।

साईबाबा के अनन्य भक्त न्यायमूर्ति श्री के० एल० शर्मा के प्राक् वक्तव्य के लिए मैं विशेष रूप से उनका आभारी हूँ। मैं आभारी हूँ श्रीमती माधुरी सिंह प्रबन्ध न्यासी श्री साईं बाबा कर्मयोगभक्तिज्ञान संस्थान का भी, उनसे प्राप्त प्रोत्साहन व सहयोग के लिए | मैं अपनी पुत्रियों अदिति, देविका तथा मालविका का भी आभारी हूँ कि उन्होंने मेरा उत्साहबर्धन किया। इसके अतिरिक्त मैं उन सभी सज्जनों का भी कृतज्ञ हूँ जिन्होंने किसी न किसी प्रकार मन, वाणी वा कर्म से मुझे प्रेरणा दी । किन्तु इस पुनीत ग्रन्थ को आपके समक्ष प्रस्तुत कर पा रहा हूँ, तो मात्र सद्गुरु साईं नाथ की निष्ठुर करुणा के कारण। सतत् नमन है उन्हें -

ॐ साईनाथाय विद्महे, सच्चिदानन्दाय धीमहि, तन्नो सद्गुरु प्रचोदयात् ।।

------   श्री साईनाथ के प्रति बुद्धि श्रद्धायुक्त हो, सच्चिदानन्द के प्रति नैसर्गिक प्रवृत्ति हो, सद्गुरु   मुझे आगे बढ़ने के लिए बलपूर्वक प्रेरित करें।

।। अथ श्री साईसच्चरित प्रारम्भ (मंगलाचरण) ।।

श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।।श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरु साईंनाथ को नमन ।।

शिष्ट लोग कार्य प्रारंभ करने पर पहले, उसके निर्विघ्न समापन के लिए, इष्टदेवता का अनुग्रह प्राप्त करने हेतु, उनकी स्तुति करते हैं ।। 1 ।। सभी विघ्नों के निवारण तथा अभीष्ट की सिद्धि के लिए सभी देवताओं का अभिवंदन तथा स्तुतिगान करते हैं ।। 2 ।। पहले गणपति जी की वन्दना करते हैं, जो वक्रतुण्ड व हेरंब मूर्ति हैं, चौदह विद्याओं के अधिपति हैं, हाथी के मुख वाले मंगल आकृति के हैं ।। 3 ।। जिनके पेट में चौदह भुवन समाया हुआ है, इसीलिए उन्हें लम्बोदर कहते हैं, भक्तों के विघ्नों को छिन्न-भिन्न करने के लिए ही जो हाथ में तेज धारदार फरसा धारण किए हैं ।। 4 ।। हे ! विघ्न से उत्पन्न पीड़ा का शमन करने वाले गणों के नाथ गजानन ! मैं आपकी साष्टांग वंदना करता हूं। आप मेरे वचन को अपने प्रसाद से पूर्ण कर दें ।। 5 ।। हे ! भक्तों को संकट से उबारने वाले, विघ्न आपके पैरों के नीचे लुढ़कते हुए आ जाते हैं, आपके सन्मुख होने मात्र से दरिद्रता दूर भाग जाती है ।। 6 ।। तुम भवसागर से पार लगाने वाले पोत हो, अज्ञानता रूपी अंधकार के ज्ञानरूपी ज्योति हो । तुम अपनी ऋद्धि सिद्धि सहित मुझ पर कृपा दृष्टि करो ।। 7 ।। हे ! मूषक की सवारी करनेवाले, आपकी जय हो। विघ्नों के जंगल को नष्ट करने वाले, गिरिजानन्दन, मंगल मुख वाले, मैं आपका अभिवंदन करता हूं ।। 8 ।। निर्विघ्न समाप्ति हो, इसीलिए मंगलप्राप्ति के लिए मैं इष्ट देवताओं की शिष्टाचारयुक्त सादर वंदना करता हूं ।। 9 ।। यह साईं ही स्वयं गजानन गणपति हैं, यह साईं ही अपनी कहानी के पूर्ण होने के मार्ग के विघ्नों को स्वयं अपने हाथ में धारण किये हुए फरसे से काट देंगे ।। 10 ।। वे ही भालचन्द्र गजानन हैं, वे ही एक दांत वाले, हाथी कान वाले हैं, वे ही भयंकर भग्नदन्त हैं, वे ही विघ्नों के जंगल को काटने वाले हैं ।। 11 ।। हे ! सभी प्रकार के मंगल प्रदान करने वाले मंगलमयी, लम्बोदर, गणराया, अभेदरूप करुणामय साईं अपने परमसुखधाम की ओर मुझे ले चलो ।। 12 ।। अब मैं ब्रहमकुमारी सरस्वती को नमन करता हूँ, जो अपनी कला एवं प्रवीणता के साथ मेरी जिहवा पर ऐसे अवतरित हों जैसे अपनी सवारी हंस पर आरूढ़ होती हैं ।। 13 ।। देवी

सरस्वती, शुभ वस्त्र धारण किये हुए, हंस वाहन हैं जिनका, जिनके माथे पर आरक्त कुमकुम की छोटी बिन्दी शोभायमान है, जो हाथों में ब्रह्मवीणा लिये हैं, मुझ पर कृपा दृष्टि करें ।। 14 ।। जब तक वाग्देवता जगन्माता प्रसन्न नहीं होती, तब तक क्या कभी साहित्य या कला, कविता या कहानी किसी के ऊपर कृपादृष्टि कर सकती है। और उसकी कृपा के बिना क्या मैं साईं की यह कहानी लिखने का साहस कर सकता हूं ।। 15 ।। यह जगजननी ही वेदमाता हैं। वे वास्तव में गुणों व विद्या की सरिता हैं। साईं समर्थ चरित्र अमृत है। इसका अमृतपान सभी मेरे हाथ से करें ।। 16 ।। साईं स्वयं भगवती एवं सरस्वती हैं, ॐकारवीणा धारणकिये हुए, भक्तों के उद्धार के लिए अपने जीवन चरित्र का स्वयं मान करते हैं ।। 17 ।। उत्पत्ति, स्थिति व संहार तथा रज, सत्व व तम गुणों के प्रतीक ब्रह्मा, विष्णु व शिव को नमन हैं ।। 18 ।। हे स्वप्रकाश साईंनाथ ! तुम्ही हमारे गणाधीश, सावित्रीश (ब्रह्मा) या रमेश (विष्णु) अथवा उमेश (शिव) तुम्ही हो ।। 19 ।। तुम्ही हमारे सद्गुरु हो, तुम्ही भव रूपी नदी की नाव हो । हम भक्तगण, नाव पर बैठे यात्री, अनुनय करते हैं कि हमें उस पार लगा दो ।। 20 ।। अपने पूर्वजन्मों के कुछ सत्कर्मो के अच्छे गुणों के बिना , हम तुम्हारे चरणों से, जो हमारे एक मात्र आश्रय है, कैसे जुड़ते ।। 21 ।। अब मैं अपने कुलदेवता आदिनाथ "नारायण" को नमन करता हूं, जो क्षीर सागर में निवास करते हैं तथा सभी के दुःखहर्ता हैं ।। 22 ।। परशुराम द्वारा समुद्र को पीछे ढकेल देने से नवीन भू भाग सृजित हुआ उसे “कोंकण” प्रांत जाना गया, वहीं “साईं नारायण” प्रकट हुए ।। 23 ।। जो नारायण जीवों के हृदय में रहकर उन्हें नियंत्रित करते हैं, कृपादृष्टि से संरक्षण करते हैं, मैं उन्हीं की प्रेरणा के आधीन हूं ।। 24 ।। महान यज्ञ के सफल आयोजन के लिए जिन महामुनि को, भार्गव (परशुराम) गौड़ देश (बंगाल) से लाये थे, उन हमारे मूल पूर्वज को सादर नमन है ।। 25 ।।अब मैं गोत्र स्वामी ऋषि राज भारद्वाज को नमन करता हूँ जो ऋग्वेद की शाकल शाखा से संबंधित थे और आद्य गौड़ ब्राहमणों के पूर्वज थे ।। 26 ।। पुनः धरती पर अमर, परब्रह्म के अवतार ब्राहमणों, तत्पश्चात याज्ञवल्क्य, भृगु, पराशर तथा नारद आदि योगीश्वरों को नमन करता हूं ।। 27 ।। पाराशर वेदव्यास, सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, शक, शौनक सूत्रकार विश्वामित्र तथा वशिष्ठ ।। 28 ।। बाल्मीकि, वामदेव, जैमिनी, वैशंपायन के साथ-साथ नवयोगीन्द्र आदि मुनियों के चरणों में साष्टांग प्रणाम करता हूं ।। 29 ।। अब मैं निवृत्ति, ज्ञानेश्वर, मुक्ता, सोपान, एकनाथ, स्वामी जनार्दन, तुकाराम, कान्हा,नरहरि, संतसज्जनों की वन्दना करता हूं ।। 30 ।। सभी संतों का नामोल्लेख करने के लिए यह ग्रंथ पर्याप्त नहीं है। अतः मैं सभी

को प्रणाम करता हूं तथा आशीर्वचन हेतु प्रार्थना करता हूं ।। 31 ।। अब मैं अपने पितामह सदाशिव को नमन करता हूं, जो संसार को व्यर्थ मानकर पुण्य प्रभाव से बद्रीनाथ व केदारनाथ में अन्त समय तक रहे ।। 32 ।। फिर अपने पिता को नमन करता हूं जिनके आराध्य देवता शिव थे, कंठी रुद्राक्ष धारण करते हुए सदा भगवान शिव की आराधना करते रहे ।। 33 ।। पुनः जन्मदात्री माँ की वंदना करता हूं, जिन्होंने स्वयं रात दिन कष्ट सहकर मेरा पालन-पोषण किया, उनका उपकार कैसे चुका सकता हूं ।। 34 ।। बचपन में मुझे छोड़कर मेरी माँ चली गयीं । मेरी चाची ने तब अत्यधिक कष्ट से मेरी देखभाल की । उनके चरणों में मैं अपना माथा रखता हूं, जो हमेशा ईश्वर का ही स्मरण करती रहती थीं ।। 35 ।। अपने ज्येष्ठ भ्राता के प्रति कृतज्ञ हूं, जिनकी सहोदरता अनुपम थी, जो मेरे लिए अपना प्राण स्वेच्छा से त्याग सकते थे, उनके चरणों पर मेरा माथा है ।। 36 ।। अब श्रोतागण को नमन है। आपके मन की एकाग्रता के लिए प्रार्थना करता हूं, स्वयं की असावधानी के रहते हुए संतुष्टि कैसे संभव है ।। 37 ।। जब तक चतुर गुणज्ञ श्रोता कथा श्रवण के लिए अत्यधिक आतुर रहेंगे, तब तक वक्ता उत्तरोत्तर प्रसन्न और उल्हासित रहेगा ।। 38 ।। यदि आप स्वयं अनवधान हैं, तो इस कथा का क्या प्रयोजन? इसीलिए साष्टांग वंदन करता हूं। आप प्रसन्न मन से श्रवण करें ।। 39 ।। आप पूर्णरूप से जानते हैं कि मुझे शास्त्रों का गहनज्ञान नहीं है, न ही मैंने ग्रंथों का अध्ययन किया, न ही संतों की कथा का श्रवण किया है ।। 40 ।। मैं अपने अवगुणों को जानता हूं। मैं अपने हीनपन से भी अवगत हूं।ये केवल गुरुवचन का अनुपालन करने के लिए ग्रंथ (लिखने) का प्रयत्न मेरे द्वारा किया जा रहा है ।। 41 ।। मेरा अपना मन मुझसे कहता है कि मैं आपके समक्ष तिनके के समान हूं, पर मुझे शरण में लीजिए, कृपावंत होइये ।। 42 ।। अब सद्गुरु का स्मरण करता हूं। उनके चरणों की प्रेम से वन्दना करता हूं। शरीर, वाणी व मन से उनकी शरण में होता हूं, जो बुद्धि को स्फुरण प्रदान करने वाले हैं ।। 43 ।। भोजन के लिए बैठते हैं, भोजन के अन्त में लेने के लिए जैसे मिष्ठान सदा सुरक्षित रखते हैं वैसे ही नमन के अन्त में गुरुवंदन स्वादिष्ट ग्रास होता है ।। 44 ।। सद्गुरु को "ॐ नमः" । चर व अचर के आश्रयदाता, तू ही एक करुणामय सम्पूर्ण विश्व के अधिष्ठान हो ।। 45 ।। पृथ्वी, इनके सातद्वीप, नौ महाद्वीप, सात स्वर्ग तथा अखण्ड पाताल जो हिरण्यगर्भ से उत्पन्न हुए हैं, ब्रह्माण्ड कहे जाते हैं ।। 46 ।। जिन्होंने इस ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया, जिसका नाम "अव्यक्त" अथवा माया है, उस माया से भी परे सद्गुरु का निवास है ।। 47 ।। उसकी महिमा का वर्णन करने में वेदशास्त्र भी मौन

धारण कर लेते हैं वहां तर्क-वितर्क के प्रमाण नहीं चलते, ऐसा जानें ।। 48 ।। जिस-जिस दूसरी वस्तु से तुम्हारी उपमा की जाती है, उस-उस वस्तु में तुम स्वभावतः पहले से ही विद्यमान हो । जहां कहीं भी दृष्टि पड़ती है, वह वस्तु तुम्हारा ही स्वरूप है ।। 49 ।। करुणा के सागर समर्थ सद्गुरु, स्वसंवेद्य, सर्वातीत, अनादि, अनन्त, ऐसे, हे श्री साईंनाथ ! तुम्हें नमन है ।। 50 ।। नित्यानंद, पूर्णकाम, स्वप्रकाश, मंगलधाम, आत्माराम गुरुओं में सर्वोत्तम, तुझे प्रणाम ।। 51 ।। तेरा स्तवन करने में जब वेद-श्रुति भी मौन धारण कर लेते हैं, तब मेरा ज्ञान तेरा आंकलन कैसे कर सकता है? ।। 52 ।। करुणा के आगार सद्गुरु, तेरी जय हो । गोदावरी के तट पर बिहार करने वाले, तेरी जय हो । ब्रह्मेश रमावर, तेरी जय हो । दत्तावतार, तुझे नमन है ।। 53 ।। ब्रह्म का जो ब्रह्मपन है वह भी गुरु के बिना नहीं है। अनन्य शरण जाकर पंचप्राण से आरती करते हैं ।। 54 ।। मस्तक झुकाकर उनका अभिवंदन करो । वैसे ही हाथों से उनके चरणों को धीरे-धीरे दबाओ। नयनों से उनके मुख निहारो, नाक से उस जल की सुगंध सूंघो जिससे श्री साईंचरण का प्रच्छालन हुआ है ।। 55 ।। कानों से साईंगुण का श्रवण करो। मन से साईंमूर्ति का ध्यान करो। चित्त से साईं का अखंड चिंतन है करो । संसार के बन्धन से मुक्त हो जाओगे ।। 56 ।। सद्गुरु के चरणों में तन, मन, धन सब कुछ भक्तिपूर्वक समर्पित कर दो । गुरु की सेवा में सम्पूर्ण जीवन अर्पित कर दो ।। 57 ।। गुरुनाम और गुरु का साथ, गुरुकृपा और गुरुचरणों का अमृत, गुरुमंत्र और गुरु के घर में निवास बहुत प्रयास के बाद प्राप्त होता है ।। 58 ।। इनके अंदर प्रचण्ड शक्ति है, अनन्य भक्ति ही इसकी कसौटी है। भक्तों को मोक्षद्वार की ओर प्रेरित करती है, बिना उनको इसका ज्ञान हुए ।। 59 ।। गुरु की संगति गंगाजल की तरह मैल धोकर निर्मल करती है। मन के समान दूसरी कौन सी वस्तु चंचल है किन्तु हरि के चरण इसे निश्चल कर देते हैं ।। 60 ।। श्री सद्गुरु चरणों की सेवा ही हमारे वेद शास्त्र पुराण हैं, गुरु के चरणों में साष्टांग प्रणाम ही हमारे लिए योग, यज्ञ, तप साधन हैं ।। 61 ।। सद्गुरु का पवित्र नाम ही हमारे लिए वेद शास्त्र है, साईं समर्थ हमारा मंत्र है, यही हमारा तंत्र और यंत्र है ।। 62 ।। साईं अपने भक्तों को उस परम स्थिति तक ला देते हैं जहां स्व अनुभव से उसे विश्वास हो जाता है कि “ब्रह्म ही सत्य है” और नित्य जागृति रहती है कि "जगत मिथ्या है" ।। 63 ।। परमात्मसुख,परमात्मप्राप्ति, ब्रह्मानन्द स्वरूपस्थिति इत्यादि शब्द जाल का गुच्छा है, हमें तो मन की आनन्दमय वृत्ति चाहिए ।। 64 ।। जिनके मन की गहराई में एक यही वृत्ति है, सदा सर्वदा एक ही स्थिति है, चित्त को सुख शांति एवं तृप्ति प्राप्त होती है,यही परम प्राप्ति

है ।। 65 ।। साईं आनन्द वृत्ति की खान हैं, सच्चे भक्त को भाग्यवान जानो, परमानन्द की चाह नहीं होती, सागर की भांति सदैव परिपूर्ण होते हैं ।। 66 ।। शिव व शक्ति, पुरुष व प्रकृति, प्राण व गति, दीप व दीप्ति ये सभी शुद्ध ब्रह्म चैतन्य की विकृति है, एक ही है किन्तु दो का आभास होता है ।। 67 ।। "ब्रह्म को एकाकी अच्छा नहीं लगता" और "यह बहुवचन में होना चाहता है" ऐसा श्रुति में कहा गया है। यद्यपि अन्य की संगति इच्छित एवं प्रिय है पुनः वे एक ही में मिल जाते हैं ।। 68 ।। शुद्ध ब्रह्म की जो स्थिति है वहां न पुरुष है न प्रकृति । जहां सूर्यदेव रहते हैं वहां दिवस अथवा रात्रि कैसी ।। 69 ।। साईं गुणातीत हैं, मूल रूप से निर्गुण हैं । भक्तों के कल्याण के हेतु "शुद्ध गुणों" के साथ आकार ग्रहण किया है । उनकी शरण अनन्य है ।। 70 ।। जिन्होंने साईं की शरण प्राप्त कर ली है, उनकी बहुत सी विपत्तियां टल जाती हैं। इसलिए अपने निजस्वार्थ के लिए उनके चरणों में मस्तक रखता हूं ।। 71 ।। उस प्रेममय साईं को प्रणाम, जो तत्व की दृष्टि से निराला है व भक्तिसुख के लिए भिन्न है, जो ईश्वर भक्तों के लिए लीला करता रहता है ।। 72 ।। उस प्रेममय साईं को प्रणाम, जो सभी जीवों में चित्त है, जो परमज्ञान का स्थल है, जो जड़ व चेतन में आकार लेता है ।। 73 ।। हे सुखमूर्ति गुरुराया ! तू ही मेरी परमगति है, तू ही मेरी विश्रांति है, तू ही इस दुखियारे के कष्ट का निवारण कर सकता है ।। 74 ।। अब इस स्तुतिगान के अन्त में चूंकि ईश्वर प्रत्येक जीवधारी में निवास करते हैं, मैं उन सभी की वंदना करता हूं तथा मुझे अपनी शरण में स्वीकार करने की याचना करता हूं ।। 75 ।। मैं सभी जीवधारियों को प्रणाम करता हूं, इससे विश्व के स्वामी जो विश्व में अन्दर बाहर व्याप्त है व बिना भेद के एकात्म है, संतुष्ट हों ।। 76 ।। अब मैं इस स्तुतिमान को पूर्ण करता हूं जो कार्य के प्रारम्भ तथा समाप्ति पर होता है, इस ग्रंथ के लिए यही मंगलाचरण है। अब प्रयोजन का निवेदन करते हैं ।। 77 ।। श्री साईं ने जब से मुझपर अनुग्रह व कृपा की है तब से ही मैं श्रीसाईं का चिंतन रात और दिन करता रहता हूं। संसार के भय का इसी से विनाश होगा ।। 78 ।। मेरे लिए कोई दूसरा जप नहीं, न ही कोई दूसरा तप है, मेरे लिए | मैं शुद्ध स्वरूप साईं का सगुण रूप देखता रहता हूं ।। 79 ।। श्री साईं के मुख को निहारने से भूख प्यास जाती रहती है, इससे आगे और क्या सुख है, संसार का दुःख विस्मृत हो जाता है ।। 80 ।। बाबा के नयनों को निहारने से आपका अपनापन विस्मृत हो जाता है। अंदर से जब प्रेम उमड़ता है तो वृत्ति रसरंग में डूब जाती है ।। 81 ।। मेरे लिए एक साईं चरण ही कर्म-धर्म, शास्त्र-पुराण, योग-यज्ञ, अनुष्ठान, तीर्थ यात्रा व तप आचरण हैं ।। 82 ।। अखण्ड

गुरुवचनों की अनुवृत्ति से, चित्तवृत्ति को दृढ़ता से पकड़ने से, श्रद्धा की अटल स्थिति से निश्चल स्थैर्य की प्राप्ति होती है ।। 83 ।। मेरे पूर्व कर्मो के फलस्वरूप मेरी मनःस्थिति ऐसी थी, जिससे साईं पदों में मेरी आसक्ति बढ़ गयी। उसमें मैंने अतर्क्य शक्ति का अनुभव किया, जिसका वर्णन मैं कैसे कर सकता हूं ।। 84 ।। यही शक्ति है जिससे समर्थ साईं के चरणों में आसक्ति व भक्ति उपजती है। संसार में रहते हुए भी संसार से निवृत्ति मिलती है। यह आनन्दवृत्ति देती है ।। 85 ।। नाना प्रकार की भक्ति नाना प्रकार के मतावलम्बियों द्वारा कथित हैं। संक्षेप में, जैसा कहा गया है उनके लक्षण वर्णित करता हूं ।। 86 ।। वेदशास्त्र के जानकार ज्ञानसंपन्न आचार्य कहते हैं क़ि "स्वस्वरूपानुसंधान" भक्ति का मुख्य लक्षण है ।। 87 ।। पूजा करके प्रेम व्यक्त करना अर्चनभक्ति की रीति है। ऐसी पराशर व्यास की उक्ति है। यह एक प्रकार की भक्ति कही गयी है ।। 88 ।। गुरु की प्रीति के लिए उपवन है। परिजात आदि पुष्पों को एकत्र करना चाहिए | गुरु के आंगन को गाय के गोबर मिश्रित जल छिड़ककर धोकर, झाड़ना चाहिए ।। 89 ।। प्रथम स्नान संध्या करें, गुरुदेवता के लिए गंध का चूर्ण तैयार करें, पंचामृत स्नान करावें , धूप व दीप से अर्चन करें ।। 90 ।। उनके पश्चात नैवेद्य समर्पण करें। आरती धूपारती करें। इस प्रकार जो सप्रेम यह सब किया जाता है इसे "अर्चन" नाम दिया गया है ।। 91 ।। अपने हृदय के परमात्मतत्व, बुद्धि, निर्मल स्वभाव को मूर्ति में आमंत्रित करके अर्चना में लगावें ।। 92 ।। पूजनार्चना के विसर्जनोपरांत फिर परमात्मतत्व को वापस मांगकर अपने हृदय में पूर्ववत अवस्थित करावें ।। 93 ।। अब दूसरे भक्ति के लक्षण को गर्गाचार्य की मति जानो। इसमें मन प्रभु के गुणकीर्तन में तल्लीन हो जाता है, हरि के रंग में विलीन हो जाता है ।। 94 ।। अखण्ड आत्मानुसंधान, कथा कीर्तन तथा शास्त्रोचित आचरण इसके बाद की भक्ति को जानो। शांडिल्य के ऐसे वचन हैं ।। 95 ।। जिसको स्वहित साधने का मन हो वे वह वेदविहित आचरण करें, निषिद्ध और अविहित कर्म को टालते हुए, जो निजहित बाधक है ।। 96 ।। निरंहकारता का भाव, जब यह भाव उपजे कि किसकी क्रिया अथवा फल, वास्तव में मैं कर्ता भोक्ता नहीं हूं, ऐसे ब्रह्मार्पण को योग कहते हैं ।। 97 ।। इस रीति से कर्म करने से सहज ही नैष्कर्म्यता उपजती है। कर्म को कदापि नहीं त्यागना चाहिए । कर्मकर्ता का भाव त्यागने योग्य है ।। 98 ।। कांटे को कांटे के बिना नहीं निकाला जा सकता है। कर्म को कर्म के बिना नहीं रोका जा सकता है। निजात्म का चिह्न हाथ लगते ही कर्म सम्पूर्ण हो जाता है ।। 99।। फल की इच्छा पर पूर्ण विराम ही कर्म से मुक्ति का रहस्य है। नित्य व नैमितिक कर्म करने को "शुद्ध स्वधर्म" कहते हैं

।। 100 ।। सभी कर्मो को ईश्वर को अर्पण करना, क्षणभर के लिए, सब कुछ भूल कर मन को पूर्णरूपेण अनासक्त कर लेना-इस प्रकार के भिन्न लक्षण वाली भक्ति नारदमुनि द्‌वारा वर्णित की गयी है ।। 101 ।। ऐसे ही भक्ति के अनेक लक्षण हैं एक से बढ़कर एक विलक्षण अपनी भक्ति गुरुकथानुस्मरण में है, केवल चरणों में ही संसार से मुक्ति है ।। 102 ।। गुरुकथा श्रवण में मेरी भी आसक्ति पैदा हो गयी और इस कार्य में मैं गहराई में इतना लीन हो गया कि अनुभव एवं सिद्‌धि के अनुसार स्वयं ही इस कथा को संकलित करने की सोचा ।। 103 ।। बाद में जब मैं एक बार शिरडी में था दर्शनार्थ मस्जिद गया तो बाबा को गेहूँ दलते देखा मुझे अति विस्मय हुआ ।। 104 ।। पहले मैं यह कथा कहता हूं, स्थिर चित्त से उसे सुनें । जिससे साईंचरित लिखने का विचार कैसे उत्पन्न हुआ, यह सुनें ।। 105 ।। उनके गुणों का अनुवाद तथा उनकी कथा का प्रेमपूर्वक संवाद करने से चित्त शुद्‌ध होता है तथा बुद्‌धि विशुद्‌ध होती है ।। 106 ।। उनके गुणों का वर्णन करके, उनकी कथा व लीला का श्रवण करके, भगवान को प्रसन्न किया जा सकता है। त्रिविध ताप से उत्पन्न क्लेश का भी निवारण हो जाता है ।। 107 ।। अधिभूत आदि तापों से क्लांत, आत्महित के इच्छुक तथा आत्मप्रवण सभी, संतों के चरणों को पकड़ते हैं और अनुभव सम्पन्न होते हैं ।। 108 ।। अब दत्तचित्त होकर इस आकर्षक वृत्तांत को सुनें । बाबा की कृपावंतत्व को देखकर बहुत आश्चर्य होगा ।। 109 ।। एक दिन सुबह जागकर बाबा ने दांत धोया और मुंह प्रक्षालन के बाद व्यवस्थित होकर दलना प्रारंभ किया ।। 110 ।। हाथ में एक सूप लेकर गेहूँ के बोरे के समीप जाकर माप-माप भर-भर कर सूप से गेहूँ निकालने लगे ।। 111 ।। दूसरा खाली बोरा भूमि पर फैला दिया, उस पर जाता रख दिया और उसके खूटे को दृढ़ता से ठोंक दिया जिससे गेहूँ दलते समय ढीला न हो ।। 112 ।। तत्पश्चात उन्होंने अपनी आस्तीन ऊपर तक खींच ली, अपनी कफनी भी मोड़कर बांध लिया । चक्की के बगल में चटाई डालकर पांव पसार कर बैठ गए ।। 113 ।। अपने मन में बहुत आश्चर्य हो रहा था कि दलने की यह क्या कल्पना है? जो अकिंचन, अपरिग्रह है उन्हें क्या व्याकुलता है ।। 114 ।। इस प्रकार खूटी हाथ से पकड़कर गर्दन नीची करके बाबा अपने हाथ से चक्की पीसते जा रहे थे गेहूँ की निश्चित की गयी मात्रा निःसंदेह समाप्त करने के लिए ।। 115 ।। संत अनेक देखे, किन्तु दलने वाला एक ही (देखा) । गेहूँ पीसने में उन्हें क्या सुख है। उनका कौतुक वही जानें ।। 116 ।। लोग आश्चर्यचकित चित्त से उन्हें देख रहे हों, लेकिन वह क्या कर रहे हैं? यह पूछने का साहस नहीं था। यह बात गांव में फैल गयी । नर-नारी वहां वस्तुतः आ पहुंचे ।। 117 ।। नारियां

दौड़ते-दौड़ते थक गयीं उनमें से चार शीघ्रता से मस्जिद की सीढ़ियां चढ़ गयीं, बाबा का हाथ पकड़ कर उनसे खूटी छीन ली ।। 118 ।। बाबा उनसे झगड़ने लगे। वे तुरंत दलने में लग गयीं । दलते-दलते बाबा की लीला का बखान करती हुई उनके गीत गाने लगीं ।। 119 ।। नारियों का पवित्र प्रेम देखकर उनका बनावटी गुस्सा गायब हो गया, क्रोध अनुराग हो गया और उनके होठों पर मुस्कान आ गयी ।। 120 ।। चार सेर गेहूँ पिस गया । सूप वास्तव में खाली हो गया। तत्पश्चात नारियों के मन में अनियंत्रणीय विचार घूमने लगे ।। 121 ।। "बाबा स्वयं के लिए रोटी बनाते नहीं, उनकी प्रत्यक्ष वृत्ति तो भिक्षा है। वे इस आंटे का क्या करेंगे। नारियां मन में तर्क करने लगी ।। 122 ।। "न तो पत्नी है न ही बच्चे । बाबा तो केवल एक हैं। न घर न द्वार है, इस संसार में देखने को। फिर किसके लिए इतना गेहूँ का आटा" ।। 123 ।। एक बोली " बाबा परम कृपालु हैं। हमारे लिए ही उनका खेल है। अब देखो, पूरा गेहूँ का आटा सब हमें दे देंगे ।। 124 ।। अब चार भाग करेंगे, एक-एक के लिए एक-एक भाग ।" वे इस प्रकार हवाई किला बनाती हुई देखते-देखते पूरे आटे को बांटने लगीं ।। 125 ।। बाबा का खेल बाबा ही जानें। उनका अंत कोई नहीं पा सकता । पर नारियों के मन में बाबा को लूटने का लोभ उठने लगा ।। 126 ।। गेहूँ पिस गया, आटा फैल गया, चक्की (जांता) को दीवाल से टेक दिया गया । नारियों ने सूप से आटा भर लिया अपने घरों को ले जाने की तैयारी में ।। 127 ।। तब तक बाबा एक भी शब्द नहीं बोले । किन्तु जैसे ही उन चारों ने चार भाग किया, फिर बाबा कैसे बोले सुनो ।। 128 ।। "क्या पागल हो गयी हो? कहां ले जा रही हो? अपने पिता की वस्तु समझ कर इसे ले जा रही हो। अब (गांव की) सीमा पर ले जाकर आटे को वहां वस्तुतः बिखेर दो। ।। 129 ।। " बिना सत्कर्म किये अच्छे फल की इच्छा रखने वाली औरतें मुझे लूटने के लिए दौड़ी-दौड़ी चली आयीं । क्या मुझे दिये गये कर्ज का गेहूँ है जो आटा ले जाना चाहती हैं" ।। 130 ।। औरतें अपने मन में झुंझलाती हुई अपने लालच पर अत्यन्त लज्जित होती हुई आपस में फुसफुसाते हुए तुरन्त गांव की सीमा पर चली गयीं ।। 131 ।। आरंभ में कोई बाबा को नहीं समझ सका। प्रथमतः कारण किसी की समझ में नहीं आया । धैर्य धारण करने से परिणाम फलित हुआ । बाबा का कौतुक निराला है ।। 132 ।। बाद में फिर मैंने लोगों से पूछा कि बाबा ने यह ऐसे क्यों किया ? लोगों ने बताया कि इस प्रकार से बाबा ने फैले हुए रोग को पूर्णरूप से भगा दिया ।। 133 ।। यह गेहूँ नहीं था महामारी थी जो चक्की में डालकर पिसी गयी। बाद में पिसा हुआ आंटा (गांव की) सीमा पर (नाले के) किनारे-किनारे बिखेर दिया गया ।। 134 ।। जब

से आंटा इस प्रकार बिखेरा गया, तब से रोग घटने लगा। दुर्दिन तुरन्त चला गया यह बाबा के कार्य करने का कौशल था ।। 135 ।। गांव में महामारी हो गयी। साईंनाथ ने चमत्कार पूर्ण उपाय का प्रयोग किया, रोग समाप्त कर दिया गया। गांव की शांति सुरक्षित हो गयी ।। 136 ।। दलने का यह दृश्य देखकर मेरे हृदय में आश्चर्य का भाव उत्पन्न हुआ। कार्य और कारण भाव किस प्रकार सम्बद्ध किया है। इनमें यह संबंध कैसे स्थापित होता है ।। 137 ।। इस प्रकार यह कैसा अनुबन्ध है। गेहूँ एवं रोग में क्या संबंध है। कारण का निरोध देखकर मैंने एक ग्रन्थ लिखने का सोचा ।। 138 ।। क्षीर सागर में लहरों की तरह मेरे अन्तर में प्रेम उमड़ने लगा | बाबा की मधुर कथा का गायन मन भर करने की इच्छा हुई ।। 139 ।। हेमाड साईंनाथ की शरण में है। मंगलाचरण का समापन होता है। संबंधियों तथा संतों को नमन तथा सद्गुरु के अखण्ड वन्दन का समापन होता है ।। 140 ।। अगले अध्याय में ग्रंथ का प्रयोजन, अधिकारिता तथा अनुबंध का दर्शन यथा बुद्धि प्रस्तुत करुंगा। श्रोता स्वस्थ मन से सुनें ।। 141 ।। इसी प्रकार श्रोताओं व वक्ताओं के हित के लिए, श्री साईसच्चरित के रचयिता हेमाड पंत कौन हैं,बाद में यह बताया जायेगा ।। 142 ।। स्वस्ति । श्री संत व सज्जनों द्वारा प्रेरित भक्त हेमाड पंत द्वारा विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित का "मंगलाचरण" नामक प्रथम अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय दूसरा (कथा प्रयोजन, नामकरण)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन।।

पूर्व अध्याय में मंगलाचरण है। देवताओं पूर्वजों तथा गुरु का वन्दन किया गया है। साईं चरित्र का बीज बोया है गया है। अब प्रयोजन आरम्भ करते हैं ।। 1 ।। अधिकारिता व अनुबन्ध के ज्ञान का विवेचन अति सूक्ष्म रूप से प्रस्तुत करता हूं, जिससे श्रोताओं को ग्रन्थ के विषय से बिना परिश्रम के परिचय हो जायेगा ।। 2 ।। अनुक्रम के अनुसार प्रथम अध्याय में महामारी के शमन के लिए गेहूँ पीसने का उपक्रम करना, जिससे ग्रामवासियों को परम आश्चर्य हुआ है ।। 3 ।। साईं की ऐसी अगाध लीला है, श्रवण करने से आनन्द प्राप्त होता है। वही काव्य रूप में प्रकट हो रहा है। प्रेम का सैलाब बाहर फूट पड़ा है ।। 4 ।। अतः साईं का धन्यवाद करते हैं।यथा बुद्धि मुझसे वर्णन करावें । जो भक्तों के लिए बोधप्रद हो तथा पापों को नाश करने वाली हो ।। 5 ।। इसी उद्देश्य से अतिपवित्र साईं चरित्र लिख रहा हूं, कथा सत्र आरम्भ करते हुए, जो इस लोक तथा परलोक में भी सुखदायी होगा ।। 6 ।। संतो का चरित्र सन्मार्गदर्शक होता है, यह न ही न्याय है, न ही तर्कशास्त्र। जो संत की कृपा के पात्र होंगे उन्हें कोई बात विचित्र नहीं लगेगी ।। 7 ।। और इसलिए श्रोताओं से प्रार्थना है कि इस आनन्द के भागीदार बनें। उनके धन्य भाग्य जो निरन्तर सत्संग करते इस कथा का श्रवण करते हैं ।। 8 ।। यदि मैं चिरपरिचित परमप्रिय मित्र, जिसके साथ दिन-रात का साथ हो, का चित्र रेखांकित नहीं कर सकता तो संत चरित्र कैसे लिख सकता हूँ ।। 9 ।। मैं, जो अपने अंतरंग को ही पूर्णरूप से नहीं जानता, कैसे बिना त्रुटि किए, संत के मन के विचारों का वर्णन कर सकता हूँ ।। 10 ।। जिसके स्वरूप का निर्धारण करने में चारों वेद मूक हो जाते हैं, उस तुम्हारे रूप का विचार मैं निश्चित रूप से कैसे कर सकता हूं ।। 11 ।। सर्वप्रथम स्वयं संत बनें, तभी सन्त का यथार्थ जान सकते हैं। फिर मैं सन्तों का वर्णन कैसे कर सकता हूं। यह मैं पहले से ही अच्छी तरह जानता हूं ।। 12 ।। सात सागरों का पानी मापा जा सकता है, आकाश के विस्तार को ढका जा सकता है, किन्तु सन्त समझ में नहीं आते हैं ।। 13 ।। मैं, अपने मन में जानता हूं कि मैं एक निरीह व्यक्ति हूं, किन्तु बाबा का असीमित प्रताप देखकर गीत गाने की लहर उठ रही है, जो अनियन्त्रणीय है ।। 14 ।। हे साईं ! तुम्हारी जय हो। दीन दुर्बल के आश्रयदाता तुम्हारी अगाध माया का वर्णन नहीं किया जा सकता है। अपने विनीत दास पर कृपा करो ।। 15 ।। मैंने वह कार्य प्रारम्भ किया है जो

मुझसे हो नहीं सकता। ऐसा होगा यह मैनें साहस किया । मेरा उपहास न होने दें। इतिहास लिखना कठिन है ।। 16 ।। जो संत चरित्र लिखते हैं उनके प्रति भगवान की प्रीति होती है, ऐसा ज्ञानेश्वर महाराज ने कहा है, फिर मुझे क्यों भय है ।। 17 ।। मेरे मन में यह स्फूर्ति उसी भगवंतमूर्ति ने संचरित की है मैं स्वयं मूढ़मति का जड़ हूं, यद्यपि, वह अपना कार्य पूर्ति कराना जानते हैं ।। 18 ।। भक्त जैसे-जैसे सेवा करने की सोचते हैं, सन्त स्वयं ही सेवा करवा लेते हैं। भक्त तो केवल कारण के निमित्त होते हैं, सकल स्फूर्ति सन्तों की ही होती है ।। 19 ।। सारांश यह है कि यह साईं हैं, जो मुझ जैसे मूर्ख से चरित्र लिखवा रहे हैं, यह कथा की ही महानता एवं गौरव है, जो सम्मान का हकदार है ।। 20 ।। साधु संत या हरि किसी से, जिसको वह चाहते हैं, अपनी कथा स्वयं कराते हैं, मात्र अपना हाथ उसके सिर पर रख देते हैं ।। 21 ।। जिस प्रकार शक सम्वत 1700 में "महिपति" की बुद्धि स्फुरित हुई थी। साधुसंतों ने उनके हाथों से अपने चरित्र लिखवाकर उनकी सेवा स्वीकार की थी ।। 22 ।। उसी प्रकार बाद में शक सम्वत 1800 में दासगणू के हाथ से सेवा स्वीकार की गयी थी, संत चरित्र लिखवाकर जो सभी के लिए पावन थी ।। 23 ।। जैसे महिपति रचित "भक्त विजय', "संत विजय", "भक्त लीलामृत एवं "संत लीलामृत " चार ग्रंथ हैं। वैसे ही दासगणू कृत दो हैं ।। 24 ।। एक का नाम “भक्त लीलामृत" है, दूसरे का “संत कथामृत”। दोनों ही ग्रन्थों में उपलब्ध अर्वाचीन भक्तों व संतों के विषय में लिखा गया है ।। 25 ।। उनमें से "भक्त लीलामृत” के तीन अध्यायों में श्री साईं का मधुर चरित्र वर्णित है। श्रोता उन्हें वहां स्वयं पढ़ सकते हैं ।। 26 ।। उसी प्रकार एक मधुर ज्ञान कथा श्री साईं द्वारा एक भक्त को सुनायी गयी है, उसे पढ़ने के लिए “संत कथामृत” का अध्याय सत्तावन देखें ।। 27 ।। इसके अतिरिक्त साईं की अलौकिक लीला "रघुनाथ-सावित्री-भजनमाला” में अभंग व पद के रूप में गायी गयी है, जो लेखक ने निज अनुभव के आधार पर पाठकों की शान्ति व खुशी के लिए लिखी है ।। 28 ।। बाबा के एक बालक (हरी सीताराम दीक्षित) ने अत्यधिक प्रेमवश कथामृत लिखा, जो तृषित चकोर (श्रोता) के लिए अमृत की वर्षा करने के समान है, जिसकासेवन श्रोता सादर कर सकते हैं ।। 29 ।। दासगणू की फुटकर कविताएं भी अत्यन्त रसभरी हैं। श्रोताओं के चित्त को आनन्द देने वाली हैं, बाबा की लीला सुनने से ।। 30 ।। उसी प्रकार गुजराती भाषा जानने वालों के लिए भक्त अमीदास व भवानी मेहता ने भी अति प्रेम व भक्ति से कतिपय चमत्कार-कथाएं लिखी हैं ।। 31 ।। उक्त के अतिरिक्त कतिपय भक्त शिरोमणि ने “साईं प्रभा” नाम से बाबा की कथाओं का संग्रह पुणे से प्रकाशित करायी हैं ।। 32 ।। ऐसी-ऐसी कथाएं हैं, फिर इस ग्रंथ की क्या आवश्यकता? श्रोताओं के चित्त में यह शंका होगी। निराकरण के लिए सुनो ।। 33 ।। साईं चरित्र महासागर है, अनंत, अपार, रत्नाकर । मैं टिटवी की भांति, उसे खाली करना चाहता हूं यह कैसे हो सकता है ।। 34 ।। ऐसे ही साईं का चरित्र गहन है, जिसका सांगोपांग वर्णन असंभव है, इसलिए इनका जितना

वर्णन कर सकें उससे ही संतुष्ट हो जाना चाहिए ।। 35 ।। अपार साईं की अपूर्व कथा सांसारिक कष्टों से शांति प्रदान करती है। श्रोताओं को श्रवणोल्हासता देती है। अपने भक्तों के चित्त को स्थिर करती है ।। 36 ।। बाबा विभिन्न प्रकार के व्यवहारिक उपदेश, वैसे ही सभी के अनुभव के लिए अपने रहस्यमय कार्यों के विषय में, बोले ।। 37 ।। जैसी अलौकिक श्रुति विख्यात हैं तथा उनकी असंख्य कहानियां विख्यात हैं, वैसे ही श्री साईं बाबा की मधुर अर्थभरी अपरिमित कहानियां ।। 38 ।। सावधानीपूर्वक उन्हें सुनने से इस लोक के सुख तिनके के समान लगते हैं, आन्तरिक संतुष्टि मिलती है तथा भूख व प्यास जाती रहती है ।। 39 ।। कुछ लोग ब्रह्म से संयुक्तता चाहते हैं, कुछ लोग अष्टांगयोग में प्रवीणता, समाधि सुख की गहराई में कुछ लोग जाना चाहते हैं, कथा सुनने से सब कुछ सम्भव हो जायेगा ।। 40 ।। यह पूरी कथा श्रवणार्थियों को कर्मपाश से मुक्त कर देती है, बुद्धि को प्रकाशित करती है। सभी को समान रूप से सुख मिलता है ।। 41 ।। उससे मेरे मन में यह इच्छा स्फुरित हुई कि नाना प्रकार की इन संग्रह करने योग्य कथाओं की ग्रन्थमाला बनाया जाये, उसी से बाबा की उपासना की जाये ।। 42 ।। चार अक्षर कानों में पड़ने से ही जीवों के दुर्दिन समाप्त हो जाते हैं। सम्पूर्ण कथा का सादर श्रवण करने से निर्मल हृदय का भक्त भवसागर पार कर जायेगा ।। 43 ।। मुझे अपनी लेखनी बनाकर बाबा मेरे हाथ से अक्षर बनायेंगे । मेरी इच्छा तो निमित्त मात्र है, अक्षर का रेखांकन, जैसा वह घुमायेंगे, होगा ।। 44 ।। वर्षो वर्ष बाबा की लीला देखकर मन में उत्कट इच्छा हुई बाबा की कहानियां एकत्र करने की, भोले भाले व प्रेमासक्त भक्तों के लिए ।। 45 ।। बाबा का प्रत्यक्ष दर्शन पाकर जिनकी आँखें संतुष्ट नहीं हुयीं। वे बाबा के माहात्म्य श्रवण के पुण्य से पावन हो जायें ।। 46 ।। सौभाग्य से किसी के मन में पाठ करने की कामना जाग्रत हुई तो उसका मन ऐसा करके परमानन्द प्राप्त करेगा तथा आत्म संतुष्टि होगी ।। 47 ।। ऐसा मन में विचार आया, जो मैंने माधवराव (देशपाण्डे) को बताया। किन्तु मेरे चित्त में शंका थी कि मुझे सफलता कैसे मिलेगी ।। 48 ।। साठ वर्ष की आयु पार कर चुके हैं। (इस उम्र है में) बुद्धि की स्मरण शक्ति कमजोर होती है और अवरोधात्मक प्रकृति हो जाती है। शरीर अशक्त होने से समस्या होती है, जुबानी बकवास शेष रहती है ।। 49 ।। फिर भी साईं के प्रति प्रीति करने से कुछ तो धर्मार्थ सिद्ध होगा। अन्यथा वह निरर्थक होगा। इसीलिए यह यत्न कर रहा हूं ।। 50 ।। मेरे मन में विचार आया कि मैं अपने दिन व रात के अनुभव का वृत्तांत लिखूं, जिसका शांतिपूर्वक अध्ययन करने से मन को विश्रांति मिलेगी ।। 51 ।। बाबा के भावपूर्ण वचनों को, जो मेरी अनुभूति में दृढ़ता से स्थापित हैं, जो मेरी आत्मतृप्ति से उत्पन्न स्वाभाविक उद्गार हैं, बार-बार श्रोताओं के लिए प्रस्तुत करना चाहता हूं ।। 52 ।। ज्ञानबर्द्धक बहुत कथायें सुनायीं, अनेक को भजन पंथ पर प्रेरित किया, उनका संग्रह किया जावे तो साईं की गाथा हो जायेगी ।। 5 3 ।। जो भी इन कथाओं को सुनायेगा व जो भी इन कथाओं को सादर सुनेगा, दोनों ही के

मन को विश्रांति व पूर्ण शांति मिलेगी ।। 54 ।। श्रीमुख से निकली कथा को सुनकर भक्त अपने शारीरिक कष्ट को भूल जायेंगे । उन पर ध्यान लगाने व भजन करने से वे संसार से अपने आप ही मुक्त हो जायेंगे ।। 55 ।। श्रीमुख से निकले शब्द अमृत समान रस से भरे हैं, उन्हें सुनने से परमानन्द की प्राप्ति होती है। मैं उसकी मुधरता का वर्णन कैसे कर सकता हूं ।। 56 ।। जब मैं किसी को बिना दंभ के, इन कथाओं का वर्णन करते हुए पाता हूं, मैं अनुभव करता हूं कि उसकी चरणरज में लोटने मात्र से मोक्ष मिल सकता है ।। 57 ।। इन कहानियों में एक-एक शब्द का प्रयोग इतने अलौकिक ढंग से व्यवस्थित किया गया है कि उनके सुनने में तल्लीन सभी श्रोताओं को सम्पूर्ण सुख मिलता है ।। 58 ।। जैसे-जैसे कान कहानी सुनने के प्रति या आँखें दर्शन प्राप्त करने के लिए उत्सुक होंगी है, मन उन्मनी अवस्था को प्राप्त होता जायेगा एवं श्रोता सहज ही ध्यानस्थ हो जावेगा ।। 59 ।। गुरुमाँ मेरी जननी हैं, उनकी कथा मुख से बोलने से एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक जैसे सुनी जाती है, वैसे हमें अपने कानों में श्रद्धा के साथ एकत्र कर लेनी चाहिए ।। 60 ।। उन्हीं-उन्हीं को बार-बार याद करूं अधिक-अधिक एकत्र कर उन्हें प्रेमबंधन में बाँध लूं और परस्पर उनका आनन्द लूटूं ।। 61 ।। इसमें मेरा कहीं कुछ नहीं है, केवल साईंनाथ की ही प्रेरणा है। वे जो कुछ बोलने के लिए प्रेरित करते हैं, देखो, वैसे ही मैं बोलता हूं ।। 62 ।। “मैं बोलता हूं" यह भी अहंकार है। साईं स्वयं ही सूत्रधार हैं। वही मुझे बोलने के लिए उकसाते हैं। फिर वह बोलने वाले है, मैं कौन? ।। 63 ।। एक बार बाबा के चरणों में अहंकार समर्पित हो जाये, तो अपरम्पार सुख प्राप्त होगा । अहंकार समाप्त होने से संसार का समस्त सुख प्राप्त होता है ।। 64 ।। अपने मानसिक वृत्ति को बाबा के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत करने का साहस मुझमें नहीं था। श्री माधवराव के मस्जिद की सीढ़ी पर आने पर, उन्हें बता दिया ।। 65 ।। उस समय माधवराव के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं था। उपयुक्त समय देखकर उन्होंने बाबा से कहा ।। 66 ।। बाबा यह अन्नासाहेब (दाभोलकर) कहते हैं कि आपका चरित्र अपनी बुद्धि के अनुसार लिखने का इनका विचार है, आपकी अनुमति चाहते हैं ।। 67 ।। "मैं तो केवल भिखारी हूं, दरवाजे-दरवाजे भिक्षा के लिए फिरता हूं | गीली-सूखी भाजी रोटी लाकर, खाकर समय व्यतीत करता हूं ।। 68 ।। "ऐसी मेरी कथा किस उद्देश्य से? इससे उपहास होगा"--- ऐसा न कहें, क्योंकि हीरे को लाकेट में जड़कर देखना चाहिए ।। 69 ।। ऐसे में आपकी अनुज्ञा क्या? लेखन के लिए आप स्वयं वास्तविक अवलम्ब होंगे अथवा आपदाओं को दूर भगाकर आप स्वयं लिखवायेंगे ।। 70 ।। संतों के आशीर्वाद होने पर, वैसे ही ग्रंथ रचना प्रारम्भ होती है। आपकी कृपा दृष्टि के बिना निर्विघ्न लेखन की निरन्तरता नहीं हो सकती ।। 71 ।। मेरे मनोगत को जानकर साईं समर्थ में (मेरे प्रति) कृपा का उद्भव हुआ, बोले, "मनोरथ पूर्ण होगा।" मैंने अपना माथा उनके पैरों पर रख दिया ।। 72 ।। उन्होंने मुझे 'ऊदी' का प्रसाद दिया, मेरे मस्तक पर वरद हस्त रखा । अपने भक्तों को संसार के बंधनों से मुक्त करने

वाले साईं सभी धर्मो के ज्ञाता हैं ।। 73 ।। माधवराव की प्रार्थना सुनकर साईं की मुझ पर करुणा हुई, मेरे अधीर मन को शांत करने के लिए मुझे धैर्य प्रदान करने लगे ।। 74 ।। मेरे मन का भावार्थ जानकर अनुज्ञा देते हुए वह बोले, **'कथा, वार्ता, अनुभव आदि का वास्तविक संग्रह करो ।। 75 ।। संग्रह करना अच्छा होता है, उसमें मेरा पूर्ण सहयोग है। यह तो केवल निमित्त मात्र है, मैं अपनी कहानी स्वयं लिखूगा। ।। 76 ।। अपनी कथा स्वयं लिखूगा । भक्त की इच्छा मैं पूर्ण करूंगा। वे अहंकार की वृत्ति का दमन करके मेरे पैरों में अर्पित कर दें। ।। 77 ।। जो इस प्रकार का व्यवहार करता है, यह कथा क्या, सर्वत्र उसकी मैं पूर्ण सहायता करता हूं उसके घर मैं आता-जाता रहता हूं ।। 78 ।। जब अंहवृत्ति का दमन हो जाता है, जब उसका अंश भी शेष नहीं रह जाता है, तब मैं उसमें संचरण करके स्वयं ही लिखता हूं ।। 79 ।। "श्रवण, मनन अथवा लेखन का कार्य जब इस प्रकार के विचार निश्चित करके प्रारम्भ किया जायेगा, तब वह तत्काल अपने आप संपादित हो जायेगा, यह केवल निमित्त होंगे ।। 80 ।। अभिलेख अवश्य संरक्षित करना चाहिए , घर में अथवा दरवाजे पर कहीं भी एकत्र करने व बारम्बार के स्मरण करने से जीव को विश्राम मिलता है। ।। 81 ।। मेरी कथा का श्रवण करने से, उसका कीर्तन और चिंतन करने से मेरे प्रति भक्ति उत्पन्न होगी। अविद्या तत्काल समाप्त होगी। ।। 82 ।। जहां भक्ति व श्रद्धा है वहां से मैं सदैव बंधा हूं इस अर्थ में शंका नहीं होनी चाहिए। इससे भिन्न स्थिति में मैं सदा अप्राप्त हूं ।। 83 ।। इस कथा को सद्भाव से सुननेसे श्रोताओं के चित्त में निष्ठा की उत्पत्ति होगी, स्वानन्दता की स्वानुभूति सहज होगी तथा सुखावस्था प्राप्त होगी ।। 84 ।। भक्त को निज रूप का ज्ञान प्राप्त होगा। जीव विषयों से मुक्त होकर परमात्मा (परब्रहम) में ध्यानस्थ होगा। अबोधगम्य निर्गुण का बोध होगा। चैतन्य स्वरूप परमात्मा स्वयं को प्रकट करेंगे। ।। 85 ।। ऐसा है मेरी कथाओं का नैपुण्य । और क्या चाहिए? श्रुतियों का भी यही सम्पूर्ण ध्येय है। इसे प्राप्त कर भक्त सम्पन्न हो जाता है ।। 86 ।। जहां विवादास्पद विचार होंगे वहां अविद्या व माया की समृद्धि होगी। वहां निजहित स्वरूप शुद्ध बुद्धि का अभाव होगा । सदैव दुर्बुद्धि से कुतर्क होता है है रहेगा। ।। 87 ।। वह आत्मज्ञान का पात्र नहीं होता, वह अज्ञान मात्र से ग्रसित होता है, उसका न यह लोक होता है न परलोक, सर्वदा सर्वत्र असुख होता है। ।। 88 ।। न तो अपने पक्ष को स्थापित करना है न ही दूसरे पक्ष को निस्तारित करना है न ही दोनों परस्पर विरोधी पक्षों का विवरण देना है। ये निष्कारण प्रयास क्यों ।। 89 ।।**" दो परस्पर विरोधी पक्षों का विवरण नहीं , ये शब्द स्मरण हो आये। पूर्व में श्रोताओं को दिये गये अभिवचन की स्मृति है ।। 90 ।। इसके पूर्व प्रथम अध्याय के समापन के समय मैंने श्रोताओं को वचन दिया था कि सबसे पहले उन्हें "हेमाड" नामकरण कथा पूर्णरूप से सुनाऊंगा ।। 91 ।। जब कहानी के समय उप कहानी सुनी जायेगी इसकी उपयुक्तता की परख की जा सकेगी। जिज्ञासा पूर्ण हो जायेगी। वास्तव में यह साईं की ही प्रेरणा है ।। 92

।। तदोपरांत, पूर्व में कही गयी कहानी के आगे श्रीसाईं सच्चरित्र का निवेदन होगा । इसलिए श्रोतागण ध्यान से कथा का श्रवण करें ।। 93 ।। ओह ! अब "साईंलीला"ग्रन्थ । प्रत्येक अध्याय के अन्त में "भक्त हेमाडपंत विरचित" ऐसा जो सुनते हैं। वे "पंत" कौन हैं ।। 94 ।। श्रोताओं के मन में सहज आशंका होगी। उसी जिज्ञासा का शमन करने के लिए कि कैसे यह नामकरण आरम्भ हुआ, ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए ।। 95 ।। जन्म के आरम्भ से मृत्यु के समय तक देह संबंधी सोलह संस्कार होते हैं। उनमें से एक "नामकरण संस्कार" प्रसिद्ध है ।। 96 ।। उससे संबंधी छोटी कथा श्रोतागण ध्यानपूर्वक मन से सुनें। "हेमाडपंत" नामकरण की स्वीकृति उपयुक्त समय पर स्पष्ट हो जायेगी ।। 97 ।। इसके पूर्व यह लेखक शरारती था । जैसा शरारती था वैसा ही वाचाल भी, वैसा ही अपशब्द बोलने वाला व कुटिल, शुद्ध ज्ञान से रहित ।। 98 ।। सद्गुरु महिमा से अनभिज्ञ कुबुद्धि व कुतर्क की प्रतिमा, सदैव अपनी योग्यता पर घमण्ड करने वाला, वाद-विवाद में प्रवृत्त ।। 99 ।। किन्तु भाग्य प्रबल था। उसी से श्री साईं के चरण कमल पर केवल भाग्यवश दृष्टि पड़ गयी। तब तक, यह, मैं अटल तार्किक था ।। 100 ।। भक्त प्रवर काका साहेब (हरी सीताराम दीक्षित) तथा नाना साहेब चन्दोलकर (कै0वा0 नारायण गोबिंद चन्दोरकर) से पूर्वजन्म के ऋण का संबंध यदि न होता, तो कहां से शिरडी जाना होता? ।। 101 ।। काका साहेब मेरे ऊपर दबाव डाल रहे थे। शिरडी जाना निश्चित हो गया । किन्तु अचानक जाने का दिन बदल गया । मन फिर गया ।। 102 ।। मेरा एक परम मित्र था। वह अनुग्रह प्राप्त गुरुपुत्र था। अपने परिवार के साथ लोनावाला में रहते हुए एक विचित्र स्थिति में फंस गया ।। 103 ।। उसका एकलौता पुत्र था, शरीर से सुदृढ़, गुणवान, तथा योग्य किन्तु शुद्ध वायु से परिपूर्ण उस स्थान पर भी वह भयंकर ज्वर से पीड़ित हो गया ।। 104 ।। सभी मानवीय उपाय कर लिये गये । दैवी प्रकोप को उतारने का उपाय किया गया । गुरु को भी बुलाकर निकट बैठाया गया। अन्त में उसका पुत्र मृत्युमुखी हो गया ।। 105 ।। ऐसा विकट समय देखकर, इस कठिन संकट के निवारण के लिए पुत्र के निकट गुरु को बैठाया गया, किन्तु सब व्यर्थ हो गया ।। 106 ।। यह संसार महाविचित्र है, किसका पुत्र, किसकी पत्नी । यह केवल प्राणी का कर्मतंत्र है। भाग्य सर्वत्र अनियन्त्रित है ।। 107 ।। जब मैंने यह दुःखद समाचार सुना । मेरा चित्त अति उद्विग्न हो गया क्या यही है गुरु की उपयुक्तता । एकलौते पुत्र को बचा न सके ।। 108 ।। प्रारब्ध व कर्म की प्रबलता ने साईं दर्शन को शिथिल बना दिया। यात्रा में विघ्न पड़ गया ।। 109 ।। शिरडी जाने का क्या अर्थ? मेरे मित्र की स्थिति क्या हुई? गुरु को निकट बैठाने का भी लाभ नहीं हुआ । कर्म के आगे गुरु क्या कर सकता है ।। 110 ।। जो-जो ललाट पर लिखा है यदि वही-वही घटित होना है, फिर गुरु के बिना क्या रुकावट? शिरडी जाना टल गया ।। 111 ।। अपना स्थान छोड़ने का क्या अर्थ? गुरु के पीछे दौड़ने का क्या? अन्यथा सुखी जीव की दुःखांत के प्रति चाह क्यों? ।। 112 ।। बीज के अनुरूप ही भाग्य फल होना है, सुःखमय

या दुःखमय । गुरु के पास जाने का क्या, यदि होनी टल नहीं सकती? ।। 113 ।। जिसने जैसा अर्जित किया है वैसा ही होगा। होनी के आगे किसी की नहीं चलती। इसी कारण मैं शिरडी की ओर खिंचा ।। 114 ।। नाना साहेब ने, जो परगनाधिकारी थे, वसई के लिए यात्रा प्रारंभ की। थाने से दादर तक आकर अन्त में थोड़ी देर के लिए बैठे ।। 115 ।। वसई की गाड़ी आने के मध्य एक घण्टे का समय था। इस अवकाश को उपयोगी बनाने की उन्होंने सोचा ।। 116 ।। जैसे ही यह विचार प्रवाह आया, बान्द्रा जाने के लिए एक गाड़ी दादर स्टेशन पर आयी जिस पर वह बैठ गये।। 117 ।। इस गाड़ी के बान्द्रा पहुंचने पर मुझे सूचना प्राप्त हुई तब मैं तुरंत उनसे मिलने गया। शिरडी की कहानी प्रारंभ हो गयी ।। 118 ।। "साईं दर्शन" के लिये कब जा रहे हैं? शिरडी गमन में यह आलस क्यों? प्रस्थान करने में विलम्ब क्यों? मन में निश्चितता क्यों नहीं है? ।। 119 ।। नाना की आतुरता देखकर मेरा अपना चित्त शर्माने लगा। फिर मैंने पूर्ण शुद्ध हृदय से मन की प्रचण्ड चंचलता उनके समक्ष निवेदन कर दी ।। 120 ।। इसके बाद नाना ने रुचि लेकर प्रेमल शुद्ध ज्ञान मुझे दिया, जिसे सुनकर शिरडी जाने की इच्छा प्रसन्नतापूर्वक जाग्रत हो गयी।। 121 ।। "तत्काल जाना है" यह वचन लेने के बाद वहां से नाना ने यात्रा प्रारंभ की। फिर उनकी वापसी के बाद मैंने भी उचित समय पर प्रस्थान किया ।। 122 ।। तत्पश्चात मैंने सब सामान एकत्र करके, सब निपटा के और उसी दिन सायंकाल शिरडी के लिए निकल पड़े।। 123 ।। सायंकालीन मेल दादर तक जायेगी यह जानकर दादर तक का किराया भरकर वहां का टिकट लिया ।। 124 ।। किन्तु मैं गाड़ी में जैसे ही बैठा, गाड़ी बान्द्रा स्टेशन पर ही थी कि गाड़ी छूटते-छूटते एक यवन अत्यधिक फुर्ती से अन्दर आया ।। 125 ।। दादर तक का टिकट खरीदना आरंभ में ही कार्य में विघ्न जैसे हो । "प्रथम ग्रास में ही मक्खी गिरना" जैसा वह अशुभ हुआ।। 126 ।। सब सामान के साथ देखकर यवन ने मुझसे पूछा, "कहां जाना है"? अतः मैंने कहा दादर तक जाना है। मनमाड की मेल पकड़नी है ।। 127 ।। तब उसने उचित समय पर मुझे सुझाव दिया कि दादर पर न उतरना मेल वहां रुकता नहीं है। बोरी बंदर सीधे जायेगी ।। 128 ।। सही समय पर यह सूचना न मिलती तो मुझे दादर पर मेल नहीं मिलता । फिर मेरे अशांत मन में क्या-क्या विचार उठते ।। 129 ।। किन्तु उस दिन प्रयाणयोग था। कार्य सिद्ध होने का ऐसा सुयोग था । इसीलिए कथा के मध्य की ये घटनाएं मन के अनुकूल अचानक घटित हुईं ।। 1 30 ।। वहां भाऊ साहेब दीक्षित मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे, जब मैं अगले दिन नौ या दस बजे के मध्य शिरडी पहुंचा ।। 131 ।। जब यह घटना घटी, यह सन् 1910 था। तब साठे का एकमात्र वाडा था जहां यात्री रुकते थे ।। 132 ।। तांगे से उतरते ही दर्शन की उत्सुकता मेरे हृदय में तीव्र हुई। कैसे सिर से चरणवंदना करूँ। आनन्द की लहर हृदय में उठने लगी ।। 133 ।। साईं के परमभक्त विख्यात तात्यासाहेब नूल्कर उसी क्षण मस्जिद से लौटे थे बोले, "शीघ्रता से दर्शन करो ।। 134 ।। बाबा अपने भक्तों के साथ वाडा के कोने

पर आ चुके हैं, पहले धूल भेंट जाकर कर लो। फिर वह लेंडी के लिए चले जायेंगे ।। 135 ।। उसके बाद फिर स्नान करके, जब बाबा वापस आये, तब फिर मस्जिद जाकर पुनः आराम से दर्शन करना" ।। 136 ।। ऐसा सुनकर मैं शीघ्रता से दौड़ता हुआ वहां पहुंचा जहां बाबा थे। जैसे ही मैं उनके चरणों की धूल में दण्डवत किया, आनन्द मन में समा न सका ।। 137 ।। नाना साहब ने पहले ही बताया था, किन्तु उससे अधिक प्रत्यक्ष देखा। उनके दर्शन से मैंने अपने को धन्य मान लिया। आँखों का होना सफल हो गया ।। 138 ।। इसके पूर्व कभी सुना न देखा । सूरत देखकर दृष्टि शांत हो गयी। भूख प्यास सब कुछ भूल गये। इन्द्रियां तटस्थ हो गयीं ।। 139 ।। साईं के चरणस्पर्श का लाभ जो प्राप्त हुआ, जो उन्होंने मेरा सुख-दुःख पूछा, वे मेरे जीवन में परमोत्कर्ष के क्षण थे, मुझे नया जीवन उससे मिला ।। 140 ।। जिनके कारण यह सत्संग लाभ मिला कि मेरे शरीर का अंग-प्रत्यंग आनन्दित हो गया, उनका शुद्ध उपकार मेरे लिए सदैव अनुल्लंघनीय है ।। 141 ।। जो आध्यात्मिक उन्नति में सहायता करते हैं वे ही वास्तव में भाई, रिश्तेदार हैं। इसके अतिरिक्त रिश्तेदार नहीं हो सकते । मैं यह अपने चित्त में मानता हूं ।। 142 ।। उनका उपकार इतना महान है कि उनका प्रत्युपकार कैसे करूं, मैं नहीं जानता। इसलिए केवल हाथ जोड़कर उनके चरणों पर सिर रखता हूं ।। 143 ।। साईं के दर्शन का लाभ प्राप्त हुआ, मेरे मन के सभी विकल्प शांत हो गये । महान साईं का समागम मुझे मिला, परम आनन्द की अनुभूति हुई ।। 144 ।। साईं दर्शन का यह निरालापन है, दर्शन से वृत्तियों में परिवर्तन हो जाता है, पूर्व कर्म धुल जाते हैं, धीरे-धीरे विषयों के प्रति अनिच्छा होने लगती है ।। 145 ।। पूर्व जन्मों के संचित पाप कृपावलोकन से ही समाप्त हो गये तथा साईं के पांव अक्षय आनन्द प्रदान करायेंगे, यह आशा उत्पन्न हुई ।। 146 ।। श्री साईं के चरणरूपी मानस सरोवर का लाभ भाग्य से मिला है। कौवा हंस हो जायेगा। साईं महंत संतश्रेष्ठ, परमहंस तथा सद्योगी हैं ।। 147 ।। श्री साईं का दर्शन पाप-ताप-दैन्य का विनाश करने वाला है। आज उनके पवित्र साथ ने मुझे बहुत ही पुनीत बना दिया है ।। 148 ।। कितने ही पूर्व जन्मों के एक पुण्य के कारण साईं महाराज से भेंट हुई है। एक बार यह साईं दृष्टि में समा जायें तो सकल सृष्टि साईंमय हो जाती है ।। 149 ।। शिरडी आने के प्रथम दिन ही बाबा साहेब भाटे और मेरे मध्य वाद-विवाद प्रारंभ हो गया कि गुरु की आवश्यकता क्या है ।। 150 ।। अपनी स्वतंत्रता त्याग कर परतंत्रता स्वेच्छा से क्यों ओढ़ें? जहां निज कर्तव्य दक्षता है, वहां गुरु की आवश्यकता क्या है ।। 151 ।। जिसका है, उसके द्वारा ही किया जाना चाहिए, यदि वह नहीं करता है, तो गुरु क्या कर सकता है? जो अपना हाथ-पांव नहीं हिलाता, उसको किस कारण क्या दिया जायेगा ।। 152 ।। मेरा सरल पक्ष यही था । प्रतिपक्षी इसके विरुद्ध थे। दोनों पक्षों में दुराग्रह बराबर था, इसके लिए विवाद बढ़ गया।। 153 ।। सभी अंगों के पुष्ट व्यक्ति को भयंकर देहाभिमान होता है। उसी से वाद-विवाद का जन्म होता है। अहंभाव ही प्रतीक है। उसके बिना वाद-विवाद

पैदा नहीं होता ।। 154 ।। प्रतिपक्ष का निश्चित मत था कि कोई कितना ही बड़ा वेद पारंगत पंडित हो गुरु के अनुग्रह के बिना उसकी मुक्ति पुस्तकों तक ही सीमित रहेगी ।। 155 ।। भाग्य बड़ा है या कार्य करने की योग्यता, यह विवाद घनघोर छिड़ गया । मैंने कहा कि जब केवल भाग्य पर निर्भर करेंगे, फिर क्या हो सकता है।। 156 ।। तब मेरे विरुद्ध पक्ष के लोग बोले, "जो घटित होना है, उसे रोका नहीं जा सकता, होनी टल नहीं सकती। मैं-मैं कहने वाले थक गये" ।। 157 ।। भाग्य से आगे कौन जा सकता है। एक करते हैं, एक होता है ।तुम अपनी चतुराई को सुरक्षित रखो । अभिमान मानने वाला नहीं है" ।। 158 ।। मैंने कहा, "कैसे कह सकते हैं। यहां जो उद्यमी है उसका सब कुछ है। आलसी बैठा रहे तो भाग्य उसकी सहायता कैसे करेगा" ।। 159 ।। "स्मृति वचन है, "अपना उद्धार अपने आप करो" "इसका अनादर करके भवसागर पार करना असंभव है ।। 160 ।। यहां जिसका, उसी को करना है, फिर गुरु के पीछे लगना किस अर्थ का? अपनी उत्कृष्टता जाग्रत किये बिना गुरु के पीछे भागने से कैसे होगा? ।। 161 ।। अच्छे व बुरे का विचार करने वाली अपनी बुद्धि, जो अपने चित्त शुद्धि का साधन है, को जो मूर्ख फेंक देगा उसे गुरु क्या सिद्धि दे सकता है" ।। 162 ।। इस वाद-विवाद का अंत नहीं हुआ, कोई सार्थक परिणाम नहीं निकला। चित्त के स्वास्थ्य में गिरावट और आ गयी। यही कमाई मैंने की ।। 163 ।। ऐसा वाद-विवाद करते-करते कोई तिल भर थका नहीं। ऐसे ही दो घटका (48 मिनट) गुजर गये। बाद को बंद करना पड़ा ।। 164 ।। बाद में हम लोगों के साथ जब मस्जिद गये, बाबा ने काका साहेब से क्या पूछा, कृपया सुनिए ।। 165 ।। "वाडा में क्या चल रहा था । वाद किस विषय पर हो रहा था। ये हेमाडपंत क्या कह रहे थे। मुझे देखते हुए बोले" ।। 166 ।। वाडा से मस्जिद तक के मध्य अन्तर (दूरी) बहुत है। बाबा को यह समाचार कैसे सूचित हुआ। मेरा मन आश्चर्य चकित रह गया ।। 167 ।। इस प्रकार वाग्वाण से मैं ऐसा आहत हुआ कि निःशब्द लज्जा से सर झुक गया । पहली ही भेंट में ऐसा अनुचित हो गया जो मुझसे अपेक्षित नहीं था ।। 168 ।। हेमाडपंत नामकरण प्रातः काल के वार्तालाप के कारण हुआ, उसी से बाबा को "हेमाड" का स्मरण हो आया, ऐसा मैंने मन में धारण कर लिया ।। 169 ।। देवगिरि के यादव राजा दौलताबाद के जाधव के समान थे। तेरहवीं शताब्दी के उनके राज्य के वैभव से महाराष्ट्र का गौरव बढ़ा था ।। 170 ।। महादेव नामक राजा शक्तिशाली व चक्रवर्ती था। उसका भतीजा अपने गुणों व पराक्रम के कारण ख्याति प्राप्त था ।। 171 ।। यही राजाओं में अग्रणी "रामराजा" यदुवंश के मुकुट का रत्न था। उन दोनों के मंत्री बहुगुणी व सर्वथा योग्य "हेमाद्रि" थे ।। 172 ।। ब्राह्मणों के लिए परम उदार, "धर्मशास्त्र" नामक ग्रंथ के लेखक, हेमाद्रि ने प्रारम्भ में आचार व्यवस्था पर क्रमबद्ध लेखन किया था ।। 173 ।। "चतुर्वर्ग चिंतामणि" नामक ग्रन्थ की रचना "हेमाद्रि" ने की जिसमें व्रत, दान, तीर्थ व मोक्ष पर विस्तार से विवेचन किया गया है। उनकी यह कृति विख्यात है ।। 174 ।। संस्कृत भाषा (देवभाषा) में "हेमाद्रिपंत"

प्रकृति भाषा (मराठी भाषा) में “हेमाडपंत” बन जाता है। वह उस समय राजनीति में कुशल राजनयिक के रूप में विख्यात थे ।। 175 ।। किन्तु उनका वत्स गोत्र था, मेरा भारद्वाज, वे पंचप्रवरी, मैं तीन प्रवरी, वे यजुर्वेद, मैं ऋग्वेद का अधिकारी, वे धर्म शास्त्री, मैं मूर्ख ।। 176 ।। वे (यजुर्वेदी शाखा) माध्यंदिन, मैं (ऋग्वेद की शाखा) शाकली, वे धर्मज्ञ, मैं लम्पट, वे पंडित (विद्वान), मैं अकुशल मूर्ख। मुझे यह व्यर्थ पदवी क्यों? ।। 177 ।। वे राजनीति के धुरंधर कूटनीतिज्ञ, मैं अल्पमति मंदबुद्धि । उनकी कृति “राज्य प्रशस्ति" से उनकी प्रसिद्धि थी, मेरे हाथ से एक श्लोक भी नहीं ।। 178 ।। वह लिखने की कला में भिज्ञ, मैं ऐसा अज्ञानी मूर्ख । वह धर्मशास्त्र के विशारद ज्ञानी, मैं ऐसा अल्पज्ञानी ।। 179 ।। उनका “लेखन कल्पतरु” नाना चित्रकाव्यों का संकलन, मैं ऐसा बाबा का बच्चा, एक श्लोक भी न लिख सकूँ ।। 180 ।। गोरा, चोखा, सावंतामाली, निवृत्ति, ज्ञानेश्वर, नामदेव आदि सभी भागवत धर्म प्रवर्तन मण्डली का ऐसे समय में उदय हुआ था ।। 181 ।। जिस सभा में पंडित बोपदेव जैसे विद्वन्मणि शोभायमान थे, वहीं पर हेमाडपंत राजनीतिज्ञ थे, जिनके गुणों की ख्याति थी ।। 182 ।। उसके बाद उत्तर से यवनों की फौज ने इस देश (दकन) पर आक्रमण कर दिया जहां-तहां मुसलमान फैल गये। दकन शासकों का पराभव हो गया ।। 183 ।। बिना किसी कारण नहीं था यह पदवी दिया जाना, मेरी चतुराई का सम्मान था, किन्तु वाद-विवाद करने के स्वभाव पर शब्दरूपी बाण मेरे अभिमान का खण्डन करने के लिए थे ।। 184 ।। जैसे आधी करने के बाद हल्दी का टुकड़ा पीला दिखता है, मैं, बिना योग्यता के, बिना उद्देश्य, बकबक करने वाला, मुझे बाबा ने समय से अंजन लगाकर मेरी आँखें खोल दीं ।। 185 ।। जैसे भी हो जैसा कि पहले इंगित किया गया साईं मुख से उदित विलक्षण सामयिक अर्थवान नामकरण को मैंने अपना आभूषण मान लिया।। 186 ।। उससे मैंने यह छोटी सी शिक्षा ली कि तर्क-वितर्क कुलक्षण हैं, एक क्षण के लिए भी इससे मेरा स्पर्श नहीं होना चाहिए, यह परम अकल्याणकारी है ।। 187 ।। मेरे वाद-विवाद के अभिमान को खत्म करने के लिए ही यह नामकरण हुआ, जिससे मुझे मृत्यु पर्यंत यह अनुभूति रहे और सदैव अभिमान विहीन बने रहें ।। 188 ।। राम, दशरथ के पुत्र, ईश्वर के अवतार, पूर्ण ज्ञानी, विश्व को तारने वाले, समस्त महर्षिगण जिनका मनन करते हैं, ने वशिष्ट (गुरु) के चरण पकड़े थे ।। 189 ।। कृष्ण, परब्रह्म के स्वरूप, को एक गुरु बनाना पड़ा। संदीपनी के घर लकड़ी पहुंचाने की कठिनाई वहन करनी पड़ी थी ।। 190 ।। वहां मेरी क्या उत्कृष्टता है। वाद-विवाद किस लिए करें। बिना गुरु के न ज्ञान है, न ही परमार्थ, शास्त्रों का यह प्रतिवादन मेरे मन में दृढ़ हो गया ।। 191 ।। वाद-विवाद अच्छा नहीं है, न ही दूसरे से तुलना करना। श्रद्धा और सबूरी के बिना परमार्थ तिल भर भी प्राप्त नहीं हो सकता ।। 192 ।। बाद के दिनों में मैंने अनुभव किया। इस प्रकार यह नाम गौरव प्रेमपूर्वक सद्भाव के साथ शुद्ध हृदय से मैंने स्वीकार किया ।। 193 ।। इस प्रकार है यह कथानक जो स्वपक्ष-परपक्ष के विचार का खण्डन करता

है, वाद-विवाद का अंत करता है, सभी के लिए बराबर ज्ञानबर्धक है ।। 194 ।। इस प्रकार ऐसा इस ग्रंथ का प्रयोजन, जो इसके अधिकारी हैं, इसका विषय से संबंध और ग्रन्थकार का नामकरण का कथन व श्रवण करलिया ।। 195 ।। अब इस अध्याय का विस्तार काफी हो गया। बाद में हेमाड साईं के चरणों में यथानुक्रम कथा सविस्तार अर्पित करेगा । उसका श्रवण तत्पर होकर करें ।। 196 ।। साईं ही अपनी सुख संपत्ति हैं, साईं ही अपने सुख संवित्ति हैं, साईं ही अपनी परम निवृत्ति हैं। अंतिम गति भी साईं हैं ।। 197 ।। साईं की कृपा के कारण उनके चरित्र का श्रवण करने से दुस्तर सांसारिक भय को पार किया जा सकता है, कलियुग के पाप का निर्मूल हरण किया जा सकता है ।। 198 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जनों द्वारा प्रेरित भक्त हेमाडपंत द्वारा विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित का "कथा प्रयोजन नामकरण" नामक द्वितीय अध्याय सम्पूर्ण होता है।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय तीसरा (ग्रन्थप्रयोजनानुज्ञापन)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

अब पूर्व कथा के संबंध में, साईं पूर्ण आश्वासन देते हुए, बोले, **"चरित्र का वर्णन करने के लिए तुम्हें मेरी संपूर्ण अनुमति है ।। 1 ।। तुम अपना कार्य करो। मन में थोड़ा भी कचरा नहीं होना चाहिए। मेरे वचन पर पूर्ण विश्वास करो। मन में स्थिरता लाओ ।। 2 ।। मेरी लीलाओं के लेखन से अज्ञानतावश किया गया दोष विकीर्ण हो जायेगा। भक्ति भाव से श्रवण करने से प्रपंच की ओर से ध्यान हट जायेगा ।। 3 ।। भक्ति और प्रेमामृत की लहर श्रवणसागर पर उठेगी। जिसमें बार-बार डुबकी लगाने से बोधरत्न की उपलब्धि होती है ।।** 4 ।।" यह सुनकर मेरा मन शंकाविहीन हो गया। साईं के चरणों में नमन किया, तत्पश्चात यथास्मरण साईं चरित्र लिखना आरम्भ कर दिया ।। 5 ।। जैसे ही ये शब्द बाबा के ओंठो से निकले, तैसे ही मन में इसे अच्छा शकुन मान कर गाँठ बांध ली कि अब बाबा का कहा हुआ शीघ्र पूरा होगा । मैं तो बलात सेवा में लगाया गया श्रमिक रहूँगा ।। 6 ।। देखो, हरि की लीला अगम्य है। उसके बिना अन्य कोई नहीं इसे समझ सकता है। श्रुति, शास्त्र व वेद सभी मूक हो गये। उसकी गहराई को कोई नाप नहीं सका ।। 7 ।।शास्त्रों में पारंगत, वेदों के ज्ञाता, प्रज्ञावंत पंडित, व्याकरण आदि की व्यर्थता पर वाद प्रवाद करने वाले कवि, इन सभी का ज्ञान अधूरा है ।। 8 ।। हरि अपने भक्तों के लिए खेलते हैं, भोले-भाले भक्तों के लिए भूखे रहते हैं। प्रेम के प्रति समूल अधीन हो जाते हैं। दांभिक (पाखंडी) के लिए सदा हठी हैं ।। 9 ।। इसी में तुम्हारा कल्याण है। मेरे भी अवतार की सार्थकता है। देखो, मैं नित्य बार-बार यही कहता हूं यही मेरी उत्सुकता रही है ।। 10 ।। **शामा! यह मेरा आशीर्वचन है, जो मेरा नाम प्रेम से लेगा मैं उसकी सर्व कामना पूरी करूंगा। प्रेम में वृद्धि होगी ।। 11 ।। इसके बाद जो मेरे चरित्र व गुणों का अनुराग से गान करेगा मुझे अपने आगे-पीछे चारों ओर खड़ा पायेगा ।। 12 ।। जो भक्त मुझमें अपनी आत्मा व प्राण से अनुरक्त है उसे कथा श्रवण से सहज आनन्द की प्राप्ति होती है ।। 13 ।। जो भी मेरा कीर्तन करता है उसे परिपूर्ण आनन्द, सुख और संतुष्टि नित्य प्रदान करता हूं। ये मेरा सत्य वचन है ।। 14 ।। जो अनन्य भाव से मेरी शरण में है, जो विश्वास से युक्त होकर मेरा भजन करता है, मेरा चिन्तन करता है मेरा स्मरण करता है उसके उद्धार का मैं वचन देता हूं ।। 15 ।। वहां पर विषयों के प्रति स्पंदन कैसे हो सकती है जहां मेरा नाम, मेरी भक्ति, मेरी लीलाओं का संग्रह, मेरी पोथी, मेरा ध्यान व मेरा अक्षय चिंतन होगा ।। 16 ।। यमराज के जबड़े से अपने भक्तों को बाहर खींच लूंगा, मेरी कथा केवल श्रवण करने से रोग नष्ट हो जायेंगे ।। 17 ।। कथा सादर**

श्रवण करो। उसका संपूर्ण मनन करो। पूर्ण मनन के बाद ध्यान करो, उससे संतुष्टि प्राप्त होगी ।। 18 ।। "मैं वह मैं" पिघल जायेगा। श्रोता का मन उन्मनी (समाधि) स्थिति को प्राप्त हो जायेगा। अनन्य एवं परिपूर्ण श्रद्धा से चित्त (हृदय) चैतन्यघन हो जायेगा ।। 19 ।। साई साई नाम का स्मरण कलियुग से उत्पन्न सभी पापों दहन करता है।वाणी व श्रवण गत पाप का भंजन साष्टांग दण्डवत करने से हो जाता है।। 20 ।।   यद्यपि कार्य सामान्य नहीं था, किन्तु पूर्ण सम्मान के साथ मैंने आज्ञा का पालन किया । बाबा सरीखे उदार के होते हुए मैं दैन्य क्यों स्वीकार करूँ ।। 21 ।। किसी के हाथ से मंदिर बनवाते हैं, किसी को कीर्तन का आनन्द लेने में लगाते हैं, किसी को तीर्थ यात्रा पर भेजते हैं, मुझे लिखने के लिए बैठा दिया ।। 22 ।। उन सभी में मैं पामर हूं । मेरे किस गुण के कारण करुणा सागर दयानिधान साईं मुझ पर प्रसन्न हुए, मैं इसे कैसे जान सकता हूं ।। 2 3 ।। किन्तु यह गुरुकृपा का ही कौतुक है जहां आर्दता का अंश भी न हो वहां भी पुराने व सूखे पेड़ पर फूल खिलते हैं व बिना प्रयास फल निकलते हैं ।। 24 ।। आने वाले दिनों में कोई मठ बनवाएगा, कोई मंदिर, कोई घाट, मेरा तो सीधा मार्ग है साईं का चरित्र पाठ ।। 2 5 ।। कोई सत्कार पूर्वक पूजनार्चन करता है, कोई पैर दबाता है, मेरा मन गुण संकीर्तन के लिए उत्कंठित हो रहा है ।। 26 ।। सतयुग में "ध्यान” से, त्रेता युग में “यज्ञ” से, द्वापर में "पूजा" व "अर्चना” से,जो कुछ प्राप्त किया जा सकता था, वह सब कलियुग में गुरुभजन “नाम संकीर्तन” से प्राप्त किया जा सकता है ।। 27 ।। मेरी अयोग्यता स्पष्ट है। मुझे किसी भी विषय का पूरा ज्ञान नहीं है, यद्यपि थोड़ी-थोड़ी जानकारी सभी विषयों की है। मैनें इतना बड़ा कार्य करने की मुसीबत क्यों बुला ली ।। 28 ।। बिना यत्न किये बैठे रहने से आज्ञा पालन न करने के पाप का दोषी होऊंगा। यदि आज्ञा पालन करता हूं, कार्य कैसे संपन्न करुंगा ।। 29 ।। समर्थ साईं की निज स्थिति का यथार्थ वर्णन कौन कर सकता है, वे स्वयं ही भक्तों के लिए कृपा करते हैं, स्वयं अपने भक्तों से बोलवाते हैं ।। 30 ।। जहां वाणी दौड़कर न चल सके, वहां ऐसा कार्य करने की इच्छा क्यों की? ऐसा कहने का कोई अवसर किसी को नहीं दिया ।। 31 ।। जब मैंने लेखनी हाथ से उठायी, बाबामेरा मैंपन हर लिये। अपनी कथा स्वयं ही लिखने लगे। जिसका भूषण, उसी को दें ।। 32 ।। यह जो संत चरित्र लेखन है, संत के बिना कौन करेगा। बाबा के अज्ञेय गुणों का आंकलन आसमान का आलिंगन करने के समान है ।। 33 ।। उनकी महिमा अति गहन है उसका वर्णन करने, के लिए मेरी बुद्धि समर्थ नहीं है। वे अपना कार्य अपने हाथ में लें, तथा वचन मुक्त होवें ।। 34 ।। बाबा यद्यपि मैं जन्म से ब्राह्मण हूं फिर भी श्रुति (वेद) तथा स्मृति (पुराण) रूपी दो नेत्रों से विहीन हूं। यद्यपि यह इस जन्म पर दोष है, किन्तु आपने मुझे भूषित किया है ।। 35 ।। श्रुति (वेद) तथा स्मृति (पुराण) ब्राह्मण के दो नयन हैं। जो एक को नहीं जानता वह काना है जो दोनों को नहीं जानता वह अंधा है। मैं वैसा ही दीन व हीन हूं ।। 36 ।। आप मुझ अंधे की लाठी हैं। फिर

मुझे क्यों चिन्ता, टेकते-टेकते पीछे-पीछे चले चलाए मार्ग पर चलते रहेंगे ।। 37 ।। अब आगे कैसे बढ़ें। मुझगरीब को कोई ज्ञान नहीं है। अपना कार्य सम्पादित कराने के लिए स्वयं ही मेरी बुद्धि का मार्गदर्शन करें ।। 38 ।। जिसकी कल्पनातीत शक्ति से गूंगा वृहस्पति की तरह बोलने लगता है, लंगड़ा मेरू पर्वत लांघ सकता है, उसकी युक्ति वही जाने ।। 39 ।। मैं तो केवल पावों का दास हूं। मुझे उदास मत करें। जब तक इस शरीर में सांस है अपना कार्य पूर्ण करा लें ।। 40 ।। अब अपने श्रोतागण, इस ग्रंथ को लिखने का प्रयोजन जान गए होंगे। साईं लिखवाएं तो हम स्वयं ही लिखेंगे भक्तों के कल्याण के लिए ।। 41 ।। हरमोनियम या बाँसुरी कैसी बजती है, यह इन दोनों की चिन्ता का विषय नहीं है, यह तो बजाने वाले का श्रम है। मैं भी दुःखी क्यों होऊँ ।। 42 ।। क्या जो चन्द्रकान्त से टपकता है, वह उसके द्वारा निर्मित अमृत है। वह तो चन्द्रमा का करिश्मा है, जो चन्द्रोदय के समय चन्द्रमा द्वारा निर्मित होता है ।। 43 ।। अथवा क्या सागर का ज्वार उसके द्वारा उत्पन्न किया जाता है? वह सागर द्वारा निर्मित नहीं, बल्कि चन्द्रोदय होने पर उत्पन्न होता है ।। 44 ।। इसलिए जैसे सागर में तीव्र लाल रंग का दीप निदर्शक खड़ा कर देते हैं, जिससे सागर की नावें भंवर तथा चट्टान को टालते हुए बिना रुकावट के चल सकें ।। 45 ।। वैसे ही साईंनाथ की कथाएं हैं, जिनकी मधुरता अमृत को भी पीछे छोड़ देती है हैं, भवसागर के कठिन मार्ग को सुगम बनाती हैं ।। 46 ।। संतों की कथाएं धन्य हैं कानों से हृदय में प्रवेश ह करते ही, शारीरिक अभिमान बाहर निकल आता है, विरोधाभास निहित प्रश्न समाप्त हो जाते हैं।। 47 ।। जैसे-जैसे ये कहानियां हृदय में एकत्र होती हैं, वैसे-वैसे संदेह क्रमशः समाप्त होते रहते हैं। शुद्ध ज्ञान का संचय पर्याप्त मात्रा में होता है देह की अकड़ कम होती है ।। 48 ।। बाबा के शुद्ध यश के वर्णन से, प्रेमपूर्वक इसके श्रवण से भक्तों के पापों का नाश होता है। परमार्थ का साधन संपन्न होता है ।। 49 ।। माया से परे ब्रहम क्या है? उससे पार जाने का उपाय क्या है। कर्म-धर्म के आधार से कैसे हरि अपने भक्तों के प्रिय हो जाते हैं? ।। 50 ।। परम कुशलता क्या है? भक्ति, मुक्ति, विरक्ति क्या है? वर्णाश्रम धर्म और अद्वैत क्या है? इत्यादि विषय अति गूढ़ हैं ।। 51 ।। इस विषय में जिनकी रुचि हो उन्हें अपनी अभिरुचि की पूर्ण संतुष्टि के लिए श्री ज्ञानेश्वर, एकनाथ आदि द्वारा लिखे ग्रंथों का अध्ययन करना चाहिए। इससे आनन्द प्राप्त होगा ।। 52 ।। कृत युग में इन्द्रियों के शमन व दमन से, त्रेता युग के यज्ञ से, द्वापर युग में पूजन से, कलयुग में नाम स्मरण कथा श्रवण तथा कीर्तन से मुक्ति सरलता से साध्य है ।। 53 ।। ब्राहमण आदि सभी चारो वर्गों के लिए गुरुकथा श्रवण ही मुक्ति का साधन हैं। स्त्री हो, शूद्र हो या विजातीय सभी के लिए एक ही साधन है ।। 54 ।। जिनके पुण्य संचित हैं, वही इस कथा का श्रवण कर सकते हैं, इनमें से जो कोई निद्रा के वशीभूत हो जायेगा, उसे भी हरि जगा देंगे ।। 55 ।। जो विषय भोगों के पीछे अनवरत भागते रहते हैं, प्राप्ति न होने पर दीन चित्त हो जाते हैं, उन्हें भी संतकथा का अमृत विषयों

से निर्मुक्त कर देगा ।। 56 ।। योग, यज्ञ, ध्यान व धारणा करने में विविध प्रकार के प्रयास करने पड़ते हैं, किन्तु कथा श्रवण में किसी प्रयास की आवश्यकता नहीं पड़ती, सिवाय ध्यान केन्द्रित करने के ।। 57 ।। ऐसी निर्मल है साईं की कथा, सज्जन श्रोताओं द्वारा प्रेमपूर्वक श्रवण करने से प्रबल पंच महापाप जल जायेंगे । समूल जाँते में नष्ट हो जायेंगे ।। 58 ।। हम भवपाश में जकड़े हुए हैं, उसी वेणी में निजस्वरूप (आत्मा) बंधा हुआ है। श्रवण से उक्त वेणी ढीली होगी तथा स्वरूप पहले प्रकट होगा ।। 59 ।। ये कथायें जीवन पर्यंत हमें स्मरण रहे, उनका नित्य अध्ययन होता रहे, इससे सांसारिक विवाद सुलझेंगे तथा जीवात्मा को संतुष्टि प्राप्त होगी ।। 60 ।। भक्ति भाव से पढ़ने व सुनने से साईं का ध्यान सहज हो जायेगा। सगुण रूप आँखों के सामने दिखने लगेंगे व चित्त में दृढ़तर बैठ जायेगा ।। 61 ।। सद्गुरु की भक्ति इस प्रकार हो तथा संसार से विरक्ति प्राप्त हो, गुरु स्मरण की भी प्रीति उत्पन्न हो तथा मति निर्मल हो ।। 62 ।। मन में ऐसा ही सोचकर साईंनाथ ने कृपा की होगी। निमित्त के लिए मुझे आगे करके स्वयं ही यह अद्भुत कार्य किया ।। 63 ।। थन में दूध भरे रहते हुए भी बिना बछड़े के गाय दूध निकालने नहीं देती ।यह गाय का दूध बछड़े के लिए ही होता है, ऐसा ही साईं का अनुराग है ।। 64 ।। मुझ, चातक की आशा के अनुरूप आनन्दघन की इतनी वर्षा (साई) माँ ने की है कि मेरी अल्प तृष्णा शांत हो गयी। अन्य भक्तों की भी प्यास पूरी तरह शांत हो गयी ।। 65 ।। भक्ति प्रेम कितना अद्भुत है। बालक की भूख का अहसास माँ को हो जाता है, उसके मुख खोले बिना ही अपने स्तन का चूचुक उसके मुंह में डाल देती है ।। 66 ।। उसकी थकान को कौन जानता है, बालक को उसका ज्ञान नहीं है। अपनी माँ के बिना, बिना मांगे अन्य कौन बालक को स्तन देगा ।। 67 ।। जब बालक को सुन्दर वस्त्र व छोटे-छोटे आभूषण से सजाया जाता है तो बालक को उसका आनन्द नहीं होता है। उसका आनन्द एक माता को ही मालूम होता है। वैसे ही सद्गुरु व्यवहार करते हैं ।। 68 ।। और माँ के अतिरिक्त और किसमें दयापूर्ण उत्सुकता होगी। कौन उसके बच्चे के बचकाने सुख से संतुष्ट होगा। ऐसा कोमल हृदय जनित स्नेह अनुपम है ।। 69 ।। महाभाग्य से देव की कृपा से ही सुमाता की कोख से जन्म मिलता है उसे जन्म देने में जो कष्ट सहन करना पड़ता है उसे बालक थोड़ा भी नहीं जानता है ।। 70 ।। इतने ही महत्व का बाबा का बोला हुआ एक अन्य वचन बताता हूं। ओ, सज्जन श्रोताओं कृपया सादर ध्यान देकर के सुनें ।। 71 ।। सन् 1916 में मेरी सरकारी सेवा पूर्ण हो गयी थी । यथोचित पेंशन निश्चित हो गयी। शिरडी आने का समय आ गया था ।। 72 ।। यह गुरु पूर्णिमा का दिन था। गुरु पूजन के लिए भक्त एकत्र हुए थे। अन्नासाहेब ने स्वयं से प्रेरित होकर बाबा से विनती करके मेरी संस्तुति की, उसे सुनें ।। 73 ।। मेरे प्रतिवास्तविक लगाव बस अन्नासाहेब ने बाबा से विनती की "इनके ऊपर करुणा करें बाबा, इनका परिवार बढ़ रहा है ।। 74 ।। इन्हें दूसरी सेवा दिला दें। इस पेंशन से क्या पूरा होगा । अन्नासाहेब की चिंता

निवारण के लिये कुछ करें ।। 75 ।। बाबा ने फिर प्रतिउत्तर में कहा," **इन्हें नौकरी मिलेगी, अब इन्हें मेरी सेवा करनी चाहिए। इसी में इन्हें संसार का सुख मिलेगा" ।। 76 ।। इनकी थाली सदा भरी रहेगी। जब तक जीवित हैं, वह कभी खाली नहीं होगी। यदि ये सर्वदा मेरे संरक्षण में रहेंगे, इनकी सभी विपदायें हर ली जायेंगी ।। 77 ।। "मैं जैसा चाहूं वैसा यदि करूं तो इससे अंतर क्या पड़ता है" ऐसा कहने वालों को पथभ्रष्ट जानो। जिन्होंने धर्म का आचरण छोड़ दिया है उन्हें सर्वप्रथम उपेक्षित करना चाहिए ।। 78 ।। जब ये सामने से आ रहे हों अपने दूसरी दिशा में मुड़ जाना चाहिए। इन्हें महा भयंकर जानिए । इनकी छाया से दूर रहें, चाहें कष्ट ही सहना पड़े ।। 79 ।। आचारहीन, चरित्रहीन, विचारहीन, कर्महीन जो ईष्ट व अनिष्ट को न देख सके उसे अभीष्ट कैसे प्राप्त हो सकता है ।। 80 ।। बिना पूर्वजन्म के विशेष बन्धन के कोई भी अपने पास नहीं आता है, कुत्ता हो, सूकर हो या मक्खी किसी को दुत्कारना नहीं चाहिए ।। 81 ।। इसके पश्चात उन्हें भक्ति भाव से मेरी सेवा करनी चाहिए। देवाधिदेव इनके ऊपर करुणा करेंगे । अक्षय कोष इन्हें मिलेगा ।। 82 ।। कैसे, फिर, यह पूजा करनी होगी। "मैं कौन" यहनिश्चित रूप से कैसे जानेंगे । साईं का भौतिक शरीर तो नाशवान है, यह तो ब्रह्म है जो अविनाशी व पूज्य है ।। 83 ।। मैं अष्टधा प्रकृति के रूप में चारों दिशाओं में व्याप्त हूं। गीता व्याख्यान में भगवान ने अर्जुन से यही कहा है ।। 84 ।। चर व अचर जगत में जो नाम रूप व आकृति है वह अष्टधा प्रकृति का आवरण लिए मैं ही हूं। यह मेरा एक चमत्कार है ।। 85 ।। ॐ प्रणव मेरा वाचक है। उसका वाच्य केवल मैं ही हूं। आकार रूप में विश्व में अनेक वस्तुएं हैं उन सभी में मैं ही विद्यमान हूं ।। 86 ।। जहां अपने से भिन्न कोई वस्तु नहीं है वहाँ किस वस्तु के लिए कामना की जाये । केवल मैं ही दसों दिशाओं में प्रत्येक स्थान पर व्याप्त हूं ।। 87 ।। सर्वत्र मेरे व्याप्त होने के भाव के साथ,जहां "मैं" और "मेरा" समाप्त हो जाता है वहां इच्छा करने योग्य क्या है सभी वस्तुओं में सर्वस्व व्याप्त है ।। 88 ।।**" कामना बुद्धि में उगती है आत्मा से संबंध नहीं रखती है। साईं महाराज आत्मस्वरूप हैं, फिर कामना का स्फुरण वहां कैसे हो सकता है ।। 89 ।। **कामना के भिन्न प्रकार हैं। "मैं कौन हूं" का तत्वज्ञान हो जावे फिर वे ऐसे पिघल जाती है जैसे सूर्य की किरणों से संतप्त होकर ओला ।। 90 ।। मैं न तो मन, बुद्धि आदि सकल इन्द्रियों का विराट (विशाल विश्व) स्थूल हूं, न ही मैं हिरण्य गर्भ हूं, मैं तो अनादि पुरातन साक्षी हूं ।। 91 ।। इस प्रकार गुणों व इन्द्रियों से परे मेरी तत्परता विषयों में नही है न ही कोई ऐसा स्थान है जो मुझसे रिक्त हो, न ही मैं कर्ता हूं, न ही कराने वाला ।। 92 ।। मन बुद्धि आदि इन्द्रिय गण सभी कष्टप्रद हैं जब यह ज्ञान हो जाता है तब विरक्ति प्रकट होती है। ज्ञान के ऊपर का आवरण हट जाता है ।। 93 ।। अपने वास्तविक रूप का विस्मरण हो जाने पर माया का अवतरण होता है। शुद्ध पूर्णानन्द का स्मरण ही वह मैं "चैतन्यघनरूप" हूं ।। 94 ।। ऐसे मेरे प्रति मन की वृत्तियों को फेर देना ही सेवा एवं मेरे प्रति भक्तिहै। मुझ**

चिदानंद के रूप की अनुभूति ही उस ज्ञान की शुद्ध स्थिति है ।। 95 ।। यह आत्मा ब्रह्म है।परमानन्द की अनुभूति ही ब्रह्म है। जगत के मिथ्यत्व में ही जगत का भ्रम होता है। सतत्व में ब्रह्म मैं ही हूं ।। 96 ।। "नित्य, शुद्ध, बुद्ध, एवं मुक्त ओम से पूर्ण वासुदेव मैं हूं। सत्य श्रद्धा एवं भक्ति के साथ मेरा पूजन करने से ही स्वहित होगा' ।। 97 ।। इस प्रकार मैं कौन हूं, जानकर मेरी यथार्थ पूजा होनी चाहिए। अच्छा हो, पूर्ण रूप से मेरी शरण में आकर मेरे साथ समरस हो जाओ ।। 98 ।। नदी समुद्र की शरण में जाती है, क्या वहां से पुनः वापस आ सकती है? क्या वह नदी के रूप में अलग अस्तित्व बना सकती है, एक बार सागर का आलिंगन करने के बाद ।। 99 ।। तेल युक्त कपास की बत्ती दीपक की ज्योति से संपर्क होने पर स्वयं भी दिव्य दीप्ति को प्राप्त हो जाती है ऐसी ही गति संतजनों के पदों की है ।। 100 ।।“ शांत, निरपेक्ष व समदर्शन चैतन्यघन अल्लाह मालिक के बिना जिसका चित्त चिंतन नहीं करता उसमें “मैं” पन कैसे होगा ।। 101 ।। जहां पर निर्ममत्व, निरहंकृति, निर्द्वन्दत्व तथा निष्परिग्रह स्थिति ये चार गुण बसते हैं वहां पर “मैं” पन कैसे रह सकता है? ।। 102 ।। तात्पर्य यह है कि ये आठ गुण श्री साईं में संपूर्ण रूप से विद्यमान हैं, फिर वहां “मैं” पन को कैसे स्थान मिल सकता है। “मैं” पन का पोषण कैसे किया जा सकता है ।। 103 ।। जिसका “मैं” पन विश्वभर में व्याप्त है उसी का अंश मेरा मैं” पन हो । श्री साईं के पदों में उस मैंपन का समर्पण कराना ही मेरी सम्पूर्ण सेवा है ।। 104 ।। श्रीमद् भागवत में श्री कृष्ण भगवान ने कहा है कि जो मेरी सेवा करता है , मेरा भजन करता है , पूर्णरूप से मेरी शरण में है,वह मेरे साथ एकरूप को जाता है,जानो ।। 105 ।। कीट का भ्रमर की ओर निरन्तर ध्यान उसको पूर्ण भ्रमर बना देता है। जो शिष्य अपने गुरु का भजन करता है वह अपने गुरु के समान हो जाता है ।। 106 ।। समान शब्द से जो अलगाव है वह गुरु को एक क्षण के लिए भी सहज नहीं है। शिष्य के बिना गुरुत्व संभव नहीं, गुरुपन शिष्यत्व से अभिन्न है ।। 107 ।। अतः मैंने उसकी व्याख्या कर दी जिसकी पूजा करने की आज्ञा मुझे मिली है, इसकी पुष्टि के लिए इसी क्रम में, एक कहानी याद हो आयी उसे कहता हूं ।। 108 ।। शिरडी में एक “रोहिल्ला” आया । वह बाबा के गुणों से मोहित था, बहुत दिन रहा। बाबा के प्रति प्रेम से उसका हृदय ओत-प्रोत था ।। 109 ।। वह शरीर से सांड की तरह पुष्ट था, स्वेच्छाचारी, किसी की परवाह न करने वाला, पांव तक शरीर को ढके केवल कफनी पहिने मस्जिद में आकर रहने लगा ।। 110 ।। दिन हो या रात्रि, मस्जिद हो या चावडी उच्च स्वर में अति आवेश में स्वच्छन्द होकर कलमें पढ़ता था ।। 111 ।। महाराज तो शान्ति की मूर्ति किन्तु ग्रामवासी बहुत परेशान हो गए । मध्य रात्रि में भी निरन्तर शोर से लोगों की नींद में विघ्न उत्पन्न होता था ।। 112 ।। दिन भर धूप में खेतों में अथवा जंगलों में परिश्रम करते और रात्रि में शांति पूर्वक नींद (लोगों को) नहीं मिलती, लोग नितान्त त्रस्त हो गये ।। 113 ।। शायद बाबा को कोई परेशानी नहीं थी किन्तु लोगों के लिए तो बड़ा पाप था। रात्रि में

सुख की नींद नहीं सो पाते । वो रोहिल्ला से बहुत क्रोधित थे ।। 114 ।। कष्टमय दुविधा की स्थिति में कब तक वे धैर्य रखते। रात-दिन की यह किरकिरी उनके लिए बड़ी चिन्ता का कारण बन गई।। 115 ।। रोहिल्ला पहले ही उल्टी खोपड़ी का व्यक्ति था उस पर बाबा से प्रबल संरक्षण मिल गया उससे अंनियंत्रणीय हो गया तत्पश्चात बहुत उद्दण्ड हो गया ।। 116 ।। उसकी उद्दण्डता और अधिक बलवती हो गयी। लोगों के लिए अपमानजनक भाषा का प्रयोग करने लगा व उनके प्रति असीम बेपरवाह हो गया। तब पूरा गांव ही उसके विरोध में खड़ा हो गया ।। 117 ।। अत्यन्त करुणामयी माँ श्री साईंनाथ द्वारा शरणागत को संरक्षण देने से उत्पन्न समस्या के विषय में गांव के सभी लोग बाबा से विनती भाव से शिकायत करने आए ।। 118 ।। किन्तु बाबा ने ध्यान नहीं दिया ग्रामवासियों से उलटे कहा " **रोहिल्ला मेरा अति प्रिय है, उसे सताओ नहीं ।। 119 ।। रोहिल्ला की पत्नी भगोड़ी है, उसके पास स्थिर होकर रहती नहीं है, यह अशुभ नारी उसे धोखा देकर मेरे पास आने को उत्सुक रहती है ।। 120 ।। इस क्षुद्र में शालीनता नहीं है, निर्लज्ज है। घर के बाहर निकाल देने पर भी जबरदस्ती घर में घुसती है ।। 121 ।। शोर मचाना बंद कर देने पर इसको घुसने का अवसर मिल जाता है। उसके शोर मचाने पर वह क्षुद्र व मूर्ख भाग जाती है। इससे रोहिल्ला की त्रिशुद्धि (मन, वचन, कर्म) होती है और उससे मुझे सुख समृद्धि मिलती है ।। 122 ।। उसके रास्ते में कोई मत जावे । उसे मुक्त कंठ से शोर मचाने दो । उसके बिना मेरी रात्रि शांति से नहीं बीतती उससे मुझे बहुत सुख मिलता है ।। 123 ।। इस प्रकार उसका शोर मचाना मेरे लिए बहुत हितकारी है। इस प्रकार रोहिल्ला परोपकारी है, मेरे लिए बहुत सुखकारी है ।। 124 ।। उसे जितना हो सके शोर मचाने दो, इसी में मेरा शुभ निहित है अन्यथा वह दुष्ट रोहिली मुझे कष्ट देगी ।। 125 ।। तत्पश्चात जब वह स्वयं ही थक जायेगा, वह अपने आप शांत हो जायेगा। आपका ध्येय पूरा हो जायेगा, नहीं वह क्षुद्र मुझसे झगड़ेगी ।।**" 126 ।। जब महाराज ने ऐसा कहा उसके बाद समस्या के समाधान में रुकावट हो गयी, जब बाबा के मन में ही कोई हलचल नहीं है तो हमें क्या करना? ।। 127 ।। रोहिल्ला में पहले से ही उल्लास था, फाल्गुन मास आने तक गला फाड़-फाड़ कर कलमें पढ़ने लगा। अतुल्य साहस था उसमें ।। 128 ।। सभी जन आश्चर्य चकित थे। बाबा कितने क्षमाशील हैं। जिससे मस्तक फट जाये उसमें वे तल्लीन होते हैं ।। 129 ।। उसका शोर कितना भयंकर है उसका गला कैसे सूखता नहीं था । बाबा का तो एक ही आग्रह था कि रोहल्ला को भयभीत मत करो ।। 130 ।। देखने में रोहिला विवेकहीन व्यक्ति था, लेकिन बाबा के प्रति अत्यंत आदर रखता था। अपने धर्म के अनुरूप कितनी प्रसन्नता से वह कलमें पढ़ता था ।। 132 ।। प्रकृति प्रदत्त घर्घर स्वर से आनन्दित होकर नित्य व निरंतर रोहिला कलमें पढ़ता और "अल्ला हो अकबर" नाम ऊँचे स्वर में उच्चारित करता ।। 133 ।। जिनकी हरि नाम में रुचि नहीं थी उनके द्वारा अपवित्र किए जाने से बाबा संकुचित रहते थे और कहते थे रोहिला, जिसमें भजन

करने की इतनी उत्सुकता है, को क्यों भगाते हो? ।। 134 ।। "मेरे भक्त जहां भजन है करते हैं वहां मैं जाग्रतावस्था में विद्यमान रहता हूँ।" भगवान का यह वचन पुष्ट करने के लिए ही बाबा ने यह अनुभव कराया ।। 135 ।। जो मांग कर खाने वाला है, कच्चा या पक्का, अन्यथा भूखे पेट ही रहने वाला है, ऐसे रोहिल्ल की कहां से पत्नी होगी और बाबा के पास कैसे जायेगी ।। 136 ।। जैसा कंगाल रोहिला था,जिसके लिए एक पैसा भी कीमती था, उसकी कैसी शादी, कैसी पत्नी । बाबा बाल ब्रह्मचारी थे। यह पूरी कहानी ही भ्रमात्मक थी ।। 137 ।। उसका (रोहिला) गला फाड़कर चिल्लाना | बाबा को "कलमों" से संतोष मिलता था। दिन रात उसे सुनते रहते । उसकी तुलना में निद्रा उनके लिए विष थी ।। 138 ।। कहां कलमों की ज्ञानयुक्त-वाणी, कहां ग्रामवासियों की खोखली शिकायत । उनको सद्बुद्धि देने के लिए ही बाबा ने यह सब प्रदर्शन किया ।। 139 ।। इस रीति से बाबा ने अपना अभिप्राय व्यक्त किया । बाबा ने सबको यह अनुभव कराया कि रोहिला की संगति उन्हें इसलिए प्रिय है क्योंकि वह ईश्वर के नाम से प्रीति करता है ।। 140 ।। दृश्य, द्रष्टा और दर्शन में जो परमात्मा को देखता है उसके लिए क्या पठान या ब्राह्मण दोनों ही एक समान हैं ।। 141 ।। एक बार मध्याह्न आरती के बाद लोग अपने-अपने स्थान को जाने के लिए मुड़े ही थे कि बाबा के मुख से जो निकला उस मधुर वचन को सुनो ।। 142 ।। **"कहीं भी होओ, कुछ भी करो इतना सदैव पूर्णरूप से स्मरण रखो कि तुम्हारे कृत्य की यथाघटित खबर मुझे निरन्तर लगती रहती है ।। 143 ।। इस प्रकार अनुभूत ऐसा जो मैं हूं, वह मैं सबका अन्तर्यामी हूं। वह मैं सबके हृदय में रहता हुआ सर्वत्र विचरण करता हूं। मैं सबका स्वामी हूं ।। 144 ।। भूतों, चर-अचर, के बाहर व अन्दर में व्याप्त हूं, मैं अशेष हूं | यह सब सूत्र ईश्वरी है उसका सूत्रधार मैं हूं ।। 145 ।। मैं समस्त भूतों की माँ हूं, मैं त्रिगुणों की साम्यावस्था हूं, मैं ही सभी इन्द्रियों का प्रवर्ता हूं। मैं ही कर्ता, मैं ही धर्ता तथा मैं ही संहर्ता हूं ।। 146 ।। जो मुझे लक्ष्य करता है उसे कैसा भी संकट नहीं होता है। वही जब मुझे भूल जाता है, उसे माया झिड़कती है, पीटती है ।। 147 ।।"** हृदय जगत मेरा ही स्वरूप है, चाहें कीड़ा हो या चीटी, चाहे रंक हो या राजा। यह अपरिमेय चर-अचर जगत बाबा का ही स्वरूप है ।। 148 ।। यह इशारा कितना आनन्द दायक है, ईश्वर और संत में कोई भेद नहीं है। इनका अवतार चर-अचर विश्व के उद्धार के लिए समान रूप से होता है ।। 149 ।। यदि गुरु चरणों में लीन होना है तो, गुरु का गुरुगायन करें, अथवा गुरुकथा का कीर्तन करें अथवा भक्ति पूर्वक श्रवण करें ।। 150 ।। साधक को इस प्रकार श्रवण करना चाहिए कि श्रोता और श्रव्य विलीन हो जायें। फिर आनन्दघन प्रकट होंगे और मन उन्मनी अवस्था को प्राप्त होगा ।। 151 ।। सांसारिक क्रियाकलापों में संलिप्त रहते हुए भी यदि संत कथा कानों तक पड़ती है, तिलभर यत्न किए बिना ही यह स्वभावतः कल्याणकारी होती है ।। 152 ।। फिर यदि भक्ति-भाव से उन्हें सुनें तो कितनी 'श्रेय' प्राप्ति होगी, श्रोताओं को निज हित में यह

विचार करना चाहिए ।। 153 ।। उससे गुरुचरणों के प्रति प्रेम उत्पन्न होगा, धीरे-धीरे सर्वोच्च कुशलता की स्थिति प्राप्त होगी। किसी और निष्ठा या अनुशासन की आवश्यकता नहीं होगी, परम कल्याण होगा ।। 154 ।। जब मन इस प्रकार अनुशासित हो जाए तो कथा श्रवण के तीव्र मनोभाव में बृद्धि होगी। विषयों में आसक्ति सहज रूप से समाप्त होगी। परमानन्द की अनुभूति होगी ।। 155 ।। बाबा की यह मधुर वाणी सुनकर मैंने अपने मन में यह निश्चित किया कि अब इसके बाद मैं नर सेवा त्याग कर गुरु सेवा में ही लगूंगा ।। 156 ।। किन्तु मन में एक कंपायमान उत्सुकता थी "इन्हें नौकरी मिलेगी" यह जो बाबा ने उत्तर में कहा था, क्या यह प्रमाणित होगा ।। 157 ।। क्या बाबा के शब्द खाली जायेंगे | क्या कभी-कभी कुछ बातें घटित नहीं होती । नरसेवा से संबंध जुड़ जायेंगे । पर ये मेरे वास्तविक हित में नहीं होगा ।। 158 ।। अन्ना साहेब की पृच्छा उनकी स्वविचारित थी फिर भी मेरी ही यह इच्छा थी। ऐसा नहीं कि मेरी अनिच्छा हो। न ही यह प्रारब्ध भोगेच्छा थी ।। 159 ।। अन्दर से मैं भी नौकरी चाहता है था, जिससे परिवार का भरण-पोषण कर सकूँ । साईं ने अंगुली के इशारे से गुड़ दिखाया, फिर भी औषधि पिला दी ।। 160 ।। उस औषधि को गुड़ की आशा से पी गया और भाग्यवश परितृप्त हो गया । एक अनअपेक्षित नौकरी मिल गयी जिसे मैंने द्रव्य की अभिलाषा से स्वीकार कर ली ।। 161 ।। फिर गुड़ का समय पूरा हो गया। खाते-खाते अरुचि हो गयी। तब बाबा के उपदेश रूपी मधु को थोड़ा चखने पर उसका स्वाद उत्कृष्ट हे लगा ।। 162 ।। नौकरी चिरस्थायी नहीं थी, जिस पांव आयी थी उसी पांव चली गयी। स्थायी सुख भोगने के लिए बाबा ने मुझे मेरे सही स्थान पर बैठा दिया ।। 163 ।। यह संपूर्ण चराचर विश्व वास्तव में भगवान का ही स्वरूप है। किन्तु भगवान इस विश्व से परे हैं, सर्वोच्च परमात्मा ।। 164 ।। ईश्वर संसार से अभिन्न है, संसार ईश्वर से भिन्न है। चेतन-अचेतन यह संसार जब से है तब से यह ईश्वर का अधिष्ठान है ।। 165 ।। प्रतिमा, यज्ञवेदी, आदि ईश्वर के आठ प्रकार के पूजा स्थान जानें । सबकी तुलना में गुरु श्रेष्ठ है ।। 166 ।। है स्वयं पूर्ण ब्रह्म श्री कृष्ण भगवान ने भी संदीपनी गुरु के चरण पकड़े। और कहा है "सद्गुरु का स्मरण करनेसे मैं, नारायण, संतुष्ट होता हूं ।। 167 ।। मेरी तुलना में सद्गुरु का स्मरण हजार गुणा अधिक किया जाये तो मुझे अच्छा लगेगा।" ऐसा है सद्गुरु का वरिष्ठपन, उनकी महिमा गहन है ।। 168 ।। जो गुरु भजन की ओर पीठ कर लेता है वास्तव में वह एक अभागा पापी है। वह जन्म-मरण की कष्टदायक यात्रा भोगता रहेगा। वह अपना हित नष्ट करता है ।। 169 ।। बार-बार जन्म व मरण, इनके मध्य ही नित्य भ्रमण होता रहता है।इसलिए आइए कथा श्रवण करें तथा अपना उद्धार करें ।। 170 ।। संतों के मुख से निकली अप्रत्याशित कहानियां अविद्या की गांठ खोल देती हैं । भयंकर संकट में भी हमें तार देती हैं। अतः उन्हें अपने हृदय में एकत्र कर लेना चाहिए ।। 171 ।। मालूम नहीं आने वाला समय कैसा हो, इससे दुःख मिलता है या लाभ । क्योंकि यह सब अल्लाहमियां का खेल है,

स्नेही भक्त तो केवल प्रेक्षक है ।। 172 ।। बिना प्रज्ञाबल होते हुए क्या यह मेरा शक्तिशाली भाग्य नहीं कहा जायेगा कि मुझे साईं जैसे प्रबल गुरु मिल गया। यह भी उसी का खेल है ।। 173 ।। ग्रंथ का उद्देश्य कहा जा चुका है, मुझे प्राप्त आश्वासन भी मैंने कह दिया जिसमें बाबा ने अपने पूजन व प्रकृति के संबंध में दिशा निर्देशन किया है ।। 174 ।। अब अपने श्रोतागण अगले अध्याय में आप सुनेंगे कैसे समर्थ साईंनाथ का अवतरण शिरडी में हुआ ।। 175 ।। वृद्ध युवा आप सभी एक क्षण के लिए सांसारिकता को अलग रख कर साईं चरित्र को शुद्ध एवं निर्मल होकर सुनें ।। 176 ।। स्वयं निर्विकारी होते हुए साईं ने अवतार में नाटक के पात्र की भांति माया के अनुसार सांसारिक जैसा व्यवहार किया है ।। 177 ।। “साईं समर्थ" इस छोटे मंत्र से जिनके पवित्र चरणों का ध्यान किया जा सकता है जो भक्तों के संसार में मोक्ष के सूत्र को घुमाता है, उसका चरित्र पावन है ।। 178 ।। संक्षेप में साईं चरित्र पावन है, इसे जो वचता है उसकी वाणी और जो सुनता है, उसके कान पावन हो जाते हैं, उसका अंतरंग पवित्र हो जाता है ।। 179 ।। प्रेम से कथा श्रवण करने से सांसारिक दुःखों का हरण होगा, साईं की करुणा बहेगी, सम्पूर्ण शुद्ध ज्ञान की अनुभूति होगी ।। 180 ।। लयविक्षेप तथा कषैल रसास्वाद श्रवण के लिए बाधक है इन बाधाओं को दूर करनेसे श्रवण सुखदायक होगा ।। 181 ।। न व्रत उद्यापन की आवश्यकता है, न उपवास से शरीर शोषण की आवश्यकता है, न ही तीर्थ यात्रा पर्यटन की आवश्यकता है एक चरित्र श्रवण ही पर्याप्त है ।। 182 ।। हमारा प्रेम अकृत्रिम होना चाहिए, भक्ति के सार को हमें गृहण करना चाहिए । विषम अविद्या नष्ट हो जायेगी । सर्वोच्च उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति सहज हो जायेगी ।। 183 ।। अन्यथा साधनों में हमें अपने को थकाना नहीं चाहिए । साईं चरित्र का श्रवण करेंगे। संचित व वर्तमान में किए जा रहे कर्म का अल्प प्रमाण भी शेष न रहेगा ।। 184 ।। कृपण कहीं भी हो दिन-रात जैसे उसके चित्त में उसका छुपा खजाना रहता है वैसे ही साईं हमारे मन में धंसें ।। 185 ।। स्वस्ति । श्री संत सज्जन प्रेरित, भक्त हेमाड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ चरित्र” का “ग्रंथ प्रयोजनानुज्ञापन” नामक तृतीय अध्याय से सम्पूर्ण हुआ।।

।। श्री सद्गुरु साईं नाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय चौथा (श्री साईं समर्थ अवतरण)।।

।। श्री गणेश को नमन।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

मंगलाचरण कहकर पिछले दो अध्यायों में ग्रंथ का प्रयोजन कहा गया है। कौन इसका अधिकारी है तथा ग्रंथ के विषय में संबंध का वृतांत विस्तृत रूप से कहा गया है ।। 1 ।। अब इन संतों का अवतार इस धरती पर किस निमित्त? ऐसा क्या कठिन कार्य है, जिसके लिए ये भूलोक पर अवतार लेते हैं? ।। 2 ।। अब हे श्रोता महाराज ! मैं आपकी एक चरणरज हूं। आपकी ध्यान रूपी कृपा मांगने के लिए मुझे कोई शर्म नहीं है ।। 3 ।। संत चरित्र तो पहले से ही मधुर होता है, उनमें यह तो साईंकथा का अमृत है। साईं के अनन्य भक्त सेवन करके आनन्द युक्त होते हैं ।। 4 ।। जब ब्राह्मण वर्णाश्रम की अवहेलना करने लगे। शूद्र ब्राह्मण होना चाहें। धर्माचार्यों को अपमानित, दण्डित करना चाहें ।। 5 ।। कोई धर्म वचन नहीं माने । प्रत्येक व्यक्ति अपने को विद्वान मानने लगे। एक से बढ़कर एक ऊँचा । कोई किसी की न माने ।। 6 ।। सेव्य-असेव्य, भक्ष्य-अभक्ष्य और आचार-विचार के प्रति पूर्ण रूप से असावधानी होने लगे, यहां तक कि ब्राह्मण प्रत्यक्षतः मांस मदिरा का सबके समक्ष सेवन करने लगे ।। 7 ।। जब धर्म का चोला पहनकर अत्याचार लुक छुप कर होता हो, धर्मपंथों में द्वेष बढ़ रहा हो, सामान्यजन आपदाग्रस्त होने लगें ।। 8 ।। ब्राह्मण संध्या-स्नान के प्रति आलसी हो जाये, कर्मकाण्डी अनुष्ठानो के प्रति आलसी हो जायें, योगी का तप-जप व ध्यान में मन न लगे, तब संतों के अवतरण का समय हो जाता है ।। 9 ।। लोग धन, मान, पुत्र व पत्नी को सर्वस्वसुख का आश्रय स्थल मान लेते हैं तथा आध्यात्मिक विचारों से विमुख हो जाते हैं, तब संतों का अवतरण होता है ।। 10 ।। धर्म की ग्लानि के कारण जब सर्वोच्च श्रेय की हानि होती है, तब धर्म की जागृति करने के लिए संत शरीर धारण करते हैं ।। 11 ।। जब लोग आयु, आरोग्य तथा ऐश्वर्य खोकर कामेन्द्रिय व उदर परायण हो पथभ्रष्ट हो जाते हैं, अपना जो कुछ भी है उसके उद्धार से वंचित हो जाते हैं, तब संत अवतार लेते हैं ।। 12 ।। वर्णाश्रम धर्म की रक्षा के लिए, अधर्म को नष्ट करने के लिए, दीन, गरीब तथा दुर्बल को संरक्षण देने के लिए संत पृथ्वी पर अवतार लेते हैं ।। 13 ।। संत स्वयं संसार से मुक्त होते हैं। दीनों के उद्धार के लिए सदैव व्यस्त रहते हैं। उनका अवतार केवल दूसरों के हित के लिए होता है। उसमें उनका अपना स्वार्थ नहीं होता है ।। 14 ।। सांसारिक जीवन की हिलती-डुलती डोली के लिए संन्यास (निवृत्ति) का पाया तैयार करते हैं। अध्यात्म का मंदिर खड़ा करते हैं। भक्त का उद्धार सहज गति से होता है ।। 15 ।। धर्मजागृति का धर्म कार्य करके वे अपना अवतार कार्य संपादित करते हैं। निज कार्य की परिपूर्ति हो जाने के बाद

वे अपने अवतार की समाप्ति कर लेते हैं ।। 16 ।। जीवात्मा ही परमात्मा है, जो सम्पूर्ण जगत को आनंदित करता है। जो परमेश्वर है वही गुरु है। वही सुख-समृद्धि प्रदान करता है ।। 17 ।। वही निरतिशय प्रेम का पद है, नित्य है, निरन्तर है, अभेद है। वह देश, काल वस्तु, भेद से परे है। उसका परिच्छेदन नहीं किया जा सकता है ।। 18 ।। वाणी के चारों रूप- परा, पश्यंति, मध्यमा, वैखरी- उसका वर्णन करते थक गए | न ही वेदों का चातुर्य चला। उन्होंने अपनी पराजय "नेति नेति" कहकर स्वीकार कर ली ।। 19 ।। षट्शास्त्र और षट्दर्शन शरमा गए, पुराण व कीर्तन थक गए । आखिर में शरीर वाणी व मन से नमन ही एक निश्चित मार्ग है ।। 20 ।। संत साईं का ऐसा ही चरित्र है जिनकी लीला अत्यन्त विचित्र है, जिनकी पवित्र कथा श्रवण करने से कान पावन हो जाते हैं ।। 21 ।। वही सभी इन्द्रियों का संचालक है, मुझे ग्रंथ लिखने के लिए बुद्धि उसी ने दी है। उसने यथाक्रम चरित्र सोचवाया । वह अनायास कारण है ।। 22 ।। वह सबके हृदय में निवास करता है। बाहर अन्दर सब जगह वह गमन करता है। फिर मैं व्यर्थ चिन्ता क्यों करूं। बेकार रहने का क्या अर्थ? ।। 23 ।। जब उसके एक-एक गुण को स्मरण करते हैं, मन तटस्थ रहता है, फिर कैसे शब्द उसका वर्णन कर सकता है। दृढ़ मौनता से उसका कथन किया जा सकता है ।। 24 ।। नासिका फूल को सूंघती है, त्वचा शीतोष्णता को स्पर्श करती है, नयन सौन्दर्यसुख पर ध्यान देते हैं, प्रत्येक अपने आपको सुख देते हैं ।। 25 ।। जिह्वा शक्कर का स्वाद जानती है किन्तु अपना अनुभव व्यक्त नहीं कर सकती है, उसी प्रकार साईं के गुणों का विशद अनुवाद मैं नहीं कर पा रहा हूं ।। 26 ।। जब सद्गुरु चाहेंगे तो वह स्वयं ही प्रेरणा देंगे और अनिर्वचनीय की अपने स्वजन के हाथों सही व्याख्या करायेंगे ।। 27 ।। यह केवल शिष्टाचार नहीं है। यह बोल केवल औपचारिकता नहीं है, यह मेरे मनोभावों के उद्गार हैं। आपका आदरपूर्ण ध्यान प्रार्थित है ।। 28 ।। जैसे गणगापुर, नृसिंहवाणी , औदुंबर और भिल्लवाड़ी वैसे ही, पवित्र गोदावरी के तट पर शिरडी स्थान प्रसिद्ध है ।। 29 ।। गोदावरी के पवित्र तीर, गोदावरी का पवित्र जल, गोदावरी की शीतल वायु, ये संसार के अंधकार (अज्ञान) की नाशक है ।। 30 ।। गोदावरी का माहात्म्य, जो संपूर्ण जगत में प्रख्यात है, आनन्द दायक है, एक से एक बढ़कर धुरंधर महान संत वहां हुए हैं ।। 31 ।। इस गोमती के किनारे अनेक तीर्थ हैं, जहां निरन्तर जाने से पापों का नाश होता है, जहां स्नान करने से सांसारिक रोगों का निवारण होता है, पुराणों में ऐसा वर्णन है ।। 32 ।। यही "गोदा" अहमदनगर (जिले) में कोपरगांव तालुका के भीतर कोपरगांव के पड़ोस में शिरडी का मार्ग दिखलाती है ।। 33 ।। गोदावरी को पार करके उसी दिशा में लगभग तीन कोस पर तांगा नीम गांव के भीतर प्रवेश करता है। सामने ही शिरडी दिखता है ।। 34 ।। निवृत्ति, ज्ञानदेव, मुक्ताबायी, नामदेव, जानाबाई, गोरा, गोणाई, तुकाराम, नरहरि, नरसीभाई, सज्जन कसाई, साँवता ।। 35 ।। ये पूर्व संत हुए हैं वर्तमान में भी अच्छे संत हुए हैं। पूरी धरती को परिवार मानकर पीड़ित और दुःखी लोगों को आश्रय देते

हैं ।। 36 ।। संत प्रवर रामदास गोदावरी का तट छोड़कर कृष्णा के तट पर प्रकट हुए जगत के उद्धार के लिए ।। 37 ।। वैसे ही योगेश्वर साईं शिरडी के महान पुण्य से, जगत के उद्धार के लिए गोदावरी के क्षेत्र में अवतरित हुए ।। 38 ।। पारस लोहे को सोने का रूप देता है। उसी पारस से संतों की उपमा की जाती है, किन्तु संत का अलौकिक कार्य है। भक्तों को निज रूप देते हैं ।। 39 ।। बिना भेद भाव संपूर्ण चर-अचर ब्रहम स्वभाव है। विश्व का अपना वैभव अखण्ड ब्रहम का वैभव है ।। 40 ।। इस प्रकार जब अखिल विश्व में "अहं सोहम" का ज्ञान हो जाता है, तब फिर उसका सुख कितना रोमांचक होता है, सर्वोच्च शुद्धि की प्राप्ति होती है ।। 41 ।। जब ऐसा एकात्मभाव का अनुभव होता है, जब अन्य कुछ भी नहीं है, तब किस उद्देश्य से किससे वैर और किससे भय? ।। 42 ।। जैसे मंगलवेढी में दामा जी, सज्जनगढ़ में समर्थ रामदास, वाड़ी में नृसिंह सरस्वती, वैसे ही शिरडी में साईंनाथ ।। 43 ।। जिसे पार करना कठिन हो, प्राप्त करना कठिन हो, ऐसे संसार पर जिसने विजय हासिल कर ली, शांति जिसका आभूषण हो, वह ज्ञान का साक्षात भंडार होता है ।। 44 ।। वैष्णवों की मां का घर (माहेर घर) उदारों में उदार, परमार्थ कर्ण के अवतार, सार के भी सार हैं साईं ।। 45 ।। क्षणभंगुर से प्रीति नहीं, आत्म स्वरूप में ही संलग्न वृत्ति, परम की प्राप्ति ही एक लक्ष्य, उनकी स्थिति का क्या वर्णन करूं ।। 46 ।। सांसारिकता का न उत्कर्ष न अपकर्ष, अन्य संसार के लिए न हर्ष, न दुःख, अंतरंग सीसे की भांति निर्मल, वाणी से सदा अमृत की वर्षा होती है ।। 47 ।। राजा, रंक, दरिद्र व दीन पर जिनकी दृष्टि एक सम समान है, स्वयं जो मान अपमान से परे है ऐसे भगवान विश्व में व्याप्त है ।। 48 ।। सामान्य जन के मध्य बोल-चाल करते । मुराली का नृत्य देखते। गजल और गानों को सुनकर झूमते । उनकी समाधि रंचमात्र भी भंग नहीं होती ।। 49 ।। अल्लाह का नाम ही जिनकी मुद्रा | जग का जागना जिनकी निद्रा । जग के जगने पर तन्द्रा आती ।शांत समुद्र की भांति जिनका उदर ।। 50 ।। जिनके आश्रम का निश्चय नहीं किया जा सकता , किसी आश्रम का निश्चित कर्म वह नहीं करते। बहुधा अपना स्थान नहीं छोड़ते फिर भी कहाँ क्या हो रहा है, सब कुछ जानते ।। 51 ।। उनके दरबार का बाहय ठाट-बाट था, तीन सौ साठ कहानियां सुनायीं। यद्यपि ऐसा नित्य का ठाट-बाट था किन्तु मौन संबंध नहीं तोड़ा ।। 52 ।। दीवाल से टेक लगाकर वे खड़े रहते एवं सुबह-दोपहर फेरी पर जाते लेण्डी तक, या चावडी को जाते। आत्म स्थिति अखण्ड रहती ।। 53 ।। मैं नहीं जानता किस जन्म में किस अवसर पर किस प्रसंग में मेरे द्वारा कैसा तप किया गया कि साईं ने अपनी शरण में मुझे लिया ।। 54 ।। इसे तप का फल कैसे कहूं | मैं तो जन्म से ही खल हूं। साईं स्वयं दीन वत्सल हैं यह उनकी ही निश्चल कृपा है ।। 55 ।। यद्यपि वे जन्मजात सिद्ध थे, किन्तु साधक की भांति व्यवहार करते थे अभिमान रहित अतिलीन वृत्ति वाले सबका मन रखते थे ।। 56 ।। जैसे एकनाथ ने पैठण को, ज्ञानेश्वर ने अलंदी को, जानो वैसे ही साईंनाथ ने शिरडी स्थान को महिमा संपन्न

बनाया ।। 57 ।। शिरडी के तृण व पाषाण धन्य हैं, जिन्हें अनायास ही प्रतिदिन बाबा के चरणों का चुम्बन मिलता है तथा माथे पर पदरज धारण करने को मिलती है ।। 58 ।। शिरडी ही हमारा पंढरपुर है। शिरडी ही जगन्नाथ व द्वारिका नगर है। शिरडी ही गया, विश्वेश्वर काशी है, रामेश्वर भी शिरडी है ।। 59 ।। शिरडी ही हमारा बद्री-केदार, शिरडी ही नासिक-त्रयम्बकेश्वर, उज्जैन महाकालेश्वर, शिरडी ही महाबालेश्वर गोकर्ण है ।। 60 ।। शिरडी में साईं से समागम ही हमारा आगम-निगम है। वहीं सकल संसार के कष्ट का शमन होता है तथा परमार्थ अत्यन्त सुगम है ।। 61 ।। समर्थ साईं का दर्शन ही हमारा योग साधन है, उनसे संभाषण करने से पापों का परिक्षालन हो जाता है ।। 62 ।। उनके चरणों को दबाना ही हमारा त्रिवेणी स्नान है। उनके चरणतीर्थ का सेवन करने से वासनाएं निर्मूल हो जाती हैं ।। 63 ।। उनकी आज्ञा हमारे लिए वेद वचन है। उनकी ऊदी रूपी प्रसाद का सेवन सर्वार्थी पुण्य पावन है ।। 64 ।। साईं हमारे परब्रह्म हैं, साईं में ही हमारा सर्वोच्च परमार्थ है। साईं ही श्री कृष्ण, श्री राम साईं हमारे आश्रय है ।। 65 ।। साईं स्वयं द्वद्वातीत है, कभी उद्विग्न या उल्लसित नहीं होते। सदैव निज स्वरूप में स्थित रहते हैं, सदा प्रकाशमान तथा त्रिगुणों की सन्मात्रा में रहने वाले हैं ।। 66 ।। शिरडी तो केवल केन्द्र स्थान है। बाबा का क्षेत्र अति विस्तृत है। पंजाब, कलकत्ता, गुजरात, दकन व कर्नाटक, हिन्दुस्थान है ।। 67 ।। शिरडी में साईं की समाधि, वही सभी संतों के एकत्र होने का स्थान है, जिसकी ओर मार्ग पर चलने से पग पग पर जीव के बंधन टूटते जाते हैं ।। 68 ।। इस समाधि के केवल दर्शन से ही वास्तव में जन्म सार्थक हो जाता है फिर मैं उनके भाग्य का क्या वर्णन करूं जिन्होंने पूरा जीवन उनकी सेवा की ।। 69 ।। मस्जिद और वाडा पर सुन्दर पताकाओं की कतारें ऊँचे गगन में फड़कती रहती हैं मानों भक्तों को अपने हाथ से बुला रही हैं ।। 70 ।। बाबा की कीर्ति महंत के रूप में प्रसिद्ध हो गयी । गाँव-गाँव में उनकी महानता फैलने लगी। कोई अच्छी श्रद्धा से उनके समक्ष संकल्प लेता, किसी को दर्शन से मन की शांति मिलती ।। 71 ।। किसी के मन में कैसे भी विचार हों, शुद्ध-बुद्धि हो या कुत्सित, दर्शन मात्र से चित्त को ठंडक मिलती है। लोग मन ही मन विस्मित होते हैं ।। 72 ।। पंढरपुर में विट्ठल रखुमाई के दर्शन की जो नवलाई थी, वही विठ्ठल दर्शन साईंबाबा शिरडी में देते थे ।। 73 ।। किसी को अतिशयोक्ति लगे तो, गौलीबुआ का कथन सुनकर, जिनकी विठ्ठल में दृढ़ भक्ति थी, संशय की निवृत्ति हो जायेगी ।। 74 ।। वे पंढरपुर के वारकरी (विट्ठल भक्त) थे, जैसे वर्ष में एक बार पंढरी जाते, वैसे ही शिरडी की यात्रा भी करते । बाबा से बहुत प्रेम था ।। 75 ।। सदा एक गधा और साथ के लिए - एक शिष्य लेकर, जिह्वा से "रामकृष्ण हरि" का उच्चारण निरन्तर बुआ करते रहते ।। 76 ।। पंचानवे वर्ष की उनका आयु, चार मास गगा तट पर निवास करते व आठ माह पढरपुर में निवास करते, वर्ष में एक बार बाबा से भेंट करते ।। 77 ।। बाबा की ओर देखते-देखते विनम्र होकर बोलते **"यह तो साक्षात**

पंढरीनाथ हैं, अनाथों के नाथ, दयालु" ।। 78 ।। क्या कोई रेशमी किनारे की धोती पहनने से ही संत हो जायेगा? अपने परिश्रम से हड्डी को मणि बनाना पड़ता है और रक्त को पानी ।। 79 ।। क्या फोकट में देव हो जायेंगे? यही प्रत्यक्ष पंढरीनाथ हैं। यह जगत बावला है, बावला, इस दृढभाव से देव को देखो ।। 80 ।। पंढरीनाथ की भक्ति में समर्पित एक भगवद् भक्त का यह कथन है, वहां मुझ पामर का अनुभव क्या माने रखता है। श्रोता स्वयं ही अनुभव करेंगे ।। 81 ।। नाम स्मरण के प्रति अत्यधिक प्रीति । "अल्लाह मालिक " निरन्तर बोलते रहते। "नामसप्ताह" कराते रहते अपने सम्मुख रात-दिन ।। 82 ।। एक बार दासगणू को "नामसप्ताह" की व्यवस्था करने की आज्ञा होने पर दासगणु उनसे बोले विट्ठल को प्रकट दिखना चाहिए ।। 83 ।। बाबा ने तब अपनी छाती पर हाथ रखकर दासगणू से स्पष्ट कहा **"हाँ! हाँ! विठ्ठल साकार प्रकट होंगे। भक्त को शुद्ध हृदय दिखना चाहिए ।। 84 ।। डाकुरनाथ की डंकपुरी, विठ्ठल का पंढरपुर अथवा रणछोड़ की द्वारका नगरी यहीं है। उन्हें देखने दूर नहीं जाना है ।। 85 ।। विट्ठल क्या एकांत से उठेंगे, दूसरे किस स्थान से आयेंगे | भक्त प्रेम से प्रभावित होकर यहीं पर प्रकट होंगे" ।। 86 ।। पुंडलिक द्वारा अपने वृद्ध माँ-बाप की सेवा करने से देवाधिदेव मोहित हो गए। पुंडलिक की भक्ति भाव के लिए उन्होंने एक ईंट पर रुकना स्वीकार किया" ।। 87 ।।** अतः जैसे ही सप्ताह की समाप्ति हुई, जैसा दासगणू से कहा गया था शिरडी में ही विट्ठल के दर्शन प्राप्त हुए। बाबा के कथन " यह लो, यह अभी " का भी अनुभव होगया ।। 88 ।। एक बार काका साहेब दीक्षित प्रातः स्नान के बाद नियमानुसार आसन पर बैठकर ध्यानस्थ थे, विठ्ठल का दर्शन मिला ।। 89 ।। बाद में जब बाबा का दर्शन करने गए, आश्चर्य है बाबा ने तब उनसे क्या पूछा, "**विट्ठल पाटिल आए थे न , भेंट हुई न उनकी ।। 90 ।। वह विठ्ठल अच्छे तो हैं, किन्तु बहुत भागने की प्रकृति है। उन्हें खूटी से कस कर बांध लो। एक पल के लिए भूल से भी दृष्टि हटी कि पल भर में ही ओझल हो जाते हैं" ।। 91 ।।** यह प्रातः काल की घटना है। बाद में दोपहर पूर्ण यौवनावस्था में थी, देखें और अधिक प्रमाण स्वरूप प्रफुल्लता भरा विठ्ठल का दर्शन हुआ ।। 92 ।। पंढरपुर के विठोवा के पांच-पचीस छायाचित्र एकत्र करके अन्य गांव से कोई बेचने की इच्छा से आया ।। 93 ।। सुबह के ध्यान में जो छवि आयी हुई थी उसी की हूबहू छाया देखकर दीक्षित का चित्त विस्मित हो गया । बाबा के वचन स्मरण हो आए ।। 94 ।। अत्यन्त प्रेम से दीक्षित ने तब विक्रेता का मूल्य चुका कर एक चित्र खरीद लिया तथा भावपूर्वक पूजा में स्थापित किया ।। 95 ।। मन को आनन्द से भरने वाली, सुनने में अति मनोहर एक और सुन्दर कथानक सुनो जो विट्ठल पूजन के प्रति साईं के आदर का सूचक है ।। 96 ।। एक भगवंतराव क्षीरसागर थे जिनके पिता विट्ठल के प्रमुख भक्त थे। पंढरपुर की यात्रा बराबर करते थे ।। 97 ।। घर में विठ्ठल की एक मूर्ति थी। पिता के पंचतत्व में विलीन होने के बाद पूजा व नैवेद्य बन्द हो गया। श्राद्ध की तिथि भी बंद हो गयी ।। 98 ।। धर्म यात्रा की

कथा की कोई चर्चा नहीं हुई । जब भगवंत राव शिरडी आए । बाबा ने उनके पिता का स्मरण करके कहा **“वह मेरे दोस्त थे ।। 99 ।। यह मेरे स्नेही के पुत्र हैं इसलिए इनको मैं खींच लाया हूं। ये कभी नैवेद्य नहीं कराते हैं, मुझे भूखा रखते हैं ।। 100 ।। विट्ठल को भी भूखा रखा, इसलिए शिरडी लाया हूं। अब इन्हें स्मरण कराऊँगा । पूजा यज्ञ में इन्हें लगाऊंगा ।। 101 ।।“** एक बार पर्व विशेष जानकर तीर्थराज प्रयाग में स्नान करने की इच्छा दासगणू के मन में उत्पन्न हुई और आज्ञा लेने के लिए आए ।। 102 ।। बाबा ने प्रत्युत्तर दिया। इसके लिए इतनी दूर की यात्रा की आवश्यकता नहीं है। यहीं है हमारा प्रयाग का तट । मन में दृढ़ विश्वास धरो ।। 103 ।। वास्तव में क्या कौतुक हुआ इसकी चर्चा करते हैं। बाबा के चरणों में माथा रखते ही दोनों अंगूठों से जल की धारा बहने लगी। गंगा, यमुना की जल धारा बहने लगी ।। 104 ।। यह चमत्कार देखकर दासगणू का गला भर आया । क्या महान उपकार बाबा ने किया | नयनों से नीर बहने लगे ।। 105 ।। वाणी की प्रेरणा हुई। प्रेम का प्रबल उत्सर्ग हुआ | बाबा की अगाध शक्ति एवं अवर्णनीय लीला का वर्णन करके संतुष्टि प्राप्त की ।। 106 ।। दासगणू के ये पद मधुर हैं। श्रोताओं की सुनने की प्रबल इच्छा को पूर्ण करने के लिए इस मौके का पूर्व वचन के अनुसार यहां मैं प्रसाद स्वरूप गीत प्रस्तुत कर रहा हूं ।। 107 ।।

अगाध शक्ति अद्भुत लीला तव सद्गुरु राया।

जड़जीवों को भव से तारने तू नौका सदया ।। ध्रुव ।।

वेणी माधव खुद बनकर पद में प्रयाग लाए।

गंगायमुनाद्वय का प्रवाह अंगुष्ठ से दिखलाए ।। 1 ।।

त्रिगुणात्मक मूर्ति कमलोद्भव कमलावर शिवहर।

तू ही बनकर, साईसमर्थ विचरण करते भू पर ।। 2 ।।

प्रहर दिखते ब्रह्मासम तू मुख से ज्ञान वदते।

कभी-कभी रुद्ररूप धर तमोगुणी दिखते ।। 3 ।।

कभी-कभी कृष्णासम तूं बाल लीला करते।

भक्त मन को सरस कराने राजहंस बनते ।। 4 ।।

यवन कहावे फिर भी गंधावर से प्रेम करते।

हिन्दू कहावे फिर भी सदा सुखधामा मस्जिद में रहते ।। 5 ।।

धनी कहावे यद्यपि फिर भी भिक्षाटन करते।

फकीर कहावे फिर भी कुबेर को दान में लजवाते ।। 6 ।।

मस्जिद तेरा घर कहावे वहीं तूं रहता।

फिर भी जन को ऊदी देने, धुनी रहता सदा जलाता ।। 7 ।।

प्रातः से ही भक्त सरल तेरा पूजन करते।

मध्याह्न में दिनकर आते आरती करते ।। 8।।

चारों ओर पार्षदगणसम भक्त खड़े रहते।

चौरि-चामर हाथ में धर कर तुझ पर डुलाते ।। 9 ।।

तुरही प्रतिध्वनि करती नरसिंगा सुर देते बजता घंटा।

चोपदार ललकारता द्वार पर बांधकर पट्टा ।। 10 ।।

आरती काले दिव्यासन पर तू कमलावर दिखते।

प्रदोषकाले धूनी सम्मुख बैठे शंकर दिखते ।। 11 ।।

प्रतिदिन तेरे दर पर तेरी लीला त्रयदेवों जैसी।

अनुभव करते हैं हम हे बाबा साई ।। 12 ।।

भटकत फिरत यह मेरा मन व्यर्थ हुआ ऐसे।

अब विनती है तुमसे बाबा स्थिर करो इसे ।। 13 ।।

अधमाधम महापापी मैं शरण तेरे पद आया ।

दासगणू के त्रयतापों को निवारो सद्गुरुराया ।। 14।।

अघोर पापों को धोने के लिए लोग गंगा की शरण में जाते हैं, जबकि गंगा अपने पापों के निवारण के लिए संत के पांव लगती हैं ।। 108 ।। पवित्र चरणों को छोड़कर गंगा या गोदावरी की यात्रा नहीं करनी है। श्रीसाईं के मधुर चरित्र के "संत स्तोत्र" को सुनना ही पर्याप्त है ।। 109 ।। जैसे अच्छे भाग्य से गोणाई को भीमा नदी पर नामा और तमाल को भागीरथी नदी पर सीप से कबीर मिले थे ।। 110 ।। वैसे ही श्री साईंनाथ सोलह वर्ष की तरुणावस्था में शिरडी गांव में नीम के नीचे भक्तों के लिए प्रथम बार प्रकट हुए थे ।। 111 ।। प्रकट होते समय ही वे ब्रह्म ज्ञानी थे, स्वप्न में भी विषय वासना नहीं, माया को पूर्णरूप से त्याग दिया था । मुक्ति उनके चरणों पर लोटती थी ।। 112 ।। बाबा का जन्म किस देश में, किस पवित्र वंश में अथवा किस माता-पिता की गोद में हुआ था यह कोई नहीं जानता है ।। 113 ।। कोई पूर्वावस्था को नहीं जानता है। कौन उनके पिता, कौन उनकी माता थीं, पूछते-पूछते सभी थक गये। किसी को पता नही लगा ।। 114 ।। माता-पिता, संबंधी, सकल परिवार,

जात और पात छोड़कर, संसार जनित सभी कुछ त्याग कर, जनहित के लिए शिरडी में प्रकट हुए ।। 115 ।। शिरडी की एक वृद्ध महिला, नाना चोपदार की माँ, श्री साईंबाबा के चरित्र की अद्भुतता बताती रहतीं ।। 116 ।। वह कहती थीं, **"प्रारम्भ में यह बालक गोरा, मधुर, अति सुन्दर, प्रथम बार नीम के पेड़ के नीचे आसन पर बैठा ध्यान मग्न देखा गया ।। 117 ।। सुन्दर बालरूप देखकर लोगों के मन में अत्यधिक विस्मय था सुकुमार आयु में कठोर तप, ठंडी और गर्मी का मौसम एक समान ।। 118 ।। सुकुमार आयु में यह चमत्कारिक स्थिति । सभी ग्रामवासी विस्मित होते। गांव-गांव से लोग बालक के दर्शन के लिए आने लगे ।। 119 ।। दिन में किसी की संगति नहीं करते । रात्रि में किसी से डरते नहीं। यह बाल-मूर्ति कहां से आई होगी । यही आश्चर्य सब के चित्त में था ।। 120 ।। रूप रेखा इतनी सुकोमल कि देखने से हृदय में प्रेम उमड़ पड़ता। न किसी के घर न ही दरवाजे, नीम के पेड़ के पास रात-दिन रहते ।। 121 ।। अत्यधिक आश्चर्य करते लोग, यह कैसा बालक है। सुकुमारवय, मनोहर रूप रात-दिन कैसे खुले आसमान के नीचे रहता है ।। 122 ।। बाह्य स्वरूप से तो बालक दिखते, पर कृत्य में महान से भी महान थे। वैराग्य के पूर्णावतार थे। लोगों को अत्यधिक आश्चर्य था ।। 123 ।। एक दिन एक चमत्कार हुआ । खंडोवा (भगवान) का संचार हुआ। दो चार लोग झूमने लगे। लोग उनसे प्रश्न पूछने लगे ।। 124 ।। यह बालक किस सौभाग्यशाली का है। कहां से कैसे यहां आगमन हुआ । हे खंडोवा देव ! इस विचारणीय प्रश्न पर आप शोध करें ।। 125 ।। देव बोले कि जाकर कुदाल लाओ, दिखाए गए जगह पर खोदो। इस जगह पर कुदाल मारो इस बालक का ठिकाना मालूम हो जायेगा ।। 126 ।। तत्पश्चात उसी स्थान पर गांव के किनारे उसी नीम वृक्ष के नीचे कुदाल पर कुदाल मारते गए, उस स्थान पर ईंट दिखी ।। 127 ।। ईंटों की परत समाप्त होने पर (मिले) पत्थर के निचले आधे हिस्से को हटाने पर एक प्रवेश द्वार पर दृष्टि पड़ी जिसमें चार दीप जल रहे थे ।। 128 ।। गुफा की फर्श जो चूने के पत्थर से बनी थी, पर गोमुखी, तख्त तथा सुन्दर माला थी। देव ने कहा कि बारह वर्षों तक यह बालक इस स्थान पर तप करता रहा है ।। 129 ।। इसके बाद सभी लोग आश्चर्य करने लगे। खोद-खोद कर बालक से प्रश्न पूछने लगे। फिर बालक ने विषय को बदलते हुए एक बिल्कुल भिन्न कथा सुना दी ।। 130 ।। कहा कि यह मेरे गुरु का स्थान है। यह पवित्र स्थान मेरी विरासत है। इसे यथावत सुरक्षित कर दें। मेरी इतनी बात आप मान लें ।। 131 ।।** "बाबा ने ऐसा कहा, सुनने वालों ने बताया । मेरी जिह्वा ऐसी क्यों घूम गयी कि बाबा ने विषय को घुमा कर बताया ।। 132 ।। मैं स्वयं पर आश्चर्य चकित था । बाबा के विषय में हमें क्या समझ है। पर अब मेरी समझ में आया कि यह बाबा का सहज विनोद था ।। 133 ।। बाबा मूलतः विनोद प्रिय थे। वास्तव में गुफा उन्हीं का विश्राम स्थल रही होगी। पर गुरु की बताने में क्या हानि है। इसका महत्व कैसे कम होता है ।। 134 ।। अतः बाबा की आज्ञा से ईंटों को यथा स्थान पर लगाकर गुफा को जिसे

उन्होंने अपना गुरु स्थान कहा था, ठीक से बंद कर दिया गया ।। 135 ।। अश्वत्थ अथवा औदुम्बर की ही भांति बाबा के लिए वह नीम वृक्ष था वह उस नीम के वृक्ष से बहुत प्रीति रखते थे और उसके प्रति अति आदर भी ।। 136 ।। म्हालसापति आदि शिरडी के पुराने ग्रामवासी इस स्थान को बाबा के गुरु का स्थान कहकर वंदन करते हैं ।। 137 ।। लोगों में यह चर्चा प्रसिद्ध है कि समाधि स्थान के निकट बारह वर्ष तक मौन धारण करके बाबा ने तपस्या की है ।। 138 ।। बाबा के भक्त साठे साहेब ने समाधि और नीम समेत चारों ओर की जगह खरीद कर चौकोर इमारत खड़ी कर दी ।। 139 ।। यही इमारत, यही वाड़ा, यात्रियों के रुकने का मूल स्थान था। आने जाने वालों की भीड़ के लिए एक यही उपयुक्त स्थान था ।। 140 ।। श्री साठे ने नीम के पेड़ के चारों ओर एक चबूतरा बनवाया और दक्षिणोत्तर दिशा में एक ऊपरी मंजिल । उत्तरी सिरे पर जीना जब तैयार हुआ तो उन्होंने गुफा की ओर दिखाया ।। 141 ।। जीने के नीचे दीवाल में दक्षिण मुखी एक ताक था, इसी के सामने उत्तर मुख कर भक्त चबूतरे पर बैठते थे ।। 142 ।। बृहस्पतिवार तथा शुक्रवार का सायंकाल जो गाय के गोबर से फर्श साफ करता है और एक क्षणभर के लिए ही धूपबत्ती जलाता है श्री हरि उसे सुख देते हैं ।। 143 ।। श्रोता अपने मन में सशंकित होंगे कि यह अतिशयोक्ति है या सत्य, किन्तु यह साईं श्रीमुख के शब्द हैं जो मैंने अपने कानों से सुने हैं ।। 144 ।। यह मेरे द्वारा रचा गया वक्तव्य नहीं है। इस पर रंचमात्र भी शंका न करें। जिन्होंने प्रत्यक्ष श्रवण किया है वे आज भी विद्यमान हैं ।। 145 ।। तत्पश्चात दीक्षित वाड़ा बना जिसमें प्रशस्त आवास स्थान है। अल्प काल में ही उसके आगे पत्थर का वाड़ा भी बन गया ।। 146 ।। श्री दीक्षित पहले ही पुण्य कार्य के लिए जाने जाते थे। वे श्रद्धा व भक्ति की मूर्ति थे। आंग्ल भूमि की यात्रा पर जाते समय ही आध्यात्मिक प्रकृति के बीज उनमें पड़ गए थे ।। 147 ।। यहां श्रोतागण शंका व्यक्त कर सकते हैं कि मथुरा काशी व द्वारिका छोड़कर , बाह्य आंग्ल भूमि कैसे परमार्थ दायक बन सकती है ।। 148 ।। श्रोताओं की शंका सहज है उनके कौतुक के निराकरण के लिए थोड़ा विषयान्तर हो तो सब लोग मुझे क्षमा करेंगे ।। 149 ।। काशी, प्रयाग, बद्रीनाथ, केदारनाथ, मथुरा, वृंदावन, द्वारिकापुरी इत्यादि धर्म स्थानों की यात्रा का पुण्य पहले से श्री दीक्षित ने एकत्र कर लिया था ।। 150 ।। इसके अतिरिक्त अपने पिता के पुण्य से अपने अपूर्व भाग्य से तथा पूर्व जन्मों में अर्जित पुण्य से उन्हें साईं का दर्शन मिला ।। 151 ।। दर्शन का मुख्य कारण तो नियति के कारण लंगड़ापन था। आंग्ल भूमि में रहते हुए उनका पैर फिसल गया था।। 152 ।। देखने में तो यह कुयोग था, किन्तु यह गुरुपुण्य योग का परिणाम था। उनके अच्छे कार्यो का फल था कि साईं का अलभ्य संयोग प्राप्त हुआ ।। 153 ।। चांदोरकर से संपर्क हुआ उन्हीं से श्रीसाईं की कीर्ति सुनी। उन्होंने कहा दर्शन का चमत्कार देखो लंगड़ापन तत्काल चला जायेगा ।। 154 ।। किन्तु पांव के लंगड़ापन को, दीक्षित, कमी नहीं मानते थे वास्तविक लंगड़ापन तो मन का था जिसे दूर करने के लिए

साईं से निवेदन करते ।। 155 ।। त्वचा रुधिर मांस हड्डी के समुदाय का योग ही नरदेह है। यह संसार क्षणभंगुर है, पावं लंगड़ा रहे तो क्या ।। 156 ।। वर्ष 1909 की माह नवम्बर की दो तारीख को दीक्षित को श्रीसाईं का पुण्य पावन दर्शन प्राप्त हुआ ।। 157 ।। तत्पश्चात उसी वर्ष दिसम्बर मास में शिरडी गए, श्री के पुनः दर्शन के लिए । वहीं रहने का मन हो गया ।। 158 ।। सर्वप्रथम उनके मन में यह विचार आया कि पचीस शेयर बेचकर (भुनाकर) लोहे के पत्रों का एक छप्पर बंधवा लें जिसको यात्री भी उपयोग करेंगे ।। 159 ।। बाद में मन मे निश्चय किया कि एक वाडा बनवाया जाये। अगले वर्ष ही शुभ मुहूर्त करके नींव का पत्थर रख दिया गया ।। 160 ।। वह दिन नौ दिसम्बर था बाबा का अनुमोदन प्राप्त हो गया था। उसी को सुमुहूर्त मानकर नींव का कार्य प्रारम्भ किया गया ।। 161 ।। जो आमन्त्रित करने पर भी वहां न आते, वही दीक्षित के भाई पहले से ही आए हुए थे, उसी दिन और मुहूर्त में ।। 162 ।। श्रीयुत दादा साहेब खापर्डे पहले से ही अकेले आये हुए थे एवं घर वापसी हेतु बाबा की अनुमति मिलने में कुछ कठिनाई थी ।। 163 ।। दोनों को बाबा की आज्ञा मिल गयी। खापर्डे को घर जाने की और दीक्षित को नींव पर बिल्डिंग बनाने की । 10 दिसम्बर का यह दिन था ।। 164 ।। यह दिन एक और कारण से महत्वपूर्ण है। इसी दिन से परम भक्ति एवं प्रीति से युक्त होकर चावडी की शेजारती प्रारम्भ की गयी ।। 165 ।। बाद में सन 1811 में रामनवमी के शुभ मुहूर्त में गृह प्रवेश संस्कार विधिपूर्वक किया गया ।। 166 ।। इसके बाद श्रीमंत बुट्टी का वाडा अत्यधिक खर्च करके बनाया गया और महासमाधि के बाद बाबा का शरीर वहीं विश्राम कर रहा है। जिससे खर्च सार्थक हो गया ।। 167 ।। अब वहां तीन वाडे हैं जहां पहले एक भी नहीं था । प्रारम्भ में साठ्या के वाडे की उपुयक्तता सभी के लिए थी ।। 168 ।। एक और कारण से यह साठे का वाडा महत्वपूर्ण है। प्रारम्भ में उसी स्थान पर बाबा के निज हाथ से तैयार की गयी फुलवाड़ी थी ।। 169 ।। बगीचे की अल्प कथा अगले अध्याय में वर्णित की जायेगी। हेमाड अपने श्रोताओं के साथ श्री साईं चरणों में अपना माथा टेकता है ।। 170 ।। वामन तात्या घड़े की आपूर्ति करता और साईं समर्थ पानी सींचते, ऊसर भूमि पर बाग तैयार किया गया । बाद में वे अदृश्य हो गए ।। 171 ।। बाद में वे औरंगाबाद के पास चाँद पाटिल को मिले। शादी की बारात के साथ वह शिरडी वापस आ गए ।। 172 ।। उसके बाद देवीदास की भेंट हुयी तथा जानकी दास की भी मुलाकात हुई। गंगागीर की भी दृष्टि मिली। तीनो फिर शिरडी में एकत्र हो गए ।। 173 ।। मोहिद्दीन से कुश्ती हुई। तत्पश्चात मस्जिद में निवास हुआ । श्री डेगले से लगाव हुआ। धीरे-धीरे अन्य भक्त उनके इर्द-गिर्द एकत्र होने लगे ।। 174 ।। ये सभी कथाएं-वार्ताएं अगले अध्याय में कही जायेंगी, जिन्हें श्रवण किया जा सकेगा। अब हेमाण्ड श्री साईं की अनन्य शरण में दण्डवत करता है ।। 175 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाण्ड पंत विरचित साईं समर्थ सच्चरित्र का " श्री साईं समर्थावतरण” नामक चतुर्थ अध्याय सम्पूर्ण ।।

।। श्री सदगुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय पांचवा (श्री साईपुनःप्रकटीभवन)।।

श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

अब पूर्व कथानुक्रम में बाबा का शिरडी से अदृश्य होने तथा चाँद पाटिल के साथ पुनरागमन संबंधी कथन सुनें।। 1 ।। कैसे बाग के निर्माण के लिए बाबा स्वयं ही जल ले जाते थे, गंगागीर आदि संत सम्मेलन की पावन कथा कौशलतापूर्ण है।। 2 ।। बाद में कुछ समय के लिए बाबा अंतरधान हो गए थे। मुसलमान की बारात के साथ शिरडी के ये रत्न प्रकट हुए ।। 3 ।। देवीदास उससे पहले ही शिरडी में वास करने लगे थे। बाद में जानकीदास गोसावी भी शिरडी रहने के लिए आ गए ।। 4 ।। यह सब किस प्रकार हो गया। अब विस्तार से । कहेंगे। ध्यान मग्न होकर, हे श्रोताओं ! सादर सुनो।। 5 ।। औरंगाबाद जिले में धूपखेड़ा गांव में चाँदपाटिल नाम का एक भाग्यशील मुसलमान था ।। 6 ।। औरंगाबाद का सफर करते समय उनकी एक घोड़ी खो गयी। दो महीने तक उसकी खोज करने पर भी नहीं मिली। अब कैसे मिलती है ? ।। 7 ।। पाटिल पूर्ण निराश हो गए। घोड़ी के कारण बहुत दुःखी थे। काठी पीठ पर लादकर उसी मार्ग पर वापस मुड़ गए औरंगाबाद को ।। 8 ।। । पीछे छोड़कर साढ़े चार कोस (नौ मील) चले होंगे। मार्ग में आम का वृक्ष था जिसके नीचे यह रत्न उन्हें दिखा।। 9 ।। सर पर टोपी अंग पर कफनी कांख में सटका तमाखू रगड़कर तैयार करके चिलम भरी, उसी स्थान पर एक कौतुक हुआ।। 10 ।। चाँद पाटिल रास्ते से जा रहे थे कि फकीर को आवाज करते हुए सुना, "ये चिलम पीता जा, थोड़ी देर छाया में आराम करता जा" ।। 11 ।। फकीर ने पूछा, "यह काठी किस लिए" पाटिल ने कहा, "जी घोड़ी खो गयी" इस पर कहा "जा नाले पर ढूंढो" | घोड़ी तत्काल मिल गयी।। 12 ।। चाँद पाटिल विस्मित हो गए | मन में बोले अवलिया (संत) से भेंट हो गयी। इसके कृत्य की कोई सीमा नहीं। यह सामान्य मानव नहीं कहा जा सकता ।। 13 ।। फिर पाटिल घोड़ी लेकर वापस आए और पूर्व स्थान पर पहुंच गए । फकीर ने उन्हें अपने पास बैठा लिया। उसने अपने हाथ से चिमटा उठाया।। 14 ।। फिर उसने उसी मिट्टी में चिमटे को गड़ा दिया व अंदर से प्रदीप्त अंगारा निकाला, हाथ में चिलम पर रखा, फिर सटका उठाया ।। 15 ।। इसके बाद, छापी (कपड़ा जिससे चिलम लपेटते हैं) को भिगाने के लिए पानी निकट नहीं था, सटका जमीन पर मारा, पानी निकलने लगा ।। 16 ।। छापी भिगोकर गार कर फिर चिलम के चारों ओर लपेटा । स्वयं पीया, पाटिल को भी पिलाया । पाटिल की बुद्धि हतप्रभ हो गयी।। 17 ।। अपने घर को पवित्र किए जाने का आग्रह किए जाने पर फकीर ने, जो लीला करने के लिए अवतरित हुए, पाटिल पर अनुग्रह

किया।। 18 ।। दूसरे दिन गांव गए, पाटिल के यहां रुके। कुछ समय वहां रहे। बाद में शिरडी वापस आ गए ।। 19 ।। यह चाँद पाटिल धूपखेड़ा के ग्रामाधिकारी की जिम्मेदारी वहन करते थे। उनकी स्त्री के भतीजे की शादी शिरडी की लड़की से होनी तय हुई।। 20 ।। चाँदभाई के कुटुम्ब का भतीजा लग्न योग्य हो गया था। सुयोग से शिरडी की बहू से शरीर संबंध होना हुआ ।। 21 ।। सभी लोग गाड़ी घोड़े से बारात लेकर शिरडी के लिए प्रस्थान किए। फिर चाँदभाई के प्रति स्नेहवश बाबा भी बारात में सम्मिलित हो गए ।। 22 ।। शादी हो जाने पर बारात चली गयी । एक मात्र बाबा रह गए । शिरडी के भाग्योदय हेतु बाबा रहे तो रह गए।। 23 ।। साईं अविनाशी व पुरातन हैं, न हिन्दू हैं, न यवन हैं। जात-पात कुल व गोत्र-हीन हैं। स्वरूप का ज्ञान प्राप्त निज बोध की स्थिति में है।। 24 | जो "साईं-साईं" लोग कहते हैं क्या वह उनका वास्तविक नाम है? श्रद्धावश "आओ साईं" कहकर उन्हें पहली बार संबोधित किया गया था, वही है यह नाम ।। 25 ।। खंडोबा मंदिर के पास म्हालसापति के हाते में सर्वप्रथम बारात के साथ पहुंचने के दिन यह हुआ।। 26 ।। प्रारंभ में यह भगत का हाता था बाद में यह अमीन भाई का हो गया। शादी की बारात जैसे आयी यहीं एक वृक्ष के नीचे उतरी ।। 27 ।। सभी गाड़ियां हाते में खोल दी गयीं। खंडोबा मंदिर प्रांगण में। और बाबा भी बारात समेत सभी के साथ वहीं उतर गए ।। 28 ।। यह बाल फकीर जैसे ही गाड़ी से उतरा, सर्व प्रथम भगत (म्हालसापति) की दृष्टि उन पर पड़ी। "आओ साईं" कहकर उनके सामने गए। तब से यह नाम पड़ गया ।। 29 ।। तत्पश्चात तभी से लोग उन्हें "साईं-साईं" बोल कर पुकारने लगे। यही नाम हो गया ।। 30 ।। फिर उन्होंने वहीं पर चिलम पी। मस्जिद में रहने के लिए चले गए। देवी दास के साथ (रहने में) रम गए, शिरडी में आनंद लेने लगे।। 31 ।। कभी चावड़ी में बैठते कभी देवी दास की संगत करते, कभी श्री हनुमान मंदिर। इस प्रकार स्वच्छंद रहने लगे ।। 32 ।। देवी दास बाबा से बहुत पहले से ही शिरडी गांव में थे फिर जानकी दास गोसावी महानुभाव शिरडी आए ।। 33 ।। इन्हीं जानकी दास के साथ महाराज बैठते बोलते थे या महाराज जहां होते, वहां जानकी दास जाते व बैठते ।। 34।। दोनों में बहुत प्रेम था। नित्य नियम से बैठकी होती। उनका यह समागम सभी के लिए परम सुखदायक था।। 35 ।। इस प्रकार एक गंगागीर बहुत प्रसिद्ध वैष्णव तथा गृहस्थाश्रमी पुणतंबे से शिरडी को बार-बार आते थे।। 36 ।। प्रारम्भ में साईं को दोनों हाथों कुएं से माटी की गगरी में पानी ले जाते हुए देख मन में आश्चर्य होता गंगागीर को।। 37 ।। ऐसे ही साईं को देखते रहते हुए बुआ ने तब स्पष्ट कहा, **"धन्य है शिरडी का महाभाग जो यह श्रेष्ठ रत्न पाया" ।। 38 ।। ये कंधों पर पानी ढो रहे हैं, किन्तु सामान्य प्रकार की मूर्ति नहीं है। यह इस भूमि के कुछ पुण्य हैं तभी ये यहां आए हैं।। 39 ।।** इसी प्रकार एक और संत, जो आनन्दनाथ नाम से विख्यात थे, ने भी भविष्यवाणी की थी कि ये अद्भुत कार्य करेंगे।। 40 ।। महाप्रसिद्ध आनन्द नाथ "येवला" ग्राम में मठ स्थापित किए तथा एक बार कुछ शिरडी वासियों के साथ

शिरडी आए।। 41 ।। आनन्द नाथ अक्कलकोट के महान संत के शिष्य थे। श्रीसाईं को समक्ष देखकर बोले, "यह हीरा है प्रकट हीरा" ।। 42 ।। यद्यपि आज कूड़े के ढेर पर है फिर भी वह हीरा है चकमक पत्थर नहीं है। बाबा जब कोमल आयु के थे तब आनन्दनाथ के ये उद्गार थे।। 43 ।। मेरी बात का ध्यान रखो बाद में तुम्हें याद दिलाया जायेगा। ऐसी भविष्यवाणी करके वे दोनों वापस चले ।। 44 ।। सिर पर पूरे बाल रखते थे कभी मुंडवाते नहीं थे। पहलवानों की तरह पहनावा रखते जब साईं तरुणावस्था में थे।। 45 ।। बाबा जब रहाता जाते गेंदा, चमेली की पौध लाते । अपने हाथ से उजाड़ स्थानों पर लगाते और नियम से पानी देते।। 46 ।।उनके भक्त वामन तात्या प्रतिदिन कच्ची मिट्टी के दो घड़े इस कार्य के लिए देते थे, बाबा अपने हाथ से सिंचाई करते थे।। 47 ।। कुएं के पास पक्के हौज से वे घड़े भरते कंधों पर ढोते तथा सूर्यास्त होने पर नीम के पेड़ के नीचे घड़े रख देते ।। 48 ।। वे जैसे ही वहां रख जाते (अपने आप) टूट जाते । अगले दिन सुबह तात्या सबसे अच्छे नये घड़े ला देते ।। 49।। आग में पकाने से घड़ा अपेक्षाकृत अधिक टिकाऊ होता है, किन्तु बाबा को बिल्कुल कच्चा चाहिए था । पकाने के पूर्व ही बिन श्रम के कुम्हार का घड़ा बिक जाता था।। 50 ।। तीन वर्षों तक इस प्रकार श्रम करते हुए उजाड़ भूमि पर बाग तैयार हो गया। उसी स्थान पर आज सुयोग से लोग वाडा का उपयोग कर रहे हैं।। 51 ।। यहीं नीम वृक्ष के नीचे एक भाई नामक भक्त साधक ने अक्कलकोट के स्वामी की पादुका, पूजा की इच्छा करने वालों के लिए, स्थापित की ।। 52 ।। अक्कलकोट के स्वामी समर्थ भाई के उपास्य देवता थे उनकी छवि की नित्य नियमित पूजा पूर्ण निष्ठा से किया करते थे।। 53 ।। अक्कलकोटि जाकर पादुका दर्शन ध्यान करने व विधिवत पूजा अर्पित करने की इच्छा मन में हुई ।। 54।। अतः वास्तव में उन्होंने बम्बई से चलने की सभी तैयारी कर ली, अगले दिन उसी प्रकार निकलने का निश्चय बदल कर शिरडी का रास्ता पकड़ लिया ।। 55 ।। कल जाना था तो आज उन्हें स्वप्न आया स्वामी समर्थ ने आज्ञा दी वर्तमान में मेरा स्थान शिरडी में है वहीं के लिए तुम प्रस्थान करो।। 56 ।। इस आज्ञा को ससम्मान स्वीकार करते हुए भाई बम्बई से निकले । शिरडी में छ: माह तक शान्तिपूर्वक प्रसन्नता से रहे।। 57 ।। भाई पूर्ण निष्ठावान थे। उस दृष्टांत को स्मरणीय बनाने के लिए नीम के पेड़ के नीचे स्वामी जी की पादुका स्थापित की ।। 58 ।। सन 1912 में शुद्ध श्रावण पर्वकाल में (अगस्त-सितम्बर) भजन पूजन के साथ प्रेम पूर्वक नीम के नीचे पादुका स्थापित की ।। 59 ।। दादा केलकर के हाथ से मुहूर्त में पादुका स्थापना, शास्त्रानुसार विधि -विधान से उपासनी महाराज द्वारा कराई गयी।। 60 ।। आगे की रख-रखाव की व्यवस्था की गयी। पूजा की जिम्मेदारी एक दीक्षित ब्राह्मण को दी गयी, जबकि भक्त सगुण को व्यवस्था देखने की । इस पादुका की ऐसी कहानी है।। 61 ।। एक संत निर्विकार ईश्वर के प्रत्यक्ष अवतार जगत के उद्धार व उपकार के लिए अवतरित होते हैं।। 62 ।। कुछ दिन व्यतीत होने के बाद एक आश्चर्य

जनक बात घटी जो श्रोताओं द्वारा सादर श्रवण करने से उनके मन को कौतुकपूर्ण लगेगी।। 63 ।। मोहिद्दीन भाई नामक एक तांबोली था। बाबा का उससे थोड़ा मतभेद था, जो बढ़ कर कुश्ती में बदल गया। दोनों परस्पर लड़ने लगे।। 64।। दोनों कुशल पहलवान थे। होनी के आगे बल नहीं चलती। मोहिद्दीन प्रबल हो गया । बाबा का बल कम हो गया अतः पराजित हो गए।। 65 ।। उसके के बाद बाबा ने निश्चय किया। उन्होंने अपनी पूरी पोशाक बदल दी, कफनी पहने के लिए, लंगोट बांधने के लिए तथा फटका माथे के चारों ओर (कपड़े का एक टुकड़ा) लपेट कर बांधने के लिए ।। 66 ।। टाट का टुकड़ा बैठने के लिए तथा टाट ही लेटने के लिए। उनका परिधान फटा पुराना होता, उसी में उन्हें संतोष था।। 67 ।। साईं बोला करते **"गरीबी अव्वल बादशाही अमीरी से सवा लाख गुना । गरीबों का अल्ला भाई" ।। 68 ।।** गंगागीर भी इसी स्थिति में थे। शारीरिक व्यायाम में उन्हें अति प्रीति थी। एक बार कुश्ती खेलते-खेलते उससे मन उचट गया।। 69 ।। सही समय आने पर एक सिद्ध की वाणी से निकला **"ईश्वर से क्रीड़ा करते हुए इस तन को मिटा दो"** ।। 70 ।। कुश्ती खेलते-खेलते कानों में अनुग्रह रूप में यह वाणी पड़ी। संसार का परित्याग करके वह परमार्थ भजन में लग गए ।। 71 ।। पुणतांबे के निकट नदी (गोदावरी) के दो प्रवाहों के मध्य स्थित टापू पर शिष्यों से सेवित बुवा का मठ है ।। 72 ।। जैसे समय बीतता गया, साईंनाथ पूछे गए प्रश्नों का ही उत्तर देते। स्वयं अपने आप किसी से बात नहीं करते।। 73 ।। दिन में नीम के पेड़ के नीचे बैठते । कभी-कभी वह नाले के किनारे उगे बबूल के पेड़ की पड़ी डाली के नीचे बैठे रहते, गांव के किनारे।। 74 ।। कभी-कभी जब उन्हें अच्छा लगता बाबा शिरडी से लगभग एक मील दूर नीमगांव के आस-पास दोपहर के बाद दिन में घूमते रहते ।। 75 ।। प्रसिद्ध त्रिंबक डेगले नीमगांव का जहांगीरदार था। बाबा साहेब उन्हीं के वारिस थे। इनसे बाबा की बहुत प्रीति थी।। 76 ।। जब भी नीम गांव तक चक्कर लगाते बाबा उनके घर जाते और अति प्रेम से उनसे दिनभर बात करना पसंद करते ।। 77 ।। उनके छोटे भाई थे जिनका नाम नानासाहेब था। उनके कोई पुत्र संतान नहीं थी इससे वे खिन्न मन रहते थे।। 78 ।। प्रथम पत्नी से संभावना कम थी अतः दूसरा विवाह किया था। तब भी पूर्व जन्म के कर्म का फल चुकता नहीं हुआ। ईश्वर का नियम गूढ़ है।। 79 ।। तत्पश्चात बाबा साहेब ने उन्हें साईं दर्शन के लिए भेजा । आशीर्वाद प्राप्त होने पर नाना को पुत्र प्रसाद स्वरूप मिला ।। 80 ।। इसके बाद साईं दर्शन के लिए जन समुदाय उमड़ पड़ा । साईं की महिमा बढ़ती गयी। बात नगर तक पहुंच गयी।। 81 ।। वहां सरकारी न्यायालयों में घूमते रहने से नाना का सम्पर्क अधिक था। उनमें से ही चिदम्बर केशव जिला कलेक्टर के सचिव थे।। 82 ।। नाना ने उनको एक पत्र लिखा कि वे अपने इष्ट मित्रों पुत्र व पत्नी के साथ साईं समर्थ के दर्शन के लिए आयें । वे दर्शन के पात्र थे।। 83 ।। इस प्रकार एक के बाद एक शिरडी अनेक लोग आने लगे । जैसे-जैसे बाबा की प्रसिद्धि बढ़ने लगी वैसे ही उनके भक्त दिखने लगे।। 84 ।। यद्यपि बाबा

किसी का संग नहीं चाहते थे, फिर भी दिन में भक्तों की भीड़ से घिरे रहते । सूर्यास्त के बाद शिरडी में मस्जिद में सो जाते ।। 85 ।। चिलम, तंबाकू, टमरेल, अंग पर पांव तक लम्बी कफनी, सिर पर सफेद कपड़े का टुकड़ा (फड़का) व सटका सर्वदा पास रहता था।। 86 ।। उस धुले हुए सफेद वस्त्र का वामकर्ण के पीछे ले जाकर जटाजूट की तरह घुमाकर सिर पर बांधते थे।। 87 ।। इस प्रकार वस्त्र से ढके आठ-आठ दिन बिना स्नान किए नंगे पांव टहलते रहते । आसन के लिए एक टाट।। 88 ।। टाट का वह टुकड़ा उनका नित्य का आसन था। तकिया कैसा होता है उन्हें मालूम नहीं। किसी भी स्थिति में वे संतुष्ट थे।। 89 ।। वह पुराना फटा हुआ टाट उनकी प्रिय आसनी थी। सदा सर्वदा आठों प्रहर उसी जगह रहती थी।। 90 ।। वही आसनी, वही ओढ़नी , एक कौपीन परिधान के अतिरिक्त दूसरा कोई वस्त्र ढकने के लिए नहीं था । शीत निवारण के लिए धुनी थी।। 91 ।। दक्षिण की ओर मुख करके आसीन होकर, वायां हाथ रेलिंग पर, मस्जिद में धूनी को देखते हुए बाबा बैठते थे।। 92 ।। अहंकार वासना समेत नाना प्रकार की वृत्तियां, सभी प्रपंच वृत्तियां, हवन में आहूति की भांति धूनी में डालने की युक्ति प्रयुक्त करते थे।। 93 ।। इसी प्रकार उस प्रखर कुंड में ज्ञान अभिमान की लकड़ी डालते रहते। अल्ला मालिक सदा बोलते हुए उसका झंडा अखंड किए रहते।। 94 ।। आखिर मस्जिद में कितनी जगह थी, केवल दो धरनों के बीच की जगह । उसी में बैठना-उठना, सोना एवं सभी से भेंट करना ।। 95 ।। गद्‌दी, तकिया ये सभी अब आ गए। भक्त समुदाय से भी मिलन होता । आरंभ में उनके निकट जाने में सभी निर्भय नहीं होते थे।। 96 ।। सन 1912 से वहां सब कुछ नये प्रकार का हो गया। उसी समय से मस्जिद की स्थिति में परिवर्तन प्रारम्भ हुआ ।। 97 ।। मस्जिद की जमीन पर जिसमें घुटने-घुटने तक गड्डे होते एक रात में ही भक्तों के भाव रस से फर्शबंदी हो गयी।। 98 ।। मस्जिद में आकर बसने से पूर्व बाबा तकिया में रहते थे। वहां वे लम्बे समय तक निर्बाध रमें रहे।। 99 ।। वहीं पर पैरों में घुघरू और खंजरी की ताल पर बाबा सुन्दर नाच किया करते थे। प्रेम से मधुर गीत गाते थे।। 100 ।। आरम्भ में साईं समर्थ दीपोत्सव में बहुत रुचि लेते। उसके लिए स्वयं दुकानदारों से तेल मांगने जाते थे।। 101 ।। टमरेल हाथ में लेकर पंसारी की दुकान से तेल की भिक्षा मांगते और दीपों में भरते ।। 102 ।। फिर दीपों को मस्जिद और मंदिर में जलाते । यह कुछ दिनों तक निरन्तर चलता रहता ।। 103 ।। उन्हें दीपाराधना से बहुत प्रेम था। दीपावली की तरह दीपोत्सव करते थे। चिथड़ों से बत्ती बनाकर मस्जिद में दीया जलाते ।। 104 ।। तेल प्रतिदिन बिना पैसे के बाबा लाते थे। पंसारियों के मन में कपट आ गया। सभी ने मिलकर विचार किया कि यह कटकट (परेशानी) बहुत हो, गयी इसे बंद किया जाये ।। 105 ।। फिर नित्य नियमानुसार बाबा तेल मांगने आए सभी ने “नहीं” बोल दिया। क्या आश्चर्य घटित हुआ।। 106 ।। बाबा बिना कुछ बोले वापस आ गए । सूखी वातियां मिट्टी के दियालियों में रख दी। तेल है नहीं, क्या करते हैं, यह पंसारी लोग मौज

से देखने लगे।। 107 ।। बाबा ने मस्जिद की दीवाल से टमरेल उठाया इसमें इतनी कम मात्रा में तेल था कि मस्जिद के दीये मुश्किल से जलाए जा सकते थे।। 108 ।। उस तेल में पानी डालकर बाबा स्वयं पी गए । इस प्रकार बिना झिझक पानी पीकर उन्होंने ब्रह्मार्पण किया।। 109 ।। उसके बाद उस पानी को दीयों में उलट दिया । सूखी बत्तियां पूर्ण रूप से भीग गयीं । उन्हें जला कर दिखाया कि किस प्रकार दीये जगमग जल सकते हैं।। 110 ।। पानी को दीयों में देखकर पंसारी दंग रह गए | आपस में कहा कि बाबा को मना करके अच्छा नहीं किया ।। 111 ।। अणुमात्र तेल न होते हुए भी दीये पूरी रात जलते रहे। हर जगह कहा जाने लगा कि पंसारी बाबा की कृपा के पात्र नहीं हैं।। 112 ।। बाबा का कितना प्रताप है। असत्य भाषण का पाप किया, बाबा को व्यर्थ संताप भी दिया, यह पश्चाताप पंसारी करने लगे।। 113 ।। बाबा के मन में कुछ नहीं था । राग व द्वेष से नाता नहीं था। उनका न कोई शत्रु था न कोई मित्र था। सभी प्राणी एक समान थे।। 114 ।। अब पहले कही हुयी घटना पर आते हैं। मोहिद्दीन का कुश्ती में जीतना । अब आगे दत्तावधान होकर चरित्र महिमा सुनो।। 115 ।। कुश्ती के बाद पांचवे वर्ष में अहमदनगर निवासी एक फकीर जिसका नाम था "जव्हार अली" अपने शिष्यों के साथ रहाटा आया ।। 116 ।। वीरभद्र मंदिर के पास एक खुली जगह देखकर फकीर ने अपना डेरा बना लिया । फकीर वास्तव में बहुत सौभाग्यवान था ।। 117 ।। यदि सौभाग्यवान न होता तो साईं सरीखे मौजी शिष्य उसको कैसे मिलता जिसका डंका सर्वत्र था ।। 118 ।। गांव में अनेक लोग थे। जिनमें मराठे बहुसंख्यक थे। उनमें एक भगू सदाफल उस फकीर का सेवक बन गया।। 119 ।। फकीर बहुत पढ़ा था । कुरान-ए-शरीफ उस फकीर को इतनी स्पष्ट थी जैसे हथेली पर आंवला | स्वार्थी परमार्थी और आस्थावान अनेक लोग उनके चरणों में आ गए ।। 120 ।। उसने एक ईदगाह बनाना प्रारम्भ किया। कुछ समय बीत गया, फिर उस पर वीरभद्र देव के मंदिर को अपवित्र करने का आरोप लगा ।। 121 ।। फिर ईदगाह का निर्माण कार्य बंद हो गया । और फकीर को गांव के बाहर कर दिया गया। वहां से फिर वह शिरडी आया और बाबा के पास मस्जिद में रहा ।। 122 ।। फकीर बहुत मृदुभाषी था। गांव के लोग उसका गुणगान करने लगे। बाबा पर भी कुछ जादू का खेल किया । लोग कहते मोहित कर लिया है।। 123 ।। "तू मेरा चेला" उसने बाबा से कहा। बाबा का स्वभाव बहुत रंगीला था । हां कहते ही फकीर प्रसन्न हो गया तथा (शिरडी के) बाहर ले गया ।। 124 ।। बाबा जैसा प्रसिद्ध शिष्य का जव्हार अल्ली गुरु बन गया। फिर दोनों ने विचार किया और रहाटा में रहने लगे।। 125 ।। गुरु को शिष्य की योग्यता नहीं मालूम थी। शिष्य गुरु की योग्यता जानता था, किन्तु शिष्य का स्वधर्म पालन करते हुए थोड़ा भी अनादर नहीं किया ।। 126 ।। गुरु के मुख से बाहर आते ही योग्यायोग्य विचार किये बिना आज्ञा का पालन बिना चूक के होने लगा। गुरु के घर के लिए पानी भी लाते थे।। 127 ।। गुरु सेवा ऐसी ही चलती रही। शिरडी आगमन कभी-कभी होता । जब ऐसा होने लगा

आगे क्या हुआ ।। 128 ।। ऐसा लगातार होता रहा । रहाटा में ही (श्रीसाई) रहने लगे । फकीर का बहुत गुणगान होने लगा। ऐसा लगा कि शिरडी ने उन्हें खो दिया है।। 129 ।। लोगों को लगने लगा कि जव्हार अल्ली ने साईं को अपने योग बल से बांध रखा है। बाबा की योजना भिन्न थी, देहाभिमान को जलाने के हेतु ।। 130।। साईं को कैसा अभिमान । श्रोता सहज ही यह अनुमान कर सकते हैं, किन्तु यह लोक संग्रह के लिए आचरण, अवतार कार्य है।। 131 ।। शिरडीवासी बाबा के प्रेमी भक्त थे। बाबा से अति आसक्ति थी उन्हें । बाबा से इस प्रकार दूर रहना उन्हें अनुचित लग रहा था।। 132 ।। साईं का सर्वस्व उनके (जव्हार अली) अधीन देखकर ग्रामवासी मन में उद्विग्न थे। उन्हें कैसे स्वाधीन करायें यह सभी विचार करने लगे।। 133 ।। जैसे कनक और इसकी कांति । जैसे दीप और इसकी दीप्ति । वैसी ही यह गुरु शिष्य स्थिति । दोनों एक प्रतीत होते थे।। 134 ।। फिर भी शिरडी का वह भक्त मंडल रहाटा के ईदगाह के पास गया मन में यह योजना बनाते हुए कि प्रबल प्रयत्न करके बाबा को साथ लेकर सभी लोगों को वापस कैसे आना है।। 135 ।। बाबा ने उनकी योजना को उलट दिया । "फकीर बहुत क्रोधी है उससे कुछ मत कहो वह मुझे कहीं रहने नहीं देगा" ।। 136 ।। तुम यहां से पलायन करो वह गांव से आता होगा। उसका क्रोध बहुत कठोर है वह तुम्हें सपरिवार नष्ट कर देगा ।। 137 ।। उसका क्रोध बहुत कड़क है वह अंगारे की तरह लाल हो जायेगा | जाओ, जाओ तुरंत चले जाओ सीधे शिरडी का रास्ता पकड़ो" ।। 138 ।। अब इसके बाद क्या करना चाहिए बाबा ने तो विपरीत कथा सुना दी यह सोच रहे थे कि फकीर अचानक वापस आ गया और उनसे पूछने लगा।। 139 ।। "तो क्या इस बालक के लिए आये हो? यहां क्या बातचीत कर रहे थे। अब इसे वापस शिरडी ले जाने का उद्देश्य है तो यह प्रयास करने का कष्ट न करो" ।। 140 ।। यद्यपि आरंभ में ऐसा कहा, बाद में ग्रामीणों के दबाव के आगे झुक गया, कहा, "मुझे भी ले चलो। हम सब बालक को लेकर चलेंगे" ।। 141 ।। इस प्रकार फकीर भी सबके साथ आ गया । वह बाबा से अलग नहीं रह सकता था । बाबा भी उससे अलग नहीं रहना चाहते थे। यह कैसे सम्भव था, यह कोई समझ नहीं सका ।। 142 ।। साईं साकार परब्रह्म थे। जव्हार अल्ली भ्रम से भरा कद्दू था। शिरडी में देवी दास द्वारा परीक्षण किए जाने पर कद्दू फूट गया ।। 143 ।। देवीदास की बनावट सुन्दर थी। तेजस्वी नेत्र मनोहर रूप उनकी उम्र दस या ग्यारह वर्ष की रही होगी जब वह आरंभ में शिरडी आए ।। 144 ।। ऐसी अल्प वय में एक लंगोट मात्र पहने हुए वह गोसावी हनुमान के मंदिर पर उतरे।। 145 ।। अप्पा भील तथा म्हालसापति उनके पास जाया करते । काशीराम आदि उन्हें शिधा (साधु का राशन) देते थे। उनकी महत्ता बढ़ती गयी।। 146 ।। बारात के साथ जब बाबा आए उससे बारह साल पहले देवीदास आकर शिरडी में बस गए थे।। 147 ।। अप्पा भील को पट्टी पर लिखना सिखाया । व्यंकटेश स्तोत्र पढ़ाया, सबको उच्चारण करना सिखाया । यह पाठ नियम से चलता रहा ।। 148 ।। देवीदास महाज्ञानी थे।

तात्याबा (तात्या गणपत पाटिल कोटे) ने उनका गुरुत्व स्वीकार किया। काशीनाथ आदि अग्रणी शिष्ट उनके चरणों से संबद्ध हो गये।। 149 ।। उनके समक्ष यह फकीर लाया गया। शास्त्रीय वाद-विवाद हुआ । वैराग्य से फकीर पराजित हो गया। उसे वहां से भगा दिया गया।। 150 ।। उसके बाद वहां से निकलकर वह वैजापुर में रहने लगा। कई वर्षों के बाद वह साईंनाथ को नमस्कार करने आया ।। 151 ।। "आपने गुरु और साईं चेला" उसका सब भ्रम दूर हो गया । बाबा ने पूर्ववत उसका सत्कार किया । वह पश्चाताप से शुद्ध हो गया ।। 152 ।। ऐसी बाबा की अगाध लीला थी। समय आने पर बात निपट गयी, तब तक वह गुरु अपने चेलेपन के भाव का आदर करते रहे।। 153 ।। उसका गुरुपन उसका था । अपना चेलापन अपना था। इस कथा का यही उपदेश था। जिसका साईंनाथ ने पालन किया।। 154 ।। स्वयं को किसी का बनाके रहे या किसी को अपना बना लो। इससे अच्छी अन्य स्थिति नहीं होती। इसके बिना भव-सागर के पार नहीं उतरना होता है।। 155 ।। यह एक शिक्षा है इस कहानी की। किन्तु दुर्लभ है ऐसा निर्भय व्यक्ति, जिसके मन में ऐसी शिक्षा हो । वह निरभिमान बढ़ता जायेगा।। 156 ।। यहां स्वबुद्धि-परिकल्पित चतुराई किसी काम की नहीं है। जो स्वहित साधने की इच्छा मन में रखते हैं उन्हें अभिमान रहित बर्ताव करना चाहिए ।। 157 ।। जिनके शरीर का अभिमान जल गया है। उन्हीं का शरीर सार्थक है। वह परमार्थ साधने के लिए फिर किसी के चेले बनेंगे ।। 158 ।। उस निर्विषय स्थिति को देखकर छोटे-बड़े (सभी) विस्मित चित्त थे। छोटी वय तथा सुकुमार प्यारी मूर्ति सभी लोग कौतुक करते ।। 159 ।। ज्ञानियों का शारीरिक व्यवहार पूर्व कर्मों के अनुसार होता है। उनका प्रारब्ध कर्मभार नहीं होता है, न वे कर्म के कर्ता होते हैं।। 160 ।। जैसे सूर्य का अंधेरे में प्रवेश होता है वैसे ही ज्ञानी का द्वैतभाव में । जिसके स्वरूप में संपूर्ण विश्व है वहां अद्वैत का वास है।। 161 ।। यह गुरु शिष्य का आचरण जैसा साईंनाथ के परम भक्त म्हालसापति से सुना, विस्तृत वर्णित किया गया है।। 162 ।। किन्तु अभी यह आख्यान है। आगे का चरित्र और गहन है। उसका यथाक्रम कथन होगा। सावधान होकर उसका श्रवण करें।। 163 ।। मस्जिद पूर्व में कैसी थी। उसकी फरस कितने कष्ट से बनी। साईं हिन्दू थे या यवन वंशी कोई भी यह निश्चित रूप से नहीं जानता था ।। 164 ।। धोती-पोती, खण्डयोग, भक्तों के भोग को कैसे स्वयं भोगते थे, यह सब निवेदन बाद में अचछी तरह पूर्णरूप से होगा ।। 165 ।। हेमाड साईं की शरण में है। कथा निरूपण चरण प्रसाद है, श्रवण से होगा कष्ट का निवारण । यह कथा पुण्य पावन है।। 166 ।। स्वस्ति, श्री. संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाण्ड पंत विरचित "श्री साईं समर्थ सच्चरित" का "श्री साईं का पुन: प्रकट होना" नामक पंचम अध्याय सम्पूर्ण।।

।। श्री सदगुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय छठवां (श्रीराम जन्मोत्सवादि कथन) ।।

श्री गणेश को नमन।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

आध्यात्मिक हो या सांसारिक क्षेत्र, जहां सद्गुरु कर्णधार हैं वहां वही (जीवन रूपी) नाव को दूसरे किनारे तक उतारेंगे।। 1 ।। सद्गुरु शब्द से चित्त में जब भाव उत्पन्न होते हैं सर्वप्रथम श्री साईं ही मन में प्रकट होते हैं। वह वास्तव में आपके सन्मुख खड़े होकर अपना हाथ आपके माथे पर रख देते हैं।। 2 ।। धूनी से उत्पन्न ऊदी समन्वित वरदहस्त जब मस्तक पर पड़ता है हृदय स्वानन्द से इतना भर जाता है कि प्रेम के आँसू उमड़ पड़ते हैं।। 3 ।। गुरु के हाथों का स्पर्श इतना अद्भुत होता है कि प्रलय की अग्नि से भी जिसका दहन नहीं होता , उस सूक्ष्म शरीर को वह जला देता है। कर स्पर्श से (सूक्ष्म शरीर) भस्म हो जाता है। **(सूक्ष्म शरीर भस्म हो जाने के बाद जीवात्मा जन्म-मृत्यु के बंधन से मुक्त हो जाता है)।। 4 ।।** देवताओं की कथा की आकस्मिक वार्ता से जिनके सर में दर्द होने लगता है या वाणी बकवास करने लगती है, उनमें भी स्थिरता आ जाती है।। 5 ।। सिर पर उनका करकमल पड़ते ही अनेक जन्मों के परिपक्व मल धुल जाते हैं। साईं के प्रेममय भक्त निर्मल हो जाते हैं।। 6 ।। उनके सुन्दर रूप को देखते ही परम आनन्द से कंठ रुंध जाते हैं, नयनों से आनन्द के आँसू फूट पड़ते हैं, हृदय में अष्टभाव उत्पन्न हो जाते हैं।। 7 ।। "सोहं" (वह मैं) का भाव जाग्रत हो जाता है, स्वानन्द प्रकट हो जाता है, जीवन का मैं-तूं पन क्षीण होता है, समरसता व अद्वैत प्रदर्शित होता है।। 8 ।। पवित्र पोथी व पुराणों को वाचने में प्रत्येक कदम पर सद्गुरु का स्मरण कराया जाता है। साईं ही राम व कृष्ण बनकर अपना चरित्र श्रवण कराते हैं।। 9 ।। भागवत् सुनने बैठिए | कृष्ण नख से शिख तक साईं बनकर उद्धवगीत गाते हैं, अपने भक्तों का हित साधने के लिए ।। 10 ।। सहज रूप से वार्ता करने बैठिए वहां भी उचित दृष्टांत देने के लिए, जिसके विषय में सोचा भी नहीं होगा, श्री साईं की कथा आ जायेगी।। 11 ।। लिखने के लिए कागज निकालिए कि एक भी अक्षर नहीं लिखा जाता है। फिर भी जब श्री साईं स्वयं अपनी कृपा से आप को प्रेरणा देते हैं, लेखनी के प्रवाह को आप रोक नहीं पाते हैं।। 12 ।। जब-जब (आपका) अहंभाव अपना सर उठाता है, (श्री साईं) अपने हाथ से उसे नीचे दबा देते हैं। इसके अतिरिक्त अपने शक्तिपात से शिष्य को कृतार्थ करते हैं।। 13 ।। जब शरीर, वचन व मन से साईं समर्थ को दण्डवत किया जाता है तब धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष बिना मांगे अपने आप प्राप्त हो जाता है।। 14 ।। ईश्वर प्राप्ति के चार मार्ग कर्म, ,योग, भक्ति व ज्ञान है। यद्यपि ये चारों चार दिशाओं की ओर जाते हैं, किन्तु वह पहुंचते

अपने स्थान पर ही हैं।। 15 ।। भक्ति मार्ग बबूल के वन के मध्य से निकलने वाला टूटा-फूटा व विकट है। एक व्यक्ति निकलने भर का संकरा यह मार्ग श्रीहरि के निकट सीधे ले जाता है।। 16 ।। काँटों को टालते हुए पैर रखना ही एक सुलभ उपाय है। तभी निर्भय होकर अपने धाम पर पहुंचेंगे। यह गुरुमाँ ने स्पष्ट कहा है।। 17 ।। जब मन की भूमि भक्ति से सिंचित होती है, वैराग्य उत्पन्न होता है। ज्ञान फूलता है। कैवल्य फलित होता है। आनन्द लबालव हो जाता है। जन्म-मरण क्रम निश्चित रूप से समाप्त हो जाता है।। 18 ।। मूल परमआत्मा स्वयं सिद्ध है। सत्, चिद्, आनन्द त्रिविध वही है | गुणों से संयुक्त यह प्रबुद्ध भक्तों के हित के लिए प्रकट होकर बोध कराता है।। 19 ।। जैसे ही यह (ब्रह्म) उक्त तीनों गुणों द्वारा व्यक्त हुआ, माया भी अपने कार्य में लग गयी। सत्व, रजस्, व तमस् को क्रियाशील करके गुण को सुव्यक्त कर दिया ।। 20 ।। वास्तव में यह मिट्टी का ही विशिष्ट आकार है जिसका नाम घड़ा है। घड़ा, फूटते ही, नाम रूप तथा विकार से परे हो जाता है।। 21 ।। यह अखिल जगत माया द्वारा सृजित है। दोनों में परस्पर कार्य-कारण भाव हैं। वास्तव में माया ही प्रत्यक्ष हुयी है। जगत के रूप में इसका ही उद्भव है।। 22 ।। जगत की उत्पत्ति के पूर्व माया की स्थिति यह थी कि उसने अपने को व्यक्त नहीं किया था। परमात्मा रूप में ही लीन थी परम अव्यक्त में ही एकत्र थी।। 23 ।। व्यक्त होने पर भी परमात्म रूप और अव्यक्त होने पर भी परमात्म रूप, अतः यह माया परमात्मरूप ही है। परमात्म से इसके रूप का भेद नहीं है।। 24 ।। **तमोगुण** से माया ने जड़ पदार्थ का निर्माण किया, निर्जीव तथा गतिहीन । इस प्रकार प्रथम क्रिया पूर्ण हुई।। 25 ।। फिर माया का **रजोगुण** परमात्मा के **चिद्गुण** के साथ मिलकर दोनों गुणों के स्वभाव से चेतन जगत का प्रादुर्भाव हुआ।। 26 ।। फिर माया के **सत्व** गुण ने बुद्धितत्व का निर्माण किया उसमें परमात्मा के **आनन्दगुण** के मिलने ने निर्माण का खेल पूर्ण हो गया ।। 27 ।। इस प्रकार माया अत्यन्त परिवर्तनशील है। (माया) जब तक क्रियाशील होना नहीं स्वीकारती है पूर्वोक्त पदार्थ निर्मित नहीं होते हैं व त्रिगुण अव्यक्त रहते: है।। 28 ।। माया जब तक गुणों के अनुरूप क्रिया नहीं करती है तब तक व्यक्त नहीं होती है। तब तक अव्यक्त रहती है, जब तक अक्रियत्व का सेवन करती रहती है।। 29 ।। माया परमात्मा का कार्य है। जग माया का कार्य है। "सर्वे खल्विंद ब्रह्म"- “यह समस्त ब्रह्माण्ड ब्रह्म है"- का अर्थ है, इन तीनों में एक्य है।। 30 ।। यह "अमोद प्रतीति" कैसे निश्चित रूप से प्राप्त हो सकती है यह उत्कट इच्छा जिनके चित्त में है उन्हें वेद व श्रुतियों का अध्ययन करना चाहिए ।। 31 ।। सार व असार का विचार करने की शक्ति वेद शास्त्र श्रुति व स्मृति से प्राप्त होती है। इसी से गुरु व वेदान्त के वाक्यों की अभेद प्रतीति होगी। इससे परमानन्द की प्राप्ति होगी।। 32 ।। "मेरे भक्तों के घरों में अन्न व वस्त्र की कमी नहीं होगी" इस अर्थ का आश्वासन बाबा ने दिया था, बाबा के भक्त इससे अवगत हैं।। 33 **।। "जो अनन्यभाव से मुझे भजता है, नित्य पवित्र मन से मेरी सेवा करता है,**

उसका योगक्षेम सुव्यवस्थित करना, मैं अपना वचन समझता हूं ।। 34 ।।" साईं का बोल ,यह सत्य वचन ,सत्य मानों । भगवद्गीता का भी यही वचन है। अन्न व वस्त्र की कमी नहीं होगी, उसके लिए मरो नहीं ।। 35 ।। लौकिक मान से मुक्ति हो जायेगी, देवद्वार का ही मान है, देवालय की चौखट की गोद में बैठ जावो, उन्हीं का प्रसाद पावो ।। 36 ।। आराध्यमूर्ति के चित्त के द्रवित होने से धर्म का लबालब हो जाना देखें । लोगों द्वारा सिर हिलाने से तुम्हारा सिर क्यों घूम जाता है।। 37 ।। ऐसा ध्येय सुखद होता है। सभी इन्द्रियां भक्ति से बंध जायें। इन्द्रियों के विकार भक्ति में परिवर्तित होकर समाप्त हो जायेंगे, फिर कैसी इच्छाएं ।। 38 ।। **"ऐसी भक्ति सदैव बनी रहे। इसके अतिरिक्त कहीं भी अनिच्छा हो । मन मेरे नाम स्मरण में लीन हो जाये । समय का भी आभास न रह जावे"** ।। 39 ।। फिर शरीर, गृहस्थी, तथा धन को नकारते हुए चित्त परमानन्द में स्थित हो जायेगा । मन समदर्शी और प्रशान्त होगी। परिपूर्णता सुनिश्चित होगी।। 40 ।। सत्संग करने की पहचान यह है कि वृत्तियां शांत हो जाती है। जो मन तरह-तरह के स्थानों पर भटकता है वह क्यों "सल्लीन" (एकात्म) कहलायेगा ।। 41 ।। अतः दत्तावधान होकर श्रोतागण भक्ति भाव से निरूपण को सुनें । साईसच्चरित के श्रवण से मन भक्ति की ओर झुकेगा। 42 ।। कथा के साथ तृप्ति होगी । चंचल मन को विश्रांति मिलेगी। अशांति से निवृत्ति होगी। सुख समृद्धि प्राप्त होगी।। 43 ।। अब पूर्व की कथा को यहां जोड़ते हैं। मस्जिद का जीर्णोद्धारण | राम जन्म कथा कीर्तन । आगे निरूपण चालू करते हैं।। 44 ।। एक भक्त गोपाल गुंड थे। उनकी बाबा में बड़ी भक्ति थी। मुख से बाबा का नाम अखण्ड जपते थे इस प्रकार कालखण्डन करते थे।। 45 ।। उनके कोई संतान नहीं थी। किन्तु बाद में श्री साईं के प्रसाद से उन्हें पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। चित्त प्रसन्न हो गया।। 46 ।। गोपाल गुंड के मन में आया कि एक उत्सव अथवा उरुस शिरडी ग्राम में वर्ष में एक बार होना चाहिए इससे सर्वत्र उल्लास होगा।। 47 ।। तात्या कोते, दादा काते, माधवराव आदि सभी प्रमुख जनों को यह विचार अच्छा लगा। तैयारी में लग गए ।। 48 ।। किन्तु इस प्रकार के वार्षिक उत्सवों के आयोजन के पूर्व जिलाधिकारी का अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक था । ऐसी नियम की पाबन्दी थी।। 49 ।। उसके लिए प्रयास करने पर गांव का जो एक कुलकर्णी कुत्सितपन के कारण विपरीत हो गया, कार्य में बाधा डाल दिया ।। 50 ।। कुलकर्णी के आड़े पड़ने से क्या परिणाम हुआ। जिले से आदेश हुआ कि शिरडी में उत्सव नहीं होगा।। 51 ।। किन्तु शिरडी में उत्सव होना था । बाबा का ही मनोगत था इसके लिए आशीर्वादयुक्त पूर्ण आज्ञा मिल चुकी थी।। 52 ।। ग्रामवासियों ने हृदय से निश्चय प्रवृत्त रहकर पूर्ण क्षमता से यत्न किया। अधिकारियों का आदेश पलट गया। सभी का मान रह गया ।। 53 ।। उसके बाद से बाबा की राय से रामनवमी के दिन उत्सव करना निश्चित हुआ । तात्या कोते व्यवस्था देखते । यह उत्सव असीमित हो गया ।। 54।। रामनवमी के दिन उत्सव पूजा भजन, नगाड़ों की आवाज तथा वाद्ययन्त्रों की मधुर धुन के

साथ होता । चारों ओर से अत्यधिक संख्या में धर्मार्थी भी आते।। 55 ।। प्रत्येक वर्ष दो नयी पताकाएं समारोह में जुलूस में ले जायी जातीं । मस्जिद में कलश से बांधी जाती । अन्त में वही रहतीं।। 56 ।।उन में से एक निमोड़कर की व दूसरी अन्ना की। तड़क-भड़क के साथ जुलूस में ले जायी जातीं । कलश के अग्र भाग में फड़कती रहतीं।। 57 ।। अब रामनवमी उत्सव उरुस उत्सव से कैसे पैदा हुआ इस अभिनव कथानक को सुनो जो शिरडी का स्वानन्द गौरव है।। 58 ।। सन् 1911 में रामनवमी सर्वप्रथम मनायी गयी, उरुस से विचार उत्पन्न हुआ वही निरन्तर चल रहा है।। 59 ।। प्रसिद्ध कृष्ण जागेश्वर भीष्म । इन्हीं में कल्पना का उदय हुआ कि राम का जन्मोत्सव कराया जाये इससे परम कल्याण होगा।। 60 ।। तब तक केवल उरुस तथा मेला बड़े स्तर पर प्रतिवर्ष आयोजित होते। उससे सरस जन्मोत्सव का विचार उस वर्ष उदय हुआ।। 61 ।। एक बार भीष्म स्वस्थचित्त वाडा में बैठे थे। काका महाजनी पूजा सामग्री के समेत मस्जिद जाने को उद्यत थे।। 62 ।। मन में साईं दर्शन का उद्देश्य और वैसे उरुस की भी मौज के लिए काका एक रोज पहले शिरडी में उत्सव के लिए हाजिर हो जाते ।। 63 ।। उचित अवसर पाकर भीष्म ने फिर काका से पूछा, "मन में एक सदवृत्ति का स्फुरण हो रहा है, इसे क्रियान्वित करने में क्या मेरी सहायता करेंगे" ।। 64।। यहां उर्स प्रतिवर्ष होता है, राम के जन्म दिवस पर ही। अतः जन्मोत्सव संपादन के लिए आनंदमय यह अवसर मिल गया।। 65 ।। काका को विचार अच्छा लगा बोले,"बाबा की आज्ञा लो उनकी आज्ञा पर ही सब निर्भर है, फिर कार्य संपन्न होने में बिलम्ब नहीं होगा।। 66 ।। पर उत्सव में कीर्तन होता है। उसकी व्यवस्था का प्रश्न शेष रह गया। गांव में हरिदास कहां । यही एक अड़चन रह गयी।। 67 ।। भीष्म ने कहा मैं कीर्तनकार बनूंगा, आप हारमोनियम पर स्वर निकालें । राधाकृष्णा बाई प्रसाद के लिए सुंठवाडा इस अवसर पर तैयार करेंगी।। 68 ।। अब आओ बाबा के पास चलें। शुभ कार्य में बिलम्ब से कठिनाई उत्पन्न होती है। शुभ कार्य शीघ्रता से किए जाने पर कार्य की सफलता सुनिश्चित होती है।। 69 ।। चलें हम लोग कीर्तन करने के लिए आज्ञा के लिए पूछते हैं। ऐसा कहते हुए वे दोनों फिर मस्जिद में समय से पहुंच गये।। 70 ।। काका के पूजा आरम्भ करते बाबा ने प्रश्न पूछे, "वाडा में क्या चल रहा था?" किन्तु काका की बुद्धि में यह नहीं आया ।। 71 ।। तत्काल बाबा ने भीष्म से यही प्रश्न किये। क्या बुवा ? क्या कहते हो ? " ।। 72 ।। तत्काल काका को याद आ गया और सोचा हुआ प्रयोजन उनसे निवेदित किया | बाबा के मन को विचार रुचिकर लगा | उत्सव निश्चित हो गया ।। 73 ।। दूसरे दिन प्रातः समय बाबा को लेंडी जाते हुए देखकर उन्होंने सभा मण्डप में पालना बाँध दिया कीर्तन को तड़क भड़कदार बनाया गया।। 74 ।। फिर सही समय पर श्रोता एकत्र हुए। बाबा वापस आए, भीष्म उठ गए, काका के हारमोनियम के पास बैठते ही उनके लिए बुलावा आ गया ।। 75 ।। "बाबा आपको बुला रहे हैं" सुनते ही काका भयभीत हो गए | क्या हो रहा है वह समझ नहीं सके। कथा में भूल न हो।। 76 ।।

बाबा का निमंत्रण सुनकर काका संत्रस्त हो गए वहीं । बाबा का अच्छा मन क्षुब्ध क्यों हो रहा है, कीर्तन निर्विघ्न होगा या नहीं।। 77 ।। आगे चलते, पीछे देखते, डरते-डरते सीढ़ी चढ़ते, मंद-मंद पांव पड़ते काका बहुत चिंतित थे।। 78 ।। बाबा ने उनसे प्रश्न किया। यह पालना क्यों बाँधा गया है? तात्पर्य और योजना बताए जाने पर सुनकर मन आनन्दित हो गया।। 79 ।। फिर वहां दीवाल की ताख से एक सुन्दर हार उठाकर काका के गले में डाल दिया, दूसरा भीष्म के लिए दिया ।। 80 ।। पालने के विषय में प्रश्न पूछने से अधिक चिंता हो गयी थी, किन्तु गले में हार पड़ते ही सभी को निश्चिंतता हो गयी।। 81 ।। भीष्म पूर्व से ही विद्वान थे। विविध कथा में पारंगत थे। कीर्तन में रस भरने से श्रोताओं को अपरिमित आनंद मिला।। 82 ।। बाबा भी प्रसन्न मुद्रा में थे। जैसे अनुमोदन दिया था, वैसे ही भजन व कीर्तन के साथ उत्सव सम्पन्न कराया ।। 83 ।। राम जन्म के अवसर पर गुलाल बाबा के नेत्र के अन्दर चला गया। कौशल्या के महल के श्रीराम , बाबा ,नरहरि (नरसिंह) के रूप में प्रकट हो गए हैं।। 84।। गुलाल तो केवल बहाना था। यह तो राम के जन्म पर आवेश था जिससे अहंकार रूपी रावण का नाश होगा तथा मानव की अन्य राक्षसी प्रवृत्तियां मर जायेंगी।। 85 ।। एकाएक क्रोध आया। प्रत्यक्ष नरसिंह का रूप । शाप व गालियों की प्रचुर वर्षा होने लगी।। 86 ।। राधाकृष्ण के मन में व्यग्रता थी कि पालने के टुकड़े हो जायेंगे। यह पूर्णरूप से सुरक्षित कैसे रहे यह समस्या उनके सामने थी।। 87 ।। खोलो-खोलो तुरन्त खोलो बार-बार कहती हुई दबाव डालने लगी। काका आगे सरकने लगे, पालने को खोलने के लिए।। 88 ।। इससे बाबा और क्रोधित हो गए। काका की ओर दौड़े | पालने को खोलने का कार्य रोक दिया गया । बाबा का क्रोध भी शान्त हो गया ।। 89 ।। बाद में दोपहर बाद आज्ञा पूछी गई तो बाबा क्या बोलते हैं, आश्चर्य होता है।“ अभी कैसे पालना खुलेगा अभी भी आवश्यकता है।। 90 ।।“ यह आवश्यकता क्या हो सकती है। साईं के वचन अन्यथा नहीं होते। विचार करते हुए बुद्धि में स्फुरण हुआ कि उत्सव की संपूर्णता नहीं हुई है ।। 91 ।। यहां तक उत्सव हो गया। दूसरा दिन जब तक नहीं प्रकट हुआ, जब तक गोपाल काला नहीं हुआ, उत्सव संपन्न हुआ नहीं माना गया ।। 92 ।। इसके अनुसार दूसरे दिन गोपाल काला कीर्तन हुआ । फिर बाबा ने पालने के खोलने की आज्ञा दी ।। 93 ।। अगले वर्ष भीष्म उपलब्ध नहीं थे। बालाबुवा सातारकर को कीर्तन के लिए बुलाने गए | उन्हें “कवठे” जाना था।। 94।। अतः काका महाजनी दूसरा “कर" लाए जिनका नाम बालाबुवा भजनी था, आधुनिक तुकाराम के नाम से प्रसिद्ध । उत्सव उन्हीं के हाथ संपन्न हुआ।। 95 ।। यदि वहभी न मिले होते तो काका स्वयं को कीर्तन के लिए प्रस्तुत कर देते क्योंकि दास गणूकृत रामनवमी का आख्यान उन्हें हृदय से कंठस्थ था।। 96 ।। तीसरे वर्ष बालाबुवा सतारकर स्वयं शिरडी आये | उचित समय पर कैसे, इसे सादर सुनें ।। 97 ।। साईंबाबा की कीर्ति सुनकर उनके चित्त में दर्शन की इच्छा उत्पन्न हुई। किन्तु मार्ग के लिए एक साथी चाहते थे। उनकी इच्छा कैसे पूरी

हुई।। 98 ।। बालाबुवा स्वयं हरिदास थे। सतारा के मूल रहने वाले थे। इस समय मुंबई के पारेल में निवास था ।। 99।। बिर्हड-सिद्‌ध-कवठे” नामक एक देवस्थान, सतारा जिले में है, वहां से रामनवमी का कीर्तन करने के लिए बुवा को वार्षिक भत्ता मिलता था।। 100 ।। अषाढ़ की एकादशी व चैत्रमास की रामनवमी इन दोनों वार्षिक उत्सवों से बालाबुवा का संबंध था।। 101 ।। संस्थान की मूल व्यवस्था के अन्तर्गत बादशाही सनद (अधिकार पत्र) के अनुसार बड़े बाबा पर खर्च के लिए एक सौ चौबीस रुपए मिलते थे।। 102 ।। अतः इन दो उत्सवों के लिए बुवा तीस रुपए का भत्ता प्राप्त करते थे। पर उस वर्ष कवठे में महामारी (कालरा) फैल गयी । ग्रामवासियों के सामने समस्या आ गयी ।। 103 ।। इस कारण रामनवमी का आयोजन नहीं हुआ । बुवा के पास वहां से पत्र आये कि वह अगले साल आयें, क्योंकि ग्राम खाली हो गया है।। 104 ।। सारांश यह है कि राम की सेवा से वंचित रहे और वार्षिक भत्ता भी रुक गया (उस वर्ष), शिरडी जाने का अवसर मिला, काका साहब दीक्षित से भेंट हुई।। 105 ।। दीक्षित बाबा के परम भक्त थे शिरडी जाने का मनोगत था। उनसे मन की बात पहुंचाने का कार्य पूरा हो जायेगा। स्वार्थ व परमार्थ दोनों सिद्‌ध होंगे।। 106 ।। उन्होंने दीक्षित से संपर्क करके कहा,"मेरा वार्षिक भत्ता रह गया। । बाबा का दर्शन करने तथा वहां कीर्तन करने की इच्छा है" ।। 107 ।। भाऊ साहेब (फिर बोले) भत्ते के विषय में, निश्चित नहीं है। देना या न देना बाबा के हाथ में है। कीर्तन के लिए भी उनकी अनुमति लेनी पड़ेगी।। 108 ।। यह वार्तालाप चल ही रहा था कि अचानक काका महाजनी आ गए । वे शिरडी का प्रसाद व ऊदी बांटने लगे। इसे शुभ सगुन माना गया ।। 109 ।। उस समय महाजनी शिरडी से ही आए थे। क्षेमकुशल का वृतान्त सुनाकर बाद में अपने घर चले गए ।। 110 ।। अतः दीक्षित, बुवा के प्रति उनके सम्मुख होते हुए परम प्रेम से बोले कि वह बाबा की अनुमति के लिए प्रस्ताव करेंगे। यदि प्राप्त हो गयी उन्हें निश्चित रूप से सूचित कर देंगे।। 111 ।। पत्र आने पर शिरडी आयें । मार्ग व्यय की चिंता क्यों? इसके लिए अपने को कष्ट न दें और न ही मन में शंका करें।। 112 ।। बाद में इस तरह दीक्षित शिरडी गये । बाबा ने भी अनुमोदन दे दिया । बालाबुवा शिरडी आ गए । यथेष्ट दर्शन पा गए ।। 113 ।। साईंबाबा ने भी अपने सम्मुख संपूर्ण रामनवमी उत्सव बालाबुवा के हाथ से प्रेमपूर्वक अद्‌भुत ढंग से संपन्न कराया ।। 114 ।। बालाबुवा मन में तुष्ट थे, सोचा हुआ कार्य हो गया । साईं भी प्रसन्नचित्त हो गए | सभी के मनोरथ पूर्ण हो गए।। 115 ।। यथास्थिति बालाबुवा का सम्मान हुआ । एक सौ पचास रुपये उन्हें देने की आज्ञा हुई । बुवा को अपरिमित आनन्द मिला ।। 116 ।। कवठे से पांच वर्ष में प्राप्त होने वाला भत्ता बाबा ने एक उत्सव में दे दिया। फिर क्यों न बालाबुवा आनन्दित होते । और बाबा का आभार मानते ।। 117 ।। इस तरह बाद में एक दिन जब दासगणू शिरडी आए प्रतिवर्ष होने वाला उत्सव का दायित्व उन्हें दे दिया गया, बाबा की अनुमति से।। 118 ।। उसके बाद से अब तक जन्मोत्सव भीड-भाड़ व तड़क-

भड़क के साथ होता है। अन्न (खाद्य) लोगों की पूर्ण संतुष्टि के लिए आकंठ वितरित होता है, गरीब से गरीब व्यक्ति को भी उनके आनन्द के लिए ।। 119 ।। समाधि के महाद्वार पर मंगल वाद्यों की आवाज के मध्य साईं नाम का उद्घोष आकाश में होता है, उन्हें आनन्द से भर देता है।। 120 ।। जैसे उत्सव या उरुस वैसे ही (भक्त) गोपाल गुंड प्रेरित हुए उस जीर्ण मस्जिद की मरम्मत करके सुन्दर बनाने के लिए ।। 121 ।। मस्जिद को जीर्णोद्धार चाहिए वह भी अपने हाथों, ऐसा संकल्प भक्त गोपाल गुंड ने करके पत्थर तैयार करवाए ।। 122 ।। किन्तु लगता है जीर्णोद्धार का योग गुंड के भाग्य में नहीं था। और बाद में इस विशिष्ट कार्य का संतोषजनक सुयोग आया।। 123 ।। बाबा के मन में यह कार्य नानासाहेब चन्दोरकर से कराने का था फिर तत्पश्चात काका साहेब दीक्षित से फर्श बनवाने का ।। 124 ।। ऐसा ही कुछ समय व्यतीत होने पर पूर्वानुमति मांगते-मांगते थक जाने पर म्हालसापति को मध्यस्थता करने को कहा गया, तब बाबा ने अनुमोदन दिया ।। 125 ।। इस प्रकार मस्जिद की फर्श रातोंरात बन गयी, उसी के बाद दूसरे दिन से बाबा गद्दी पर बैठने लगे।। 126 ।। सन् 1911 में सभामंडप बना । उसके लिए प्रचंड परिश्रमयुक्त प्रयत्न किया गया , उसके लिए कितनी अधिक परेशानी उठानी पड़ी, सभी मन से कांप गए ।। 127 ।। वह कार्य भी इसी प्रकार, इसी परिस्थिति में भक्तों द्वारा पूर्ण किया गया, एक रात में ।। 128 ।। रात्रि में खंभे खड़े करने का प्रयास करें सुबह बाबा उन्हें गिराना प्रारंभ कर दें। अवसर पाकर फिर खड़े करें इस प्रकार सभी थक गए ।। 129 ।। मन की इच्छा पूरी करने के लिए अत्यधिक परिश्रम करते, रातों को दिन में बदलते, सब पागल से हो गए ।। 130 ।। पहले यहां खुला मैदान था इसमें एक आंगन था। दीक्षित के मन में आया कि सभामंडप योग्य यह स्थान है।। 131 ।। कितना पैसा इसमें लगेगा इसकी चिन्ता किए वगैर लोहे के खम्भे वगैरह खरीदे गए। बाबा को चावडी में गया पाकर काम पूरा कर दिया गया ।। 132 ।। भक्तों ने रात्रि को दिवस बनाकर खंभे परिश्रम करके गाड़ दिये । चावडी से सुबह वापस आते ही बाबा उन्हें उखाड़ने लगे ।। 133 ।। एक बार अत्यन्त क्रोधित हुए। एक हाथ से तात्या की गर्दन, दूसरे हाथ से एक खंभा हिलाने लगे, उसे उखाड़ने के लिए ।। 134।। खंभों को हिलाते हुए उसे ढीला कर दिया फिर उन्होंने तात्या के माथे से पगड़ी लेकर माचिस की तीली से इसे जला कर एक गड्ढे में क्रोधित होकर फेंक दिया ।। 135 ।। उस समय उनकी आँखें अग्निके शोले जैसी दिख रही थीं। उस समय किसकी हिम्मत थी जो उनको देखता। सभी का धैर्य खो गया।। 136 ।। तुरंत उन्होंने अपना हाथ जेब में डाला। और एक रुपये का सिक्का निकाला जिसे उस गड्ढे में फेंक दिया जैसे कि सुमुहूर्त हो ।। 137 ।। शाप व गालियों की वर्षा होने लगी । तात्या मन में बहुत घबड़ा गये। विकट स्थिति उत्पन्न हो गयी। परन्तु कैसे यह सब घटित हुआ।। 138 ।। लोग विस्मित थे। यह आग क्या दुश्चिहन है? तात्या पाटिल को इस संकट से कैसे निकाला जाये।। 139 ।। भागो जी शिन्दे ने हिम्मत की। हौले-हौले सरकने

लगे। वह भी उनके हाथ लग गए। बाबा ने यथेष्ट उनकी पिटाई की ।। 140 ।। माधव राव भी हाथ लग गए। वे भी ईंटों का प्रसाद पा गए । जो मध्यस्थता करने गया वे सभी बाबा का अनुग्रह प्राप्त किए ।। 141 ।। बाबा के सामने कैसे जायें। कैसे तात्या को मुक्त करावें । बोलते-बोलते क्रोध क्षीण होने लगा | बाबा शान्त होने लगे।। 142 ।। तुरन्त एक दुकानदार बुलवाया गया । जरी वाली पगड़ी का आदेश दिया गया । बाबा ने स्वयं इसे तात्या के सिर पर बाँधा जैसे राजा को सम्मान दिया जा रहा हो।। 143 ।। लोग आश्चर्य चकित थे। यह क्रोध किस कारण था । तात्या पर क्यों हमला किया गया? इतना शोरगुल बाबा द्वारा क्यों? ।। 144 ।। किस निमित्त क्रोध आया । क्षण भर में ही प्रसन्नचित्त हो गए | इसके पीछे कारण, कोई भी बिल्कुल नहीं समझ सका ।। 145 ।। कभी वे शांत चित्त होते, प्रेम से गोष्ठी वार्ता करते, कभी बिना प्रत्यक्ष कारण के क्षुब्ध चित्त हो जाते ।। 146 ।। इस प्रकार ऐसी है बाबा की कहानियाँ। एक को सुनाइए दूसरी मन में आ जाती है, सुनाने वाले के दिमाग को परेशान करते हुए कि कौन सी सुनावें कौन सी पीछे छोड़ें। इसमें पक्षपात करना भी ठीक नहीं।। 147 ।। न ही मैं पसंद, न ही नापसंद करूँ। जो भी कहानी अवसर के अनुरूप होगी वह श्रोता तक पहुंचेगी। उसकी सुनने की इच्छा पूरी होगी।। 148 ।। अगले अध्याय में श्रवण करायेंगे, वृद्ध मुख से सुना गया पूर्व कथन, साईं बाबा हिन्दू या यवन । अपनी क्षमता भर वर्णन करुंगा।। 149 ।। दक्षिणा के बहाने लिया गया पैसा जीर्णोद्धार के लिए कैसे प्रयोग होता । धोती पोती व खंड योग से देह को कैसे दंडित करते ।। 150 ।। कैसे दूसरों के लिए कष्ट उठाते । भक्तों के संकट का निवारण करते। अगले अध्याय में स्पष्ट होगा। श्रोता संतुष्ट होंगे ।। 151 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईसच्चरित" का “राम जन्मोत्सव” आदि कथन नामक छठाँ अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय सातवां (विविध कथा निरूपण)।।

॥ श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन।।

अब पूर्व कथा का संबंध स्मरणपूर्वक चित्त में लायें । देवालयों के जीर्णोद्धार में बाबा की कैसी प्रीति थी।। 1 ।। परोपकार के लिए कैसे श्रम करते थे। कैसे अपने भक्तों को संभालते थे। कैसे भक्तों के दुःख स्वयं शांतिपूर्वक सहकर अपने शरीर के अंगों को घुलाते थे।। 2 ।। समाधि के साथ खण्डयोग, धोती-पोती इत्यादि प्रयोग । कभी हाथ पैर सिर अलग कर देना, कभी पूर्ववत् जोड़ देना।। 3 ।। हिन्दू कहा जाये, यवन दिखते, यवन कहा जाये, हिन्दू के सुलक्षण | ऐसा विलक्षण अवतार, कौन विशेषज्ञ वर्णन कर सकता है।। 4 ।। हिन्दू थे या मुसलमान, इसका छोटा प्रमाण भी नहीं मिला | दोनों वर्गों के प्रति उनका व्यवहार सर्वदा एक समान था।। 5 ।। रामनवमी हिन्दू का पर्व है स्वयं ही आयोजित करवाते थे । सभामंडप में पालना बंधवाकर कथा कीर्तन करवाते थे।। 6 ।। सामने चौक में पालना लगता, राम कीर्तन करवाते । उसी रात यवनों को अनुज्ञा देते चंदन जुलूस निकालने की।। 7 ।। जितने एकत्र हो सकते थे उतने यवनों को एकत्र करके सभा के आरम्भ में चंदन जुलूस निकलवाते ।दोनों उत्सव एक समान आनन्द से संपन्न कराते।। 8 ।। रामनवमी दिवस के आते ही कुश्ती के लावण्य में उनकी रुचि हो जाती । पुरस्कार में घोड़े तोड़े व पगड़ी देने में अति उल्हासित होते ।। 9 ।। जब गोकुल अष्टमी का पर्व आता गोपाल काला का आयोजन करते। उसी प्रकार जब ईद आती, यवनों को नमाज करने में रुकावट नहीं होती।। 10 ।। एक बार जब मोहर्रम पर्व आया, मस्जिद में कुछ यवन आये और बोले कि एक ताबूत (ताजा) बनाकर ग्राम के मध्य से जुलूस निकाला जाये ।। 11 ।। आज्ञा मिलने पर ताजा बनाया गया । चार दिन तक रखा गया । पांचवे दिन मन में बिना सुख या दुःख के उसे उठा लिया।। 12 ।। मुसलमान कहा जाये तो (उनके) कान छिदे हुए थे। हिन्दू कहा जाये तो सुन्नत (विपरीत) प्रमाण थी। इस प्रकार न हिन्दू न मुसलमान साईं पावन अवतार थे।। 13 ।। यदि उन्हें हिन्दू कहा जाये तो वे सदा मस्जिद में निवास करते थे। यदि मुसलमान कहा जाये तो मस्जिद में दिन-रात अग्नि ।। 14 ।। मस्जिद में दलने का जाँता (चक्की), मस्जिद में घंटा व शंख वादन, मस्जिद में अग्नि संतर्पण । कैसे मुसलमान थे।। 15 ।। मस्जिद में भजन, मस्जिद में अन्न संतर्पण, मस्जिद में अर्ध्य-पाद्य-पूजन, कैसे मुसलमान थे।। 16 ।। यदि मुसलमान कहा जाये, ब्राह्मणों में उत्तम उनकी पूजा करते, अग्निहोत्री साष्टांग दण्डवत करते, अपनी परम पवित्रता (सोवला) के अभिमान को त्याग कर।। 17 ।। इस प्रकार लोग अपने चित्त में विस्मित रहते। जो जानने के लिए आते उन्हें प्रथम दृष्टया जो अनुभूति होती वे उसी प्रकार व्यवहार करते और दर्शन

पाते ही शान्त हो जाते ।। 18 ।। वास्तव में सर्वदा हरि की शरण में हो उसे कैसे हिन्दू या यवन कहा जाये । वह शूद्र हो, अति शूद्र हो या जातिविहीन हो । जाति अणुमात्र भी प्रमाण नहीं है।। 19 ।। जिसे देहाभिमान नहीं है वह हिन्दू हो या मुसलमान सभी वर्ण जिसके लिए एक समान हैं/ वह जातियों में अंतर नहीं करता है।। 20 ।। फकीर की पंक्ति में मांस का भोजन करते । अथवा मौज से मत्स्य सेवन करते। वहां भी यदि कुत्ता अपना मुंह डाल देता तो, वे घृणा नहीं करते ।। 21 ।। चालू वर्ष के अन्न के भण्डार को कृषक बांधकर रख लेते हैं कि अगले वर्ष आवश्यकता पड़ने पर उस सम आपूर्ति होगी।। 22 ।। उसी प्रकार गेहूं का एक बोरा सुरक्षित रहता । दलने के लिए मस्जिद में एक जाता रहता । पछोरने के लिए सूप होता । सांसारिकता (घरेलू जीवन) के लिए किसी है वस्तु की कमी नहीं थी।। 23 ।। सभामंडप में विशेष सुन्दर तुलसी वृंदावन शोभायमान थी। वहीं पर एक लकड़ी का रथ था जिस पर अति शुभ लक्षण सुरुचि से बनाये गये थे।। 24 ।। कुछ पुण्य धन था जिसके फलस्वरूप अच्छी वस्तु (प्रभा) से भेंट हुई । इसे हृदयसंपुट में दृढ़ता से संचित कर लो कि आमरणान्त इसकी कमी न पड़े।। 25 ।। कुछ पूर्वार्जित सौभाग्य से उनके पांव तक हम खिंच आये। मन को शांति लाभ हुआ है। प्रपंच से निश्चिंतता हुई है।। 26 ।। कितनी ही सुख संपन्नता, आने वाले दिनों में हो, यह सुख वापस आने वाला नहीं है, जो श्री साईंसमर्थ के सानिध्य से उत्पन्न हुआ है, जिसे भोगकर मैं धन्य हो गया हूं। 27 ।। स्वानंद एकचित्तघन हैं श्री साईं, उनकी अद्भुतता को कैसे बयान कर सकता हूं। जो-जो उनके पावों में रमे, वे- वे वहीं स्थिर कर दिये गये।। 28 ।। मृगचर्म व दण्ड धारण करने वाले तपस्वी, हरिद्वार आदि तीर्थों पर वास करने वाले धार्मिक भिक्षु, संन्यासी, त्यागी व उदासी (नाथ सम्प्रदाय) बहुत आते ।। 29 ।। बोल-चाल व अत्यधिक हंसी होती रहती । जिह्वा पर निरंतर अल्लाह मालिक रहता | वाद-विवाद व खण्डन उन्हें पसंद नहीं था। उनके निकट सर्वदा "दण्ड" (सटका) रहता ।। 30 ।। तापस वृत्ति से इन्द्रियों का शमन कर दिया था। उनकी वाणी से पूर्ण वेदान्त बहता था । अन्त काल तक बाबा का अन्त कोई नहीं जान सका ।। 31 ।। राजा अथवा रंक सभी पूर्णरूप से एक समान थे। लक्ष्मी पुत्र हो या निर्धन भिखारी दोनों की एक ही माप वहां थी।। 32 ।। किसी के अच्छे या बुरे कर्म, जीवों के आन्तरिक रहस्य उन्हें ज्ञात हो जाते और संवेदनशील बिन्दु का संकेत देते हुए बता देते । भक्तों को परम आश्चर्य होता ।। 33 ।। वे अज्ञानता के आवरण में ज्ञान के भण्डार थे। सम्मान प्राप्ति के लिए क्रिया उनके लिए शिथिलता दायक थी। ऐसे थे श्री साईं के लक्षण ।। 34 ।। यद्यपि उनकी काया मानव की थी। उनके अपूर्व कार्य देवताओं के जैसे थे। जन साधारण का विश्वास था कि वह शिरडी में प्रत्यक्ष ईश्वर थे।। 35 ।। क्या चमत्कार थे बाबा के ? मैं पामर कितना वर्णन करूं । बाबा ने अपार देवों और देवालयों के जीर्णोद्धार कराये ।। 36 ।। शिरडी में तात्या पाटिल के हाथों से शनि, गणपति, शंकर-पार्वती, ग्रामदेवी और मारूति के मंदिरों की स्थिति में सुधार कराया गया ।। 37 ।।

लोगों से दक्षिणा के बहाने बाबा जो धन स्वीकारते उसमें से कुछ धर्म के कार्यो के लिए बांट देते, कुछ वैसे ही लोगों को दे देते।। 38 ।। किसी को तीस रुपये, अन्य किसी को दस या पन्द्रह या पचास रुपये जैसी व जिसके लिए इच्छा हुई उल्हास वृत्ति के साथ बांटते ।। 39।। यह धर्म का पैसा था इसे प्राप्त करने वालों का विश्वास था इसका विनियोग भी वैसा ही होना चाहिए। बाबा की भी यही इच्छा थी।। 40 ।। और इस प्रकार कितने दर्शन पाकर पुष्ट हो गये, कितने ही दुष्ट अच्छे बन गये कितनों के कुष्ठ रोग दूर हो गए और कितनों ने ही अभीष्ट प्राप्त किया ।। 41 ।। बिना अंजन (सुरमा) अथवा पत्तियों का रस डाले ही कितने ही अंधों को ज्योति मिल गयी, केवल पांव छूने से कितनों के पांव की पंगुता चली गयी।। 42 ।। उनकी महिमा बहुत अधिक थी। उनका पार किसी को नहीं लगा। अपार यात्री आने लगे, चारो दिशाओं से अपरंपार ।। 43 ।। मलमूत्र विसर्जन के बाद कभी बिना स्नान किये कभी स्नान करके धूनी के निकट अपना स्थान ग्रहण करते नित्य ध्यान मग्न ।। 44 ।। सर पर एक सुन्दर सफेद पगड़ी, कमर में स्वच्छ धोती बांधते और लम्बा कुर्ता पहनते। आरम्भ में इस प्रकार का पहनावा था।। 45 ।। आरम्भ में गांव में वैद्यकी करते थे। परीक्षण कर-कर के दवा देते थे। बहुत यश प्राप्त हुआ। हकीम के रूप में विख्यात हो गए ।। 46 ।। एक बार एक भक्त की आँखें सूज कर लाल गोले की तरह हो गयीं । दोनों आँखों की पुतलियां (नेत्र गोलक) रक्त से भर गयीं। शिरडी में कोई वैद्य नहीं मिला।। 47 ।। भक्त बेचारे विश्वास करने वाले व भोले थे । बाबा को आँखें दिखायीं । बाबा ने तुरन्त भिलावा पीसकर गोली बना ली।। 48 ।। कोई आँखों में सुरमा डालता, कोई गाय का दूध, कोई शीतल कपूर, कोई अंजन ।। 49 ।। बाबा के उपाय भिन्न प्रकार के है थे। अपने हाथ से उन्होंने एक-एक गोला उठाया एक-एक आँख में भर दिया। एक कपड़े के टुकड़े से बांध दिया।। 50 ।। अगले दिन आँखों की पट्टी खोल दी गयी। तथा पानी की धार उन पर डाली गयी। सूजन पूर्णरूप से समाप्त हो गयी थी। आँखों के गोले निर्मल हो गये थे।। 51 ।। आँखों जैसे नाजुक भाग में भिलावा से भी जलन नहीं हुई। भिलावा से नेत्र रोग ठीक हो गया । ऐसे अनेक अनुभव हैं।। 52 ।। वे "धोती-पोती" से अवगत थे। बिना किसी के जाने वे एकान्त स्थान पर जाते, स्नान करके आंतड़ियों को बाहर निकालते, धोकर सूखने के लिए टांग देते।। 53 ।। मस्जिद से जितना दूर कुआं था उतना ही आगे एक वटवृक्ष था उससे आगे एक कुआं था। इस कुंए पर दो दिन जाते थे।। 54 ।। भरी दोपहरी में, प्रखर गर्मी में, वहां कोई नहीं है ऐसा पाकर स्वयं कुएं से पानी निकालते, मुखमार्जन करते।। 55 ।। ऐसे ही एक अवसर पर जब स्नान के लिए बैठे थे शीघ्रता से अंतड़ियां निकालकर उसी स्थान पर धोने लगे।। 56 ।। बकरी मार कर उसकी अंतड़ी को साफ और सुन्दर करने के लिए अन्दर से बाहर खोलकर धोकर पर्त दर पर्त टांग देते हैं।। 57 ।। वैसे ही अपनी अंतड़ी को बाहर निकालकर अन्दर से बाहर स्वच्छ धुलकर अमरूद के पेड़ पर फैला देते थे लोगों को बहुत आश्चर्य होता ।। 58 ।। जिन्होंने यह स्थिति

अपनी आँखों से देखी है उस मंडली के लोग जो जीवित बचे हैं आज भी शिरडी में हैं। कहते हैं कि वे अपूर्व संत थे।। 59 ।। कभी खण्ड योग क्रिया में हाथ पैर आदि खंडित कर देते, ऐसे अवयव अलग-अलग पड़े हुए मस्जिद में देखे जा सकते थे।। 60 ।। इस प्रकार खण्ड-विखण्ड शरीर के प्रचंड दृश्य को देखने के लिए जब लोग दौड़ते आते, बाबा उन्हें अखण्ड दिखते।। 61 ।। एक बार इस प्रकार देखकर एक दृष्टा घबड़ा गया । सोचा किसी दुष्ट ने बाबा को मार डाला। ऐसा अत्याचार कर डाला।। 62 ।। मस्जिद में चारों कोनों में जगह-जगह शरीर के अवयव दिखे । रात्रि का मध्य था कोई जीव नहीं था। उसके मन में चिन्ता उत्पन्न हो गयी ।। 63 ।। यदि वह जाकर किसी से कहता है , तो अपनी बात से ही उल्टा फंस सकता है ऐसा विचार करते हुए वह बाहर जाकर बैठ गया ।। 64 ।। किन्तु यह साईं का कुछ योग हो सकता है यह तो उसे स्वप्न भी नहीं था। शरीर की छिन्न-भिन्नता देखकर उसका हृदय भय से धड़क रहा था ।। 65 ।। फिर भी घटना की सूचना किसी को देने का बहुत मन हुआ किन्तु इस प्रकार प्रथम खबर देने पर मुझे ही गुनाहगार ठहराया जायेगा।। 66 ।। इसीलिए किसी से कहने में उसके मन में असंख्य विचार उठने लगे। अतः पुनः सूर्योदय से ठीक पहले वहां गया और उसका मन विस्मित हो गया ।। 67 ।। पूर्व देखी हुई घटना अदृश्य हो गयी थी। बाबा अपने स्थान पर सकुशल विराजमान थे। उसे आश्चर्य होने लगा कि वह स्वप्न तो नहीं था।। 68 ।। वह योग, यह धोती-पोती, बालपन से ही वे अभ्यास करते थे। उनकी योग स्थिति व अगम्य गति कोई नहीं जान सका।। 69 ।। किसी का सिक्का भी नहीं छूते थे। गरीबों व दलितों को आरोग्य प्रदान करने से उनके गुणों की ख्याति फैल गयी । उस प्रांत के हकीम के रूप में प्रसिद्ध हो गये।। 70 ।। किन्तु वह हकीम केवल दूसरों के अर्थ के लिए था। अपने स्वार्थ के प्रति वह अति उदासीन था । वह दूसरों का हित साधने के लिए असह्य कष्ट सहता था।। 71 ।। इस संदर्भ में अति विशिष्ट कथा मैं निवेदन करता हूं श्रोताओं के हित के लिए। इससे बाबा की व्यापकता व दयाद्रता विदित होगी।। 72 ।। सन 1910 में दीवाली थी धनतेरस के समय बाबा सहज होकर धूनी के पास बैठे थे। जलने के लिए लकड़ी डालते थे।। 73 ।। धूनी की आग तेजी से जल रही थी, बाबा निश्चित मन से बैठे हुए अपना हाथ उस आग में डाल दिये, परिणामस्वरूप हाथ जल गया।। 74 ।। माधव नामक उनके सेवक ने संयोगवश देख लिया। माधवराव देश पाण्डे जो निकट ही थे, भी तत्काल दौड़े ।। 75 ।। जाकर उनके पीछे बैठकी मारकर बाबा की कमर को दृढ़ता से पकड़ कर उन्हें पीछे खींच लिया और फिर आश्चर्य से देखकर पूछा ।। 76 ।। “हे देवा ! यह क्या किया?" बाबा को ध्यान आया तो बोले **"अरे! एक बच्चा (अपनी माँ की) गोद से बोलते ही फिसल गया । भट्टी में अकेले पड़ गया था ।। 77 ।। अपने पति की पुकार सुनकर लोहार की पत्नी डर कर अपने बच्चे को गोद में लिए हुए, भट्टी की धौंकनी तेज चलाने लगी ।। 78 ।। धौंकनी चलाते-चलाते वह लक्ष्य से हट गयी। गोद में बच्चे को भूल गयी। चंचल**

बालक वहां से फिसल गया। शामा ! उसके गिरते ही मैंने उठा लिया ।। 79 ।। उस बच्चे को निकालने में, यह हो गया । यद्यपि मेरा हाथ जल गया, किन्तु बच्चे का प्राण तो बच गया ।। 80 ।।" अब इस हाथ के कष्ट का क्या उपाय करायें और किससे ? माधवराव ने चान्दोरकर को पत्र लिखने का निश्चय किया।। 81 ।। पत्र विस्तार से लिखा गया । चान्दोरकर तुरन्त अपने साथ एक प्रसिद्ध डाक्टर परमानन्द को लेकर शिरडी आ गये।। 82 ।। ज्वलन के शमन में उपयोगी अनेक औषधियाँ लेकर डा0 परमानन्द के साथ नाना श्री साईं चरणों में उपस्थित हुए।। 83 ।। बाबा का अभिनन्दन करके, कुशलता का समाचार पूछकर, आगमन का प्रयोजन निवेदन किया (तथा) हाथ देखने की प्रार्थना की।। 84 ।। पहले से ही जब से हाथ जला था भागोजी शिन्दे घी से मालिश कर रहे थे, पान रखकर प्रतिदिन पट्टी बांधते रहे थे।। 85 ।। हाथ का बन्धन खोल कर देखने के लिए, परमानन्द जी को दिखाने के लिए, दवा उपचार प्रारंभ करने के लिए, बाबा को स्वस्थ करने के लिए।। 86 ।। ऐसी सदिच्छा मन में रखकर नाना ने बहुत मिन्नत की । परमानन्द ने भी पट्टी खोलकर देखने का प्रयत्न किया ।। 87 ।। आज, कल, आज, कल करते रहे। अपना वैद्य तो अल्ला है कहते रहे, किन्तु देखने के लिए अपना हाथ नहीं दिया। मन में उसका खेद नहीं था।। 88 ।। परमानन्द की लायी हुयी दवाओं को शिरडी की हवा नही लगी। फिर भी उन्हें साईं दर्शन अच्छा लगा। ऐसा ही होने का योग था ।। 89 ।। भागो जी द्वारा नित्य सेवा की जानी थी। भागो जी द्वारा ही हाथ की मालिश होनी थी। उससे समय पर हाथ ठीक हो गया। सब सुखी हो गये ।। 90 ।। यद्यपि हाथ इस प्रकार ठीक हो गया । कोई यह नहीं जान सका कि बाबा को क्या अभाव था जो प्रातःकाल का समय होते ही प्रतिदिन पट्टी बंधवाने का आनन्द लेते।। 91 ।। हाथ में कहीं वेदना नहीं फिर भी नित्य बिना कारण उसकी तीमारदारी ,बिना पीड़ा के धृतमर्दन की तीरमारदारी, आमरण चलती रही।। 92 ।। भागो जी की तीमारदारी की आवश्यकता स्वयं सिद्ध श्री साईं को नहीं थी । भक्त के काज में रुचि के कारण भागोजी से नित्य नियम से तीमारदारी कराते थे।। 93 ।। पूर्व जन्म के बड़े पाप के कारण भागोजी ने कुष्ट-क्लेश पाया था। किन्तु भाग्य विशेष से उन्हें श्रीसाईं का सत्संग प्राप्त हुआ ।। 94 ।। लेंडीबाग तक भ्रमण प्रारंभ करते ही भागोजी बाबा के छत्रधारी बन जाते । उनका शरीर खून रिसते घावों से भरा था, परन्तु सेवा करने में सबसे पहले थे।। 95 ।। धूनी के पास खम्भे से लगकर जब बाबा प्रातः समय प्रति दिन आराम से बैठते भागो सेवा के लिए हाजिर हो जाते ।। 96 ।। हाथ व पांव की पट्टियां खोलकर उन-उन स्थानों की मांसपेशियों की मालिश करते, मालिश के स्थान पर घी लगाते । भागो का सेवा करना ।। 97 ।। पूर्व जन्म का महापापी, सभी अंगों में रक्त कुष्ट भरा हुआ। भागोजी शिन्दे महाव्याधिष्ट थे। किन्तु बाबा के बड़े भक्त थे।। 98 ।। कुष्ठ के कारण अंगूठे व अंगुलियां झड़ गयीं थीं, सभी अंगों से दुर्गन्ध आती थी। ऐसे जिनके बड़े दुर्भाग्य थे। उनको सेवा सुख का बड़ा अच्छा भाग्य

प्राप्त था।। 99 ।। बाबा की अगाध लीलाओं का कितना वर्णन श्रोताओं के लिए करूँ । एक बार गांव में प्लेग, आ गया । जो चमत्कार हुआ उसे सुनो ।। 100 ।। दादा साहेब खापर्डे का छोटी आयु का पुत्र साईं के सत्संग का आनन्द अपनी माता के साथ ले रहा था ।। 101 ।। पहले तो एक छोटा बालक, बुखार बहुत तेज आया, माता का हृदय फटने लगा | वह बेचैन हो गयी।। 102 ।। उमरावती उनका निवास स्थान था। प्रस्थान करने का मन हुआ । सायंकाल को उपयुक्त समय समझकर बाबा की आज्ञा लेने आयीं।। 103 ।। सायंकालीन भ्रमण करते बाबा वाड़े के निकट आये, बाई ने जाकर पैर पकड़ लिया, जो कुछ घटित हुआ था निवेदन किया।। 104 ।। पहले तो स्त्री जाति की घबड़ाहट, उस पर बच्चे की कंपन बंद नहीं हो रही थी। प्लेग ज्वर का भय बहुत था जो घटित हुआ था निवेदन किया।। 105 ।। बाबा मृदु वचन बोले,"**आसमान में बादल छाए हैं, वर्षा होगी, फसल पकेगी। बादल छट जायेंगे ।। 106 ।। डरना किस लिए। "** ऐसे बोलकर अपनी कफनी कमर तक उठाकर ताजी उभड़ी हुयी ग्रंथियां सभी लोगों को दिखायीं।। 107 ।। मुर्गी के अंडे के आकार के चार ग्रंथियां चारों ओर, बोले **"देखो, तुम्हारे सभी कष्ट मुझे भोगने पड़ते हैं"** ।। 108 ।। लोग यह दिव्य एवं अलौकिक कर्म देखकर विस्मित हो गये । किस प्रकार संत भक्तों के अनेक कष्टों को स्वयं भोगते हैं।। 109 ।। मोम से भी मुलायम, उनका चित्त बाहर से जैसे मक्खन । भक्तों के प्रति प्रीति निःस्वार्थ । भक्त ही उनके नाते-रिश्तेदार होते हैं।। 110 ।। एक बार ऐसी घटना घटी। नाना साहेब चन्दोरकर पंढरपुर तक जाने के लिए नन्दुर बारी से चले ।। 111 ।। नाना परम भाग्यशाली थे। साईं की अनन्य सेवा फलीभूत हुई । भूमि पर बैकुण्ठ की प्राप्ति हो गयी। वहां के मामलतदार नियुक्त हो गये ।। 112 ।। नन्दुरबारी में इसका आदेश मिला। तत्काल जाना था । तुरन्त तैयारी की | मन में दर्शन का उद्देश्य था।। 113 ।। पूरे परिवार व कुटुम्ब के साथ शिरडी तक जाने का विचार किया। शिरडी ही प्रथम पंढरपुर है। बाबा को नमन करना है।। 114 ।। न ही कोई पत्र भेजा गया । न ही कोई संदेश या समाचार भेजा गया। सब सामान बांधकर शीघ्रता से गाड़ी पर बैठ गये।। 1 15 ।। इस प्रकार नाना चल पड़े हैं, शिरडी में कोई नहीं जानता था परन्तु साईं की आँखें सर्वत्र रहती हैं, सब कुछ जानते थे।। 116 ।। नाना शीघ्रता से चल पड़े। नीम गांव की सरहद तक आये होंगे कि शिरडी में एक चमत्कार घटित हुआ। इसे सुनो।। 117 ।। बाबा मस्जिद में थे। म्हालसापति, अप्पा शिंदे, काशीराम भक्त के साथ वार्ता करते हुए बैठे थे।। 118 ।। अचानक बाबा बोले, "आओ हम चारों मिलकर भजन गाते हैं। पंढरी के दरवाजे खुल गये हैं। भजन को मौज से चालू रखते हैं।। 119 ।।" साईं पूर्ण त्रिकाल ज्ञाता थे। उनके समाचार वे जान गये थे । नाना जैसे ही गांव के किनारे सोते पर पहुंचे, बाबा भजन में उल्लासित हो गए।

"पंढरपुर जाना है, जाना है। वहां मुझे रहना है।

वहां मुझे रहना है, रहना है। वह मेरे मालिक का घर है।" ।। 120 ।।

बाबा स्वयं भजन करते । बैठे हुए भक्त अनुवाचन करते । पंढरी के प्रति प्रेम का प्रसार हो गया। इतने में नाना आ गये।। 121 ।। पूरे कुटुम्ब के साथ पांव लगे। बोले, "महाराज हमारे साथ पंढरपुर तक आएं शान्ति से निश्चिंत रहें" ।। 122 ।। तब विनती न भी होती । बाबा तो पहले से ही उल्लास में थे। पंढरी गमन के लिए भजन कर रहे थे। लोगों ने उन्हें बताया।। 123 ।। नाना मन में ही अति विस्मित हुए। लीला देखकर आश्चर्य चकित हो गये। उनके पैरों में अपना सिर रख दिया। उनका गला भर आया ।। 124 ।। आशीर्वचन लेकर ऊदी व प्रसाद मस्तक से लगाकर चन्दोरकर पंढरपुर जाने के लिए बाबा से विदा लेकर निकल पड़े।। 125 ।। इस प्रकार की कहानियां लिखते रहने से ग्रंथ का विस्तार हो जायेगा। इसलिए परदुःख निवृत्ति के लिए विषय को समाप्त करते हैं। 126 ।। अतः अध्याय का समापन करते हैं। बाबा के चरित्र का अन्त नहीं है अगले अध्याय में अपने हित के लिए शेष कहानियां लिखूगा ।। 127 ।। ओह ! "मैं" पन का अहंभाव । कितना ही दबाना चाहूं समाप्त नहीं होता। यह "मैं" कौन हूं। निश्चित नही कर पाता हूं। साईं स्वयं ही अपनी कथा सुनायेंगे ।। 128 ।। मानव योनि में जन्म का महत्व बतलायेंगे। अपनी भिक्षावृत्ति, बायजाबाई की भक्ति और अपने भोजन की स्थिति कहेंगे।। 129 ।। और यह भी सुनेंगे कि कैसे बाबा मस्जिद में म्हालसापति और तात्या कोटे पाटिल के साथ सोते थे।। 130 ।। हेमाडपंत साईं की शरण में है। साईंभक्तों के पांव की चप्पल है। उसके लिए साईं की आज्ञा ही प्रमाण है। अभी तक इसी प्रकार कथा निरूपण हुआ है।। 131 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित का "विविध कथा निरूपण" नामक सप्तम अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय आठवां (श्री साई समर्थावतरण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईंनाथ को नमन।।

पिछले अध्याय में बताया गया है कि कैसे साईं हिन्दू थे या यवन । उस शिरडी के कितने बड़े भाग्य जो बाबा का अपना स्थान बनी।।।। 1 ।। कैसे बाबा आरम्भ में बालक थे, बाद में पागल फकीर बन गये। कैसे मूलरूप से ऊबड़-खाबड़ भूमि को सुन्दर बाग बना दिया ।। 2 ।।कैसे, कुछ समय बाद, उसी जगह पर वाड़ा बन गया । बाबा के धोती-पोती व कठिन खण्डयोग का निर्भीक वर्णन हुआ है।। 3 ।। मैं कैसे यह सब वर्णन करूं। कैसे बाबा ने अपनी काया सुखा दी थी, कैसे चोट सहते थे भक्तों के रक्षक साईंराया ।। 4 ।। अब सुनें मानव जन्म की महिमा, साईं की भिक्षावृत्ति का वर्णन, बायजाबाई की संत सेवा तथा बाबा का भोजन कौतुक ।। 5 ।। कैसे तात्या, बाबा व म्हालसापति- तीनों मस्जिद में सोते। कैसे साईंसमर्थ रहाटा में खुशालचंद के घर जाया करते।। 6 ।। प्रतिदिन उदय होता प्रतिदिन अस्त होता है। सालों साल व्यर्थ हो जाते हैं। आधा जन्म निद्रावस्था में और शेष आधा भी स्वास्थ्य-भोग के बिना व्यतीत हो जाता है।। 7 ।। बाल्यावस्था खेलकूद में आसक्त रहकर, युवावस्था युवती में अनुरक्त रहकर, वृद्धवस्था बुढ़ापे से ग्रस्त रहकर सदैव व्याधियों से त्रस्त व्यतीत होता है।। 8 ।। यह जन्म लिया है पुष्ट होने के लिए, श्वासोच्छवास करते रहने के लिए दीर्घायु तक जीते रहने के लिए | क्या यह जन्म इसीलिए है।। 9 ।। नर जन्म की वास्तविक कर्त्तव्यता परमात्म प्राप्ति है। अन्यथा कुत्ता, सुअर, आदि के जीवन में क्या कमी है।। 10 ।। कुत्ता भी अपना पेट भरता है। यथेष्ट बच्चे पैदा करता है। तब नरदेह की क्या महिमा है, जब दोनों की साम्य स्थिति है।। 11 ।। शरीर का पोषण और मैथुन ही यदि नरदेह का साधन है यदि यही जीवन का निष्कर्ष है तो यह नरजन्म निरर्थक है।। 12 ।। आहार निद्रा आदि चार प्रकार की क्रियाओं में जीवन व्यतीत करना है तो कुत्ता एवं मानव में क्या भेद होगा। स्वविवेक से इसका निर्णय करें।। 13 ।। यदि यही नरदेह की सफलता है तो पेड़ पौधों के जीवन में क्या न्यूनता है। श्वासोच्छवास तो भट्टी भी कर लेती है। कुत्ते भी अपना शरीर पुष्ट कर लेते हैं ।। 14 ।। मनुष्य प्राणी मुक्त है। वह निर्भय है। वह स्वतंत्र है। यह शाश्वत ज्ञान रहे। इस ही में जन्म की सफलता है।। 15 ।। कहां से आया, कौन हूं? किस कारण मानव जीवन मिला?जो इसके बीज को जानता है ,वह ज्ञानी है इसके बिना फिर सब शिथिल है।। 16 ।। जैसे “नन्ददीप” की ज्योति, आदि से अन्त तक एक सी दिखती है किन्तु यह पल, पल बदलती रहती है वही स्थिति शरीर की है।। 17 ।। बाल, युवा तथा वृद्धावस्था यह

सभी लोगों को प्रकट है। किन्तु जो आना-जाना स्वाभाविक रूप से होता है। कब हुआ, कोई नहीं जानता ।। 18 ।। जो दिखती है उसी क्षण नष्ट हो जाती है, अपरिमित फिर भी एक ही प्रतीत होती है। वैसे ही शरीर जो इस क्षण है क्षणभर पहले नहीं था।। 19 ।। शरीर मल-मूत्र से नहाया हुआ है। बलगम, पीप व लार पैदा करता है। पल-पल मरता रहता है। आह! बड़ी कुलक्षणी है।। 20 ।। जो कीड़े मकोड़े का घर है नाना प्रकार के रोगों की खान है, नाशवान और क्षणभंगुर है, वह है मानव शरीर ।। 21 ।। मांस, खून व स्नायु की गाड़ी है, हड्डी व चमड़े का ढांचा है। मूत्र-मल का दुर्गंधपूर्ण गड्ढा है। प्रत्यक्षतः जीव के लिए विघ्नकारक पुछिल्ला हैं।। 22 ।। त्वचा, मांस, रुधिर, स्नायु मेदमज्जा, अस्थि, वायु और अशुद्ध अंग उपस्थ व पायु के साथ काया अल्पायु है ।। 23 ।। ऐसा अशुद्ध एवं नश्वर नरदेह यद्यपि क्षणभंगुर है फिर भी श्री परमेश्वर के मंगलधाम तक पहुंचने का एकमात्र साधन है।। 24 ।। सदैव जन्म-मरण लगा रहता है। उसकी कल्पना ही अत्यधिक भयानक है, बिना सूचित किये प्राण निकल जाता है।। 25 ।। कौन जानता है कि दिन-रात कितने आये और कितने गये । मार्कण्डेय की आयु लेकर जन्मे भी कालगति से बचते नहीं हैं।। 26 ।। ऐसे क्षणभंगुर नरदेह में संतों की कथावार्ता में व्यतीत किये गये समय में पुण्यसंग्रह होता है इसके बिना सब व्यर्थ है।। 27 ।। ऐसा ज्ञान निश्चित हो जाता है, तो यही जन्म लेने का लाभ है। किन्तु बिना व्यक्तिगत अनुभव के किसी को विश्वास नहीं होता ।। 28 ।। फिर यह अनुभव जिन्हें है उन्हें यह वैभव अभ्यास करने से प्राप्त हुआ है इसलिए जो शाश्वत सुख के इच्छुक हैं उन्हें यह वैभव साधना चाहिए ।। 29 ।। पत्नी, पुत्र, वैभव, धन, समुद्रपर्यन्त पृथ्वी ईश्वर की कृपा से सब कुछ प्राप्त होने पर भी मन अतृप्त रहता है।। 30 ।। शाश्वत सुख और शांति चित्त का ध्येय होने पर भूतों में एक भगवान की उपासना परमपद को प्राप्त कराने वाली है।। 31 ।। त्वचा मांस रुधिर हड्डी के संयोग से बना यह देह का ढांचा, परमार्थ का प्रत्यक्ष अवरोध (विघ्न) है, इसके प्रति ममत्व से मुक्त हो जाओ।। 32 ।। इसे (शरीर) केवलअपना चाकर (सेवक) मानो । उसके प्रति आसक्त न होओ। हमेशा लाड़-प्यार मत करो (शरीर को) । यह नरक द्वार है।। 33 ।। निर्वाह के लिए इसे अन्न और वस्त्र दो। वैसे ही इसका लालन-पालन कर दो(निर्वाह के लिए), जिससे आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त करके जन्म मरण से मुक्ति मिल सके ।। 34 ।। जन्म-मरण आदि अनर्थात्मक है। जो प्रतिक्षण विनाश की ओर उन्मुख है, निरन्तर असुख है उससे क्षणिक भी सुख कैसे? ।। 35 ।। जैसे आकाशीय विद्युत को देखो, अभी है, अभी नहीं । सागर की तरंगें भी क्षणिक होती हैं। कुछ विचार करो ।। 36 ।। शरीर, घर, पुत्र-पुत्रियाँ, स्त्री व लोग सभी को नाशवान जानकर, माता-पिता को कंधे पर स्वयं ले जाते समय, अपने आप आत्मत्व प्रकट नहीं होता है।। 37 ।। पहले मरे हुए लोगों का अनुकरण करके जन्म-मृत्यु के चक्र में व्यक्ति घूमता है। किन्तु क्षणभर भी विचार नहीं करता है कि वह कैसे रुके?।। 38 ।। नित्य कुटुंब का भरण-पोषण करते-करते आयु शीघ्रता

से व्यतीत होती रहती है। "काल" आयु की गणना करने में तत्पर रहता है अपने कर्त्तव्य को वह भूलता नहीं है।। 39।। जब अन्तिम घड़ी आती है वह क्षणभर भी रुकता नहीं है। मछेरा जैसे जाल खींच लेता है जीव उसी तरह तड़फते हुए मरता है।। 40 ।। महाभाग्य की प्रचुरता तथा पुण्य कर्मों के एकत्र होने से मानव शरीर प्राप्त होता है। अतः एक-एक घड़ी को साधो ।। 41 ।। भागीरथ युक्ति करने पर भी यह नरदेह प्राप्त नहीं होता है। केवल भाग्य से यह हमारे हाथ में अनपेक्षित आती है। व्यर्थ में मिट्टी में मत मिलाओ।। 42 ।। अगले जन्म में (साधना) करने के लिए जो कहता है, जो ऐसा मानता है कि एक बार (शरीर) हाथ से चला गया आगे निश्चित ही प्राप्त होगा वह मूर्ख है।। 43 ।। कितने ही पापी देहधारी शुक्र-बीज समन्वित होकर योनिद्वार को प्राप्त होते हैं अपने कर्म के अनुसार शरीर ग्रहण करने के लिए ।। 44 ।। उनमें से कुछ एक अधम जो चर श्रेणी के जीव हैं बाद में अचर श्रेणी को कर्म के अनुसार प्राप्त होते हैं।। 45 ।। जिसने जैसा ज्ञान प्राप्त किया, जिसके जैसे कर्म अनुष्ठान तदनुसार उसका शरीर ग्रहण | इस योग का श्रुति प्रमाण है।। 46 ।। करुणामयी माँ श्रुति कहती हैं " ज्ञान के अनुरूप जन्म मिलता है। जिसका जैसा ज्ञान भण्डार, तैसा ही जीव का जन्म होता है।। 47 ।। ईश्वरी लीला अतर्क्य है , उसका सम्पूर्ण ज्ञान असम्भव है। वह मानव धन्य है जिस किसी को यदि अंशमात्र भी प्राप्त हो जावें ।। 48 ।। परमभाग्य से नरदेह, महान पुण्य से ब्राह्मण वर्ण, ईश्वर की कृपा से श्री साईं के चरण! आह! यह सम्पूर्ण लाभ दुर्लभ है।। 49 ।। यद्यपि योनियां कई प्रकार की हैं, सबमें श्रेष्ठ मानव योनि है। मानव योनि में ही यह विवेक होता है "कहां से आए हैं? किसने बनाया है?" ।। 50 ।। अन्य योनियां यह नहीं जानती । जैसे पैदा होती हैं वैसे ही समाप्त हो जाती हैं। भूत, भविष्य व वर्तमान की गति व ईश्वर की स्थिति का उन्हें ज्ञान नहीं होता ।। 51 ।। इसलिए यह नरदेह निर्मित करके ईश्वर आनन्द से भर गया कि विवेक व वैराग्य से सम्पन्न होकर मानव मेरा भजन करेगा।। 52 ।। नाशवान मानव साधना करके अविनाशी नारायण हो जायेगा । नरदेह के समान इस सृष्टि में दूसरा कोई साधन-सम्पन्न नहीं हुआ।। 53 ।। जादूगर स्वयं बहुत चतुर होता है, अज्ञानी लोगों के सामने खेल नहीं करता। वह ऐसा प्रेक्षक समूह की अपेक्षा करता है जो उसकी कुशलता की बारीकी को समझ सकें।। 54 ।। उसी प्रकार पशु पक्षी, वृक्ष समूह, जीव जन्तु का अपार निर्माण करके परमेश्वर को, खेदपूर्ण आश्चर्य हुआ कि उनकी लीला व्यर्थ गयी।। 55 ।। आह! विस्तृत ब्रह्माण्ड विस्तार चन्द्र सूर्य तारों के समूह के निर्माण की कौतुकता का थोड़ा भी विचार किसी ने नहीं किया।। 56 ।। आह! सब खेल करने के पीछे मुझ जगदीश का क्या उद्देश्य है यह अर्थ निश्चित रूप से एक भी जंतु नहीं जानता है।। 57 ।। मेरी अतुल वैभव समृद्धि जानने के लिए कुशाग्र बुद्धि प्राणी का निर्माण जब तक नहीं करता तब तक मेरा त्रिशुद्धि (कायिक, वाचिक, मानसिक) कार्य विफल है।। 58 ।। ऐसा सोचकर जगदीश ने मानव के रूप में प्राणी का निर्माण किया कि वह विवेकज ज्ञान से मेरी

सामर्थ्य जान सकेगा ।। 59।। मेरा अगाध वैभव वैसी मेरी अपूर्व शक्ति मेरी माया का ही सब खेल है वह आश्चर्यपूर्वक जानेगा ।। 60 ।। वही ज्ञान प्राप्त कर सकेगा, मेरा चिन्तन व मेरा दर्शन कर वह आश्चर्यचकित होगा तब मेरा खेल पूर्ण होगा ।। 61 ।। प्रेक्षकों की जो आनन्द सम्पन्नता है वहीं मेरे खेल की पूर्णता है। मेरी जगन्नियंतृता देखकर मानव कृतार्थ होगा।। 62 ।। काम्यकर्म हो अथवा द्रव्योपार्जन, इसके लिए शरीर का पोषण नहीं । जब तक जीवन है तत्वज्ञान की प्राप्ति करनी है, इसी में जीवन की सफलता है।। 63 ।। जो अद्वैत (अभेद) ज्ञान है वही तत्व है। इसी को उपनिषद ब्रह्मज्ञान कहते हैं। यहीं परमात्मा की उपासना है, यहीं तो भक्तों के भगवान हैं।। 64।। गुरु और ब्रह्म दो नहीं हैं जिसे यह अभेदज्ञान है उसकी भक्ति सिद्ध जानो । उसे माया से मुक्ति सुगम होती है।। 65 ।। वे श्रद्धावान योग्य पुरुष जिन्होंने ज्ञान व वैराग्य सिद्ध किया है वहीं अपने आत्मतत्व को भोगने के योग्य हैं। ऐसे भक्तों को सौभाग्यशाली जानिए ।। 66 ।। स्वरूप की जो अभिज्ञता है उस अज्ञान को मिटाये बिना जो स्वयं को संतुष्ट मानते हैं। यह एक विलक्षण व्यवधान है।। 67 ।। ज्ञान और अज्ञान दोनों ही अविद्या से उत्पन्न विकार हैं। जैसे काँटे से काँटा निकालते हैं उसी प्रकार दोनों को विकीर्ण कर दो।। 68 ।। ज्ञान से अज्ञान दूर करो । ज्ञान व अज्ञान से ऊपर उठकर निर्मल स्वरूप में अवस्थित होना ही एक मात्र नर जन्म का उद्देश्य है।। 69।। जब तक आसक्ति का समूल नाश नहीं होता, अज्ञान रूपी अंधकार राख नहीं हो जाता, "मैं", "मेरा" की बाती जलकर राख नहीं हो जाती ज्ञान अपनी प्रभा के साथ प्रकाशित नहीं होगा।। 70 ।। नरदेहगत जो भी कार्य है, वे अनिवार्य या निवार्य, वे सब बुद्धि के कर्त्तव्य हैं इसे निश्चित रूप से जानों ।। 71 ।। ऐश्वर्य आराम का स्वस्थ होकर भोग करें अथवा रामनाम का चिन्तन करें, निष्काम निश्चित होकर । अपना दूसरा कोई काम नहीं है। क्योंकि, यथा पूर्व कथित, देह संबंधी कार्य बुद्धि का कर्तव्य हैं) ।। 72 ।। शरीर इन्द्रिय मन बुद्धि ये सब आत्मा की उपाधि हैं। स्वयं अनादि अभोक्ता होते हुए भी इन्हीं के कारण यह आत्मा भोक्तृत्व की आपदा को प्राप्त करता है।। 73 ।। आत्मा का भोक्तृत्व कारक जनित,औपाधिक है स्वयं स्वाभाविक अभोक्ता होते हुए भी। न्याय-शास्त्र का अन्वय व्यतिरेक प्रमाण इस अर्थ के लिए देखें ।। 74 ।। एक रहस्य से अवगत हों । आवश्यक कर्म को बुद्धि को सौंप दें, मन के धर्म को भी स्वयं निष्कर्म व्यवहार करें।। 75 ।। अपने धर्म का अनुष्ठान करें। सदैव आत्म तथा अनात्म का चिंतन करें। यही नर जीवन का उद्देश्य है। अपने स्वरूप में ही संतुष्टि है।। 76 ।। नरदेह के अतिरिक्त चारों पुरुषार्थों को सिद्ध करने का कोई साधन नहीं है। जो व्यक्ति अभ्यास परायण है वही नारायण पद प्राप्त करता है।। 77 ।। इसलिए इस शरीर के समाप्त होने के पूर्व ही आत्मज्ञानार्थयत्न करना चाहिए। नरजन्म के एक भी क्षण की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए ।। 78 ।। समुद्र का खारा पानी मेघ के हाथ में पड़ कर, देखो अमृत की भांति मीठा हो जाता है, वही सुख गुरु के चरणों में लीन होने में है।। 79 ।। ऐसे

ही नरदेह की सद्गति को गुरु के बिना कोई नहीं जानता है जब गुरु अपना हाथ धरते हैं तभी बुद्धिहीन जीवों का उद्धार होता है।। 80 ।। मन्त्र, तीर्थ, देव, ब्राह्मण, ज्योतिषी और वैद्य एवं सातवें गुरुराज में भावना कार्य का आधार होती है।। 81 ।। जिसकी जहां जैसी भावना उसी मात्रा में उसकी सिद्धि । जितना अधिक वेग होगा वैसी ही सिद्धि जानो।। 82 ।। संत बद्ध को मुमुक्षु बनाते हैं जो मुमुक्षु हैं उन्हें मुक्त करते हैं। अव्यक्त से व्यक्त होकर परोपकार के लिए यह करते हैं।। 83 ।। जो कार्य व्याख्यान व पुराण से नहीं हो सकते हैं वे सत्पुरुषों के आचरण से आसानी से होते हैं। उनके चाल-चलन निःशब्द उपदेश होते हैं।। 84 ।। क्षमा, शांति, अनासक्ति, जीवों के प्रति दया, परोपकारिता, इन्द्रिय निग्रह, निरहंकारिता का आचरण करने वाले दुर्लभ हैं।। 85 ।। जो लाभ एक ग्रंथ पढ़ने से नहीं होता वह एक क्रियाशील व्यक्ति को देखने से प्राप्त होता है। जो कार्य अनन्त तारागण नहीं कर सकते वह अकेले सूर्य कर देता है।। 86 ।। ऐसे ही ये उदार संत हैं। इनकी अनंत सहज क्रिया जीवों को बंधनमुक्त कर देती है, उन्हें अत्यंत सुख देते हैं।। 87 ।। उन्हीं में एक साईं महाराज थे, ऐश्वर्यवंत, श्रीमंत, फिर भी सर्वदा आत्मनिरत रहते हुए फकीर की तरह आचरण करते थे।। 88 ।। जिनकी समता अविभक्त थी। "मैं" व "मेरा" का भाव नहीं। जीव मात्र के प्रति सदा दया भाव । भूतों में ईश्वरत्व की मूर्तिस्वरूप थे।। 89 ।। सुख जिसे आनन्दित नहीं करता, दुःख जिसे शोकाकूल नहीं करता, राजा व रंक जिसके लिए एक समान । क्या यह सामान्य कौतक है।। 90 ।। जिसकी भ्रूविक्षेप की लहर क्षणभर में रक को राजा बना जाती है, वही घर-घर घूमते, हाथ में झोली लेकर ।। 91 ।। वे लोग धन्य जिसके द्वार पर बाबा भिक्षा लेते थे। अपने हाथ फैलाकर बोलते,"ओ बेटी, भाकरी (रोटी) का एक चौथाई टुकड़ा लाओ" ।। 92 ।। एक हाथ में टमरेल लेकर, दूसरे हाथ में झोली लेकर, स्वयं प्रतिदिन निश्चित घरों के दरवाजे-दरवाजे घूमते ।। 93 ।। भाजी, सांभर, दूध, मट्ठा ये सभी पदार्थ टमरेल में लोग डाल देते। क्या अद्भुत भोजन ।। 94।। पके चावल अथवा भाकरी लेने के लिए झोली फैलाते। किन्तु तरल पदार्थ कैसा भी हो टमरेल के अन्दर एकत्र करते।। 95 ।। पदार्थ-पदार्थ का स्वाद लेने के लिए लालसा कहां से हो । जिह्वा पर रसासक्ति नहीं है, मन में कैसे उठे।। 96 ।। संयोग से जो झोली में पड़ जाता उसके सेवन से तृप्ति प्राप्त करते । यह स्वादिष्ट है या नहीं यह महत्व नहीं रखता जैसे कि जिह्वा का स्वाद से संबंध न हो।। 97 ।। सुबह बस्ती में जाकर प्रतिदिन भिक्षा मांगते । उससे उदर पूर्ति करते और तृप्त रहते।। 98 ।। भिक्षा भी क्या नियमित थी। इच्छा होती तब मांगते । कभी-कभी एक ही दिन में बारह बार भिक्षा के लिए गांव जाते ।। 99 ।। इस प्रकार जो अन्न प्राप्त होता है मस्जिद में एक कुंडे में (चौड़े मुंह का मिट्टी का बर्तन) एकत्र होता । कौवे, कुत्ते उससे खाते उन्हें कभी हांकते नहीं थे।। 100।। मस्जिद का आंगन झाड़ने वाली उसमें से दस बारह भाकरी अपने घर ले जाती और उसे ऐसा करने से कोई मना नहीं करता ।। 101 ।। कुत्ते, बिल्लियों को हाकने का स्वप्न भी

जो नहीं देख सकता वह गरीब व दुर्बल को मना क्यों करेगा। उनके जीवन धन्य हैं।। 102 ।। आरंभ में वह “पागल फकीर" नाम से प्रसिद्ध थे। जो टुकड़े मांग कर उदर भरता था उसका कैसा बड़प्पन ।। 103 ।। किन्तु फकीर उदार, निरपेक्ष तथा स्नेही थे। बाहर से चंचल व अन्दर से अचल । उनकी कला अग्राह्य थी।। 104 ।। किन्तु ऐसे कुग्राम (छोटे गांव) में कुछ अति दयावान व कुछ भाग्यवान थे जो इन्हें महंत मानते थे।। 105 ।। उनमें तात्या कोते की माँ जिनका नाम बायजाबाई था, भाकुरी की टोकरी सर पर रखकर जंगल जाती दोपहर में ।। 106 ।। कोस कोस जंगल में ढूंढती, घनी झाड़ी-झंकाड़ के ऊपर से चलती हुई और इस पागल फकीर को ढूंढकर उसके पांवों पर पड़ जातीं।। 107 ।। उनकी सत्यशीलता कितनी महान थी। गीली अथवा सूखी भाजी तथा भाकरी से, जंगल-जंगल में, दूसरे प्रहर बाबा को कलेवा करातीं।। 108 ।। ऐसे उनके तपाचरण को बाबा आमरण नहीं भूले । पूर्ण स्मरणपूर्वक उनके पुत्र का कल्याण किया ।। 109 ।। उन दोनों स्त्री-पुरुष का फकीर के चरणों में सच्चा दृढभाव था । उन दोनों के ईश्वर फकीर ही थे। भावना रखने वालों के ही ईश्वर होते हैं।। 110 ।। फकीर ध्यानस्थ रहते, बायजाबाई एक पत्ता बिछाती, पत्ते पर अन्न परसती तथा प्रयत्न करके खिलातीं।। 111 ।। "फकीरी अब्बल बादशाही । फकीरी ही चिरंतन रहती है। देखो, अमीरी क्षण भंगुर है।” सदा बाबा बोलते ।। 112 ।। बाद में बाबा ने जंगल त्याग दिया। गांव आकर रहने लगे। मस्जिद में आदर से अन्न खाने लगे, आई (बायजाबाई) के कष्ट दूर करने के लिए ।। 113 ।। उसके बाद से ऐसा ही नियम उन दोनों द्वारा चलाया जाता रहा और उनके बाद तात्या द्वारा चलाया गया।। 114 ।। धन्य-धन्य वे संत सदैव जिनके हृदय में वासुदेव हैं धन्य हैं वे भक्त सौभाग्य से जिन्हें इनका समागम वैभव प्राप्त है।। 115 ।। तात्या महाभाग्यवान थे। म्हालसापति का भी पुण्य गहन था । बाबा के समागम का मान दोनों बराबर भोगे ।। 116 ।। तात्या और म्हालसापति मस्जिद में शयन करते । बाबा की अनुपम प्रीति दोनों के प्रति बराबर थी।। 117 ।। इस प्रकार बिछौना फैलाकर गोष्ठी वार्ता चलती रहती। यदि किसी को नींद आने लगती तो दूसरा जगा देता ।। 119 ।। तात्या खर्राटे भरने लगते तो बाबा अचानक उठते उन्हें उलट-पलट करके उनका माथा दबा देते।। 120 ।। म्हालसापति को साथ लेकर दोनों तात्या का कसकर पकड़ लेते, ऐंठते, उनके पैर दबाते और उनकी पीठ भी रगड़ते।। 121 ।। ऐसा संबंध चौदह साल रहा बाबा के साथ तात्या मस्जिद में सोते । कितने भाग्य के दिन थे। निरंतर स्मरण रहेंगे।। 122 ।। माँ-बाप को घर पर छोड़कर तात्या बाबा के प्रति अनुराग के कारण मस्जिद में सोते । उस प्रीति का मापन किस माप से किया जाये। उस कृपा का मोल कैसे कौन कर सकता है।। 123 ।। बाद में उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। तात्या घर-संसार में फंस गये। घर के अग्रणी हो गये। स्वयं पति भी बन गये। अपने घर में सोने लगे।। 124 ।। जिसमें ऐसा निष्ठापूर्ण भाव हो उसी को साईं का अनुभव होता है, बिना कहे स्वयं ही। भक्त के लिए यह चमत्कार है।। 125

।। उसी प्रकार "रहाटा" का एक गृहस्थ खुशालचन्द नाम से विख्यात बाबा का भक्त व गांव का धनवान नगर सेठ था।। 126 ।। जैसे प्रसिद्ध पाटिल गणपत कोते बाबा के बहुत चहेते थे। वैसे ही खुशालचन्द के चाचा बाबा के बहुत प्रिय थे।। 127 ।। यद्यपि जाति के मारवाड़ी थे बाबा से बहुत प्रेम था वे परस्पर मिलते थे दोनों को सुख मिलता ।। 128 ।। कुछ समय बाद हरि की इच्छा से बड़े सेठ जी पंचतत्व में विलीन हो गये। बाबा भूले नहीं । उनका पूर्व प्रेम दोगुना हो गया ।। 129 ।। बाद में खुशालचन्द के प्रति बाबा की प्रीति बढ़ती गयी । देहान्त तक दिन रात उनके हित को देखते रहे।। 130 ।। कभी बैलगाड़ी से या घोड़ा गाड़ी से सभी प्रेमी साथियों को लेकर वहां से डेढ़ मील दूर रहाटा तक बाबा जाया करते।। 131 ।। गांव की सीमा पर गांववासी ढोल व शहनाई बजाकर बाबा का स्वागत करते । प्रेमयुक्त भक्ति के साथ उनके पैरों तक नतमस्तक होते ।। 132 ।। इसके बाद वहां से गांव तक गाजे बाजे के साथ बाबा को ले जाते, समारोह के रूप में, प्रेम के साथ, उल्लासपूर्ण मन से ।। 133 ।। फिर खुशालचन्द बाबा को अपने घर ले जाते, वहां अल्पाहार कराते सुखासन पर बैठाकर ।। 134 ।। फिर दोनों पुराने समाचारों को याद करके परस्पर सुनाते, आनन्दचित्त होते । उनके आनन्द का कौन वर्णन कर सकता है।। 135 ।। इस प्रकार आनन्द-विहार-फलाहार पूर्ण होने पर फिर बाबा स्वानन्द से पूर्ण सपरिवार वापस होते ।। 136 ।। एक ओर रहाटा गांव दूसरी ओर नीम गांव, दोनों के मध्य में शिरडी गांव बसा है।। 137 ।। यद्यपि इस मध्य बिन्दु से इन दोनों गांवों के बाहर, आनिर्वाण स्थूल शरीर से, कहीं नहीं गये किन्तु उन्हें सर्वत्र का ज्ञान था ।। 138 ।। इसके अतिरिक्त वे कहीं नहीं गये न ही उन्होंने अग्निरथ (रेलगाड़ी) देखी। किन्तु इस रथ के गमनागमन व समय सारिणी का उन्हें पूर्ण ज्ञान था।। 139 ।। समय से गाड़ी पकड़ने के लिए भक्त पूरी तैयारी करके जब आज्ञा मांगने जाते । बाबा बोलते, उतावले क्यों हो रहे हो।। 1 40 ।। बाबा यदि अब मैं शीघ्रता नहीं करूंगा तो मेरी मुम्बई की गाड़ी छूट जायेगी मेरी नौकरी पर आघात लगेगा | मेरा साहेब मुझे कार्यमुक्त कर देगा ।। 141 ।। यहां दूसरा साहेब नहीं है। क्यों इतनी शीघ्रता करते हो । जाकर भाकरी का टुकड़ा खाओ। दोपहर का भोजन करके जाना ।। 142 ।।ऐसा किस में साहस जो उनकी वाणी की अवज्ञा करे। छोटा बड़ा बुद्धिमान व विवेकशील सभी को वास्तविकता का अनुभव था।। 143 ।। जिसने-जिसने आज्ञा मानी उनकी गाड़ी कभी नहीं छूटी, किन्तु जिसने अवमानना की उन्हें कठिनाई का तुरन्त अनुभव हुआ।। 144 ।। एक के बाद एक, अभिनव असंख्य इस प्रकार के अनुभव हैं। अनेक-अनेक अपूर्व । संक्षेपपूर्वक वर्णन करूंगा।। 145 ।। हेमांड साईंपदों की शरण में है। अगले अध्याय में निरूपण है भक्तों के गांव वापस जाने के लिए बाबा से आज्ञा मांगने का ।। 146 ।। आज्ञा होगी तो जाएंगे। आज्ञा नहीं होगी तो रुकेंगे । अवमानना करने पर कठिनाई। अगले अध्याय में दिग्दर्शन होगा।। 147 ।। उसी प्रकार बाबा द्वारा मधुकरी वृत्ति धारण करने और बाबा द्वारा भिक्षासेवा किस अर्थ के लिए | पंचसून पाप से

मुक्ति । कथा निरूपण बाद में है।। 148 ।। इसलिए श्रोताओं के चरणों में प्रार्थना है, क्षण-क्षण आग्रह करते हैं, स्वयं के कल्याण के लिए साईंचरित्र श्रवण करें।। 149 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" में "श्री साईंसमर्थावतरण” नामक अष्टोध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय नवां (आज्ञावज्ञाविघ्नपंचसूनादिपातकक्षा तथा भक्ततर्खड कथा निरूपण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।।श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

अब पूर्व कथा के संबंध में, बाबा की अनुमति न होने पर जब भक्त अपने स्थान को वापस जाते तो कैसे वे शिथिल हो जाते ।। 1 ।। वैसे ही बाबा की भिक्षावृत्ति जिसका अभ्यास वे निर्वाण तक करते रहे, पंचसून आदि पापों की निवृत्ति तथा भक्तों के कल्याण के लिए ।। 2 ।। वैसे ही ब्रह्म से लेकर अचर भूतों तक सर्वत्र साईं व्याप्त हैं। साईं की कृपा से ही, यह ज्ञान होता है कि ईश्वर भूतों में है ।। 3 ।। इसलिए हे समस्त श्रोतागण! मैं श्रवण में पूरा ध्यान देने की प्रार्थना करता हूं। इस पावन कथा को सादर सुनने से आपका कल्याण होगा ।। 4 ।। शिरडी की यात्रा की एक विशेषता है। बाबा की अनुज्ञा प्राप्त किये बिना, वापसी की यात्रा की गयी तो यह जानो कि विघ्नों को आमन्त्रण दिया है।। 5 ।। एक बार आज्ञा हो गयी तो शिरडी में एक क्षण भी नहीं रुका जा सकता । रुकने पर समस्यायें सिर पर होंगी। यह सभी का अनुभव है।। 6 ।। जिन-जिन ने अवज्ञा की उनको मार्ग में कठिनाइयां आयीं। कितने ही चोरों से लुट गये। उन्हें आजन्म याद रहा ।। 7 ।। जिन्हें भाकरी का टुकड़ा खाने के लिए कहा गया उनमें से कोई यदि खाली पेट ही शीघ्रतावश निकल गया तो गाड़ी भी नहीं मिलती व भूखे रहना पड़ता कई भक्तों ने ऐसा देखा है।। 8 ।। एक बार पाटिल तात्या कोटे कोपर गांव चलने को हुए। वहां साप्ताहिक बाजार था। अतः मस्जिद आये ।। 9 ।। तांगा उचित स्थान पर खड़ा करके, बाबा का दर्शन किया । इसलिए चरण वंदना की कि आज्ञा प्राप्त करने का स्वांग हो गया।। 10 ।। भक्त टाल मटोल करते। बाबा को अच्छे व बुरे समय का ज्ञान था । तात्या को उतावला देखकर बोले, "थोड़ा रुको" ।। 11 ।। "बाजार होने को रहने दो । गांव के बाहर मत जाओ।" किन्तु तात्या का अधिक आग्रह देखकर बोले, "शामा को साथ ले लो" ।। 12 ।। "शामा के होने का क्या कारण ।" उनकी आज्ञा का अपमान करके तात्या तांगे पर बैठ गये। बाजार को चल दिये ।। 13 ।। दोनों घोड़ों में एक चपल था। तीन सौ रुपये (कीमत) की शक्ति थी । सांडलबिहीर के पास पहुंचते ही वह अति उच्छृखल हो गया ।। 14 ।। जो चाबुक की चोट बिना खाये बाजार जाने में 24 मिनट भी न लगाता हो, वह घोड़ा गिर गया, कमर में मोच आ गयी, एकाएक झटका लगा ।। 15 ।। कहां बाजार,

कहां क्या? तात्या ने साईं माँ को याद किया। समय पर सुन लेते तो यह चोट न लगती । जो घटित हो गया उसका क्या उपाय ।। 16 ।। ऐसा ही एक बार घटित हुआ । तात्या कोल्हार गांव जाने के लिए तांगा जोड़कर पूछने आये। बाबा के चरणों में वंदना की।। 17 ।। "अब जाऊँ" बोले । पूर्वानुमोदन नहीं मिला, फिर भी तात्या ऐसे ही चले गये। बाद में क्या हुआ, सुनें।। 18 ।। तांगा पहले से ही छोटा था। अनियन्त्रित पूरे वेग से दौड़ते घोड़े। मार्ग में गड्ढे व रोड़े न देखते हुए । जीवन के संकट का समय था ।। 19 ।। किन्तु साईं की कृपा से समय टल गया। तांगा बबूल के पेड़ में टकराया। अच्छा हुआ वहीं टूट गया। आगे का खतरा टलगया।। 20 ।। इसी प्रकार एक गृहस्थ अंग्रेज सज्जन मुम्बई से मन में कोई उद्देश्य लेकर साईं बाबा के दर्शनार्थ आये ।। 21 ।। चांदोरकर की सिफारिश थी। माधवराव के लिए पत्र लाये थे। एक तम्बू की मांग की गयी थी । सुख से निवास करने लगे ।। 22 ।। यह कहावत सर्वत्र प्रसिद्ध थी कि बाबा की इच्छा के विरुद्ध मस्जिद की सीढ़ी चढ़कर बाबा का स्वच्छंद दर्शन पा सकना किसी के लिए असंभव था।। 23 ।। तीन बार मस्जिद पर चढ़ने का प्रयत्न किया किन्तु सब निष्फल हो गया। आगन्तुक मन में दुःखी हो गया ।। 24 ।। उसके मन में इच्छा होती मस्जिद में जाकर घुटने टेककर बाबा की वंदना करके, हाथ चूमकर बैठने की ।। 25 ।। उसकी ऐसी इच्छा थी। बाबा ने तब उसको अपने पास मस्जिद में बैठने के लिए आने नहीं दिया ।। 26 ।। नीचे सभा मंडप में रहे, वहीं से देखें, वहीं बैठे, वहीं ध्यान लगावें, वहीं से दर्शन करें, किन्तु ऊपर न आवे ।। 27 ।। इस प्रकार बाद में वह जाने के लिए उठा, आंगन में आया विदाई लेने के लिए। बाबा बोले, "आप कल जा सकते हो इतनी शीघ्रता क्यों?" ।। 28 ।। लोगों ने बहुत कहा, नाना प्रकार से विनती करके कहा कि बिना आज्ञा जो गये वे बहुत पछताये ।। 29 ।। होनी के आगे किसी की नहीं चलती। उसके मन को संतुष्ट नहीं किया जा सका। बिना आज्ञा मिले निकल पड़ा मार्ग की कठिनाइयों को झेलने के लिए ।। 30 ।। प्रारम्भ में गाड़ी बाधाविहीन चली, किन्तु बाद में घोड़े मार्ग छोड़ दिये और मुश्किल से वे सांडलबिहीर से आगे निकले होंगे कि उनके आगे बायसिकल आ गयी।। 31 ।। सज्जन पीछे बैठे थे। आगे एकाएक रुकावट से घोड़े चौंककर दौड़ने लगे। इससे संतुलन बिगड़ जाने से पीछे मार्ग पर उलट गये ।। 32 ।। अत्यधिक प्रयत्न से तांगा रुका | सज्जन घिसटते-घिसटते गए। फिर उठाकर तांगे पर बैठाये गये। आगे तांगा हांका गया ।। 33 ।। शिरडी एक किनारे है, मुम्बई दूसरे किनारे है, कोपर गांव का अस्पताल जहां है वहां फिर तांगा गया ।। 34 ।। इस तरह कुछ दिन वहां पर सज्जन पश्चाताप से व्यथित अवज्ञा के प्रायश्चित को भोगने के लिए पड़े रहे।। 35 ।। इस प्रकार असंख्य अनुभव हैं। लोग सहज ही शंकालु हो गये। बाबा की आज्ञा का पालन सरलता से करने लगे। अवहेलना करने की हिम्मत नहीं करते।। 36 ।। किसी की गाड़ी से पहिया निकल जाता, किसी के घोड़े थक जाते । गाड़ी छूट जाती, भूखे रहते। कितने ही खिन्न हो रोते भटकते रहे।। 37 ।। जिन्होंने उनकी आज्ञा का

आदर किया असमय पर भी गाड़ी मिल गयी । सुखपवूक यात्रा की जो जन्म भर याद रही।। 38 ।। सालों साल भिक्षावृत्ति में बाबा की रुचि क्यों? किसी के चित्त में यह शंका आ सकती है उसकी निवृत्ति के लिए कहते हैं।। 39 ।। बाबा के आचरण को देखने से उनका भिक्षा मांगना उचित लगता है- (लोगों को) आनन्द देने के लिए, निज हित साधने के लिए, गृहस्थ कर्त्तव्य पूर्ण करने के लिए ।। 40 ।। शरीर, वचन, चित्त व धन का अर्पण जिन्होंने साईंपदों में कर दिया, ऐसा जो साईं का अनन्य भक्त है वह साईं को अत्यन्त प्रिय है।। 41 ।। आश्रम में जो-जो अन्न पकता है उस गृहस्थाश्रम का स्वामी सर्वप्रथम संन्यास तथा ब्रह्मचर्य आश्रम वालों को उसका होम करता है।। 42 ।। बिना पहले होम किये यदि गृहस्थ स्वयं सेवन करता है। शास्त्रों के अनुसार त्रिशुद्धि (मन-वचन-कर्म) के लिए चन्द्रायण करना होता है।। 43 ।। संन्यासी और ब्रह्मचारी को भोजन बनाने की मनाही है। यदि ये ऐसा करते हैं तो इनके सर पर चन्द्रायण निश्चित रूप से आ जायेगा ।। 44 ।। इसलिए इनकी उदरपूर्ति करना शास्त्रों के अनुसार गृहस्थों का उत्तरदायित्व है। संन्यासी अपने पेट भरने के लिए कोई उद्यम नहीं करते ।। 45 ।। बाबा गृहस्थ नहीं थे ना ही वे वानप्रस्थी थे वे केवल ब्रह्मचारी बाल संन्यासी थे। भिक्षा ही उनके लिए खुली थी।। 46 ।। जो अखिल विश्व को अपना घर मानता है। मैं ही वासुदेव विश्वम्भर हूं मैं ही परब्रह्म अक्षर हूं, जिसका यह दृढ़ विश्वास है।। 47 ।। भिक्षा के अन्न पर उसी का पूर्ण अधिकार है, जो इस प्रकार विश्व कुटुम्ब का सदस्य है। इसके अतिरिक्त देखो लोग कैसे ठग रहे हैं।। 48 ।। सबसे पहले पुत्र की इच्छा छोड़ो, फिर धन और प्रसिद्धि की इच्छा | जो इन तीनों से निर्मुक्त होता है उसी को भिक्षा के अन्न की इच्छा करनी चाहिए ।। 49 ।। अन्यथा तुकोबा महाराज का गीत "भिक्षापात्र अवलम्बन व जीविकोपार्जन शर्मनाक है। बिना अर्थ के निःसार होगा।। 50 ।। साईं समर्थ महान सिद्ध हैं यह छोटे व बड़ों में प्रसिद्ध हैं, किन्तु हम ही सदा आशावद्ध होकर सत्पदों से असन्नद्ध हैं।। 51 ।। जिन पंचमहायज्ञों के बिना गृहस्थों को भोजन ग्रहण निंद्य है उन्हें साईं स्वयं रोज शिरडी में संपन्न करते व पवित्र भोजन को ग्रहण करते ।। 52 ।। प्रतिदिन वह पांच घर जाते, अतिथियज्ञ का स्मरण कराने । अपने घर में बैठे ही भाग्यवान लोगों को यह लाभ प्राप्त होता ।। 53 ।। पंच महायज्ञ संपन्न करके अवशेष अन्न का जो सेवन करते हैं, उनके अज्ञात "पंचसूना" गहन पाप क्षीण हो जाते हैं ।। 54 ।। कंडणी, चुल्ली, पेषणी, उदकुंभी तथा मार्जन ये "पंचसून" के नाम लोगों में प्रसिद्ध हैं।। 55 ।। ओखली में अन्न डालने पर मूसल से उसके ऊपर चोट करके उससे भूसी व कुट्टी कढ़ते हुए अनजाने में जीव हिंसा होती है।। 56 ।। वह अन्न इस पूरी प्रक्रिया के बिना पकाया नहीं जा सकता, अतः यह "पंचसून" का प्रथम पाप "कंडणी" नाम से जाना जाता है।। 57 ।। जब चूल्हे में लकड़ी जलाते हैं भोजन पकाने के लिए | वहां भी अनजाने में जीव हत्या होती है उस दूसरे पाप का नाम "चुल्ली" है।। 58 ।। जांता लेकर अन्न को पीसने में न जानते हुए असंख्य जीवों की हानि होती है,

इनका नाम "पेषणी" है।। 59 ।। जब कुएं या तालाब से झील से घड़े में पानी लेते हैं या जब नर-नारी कपड़े धोते हैं असंख्य प्राणी मरते हैं।। 60 ।। कुंभ को साफ करने में जब हाथ से धोते या रगड़ते हैं अनिच्छा से हत्या होती है यह चौथा पाप "उदकुंभी" है।। 61 ।। वैसे ही ठंडे या गरम पानी से स्नान करते, गाय के गोबर से फर्श साफ करते समय जो दारुण जीव हत्या होती है उसका नाम "मार्जनी" है।। 62 ।। इन पांच महापापों से मुक्ति के लिए एक गृहस्थ को पांच महायज्ञ करने होते हैं। इससे पांच पापों का निवारण हो जाता है और चित्त शुद्धि का लाभ होता है।। 63 ।। चित्त शुद्धि के ही बल से उज्ज्वल शुद्ध ज्ञान उपजता है। ज्ञान के बाद निश्चित रूप से भाग्यवानों को मोक्ष प्राप्त करने में सफलता मिलती है।। 64 ।। इस प्रकार साईं भिक्षावृत्ति को लिखते-लिखते ग्रंथ मोटा हो गया। इस संबंध में एक सत्यकथा सुनें, उसके बाद अध्याय समाप्त करूं ।। 65 ।। केवल चित्त में प्रेम रखकर, किसी के साथ, कुछ भी भेज दें, यद्यपि उसे ले जाने वाला विस्मृत कर सकता है किन्तु बाबा विसारते नहीं हैं, मांग लेते हैं।। 66 ।। इस प्रकार भाजी, भाकरी हो या पेड़ा, दृढ़ भक्तिभाव के साथ जो भक्त निडर होकर भेंट करता है, साईं का प्रेम फट पड़ता है।। 67 ।। यह एक प्रेमयुक्त भक्त की कथा है सुनकर चित्त में आनन्द होगा । कोई अनुमोदित कार्य संपन्न करने में असफल रहता है तो बाबा उसे मार्गदर्शन कराते हैं।। 68 ।। ऐसी ही मधुर शिक्षा पद्धति है,सही समय पर जगाते हैं। धन्य भाग्य हैं उनके जिन्हें इसका अनुभव है। आनन्द स्थिति अवर्णनीय है।। 69 ।। रामचन्द्र नाम का एक श्रेष्ठ भक्त था । उसके पिता आत्माराम थे। तर्खड उसका उपनाम था। उसका विश्रामधाम साईं थे।। 70 ।। उसको नित्य बाबा साहेब ताखंड के नाम से संबोधित किया करते थे। उसी की कहानी अपने आप चल रही है पलटने का कोई कारण नहीं है।। 71 ।। साईं के प्रेम से उमड़ते हुए तार्खड झुककर अपने अनुभव का कथन करने लगता, उसका श्रवण कितना सुखकर होता ।। 72 ।। क्या उसकी भव्य भक्ति थी! पग-पग पर साईं का अनुभव एक से बढ़कर एक अभिनव उत्कृष्ट भाव से जो कहता ।। 73 ।। बाबा साहेब अतुलनीय प्रेमी थे। साईं की चित्रांकित प्रतिमा घर में थी। भव्य चंदन में मढ़ी हुई। तीनों समय पूजन के लिए ।। 74 ।। तर्खड बहुत पुण्यवान थे। पुत्र भी पैदा किया भक्तिमान | साईं को नैवेद्य अर्पण किये बिना अन्न ग्रहण नहीं करते थे।। 75 ।। प्रातः स्नान करके, शरीर वचन मन व कर्म से नित्य तस्वीर की पूजा करते व भक्ति से नैवेद्य समर्पण करते।। 76 ।। यह उनका नित्यक्रम बिना श्रम विश्राम के चलता रहता, उनका परिश्रम सफल होता अति उत्तम अनुभव प्राप्त होता ।। 77 ।। माता भी साईं की परम भक्त थीं। शिरडी जाने के लिए उत्सुक रहतीं । पिता चाहते थे कि मार्ग में पुत्र उनके साथ हो ।। 78 ।। उनकी इच्छा शिरडी जाने की, समर्थ श्री के दर्शन करने की, वहीं कुछ दिन व्यतीत करने व प्रत्यक्ष चरणों की सेवा करने की थी।। 79 ।। यद्यपि ऐसी पिता की इच्छा थी। लड़के का मन जाने का नहीं हो रहा था। फिर घर में पूजा कौन नियमित करेगा यह चिंता

थी।। 80 ।। पिता प्रार्थना समाजी थी (जो मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं रखते), उनको मूर्तिपूजा का कष्ट देने से कैसे इष्ट होगा । यह उत्कृष्ट पुत्र की परेशानी थी।। 81 ।। फिर भी उनका मनोगत जानकर पुत्र जाने के लिए तैयार था । कैसे प्रेमपूर्वक उसने पिता से विनती की । क्या वह घटना थी, सुनें ।। 82 ।। साईं का नैवेद्य । कराये बिना घर का कोई भी अन्न सेवन नहीं करेगा, इतना आश्वासन लिये बिना मेरा निश्चिंत होकर जाना ठीक नहीं होगा ।। 83 ।। लड़के के नित्यव्रत से पिता पहले ही अवगत थे। उससे बोले, “जाओ मैं नित्य नैवेद्य करारुंगा। तुम निश्चिंत रहो” ।। 84 ।। "सर्वप्रथम साईं को समर्पण किये बिना कोई अन्न ग्रहण नहीं करेगा। मेरे वचन पर विश्वास करो। हिचकिचाओ नहीं । स्वस्थ मन से जाओ” ।। 85 ।। यह आश्वासन प्राप्त होते ही लड़का शिरडी के लिए चल पड़ा फिर दूसरा दिन उदित होने पर तर्खड ने स्वयं पूजन किया।। 86 ।। बाबा साहेब तर्खड दूसरे दिन पूजन आरंभ करते ही चित्रांकित प्रतिमा के सम्मुख साष्टांग दण्डवत करके प्रार्थना की ।। 87 ।। जैसे पुत्र ने पूजा की मेरी सेवा भी, बाबा, वैसी ही हो । मेरे द्वारा असावधानीपूर्ण आडम्बर न किया जावे। मेरे अन्दर प्रेम दो।। 88 ।। ब्रह्ममुहूर्त में स्नान करके, ऐसी ही प्रार्थना पूर्वक पूजन तर्खड प्रतिदिन करने लगे, नैवेद्य समर्पण के साथ ।। 89 ।। नैवेद्य के लिए शक्कर का गट्टा बाबा साहेब नित्य अर्पित करते । ऐसा नियम बिना अन्तराल चलता रहा। उसमें एक दिन की चूक हो गयी।। 90 ।। व्यापार में मन व्यस्त होने के कारण तर्खड को स्मरण नहीं रहा । एक दिन नैवेद्य के बिना ही सबका भोजन हो गया।। 91 ।। एक बड़ी टेक्सटाइल मिल के मुख्याधिकारी तर्खड साहेब थे। उसी के लिए प्रातःकाल के समय नित्य बाहर जाते थे।। 92 ।। फिर बाद में दोपहर होने पर वापस आते, पूर्व निवेदित शक्कर का प्रसाद भोजन पर बैठने पर पाते थे।। 93 ।। ऐसा नियम था । एक बार चित्त में विस्मृति हुई। शक्कर-गट्टे का अर्पण रह गया । अतः प्रसाद ग्रहण करने में अन्तराल हो गया।। 94।। भोजन करने के लिए बैठने पर शेष बची हुई शक्कर-गट्टा रसोइया प्रतिदिन पात्र में रखता था उसकी समझ से इससे अन्न शुद्धि होती थी।। 95 ।। किन्तु उस दिन पूजा के समय किसी कारण से उन्हें शीघ्रता थी, और शर्करा नैवेद्य रह गया। प्रसाद थाली में नहीं पड़ा।। 96 ।। उसी समय दुःखी होकर, भोजन की थाली छोड़कर उठ गये । साईं प्रतिमा का अभिवादन करके सजल नयन होकर बोले ।। 97 ।। बाबा! यह कौन सी माया आपने दिखायी । कैसे मुझे विस्मृत करा दिया | मुझसे यह कवायत करवायी। अब पहले मुझे क्षमा करो।। 98 ।। यह भूल नहीं है महापाप है। मुझे बहुत दुःख हुआ है। मुझ निर्लज्ज से यह चूक हुई है। हे महाराज मुझ पर कृपा करें।। 99।। चित्र के चरणों में साष्टांग दण्डवत करके अंतःकरण खेद से भरा हुआ, बोले "दयानिधान महाराज मुझ पर करुणा करो" ।। 100 ।। ऐसा बोलकर पुत्र को अति लाचार होकर पत्र भेजा। "मुझसे बड़ी भूल हो गयी है क्षमा करने के लिए प्रार्थना करो" ।। 101 ।। "जो अनन्य शरण में है उस पर दया करो" इस प्रकार इस दीन दास की ओर से साईं की

करुणा व अभयदान का आश्वासन मांगो ।। 102 ।। वांद्रा ग्राम में इस प्रकार हो रहा था, शिरडी से सौ कोस दूर । तत्काल वहां समाचार पहुंच गया। बाबा के उद्गार सुनो।। 103 ।। यह प्रत्यक्ष प्रमाण देखो । भूत-भविष्य-वर्तमान का, देश व काल से अविच्छिन्न, त्रिकाल ज्ञान महाराज को था।। 104 ।। यहां लड़का शिरडी में था । उसी दिन उसी समय साईं की वन्दना करने जाते समय जो घटित हुआ, श्रोता सावधानीपूर्वक सुनें ।। 105 ।। लड़का अति उल्हास के साथ आया माँ के साथ चरण वंदना की । साईं ने जो उसकी माँ से कहा उसे सुनकर अत्यन्त विस्मित हुआ।। 106 ।। "क्या करूँ माँ। आज रोज की तरह मैं वांद्रा गया। न दलिया खाने को मिला, न पीने को मिला। उपवासी मुझे आना पड़ा" ।। 107 ।। "देखो कैसा ऋणानुबंध है। यद्यपि दरवाजा बंद था फिर भी मैं स्वच्छंद प्रवेश कर गया । मेरे लिए क्या प्रतिबंध" ।। 108 ।। "स्वामी घर पर नहीं था । मेरी अंतड़ियां भूख से बहुत तड़प रहीं थीं वैसी ही अवस्था में बिना अन्न के पुनः भरी दोपहरी में मैं वापस आया" ।। 109 ।। ऐसे बोल, सुनकर चिरंजीव तत्काल ताड़ गया। अपने पिता बहुधा विस्मृत कर जाते हैं। नैवेद्य चढ़ाना चूक गये ।। 110 ।। बालक ने बाबा से विनती करी कि मुझे घर जाने दें। बाबा ने उसे जाने नहीं दिया । वहीं उसकी पूजा स्वीकार की ।। 111 ।। उसी दिन शिरडी से सविस्तार पत्र लिखकर भेजा जिसे पढ़कर पिता का अन्तःकरण पिघल गया।। 112 ।। यहां का पत्र वहां मिला । बालक को भी आश्चर्य हुआ। उसकी भी आंखे गीली हो गयीं। आँसू बहने लगे।। 113 ।। देखो! यह कैसा साईं का खेल । कैसे नहीं प्रेम परिप्लावित होगा। ऐसा कौन पाषाण (हृदय) होगा जो द्रवित नहीं होगा।। 114 ।। इसी लड़के की प्रेममयी माँ थी । एक समय शिरडी में साईं ने अनुग्रह किया था उस अद्भुतता को सुनो।। 115 ।। वहां भोजनागार में (वह) थी। पात्रों में भोजन डालने की तैयारी हो रही थी। इतने में एक भूखा कुत्ता द्वार पर दोपहर में आया ।। 116 ।। पात्र में रखी हुई रोटी का एक चौथाई टुकड़ा बाई ने कुत्ते के लिए दिया, किन्तु उसी समय वहां कीचड़ में सना हुआ एक भूखा सूअर भी आ गया।। 117 ।। यह स्वाभाविकता से घटित हुआ बाई के मन में ध्यान नहीं आया। किन्तु दोपहर में अपने आप साईं ने विषय उठाया।। 118 ।। दोपहर में भोजन ग्रहण करने के बाद मस्जिद में नित्यक्रम के अनुसार बाई आकर दूर बैठ गयी। साईं ने प्रेमपूर्वक पूछा ।। 119 ।। "माँ तुमने आज मुझे जेवन कराया । उससे ही आकंठ पेट भर गया। यह प्राण व्याकुल था तुमने तृप्त कर दिया" ।। 120 ।। "ऐसे नित्य करती जाओ । यही कर्म सत्य है मस्जिद में बैठकर मैं असत्य बोलूं ऐसा नहीं हो सकता" ।। 121 ।। "ऐसी दया मुझ पर करो। पहले भूखों को रोटी दो फिर स्वयं खाओ। यह सत्य हृदयंगम कर लो" ।। 122 ।। बाई समझ नहीं सकी कि साईं क्या बोल रहे हैं। इसका क्या भावार्थ है। इनकी वाणी कभी निरर्थक नहीं होती।। 1 23 ।। बोली, "मैंने तुम्हें भोजन कराया। मैं तुम्हें कैसे करा सकती हूं, मैं परतन्त्र हूं। पैसा देकर जैसा मिलता है खाती हूं" ।। 124 ।। "तुम्हारी प्रेमयुक्त भाकर खाकर मैं अत्यधिक तृप्त हो गया

हूं। अभी भी डकार रहा हूं।" बाबा ने प्रत्युत्तर दिया ।। 125 ।। "तुम्हारे खाना खाने बैठते ही पेट की क्षुधा से व्याकुल आये हुए तुमने जो अप्रत्याशित कुत्ता देखा, उसके साथ मेरी एकात्मता है।। 126 ।। उसी प्रकार सभी अंगों पर कीचड़ से सना हुआ तुमने जो सूअर देखा, भूख से व्याकुल, मेरी उससे एकात्मता है"।। 127 ।। बाबा के वचन सुनकर बाई विस्मित चित्त हो गयी। कितने कुत्ते, सूअर व बिल्लियां टहलती रहती हैं क्या बाबा उन सबमें हैं।। 128 ।। "कभी मैं कुत्ता हूं, कभी मैं सूअर हूं, कभी मै गाय हूं, कभी मैं बिल्ली हूं और कभी चींटी, मक्खी या जलचर हूं। ऐसे ही रूपों में मैं विचरता हूं" ।। 129 ।। "जो मुझे सभी भूतों में देखता है, यह जानो कि उसी के प्रति मेरी प्रीति है। इसलिए भेदबुद्धि को त्याग करके ऐसे ही मुझे भजो" ।। 130 ।। वे वचन नहीं परम अमृत थे। सेवन करके बाई भावनाओं के दबाव में आ गयी।नेत्र आनन्दाश्रु से भर गये। कंठ भर गये ।। 131 ।। ऐसी ही एक और बाई की कथा है- सुन्दर प्रेमरस में डूबी हुई। जो साईं की अपने भक्तों के साथ एकात्मता का प्रतीक है।। 132 ।। एक बार पुरन्दरे (रघुवीर भास्कर पुरन्दरे) अपनी पत्नी, लड़के व लड़की के साथ शिरडी के लिए निकले । बाबा के लिए बाई ने बैंगन प्रेमवश दिये ।।133 ।। उनकी पत्नी से विनती की कि बाबा के लिए एक (बैंगन) की "भरीत" (भर्ता) तैयार करके, दूसरे की "काचर्या" काटकर तलकर भूनकर खूब परस देना ।। 134 ।। बैंगन लेकर वह बोली ठीक है। बाई शिरडी पहुंचकर, आरती के बाद भोजन के समय "भरीत" लेकर गयी।। 135 ।। नित्य की भांति नैवेद्य अर्पित करके बाई थाली छोड़कर चली गयी। सभी के नैवेद्य एकत्र करके बाबा भोजन के लिए बैठे।। 136 ।। "भरीत" को स्वाद लेकर चखा। रुचिकर लगा सभी में बांट दिया। "काचर्या" खाने का मन हुआ। बोले अभी उसे लाओ।। 137 ।। राधाकृष्ण के पास खबर गयी कि बाबा जेवन करने के लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं, काचर्या की इच्छा है क्या किया जाये समझ में नहीं आता ।। 138 ।। बैंगन का मौसम नहीं था। अब वह पदार्थ कैसे बने? पुरन्दरे की पत्नी की तलाश की गयी क्योंकि "भरीत" वही लायी थी ।। 139।। उसी के द्वारा लायी गयी थाली में "भरीत" था अतः उसकी सामग्री में कदाचित बैंगन हों ।। 140।। और इसलिए उसी से पूछा गया। "काचर्या" की वास्तविकता ज्ञात हो गयी। बाबा का उसके प्रति इतना प्रेम क्यों था सभी समझ गये ।। 141 ।। बाई बोली एक "भरीत" दोपहर में अर्पण किया। दूसरे को तदर्थ काट लिया है काचर्या बाद में तैयार करेंगे।। 142 ।। बाद में जब बैंगन का पूरा समाचार धीरे-धीरे सभी जान गये साईं की व्यापकता देखकर लोगों का मन आश्चर्य करने लगा।। 143 ।। और एक बार दिसम्बर मास में सब 1915 में यही बाई ने प्रेम से बाबा के लिए पेड़ा भेजा ।। 144 ।। बालाराम परलोक वासी हो गये थे। क्रिया-कर्म करने के लिए उनका लड़का शिरडी जाने वाला था अतः पूछने के लिए आया ।। 145 ।। लड़का तर्खड के पास यह बताने आया कि वह शिरडी जा रहा है। इस लिए ताखंड की पत्नी बाबा के लिए कुछ उसके साथ भेजना चाहती थी।। 146 ।। घर में एक पेड़े के सिवाय कुछ न मिला वह भी पहले से ही निवेदित

। किन्तु लड़का जाने की जल्दी में था ।। 147 ।। इसके अतिरिक्त लड़का सूत में था पेड़ा एक वह भी खाया हुआ शेष था उसी को साईंमुख में अर्पण के लिए भेज दिया।। 148 ।। बोली, “दूसरा कुछ नहीं है, इसलिए अभी यही ले जाओ। प्रेमपूर्वक यही देना । साईं स्वाद लेकर खायेंगे" ।। 149 ।। गोविन्द जी ने पेड़ा ले लिया, किन्तु वह जब दर्शन के लिए गए पेड़ा ले जाना डेरे पर भूल गये । बाबा ने धीरज रखा।। 150 ।। बाद में जब तीसरे प्रहर लड़का पुनः दरबार में आया । किन्तु पूर्व की भांति वह भूल गया । खाली हाथ मस्जिद आया।। 151 ।। तुम मेरे लिए क्या लाये हो? बाबा ने उसकी परीक्षा लेने के लिए पूछा | पूछने पर बोला, “कुछ नहीं | उसे स्मरण कराया थोड़ा सा।। 152 ।। "क्या किसी ने मेरी प्रीति के लिए तुम्हें कोई वस्तु दिया नहीं है?" "नहीं" कहने पर साईंसमर्थ ने स्पष्ट पूछा ।। 153 ।। "अरे घर छोड़ते समय क्या माँ ने प्रेमपूर्वक मिठाई तुझे नहीं दिया था।” तब उसे याद आया।। 154।। फिर अति लज्जायमान हुए । कैसे विस्मृत हो गए। सर झुका कर क्षमा मांगी। चरण छूकर चले गये ।। 155 ।। दौड़ते-दौड़ते वह डेरे पर गये। पेड़ा लेकर आये । बाबा को अर्पित किया। हाथ में आते ही मुख में डाल लिया। माँ (आई) के भावों को संतुष्ट कर दिया ।। 156 ।। ऐसे महात्मा हैं श्री साईं । जिसके मन में जैसा भाव उन्हें वैसा ही अनुभव देते हैं। भक्त के गौरव को बढ़ाते हैं।। 157 ।। इस कथा में और इंगित होता कि भगवान को सदैव जीवों में देखो । यही सकल शास्त्र सम्मत है। यहां भी यही सिद्धान्त है।। 158 ।। अब अगले अध्याय को श्रवण करने में आप जानेंगे कि बाबा कैसे रहते थे। कहां सोते थे कौन ठिकाना था। इसे ध्यानपूर्वक सुनें ।। 159।। हेमाडपंत साईं के चरणों की शरण में है। श्रोता आदरपूर्वक मनन करें। कही कथा पर ध्यान देने से अपना कल्याण होगा।। 160 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित में "आज्ञावज्ञाविघ्न, पंचसूनादि पातकक्षालन तथा भक्त तर्खडकथानिरूपण' नामक नवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय दसवां (श्री साई समर्थ महिमान) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।।श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

जो सर्वलोक हित में रत है, नित्य ब्रहमस्वरूप में स्थित है, प्रेमपूर्ण अन्तःकरण से उनका निरन्तर स्मरण करें।। 1 ।। जिनके स्मरण मात्र से जन्म-मरण के झंझट सुलझ जाते हैं। वह सर्वोच्च साधना का साधन है, अत्यल्प परिमाण का खर्च नहीं ।। 2 ।। अल्प प्रयास के अनल्प फल, अनायास सब हाथ लग जाता है। जब तक इन्द्रियां स्वस्थ हैं तब तक पल-पल को साध लो ।। 3 ।। अन्य सभी देव भ्रामक हैं, गुरु ही एक शाश्वत देव हैं। चरणों में विश्वास को स्थित करके देखो भाग्य की रेखा को बदल देगा ।। 4 ।। जहां गुरु की उत्तम सेवा, सांसारिक जीवन समूल नष्ट हो जाता है। न्याय व मीमांसा आदि के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं।। 5 ।। अधिभूत और आध्यात्मिक, तीसरा दुःख आधि दैविक को आस्थावान भक्त पार कर जाते हैं जब सद्गुरु नाविक हो ।। 6 ।। लौकिक सागर को पार करने के लिए नाविक पर विश्वास करना पड़ता है। उसी विश्वास को भवसागर को पार करने के लिए अपने गुरु में स्थित करना है।। 7 ।। भक्तों के भाव को देखकर वह ज्ञान ऐसे प्रदान करता है जैसे हाथ की हथेलियों पर हो और खेल-खेल में "आनन्द लक्षण" मोक्ष की प्राप्ति हाथ में दे देता है।। 8 ।। जिनके दर्शन से हृदय ग्रन्थि टूट जाती है, सभी विषयों से निवृत्ति हो जाती है संचित व क्रियमाण क्षय हो जाते हैं, उनके चरित्र का गायन करें।। 9 ।। आठवें अध्याय में नर जन्म के प्रोजन का कथन है। नवें में गहन भिक्षावृत्ति के रहस्यपूर्ण वर्णन को सुना है।। 10 ।। बायजाबाई की भाजी भाकर, खुशालचंद का समाचार, म्हालसापति तात्या का शयन प्रकार, सुनने में सुखकर है।। 11 ।। अब श्रोता दत्तचित्त होकर आगे बाबा के चरित को सुनें । कैसे वे रहते थे, कहां सोते थे कैसे बिना लक्ष्य के विचरण करते थे।। 12 ।। कितना महान था बाबा का लौकिक जीवन काल । हिन्दू व यवन दोनों के लिए वह माँ थे। बाघ और बकरी के विश्वास के आश्रय थे, जहां वे प्रेम से बिना संशय के विहार करते ।। 13 ।। गेहूँ पानी की कहानी, अब कैसे साईं का रहना, कहां वे सोते, कहां ठिकाना, श्रोतागण सादर सुनें ।। 14 ।। चार हाथ लम्बी लकड़ी की तख्ती, एक वित्ता कुल चौड़ायी, धरन से झूले की तरह टंगी हुई, दोनों किनारे चिथड़ों से बंधे हुए।। 15 ।। ऐसी तख्ती पर बाबा सोते थे। मिट्टी के बने हुए तेल के दीए उनके बिस्तर पर सिर व पैर के पास जलते थे। कैसे चढ़ते थे कैसे उतरते थे उनकी गति अलक्ष्य थी।। 16 ।। गर्दन झुकाकर बैठे रहते या वहीं निद्रिस्त रहते । किन्तु

वह कैसे चढ़ते कैसे उतरते किसी ने उनकी गति नहीं देखी।। 17 ।। गुदढ़ी से तख्ती बंधी हुई थी। बाबा का वजन कैसे संभालती थी? महासिद्धि जब निकट की साथी हो तब तख्ती तो केवल नाम के लिए है।। 18 ।। अतिसूक्ष्म कण जो आँखों में चुभता है, अणिमावंत (अणिमा सिद्ध) सुख से उसमें छुप सकता है। बाबा मक्खी, कीट या चींटी के रूप में प्रवेश आसानी से कर लेते थे।। 19 ।। अणिमा जिसके घर की दासी है उसके मक्खी बनने में क्या देर लगती है। वह जो आकाश में, हवा में, रह सकता है उसके लिए लकड़ी की तख्ती का आश्चर्य क्या? ।। 20 ।। अणिमा-महिमा-लघिमा आदि अष्टसिद्धि व नवनिधि जिसके पास हाथ जोड़कर खड़ी रहती है लकड़ी का पटरा उसके लिए निमित्तमात्र है।। 21 ।। कीड़े, चींटी, सूअर व कुत्ते पशु पक्षी मनुष्य राजा-रंक छोटे-बड़े सभी को बिल्कुल समान देखते व समझते थे।। 22 ।। यद्यपि प्रत्यक्षतः वे शिरडी में निवास करते थे, साढ़े तीन हाथ का शरीर फिर भी वे पुण्य के भंडार महाराज सब के ह्रदयों में वास करते थे।। 23 ।। अन्दर से अनासक्त उपेक्षाभाव रखने वाले, बाहर से लोगों को एकत्र करने की इच्छा । अन्दर से यद्यपि बहुत निराश बाहर से भक्तों के पाश में बंधे हुए ।। 24 ।। अन्दर से अत्यन्त निष्काम, बाहर से भक्तों के लिए अति सकाम, अन्दर से शान्ति का धाम, किन्तु बाहर से बहुत क्रोधी।। 25 ।। अन्दर परमब्रह्म स्थिति, बाहर से पैशाच वृत्ति का प्रदर्शन । अन्दर अद्वैत से प्रीति, बाह्यतः सांसारिक जटिलता में विश्वास ।। 26 ।। कभी प्रेमभाव से देखते, कभी पत्थर लेकर दौड़ते, कभी गाली शाप देते, कभी स्वानन्द से आलिंगन करते ।। 27 ।। कभी शांत, विनम्र, निरुद्ध, क्षमाशील, सदैव ध्यानस्थ, आत्मस्थित और आत्मरत, भक्तों के लिए प्रसन्नचित ।। 28 ।। एक ही आसन पर नित्य लीन, गमनागमन जिनके लिए नहीं है, जिनका सटका (छड़ी) दण्डनिधान है, निश्चित मौनावस्था में।। 29 ।। कीर्ति व वित्त की कामना नहीं, प्राण रक्षा के लिए भिक्षाटन । योग में उर्ध्व-गमन इस प्रकार करते हुए समय व्यतीत करते ।। 30 ।। प्रत्यक्षतः यति-संन्यासी का वेष, हाथ में सटका उनका दण्ड होता, "अल्ला मालिक" वाक्य की अनुवृत्ति करते, भक्त के प्रति अखण्ड प्रीति ।। 31 ।। ऐसा श्री साईं की सगुणमूर्ति की मनुष्यरूप में अभिव्यक्ति हुई। पूर्व अर्जित पुण्य से ही यह सम्पत्ति अप्रत्याशित हमारे हाथ लग गयी।। 32 ।। उनके प्रति जो मनुष्यभाव रखते वे मंदमति मंदभाग्य के हैं। जिनकी दैवगति (भाग्य) विचित्र हैं उन्हें यह (सम्पत्ति) कैसे प्राप्त होगी।। 33 ।। साईं आत्मबोध की खान हैं। साईं पूर्ण आनन्दस्वरूप हैं। उनकी कमर तत्काल पकड़ लो भवसागर से पूर्णरूप से तरने के लिए ।। 34 ।। वास्तव में जो अपार व अनंत है, जो ब्रह्म से लेकर छोटी सी झाड़ी पर्यंत व्याप्त है, इस प्रकार जो निरन्तर व अत्यन्त अभिन्न है वही बाबा के रूप में मूर्तिमान है।। 35 ।। कलियुग का काल प्रसार चार लाख बत्तीस हजार वर्ष का है। पांच हजार वर्ष व्यतीत होने के बाद बाबा का अवतार हुआ।। 36 ।। यहां श्रोताओं को आशंका हो सकती है। जन्मतिथि को जाने बिना, किस आधार पर यह निश्चित किया गया। सादर ध्यान से सुनें

।। 37 ।। आनिर्वाण शिरडी क्षेत्र में निवास करने का संकल्प करके बाबा ने क्षेत्र संन्यासी की भांति साठ वर्ष व्यतीत किये ।। 38 ।। सोलह वर्ष की आयु में आरंभ में बाबा शिरडी में प्रकट हुए । तीन वर्ष तक उस समय वहां वास करते रहे।। 39 ।। तब वहां से वे कहीं निकल गए । तत्पश्चात दूर निजामशाही में वे दिखायी दिये । बारात के साथ आये। शिरडी में सदा रहे।। 40।। तब वे 20 वर्ष के थे। वहां तब से साठ वर्ष तक शिरडी में अखंड निवास किया, सभी जानते हैं।। 41 ।। शक संवत् 1840 में आश्विन माह के दसवें दिन विजयदशमी के शुभ मुहूर्त में (1 5 अक्टूबरू, सन् 1918) बाबा ने निर्वाण प्राप्त किया ।। 42 ।। इस प्रकार बाबा का जन्म शक संवत् सत्रह सौ साठ में हुआ (सन् 1838) तथा जीवन काल मोटे तौर पर 80 वर्ष ।। 43 ।। काल पर जिन्होंने विजय प्राप्त कर ली हो, ऐसे महात्माओं का जीवनकाल क्या कभी निश्चित किया जा सकता है? यह कार्य सम्पन्न करना कठिन है।। 44 ।। महात्मा नित्य अपने स्थान में स्थित रहते हैं जन्म और मरण के बिना ही । सूर्य का क्या उदय या अस्त होना वह सदा अचल स्थिर रहता है।। 45 ।। शक संवत सोलह सौ तीन (सन् 1781) में रामदास ने समाधि ली। दो शताब्दी मुश्किल से बीती होगी कि इस मूर्ति का उदय हुआ।। 46 ।। भारत भूमि यवनों से आक्रांत थी। हिन्दूराजा पदच्युत हो गये थे। भक्ति मार्ग लुप्त हो गया था जनता धर्मरहित हो गयी थी।। 47 ।। तब रामदास ने जन्म लिया था। शिवाजी महाराज की सहायता से उन्होंने यवनों से राज्य की रक्षा की ब्राह्मणों-गायों को संरक्षण मिला।। 48 ।। मुश्किल से दो शतक बीता था कि एक बार फिर स्थिति बिगड़ गयी। हिन्दू-मुस्लिम में टकराव होने लगा | बाबा ने फिर उसे कम किया ।। 49 ।। राम और रहीम एक हैं। उनमें किंचित अन्तर नहीं है। फिर भक्तों की समझ में रुकावट क्यों? अमित्रवत व्यवहार का क्या अर्थ ।। 50 ।। कितने मूर्ख बच्चे हो तुम । हिन्दू-मुस्लिम संबंध को स्वरूप दो। सुविचार दृढ़ता से आरुढ़ करो। तभी दूसरे तट की प्राप्ति होगी।। 51 ।। वाद-विवाद से भला नहीं होना है नहीं किसी से बराबरी करने से । नित्य अपने हित का विचार करो श्री हरि तुम्हारी रक्षा करेंगे।। 52 ।। योग-यज्ञ-तप-ज्ञान- ये सब हरि प्रप्ति के साधन हैं | जो हरिविहीन हैं उनका पैदा होना व्यर्थ है।। 53 ।। कोई कुछ अपकार कर दे तो स्वयं प्रतिकार न करें। बल्कि यथासंभव उपकार करना चाहिए। यह उनके उपदेश का सार था ।। 54 ।। भौतिक उद्देश्य की पूर्ति में, वैसे ही आध्यात्मिक उद्देश्य की पूर्ति में, यह उपदेश बहुत हितकारी है। ऊँच, नीच, स्त्री, शूद्र सभी के लिए यह सीधा-साधा मार्ग है।। 55 ।। स्वप्न में राज्य का वैभव जागने पर जैसे निरर्थक होता है वैसे ही संसार केवल धोखा है, यह उनकी भावना थी।। 56 ।। निज अनुसंधान से देहादि के सुख-दुःख के मिथ्यापन, सांसारिक जीवन के स्वप्न-भ्रमत्व को भगा दिया था, वे मुक्त हो गये थे।। 57 ।। शिष्य की बद्धता देखकर जिनका चित्त करुणा से भर जाता था यही चिंता रात दिन रहती देहातीतता कैसे प्राप्त करायें ।। 58 ।। “मै ब्रह्म का आकार" की वृत्ति, अखंड आनन्द की मूर्ति, निर्विकल्प चित्त स्थिति, ऐसी

निवृत्ति वास कर रही थी (बाबा में) ।। 59 ।। मजीरा व वीणा लेकर दर-दर भटकने व हाथ पसार कर आने जाने की दयनीयता को स्थान नहीं था।। 60 ।।ऐसे बहुत से गुरु हैं जो शिष्य को पकड़कर बलपूर्वक कान में मंत्र फूंकते हैं। धन के लिए गिर जाते हैं।। 61 ।।शिष्य को धर्म की शिक्षा देते हैं स्वयं अधर्म का आचरण करते हैं उनका कैसे जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होकर - संसार से पार होना होगा ।। 62 ।। अपने धार्मिकत्व की ख्याति का झंडा जगत में फहराने की इच्छा जिनकेचित्त में नहीं थी, ऐसी मूर्ति थी साईं की।। 63 ।। जिनमें देहाभिमान नहीं था शिष्य के प्रति अत्यन्त प्रीति की प्रवृत्ति जिनमें सदैव रहती ऐसी मूर्ति थी साईं की।। 64 ।। गुरु "नियत" और "अनियत" दो प्रकार के होते - हैं। श्रोताओं को एक-एक का कार्य निर्धारण स्पष्ट करता हूं।। 65 ।। दैवी सम्पत्ति को परिपक्व करके चित्त को निर्मल करके मोक्ष के मार्ग पर ला देते हैं- यह है अनियत गुरु की देन ।। 66 ।। नियत गुरु का साथ होने पर द्वैत भाव समाप्त होता है “ऐक्य" भाव उत्पन्न होता है, “वह तुम हो” 'तत्वमसि' इस वेद वाक्य का साक्ष्य प्रदर्शित होता है।। 67 ।। यह गुरु चराचर में व्याप्त है भक्त के लिए अवतार लेते हैं। अवतार कार्यभार समाप्त होने पर अपने अवतार समाप्त कर देते हैं।। 68 ।। साईं इस द्वितीय कोटि के थे। उनके चरित्र का मैं क्या वर्णन करूं। वे मुझे जैसी बुद्धि देंगे वैसा ही लेखन होगा।। 69 ।। लौकिक विद्याओं के अनेक गुरु हैं। जो स्वरूप में स्थापित कर दें वह सद्गुरु हैं। वह समर्थ हैं जो भव पार करने का मार्ग दिखाये । उसकी महिमा अगोचर है।। 70 ।। जो-जो दर्शन करने गया उसके भूत भविष्य वर्तमान के सम्पूर्ण रहस्य साईं बिना पूछे बता देते।। 71 ।। सर्वत्र भूतों में ब्रह्म को देखते, शत्रु व मित्र को समभाव से देखते तिलमात्र भी भेद नहीं करते।। 72 ।। निरपेक्ष और समदर्शी थे। अपकारियों पर भी अमृत बर्षा करते थे। उत्कर्ष एवं अपकर्ष में समचित्त रहते थे। उन्हें संशय स्पर्श भी नहीं करता था।। 73 ।। इस नश्वर देह को धारण करके व्यवहार करते हुए भी शरीर घर आदि में उनकी संलिप्तता नहीं थी। दिखाने के लिए वे देही (शरीर धारण करके व्यवहार करने वाला) थे अन्दर से वे विदेही थे (जो शरीर की सहायता के बिना भी व्यवहार कर सकते हैं) ऐसे देहधारी निर्मुक्त होते हैं।। 74 ।। शिरडी में लोग धन्य हैं जो बैठते, भोजन करते व शयन करते साईं का अखण्ड चिन्तन करते, साईं ही, जिनके देवतार्चन थे।। 75 ।। धन्य धन्य उनका प्रेम जो गोदाम में या आंगन में काम करते दलते कांडते मक्खन निकालते बाबा की महिमा गाते रहते ।। 76 ।। बैठते, भोजन करते, व शयन करते बाबा के नाम का अक्षय स्मरण करते । एक बाबा, उनके बिना दूसरा कोई देव याद नहीं किया जाता था ।। 77 ।। कितना अद्भुत था उन स्त्रियों का बाबा के प्रति प्रेम, कितनी अद्भुत थी उनके प्रेम की माधुरी। निर्मल प्रेम से ही कविता की रचना होती है। विद्वता से कविता नहीं रची जाती ।। 78 ।। सीधी सरल व स्पष्ट भाषा, विद्या तिलभर भी नहीं उससे जो कवित्व प्रवाहित होता है विद्वानों की भी गर्दन (प्रशंसा में) हिलती है।। 79 ।। शुद्ध प्रेम से आविर्भाव होता है

उनके नाम की कविता का । उन स्त्रियों के शब्दों में श्रोता इसे अनुभव कर सकते हैं।। 80 ।। यदि साईंबाबा की इच्छा हुई, उसका पूर्ण संग्रह प्राप्त होगा। श्रोताओं की सुनने की इच्छा पूरी होगी। कविताओं का अध्याय होगा।। 81 ।। इस प्रकार भक्तों पर कृपा करने वाले निराकार (ब्रह्म) शिरडी में साईं रूप में प्रकट हुए । देह का अहंकार व विकार लुप्त होने पर, भक्तिस्वरूप होने पर ही उन्हें जाना जा सकता हैं।। 82 ।। अथवा भक्तों के पुण्य फलित हुए । उचित समय पर सब एक साथ पूर्ण रूप से अंकुरित हुए और साईं रूप में शिरडी में फलित हुए।। 83 ।। जो अवर्णनीय है उसका वर्णन हो गया, जो अजन्मा है वह वास्तव में जन्मा। अमूर्त वास्तव में करुण रस की मूर्ति में ढल गया ।। 84 ।। कीर्ति, श्री, वैराग्य, ज्ञान, ऐश्वर्य और उदारता छः गुणों से मंडित यह मूर्ति थी।। 85 ।। बाबा का निग्रह विलक्षण था। स्वयं यद्यपि अपरिग्रह एवं अमूर्त थे किन्तु भक्तों के कल्याण के लिए शरीर धारण किया ।। 86 ।। किन्तु अद्भुत था उनका कृपाभाव । भक्तों की मूर्खतापूर्ण भावो को भी वे स्वीकारते। किन्तु वे असीमित थे कोई देव भी उन्हें नहीं समझ सका होगा।। 87 ।। वाग्देवता भी जिन्हें बोलने का साहस नहीं कर सकते, श्रोताओं को भी सुनकर लाज आए, भक्त कल्याण के लिए ऐसे बोल साईं महाराज बोलते ।। 88 ।। उन शब्दों की पुनरावृत्ति करें, इससे अच्छा है कि चुप रहूं, किन्तु कर्तव्यच्युत होना अच्छा नहीं होगा इसलिए बोलना ही होगा।। 89 ।। बाबा की वाणी भक्तों के प्रति करुणापूर्ण थी । बोलने में अति विनम्रता थी।" दासों का दास, मैं, तुम्हारा ऋणी हूं, तुम्हारा दर्शन करने निकला हूं ।। 90 ।। तुम्हारी एक बड़ी कृपा है तुम्हारे पावों से मेरी भेट हुई। मैं तुम्हारे पेट के मल का कीड़ा हूं, इससे, मैं इस सृष्टि में धन्य हूं" ।। 91 ।। क्या विनम्रता थी बाबा की । नम्रता ही उनके चित्त की पसन्द थी। क्या उच्च श्रेणी की निरभिमानता थी वैसी ही शालीनता थी।। 92 ।। बाबा के उपर्युक्त उद्गार खरे हैं जो सादर कह दिया। किसी का अनादर हो तो मैं क्षमा प्रार्थी हूं।। 93 ।। इस प्रकार अशुद्ध हो गयी वाणी व श्रवण के पाप टालने के लिए साईं नाम का जाप करें। इससे सभी दोष समाप्त हो जायेंगे।। 94 ।। जन्म-जन्मांतर के मेरे तप का फल केवल श्री साईं की कृपा है। यह मेरे लिए वैसे ही सुखदायी है जैसे प्यासे राही के लिए पीने के ठंडे पानी का स्थान ।। 95 ।। जिह्वा द्वारा रसास्वादन करते हैं यद्यपि सभी को ऐसा भासता, किन्तु रसना (जिह्वा) का रस के प्रति स्फुरण नहीं था, वह स्वाद लेते नहीं थे।। 96 ।। जिनकी विषयों के प्रति स्फूर्ति नहीं थी वे कैसे विषयों का सेवन कर सकते हैं। विषय जिनकी इन्द्रियों को छू भी नहीं सकते थे वे विषयों में कैसे लिप्त होते ।। 97 ।। नयनद्वार (आँखें) देखते, जो जो पदार्थ सामने आते, किन्तु वे कुछ नहीं देखते क्योंकि उनमें देखने का स्फुरण नहीं था।। 98।। जैसे हनुमान की गर्भ कांस (कथा है कि श्री हनुमान लंगोट पहने पैदा हुए थे) केवल एक माता को दिखा था या फिर श्री राम को। फिर उनके ब्रह्मचर्य की तुलना किससे की जा सकती है।। 99 ।। जिनके लिंग का अवलोकन माता ने भी न किया हो अन्यों का क्या कहना |

बाबा का ब्रह्मचर्य बहुत कठिन था, उसकी पूर्णता अपूर्व थी।। 100 ।। कमर में लंगोटी बांधते । लिंग, मूत्र विसर्जन के अतिरिक्त ऐसे अनुपयोगी था जैसे बकरे के गले में लटका मांस पिण्ड, अवयव केवल अवयव होने के लिए ।। 101 ।। ऐसी थी बाबा की देह स्थिति । यद्यपि इन्द्रियां कर्म में संलग्न रहतीं। किन्तु उनकी विषयों के प्रति स्फूर्ति, थोड़ी भी मित्रता नहीं थी।। 102 ।। सत्व, रज, तमादि गुण सभी इन्द्रियों में विद्यमान थे। देखने में कर्तापन था किन्तु संगता कहीं छू भी नहीं गयी थी।। 103 ।। पूर्णरूप से मुक्त, शुद्ध ज्ञान, आत्मचिन्तन में मस्त, काम क्रोध, के विश्रामधाम बाबा सदैव निष्काम कामना विहीन पूर्णरूप से संतुष्ट थे।। 104 ।। ऐसी उनकी मुक्त स्थिति थी। विषय ही जिनके लिए ब्रह्म हो गये। पुण्य पाप से परे पूर्ण निवृत्ति स्थान उनका ।। 105 ।। नाना वल्ली ने उठ ने के लिए कहा गद्दी छोड़ कर उसे स्थान दिया | जहां देहाभिमानता अथवा विषमता स्वप्न में भी नहीं थी।। 106 ।। इस लोक में कुछ भी प्राप्त करने योग्य नहीं था परलोक में भी कुछ साधने लायक नहीं था केवल लोगों पर अनुग्रह करने के लिए इस संत ने पृथ्वी पर अवतार लिया । था।। 107 ।। ऐसे करुणाधाम संतों का अवतार लेने का प्रयोजन, दूसरों पर अनुग्रह के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। ये दूसरों के हित के लिए पूर्ण कृपालु होते हैं।। 108 ।। किसी ने कहा है इनके हृदय मक्खन की भांति मृदु होता है किन्तु संत दूसरों के कष्ट से पिघलते हैं जबकि मक्खन स्वयं के गरम होने पर पिघलता है।। 109 ।। पैबन्ध लगी हुई कफनी जिसका वस्त्र हो, बोरी (टाट) जिसका आसन व बिस्तर हो, वासनाविहीन जिसका मन हो, उसके लिए चांदी का सिंहासन किस लिए? ।। 110 ।। भक्तों के भाव देखकर, यद्यपि ये मार्ग की बाधायें हैं, किन्तु भक्तों द्वारा चुपके से खिसका देने पर ध्यान नहीं देते थे।। 111 ।। बाबा शिरडी सरोवर के कमल थे। भक्त सुगन्ध का सेवन करते। अभागे मेढकों के मार्ग में कीचड़ होता सदैव उसी में लिपटे होते ।। 112 ।। किसी को योगासन, प्राण-अपान अथवा इन्द्रियों का दमन नहीं बताया। मंत्र, तंत्र या यंत्र-भजन किसी के कान में नहीं फूंका ।। 113 ।। बाह्य रूप से वे लोक आचरण करते दिखते किन्तु अन्दर से पूर्णरूप से भिन्न थे। व्यवहार में अत्यन्त दक्ष थे, यह कौशल दूसरों में नहीं था ।। 114 ।। भक्तों के लिए ही रूप धारण करते हैं, उन्हीं के लिए संतो की भावनायें होती हैं, सांसारिक व्यवहार होता है, इसे पूर्णरूप से सत्य जानो।। 115 ।। साईं महाराज संतनिधान, केवल शुद्ध परमानंद के स्थान थे। उन्हें मेरा निरभिमान व शुद्ध साष्टांग वंदन ।। 116 ।। वह स्थान बहुत पुण्यवान है जहां महाराज चलकर आये । पूर्व संचित पुण्य के बिना ऐसे खजाने दुर्लभ होते हैं।। 117 ।। "शुद्ध बीज से रसदार व सुन्दर फल आता है" इस प्रसिद्ध उक्ति का शिरडी के लोगों ने परीक्षण किया है।। 118 ।। वह न हिन्दू, न यवन, उनका न आश्रम, न वर्ण किन्तु संसार के क्लेशों को पूर्णरूप से नष्ट कर समाप्त कर सकते हैं।। 119 ।। गगन की भांति अनन्त व अपार बाबा का गहन चरित्र । उनके बिना कौन उसका यथार्थ आंकलन कर सकता है।। 120 ।। चित्त

(मन) का काम चिन्तन करना है चिन्तन के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता। विषय देने पर विषय का चिन्तन करता है, गुरु देने पर गुरु का चिन्तन करता है।। 121 ।। अतः सभी इन्द्रियों को कान में केन्द्रित करके जो गुरु महिमा का श्रवण करते हैं वह सहज स्मरण, सहज भजन, साईं का सहज कीर्तन होता है।। 122 ।। पंचाग्नि साधन, यज्ञ, मंत्र, तंत्र, अष्टांग योग- ये सवर्णों के लिए ही संभव प्रयोग है औरों के लिए इनका क्या उपयोग? ।। 123 ।। संत कथा वैसी नहीं होती। सभी को सत्य-पथ दिखलाती है। भय की व्यथा हरती है। अपने परमार्थ को प्रकट करती है।। 124 ।। संतकथा के श्रवण, मनन, परिशीलन व ध्यान से द्विज हो, स्त्री हो, या शूद्र हो ये पावन हो जाते हैं।। 125 ।। जिसके अन्दर प्रेम न हो ऐसा मानव नहीं हो सकता है। कुछ लोगों में किसी के लिए, कुछ में किसी के लिए, अधिष्ठान भिन्न दिखता है।। 126 ।। किसी का प्रेम संतति के लिए जागृत है, किसी का धन मान सम्पत्ति, शरीर, घर व लौकिक कीर्ति के लिए, किसी का विद्या प्राप्ति के लिए ।। 127 ।। विषयों में बंटा हुआ प्रेम, वे सब जब एकत्र हो जायें व साईं चरणों के सांचे में ढाले जावें तो वे भक्ति रूप में प्रकट होते हैं।। 128 ।। अतः घर-गृहस्थी गोशाला व चित्त साईं चरणों में समर्पित कर दो। फिर उनकी कृपा होगी। यह एक आसान उपाय है।। 129 ।। ऐसे ही अल्प साधन से महान लाभ लोगों को घटित होता है। इससे प्रसन्नता प्राप्त होती है, फिर कैसी उदासीनता ।। 130 ।। सहज ही श्रोताओं के मन में आशंका की लहर उठती है यदि अल्प उपाय से बड़ा लाभ प्राप्य है तो अधिसंख्य लोग अनादर क्यों करते हैं।। 131 ।। इसका एक ही कारण है। भगवत कृपा के बिना लालसा उपजती नहीं जब भगवान सुप्रसन्न होते हैं श्रवण लालसा प्रकट होती है।। 132 ।। अतः साईं की शरण में जाओ । नरायण कृपा करेंगे। श्रवण लालसा की उत्पत्ति होगी। यह स्वल्प साधन हाथ लग जायेगा ।। 133 ।। गुरुकृपा की सत्संगति करो । सांसारिक बंधन से ऊपर उठो। इसी में तुम्हारी सार्थकता निश्चित है। चित्त में विकल्प (संशय) धारण मत करो।। 134 ।। लाखों चतुराई को छोड़ दो निरन्तर साईं-साईं स्मरण करो । देखना बेड़ा पार हो जायेगा । कहीं संदेह नहीं होना चाहिए ।। 135 ।। ये मेरे बोल नहीं हैं। साईंमुख से निकल महत्वपूर्ण बोल हैं, इन्हें व्यर्थ न समझो न ही इनका मूल्यांकन करो।। 136 ।। वहीं कुसंगति सर्वथा खोटी है यह महादुःख का घर है अनजाने ही गुमराह कर देती है, सुखों को दूर भगा देती है।। 137 ।। एक साईंनाथ अथवा एक सद्गुरु के बिना कुसंग परिमार्जन और कौन कर सकता है।। 138 ।। करुणामय गुरुमुख से निकले गुरुवचन को, हे भक्तों, सुरक्षित रखो इससे कुसंगति दूर होती है।। 139 ।। सृष्टि आँखों में भर जाती है सौन्दर्य लोलुप मन उसमें रम जाता है वही दृष्टि अन्तर्मुखी हो जाती है, तब वही सत्संग में रम जाता है ।। 140 ।। इस सत्संग की इतनी महिमा है कि देहाभिमान समूल नष्ट हो जाता है। अतः सत्संग के अतिरिक्त अन्य कोई साधन इतना प्रभावी नहीं है।। 141 ।। नित्य सत्संग करिये, अन्य की संगति सदैव त्रुटिपूर्ण है सत्संग ही एक त्रुटि

रहित है, अंग प्रत्यंग निर्मल है।। 142 ।। सत्संग देहासक्ति से मुक्त करता है इसकी शक्ति इतनी बलवती है कि एक बार इसके प्रति भक्ति स्थापित हो जाये तो संसार के बंधन से मुक्ति प्राप्त होती है।। 143 ।। भाग्य से सत्संग हो जाता है तो सहज ही पूर्ण उपदेश प्राप्त होता है तत्क्षण ही कुसंग से विरत होना होता है और सत्संग में मन पूर्णरूप से रम जाता है।। 144 ।। ईश्वरीय मर्म को अपनाने के लिए विषयों के प्रति विरक्ति ही एक उपाय है। सत्संग के प्रति प्रबल चित्तवृत्ति न होने पर स्वरूप का ज्ञान नहीं हो सकता ।। 145 ।। सुख के पीछे दुःख है व दुःखके पीछे सुख है। जीव सुख से सदा सन्मुख रहता है व दुःख से विमुख रहता है।। 146 ।। सन्मुख हो या विमुख होनी होगी अवश्य । एक संत की संगति ही है जो दोनों भोगों से मुक्ति दिला सकती है।। 147 ।। सत्संग से देहाभिमान का नाश होता है। सत्संग जन्म-मरण के चक्र को तोड़ता है। सत्संग से ईश्वर से भेंट होती है व तत्काल ग्रन्थि विच्छेदन हो जाता है।। 148 ।। उत्तम गति को पाने के लिए एक पावन संत संगति ही (मार्ग) है। सत्संग की शरण में जाने से अनन्य गति प्राप्त होती है निज विश्रांति प्राप्त होती है।। 149।। संत महाजन उन लोगों को अपने प्रति आकर्षित करने के लिए अवतार लेते हैं जो न हरि नाम लेते हैं, न हरि नमन करते हैं, न भजन करते हैं, न ही भाव रखते हैं।। 150 ।। गंगा भगीरथी, गोदावरी, कृष्णा, वेन्या, कावेरी नर्मदा-ये साधुओं के पांव छूने की इच्छा रखती हैं जब ये स्नानार्थ आते हैं ।। 151 ।। जगत के पाप स्वयं धोती है, किन्तु उनकी पाप निवृत्ति बिना संत पद की प्राप्ति के कदापि नहीं होती।। 152 ।। जन्मान्तर के भाग्य उदित होंगे तब साईं महाराज के चरण प्राप्त होंगे, जन्म-मृत्यु के चक्र रुक जायेंगे, समस्त भव भय समाप्त हो जायेंगे।। 153 ।। अब संत श्रोताजन, श्रवण किये हुए का मनन करो जब स्वयं विश्राम कर रहे हो। आगे का निरूपण आगे होगा ।। 154 ।। हेमाड साईं की शरण में है। मैं तो उनके पावों की पादुका हूं। कथा निरूपण करता रहूंगा, क्योंकि इससे ही मैं सुख संपन्न होऊँगा ।। 155 ।। क्या मनोहर सुन्दर रूप था, मस्जिद के किनारे खड़े होकर एक-एक को ऊदी प्रदान करते भक्तों के कल्याण के लिए।। 156 ।। जिसे संसार के मिथ्या होने का ज्ञान था जो ब्रह्मानन्द में अखण्ड लीन था मन सदैव खिले हुए फूल के समान था उसको साष्टांग वंदन ।। 157 ।। जो आँखों में अंजन लगाकर ब्रह्मज्ञान प्रदान करते हैं उन महान साईं को साष्टांग वंदन ।। 158 ।। अगला अध्याय इससे भी अच्छा है कानों के द्वारा हृदय में पहुंचते ही हृदय मंदिर को पवित्र कर देगा। सभी मलों को साफ कर देगा ।। 159 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" में "श्री साईंसमर्थ महिमा” नामक दसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय ग्यारहवां (श्री साई महिमा वर्णन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

गत कथा के अनुक्रम में, बाबा का पतले पटले पर शयन, उस पर चढ़ना-उतरना किसी के द्वारा भी न देखा जा पाना, उनकी कुशलता अज्ञेय थी।। 1 ।। हिन्दू हो या मुसलमान, दोनों एक समान हैं, जिनके जीवनकाल का पर्यालोचन था वो शिरडी के देव थे।। 2 ।। अब यह ग्यारहवां अध्याय, गुरु की सुखदायी कथाओं से अलंकृत , साईं चरणों में समर्पित हो ऐसा दृढ़ भाव रखता हूं।। 3 ।। ऐसा करने से सगुण ध्यान होगा। यह रुद्राध्याय (यजुर्वेद) का ग्यारह बार पाठ होगा, पंच भूतों के ऊपर उनकी सत्ता का प्रमाण मिलेगा, बाबा की महिमा का ज्ञान होगा।। 4 ।। किस प्रकार इन्द्र, अग्नि, वरुण बाबा के वचन का सम्मान करते हैं। अब उसका दिग्दर्शन करते हैं, श्रोता ध्यान दें।। 5 ।। पूर्ण विरक्ति ही विरक्ति, साईं की ऐसी सगुण मूर्ति, अनन्य भक्तों की निज विश्रांति, उन्हें प्रेम से चित्त में लायें।। 6 ।। गुरु के वचनों पर विश्वास को आसन का रूप देकर बैठने के लिए समर्पित करते हैं। सभी इच्छाओं का त्याग करने के संकल्प के साथ पूजन करते हैं।। 7 ।। प्रतिमा, पूजा-वेदी, अग्नि, तेज, सूर्यमंडल, जल व ब्राह्मण इन सातों से बड़े हैं गुरुराज, उनकी अनन्य पूजा करते हैं।। 8 ।। अनन्य भाव से चरण पकड़ने पर गुरु क्या परब्रह्म भी हिल जाते हैं। ऐसी ही गुरुपूजा की अद्भुतता गुरुभक्त अनुभव करें।। 9 ।। पूजक जब तक साकार हैं, देहधारी को गुरु आवश्यक है। निराकार का निराकार है। शास्त्रों में निर्धारित किया गया है।। 10 ।। सगुण का ध्यान किये बिना उस समय भक्तिभाव प्रकट नहीं होता । और जब सप्रेम भक्ति प्रकट नहीं होती तब मन की कली खिलती नहीं।। 11 ।। उसके कुछ खिले बिना केवल कली में गंध नहीं, न ही मकरंद, न भ्रमर ही वहां क्षणभर के लिए दिखते हैं।। 12 ।। जो सगुण है वही साकार है जो निर्गुण है वह निराकार है। परस्पर भिन्नता नहीं है। साकार निराकार एक ही है।। 13 ।। घी जमने पर ठोस रूप होता है पिघलने पर भी वह घी ही कहा जाता है सगुण निर्गुण एक समान विश्व में व्याप्त है।। 14 ।। जिन्हें देखकर आँखें भर आयें, जिनके पद पर सर झुक जाये, जहां ज्ञान सुगम प्राप्त हो जाये उस स्थान से अनुरक्ति होती है।। 15 ।। जिसके संग प्रेम से वार्ता की जावे, जिसकी पूजा गंध व अक्षत से की जावे, अतः उसकी आकृति होनी चाहिए ।। 16 ।। वास्तव में, निर्गुण की तुलना में सगुण का अनुभव करना सरल है। सगुण के प्रति प्रेम दृढ़ होने पर उस निर्गुण का बोध हो जाता है।। 17 ।। भक्तों को निर्गुण का बोध कराने के लिए बाबा ने अनन्त उपाय किये। अधिकारिता के अनुरूप दूरी पर बैठाते,

बहुत समय तक दर्शन वर्जित कर देते।। 18 ।। एक को दूसरे स्थान पर भेज देते, एक को शिरडी में ही एकांत में बंद कर देते, एक को "वाडा" में नियम से पोथी पढ़ने में लगा देते ।। 19।। वर्षों-वर्ष के अभ्यास से निर्गुण का ध्यान बढ़ जाता है। बैठते-सोते, भोजन करते मन बाबा के साथ लगा रहता है।। 20 ।। शरीर तो नाशवान है कभी तो इसका अंतहोना ही है। इसलिए भक्तों को इसके लिए दुःखी नहीं होना चाहिए, अनादि व अनंत पर लक्ष्य करना चाहिए ।। 21 ।। बहुत प्रकार से फैला हुआ दृश्य, यह सब का सब, अव्यक्त का है। अव्यक्त से आकार लिया है, अव्यक्त में ही वापस जाना है।। 22 ।। ब्रहम से लेकर घास के गुच्छे तक, यह सृष्टि जैसी व्यष्टि है वैसी समष्टि है। जिस अव्यक्त से उपजी है, उसी में शांति से समा जायेगी।। 23 ।। अतः किसी का मरण नहीं होता फिर बाबा का कहां से । नित्य शुद्ध बुद्ध निरंजन निरमरण हैं श्री साईं।। 24 ।। कोई उन्हें भगवद्भक्त कहे कोई उन्हें महाभागवत (विष्णु का भक्त) कहें, किन्तु हमारे लिए साक्षात ईश्वर की मूर्ति प्रतीत होते हैं।। 25 ।। गंगा समुद्र से भेंट करने जाती है, मार्ग में ताप से पीड़ितों को शीतल करती है, किनारे पर वृक्षों को जीवन देती है, सब की प्यास हरती है।। 26 ।। वैसी ही संतों की अवतार स्थिति है। प्रकट होते हैं और जाते हैं। किन्तु अपने आचरण की रीति से जगत को पावन करते हैं ।। 27 ।। कमाल की क्षमाशीलता है। नैसर्गिक विलक्षण गहराई । नेकी, मृदुलता, क्षमा, शीतलता वैसी ही निरूपम संतुष्टता ।। 28 ।। देखने में देहधारी हैं किन्तु हैं निर्गुण, निर्विकार, निःसंग, निर्मुक्त अपने अंदर, फिर भी संसार में विचरण करते हैं।। 29 ।। "कृष्ण" जो स्वयं परमात्मा हैं उन्होंने ही कहा है "संत मेरी आत्मा है, संत मेरी सजीव प्रतिमा है, सप्रेम संत मैं ही हूं ।। 30 ।। संतों को प्रतिमारूप कहना भी उचित नहीं है संत मेरा निश्चल स्वरूप है। इसीलिए अपने भक्तों का भार उनकी लाज के लिए मैं वहन करता हूं।। 31 ।। जो संतों की अनन्य शरण में हैं, मैं उनके चरण की वंदना करता हूं।" इस प्रकार संत महिमा श्री कृष्ण ने स्वयं उद्धव को बतायी है।। 32 ।। सगुणों में सगुण, निर्गुणों में निर्गुण | गुणवानों का सर्वोत्तम गुण | गुणियों में भी गुणी । गुणियों का राजा ।। 33 ।। जिनकी सभी इच्छायें पूर्ण हैं, कृतकृत्य हैं,सदा जो मिला उसी में तृप्त हैं, जो अनवरत आत्मशील हैं, जो सुख व दुःख से परे हैं।। 34 ।। जो आत्मानन्द का वैभव हैं उनके गौरव का वर्णन कौन कर सकता है। जो ब्रहम की मूर्ति हैं, सर्वथा ही अवर्णनीय हैं।। 35 ।। वही अवर्णनीय शक्ति दृश्यरूप में पृथ्वी पर अवतरित हुई । सत् चिद सुख आनन्द की मूर्ति, वह उनकी ज्ञान भरी वार्ता ।। 36 ।। जो ब्रहमकार अन्तःकरण की मूर्ति है, जिनकी जगत व्यवहार में निवृत्ति हो चुकी है, नित्य निष्प्रपंच ब्रहमात्मैक्य की स्थिति में वह केवल आनंद की मूर्ति है।। 37 ।। "आनन्द ही ब्रहम है, 'आनन्दो ब्रहमेति' । श्रुतिवचन श्रोता नित्य श्रवण करते हैं। पुस्तक ज्ञानी पोथियों में वांचते रहते हैं। श्रद्धावान शिरडी में अनुभव करते हैं।। 38 ।। धर्म-अधर्म जिसके लक्षण हैं वह संसार अति विलक्षण है। अनात्म ज्ञानी क्षणों क्षण उन उपलब्धियों की रक्षा

करते रहते हैं।। 39।। किन्तु आत्मज्ञानियों का विषय वह नहीं है। वे आत्मस्वरूप में आश्रय लेते हैं वे नित्य मुक्त व आनन्दमय है जो सदा चिन्मयरूप है ।। 40 ।। बाबा सब के आधार हैं। उनका कैसा आसन (आधार) वह भी चांदी का सिंहासन । किन्तु बाबा भक्त-भावन थे।। 41 ।। बहुत दिनों का पुराना टाट का एक टुकड़ा बैठक (बिछावन) में था, जिस पर श्रद्धावान भक्त प्रेमवश बैठने के लिए गद्दी रख देते।। 42 ।। पीछे टेकने के लिए दीवाल, वहां भक्त तकिया रख देते। जैसा भक्तों का मनभाव वैसे ही बाबा व्यवहार करते ।। 43 ।। वास्तव में शिरडी में दिखते किन्तु वे सर्वगामी थे। यह अनुभव अपने भक्तों को साईं नित्य कराते ।। 44 ।। यद्यपि वे स्वयं निर्विकार थे, पूजा-उपचार अंगीकार करते । भक्त के भावार्थ के अनुसार सब प्रकार स्वीकार करते।। 45 ।। कोई चावर घुमाता, कोई पंखा चलाता, कोई सनया चौघड के मंगल वादन से पूजा समर्पण करते।। 46 ।। कोई हाथ-पांव प्रक्षालन करता, कोई इत्र-गंध का अर्चन करता, कोई तेरह गुणों वाला तांबूल अर्पित करता, कोई महानैवेद्य निवेदन करता ।। 47 ।। कोई दो अंगुलियों से माथे पर गंध की दो रेखाएं बनाता, जैसे शिवलिंग पर लेपकर रेखा बनाते हैं। कोई कोई कस्तूरी मिश्रित सुगंध चंदन की तरह लेपते ।। 48 ।। एक बार तात्या साहेब नूलकर का मित्र, डाक्टर पंडित नाम था, साईंबाबा का दर्शन करने शिरडी आया ।। 49 ।। शिरडी पहुंचते ही सर्वप्रथम वह मस्जिद गया, बाबा को दण्डवत करके क्षणभर के लिए शांत होकर बैठ गया ।। 50 ।। बाबा फिर उससे बोले, “यहां से दादाभट के यहां जाओ, जा इधर से जा।" बोल कर हाथ की अंगुली उस मार्ग की ओर दिखायी।। 51 ।। पंडित दादा के घर गये । दादा ने यथोचित स्वागत किया। फिर दादा बाबा की पूजा के लिए निकलते समय उन्हें चलने के लिए पूछा ।। 5 2 ।। दादा के साथ पंडित गए । दादा ने बाबा की पूजा की। तब तक, बाबा को चंदन का टीका लगाने का साहस नहीं किया गया था।। 53 ।। कोई कहीं से आया भक्त हो, कपाल पर गंध नहीं लगाने देते। केवल म्हालसापति गले में लगा देते । शेष पांवों में लगाते ।। 54 ।। पर पंडित भोले और पवित्र थे। दादा के हाथ से तस्तरी लेकर श्री साईं का मस्तक पकड़कर सुन्दर त्रिपुंड खींच दिया।। 55 ।। उनका साहस देखकर दादा के मन में अस्पष्ट भय उत्पन्न हुआ कि बाबा अत्यधिक क्रोधित होने वाले हैं। (मन में बोले) क्या साहस है।। 56 ।। ऐसा अघटित घट गया था, पर बाबा एक भी अक्षर नहीं बोले । अत्यधिक प्रसन्नचित्त दिखे। सबसे पहले (तो यह कि) क्रोध नहीं था।। 57 ।। इस तरह वह समय व्यतीत हो गया। दादा के मन में असंतोष । फिर उसी दिन सायंकाल उस विषय पर बाबा से पूछा ।। 58 ।। हम चंदन की छोटी सी बिन्दी आपके माथे पर लगाने जाते हैं आप कपाल स्पर्श नहीं करने देते । यह क्या है सुबह जो घटित हुआ ।। 59 ।। हमारे तिलक के लिए अरुचि, पंडित के त्रिपुंड के लिए प्रेम । क्या अद्भुत व्यवहार है। कोई सुसंगत तालमेल नहीं है।। 60 ।। तब चेहरे पर मुस्कान लाते हुए प्रेम से साईं दादा से ये मधुर बोल बोले । सादर ध्यान से सुनो।। 61 ।। "दादा के गुरु ब्राह्मण हैं | मैं जाति का मुसलमान हूं। फिर

भी मुझे उनका जैसा मान कर उन्होंने गुरुपूजन किया" ।। 62 ।। "मैं हृदय से पवित्र ब्राह्मण | वह जाति का अपवित्र यवन । कैसे उनका पूजन करूं। ऐसे इनके मन में शंका नहीं हुई ।। 63 ।। " इस प्रकार इन्होंने मुझे धोखा दिया। वहां मुझे उपाय विहीन कर दिया । इन्कार बोलने के लिए सचेत होता कि उन्होंने मुझे अधीन कर लिया" ।। 64 ।। यद्यपि उन्होंने उत्तर सुन लिया। किन्तु यह उन्हें केवल विनोद भरा प्रतीत हुआ। पर उन्हें मर्म तब ज्ञात हुआ जब दादा अपने घर वापस पहुंचे ।। 65 ।। | बाबा की विसंगतता से दादा के चित्त को बहुत आघात लगा था। किन्तु पंडित से वार्ता करने पर तत्काल उन्हें (बाबा की) सुसंगता का ज्ञान हो गया ।। 66 ।। घोपेश्वर के रघुनाथ सिद्ध (पुरुष) थे। “काका पुराणिक” नाम से प्रसिद्ध थे शिष्यत्व के ऋणानुबंध (पूर्व जन्म के संबंध) के कारण पंडित उनके पैरों में सन्नद्ध थे।। 67 ।। उनका अधिकांश समय काका के पास व्यतीत होता । उनको वैसा ही अनुभव हुआ। जिसके मन में जैसा भाव । वैसे ही भक्ति का प्रभाव होता है।। 68 ।। कुछ भी हो, जब तक उनके चित्त में आता तभी तक सर्वोपचार (पूजन) की अनुमति थी। अन्यथा पूजा की थाली फेंक देते, नरसिंह का रूप प्रकट कर देते ।। 69 ।। जो यह रूप क्या प्रकट करते, किसकी हिम्मत जो पास खड़ा रहता ? जब क्रोध में होते तो जान बचाकर लोग खिसक लेते ।। 70 ।। कभी अप्रत्याशित क्रोधवृत्ति होने पर भक्तों पर आग बबूला हो जाते । कभी मोम से भी मुलायम प्रतीत होते । शांति व क्षमा की मूर्ति ।। 71 ।। कभी कालाग्नि के रूप प्रतीत होते । भक्तों को तलवार की धार पर रख लेते। कभी आनन्दवृत्ति में विलास करते हुए मक्खन से भी मुलायम होते।। 72 ।। यद्यपि क्रोध से थर-थर कांपने लगते, आँखें यद्यपि गोलाई में घुमाने लगते, किन्तु अन्त में करुणा का झरना, जैसे माता अपने बच्चे के प्रति करुणामयी होती है ।। 73 ।। क्षणभर की इस (इस प्रकार की) वृत्ति के अन्त में भक्तों को बुलाने के लिए आवाज देते, बोलते, "मैं किसी के प्रति क्रोध करूं तो भी मेरे चित्त में इसका स्थान नहीं होता ।। 74 ।। माँ बच्चे को ठोकर मार दे । समुद्र नदी को उलटा कर दे । तब ही मेरे द्वारा तुम्हारी अवहेलना हो सकती है। तुम्हारा अहित नहीं कर सकता ।। 75 ।। मैं अपने भक्तों के अधीन हूं। उनके पास खड़ा रहता हूं, प्रेम का मैं सदा भूखा हूं। उनकी पुकार तुरन्त सुनता हूं ।। 76 ।।“ यह कथा भाग लिखते-लिखते एक उपयुक्त कथा स्मरण हो रही है उदाहरण के लिए श्रोताओं से कहता हूं | मन में श्रद्धा रख कर सुनें ।। 77 ।। सिद्दीक फालके नामक कल्याणवासी एक मुसलमान मक्का मदीना की यात्रा करके शिरडी आया ।। 78 ।। वृद्ध हाजी अत्तराभिमुख चावड़ी में उतरे। प्रथम नौ मास तक अप्रसन्नता रही, बाबा उनसे राजी नहीं थे।। 79 ।। उसका समय नहीं आया था । बार-बार थकान भरा आना व्यर्थ गया। उन्होंने कई प्रकार के प्रयास किये । आँखों से आँखें नहीं मिलीं।। 80 ।। मस्जिद के द्वार सबके लिए खुले थे। किसी को परदे के पीछे से कुछ नहीं करना था किन्तु उन फालके को आज्ञा नहीं थी मस्जिद पर चढ़ने की।। 81 ।। फालके का चित्त खिन्न हो गया। कैसा

अद्भुत है यह भाग्य । मस्जिद में पांव नहीं रख सकता । कैसा पाप मेरे द्वारा किया गया है।। 82 ।। अब बाबा किस योग से मेरे प्रति, आगे, प्रसन्न होंगे। यही विचार, दिनरात, हृदय-रोग की भांति फालके के मन में रहने लगा।। 83 ।। अचानक किसी ने उनसे कहा उदास मत होओ। माधवराव की कमर पकड़ लो (सहायता ले लो) मन की आस पूरी होगी।। 84 ।। पहले नंदी का दर्शन न करने से शंकर कैसे प्रसन्न होंगे। उन्हें इस मार्ग का अवलंबन अच्छा साधन लगा।। 8 5 ।। प्राग्दृष्टया यह अतिशयोक्ति श्रोताओं के मन को लग सकती है। किन्तु दर्शन के समय ऐसा अनुभव शिरडी में भक्तों को होता था ।। 86 ।। जिसके मन में बाबा के साथ शांति में संभाषण करने का होता, आरंभ में माधवराव उसके साथ जाते ।। 87 ।। कौन, कहां से, किसलिए आया है? विषय मधुर शब्दों में प्रारंभ करते, शुरूआत (प्रारम्भिक वार्ता) हो जाने पर समर्थ (श्रीसाईं) आगे बोलने को उद्यत होते ।। 88 ।। यह सब सुनकर हाजी माधवराज से दृढ़ाग्रह के साथ याचना करके, बोले “एकबार मेरी लालसा को पूरी कर दें, दुर्लभ को सुलभ बना दें" ।। 89 ।। दबाव पड़ने पर माधवराव ने मन में दृढ़ निश्चय किया कि यह कार्य कठिन हो या न हो, हर संभव प्रयास करूंगा।। 90 ।। मस्जिद जाकर, धैर्य धारण करके प्रकरण को अत्यन्त सावधानीपूर्वक उठाया, “बाबा, वह बूढ़ा बहुत कष्ट में है, उस पर उपकार करिये ना” ।। 91 ।। "वह हाजी मक्का-मदीना करके आपके दर्शन के लिए शिरडी आया है। उस पर करुणा क्यों नहीं कर रहे हैं? उसे मस्जिद में आने दीजिए" ।। 92 ।। "असंख्य लोग आते हैं मस्जिद में दर्शन करके जाते हैं निरन्तर यह चलता रहता है। वह क्यों किनारे पड़ा है ।। 93 ।।एकबार कृपादृष्टि करदो। मस्जिद में उससे भेंट होजाए।उसके मन की बात पूछलो। फिर उठके चला जाएगा।। 94 ।। "शामा, तुम नवजात शिशु हो । अभी भी तिलभर बड़े नहीं हुए हो । अल्लाह की उस पर कृपा के बिना मैं उसका क्या कर सकता हूं।। 95 ।। अल्लाहमियाँ का ऋणी हुए बिना कोई इस मस्जिद पर कैसे चढ़ सकता है । यहां फकीर की करनी रहस्यपूर्ण है उस पर मेरा वश नहीं है ।। 96 ।। बारवी (कुएं) के उस पार तक सीधे यह जो एक पगडंडी है इस पर चलेगा क्या? तुम सीधे जाकर उससे स्पष्ट पूछो।। 97 ।।“ हाजी बोले कितनी ही विकट क्यों न हो, उस पर मैं सीधे चलूंगा । किन्तु मुझे प्रत्यक्ष भेंट का अवसर दें, चरणों में निकट बैठने दें।। 98 ।। शामा द्वारा दिये गये उत्तर को सुनकर बाबा बोले और पूछो, “चार बार में चालीस हजार रुपये क्या तुम मुझे दोगे" ।। 99 ।। माधवराव, जिन्होंने यह संदेश सुनाया, से हाजी बोले क्या पूछते हैं ? मांगने पर चालीस लाख क्या नहीं दूंगा? हजार की क्या कथा?" ।। 100 ।। सुनकर बाबा बोले उससे पूछ, ”आज मस्जिद में बकरा काटने का अपना मन है, तुम्हें कहां का मांस चाहिए” ।। 101 ।। मांस से अच्छादित हड्डियां चाहिए या अण्डकोष का मन है । जाओ उस बूढ़े से पूछो, क्या निश्चित रूप से चाहता है" ।। 102 ।। माधवराव ने सब कहा, जो बाबा ने हाजी के लिए कहा था। हाजी ने दो टूक कहा, "उनमें से एक भी नहीं मुझे चाहिए" ।। 103 ।। "मुझे

कुछ देने का मन है तो मेरी एक ही आस्था है, माटी के बर्तन में रखा भांकर (रोटी) का टुकड़ा मिल जाये तो पूर्ण रूप से कल्याण हो जावे" ।। 104 ।। हाजी का यह संदेश लेकर माधवराव वापस आये । बाबा से निवेदन किया । बाबा तत्क्षण क्रोधित हो गये ।। 105 ।। माटी का बर्तन और पानी का घड़ा स्वयं उठाकर द्वार के बाहर फेंक दिया। हाथ चबाते हुए हाजी के बिस्तर के पास आ गये ।। 106 ।। दोनों हाथों से कफनी पकड़े हाजी के सामने उठा दिया बोले, "तू अपने को क्या समझता है, मेरे सामने व्यर्थ में डींग मारता है।। 107 ।। बुढ़ापे में दर्प का प्रदर्शन कर रहे हो । ऐसे ही क्या तुम कुरान पढ़ते हो । मक्का जाने से घमंड मन में आ गया है, पर तुम मुझे नहीं जानते हो" ।। 108 ।। इस प्रकार उन्हें दुर्वचन कहा । न बोलने योग्य शब्दों से प्रहार किया। हाजी बहुत हक्के-बक्के रह गये । बाबा वापस चले गये।। 109 ।। मस्जिद के आंगन में प्रवेश करने पर, उन्होंने आम बेचते हुए गांव की औरतों (मालिनी) को देखा । उनकी सभी टोकरियां खरीदकर हाजी के पास भिजवा दीं ।। 110 ।। उसी प्रकार तत्काल वापस मुड़ गये पुनः उस फालके के पास गये | पचपन रुपये जेब से निकालकर उनके हाथ पर गिन दिये ।। 111 ।। उसके बाद फिर प्रेम बढ़ गया। हाजी को भोजन के लिए निमंत्रित किया गया। दोनों ही लोगों ने पिछला बिसार दिया। हाजी अपने रंग में समरस हो गये।। 112 ।। इसके बाद वे गये फिर आये । बाबा के प्रेम में मनभर रंग गये । उसके बाद भी समय-समय पर बाबा उन्हें रुपये देते रहे ।। 113 ।। इस प्रकार एक बार साईंसमर्थ को, मेघ पर जिसकी सत्ता है उस इन्द्र की प्रार्थना करते देखा । मन आश्चर्य से भर गया ।। 114 ।। अति भयंकर समय था । समग्र आसमान अंधकार से भर गया । पशु पक्षियों में भय व्याप्त था । हवा के तेज तूफान के साथ वर्षा होने लगी।। 115 ।। सायंकाल सूर्यास्त हो गया। एकाएक तूफान उठा । हवा प्रबल प्रलयंकारी हो गयी । तूफान अनियंत्रित हो गया ।। 116 ।। उसमें मेघ की गड़गड़ाहट, विद्युत की कड़कड़ाहट, वायु का भयंकर शोर व बादलों से जोरदार वर्षा ।। 117 ।। मेघ मूसलाधार बरसने लगा । ओले प्रचुर मात्रा में गिरने लगे । ग्रामवासियों में भय (आशंका) व्याप्त हो गया। मवेशी उच्च स्वर में चिल्लाने लगे।। 118 ।। मस्जिद के छज्जे के नीचे गरीब व भिखारी एकत्र हो गये। मवेशी भी अपने बच्चों के साथ वहीं एकत्र हो गये । मस्जिद में भीड़ हो गयी।। 119 ।। चारों ओर पानी ही पानी हो गया । समस्त घास फूस बह गये। फसल खेत में ही सब भीग गयी। लोगों के मन में आश्चर्य था।। 120 ।। प्रत्येक ग्रामीण घबराया हुआ था । सभा मण्डप में आकर एकत्र हो गये। कोई मस्जिद की ओरी के नीचे रुके, सभी बाबा की मिन्नत (अनुनय) करने के लिए।। 121 ।। जोगाई, जाखाई, मरीआई, शनि, शंकर, अंबाबाई, मारुति, खंडोबा, म्हालसाई शिरडी में जगह-जगह पर थे।। 122 ।। किन्तु कठिन विपरीत समय आने पर एक भी ग्रामीणों के काम का सिद्ध नहीं होता। उनकी तो चलते, बोलते, दौड़ते संकट में, एक साईं ही सुनते ।। 123 ।। उनके लिए बकरे या मुर्गे की बलि नहीं दी जाती थी। उनके लिए धन-दौलत नहीं

खर्च की जाती । एक मात्र भाव के भूखे होते, फिर संकट को तुरंत दूर कर देते ।। 124 ।। लोगों को इस प्रकार डरा हुआ देखकर महाराज बहुत द्रवित हुए, गद्दी छोड़ कर आगे आये और मस्जिद के चबूतरे के किनारे खड़े हो गये।। 125 ।। नभ मेघ की गड़गड़ाहट से भर गया। बिजली कड़कड़ाहट के साथ चमक कर प्रकाश कर रही थी। इसके मध्य साईं महाराज खड़े होकर उच्च स्वर में आकंठ गरजे ।। 126 ।। अपने से अधिक देवों को भक्त, साधु व संत प्रिय हैं देव उनकी इच्छानुसार कार्य करते हैं। उनके लिए देवता पृथ्वी पर प्रकट होते हैं।। 127 ।। भक्तों की पुकार सुनकर देवता सहायता के लिए दौड़ पड़ते हैं बार-बार आवाज देने पर, भक्त भाव स्मरण करके ।। 1 28 ।। गर्जना पर गर्जना होती रही। आवाज आकाश में प्रति ध्वनित होती रही। मस्जिद मानो हिलने लगी। सभी के कान सुन्न हो गये।। 129 ।। उनका तारक (उच्च) स्वर, पहाड़ों में प्रति ध्वनि की भांति, मंदिर मस्जिद में प्रतिध्वनित होने लगा। तुरंत मेघ ने गर्जना बंद कर दिया । वर्षा ने बरसना बंद कर दिया ।। 130 ।। बाबा की तीव्र आवाज से संपूर्ण सभामंडप हिलने लगा । भक्त मंडली की भीड़ में जो जहां था वहीं तटस्थ खड़ा था।। 131 ।। बाबा की कार्य कुशलता रहस्यमय है। वर्षा थम गयी, वायु तुरंत नियंत्रित हो गयी, कुहरीलापन विच्छिन्न हो गया ।। 132 ।। धीरे-धीरे वर्षा में कमी आ गयी हवा का तूफान मंद हो गया, नक्षत्रगण दिखने लगे, उस समय अंधेरा छंटने लगा।। 133 ।। बाद में वर्षा पूर्णरूप से बंद हो गयी। हवा का तूफान शांत हो गया । गगन में चन्द्रमा दिखने लगा ।। सर्वत्र आनन्द व्याप्त हो गया ।। 134 ।। मानो इन्द्र को दया आ गयी। संत की वाणी का सम्मान होते दिखा । बादल कई हिस्सों में बंट गये । तूफान शांत हो गया ।। 135 ।। वर्षा हर प्रकार से शांत हो गयी, वायु मंद-मंद बहने लगी, आकाश की गड़गड़ाहट बंद हो गयी। पशु पक्षियों को धैर्य हो गया।। 136 ।। घरों की ओरों को छोड़कर मवेशी अपने बच्चों के साथ बाहर आ गये, निर्भय मन घूमने लगे। पक्षी गगन में उड़ गये ।। 137 ।। पूर्व के भयंकर ढंग देखकर बाबा का उपकार मानते हुए सभी लोग अपने-अपने घर गये । मवेशी सुस्थिर मन होकर तितर-बितर हो गये ।। 138 ।। इस प्रकार थे साईं दया के पुतला | उनका भक्तों के प्रति अतिस्नेह इतना मधुर था जैसे माँ का बच्चे के प्रति प्रेम । उनके माधुर्य का कितना गुणगान करूं ।। 139 ।।अग्नि के ऊपर भी उनको ऐसी ही सत्ता थी । इस प्रसग में सक्षिप्त कथा श्रोता सादर मन लगाकर सुने । शक्ति की अपूर्वता को जानें ।। 140 ।। एक बार मध्यान्ह का समय था। धूनी प्रबल होकर जलने लगी। कौन रहेगा वहां निकट । ज्वाला भयंकर आवाज के साथ उठने लगी।। 141 ।। अग्नि प्रचंडता से बढ़ने लगी। उसकी शिखा छत की लकड़ी को छूने लगी। ऐसा प्रतीत हुआ कि मस्जिद क्षणभर में नष्ट हो जायेगी।। 142 ।। फिर भी बाबा का मन निश्चल था । सकल लोग चिन्ताग्रस्त ठगे से अंगुली तोड़ते रहे, बाबा की शिकस्त है क्या? ।। 143 ।। एक बोला “वो, पानी लाओ,” दूसरा बोला "कौन डालेगा? डालते हुए सिर पर चोट लग सकती है कौन उस स्थान पर जायेगा ।।

144 ।।" यद्यपि सबके मन अधीर थे किसी में पूछने की हिम्मत नहीं थी। फिर बाबा अस्थिर हो गये सटके पर हाथ रखा ।। 145 ।। ज्वाला को भड़कते देख हाथ में सटका पकड़कर चोट पर चोट मारने लगे, बोलते हुए, "हटो वापस जाओ" ।। 146 ।। धुनी से एक हाथ की दूरी पर स्थित एक खंभे पर आघात करते ज्वाला को देखते-देखते "ठंडी हो, ठंडी हो" ।। 147 ।। प्रत्येक आघात से नीची होती हुए ज्वाला नरम पड़ने लगी । भय समूल समाप्त हो गया । धूनी शांत हो गयी।। 148 ।। ऐसे हैं साईं संतवर, ईश्वर के दूसरे अवतार, उनके पांव पर सिर रखते ही कृपा कर देते हैं।। 149 ।। श्रद्धा भक्ति से युक्त होकर जो इस अध्याय का नित्य पारायण करेगा वह स्वस्थ चित्त होकर आपदा निर्मुक्त हो जायेगा ।। 150 ।। अधिक क्या मैं कथन करूं। अन्तःकरण की शुद्धि करो, नियम व निष्ठा से साईं परायण हो जाओ, ब्रह्म सनातन प्राप्त होंगे।। 151 ।। अपूर्व इच्छित काम पूरे होंगे। अंतःकरण पूर्णरूप से इच्छा विहीन होगा । दुर्लभ सायुज्य धाम प्राप्त होगा। अखंड राम लाभ होगा।। 152 ।। अतः जिन भक्तों के मन में परमार्थ सुख भोगने की इच्छा है, वे इस अध्याय को आदरपूर्वक बार-बार पढ़े।। 153 ।। चित्त की वृत्तियां शुद्ध होंगी। कथा सेवन से परमार्थ की प्रवृत्ति होगी। इष्ट की प्राप्ति व अनिष्ट की निवृत्ति होगी। बाबा की सिद्धि होगी, पढ़कर ।। 154 ।। हेमाडपंत साईं की शरण में । अगला अध्याय अति पावन । गुरु शिष्य की महिमा। गुरु पुत्र द्वारा घोलप-दर्शन ।। 155 ।। शिष्य की कैसी भी कठिनाई हो निज गुरुदेव को त्यजना नहीं चाहिए । साईं इसका प्रत्यक्ष अनुभव देकर भाव को दृढ़ बनाते हैं ।। 156 ।। जो-जो भक्त उनके पांव पर आये प्रत्येक को अद्भुत दर्शन कराया। किसी को कुछ किसी को कुछ। सब के विश्वास को दृढ़ किया ।। 157 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" में "श्री साईं महिमा वर्णन" नामक ग्यारहवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय बारहवां (श्री संत घोलप- रामदर्शन) ।।

।। श्री गणेश को ।नमन। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन।।

जय जय सद्गुरु साईंनाथ, चरणों पर माथा रखकर नमन करता हूं। अखण्ड एकस्वरूपता निर्विकार जो आप हैं, शरणागत पर कृपा करें।। 1 ।। सच्चिदानंद आप आनन्द के उद्गम हैं। संसार में दुःखी जनों के लिए सुख प्रदान करने वाले हैं। अद्वैत का बोध कराकर मंदबुद्धि के भी द्वैत भाव को समाप्त करते हैं।। 2 ।। गगन जैसे विस्तारित है सम्पूर्ण जगत में पूर्णरूप से आप ही हैं, आपके उस स्वरूप का रेखांकन व अनुभव करने वाले भाग्यशाली हैं।। 3 ।। साधु का संरक्षण, असाधु का समूल निर्दलन, इसी उद्देश्य के लिए ईश्वर का अवतरण होता है। संत इससे भिन्न विलक्षण है।। 4 ।। संतों के लिए साधु व असाधु समान हैं। एक बड़ा है एक छोटा उनका मन यह नहीं जानता। दोनों एक समान हैं।। 5 ।। ईश्वर से भी संत बड़े हैं असाधु को पहले सही मार्ग पर लाते हैं जिनका मन दीनों के लिए अत्यधिक तिल-तिल टूटता रहता है।। 6 ।। भवसागर के लिए वे "अगत्स्य" मुनि हैं, अज्ञानरूपी अंधकार के लिए वे सूर्य हैं। परमात्मा इन्हीं में बसते हैं। वास्तव में, वे उन से अभिन्न हैं।। 7 ।। इन्हीं में मेरे साईं हैं, भक्तों के कार्य के लिए अवतार लिया है। ज्ञान राजा के अवतार हैं, कैवल्य-तेज में अधिष्ठित हैं।। 8 ।। जीवमात्र के लिए अत्यन्त ममता है। अन्यत्र अत्यन्त अनासक्तता है। कहीं सत्ता, कहीं विरक्तता, सर्वत्र निर्वैर समता का भाव रखते।। 9 ।। जिनमें शत्रु-मित्र भाव नहीं है, राजा रंक के लिए एक भाव, ऐसे जो साईं महानुभाव हैं उनके प्रभाव को सुनो।। 10 ।। संत अपने संचित पुण्य को, भक्त के प्रेम से खिंचे खर्च करते रहते हैं। भक्त के लिए फांदते हुए पहुंचते समय उन्हें पहाड़ या घास के जंगल के अवरोध नहीं दिखते।। 11 ।। एक अज्ञानी बिना जाने बोलता है, "परमार्थ क्या है? किसके लिए है? बेकार है," स्त्री, पुत्र, धन की कामना में लगा रहता है। इन बेचारे अज्ञानियों को छोड़ो।। 12 ।। ऐसे अज्ञानी, निष्कपट लोगों के प्रति भी देव कृपा करते हैं इनको प्रेम करते हैं। देव से विमुख हो जो उनसे अलग हो जाते हैं, वे अभिमान में जलते हैं।। 13 ।। अज्ञानियों के प्रति करुणावश एकाद को अपने संरक्षण में लेकर उनमें आस्था उत्पन्न करते हैं जैसे गहरे कुएं से पानी निकलना | ज्ञानी का

गुरूर निष्फल होता है।। 14 ।। अपने को पंडित मानने वाले मूर्ख शुष्क अभिमान में फूले हुए भक्ति पंथ की अवहेलना करते हैं। उनकी संगति न करो।। 15 ।। न तो वर्णसंकर का विद्रोह, न ही वर्णाभिमान, न स्वांग, न वर्णाश्रम धर्म की कठोरता, न ही पाखंड पांडित्य चाहिए ।। 16 ।। वेद वेदांत में पारंगत ज्ञान के गर्व में मदोन्मत्त भक्तिमार्ग में आड़े आते हैं। उनकी सुरक्षा का संयोग नहीं दिखता ।। 17 ।। अज्ञानी श्रद्धा प्राप्त करके संसार के भय से सीधे मुक्त हो जाता है। किन्तु इन शास्त्रपंडितों की परेशानी कब कौन हल कर सकता है? ।। 18 ।। संतों के चरणों में विश्वास करने से अज्ञानियों का अज्ञान नष्ट हो जायेगा, ज्ञानभिमानियों का भ्रम बिना प्रयास समाप्त हो जायेगा, सद्भाव की उनमें उत्पत्ति होगी ।। 19 ।। ऐसे एक बार अच्छे भाग्य की व्यवस्था से कैसी विचित्र घटना घटी । एक कर्मकाण्डी के भाग्य में साईं की अलभ्य भेंट लिखी थी।। 20 ।। उसका संकल्प अलग था । योगायोग निराला होता है। उसे शिरडी आने का लाभ हुआ। निजगुरु की दृष्टि पड़ी।। 21 ।। यह अति रसमय कथानक है, जो गुरु माहात्म्य को प्रकाशित करता है। इसे अवश्य श्रवण करें। गुरु भक्तों के प्रेम का प्रदर्शन होता है इससे ।। 22 ।। नासिक क्षेत्र के एक निवासी, कर्मकाण्डी, पवित्र अग्निहोत्री, उपनाम "मुले" पूर्वजन्म के पुण्यफल से एकबार शिरडी आये ।। 23 ।। पूर्वसंचित बल न हो तो शिरडी में कोई एक पल नहीं रुक सकता है। किसी का कितना ही प्रबल निश्चय हो बाबा के आगे किसी की चपलता नहीं चलती।। 24 ।। कोई कहे, “मैं जाऊँ मनमाने वहां रहूं।” यह उसके अधीन नहीं है। सबकुछ पराधीन है।। 25 ।। ऐसे "मैं, मैं” कहते कितने निश्चय करते थक गये । साईं एक स्वतंत्र देवता हैं, दूसरों का अहंकार खत्म हो जाता है।। 26 ।अपनी पारी आये बिना, बाबा का स्मरण अपने को नहीं होगा, कानों में उनके गुण का वर्णन नहीं पड़ेगा। दर्शन की प्रवृत्ति कैसे होगी?।। 27 ।। साईं समर्थ के दर्शन के लिए जावें, कितनों की ही ऐसी कामना रही । उनका योग नहीं आया साईं के निर्वाणपर्यंत ।। 28 ।। बाद में जाऊंगा, जाऊंगा, कहते यह दीर्घसूत्रता आड़े आने से कितने ही आते-आते रह गये, बाबा निर्वाण को प्राप्त हो गये।। 29।। आज कल करते रहे आखिर प्रत्यक्ष भेंट का अवसर निकल गया । इस प्रकार पश्चाताप हुआ । अन्त तक दर्शन नहीं पा सके।। 30 ।। ऐसे ही लोग जिनकी इच्छा अपूर्ण रह गयी वे आदरपूर्वक कथा का श्रवण करें, मक्खन दूध की प्यास पूरी होगी। एक विश्वास रखें ।। 31 ।। अच्छे भाग्य से कोई गया, दर्शन व स्पर्श से चित्त को संतुष्ट किया, क्या वह यथेच्छ रुक सका । रुकने के लिए बाबा की इच्छा ।। 32 ।। अपने पैरों पर (शिरडी अपनी इच्छा से) कोई नहीं जा सका, रुकने को बोलकर कर कोई नहीं रुक

सका । आज्ञा होती तभी रुक सकते। “जाओ” बाबा के बोलने पर वापस हो लेते ।।। 33 ।। एक बार काका महाजनी मुम्बई से शिरडी गये आठ दिन शिरडी में रहकर वापस होने की उनके मन में इच्छा थी ।। 34 ।। चावडी का सुन्दर श्रृंगार किया गया था, बाबा के समक्ष पालना टंगा था । कृष्ण जन्म का उत्सव किया जा रहा था । भक्तजन आनन्द से नाच रहे थे।। 35 ।। गोकुलाष्टमी के उत्सव को आंखों से देखकर आनन्दित होने के लिए, ऐसी मौज की उपयुक्त बेला में, काका शिरडी आये ।। 36 ।। आरंभ में बाबा का दर्शन करने गये । बाबा ने उनसे पूछा, "अपने घर वापस कब जा रहे हो?" काका का मन विस्मित हो गया।। 37 ।। भेंट करते समय यह प्रश्न क्यों? काका विस्मित हो गये। उनका मन तो शिरडी में आठ दिन रहने का था ।। 38 ।। जब बाबा ने स्वयं प्रश्न किया, काका को उत्तर देने के लिए बाबा ने सोचवाया जो उत्तर दिया, उत्तम था ।। 39 ।। "जब बाबा आज्ञा देंगे, तब मैं घर वापस जाऊँगा” । प्रत्युत्तर में काका के यह बोलते ही (बाबा) बोले “कल जाओ न" ।। 40 ।। आज्ञा को पूर्ण सम्मान से मानते हुए बाबा का अभिनन्दन करके उसी दिन प्रयाण (वापसी की यात्रा) कर दिया, अष्टमी सरीखे पर्व होने पर भी।। 41 ।। बाद में जब वे गांव पहुंचे, कार्यस्थान (दुकान) पर जाकर देखते हैं कि उनका मालिक उनके मार्ग की प्रतीक्षा कर रहा है कि काका कब वापस आते हैं।। 42 ।। मुनीम एकाएक बीमार हो गया था मालिक को काका की आवश्यकता थी। काका के तुरंत वापस आने के लिए शिरडी के लिए पत्र भेज दिया था।। 43 ।। काका के वहां से चल देने पर डाकिये ने पूछताछ की, फिर वह पत्र वापस भेज दिया गया, काका को घर पर मिला ।। 44 ।। यह जो जाना उसके विपरीत एक छोटी कहानी सुनो । भक्त अपना अभीष्ट नहीं समझते साईं उसे स्पष्टतः जानते हैं।। 45 ।। एक बार नासिक का प्रख्यात वकील, नाम था भाऊ साहेब धुमाल, जो बाबा का प्रिय भक्त था, केवल दर्शन के लिए आया ।। 46 ।। खड़े-खड़े दर्शन करके पावों में नमन करके ऊदी व आशीर्वचन लेकर वापस जाने का सोचा था।। 47 ।। वापसी के मार्ग पर निफाड पर घुमाल को उतरना था वहां एक मुकदमें में उनका जाना आवश्यक था।। 48 ।। यद्यपि यह उनकी योजना थी। बाबा उचित अनुचित का ज्ञान रखते हैं, वापस जाने की आज्ञा मांगी। बाबा ने वह उन्हें नहीं दी।। 49 ।। एक सप्ताह रोक लिया आज्ञा देने से स्पष्ट इंकार कर दिया। सुनवाई का कार्य टलता रहा, इस प्रकार तीन बार हुआ।। 50 ।। एक सप्ताह से कुछ दिन अधिक धुमाल को रोका गया, यहां मुकदमें की तारीख पर न्यायाधीश अस्वस्थ हो जाते ।। 51 ।। जीवन में कभी भी ऐसा नहीं हुआ था जैसा असह्य पेट का दर्द उठता था । मुकदमा अपने आप आगे बढ़ता

गया । समय का सार्थक उपयोग हुआ।। 52 ।। इस तरह धुमाल को साईं का संग मिला। पक्षकार का चिंता हरण हुआ । साईं पर विश्वास करने से बिना प्रयास सब कुछ हो गया ।। 53 ।। बाद में फिर उचित समय पर धुमाल को आज्ञा मिली। सभी कार्य संतोषजनक सम्पन्न हो गये। साईं का खेल रहस्यपूर्ण है।। 54 ।। मुकदमा चार मास तक चला | चार न्यायाधीश बदल गये। पर आखिरी में आरोपी निर्दोष छूट गया।। 55 ।। एक बार एक भक्त प्रवर नाना साहेब निमोणकर थे। कैसे उनकी पत्नी का पक्ष बाबा ने लिया उसे सुनो।। 56 ।। निमोण गांव के "वतनदार" थे न्यायाधीश का भी कार्यभार था, जो सरकार द्वारा सौंपा गया था । बड़े प्रभावशाली थे।। 57 ।। माधवराव के ज्येष्ठ चाचा थे, वयोवृद्ध पूज्य व श्रेष्ठ थे। पत्नी भी बहुत एकनिष्ठ भक्त थी, साईं ही उनके इष्ट देव थे।। 58 ।। पैतृक गांव छोड़कर शिरडी में दोनों आकर रहने गये । साईं के चरणों में भाव रखकर सुखपूर्वक रहने लगे।। 59 ।। ब्रह्ममुहूर्त में उठकर प्रातः स्नान पूजन करके, नित्य कांकड आरती करने के लिए चावड़ी तक वे आते।। 60 ।। इसके बाद स्वयं स्तोत्र बोलते हुए, नाना बाबा के पास रहते । सूर्यास्त होने तक बाबा की सेवा करते रहते ।। 61 ।। लेंडी तक बाबा को ले जाते, मस्जिद तक वापस लाते, प्रेम भरे मन से जो जो होता सेवा करते ।। 62 ।। बाई भी अपनी क्षमता भर, बाबा की चाकरी करती। दिनभर अति प्रेम पूर्वक उनसे (बाबा) कराते।। 63 ।। मात्र स्नान-पान के लिए, स्वयं खाना बनाने व खाने के लिए तथा रात्रि में शयन के लिए अपने स्थान पर आतीं।। 64 ।। बाकी अवशेष सभी समय दुपहरी तिपहरी सायं व सुबह यह प्रेमी दंपति बाबा के साथ रहते ।। 65 ।। इस प्रकार दोनों की सेवा का वर्णन करने से ग्रंथ का बहुत विस्तार हो जायेगा । प्रस्तुत विषय से संबंधित भाग ही बोलूंगा, अब सुनो।। 66 ।। बाई को बेलापुर जाना था वहां लड़का थोड़ा बीमार था। पति से विचार करके वहां जाने की तैयारी करने लगी।। 67 ।। तत्पश्चात नित्य क्रमानुसार बाबा के विचार लिये । बाबा की स्वीकृति होने पर पति को बता दिया ।। 68 ।। अतः इस प्रकार बेलापुर जाना निश्चित हो गया। बाद में नाना बोले, “दूसरे दिन वापस आना है" ।। 69।। नाना के ऐसा कहने के कुछ कारण थे अतः अपनी पत्नी से बोले, “जाओ किन्तु वापस आ जाओ।” बाई का मन दुःखी हो गया।। 70 ।। दूसरे दिन पोला की अमावस्या थी जो वह वहां व्यतीत करना चाहती थीं। बाई के मन की यह उत्कट इच्छा थी। किन्तु नाना का मन नहीं था ।। 71 ।। इसके अतिरिक्त अमावस्या का दिन था। गमनागमन करने के लिए अशुभ । बाई गहन समस्या में पड़ गयीं। कैसे निदान होगा।। 72 ।। बेलापुर गये बिना उनका मन संतुष्ट नहीं होगा। पति के मन को दुःखी नहीं

करना है। कैसे फिर आज्ञा का उल्लंघन करें।। 73 ।। फिर भी इस तरह तैयारी कर ली । बेलापुर जाने के लिए निकली । बाबा की सवारी लेंडी के लिए निकली । उनको नमस्कार किया।। 74 ।। कोई गांव के बाहर जाता है, निर्विघ्नता प्राप्त करने के लिए देवता के आगे माथा टेकता । यही शिरडी की भी प्रथा थी।। 75 ।। किन्तु वहां के देव साईं थे। जाने की कितनी ही शीघ्रता हो, निकलते समय उनके चरणों में सिर लगाते ।। 76 ।। उसी के अनुसार साठे-वाडा के सामने बाबा क्षण भर के लिए खड़े हुए बाई ने चरण वंदना कर ली।। 77 ।। नाना साहेब निमोणकर आदि सभी बड़े छोटे वहां दर्शन के लिए तत्पर बाबा को नमन किये ।। 78 ।। इस समस्त मंडली को देखते, विशेषतः नाना के समक्ष बाबा जो बाई से बोले, उसकी समयोचितता की तत्वता जानो।। 79 ।। चरणों पर माथा रखकर निकलने के लिए आज्ञा मांगी। "अच्छा जाओ, शीघ्र जाओ, चित्त को स्वस्थ रखो" ।। 80 ।। जाने के बाद चार दिन बेलापुर में सुख से रहो, सबसे बातचीत करके शिरडी तुम वापस आना" ।। 81 ।। ये बाबा के वचन बाई को अनपेक्षित शांति प्रदान किये। निमोण को संकेत मिल गया। दोनों संतुष्ट हो गये।। 82 ।। सारांश यह कि हम योजना बनाते हैं। कुछ भी उन्हें अविदित नहीं है।। 83 ।। भूत-भविष्य-वर्तमान का ज्ञान उन्हें हथेली पर अम्लक की भांति है। उनकी आज्ञा के अनुसार व्यवहार करने वाले भक्त सुख संपन्न होते हैं।। 84।। अतः अब पूर्व के अनुक्रम में मुख्य कथा निरूपण प्रारंभ करते हैं। कैसे "मुले" पर कृपा करके गुरु के दर्शन का लाभ कराया।। 85 ।। श्रीमंत बाबा साहेब बुट्टी से भेंट करने हेतु (शिरडी) आये, यह सोचकर कि तुरंत वापस हो लेंगे।। 86 ।। यद्यपि ऐसा उनका उद्देश्य था, बाबा का उनके लिए अन्य संकेत था । जो चमत्कार उन्होंने इंगित किया, सावधानी पूर्वक मन लगाकर सुनें ।। 87 ।। श्रीमंत से भेंट हो गयी, मंडली मस्जिद के लिए चल पड़ी, मुले की भी इच्छा जाग्रत हुई, मंडली के साथ चल पड़े ।। 88 ।। मुले ने षट शास्त्रों का अध्ययन किया था ज्योतिर्विद्या में अति प्रवीण थे, सामुद्रिक विद्या में भी वैसे ही पूर्ण थे। दर्शन होने पर आनन्दित हुए ।। 89।। पेड़ा, बताशा, बर्फी व नारियल और संतरे आदि अनेक फल का अर्पण बहुत अधिक मात्रा में पवित्र भक्तजनों द्वारा बाबा को प्रेम से किया जाता था।। 90 ।। इसके अतिरिक्त वहां गांव की औरतें अमरूद, केला व ईख लेकर आतीं। बाबा मनमौज में जेब से पैसे देकर खरीदते ।। 91 ।। अपना पैसा खर्च करते, आम की टोकरियां खरीदते, अत्यधिक मात्रा में केला मंगाते और इच्छा भर भक्तों में बांटते ।। 92 ।। एक एक आम लेकर दोनों हाथों की हथेलियों के अंदर लेकर मसलकर नरम बनाते फिर भक्तों के लिए देते।। 93 ।। आम को

ओंठों तक लाने के बाद रस एक ही बार में निकल आता है जैसे रस से भरा पात्र हो। छिलका व गुंठली फेंक दी जाती।। 94 ।। केला (खिलाने) की अपूर्व शैली थी। भक्तों का अंदर का भाग खाने को देते, बाबा के सेवन के लिए उसका छिलका होता । उनका खेल कितना अद्‌भुत था।। 95 ।। ये सभी फल वहां प्रत्येक भक्त को प्रसन्नचित्त होकर बाबा अपने हाथों से बांटते, स्वयं एकाध ही चखते।। 96 ।। इसी परिपाटी के अनुक्रम में केवल भक्तजनों के लिए केले की टोकरी खरीद कर बाबा उन्हें बांट रहे थे।। 97 ।। शास्त्री बुवा को गहन आश्चर्य हुआ | बाबा के चरण देखने है चाहे । ध्वज व वजांकुश रेखा देखने की मन में चाह हुई ।। 98 ।। तब वहां निकट ही भक्त काका साहेब दीक्षित थे। उन्होंने चार केले उठाये बाबा के हाथ में रख दिये।। 99 ।। किसी ने बाबा से बहुत विनय की, "बाबा ये गुले शास्त्री इसी क्षेत्र के हैं पुण्य के बल पर चरणों में गिरने आये हैं वह प्रसाद फल इन्हें दे दें" ।। 100 ।। कोई विनय करे या विनय न करे बाबा के मन मौज आये बिना वे किसी को कुछ नहीं देते थे , तब वे क्या करते? ।। 101 ।। केला नहीं मुले तो हाथ मांग रहे थे। उसी हेतु अपना हाथ पसारा था । बाबा उन्हें ध्यान नहीं दिये। सबको प्रसाद बांटते रहे ।। 102 ।। मुले बाबा से विनती करते । फल नहीं हाथ देने को मांगते, इन्हें देखकर सामुद्रिक बतायेंगे । बाबा ने उन्हें हाथ नहीं दिया।। 103 ।। फिर भी मुले आगे सरके । सामुद्रिक के लिए हाथ बढ़ाया। बाबा ने उनके आगे बढ़े हुए सिर को नहीं देखा । जैसे कि जो हो रहा है उससे अनभिज्ञ हैं।। 104।। मुले के बढ़े हुए हाथ पर वे उन चार केलों को रख दिये, बैठने के लिए कहा, किन्तु मुले के हाथ में अपना हाथ नहीं दिया ।। 105 ।। आजन्म ईश्वर की सेवा में जिसकी काया क्षीण हो गयी हो उसे सामुद्रिकी से क्या लेना देना । सद्‌भक्तों के माँ-बाप श्री साईंराया की सभी इच्छाएं पूर्ण थीं।। 106 ।। सामुद्रिक के लिए उदासीन वृत्ति देखकर शास्त्री बुवा ने हाथ खींच लिए तथा बाबा के प्रति बावलापन छोड़ दिया।। 107 ।। कुछ समय शान्त होकर बैठे, मंडली के साथ वाड़ा चले गये। स्नान करके "सोवाल" ओढ़कर सरलता से अग्निहोम प्रारंभ कर दिया।। 108 ।। इधर बाबा नित्यक्रम के अनुसार लेंडी के लिए निकले । बोले, "अच्छा, आओ गेरू लेते हैं। है हम भगवा वस्त्र पहनेंगे" ।। 109।। सभी को आश्चर्य हुआ, बाबा गेरू का क्या करेंगे, जो गेरू के लिए पूछने लगे, आज क्या स्मरण हो आया ।। 110 ।। बाबा की वाणी ऐसी ही संदिग्ध होती। कोई क्या अर्थ निकालता ? किन्तु आदर से स्मृति में संचित करके, कई प्रकार के अर्थ निकाले जा सकते थे।। 111 ।। संतों के ये जो बोल हैं कभी व्यर्थ नहीं होते । सदैव अर्थभरित व गहरे होते हैं। कौन उनका मूल्यांकन कर सकता है।। 112 ।।

पहले विचार, फिर उच्चारण यह नित्य का व्यवहार है। बोलने के बाद आचरण होता है। संत सचमुच आदरणीय हैं।। 113 ।। इस सर्वमान्य सिद्धान्त के अनुसार संतवचन कभी सारहीन नहीं होते। ध्यान केन्द्रित करके विचार करने पर उचित समय पर गहरे महत्व प्रकाशित होते हैं।। 114 ।। इस प्रकार, इधर बाबा वापस आ गए । निशानी व शिंग बजने लगे। बापू साहेब जोग ने तत्काल मुले को सुझाव दिया ।। 115 ।। "आरती का समय आ गया है क्या मस्जिद को आ रहे हैं?" शास्त्री बुवा को, सोवाला के नियमों से बंधे होने के कारण, अवसर उलझन भरा प्रतीत हुआ।। 116 ।। फिर प्रत्युत्तर में बोले, "तीसरे प्रहर दर्शन करूंगा " जोग फिर उस समय आरती की तैयारी करने लगे।। 117 ।। इधर बाबा आ चुके थे। अपने आसन पर बैठ कर जब बात करने लगे तब सब (भक्तों) की पूजा अर्पित हुई। उस समय की आरती की व्यवस्था हो गयी थी।। 118 ।। तुरंत बाबा बोले, "उस नवागंतुक ब्राह्मण से दक्षिणा लाओ " बापू साहेब बुट्टी उसी क्षण दक्षिणा मांगने गये ।। 119 ।। थोड़ी देर पहले ही मुले स्नान करके, सोवाला वस्त्र धारण करके आसन लगाकर शांतचित्त बैठे थे ।। 120 ।। उसी समय संदेश सुनकर मुले के अन्तरमन में विभ्रांति पैदा हुई, "मैं निर्मल अग्निहोत्री, दक्षिणा किसलिए मैं दूं ।। 121 ।। बाबा महान संत होंगे, किन्तु मैं क्या उनसे बंधा हूं। मुझसे दक्षिणा क्यों मांगते हैं" उनका मन खिन्न हो गया ।। 122 ।। साईं सरीखे संत दक्षिणा मांगे, लखपति व्यक्ति संदेश लेकर आये । मुले का मन शंकालु था, फिर भी दक्षिणा अपने साथ ले लिया ।। 123 ।। और एक संशय उनके मन में था। प्रारंभ किये जा चुके कर्म को अपूर्ण छोड़कर मस्जिद तक कैसे जावें? न ही इंकार करते बना ।। 124 ।। संशयात्मकता में निश्चितता नहीं होती। चित्त सदा दोलायमान रहता है। उनकी गति न इधर की थी न उधर की । उनकी स्थिति त्रिशंकु के जैसी थी।। 125 ।। तथापि इसके बाद विचार किया । जाने का निर्णय लिया । सभामंडप के अंदर गये। दूरी पर खड़े रहे।। 126 ।। मैं "सोवल" (पवित्र) हूं मस्जिद "ओवल" (अपवित्र) है बाबा के पास कैसे जाऊँ? दूर रहकर अंजली बांधकर पुष्पांजली फैंकते रहे ।। 127 ।। उनकी दृष्टि के सामने ही ऐसा बड़ा चमत्कार हुआ । बाबा गद्दी पर से अदृश्य हो गये। वहां गुरुवर "घोलप" दिखने है लगे ।। 128 ।। अन्य लोगों को नित्य के साईं समर्थ, किन्तु मुले को घोलपनाथ दिखे, जो बहुत पहले ब्रह्मीभूत हो चुके थे। मुले बहुत आश्चर्यचकित हुए ।। 129 ।। यद्यपि गुरु वस्तुतः समाधिस्थ हो चुके थे वही उस समय दृष्टिगोचर होने लगे। इससे मुले अति विस्मित हुए । वैसे ही मन सशंकित था ।। 130 ।। स्वप्न कहें, किन्तु निद्रा में नहीं थे। जागृत हैं फिर गुरु कैसे बैठे हो सकते हैं ? उनकी बुद्धि

इतनी संभ्रमित हो गयी कि क्षणभर के लिए उनकी वाणी अवरुद्ध हो गयी।। 131 ।। स्वयं अपने को चिकोटी काटी । बोले, "यह सब झूठ नहीं हो सकता। मेरे मन में निरर्थक संशय क्योंकर । मैं यहां सब के साथ हूं" ।। 132 ।। मुले मूलतः घोलप-भक्त थे। यद्यपि बाबा के विषय में सशंकित थे किन्तु बाद में शुद्ध मन से उनके अधीन हो गये ।। 133 ।। स्वयं वर्गों में अग्रणी ब्राहमण, वेद वेदांग शास्त्र संपन्न किन्तु मस्जिद में घोलप का दर्शन करके विस्मित रह गये।। 134।। फिर ऊपर चढ़ गये। निजगुरु का चरण वंदन किया। हाथ जोड़कर खड़े रहे। वाणी मौन पड़ गयी।। 135 ।। घोलपस्वामी को अपनी आँखों से भगवा वस्त्र व भगवा छाटी में देखकर मुले ने तुरंत दौड़कर पांव पकड़ कर आलिंगन कर लिया ।। 136 ।। उच्चवर्ण के होने का अभिमान टूट गया, आँखों में ज्ञान का अंजन भर गया। अपने निरंजन गुरु से भेंट होते ही उन्हें ज्ञान का खजाना मिल गया।। 137 ।। विकल्प वृत्ति समाप्त हो गयी। बाबा के प्रति प्रीति सुदृढ़ हो गयी। आधे मुंदे नेत्रों से साईं पदों को देखते रहे।। 138 ।। अनन्त जन्मों के सुकृत फलित हुए । साईं के पांवों पर दृष्टि पड़ गयी । चरणतीर्थ में स्नान करने से मानो भाग्योदय हो गया ।। 139 ।। सभी को आश्चर्य हो रहा था कि एकाएक यह क्या हो गया। फूल फेंकते-फेंकते पांवों में सर क्यों रख दिया ।। 140 ।। अन्य लोग बाबा की आरती बोलते रहे मुले घोलप का नाम जोर-जोर से बोल रहे थे। उच्च स्वर में उनके प्रेम के रंग में रंगे हुए उन्हीं की आरती गा रहे थे।। 141 ।। "सोवाला" की महानता का दंभ छंट गया। स्पर्श व अस्पर्श की स्फूर्ति छंट गयी। साष्टांग दण्डवत हो गये आँखें आनन्द से बंद हो गयीं।। 142 ।। उठने पर जब आँखें खुली, घोलप स्वामी अदृश्य हो गये थे। उस स्थान पर साईं समर्थ दक्षिणा मांगते दिखे ।। 143 ।। बाबा की आनन्दमूर्ति और उनकी अतर्क्य शक्ति देखकर चित्तवृत्ति तटस्थ हो गयी। मुले अपनी स्थिति ही भूल गये ।। 144 ।। इस प्रकार महाराज का कौतुक देखकर उनकी भूख समाप्त हो गयी। अपने गुरु का दर्शनसुख पाकर मुले बहुत हर्षित हुए थे।। 145 ।। उनका मन संतुष्ट हो गया । बाबा के समक्ष साष्टांग लेट गये, आनन्द के आँसू भर आये । मस्तक चरणों का वंदन करने लगे।। 146 ।। दक्षिणा जो होती थी दिया । पुनःश्च चरणों पर माथा रखा । नयनों में प्रेम के आँसू आ गये । शरीर रोमांचित हो गया ।। 147 ।। कंठ भावातिरेक से रुंध गया । मन में अष्टभाव भर गया, बोले, “मन का संशय समाप्त ही नहीं हो गया बल्कि गुरु से भेंट भी हो गयी ।। 148 ।। बाबा की अलौकिक लीला देखकर मुले के साथ सभी जन प्रेम व आश्चर्य के भाव से विहवल हो गये। तब अनुभव होने पर गेरू का अर्थ समझ में आया ।। 149 ।। वही महाराज वही

मुले । इस समय कैसा आश्चर्य है कौन जाने महाराज का ज्ञान प्रदान करने का उपाय, उनकी अगाध लीला।। 150 ।। ऐसे ही एक ममलतदार थे श्री साईं का दर्शन करने के लिए साथ में मित्र डाक्टर को लेकर शिरडी आने के लिए चल पड़े।। 151 ।। डाक्टर जाति के ब्राह्मण, राम के उपासक, आचारवान, स्नान संध्या संपन्न आचरण, धार्मिक नियमों के प्रति रुचि रखने वाले।। 152 ।। साईंबाबा मुसलमान । अपने आराध्य जानकी जीवन (राम)। पहले ही मित्र को सचेत कर दिया था। मैं नमन नहीं करूंगा।। 153 ।। मुलसमान के पांव का नमन करने को मन नहीं करता। इसलिए शिरडी जाने के लिए प्रारंभ से ही शंकित था।। 154 ।। "पांव पड़ो" ऐसा कोई भी आग्रह नहीं किया जायेगा जो दुराग्रह हो । जाने के लिए ऐसी मति अवधारित मत करो । मन को अवधारणा विहीन कर लो।। 155 ।। "मुझे नमस्कार करो" बाबा भी नहीं कहेंगे । जब मामलतदार ने आश्वासित किया तब जाने के लिए स्वीकृति हुई।। 156 ।। अपने मित्र के वचन मानकर ऐसा दृढ़ निश्चय किया । सब विकल्प दूर करके दर्शन करने के लिए निकल पड़े।। 157 ।। किन्तु आश्चर्य कि जब शिरडी आये दर्शनार्थ मस्जिद गये। आरंभ में उन्होंने ही साष्टांग वंदन किया। मित्र बहुत विस्मित हुए ।। 158 ।। तब उन्होंने उनसे पूछा, किया हुआ निश्चय कैसे भूल गये । मुसलमान को कैसे दण्डवत किया, वह भी मुझसे पहले ।। 159।। फिर उस डाक्टर का कथन अद्भुत था मैंने श्यामल रामरूप देखा, उनके निर्मल सुन्दर व कोमल रूप का मैंने तत्काल वंदन किया।। 160 ।। देखो वही हैं वे आसन पर स्थित । वही हैं सभी से बोल रहे हैं। बोलते-बोलते क्षणभर में ही साईं रूप दिखने लगा।। 161 ।। उस पर डाक्टर आश्चर्यचकित रह गये। इसे मैं स्वप्न कैसे कहूं। इन्हें मुसलमान कैसे कहूं। वह योग संपन्न अवतारी हैं।। 162 ।। चोखामेला जाति से महार थे। रोहिदास मोची थे। सजन कसाई थे, हिंसा करते थे। इनकी जाति का विचार कौन करता है।। 163 ।। केवल जग के उपकार के लिए जन्म मरण के चक्र से छुटकारा दिलाने के लिए अपने निर्गुण निराकार को त्यागकर संत जग में आकार धारण करते हैं।। 164 ।। यह तो प्रत्यक्ष "कल्पद्रुम" हैं क्षण में साईं, क्षण में राम । मेरा अंह व भ्रम नष्ट करके दण्डप्रणाम करवा लिया ।। 165 ।। दूसरे दिन व्रत कर लिया, जब तक साईंनाथ कृपा नहीं करेंगे मस्जिद में पैर नहीं रखूगा । शिरडी में उपवास कर बैठ गये।। 166 ।। ऐसे तीन दिवस व्यतीत हो गये। फिर चौथा दिन उदित हुआ। उस समय क्या हुआ ध्यान लगाकर सुनो।। 167 ।। जिसका निवास खानदेश था, ऐसा एक मित्र अकस्मात वहां साईं के दर्शन के लिए आया।। 168 ।। नौ वर्षों के बाद भेंट हुई अतः बहुत परमानन्द प्राप्त हुआ । डाक्टर तुरंत उसके पीछे

मस्जिद गये ।। 169 ।। जाते ही नमन किया। बाबा पूछते हैं क्यों डाक्टर कोई बुलाने आया था? आये क्यों मुझे उत्तर दो।। 170 ।। ऐसा नुकीला प्रश्न सुनकर डाक्टर भावविभोर हो गये। किये हुए निश्चय का स्मरण हो आया। पश्चाताप से हृदय खिन्न हो गया।। 171 ।। किन्तु उसी दिन मध्यरात्रि को उन पर कृपा हुई। परमानन्द स्थिति की माधुरी को निद्रा में चखा ।। 172 ।। बाद में, डाक्टर अपने ग्राम वापस गये, किन्तु वह सम्पूर्ण स्वानन्द स्थिति पूरे पन्द्रह दिन तक अनुभव करते रहे। साईं के चरणों में भक्ति बढ़ गयी ।। 173 ।। इस प्रकार साईं के अनेक अनुभव हैं इनमें से एक-एक अनुभव का वर्णन करने से ग्रंथ का गौरव बहुत बढ़ेगा, विस्तार के भय से उन्हें संकुचित करते हैं।। 174 ।। आरंभ में मुले की कथा सुनकर श्रोताओं के चित्त को विस्मय हुआ था। किन्तु इसका तात्पर्य, अर्थ व बोध का ज्ञान करना चाहिए ।। 175 ।। जो-जो जिसका गुरु है उसी में दृढ़ विश्वास रखना चाहिए अन्यत्र कहीं नहीं, यह रहस्यमय अर्थ मन में बैठा लेना चाहिए ।। 176 ।। बाबा की इस लीला में अन्य कोई हेतु नहीं दिखता। कोई कुछ भी विचार करे। किन्तु इसमें अर्थ यही है।। 177 ।। किसी में कितनी ही कीर्ति हो, अपने गुरु में कम से कम भी न हो, किन्तु अपने गुरु में पूरा विश्वास स्थित होना चाहिए। इस का यही उपदेश है।। 178 ।। पोथी पुराणों में खोजिए, इस उपदेश का तत्व भरा पड़ा है किन्तु विश्वास की गांठ नहीं बंधती, निष्ठा अनुभव से बढ़ती है।। 179 ।। बिना आत्म निश्चिय किये हुए, जो वरिष्ठ अपने आप आत्मनिष्ठ होकर घूमते हैं, उनके जीवन में कष्ट होता है, जगह-जगह ऐसा दिखता है।। 180 ।। यह भी नहीं है वह भी नहीं, आजन्म सदैव उधेड़ बुन में लगे रहना । क्षणिक मन से स्थायित्व का लाभ नहीं प्राप्त होता है। मुक्त होने की गर्वोक्ति करते रहते हैं।। 181 ।। अब अगला अध्याय और मधुर है। इससे भी चोखा पाओगे । केवल साईं दर्शन पाने से अनन्त आनन्द की अनुभूति होगी।। 182 ।। भक्त भीमाजी पारिख का ऐसा क्षयरोग कैसे समाप्त हो गया । भक्त चंदोरकर के विश्वास को स्वप्न दिखाकर दृढ़ कर दिया।। 183 ।। ऐसा है केवल दर्शन का प्रताप । इस लोक के सुख और उस लोक के सुख प्रचुर मात्रा में उन्हें मिलते हैं जो निष्पाप दर्शन करते हैं।। 184 ।। योगियों के दृष्टिपात नास्तिकों को भी पापमुक्त कर देते हैं फिर आस्तिकों का क्या कहना । शोक पाप सहजता से समाप्त हो जाते हैं।। 185 ।। जिन्होंने तत्व में अपनी बुद्धि दृढ़ कर ली है जिन्होंने अपरोक्ष साक्षात्कार कर लिया है, जब उनकी दृष्टि पड़ती है दुष्कर पाप भी समाप्त हो जाता है।। 186 ।। ऐसी ही बाबा की रहस्यमय लीला थी। बाबा तुम्हारे प्रति प्रेम रखते हैं, इसलिए ज्ञानी व अज्ञानी सभी निर्मल होकर श्रवण करें।। 187 ।। जहां भक्ति

व प्रेम का भाव हो, जहां बाबा के प्रति प्रेमपूर्ण आसक्ति हो, वहीं पर करुणा खरी प्रकट होती है। वहीं श्रवण का उत्साह है।। 188 ।। हेमाड साईं चरणों में नमन करते हैं जो अनन्य शरणार्थी के लिए वज्रपंजर है। उनका कोई पार नहीं है। उनमें भव भय हरने की शक्ति है।। 189 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" में "श्री संतघोलप दर्शन" नामक बारहवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय तेरहवां (भीमाजी क्षय निवारण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन।।

आकार में सूत्रमय अति सूक्ष्म, अर्थ गांभीर्य में अति गहन, व्यापकत्व में अति विस्तारपूर्ण फिर भी अति संक्षिप्त ।। 1 ।। ऐसे थे बाबा के वचन, अर्थ व तत्व में यथार्थपूर्ण, कभी भी व्यर्थ नहीं, संतुलित व अनमोल ।। 2 ।। **"भूत व भविष्य को जोड़ने वाले वर्तमान में रहो । जो प्राप्त करना है उसके लिए प्रयास करो। नित्य सदा तृप्त रहो । कभी भी चिंता मत करो" ।। 3 ।। अरे यद्यपि मैं फकीर हूं, न घर है न द्वार, बेफिकर हूं। एक जगह स्थिर बैठा रहता हूं, सारे झंझटों को त्याग कर ।। 4 ।। फिर भी वह अनियंत्रणीय माया, मुझे सतत् परेशान करती रहती है। मैं भूल गया किन्तु वह नहीं भूली है। मुझे वह निरन्तर बांधती है ।। 5 ।। वह " श्रीहरि" की "आदिमाया" ब्रह्मादि देवों को भी चक्कर में डाल कर झिड़कती है। फिर उसके समक्ष मुझ दुर्बल फकीर की क्या बात है ।। 6 ।। जब "श्री हरि" प्रसन्न होंगे तभी वह विच्छिन्न होगी। बिना निरन्तर हरि भजन,माया से मुक्ति नहीं प्राप्त हो सकती" ।। 7 ।।** ऐसी माया की महत्ता बाबा भक्तों का समझाते। उससे निवृत्ति का स्वाद लेने के लिए भजनस्थिति का गुणगान करते ।। 8 ।। "संत मेरी सचेतन मूर्ति है" कृष्ण ने स्वयं भागवत में कहा है। उद्धव से हरि द्वारा कही गयी यह स्पष्ट उक्ति कौन नहीं जानता ।। 9 ।। इसलिए भक्त के कल्याण के लिए दयाघन साईंसमर्थ द्वारा बोले गये सार्थक सत्य को अतिविनीत होकर सुनो।। 10 ।। "**जिसके पाप विलय हो गये ऐसे जो पुण्यात्मा हैं वे तुरंत मेरे भजन में लगकर इच्छित लक्ष्य "मुझे प्राप्त करते हैं ।। 11 ।। साई साई नित्य बोलो, सात समुद्र से भी निकालकर ऊपर उठा लूंगा । इस वचन पर विश्वास जगाओ, निश्चित ही कल्याण की प्राप्ति होगी ।। 12 ।। मेरी पूजा सामग्री में सोलह अथवा आठ उपचारों की आवश्यकता नहीं है। जहां अपरंपार भाव है मेरा निवास वहीं है ।। 13 ।।"** बाबा समय-समय पर भक्तों के प्रति प्रेमवश ऐसा बोलते थे। अब उनके प्रेममय वचनों को याद करके मन लगाया जा सकता है।। 14 ।। ऐसे थे बाबा दयालु सखा, शरणागत के आधार, भक्त के पवित्र कार्य को पोषण देने वाले । देखो कैसा अद्भुत करते थे।। 15 ।। चित्त की अनेकाग्रता को दूर

करके उसे एकाग्र करके इस नूतन समग्र कथा को सुनो और कृत कार्यता होगी।। 16 ।। साईं मुख से हुई अमृतवृष्टि से जहां पुष्टि व तुष्टि है, कौन अपने हित को दृष्टिगत रखते हुए, शिरडी (तक आने) के कष्ट से थक जायेगा ।। 17 ।। गत अध्याय की कहानी में एक अग्निहोत्री ब्राह्मण को निजगुरु का दर्शन देकर आनन्द सम्पन्न किया।। 18 ।। अब यह अध्याय उससे भी मधुर है। एक क्षय के रोगी भक्त को आरोग्यता प्रदान की, स्वप्न में उसकी गलत आदत को छुड़ा कर ।। 19 ।। अब हे भाविकजन, एकाग्रचित्त होकर साईंनाथ के गहन चरित्र को, जो पापों का दहन करने वाला है, सुनो।। 20 ।। गंगा के पवित्र जल की भांति यह चरित्र पुण्य पावन है। धन्य हैं श्रवणकर्ताओं के कान, जो इस लोक और उस लोक से मुक्ति के साधन हैं।। 21 ।। अमृत से उपमा देना चाहूं किन्तु क्या अमृत इससे मधुर है। अमृत प्राण रक्षा करता है। चरित्र जन्म से मुक्ति दिलाता है।। 22 ।। सत्ताधीश जीव कहता है कि जो भी इच्छा होगी करेंगे। ऐसा जिनके मन में होता है, वे कथानक सुनें ।। 23 ।। जीव यदि पूर्णरूप से स्वतंत्र होता तो उसके हिस्से में केवल दुःख ही क्यों पड़ता है जब कि वह सुख के लिए दिन रात कष्ट उठाता है। यह है है सत्ता का चरित्र ।। 24 ।। दुःख को टालने में यहां, वहां सभी जगह सावधानी रखते हैं किन्तु वह उन्हें ढूंढकर पकड़ता है।। 25 ।। उस (दुःख) पर वार करो, वह गले पड़ता है। झाडू से साफ करो, अधिक लिपटता है। जीवन को दिन रात थका देने वाला कठोर प्रयास व्यर्थ है।। 26 ।। यदि जीव पूर्णरूप से अपने अधिकार में होता तो वह पूर्ण सुख उसके अधिकार में होता, दुःख का छोटा से छोटा अंश भी उसे न छू सकता ।। 27 ।। यदि ऐसा होता कि बुद्धि स्वतंत्र होती कभी पाप का आचरण न करती पुण्य में समृद्धि करके सुख में वृद्धि करती।। 28 ।। किन्तु जीवन स्वतंत्र नहीं है, कर्म तंत्र पीछा करता है। उसका खेल विचित्र है। कर्म के हाथ में डोरी होती है।। 29 ।। पुण्यकर्म करने का लक्ष्य करते हैं, पाप करने के लिए पांव खिंचे चले जाते हैं, सत्कर्म को ढूंढते हैं शरीर कुकर्म के सम्पर्क में आ जाता है ।। 30 ।। पुणे जिले में जुन्नार तालुके के नारायण गांव के पाटिल भीमाजी । उसकी कथा अब सुनो। जो अमृत से ओत-प्रोत है।। 31 ।। भीमाजी घर के सुखी व सम्पन्न थे। आने व जाने वालों को संतुष्टि भर भोजन कराते। कभी मन खिन्न नहीं करते। सर्वदा प्रसन्नचित्त रहते ।। 32 ।। भाग्य का विलक्षण संयोग, लाभ व वियोग हमारे जाने बिना होता है। कर्मयोग चालू रहता है , न होने वाला रोग उत्पन्न हो जाता है।। 33 ।।सन 1909 में भिमजी पर दुर्दैव पर गया। कफक्षय रोग का उद्भव हुआ। ज्वर आनेलगा।। 34 ।। असह्य खांसी आने लगी। ज्वर बहुत बढ़ने लगा। दिन प्रतिदिन

बढ़ता गया। भीमा जी निराश हो गये।। 35 ।। मुंह में सर्वदा झाग आता रहता और काले रंग के खून की थूक होती। पेट में निरंतर गड़बड़ी रहती। जीव अशांत रहता ।। 36 ।। बीमार ने चारपाई पकड़ ली । गले की नली सूख गयी | उपाय किये गये, व्यर्थ हो गये । अत्यन्त त्रस्त हो गये ।। 37 ।। अन्न पानी कुछ रुचिकर नहीं लगता। चावल के पानी का पथ्य भी नहीं पचता । इस प्रकार अस्वस्थ को कुछ समझ में नहीं आता । जीव का हाल असह्य हो गया ।। 38 ।। देवता की पूजा अर्चना सब की गयी। वैद्य व डाक्टरों ने हाथ उठा दिये । जीवित मछली को पानी में छोड़ा गया। भीमाजी मुसीबत में फंस गये।। 39 ।। पाटिल का चित्त उद्विग्न हो गया। थोड़े ही दिनों का साथ रह गया, लगने लगा। उत्तरोत्तर थकान बढ़ने लगी। समय व्यतीत होने लगा।। 40 ।। कुल देवता की आराधना की, उन्होंने भी आरोग्यता नहीं दी। ज्योतिषियों तथा समस्त पंचाक्षरियों (ओझाओं) से पूछते-पूछते पाटिल थक गये।। 41 ।। कोई बोलता पैशाचिक शारीरिक रोग है, क्या देवयोग है, इस रोग का पूरा भोग है । मनुष्य द्वारा किया गया यत्न अनुपयोगी है।। 42 ।। डाक्टर बुलाये गये, हकीम बुलाये गये । उपचार करके आशा छोड़ दी। किसी की थोड़ी भी नहीं चली। सभी के प्रयत्न विफल हो गये।। 43 ।। पाटिल हताश हो गये । बोले, “देवा, मैंने क्या किया, कुछ उपयोग में नहीं आ रहा है। कहां का पाप है यह ?" ।। 44 ।। फिर भाग्य कैसा विलक्षण होता है। सुख का भोग करते समय एक भी क्षण अपने आप ईश्वर स्मरण नहीं होता है। उसकी लीला अद्भुत है।। 45 ।। फिर जब उसके मन में आता है नाना प्रकार के संकटों की श्रृंखला भेज देता है अपना स्मरण कराने के लिए बोलने के लिए, “नारायण दौड़ो" ।। 46 ।। इस प्रकार करुणा के लिए उत्कंठा से की गयी पुकार सुनकर देव तत्काल करुणा में भर गये। भीमाजी में नाना साहेब को पत्र लिखने की बुद्धि उत्पन्न हुई।। 47 ।। "नाना साहेब कुछ तो करेंगे जो दूसरे करने में असमर्थ होंगे” पाटिल के मन में ऐसा पूर्ण विश्वास था ।। 48 ।। वही उनका शुभ शकुन था । वहीं से रोग का घटना प्रारंभ हो गया। बाद में उन्होंने नाना को विस्तार से पत्र लिखकर भेज दिया ।। 49 ।। नाना साहेब का स्मरण करने में साईंनाथ का स्फुरण रोग निवारण के कारण हुआ। संतों की कार्यशैली अतर्क्य होती है।। 50 ।। यह काल चक्र की रचना क्यों? उसमें भी ईश्वरीय योजना दिखती है। किसी को अन्यथा कल्पना नहीं करनी चाहिए, न ही गर्वोक्ति करनी चाहिए ।। 51 ।। अच्छी बुरी सभी क्रियाओं का वही ईश्वर एक सूत्रधार है। वही रक्षक, वही भक्षक, वही कर्ता है ।। 52 ।। पाटिल ने चंदोरकर को लिखा, औषधि खाते-खाते परेशान हो गया हूं इस जीवन से ही भयभीत हूं, दुनिया उदास लगती है।। 53 ।।

डाक्टरों ने आशा छोड़ दी है व्याधि को दु:साध्य मान लिया है। हकीम, वैद्यों की बुद्धि थक चुकी है। मेरी भी उम्मीद डूब चुकी है।। 54 ।। अतः अब आपके चरणों में एक विनती है, मेरे मन की इच्छा है कि आपसे मेरी भेंट सुनिश्चित हो जाये।। 55 ।। पत्र पढ़कर चंदोरकर का मन खिन्न हो गया । नाना का हृदय द्रवित हो गया भीमाजी पाटिल बहुत भले थे।। 56 ।। उत्तर में एक उपाय बताया। साईं बाबा के पैर पकड़ लो यही केवल बचने का उपाय है वही एक माँ व पिता हैं।। 57 ।। वही सबकी करुणामयी है मां हैं। सहायता के लिए बुलाने पर दौड़ती हुई आती हैं। करुणा के लिए याचना करने पर बाजू में उठा लेती हैं। बच्चे की आवश्यकता वही जानती हैं।। 58 ।। क्षयरोग का क्या कहना, महारोग दर्शन से ही ठीक हो जाता है। तिलभर भी शंका न करना। पांवों को जोर से पकड़ लो।। 59 ।। जो-जो मांगते हैं वह उसे देते हैं यह व्रत है जिससे उनके पांव बंधे हैं। इसलिए कहता हूं शीघ्रता करो, साईं के दर्शन करो।। 60 ।। भय में सबसे बड़ा भय मृत्यु के अतिरिक्त दूसरा क्या है। मजबूती से साईं के पावं पकड़ लो । वही एक निर्भय करेंगे।। 61 ।। पाटिल की व्यथा दु:सह्य थी । असह्य अवस्था को प्राप्त थी। कब साईंनाथ से भेंट होगी। कब प्रयोजन सिद्ध होगा।। 62 ।। पाटिल ऐसा घबराये हुए थे कि बोले, “सब सामान एकत्र कर लो, शीघ्रता से तैयारी करके कल शिरडी की राह पकड़ लो।" ।। 63 ।। इस प्रकार दृढ़ निश्चय पर पहुंचकर, सभी से विदा लेकर महाराज के दर्शन के लिए पाटिल शिरडी के लिए चल पड़े।। 64 ।। बराबर के संबंधियों को लेकर भीमाजी तुरंत निकल पड़े। हृदय में अत्यधिक उत्कंठा थी। शिरडी तुरंत कैसे देखें ।। 65 ।। मस्जिद के निकट चौराहे से गाड़ी फिर द्वार पर आयी चार लोगों ने बाहों में उठाया भीमाजी को ऊपर लाये ।। 66 ।। नानासाहेब साथ थे माधवराव वहां आ गये, जिन माधवराव की सहायता से उनके पद सर्वत्र सुगम थे।। 67 ।। पाटिल को देखकर बाबा बोले, "शामा ये चोर और कितने हैं जिन्हें मेरे ऊपर डालोगे। क्या यह कार्य अच्छा है। ।। 68 ।। साईं के पांवों में माथा टेक दिया । भीमाजी बोले, "साईंनाथ मुझ अनाथ पर कृपा करो। दीनानाथ संभालो" ।। 69 ।। पाटिल की व्यथा देखकर साईंनाथ को दया आ गयी। उसी समय पाटिल की अवस्था में सुधार आने लगा पाटिल के चित्त मे विश्वास हो गया ।। 70 ।। भीमाजी को अस्वस्थ देखकर कृपासागर साईंसमर्थ अत्यधिक द्रवित हुए तब चेहरे पर मुस्कान के साथ बोले ।। 71 ।। "बैठो, अब चिंता को छोड़ो, विचारशील चिंता नहीं करते । शिरडी में पांव रखते ही तुम्हारे कष्ट (भोग) का अन्त हो गया ।। 72 ।। आकंठ संकट के समुद्र में हो, या महादु:ख के गड्ढे में डूबे हो, जो इस मस्जिद माई की सीढ़ी चढ़ जाता है उसे सुख की

सवारी प्राप्त हो जाती है, यह जानो' ।। 73 ।। यहां का फकीर बहुत दयालु है व्यथा को निर्मल कर देता है सबके प्रति करुणा रखता है प्रेम से रक्षा करता है ।। 74 ।। अब तुम स्वस्थ दिखोगे। भीमाबाई के घर में रहो। तुम्हें एक-दो दिन में आराम होगा। अब जाओ ।। 75 ।। जैसे जीवन विहीन मनुष्य को भाग्यवश अमृतसिंचन हो जावे, तत्काल पुनर्जीवन प्राप्त हो जावे, वैसे ही पाटिल को संतुष्टि हो गयी।। 76 ।। साईं मुख के वचन को सुनकर पाटिल को ऐसे संतुष्टि मिली जैसे मरणोन्मुख को जीवन मिलने या प्यासे का अमृत पान से होती है।। 77 ।। प्रति पांच मिनट में मुंह में खून का थूक भर आता था, उसमें आराम हो गया, जब बाबा के सन्मुख एक घंटे बैठे।। 78 ।। बीमार का परीक्षण नहीं किया, रोग उत्पन्न होने के कारण नहीं पूछे, केवल कृपा निरीक्षण से तत्काल रोगोन्मूलन हो गया।। 79।। सूखी लकड़ी में अंकुर (कोपल) निकलने के लिए कृपा निरीक्षण पर्याप्त होता है।। 80 ।। क्या रोग क्या आरोग्य, जब तक पुण्य व पाप का क्षय नहीं होता, इसे भोगने के सिवाय अन्य उपाय काम नहीं करता ।। 81 ।। केवल भोगने से उसका क्षय होता है यही जन्म जन्मान्तर तक निश्चित है, बिना भोग अन्य उपाय निवृत्तिदायक नहीं है।। 82 ।। तथापि भाग्य से (प्राप्त) संत दर्शन से ही व्याधि का उपशमन (निवारण) हो जाता है। फिर व्याधिग्रस्त बिना दुःख के सहज ही व्याधि को सहन कर लेता है।। 83 ।। व्याधि दारुण भोग लेकर आती है संत करुणामय दृष्टिपात करके उसके भोक्तृत्व का बिना दुःख के निवारण कर देते हैं।। 84 ।। बाबा के शब्द मात्र ही प्रमाण (नियम) हैं वही रामबाण औषधि हैं। एक बार काले कुत्ते को दही भात खिलाकर मलेरिया का निवारण किया गया था।। 85 ।। (ये) विवरण बाधा स्वरूप प्रतीक हो सकते हैं (मुख्य संदर्भ को आगे बढ़ाने में)। किन्तु संकलित श्रवण करने पर इनकी उपयुक्तता दिखेगी । साईं ही स्मरण कराने वाले हैं।। 86 ।। "मेरी कथा मैं ही करुंगा" साईं ने ही पहले (ऐसा) बोला था। उन्होंने ही इस समय मुझे ये कथायें स्मरण करवायीं।। 87 ।। बाला गणपत नामक एक, शिल्पी जाति का, बड़ा भक्त था । बाबा के सन्मुख मस्जिद में आकर अति दीनमुख होकर विनती की ।। 88 ।। "मैंने ऐसा क्या पाप किया है यह मलेरिया का बुखार मुझे क्यों नहीं छोड़ता? बाबा ! बहुत उपाय किये यह पाप मेरे शरीर से जाता नहीं ।। 89 ।। अब फिर मैं क्या करूं। सभी कसैली औषधियां कर लीं। आप उपाय निदेशित करें। कैसे जाये यह ताप ।। 90 ।। तब हृदय में दया उत्पन्न हो गयी ।बाबा ने प्रत्युत्तर में उसके मलेरिया बुखार के लिए उपाय बताये । उसकी अद्भुतता को सुनो ।। 91 ।। दही भात के कुछ कौर लक्ष्मी माता के देवालय के पास कुत्ते को खिलाओ । तत्काल ठीक हो जाओगे।। 92 ।। बाला डरते-डरते

गया । घर जाकर देखने लगा। झांकने पर रखा हुआ भात मिला । दही भी निकट ही मिल गया ।। 93 ।। बाला ने मन में विचार किया दही भात तो मिल गया । क्या उचित समय पर देवालय के पास कुत्ता होगा? ।। 94 ।। किन्तु बाला जी की यह केवल चिंता थी। निर्दिष्ट स्थान पर जाकर पहुंचने पर काले रंग का एक कुत्ता पूंछ हिलाता हुआ निकट आता दिखा ।। 95 ।। ऐसा योग जुड़ता हुआ देखकर बाला को बहुत आनंद हुआ । दही भात खिलाकर बाबा को वृत्तांत निवेदन किया।। 96 ।। सारांश यह है कि जिस प्रकार घटित हुआ, कोई कुछ भी उसके लिए कहे, तभी से हिम ज्वर चला गया । बाला को आराम हो गया।। 97 ।। ऐसे ही बापूसाहब बुट्टी। पेट में ठंड लग जाने से जुलाब हो गया। बार-बार जाने लगे। उल्टी पर उल्टी निरंतर होने लगी।। 98 ।। सभी औषधियां अलमारी में भरी थीं। किन्तु एक भी कारगार नहीं हुई। बापू साहेब का हृदय घबड़ाने लगा। बहुत चिंता में पड़ गये।। 99 ।। जुलाब और उल्टी बार-बार होने लगी । बापूसाहेब कमजोर हो गये। नित्यनियम से बाबा का दर्शन करने जाने की शक्ति भी नहीं रही उनमें ।। 100 ।। बाबा के कान तक समाचार पहुंचा। बुलाकर अपने सन्मुख बैठाकर बोले, **"खबरदार अब के बाद मल विसर्जन के लिए जाना नहीं ।। 101 ।। उल्टी भी अपनी जगह निश्चित रूप से रुक जा।"** उनके सन्मुख तर्जनी अगुंली हिलाते हुए पुनश्च पूर्ववत उनको लक्ष्य करके बाबा ने इस प्रकार कहा ।। 102 ।। तात्पर्य यह कि उनके शब्दों का कितना भय था कि दोनों व्याधियां डर करके तत्काल डेरा कूच कर गयीं । बुट्टी को आराम हो गया ।। 103 ।। एक बार गांव (शिरडी) में कालरा का उद्भव हो गया था। उससे उपद्रव हो गया। उल्टी, पेट में मरोड़ उन्हें (बुट्टी को) होने लगा। मितली व उल्टी से वे तृषाकुल हो गये ।। 104 ।। पास ही डाक्टर पिल्ले थे। उन्होंने सभी उपाय किये जब अन्त में कुछ काम न आया तब वे बाबा के पास गये ।। 105 ।। जैसा-जैसा घटित हुआ था साईं चरणों में निवेदन किया। काफी देनी चाहिए या पानी ठीक रहेगा। पिल्ले ने बाबा से विचार किया।। 106 ।। तब बाबा उनसे बोले, इन्हें दूध, बादाम खाने के लिए दो, अखरोट पिस्ता के साथ। पीने के लिए तरण ।। 107 ।। उससे उनकी प्यास बुझेगी। तुरंत व्याधिहरण होगी । सारांश, इस प्रकार तरण पिलाने पर उनकी परेशानी दूर हो गयी।। 108 ।। "अखरोट पिस्ता बादाम खाओ।" कालरा में आराम संभव हो गया । बाबा के शब्द ही विश्वासधाम हैं । शंका का कोई उपयोग वहां नहीं था ।। 109 ।। आलंदी के एक स्वामी साईंसमर्थ के दर्शन की कामना से शिरडीग्राम को आये व साईं के आश्रम में पहुंचे।। 110 ।। उन्हें कर्णरोग हो गया था। उससे अस्वस्थता व अनिद्रा को वे प्राप्त हुए | आपरेशन भी कराया। तिलमात्र भी कुछ

भला नहीं हुआ ।। 111 ।। दर्द असह्य हो गया । कोई उपाय काम नहीं आया। जाने का विचार किया। आशीर्वाद मांगने गये।। 112 ।। साईंपदों की अभिवंदना करके ऊदी प्रसाद प्राप्त करके स्वामी ने आशीर्वाद मांगा कि सर्वदा कृपा बनाये रखें ।। 113 ।। माधवराव देशपांडे ने कान के लिए विनती की । **"अल्ला अच्छा करेगा",** बोलकर महाराज ने आश्वस्त किया ।। 114 ।। ऐसा आशीर्वाद प्राप्त करके स्वामी पुण्यपट्टणी (पुने) वापस हो गये। आठ दिन के बाद पत्र आया कि दर्द तत्क्षण ही रुक गया था।। 115 ।। केवल सूजन कायम थी, आपरेशन कराने के लिए कहा गया था। पुनः आपरेशन कराने के लिए मुम्बई तक पुनः आये ।। 116 ।। तत्पश्चात उस डाक्टर के पास गये । अनजाने ही बाबा मुसीबत में पड़ (काम आ) गये। डाक्टर ने जो कान में देखा सूजन कहीं दिखी नहीं ।। 117 ।। डाक्टर ने कहा आपरेशन की आवश्यकता नहीं है। स्वामी जी की कठिन चिंता दूर हो गयी। सभी विस्मित रह गये ।। 118 ।। ऐसे ही एक और कथा है जो प्रसंग के क्रम में आती है। उसे श्रोताओं को अब बताऊँगा। फिर अध्याय समाप्त करुंगा।। 119 ।। सभामण्डप का फर्श जिस दिन बनना प्रारंभ हुआ था उससे आठ दिन पूर्व महाजनी को भयंकर बदहजमी हो गयी ।। 120 ।। बहुत जुलाब होने लगा। मन ही मन में बाबा पर निर्भरता थी। औषधि अथवा उपचार नहीं किया। अत्यन्त बेजार हो गये।। 121 ।। साईं पूर्ण अन्तर्ज्ञानी थे। महाजनी जानते थे। अतः उन्होंने अस्वस्थता के विषय में उनसे निवेदन नहीं किया।। 122 ।। जब उनके मन में आयेगा, अपने आप निवारण कर देंगे ऐसा पूर्ण विश्वास करके व्याधि को बर्दाश्त (सहन) करते रहे।। 123 ।। काका की पूरे समय यही एक प्रबल इच्छा रही कि अपने आप सकल भोग भोग लेंगे किन्तु पूजा में विघ्न न पड़े।। 124 ।। जुलाब कितनी बार भी और कभी भी हो जाता। जब बर्दाश्त के बाहर हो गयी। आरती सेवा से वंचित न रह जाऊं, इसलिए वे क्या करते ।। 125 ।। तांबे का एक पात्र पानी से भरकर अपने बाजू में मस्जिद में ऐसी जगह रखते जिससे आधी रात को भी हाथ में आ जाये ।। 126 ।। स्वयं बाबा के पास बैठते, चरण दबाते रहने के लिए, नित्य आरती में हाजिर रहने के लिए। यह नित्य नियम से चल रहा था ।। 127 ।। जब पेट में दर्द होता तांबे का पात्र हाथ में होता निकट ही एकांत स्थान देखकर निपटकर वापस आते।। 128 ।। और अब फर्श बनवाने के लिए बाबा की आज्ञा मांगी गयी। वह बाबा द्वारा तात्या को दी गयी और सुनो बाबा ने क्या उनसे कहा ।। 129 ।। "हम लेंडी तक जा रहे हैं लेंडी से वापस आने पर फर्श का यह कार्य आरम्भ करना ठीक रहेगा।। 130 ।।" बाद में बाबा वापस आये, आसन पर जाकर बैठ गये। काका समय से आ गये पांव दबाना प्रारम्भ कर

दिया।। 131 ।। कोपर गांव से तांगा आ गया। मुम्बई से भी भक्त आ गये। पूजा साम्रगी के साथ चढ़कर बाबा का अभिवंदन करने आये ।। 132 ।। दूसरी मंडली के साथ अंधेरी से पाटिल आये पूजा पुष्पाक्षत लेकर अपनी बारी की प्रतीक्षा है में बैठ गये।। 133 ।। थोड़ी ही देर में खुले व बड़े आंगन में जहां रथ खड़े होते ठीक वहीं कुदाल मारी गयी। फर्श बनाना प्रारंभ कर दिया गया।। 134 ।। आवाज मात्र सुनते ही बाबा ने विचित्र शोर मचाया। तत्काल नृसिंहावतार धारण कर लिया, भयंकर नेत्र से घूरने लगे।। 135 ।। कौन कुदाल का वार कर रहा है, उसकी कमर तोड़ दूंगा । बोलते हुए सटका लेकर उठ गये। सभी की भय से धड़कन बढ़ गयी ।। 136 ।। कुदाल छोड़कर मजदूर भाग गया। प्रत्येक व्यक्ति उठकर भागने लगे। काका का भी मन घबरा गया। उनका हाथ बाबा ने पकड़ लिया ।। 137 ।। बोले, “कहा जा रहे हो? नीचे बैठो।" थोड़ी देर में तात्या व लक्ष्मी आ गये। उन पर गालियों की बौछार बाबा ने इच्छानुसार कर दी।। 138 ।। आंगन के बाहर जो लोग थे उनके प्रति भी गाली दी गयी । तुरंत ही भुनी हुई मूंगफली की थैली जो वहां पड़ी थी खींच ली ।। 139 ।। बाबा के क्रोधावेश में होने है पर जो मस्जिद में डरकर चारों पैर से भागे थे, उन्हीं में किसी का छोटा बैग गिर गया होगा।। 140 ।। दाने पूरे सेर भर रहे होंगे | मुट्ठी-मुट्ठी बाहर निकाल कर हाथ में मसलकर फूंक भरकर साफ करते ।। 141 ।। फिर स्वच्छ किये हुए दाने महाजनी को खाने को देते। एक तरफ गाली देते रहते एक तरफ मसलकर साफ करते ।। 142 ।। "खाते रहो” कहते-कहते स्वच्छ दाने हाथ पर रखते, कभी अपने मुंह में रख लेते। इस प्रकार थैला समाप्त हो गया ।। 143 ।। दाने समाप्त होने पर बोले पानी लाओ मुझे प्यास लगी है। पानी पीने के टोटीदार पात्र को भरकर लाये । स्वयं पिये, पीने के लिए कहा ।। 144 ।। काका के पानी पीते ही उनसे बोले "अब जाओ, तुम्हारा पाखाना बन्द हो गया । वे ब्राहमण कहां गये?" बोले, “जाकर उन्हें ले आओ” ।। 145 ।। इस प्रकार बाद में लोग अंदर आये । मस्जिद पहले की भांति भर गयी । फर्श पुनः बनने लगा । काका का कालरा थम गया।। 146 ।। जुलाब की यह क्या औषधि है किन्तु औषधि तो संतों के शब्द हैं। जिसे प्रसाद स्वरूप दे दिया उसे और कुछ नहीं चाहिए ।। 147 ।। हरदा शहर के एक गृहस्थ पेट शूल की व्याधि से ग्रस्त थे। चौदह वर्षों से त्रस्त थे। समस्त उपाय कर लिये थे।। 148 ।। उनका नाम दत्तोपंत था। एक कान से दूसरे कान तक चलते हुए सुनाई पड़ा कि शिरडी के साईं महासंत हैं । दर्शन से ही कष्ट दूर हो जाते हैं।। 149 ।। ऐसी कीर्ति है सुनकर शिरडी के लिए गमन किया। साईं के चरणों में माथा रखकर वंदन किया उनकी करुणा के लिए अनुनय किया।। 150 ।। बाबा,

चौदह वर्ष व्यतीत हो गये। पेटशूल पूरे समय पीछा करता रहा है। किन्तु अब अति हो गयी है। भोगने की शक्ति शेष नहीं है।। 151 ।। किसी के साथ छल-फरेब नहीं किया। माता-पिता की अवमानना नहीं की । पूर्व जन्म की कोई घटना (कर्म) याद नहीं जिससे मुझे यह कष्ट हो रहा है।। 152 ।। केवल संत का प्रेमावलोकन, संत-प्रसाद आशीर्वचन - इन्हीं से व्याधि का निरसन हो जाता है। और कुछ नहीं चाहिए ।। 153 ।। दत्तोपंत का भी वैसा ही अनुभव था। बाबा का हाथ उसके माथे पर पड़ते ही विभूति आशीर्वाद प्राप्त होते ही चित्त को आराम हो गया ।। 154 ।। फिर महाराज ने उन्हें कुछ दिन और रोक लिया। धीरे-धीरे पेटशूल की परेशानी समूल नष्ट हो गयी।। 155 ।। वस्तुतः ऐसे महानुभाव (महात्मा) हैं। मैं उनकी महानता का वर्णन कैसे कर सकता हूं। परोपकार ही नित्य का स्वभाव है, सद्भाव जिनका चराचर के प्रति है।। 156 ।। गाते रहेंगे ये शब्दस्तोत्र एक से बढ़कर एक विचित्र। अब पहले की कथा का सूत्र भीमाजी चरित्र चलाते हैं।। 157 ।। इस प्रकार बाबा ने ऊदी मंगायी। भीमाजी को थोड़ी दी। थोड़ी उनके सिर पर मल दिया। उनके सिर पर अपना हाथ रख दिया ।। 158 ।। डेरे पर जाने की आज्ञा हुई । पाटिल ने पांव पर चलना प्रारंभ किया, गाड़ी तक स्वयं के पैर से पहुंचे । ताजगी अनुभव करने लगे।। 159 ।। अपने लिए निर्दिष्ट जगह पर गये । यद्यपि स्थान थोड़ा संकुचित था। किन्तु बाबा ने उनके लिए कहा था। उनका महत्व इसमें था।। 160 ।। मिट्टी पीटकर नया-नया समतल किया होने के कारण जमीन गीली थी। फिर भी बाबा की आज्ञा मानी वहीं पर सुविधा बना ली।। 161 ।। सूखी जगह गांव में मिल सकती थी। भीमाजी के बहुत परिचित थे। किन्तु स्थान जो बाबा के मुख से निकला था, छोड़कर और कहीं नहीं जाना ।। 162 ।। वहीं पर दो टाट बिछाकर उसके ऊपर अपना बिस्तर बिछाकर मन को स्वस्थ करके समतल जमीन पर सो गये ।। 163 ।। उसी रात्रि ऐसा हुआ कि भीमाजी को स्वप्न दिखा कि बचपन के शिक्षक आये उन्हें मारने लगे।। 164 ।। हाथ में एक बेंत की छड़ी मारते-मारते पीठ तोड़ दी, प्रकृत श्लोक रटाने के लिए, शिष्य को बहुत कष्ट दिया।। 165 ।। प्रकृत श्लोक कैसा था। श्रोताओं की प्रबल जिज्ञासा होगी। एक एक अक्षर उसका बताता हूँ, समूल जो सुना है।। 166 ।।

श्लोक (प्रकृत भाषा)

"जीस गमे पद अन्य गृहीं जर ठेवियले जणुं सर्पशिरीं ।

वाक्य जिचे अति दुर्लभ ज्यापरि दुर्मिळ तें धन लोभिकरीं।

कांत समागम तेच गमे सुखपर्व नसे जरि वित्त घरीं।

शांत मनें निजकांतमतें करि कृत्य 'सती' जनि तीच खरी।"

---------- "जिसके लिए अन्य गृह में पद रखना मानो सर्प के सिर पर रखना हो, जिसके बोल अति दुर्लभ हों, जैसे लोभी के हाथ से धन प्राप्त करना कठिन हो। पति से समागम जिसके लिए सुखपर्व हो। यद्यपि घर में धन न हो (तो भी), शांत मन से अपने पति की मति से जो कार्य करती है लोगों में वास्तविक सती वही है।" किन्तु यह दण्ड किसलिए यह कुछ भी समझ में नहीं आया। शिक्षक ने बेंत की छड़ी टांगी नहीं, हठ अनियंत्रणीय हो गया ।। 167 ।। इसके तुरंत बाद दूसरा स्वप्न दिखा, वह इससे भी विलक्षण था। कोई एक गृहस्थ आया छाती पर पूरी शक्ति के साथ बैठ गया।। 168 ।। हाथ में पत्थर का लोढ़ा लेकर वक्षस्थल को पाटा बना दिया। प्राण यातना (वेदना) से कंठ तक आ गए | मानो वैकुंठ के लिए चल दिये।। 169 ।। स्वप्न के सरल होते ही आंख लग गयी उससे मन थोड़ा बदल गया । सूर्य उदित हो गया । पाटिल जाग गये।। 170 ।। मन को अपूर्व ताजगी प्राप्त हो गयी। पाटा लोढ़ा छड़ी के चिह्न ढूंढने की याद भी किसे रही ।। 171 ।। स्वप्न को लोग आभास कहते हैं किन्तु कभी-कभी विपरीत अनुभव होते हैं। उसी मुहूर्त में रोग समाप्त हो गया । पाटिल के दुःख की निवृत्ति हो गयी।। 172 ।। पाटिल का हृदय प्रसन्न हो गया । मानों पुनर्जन्म हो गया हो। फिर धीरे-धीरे बाबा के दर्शन के लिए निकल पड़े।। 173 ।। बाबा के मुखचांद को देखकर पाटिल का आनन्द समुद्र की भांति हो गया । उनका मुख भी आनन्द से चमकने लगा । आँखें तन्द्रा में जैसी लगने लगीं।। 174 ।। प्रेमाश्रु की धारा बह निकली पावों पर माथा रखते ही | बेंत का दण्ड तथा हृदय पर दबाव का परिणाम स्पष्टतः सुखकर हुआ।। 175 ।। इस उपकार का प्रतिकार मुझ पामर से होगा यह असंभव है इसलिए पावों में सर रखता हूं।। 176 ।। इसी से मेरी भरपाई हो सकती है इसका अन्य उपाय नहीं है। बाबा साईं आपकी अद्भुत शैली अचिंत्य अतर्व्य है।। 177 ।। इस प्रकार उनकी महिमा गाते हुए वहां एक माह रहे। बाद में नाना का उपकार स्मरण कर कृतार्थ होकर वापस गये।। 178 ।। इस प्रकार भक्ति व श्रद्धा से पूर्ण, वे पाटिल आनन्दनिर्भर चित्त साईकृपा के प्रति कृतज्ञतायुक्त बार-बार शिरडी आते ।। 179 ।। दो हाथ एक माथा स्थायी श्रद्धा व अनन्यता । साईंनाथ

को इससे अतिरिक्त नहीं चाहिए । एक कृतज्ञता ही उनको चाहिए ।। 180 ।। कोई विपदाग्रस्त होता है सत्य नारायण की कसम लेता है, संकट से मुक्त होने पर पूर्ण व्रत का पालन करता है।। 181 ।। उसी प्रकार पाटिल सत्यसाईं व्रत, तभी से करने लगे। प्रत्येक गुरुवार सूर्योदय के साथ शुद्ध स्नान करके व्रत धारण करने लगे।। 182 ।। लोग सत्यनारायण कथा करते पाटिल दासगणु कृत "अर्वाचीन भक्त लीलामृत" से साईंचरित सप्रेम बांचते।। 183 ।। उस ग्रन्थ में पैंतालीसवें अध्याय में दासगणु ने अनेक भक्तों का गान किया है इनमें से तीन अध्याय साईंनाथ की सत्यसाईंकथा है।। 184 ।। व्रतों में उत्तम व्रत पाटिल का ध्यायत्रयी का बांचना था । अपरिमित सुख मिलता। स्वस्थ चित्त रहते ।। 185 ।। नाते रिश्तेदार मित्र समेत पूरे परिवार के साथ पाटिल नियम से सत्यसाईंव्रत आनन्द भरे मन से करते।। 186 ।। नैवेद्य भी वही है सवागुना (गणना के अनुसार) मंगलोत्सव भी वैसा ही, वहां नारायण यहां साईं दोनों ही का महत्व कम नहीं ।। 187 ।। पाटिल ने जो पाठ करना प्रारंभ किया, गांव में वह परंपरा बन गयी। सत्य साईंव्रत का पाठ है इस प्रकार लोगों ने करना प्रारंभ कर दिया ।। 188 ।। इस प्रकार हैं ये संत कृपालु, जब भाग्योदय होता है , तब दर्शन से ही संसार के जंजाल समाप्त हो जाते हैं। काल भी वापस चला जाता है।। 189 ।। अब इससे आगे की कथा एक की संतति चिंता का वर्णन करेंगी, संत से संत की एकात्मता व चमत्कारिता प्रकट होगी।। 190 ।। नांदेड़ शहर का एक वासी, बहुत धनाड्य जात का पारसी, उसे बाबा का आशीर्वाद प्राप्त होने है पर पुत्रधन प्राप्त हुआ।। 191 ।। वहां के संत मौली साहब उनका चिह्न बाबा ने स्वीकार किया। पारसी फिर आनन्दपूरित होकर अपने ग्राम वापस गया।। 192 ।। अति प्रेमल है कथा, श्रोता स्वस्थ चित्त से इसे सुनें। है। साईं की व्यापकता का ज्ञान होगा, वैसी ही उनकी वत्सलता ।। 193 ।। पंत हेमाड साईं की शरण में है। संतों व श्रोताओं का नमन करता हूं। आगे के अध्याय का निरूपण सादर श्रवण करें।। 194 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" का “भीमाजी क्षय निवारण” नामक तेरहवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय चौदहवां (रतनजी-साई समागम) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।।श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

संतों में श्रेष्ठ साईंनाथ की जय हो , जय जय, दयालु गुणों से ओत-प्रोत , जय निर्विकार परमात्मा , जय जय अपार अनन्त ।। 1 ।। अबोधगम्य को दृष्टिगत रखते हुए निज भक्तों के प्रति करुणा के कारण नाना रूपरंग में भक्तों से भेंट करते हों, उन्हें संकट से मुक्ति देने के लिए ।। 2 ।। बाबा ने दीनों का उद्धार करने के लिए भक्तों की भयंकर दुर्वासनाओं का व दुष्ट निशाचरों का वध करने के लिए लीलावतार लिया था ।। 3 ।। जो-जो सद्भाव से दर्शन करने आता, स्वानन्दरस पीता, हृदय आनन्द से ओत-प्रोत हो जाता, प्रेमसुख से वह झूमने लगता ।। 4 ।। इस प्रकार के गुण वाले साईं समर्थ और मैं दीन हीन अति विनीत । उनके चरणों में दीनता से साष्टांग प्रणिपात करता हूं।। 5 ।। अब पूर्व कथा के क्रम में, जहां, काले कुत्ते द्वारा दही भात खाया जाने व मलेरिया बुखार समाप्त होने की कथा निवेदित की गयी थी।। 6 ।। भयंकर बीमारी और कालरा तर्जनी अंगुली दिखाने व तरण मात्र तथा भुनी हुई मूंगफली सेवन कराने से चला गया ।। 7 ।। इसी प्रकार पेटशूल, एक का कर्णरोग समूल, एक का महाप्रबल क्षयरोग कैसे दर्शन से समाप्त हो गये।। 8 ।। कैसे साईं की कृपा से भीमाजी सुख संपन्न हो गये । साईं के प्रति कृतज्ञतापूर्ण होकर चरणों की शरण में सदैव के लिए आ गये।। 9 ।। वैसे ही आश्चर्यजनक यह घटना, वही अपूर्व चमत्कार श्रोताओं की श्रवण की अति उत्कंठा जानकर प्रस्तुत करता हूं।। 10 ।। श्रोता यदि सावधान नहीं हैं, वक्ता में स्फुरण कैसे आयेगा, कैसे कथन में गुणों का समावेश होगा, कैसे कथन रसपूर्ण होंगे।। 11 ।। वक्ता क्या कथा करेगा ,सब कुछ ही श्रोता के अधीन है। श्रोता ही उसके अवलंबन हैं, उसी से रसबर्धन होता है।। 12 ।। पहले से ही संत चरित्र, स्वभाव से ही आनन्ददायक, बाहर व अंदर से । संतों के आहार विहार सुंदर व आनन्ददायक होते हैं, उनके सहज उद्गार भी मधुर होते हैं।। 13 ।। चरित्र नहीं ये स्वानन्द जीवन है, भक्तों के प्रति प्रेमवश साईं महाराज ने निज स्मरण के साधन स्वरूप दया धन की वर्षा की है।। 14।। सांसारिक व्यवहार (प्रवृत्ति) के संबंध में बोलते हुए निवृत्ति (वैराग्य) का मार्ग निर्धारित करते हैं। इस प्रकार की है प्रपंच व परमार्थ के लिए सत्पुरुष की ये कथा।। 15 ।। इसका उद्देश्य यद्यपि संसार में सुख से जीवन यापन करने का है किन्तु नित्य सावधान रहकर देह को सार्थक करना भी है।। 16 ।। अनन्त पुण्य के बल पर ही अकस्मात जीव को नरदेह प्राप्त होता है उसमें भी जो परमार्थ प्राप्त कर लेता है उसका भाग्य आगे हो जाता है।। 17 ।। उसमें भी जो जीवन को सार्थक नहीं बनाता उसका जन्म निरर्थक भार बन जाता है पृथ्वी पर । पशु से क्या अधिक सुख उसे मिलता है जग में

।। 18 ।। आहार, निद्रा, भय, मैथुन के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानता, वह नर, पूंछ व सींग के विहीन पशु समान है।। 19 ।। इस नरजन्म का कितना महत्व है। इसी से भगवद् साधना होती है, चारों मुक्ति प्राप्त हो सकती है, इसी से निजात्म प्राप्ति होती है।। 20 ।। मेघ मण्डल में जैसे विद्युत रेखा उसी तरह यह संसार चंचल है। यहां कालरूप सर्प के भय का ग्रास लोग बन जाते हैं। पल भर का सुख भी दुलर्भ है।। 21 ।। माता, पिता, बहन, भ्राता, पत्नी, पुत्र, पुत्री, चाचा,जैसे नदी प्रवाह में काष्ठ बहते हुए मिलते हैं, वैसे ही मिलते हैं।। 22 ।। एक क्षण में एक साथ दिखते हैं किन्तु दूसरे ही क्षण अलग-अलग कर दिये जाते हैं उमड़ती तरंगों द्वारा । एक बार अलग-अलग होने के है बाद पुनः उसी प्रकार नहीं मिलते।। 23 ।। जिन्होंने आत्म हित साधन नहीं किया उन्होंने अपनी माँ की प्रसव पीड़ा को व्यर्थ कर दिया । संतों के चरणों में लगे बिना जन्म की हानि होगी।। 24 ।। प्राणी जब जन्म लेता है तभी मृत्यु के पथ पर लग जाता है फिर आज, कल व परसों पर जो विश्वास करता वह नर फंस जाता है।। 25 ।। मृत्यु के स्मरण को संचित रखो । देह केवल काल का भोजन है, ऐसे हैं सांसारिक जीवन के लक्षण । सावधान रहो।। 26 ।। जो चौकस रहकर जगत व्यवहार करता है, बिना प्रयास परमार्थ प्राप्त करता है। इसलिए सांसारिक मामलों में आलस नहीं करना चाहिए । पुरुषार्थ (मानव जीवन के चार उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) के प्रति उदास नहीं होना चाहिए ।। 27 ।। जो साईंकथा को प्रेम से सुनते हैं, उनको श्रेष्ठ वस्तुओं की प्राप्ति होगी, साईं चरणों में भक्ति की वृद्धि होगी, सुख का खजाना उन्हें उपलब्ध होगा।। 28 ।। जो साईं को पूर्ण प्रेम करते हैं इन कथाओं को एकत्र करने से उन्हें पग-पग पर साईं चरणकमल का स्मरण रहेगा ।। 29।। निःशब्द का शब्दों में कथन है, अतीन्द्रिय का इन्द्रियों से सेवन है, कितना ही इस कथा का अमृतपान करें पूर्ण संतुष्टि दुर्लभ है।। 30 ।। संतों की लीलाएं अतर्क्य हैं उनकी महिमा अनिर्वचनीय है। उनका वाणी से पूर्ण कथन करने में कौन समर्थ है।। 31 ।। कानों में नित्य यह कथन पड़ेगा, साईं नित्य नयनों को दिखेंगे, दिन रात मन में ध्यान रहेगा। स्मरण चिंतन होता रहेगा।। 32 ।। सोते, जागते, उठते बैठते, स्वप्न में, और भोजन करते समय में दिखने लगेंगे । जंगल हो या भीड़ हो निरन्तर गमनागमन में साथ रहेंगे।। 33 ।। इस प्रकार निदिध्यासन की स्थिति आ जाने पर मन उन्मनी अवस्था को प्राप्त होगा और जब ऐसा दिन-दिन होने लगेगा, चित्त चैतन्य से समरस हो जावेगा ।। 34 ।। अब आगे की कथा कहते हैं, जिसका उल्लेख पूर्व अध्याय के अन्त में किया है उसका प्रारंभ करते हैं। सादर श्रवण करें।। 35 ।। भाव व भक्ति शिरापुरी (मिष्ठान) है कितना ही खाओ सदा अपूर्णता रहती है। यद्यपि आकंठ सेवन कर लो फिर भी कभी भी परिपूर्ण तृप्ति नहीं हो सकती है।। 36 ।। अतः अब यह दूसरी कथा। श्रोता ! आप सादर सुनें तो संत दर्शन की सार्थकता मन में दृढ़ होगी।। 37 ।। बाह्यतः बाबा कुछ भी नहीं करते थे। स्थान छोड़कर कहीं नहीं जाते थे किन्तु अपने स्थान पर बैठे-बैठे सब जानते थे। सभी लोगों को इसका अनुभव देते थे।। 38 ।। जो सत्तत्व अपने

शरीर में है वही अखिल ब्रह्माण्ड में है। शरीर को (ईश्वर के लिए) कुरबान कर दो । निरन्तर पालन करो।। 39 ।। जो उस सत्तत्व की शरण में है, वह सभी में एकत्व को जानता है। जो नानात्व को धारण करते हैं, वे जन्म मरण की श्रृंखला में बंधे रहते हैं।। 40 ।। नानात्व को स्थापित करने वाली बुद्धि, अविद्या को त्रिशुद्धि (तीन बार शुद्ध की हुई) जानती है। गुरु के आगमन से ही चित्त शुद्धि होती है। उसी से स्वरूप स्थिति होती है।। 41 ।। अविद्या से दूरी (अलग होना) ही निवृत्ति है, उसी (निवृत्ति) से एकत्व की प्राप्ति है। चित्त में अणुमात्र द्वैत के रहते हुए अनन्य स्थिति कैसे हो सकती है।। 42 ।। ब्रह्मादि से लेकर अचर (जड़) तक जो (वस्तु) विभेदक गुण समन्वित हैं वह अविवेकी के लिए अब्रह्मवत् है जबकि वह ब्रह्म से ओतप्रोत है।। 43 ।। वह जो स्वभावतः विज्ञानघन है, जिसमें संसार के धर्म का अभाव है, नाम व रूप जिसका धुल गया है, वह पूर्ण रूप से ब्रह्म है।। 44 ।। विभेदक गुण के स्वभाववश भेद करने वाला, अविद्यामोह आदि के कारण प्रमाद करने वाला, नानात्व से विचलित चित्त एकत्वबोध से स्वस्थ हो जाता है।। 45 ।। मैं भिन्न हूं , लोग भिन्न हैं। ऐसा अलगाव जो थोड़ा भी नहीं मानते, जिनके लिए पूर्ण विश्व में अखण्ड एक रस भरा है, उनके लिए उनसे भिन्न कुछ भी नहीं है।। 46 ।। नाम, रूप, कार्य करना, यह सब अवरोध समझ कर नानात्व का सर्वथा त्याग करने में ही ब्रह्म है।। 47 ।। मानो "मैं ही एक प्रत्येक हूं। मेरे बिना रिक्त स्थान नहीं है। सभी दस दिशाओं में व्याप्त हूं। मुझसे अन्य कुछ भी नहीं है" ।। 48 ।। इस भावना को दृढ़ता से पकड़े रहो । माया के विभ्रम को दूर करके मेरे बिना कोई वस्तु नहीं है, यह मानकर अपनी दृष्टि को अन्दर की ओर ले जाओ।। 49 ।। श्रोताओं में सहज संशय होगा कि यह भेद कैसे होता है। जीव ज्ञाता है, ब्रह्म ज्ञेय है। किस उपाय से यह (द्वैतभाव) समाप्त हो? ।। 50 ।। भेद बुद्धि का थोड़ा भी प्रमाण अनन्यत्व का भक्षण कर जाता है, तत्काल नानापन की उत्पत्ति करता है, जन्म मरण का कारण बनता है।। 51 ।। अविद्यारूपी अंधकार के लुप्त होते ही, सकल सृष्टि लुप्त हो जाती है दृष्टि में स्वरूप का एकत्व भर जाता है। नानात्व तुरन्त समाप्त हो जाता है।। 52 ।। शुद्ध जल का, शुद्ध जल में मिश्रण करने पर सम्पूर्ण जल एक हो जाता है। पहले और बाद के समरस को देखने पर भेद की पहचान शेष नहीं रह जाती है।। 53 ।। काष्ट के आकार भिन्न होते हैं, किन्तु उनका अग्नि स्वरूप अभिन्न हैं। तब वे अविच्छिन्न आकारहीन निजरूप में स्वयं विलीन हो जाते हैं।। 54 ।। इसी प्रकार आत्म के एकत्व के ज्ञान को अन्य प्रतिपादन की आवश्यकता नहीं है। आत्मा सर्वभूतों में रूपविहीन सर्वथा परिपूर्ण है।। 55 ।। विपरीत विचार भ्रमात्मक है। उनसे चित्त सर्वथा भ्रमित रहता है जन्म-मरण आदि दुःख का अनुभव करता है। प्राणी सर्वदा दुःखी रहता है।। 56 ।। नाम रूप आदि विभेदक गुणों को त्याग दिया हो, विशुद्ध विज्ञान रूप (ईश्वर) को साध लिया हो, ऐसे सिद्ध को माया बांधती नहीं । वह सदा निज आनन्द में रत रहता है।। 57 ।। ऐसी ही स्थिति के उदाहरण मूर्तिमंत साईं के चरण हैं जिनके दर्शन भाग्य से होते हैं। ऐसे जन धन्य- धन्य हैं।। 58

।। चन्द्रमा जल में स्थित दिखता है किन्तु वह जैसा जल के बाहर होता है वैसा ही संत भक्तों से घिरे होते हुए भी वस्तुतः उनसे अलिप्त रहते हैं।। 59 ।। यद्यपि वे भक्तों के परिवार में दिखते हैं किन्तु उनकी किसी में आसक्ति नहीं होती। चित्तवृत्ति स्वरूप में होती है। सर्वदा दृश्य निवृत्ति रहती है।। 60 ।। ऐसे हैं महासाधु संत, जिनकी वाणी में ईश्वर बसते हैं। उनके लिए कुछ भी विश्व में अप्राप्य नहीं है। उनके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं है।। 61 ।। उपदेश देने व लेने वाले असंख्य गुरु शिष्य जगत में हैं, किन्तु उपदेश के साथ-साथ अनुभूति देते हों, ऐसे विरले हैं।। 62 ।। अब पूर्व वर्णन काफी हो गया मुख्य कथा का निरूपण करूँ, जिसके लिए श्रोता उत्कंठित हैं। वे पूर्णरूप से श्रवण संपन्न हो जावें ।। 63 ।। मोगलाई में (निजाम राज्य), नादेडं शहर में, एक प्रख्यात पारसी व्यापारी था। बहुत धार्मिक व लोकप्रिय था । नाम था रतन जी (शापूर जी वाडिया) ।। 64।। धन सम्पदा बहुत थी-गाड़ी, घोड़ा, खेत, बाग | वाडिया का द्वार हमेशा खुला रहता कोई खाली हाथ वापस नहीं आता ।। 65 ।। इस प्रकार बाह्य है रूप से आनन्द सागर में रात दिन डूबे रहते। अन्दर से चिंता रूपी भयंकर मगरमच्छ से सदैव घिरे रहते ।। 66 ।। यह तो ईश्वरी सूत्र है किसी को शुद्ध सुख नहीं मिलता, किसी को कुछ ,किसी को कुछ, दुःख पीछे लगा रहता है।। 67 ।। "मैं ही महान हूँ, सर्वेश्वर्य में मैं ही बड़ा हूँ" कोई कहकर उल्टा चलने लगता है , काल्पनिक गर्व से भर जाता है।। 68 ।। जो पूर्ण (सुन्दर) है उसे नजर न लग जाये । जैसे माँ गाल पर काला टीका लगाती है। परमात्मा भी उसे यथेष्ठ फांस में डाल देता है, ऐसा स्पष्ट होता है।। 69 ।। रतन जी धन सोना से संपन्न थे, आने जाने वाले अन्न ग्रहण करते । दीनों के दर्द को विच्छिन्न करते, सर्वदा प्रसन्न रहते ।। 70 ।। इस प्रकार यद्यपि सांसारिकता में मन लगाकर सेठ जी सुख पाते, किन्तु धन का यह सुख पुत्रहीनों के लिए सर्वथा विफल होता है।। 71 ।। कन्या धन बहुत था । एक के बाद एक बारह थीं। सुख की हवा भी कैसे लगेगी, मन को विश्राम कहां मिलेगा।। 72 ।। प्रेम बिना हरि कीर्तन, ताल स्वर बिना गायन, यज्ञोपवीत बिना ब्राह्मण, उनकी क्या शोभा है ।। 73 ।। समस्त कलाओं में प्रवीण हो, सार व असार का ज्ञान न हो, आचार सम्यक हो, भूतों (जीवों) के प्रति दयाहीन हो ,उनकी क्या शोभा है ।। 74 ।। माथे पर गोपी चंदन का टीका हो, गले में तुलसी माला शोभायमान हो, जिह्वा संत का उपहास करें ,उनकी क्या शोभा है ।। 75 ।। पश्चाताप बिना तीर्थाटन, कंठहार बिना अलंकरण, पुत्र बिना गृहस्थ का घर ,उनकी क्या शोभा है ।। 76 ।।“ क्या नारायण तब एक संतान सुपुत्र देंगे ?” यही उनकी दिनरात चिंता थी। मन निश्चिंत नहीं होता ।। 77 ।। इसके कारण सेठ जी सदा खिन्न रहते । अन्नपान अच्छा नहीं लगता । मन में रातदिन उद्विग्न रहते । सर्वदा चिंतामग्न रहते।। 78 ।। "देवा ! मेरा इतना बड़ा कलंक, धोकर मुझे निष्कलंक कीजिये । वंश का एक आधार दीजिए | प्रभुराया लाज रखिये" ।। 79 ।। दासगणु के प्रति बहुत भक्ति थी। मन की वृत्ति उनसे निवेदित की। उन्होंने कहा कि शिरडी जाओ । इच्छित फल पाओगे।। 80 ।। बाबा के दर्शन प्राप्त करो।उनके चरणों

की वंदना करो।आदि से अंत तक गुह्य निवेदन करो। आशीर्वचन देंगे।। 81 ।। जाओ , तुम्हारा कल्याण होगा। बाबा की कुशलता अतर्क्य है। उनकी अनन्य शरण में जाओ। कल्याण निश्चित होगा।। 82 ।। विचार मन को अनुकूल लगा। रतन जी ने जाने का निश्चय किया। कुछ दिन व्यतीत होते ही रतन जी शिरडी पहुंच गये।। 83 ।। मस्जिद में दर्शन करने गये। साईं चरणों में साष्टांग दण्डवत किया । पुण्य के भण्डार महाराज को देखकर उनके अन्दर प्रेम उमड़ पड़ा ।। 84 ।। फलों की डलिया को खोला, फूलों का हार निकालकर प्रेम से बाबा के गले में पहना दिया | चरणों में ढेर सारे फल समर्पित किये।। 85 ।। अति विनीत होकर रतन जी अति आदर युक्त होकर बाबा के पास जाकर बैठे। उनसे जो प्रार्थना की, सुनो।। 86 ।। "लोग महासंकट में पड़ने पर आपके चरणों के निकट आते हैं। बाबा आप तुरंत रक्षा करते हैं। मैंने यह कहानी सुनी है।। 87 ।। इसीलिए यहां तक मिलने के लिए आया हूं, बड़ी उत्कंठा लेकर । अतः सादर चरणों में प्रस्तुत करता हूं। महाराज वापस न करियेगा।। 88 ।।" फिर बाबा उनसे बोले, "आते-आते आज आये हो । मुझे देने के लिए क्या दक्षिणा है, दोगे, फिर तुम कृतार्थ होगे ।। 89 ।।" कोई भी दर्शनार्थी आता, चरणवंदन करने लगता, वह हिन्दू, यवन अथवा पारसी होता, उससे दक्षिणा मांगते।। 90 ।। फिर वह क्या कम होती थी ,रुपया एक, दो या पांच कुल सौ, हजार, लाख, करोड़ रुपये की दक्षिणा स्वेच्छा से मांगते, यदि उन्हें अच्छा लगता।। 91 ।। देते, फिर और लाओ। समाप्त हो गया, उधार ले लो। जब कहीं से उधार नहीं मिलता तब फिर मांग रुक जाती ।। 92 ।। और अपने भक्तों से कहते " किंचित भी चिन्ता मत करना, मैं तुम्हें बहुत रुपये दूंगा। तुम मेरे पास निश्चिंत बैठो।। 93 ।। दुनिया में किसी का कोई है, और किसी का कोई है, अपना है तो यहां कोई नहीं है, अपना अल्ला ही अल्ला है।। 94।। मुझे समर्पित की जाने वाली वस्तुओं के साथ ,जो जीव मुझे प्राण देता है, वह मुझे एक गुना देता है, मैं उसे सौ गुना देता हूं।। 95 ।। वह बड़ा लखपति हो सकता है। उसे भी दक्षिणा मांगने के लिए निर्धन के घर जाने के लिए महाराज आज्ञा करते।। 96 ।। बड़ा धनी हो या रंक, गरीब दुर्बल अथवा कौड़ी विहीन, एक छोटा या एक बड़ा साईं को मालूम नहीं था।। 97 ।। आज्ञा सादर मानकर अंदर से निरभिमान होकर बाबा गरीब के घर जाकर याचना करते ।। 98 ।। अब अन्त में सारांश यह कि दक्षिणा के बहाने बाबा अपने भक्तों को शालीनता सिखाते रहते ।। 99।। किसी को ऐसी शंका उत्पन्न हो सकती है, साधु को धन क्यों चाहिए। यदि इस दिशा में सावधानीपूर्वक विचार किया जाये तो मन की आशंका दूर हो जाती है।। 100 ।। यदि कोई पूर्ण काम है ,दक्षिणा का क्या प्रयोजन? ये निष्काम कैसे हो सकते हैं, भक्तों से जो दान मांगते हैं।। 101 ।। गारा (साधारण पत्थर) और हीरा, ताम्र-मुद्रा हो या स्वर्ण मुहर दोनों ही का मूल्य एक परिमाण का है तो अपना हाथ क्यों फैलाते हैं।। 102 ।। उदरपूर्ति के लिए भिक्षा मांगते, वैराग्य की है दीक्षा ली हुई है, उस विरक्त निरपेक्ष को दक्षिणा की क्या अपेक्षा ? ।। 103 ।। अष्टसिद्धियाँ हाथ जोड़कर जिनके द्वार पर सदा बैठी रहती हैं, नवनिधि जिनकी आज्ञाधारी

हैं, द्रव्य के लिए उनकी क्या लाचारी ।। 104 ।। सांसारिक सुखों को लात मारने वाले, स्वर्गिक आनन्द से मुंह फेरने वाले सम्यकदर्शी विरक्त जो है, उसको धन किसलिए ।। 105 ।। जो संत साधु सज्जन, जो उत्तम श्लोक परायण, भक्तों के कल्याण के लिए जिनका जीवन, उसे धन की क्या आवश्यकता ? ।। 106 ।। साधु के लिए दक्षिणा किस काम की। उनका मन तो इच्छाविहीन होता है। फकीर होकर लोभ से मुक्ति नहीं, नित्य पैसे के लिए आराधना ।। 107 ।। प्रथम दर्शनपर दक्षिणा लेते । पुनः दर्शन पर दक्षिणा मांगते, जाने की आज्ञा मांगने पर और दक्षिणा लेते । क्षण-क्षण यह क्यों ? ।। 108 ।। पहले उत्तरापोशन का जल फिर बाद में हस्तमुख प्रक्षालन, इत्र से हाथ धोना, तांबूलदान, तब दक्षिणा मांगते हैं।। 109 ।। किन्तु बाबा का क्रम विलक्षण है। चंदन का विलेपन हो रहा है या अक्षत आदि से अलंकरण दक्षिणा प्रदान करने की आकांक्षा करते ।। 110 ।। आरंभ में ही आराधना से पूर्व बाबा पहले दक्षिणा मांगते। उसी क्षण "ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु" करना पड़ता ।। 111 ।। फिर भी इस शंका का निवारण करने में महाप्रयत्न नहीं लगेगा । एक क्षण के लिए ध्यान दें संतुष्टि प्राप्त हो जायेगी।। 112 ।। धन का जो संचय करते हैं, धर्म को सिद्ध करने के आशय से, किन्तु छोटे-छोटे काम और विषय में इसका अतिशय खर्च होता है।। 113 ।। धन से धर्म सिद्ध होता है, धर्म से ज्ञान का खजाना जोड़ते हैं, स्वार्थ से परमार्थ पर चढ़ते हैं, मन को संतुष्टि प्राप्त होती है।। 114 ।। आरंभ में बहुत कालपर्यंत बाबा कुछ भी नहीं लेते थे। जली हुई काड़ी (माचिस की तीली) संग्रह करते उसी से जेब भरते ।। 115 ।। भक्त हो या अभक्त किसी से कुछ नहीं मांगते थे। एकाध पैसा एकत्र हो गया तो उससे तम्बाकू और तेल ।। 116 ।। तम्बाकू से बहुत प्रेम था । बीड़ी अथवा चिलम खींचते (पीते) ,उस चिलम की सेवा भी निःसीम थी । बहुधा बिना धुएं के नहीं रहती ।। 117 ।। बाद में किसी के मन में आया दक्षिणा के बिना खाली हाथ संत दर्शन के लिए कैसे जावें । उसके लिए वे दक्षिणा लिये ।। 118 ।। "दिडकी" (एक पैसे का तीन चौथाई भाग) देने पर, जेब में डाल लेते। किसी के दो पैसे का सिक्का देने पर, इसे देने वाले को वैसे ही वापस कर देते । यह क्रम बहुत समय तक चला ।। 119 ।। परन्तु कुछ समय बाद साईं बाबा का माहात्म्य बढ़ने पर, भक्तों का जत्था आने लगा। विधिपूर्वक पूजन आरंभ हो गया ।। 120 ।। सुवर्ण-पुष्प-दक्षिणा के बिना पूजा पूर्ण नहीं होती यह जानकर पूजा करने वाले (पूजन) शास्त्रों के अनुसार नित्य विधान से पूजा करते ।। 121 ।। राज्याभिषेक सिंचन हो अथवा पाद पूजन संपादित हो रहा हो ,पूजक सादर उपहार लाते हैं, वैसे ही गुरुपूजा में दक्षिणा देते हैं ।। 122 ।। दक्षिणा देने वाले उच्च स्थान स्थित होते हैं (स्वर्ग), स्वर्णदान करने वाले ज्ञानवान होते हैं। जो हेम देते हैं, शुद्धि मति होते हैं। यह वेदों के वचन है।। 123 ।। गंधदान से सौमंगल्य, अक्षत से आयुःवर्धन, पुष्प-ताम्बूल अर्पण से श्री ऐश्वर्य तथा दक्षिणा से बहुत धनता प्राप्त होती है।। 124 ।। जैसे गंधाक्षत पुष्प तांबूल पूजा सामग्री के मूल हैं, वैसे ही दक्षिणा व स्वर्ण फूल बहुधन फल वितरण के लिए है ।। 125 ।। देवता पूजन के लिए दक्षिणा आवश्यक है, वैसे

ही लोगों के व्रत उद्यापन की सम्पूर्ण सिद्धि के लिए, फल व मिष्ठान का दान तथा स्वर्ण का अर्पण आवश्यक होता है।। 126 ।। जगत का सार लेन-देन पैसे पर आधारित है।अपनी प्रतिष्ठा को आंच न आये इसलिए पैसा खूब खर्च किया जाता है।। 127 ।। "हिरण्य गर्भ-गर्भस्थ" इत्यादि मत्रोंच्चरण करके देव पूजन में दक्षिणा सम्मत है, तो संत पूजा में क्यों नहीं है ।। 128 ।। संत के दर्शन के लिए जाते हुए अपने-अपने ज्ञान के अनुसार किसी की कोई सोच होती है। एक मत होना कठिन होता है।। 129।। किसी के मन में भजन भाव होता है, कोई संत परीक्षा में लगता है, कोई कहता है मन की बात बताये तो संत है।। 130।। कोई दीर्घायुता, हाथी, सोना, संपत्ति, जायदाद के लिए प्रार्थना करता, कोई पुत्र पौत्र व अखंडित सत्ता मांगता ।। 131 ।। किन्तु बाबा की अगाध शैली अद्भुत थी। कोई उपहास करने आता दुर्बुद्धि घुल जाती | चरण कमलों में समर्पित हो जाता ।। 132 ।। यदि यह संचित भाग्य न होता तो उनके चित्त को अनुताप (पश्चाताप) होता । दृढ़ अनुभूति होते ही उनका अभिमान समाप्त हो जाता है।। 133 ।। ये सब तो साधारण भक्त, सब प्रकार से प्रपंच में आसक्त हैं। दक्षिणादान से उनका चित्त शुद्ध होगा, ऐसा बाबा का मनोगत होता।। 134।। श्रुति में आत्मज्ञान के लिए उत्सुक व्यक्ति के लिए, स्पष्ट वचनोक्ति कही गयी है, "यज्ञेन दानेन तपसा "। दक्षिणा प्रदान करना साधन की युक्ति है।। 135 ।। भक्त स्वार्थी या परमार्थी हो, इष्ट प्राप्ति के लिए अपने गुरु को दक्षिणा उसे देनी है, अपने हित के लिए ।। 136 ।। प्रजापति ने तीन बेटों देव दैत्य व मानव से यही कहा, बह्मचर्य वास समाप्त होने पर, उपदेश मांगने पर ।। 137 ।। "द" एक अक्षर का उपदेश किया । इससे क्या बोध हुआ । यही विचार दृढ़ किया । गुरु शिष्य की लीला अभिनव है।। 138 ।। देवताओं ने समझा 'दम', "नियन्त्रित होना चाहिए" । असुर समझे, "दया करो" । 'दान दो' मानव ने समझा । प्रजापति बोले, "अच्छा-अच्छा" ।। 139।। देव कोई अन्य नहीं है मानव ही है, किन्तु स्वभाव भिन्न है । विद्वेष रहित उत्तम गुण संपन्न, इनके नाम देव हैं।। 140 ।। मानवों में ही असुर भी हैं, वे हिंसक दुष्ट क्रूर। मानव भयंकर लोभ से पीड़ित । ये तीन प्रकार के मानव हैं।। 141 ।। यद्यपि नर लोभ प्रधान है। किन्तु कृपा सागर साईंनाथ लोभ के गर्त से बाहर निकालने के लिए भक्त के हित के लिए अपने हाथ से खींचते हैं।। 142 ।। श्रुति भी देखो , तैत्तिरीयोपनिषद का ग्यारहवाँ अनुवाक्य । दान की अनेक प्रकारों की आज्ञा की गयी है। उनमें से प्रत्येक को सुनो।। 143 ।। नित्य दीजिए, श्रद्धा से दीजिए । बिना श्रद्धा से दिये जाने पर (फल) नहीं मिलता। राजाज्ञा व शास्त्राज्ञा के भय से या फिर लज्जा से कुछ दीजिए ।। 144 ।। विवाह आदि लोकाचार है वहां भी उपहार देना होता है। मित्राचार की रक्षा के लिए दिया जाता है। लोक व्यवहार की भी यही शिक्षा है।। 145 ।। बाबा भी भक्त की ओर "द" कहते हैं। भक्त के हित के लिए उससे मांगते हैं। दया करो, दान करो, (इन्द्रियों का) निरोध करो । अत्यन्त सुख पाओगे।। 146 ।। अदान्तत्व आदि तीन दोष हैं। त्रिदोष का क्षय करने के लिए एकाक्षर सूक्ष्म उपाय शिष्य के लिए गुरुराया ने योजित किया।। 147 ।। काम,

क्रोध और लोभ । आत्मोन्नति के लिए अशुभ है उनको जय करना दुर्लभ है। उसके लिए ही उपाय सुलभ कराया।। 148 ।। जैसा "श्रुति" में वैसा ही "स्मृति" में । वहां भी यही अनुमत है। श्रोताओं के लिए, दृढ़ प्रतीति के लिए, उसी का उद्धरण देते हैं ।। 149 ।। ----

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ।।- श्रीमद्भगवद्गीता, अ. 16 श्लो. 21।।

"ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा का नाश करने वाले (उसको अधोगति में ले जाने वाले) हैं- काम,क्रोध, लोभ । अतएव इन तीनों को त्याग देना चाहिए।" काम, क्रोध, लोभ को नरक के तीन द्वार जानो। इससे आत्मा विनाश को प्राप्त होती है। अतः इन्हें स्पष्टतः त्याग देना चाहिए ।। 150 ।। साईं समर्थ परम दयालु हैं। वे भक्त के हित को साधने के लिए उनसे दक्षिणा मांगते व त्याग करने की शिक्षा देते ।। 151 ।। दक्षिणा की क्या कीमत । गुरु वचनों को साधने के लिए प्राण भी देने के लिए जो उद्यत नहीं है उनका परमार्थ है क्या ? ।। 152 ।। वास्तव में भक्त कल्याण के अतिरिक्त बाबा की दक्षिणा का क्या कारण ? स्वयं उनका जीवन दक्षिणा पर निर्भर नहीं था ।। 153 ।। पेट भरने के लिए भिक्षा मांगते थे । दक्षिणा के पीछे स्वार्थ नहीं था। दक्षिणा दान से चित्त शुद्धि होगी अपने भक्तों की, यही उद्देश्य था ।। 154।। ऊपर वेद वचन निर्दिष्ट है तदनुसार दक्षिणा प्रदान । पहले शपथ लिए बिना पूजन सम्पूर्ण नहीं होता ।। 155 ।। अब दक्षिणा कथा पर्याप्त, तल्लीनता के लिए स्पष्ट हो गयी । न अभिलाषा, न स्वार्थ । भक्त के निजहित के लिए दक्षिणा थी।। 156 ।। अब कथा भाग कहते हैं। आगे पूर्ण निवेदन करते हैं। रतन जी का एक दक्षिणा प्रसंग साईं का कौतुक है।। 157 ।। श्रोता पूर्ण कृपापूर्वक इस अद्भुत कथा को सुनें । साईं स्वरूप कैसे व्यापक है। कैसे अलौकिक दिखते हैं।। 158 ।। सेठ जी से पैसे की दक्षिणा मांगते हुए साईं ने पूर्व वृत्तांत सुनाया । किन्तु सेठ जी के चित्त में स्मरण नहीं हुआ । उनको विस्मयता हुई।। 159 ।। तीन रुपये चौदह आने तुमने मुझे दिया यह मैं जानता हूं, शेष जो मेरे लिए लाये हो वह मुझे दक्षिणा में दो।। 160 ।। यह तो बाबा का प्रथम दर्शन है। बाबा के वचन सुनकर रतन जी सेठ विस्मित होकर स्मरण करने लगे।। 161 ।। शिरडी इससे पूर्व आये नहीं, न किसी से कुछ मंगवाया । महाराज साईं बोलते हैं ऐसा है, आश्चर्य देखो।। 162 ।। ऐसा कभी घटित नहीं हुआ, रतन जी का मन बहुत संकट में पड़ गया । दक्षिणा दिया पांव पड़े, किन्तु

कठिनाई समझ में नहीं आयी ।। 163 ।। वे सब वहीं छोड़ कर आने का प्रयोजन निवेदन किया। पुनः दण्डवत किया। अपने हाथ जोड़कर बैठ गये ।। 164 ।। सेठ जी मन में बहुत संतुष्ट थे। बोले, "बाबा ! अच्छा रहा पूर्व भाग्य उदित हुआ चरणों के दर्शन हुए ।। 165 ।। मैं भाग्यहीन अल्पज्ञ हूं। पूजा अर्चना यज्ञ नहीं जानता । भाग्यवश त्रिकालज्ञ व प्राज्ञ के दर्शन हो गये हैं।। 166 ।। आप जानते हैं मेरी चिंता, कृपावंत, उसे दूर करिये । हे दयाला ! इस अनन्य भक्त को चरणों से वापस ढकेलिये नहीं ।। 167 ।।" साईंनाथ को दया आ गयी। बोले," वृथा चिंता मत करो। तुम्हारे दुर्भाग्य के पांव अब यहीं से उतरने लगे हैं।। 168 ।।" प्रसाद ऊदी हाथ में दिया | कृपा का हाथ सिर पर रखा। "मन की मुराद अल्ला पूरी करेगा" सेठ जी को आशीर्वाद दिया ।। 169 ।। फिर आज्ञा प्राप्त करके रतन जी नांदेड वापस आये । जो-जो जैसे-जैसे घटित हुआ सविस्तार गणुदास से कहा ।। 170 ।। यथा योग्य दर्शन प्राप्त किया, मन आनन्द से भर गया। प्रसाद पूर्वक आश्वासन व आशीर्वचन प्राप्त किया।। 171 ।। यथा स्थिति सब घटित हुआ, किन्तु एक मैं नहीं समझ सका | महाराज यह क्या बोले कुछ भी मेरी समझ में नहीं आया ।। 172 ।। "तीन रुपये चौदह आने तुमने मुझे दिया मैं जानता हूं।" बाबा यह क्या बोले । विस्तार से मुझे सब स्पष्ट करिये ।। 173 ।। कहां से रुपया कहां से आना? पूर्व में कहां से देना हो गया? इसका उद्देश्य थोड़ा भी समझ में नहीं आता। शिरडी जाना प्रथम बार हुआ है।। 174 ।। मुझे तो कोई समाधान नहीं समझ में आता | मुझे तो रहस्य प्रतीत होता है तुरंत मैं इसका समाधान नहीं कर सकता आप इस रहस्य को खोलेंगे क्या ।। 175 ।। विचार करने लगे कि इसका सार क्या हो सकता है? मन में कुछ निश्चित नहीं हो पा रहा था।। 176 ।। पूर्ण विचार करने पर उन्हें स्मरण आया । एक अवलिया की मूर्ति जिसे मौली साहब बोलते थे बुवा के चित्त में स्मरण हुआ।। 177 ।। जाति से वह मुसलमान थे। संत के समान जीवनचर्या थी। काम (धंधा) कुली का करते । भाग्याधीन जीवन यापन था ।। 178 ।। उनका चरित्र विस्तार से देने में ग्रंथ का विषयान्तर होगा । नांदेड में सभी मौलीसाहब की चरित्र कथा जानते हैं।। 179 ।। शिरडी जाने का निश्चित हो जाने पर मौली साहब सेठ जी के घर स्वेच्छा से सहज ही आये ।। 180 ।। उन दोनों में अपरंपार परस्पर प्रेम था। फलपान, सुमनहार, यथोपचार अर्पित किया गया ।। 181 ।। सेठ जी को प्रेरणा हुयी, मौली को सूक्ष्म भोजन कराया । उसमें किये गये खर्च का स्मरण दासगणू को तत्क्षण हो आया ।। 182 ।। खर्च की सूची मंगायी गयी एक-एक पैसा गिना गया, फिर उसे जोड़ दिया गया, योग बराबर आया।। 183 ।। ठीक तीन रुपये चौदह आना न अधिक न

कम | उसकी स्वीकारोक्ति बाबा ने की । सर्वत्र सर्वतोमुखी प्रतिभा पर आश्चर्य हुआ।। 184 ।। साईं महाराज ज्ञान राशि थे। मस्जिद में बैठे-बैठे भूत, भविष्य, वर्तमान देश में कहीं भी घटित हो, जानते थे।। 185 ।। सभी भूतों में एकात्मता की वास्तविकता के बिना साईं समर्थ यह किस प्रकार अनुभव करते अथवा दूसरों से कहते ।। 186 ।। शिरडी से नांदेड़ दूर है, दोनों के मध्य बहुत अंतर है। ये संत भी परस्पर अपरिचित थे। साईं ने यह सम्पर्क कैसे बनाया ।। 187 ।। मैं तो एक साईं महाराज हू मौली बुवा कोई और है, भेद बुद्धि का इस अनेकत्व का विवेक दोनों में नहीं था ।। 188 ।। मौली बुवा की आत्मा वही थी जो सब के अंदर थी। किन्तु यह एकात्मता का धर्म यह रहस्य जो जाने वह धन्य है।। 189 ।। बाह्य देह से अलग-अलग, अंतर में देखो नित्य मुक्त थे। "वे दोनों" कहना ही गलत है, थोड़ा भी विभक्त वे नहीं थे ।। 190 ।। उन दोनों का एक ज्ञान, एक प्राण, एक अनुसंधान (उद्देश्य) । दोनों ही एक चैतन्यघन, वृत्ति में भी एक समान ।। 191 ।। शिरडी नांदेड़ में बहुत दूरी थी किन्तु दोनों का अंतर (मन) एक था एक प्राण एक शरीर। इसी से परस्पर सम्पर्क था ।। 192 ।। कितने अद्भुत हैं ये साधु संत । बिना तार के तारयन्त्र। सृष्टि में कुछ भी कहीं भी घटित होता है उसके विस्तार से ये अवगत होते हैं।। 193 ।। बाद में आवश्यक समय व्यतीत होने के बाद रतन जी की मनोकामना पूरी हुई उनकी स्त्री को गर्भ रहा। आशा का वृक्ष प्रस्फुटित हुआ ।। 194 ।। शुभ समय पर घरवाली का प्रसव हुआ। आशीर्वचन सत्य हुआ । पुत्र रत्न पैदा हुआ रतन जी आनन्दित हुए ।। 195 ।। बहुत वर्षों तक सूखा पड़ने के बाद अचानक वर्षा की फुहार पड़ने पर जैसा होता है, वैसे ही सेठ जी, पुत्ररत्न प्राप्त होने पर, संतुष्ट होकर शांत हो गये ।। 196 ।। बाद में वंशबेल फूलने लगी यथा क्रम विस्तार होता गया पुत्र-पुत्रियों के सुख से लदे हुए रतनजी सुखी हो गये ।। 197 ।। बाद में साईं दर्शन के लिए जाते। उनके आशीर्वचन प्राप्त करके मनोकामना पूर्ण हो गयी, रतन जी का मन तुष्ट हो गया ।। 198 ।। बसंत में आम सुफलित होता है। सभी फल पक नहीं पाते । बारह पुत्रों में से चार जीवित रहे आज भी सुख व आनंद से हैं।। 199।। स्वतः स्फूर्त जो जो घटित हुआ, रतन जी जैसा कि अच्छे स्वभाव के थे, बिना तिल भर खेद किये स्वीकार किया।। 200 ।। अब आगे की कथा का सार । साईं चर अचर में है व्याप्त हैं। कोई भी कहीं भी स्थिर बैठा हुआ ध्यान करके वास्तविक अनुभव कर सकता है।। 201 ।। थाना शहर में एक लाचार गरीब जिसका उपनाम चोल्कर था । कैसे उसके भाव के लिए गुरुवर प्रसन्न हो गये।। 202 ।। पहले कभी देखे बिना कैसे उसने साईं का व्रत लिया? कैसे उसके मनोरथ पूरे किये?

कैसे उसको अनुभव दिया है गया? ।। 203 ।। प्रेम के बिना भजन क्या है या अर्थ बिना पोथी पढ़ना । भाव (श्रद्धा) के बिना देव कहां, सब कुछ थकान भरा है।। 204 ।। कुमकुम तिलक बिना भाल (माथा) अनुभव बिना ज्ञान व्यर्थ है। ये बोल पुस्तक विद्या के नहीं हैं। अनुभव करके मूल्यांकन करें।। 205 ।।साई की लीला का लेखन क्यों? इसका सम्बंध मुझे नहीं ज्ञात है।जो साई ने लिखवाया, मैं तो केवल मध्यम ,उसका प्रयोजन वही जानें।।206।। इसके अतिरिक्त ग्रंथ के लिए पात्रता आवश्यक है मैं तो साईं की चाकरी करता हूं उन्हीं का दफतरदार हूं। उनकी आज्ञा का पालन करता हूं।। 207 ।। श्रोता चातक की भांति प्यासे हैं। साईं समर्थ स्वानन्दघन हैं। कथा जीवन की अगाध वर्षा करते हैं प्यास बुझाने के लिए ।। 208 ।। जिनकी सत्ता से यह वाणी है जिनके चरित्र का वर्णन कर रहा हूं उनके चरण रज कण में यह शरीर लेटता रहे।। 209 ।। वही वाणी को प्रवर्तित करते हैं वही अपनी कथा के कथाकार हैं उन्हीं के पांवों में मेरा चंचल चित्त स्थिरता पाता है।। 210 ।। जैसे यह कायिक और वाचिक है वैसे ही यह भजन मानसिक हो । मेरे लिए असीम सुखदायक है। मैं साईं का दीन चपरासी हूं।। 211 ।। चरित्र वर्णन करने वाले और कराने वाले वास्तव में साईं ही हैं, फिर क्या वे श्रोता से भिन्न हैं। वह भी साईं के बिना दूर नहीं हैं।। 212 ।। देखने के लिए केवल चरित्र दिखता है, किन्तु यह सकल साईं का खेल है। स्वयं ही प्रेमल खिलाड़ी हैं प्रबल खेल प्रारंभ कर दिया है।। 213 ।। साईं बाबा का चरित्र अगाध है। भक्तों को विचित्र अनुभव देने के लिए मुझे निमित्त मात्र बनाया है। निज छात्र समुदाय को संतुष्ट करने के लिए। 214 ।। चरित्र नहीं सुख का भंडार हैं, निज परम अमृत का फल हैं भक्ति भाव करने वाले, विशेष भाग्य से, इसका सेवन कर सकते हैं।। 215 ।। गुरुकृपा की अद्भुत महिमा है। भक्तों को स्मरण रहे हमने ग्रंथ का परिश्रम इसलिए किया कि भक्त को शांति मिले ।। 216 ।। प्रेम से चरित्रगान करने, श्रवण से, उल्लास होगा । कथा को व्यवहार में परिणत करने पर भक्त का भक्ति प्रेम बढ़ेगा ।। 217 ।। रात दिन श्रवण करने से माया मोह बंधन टूटेगा । त्रिपुटी का भान समाप्त होगा। श्रोताजन सुख संपन्न होंगे।। 218 ।। श्री साईं चरण पकड़कर हेमाड अनन्य भाव से शरण में हैं। पांवों में अखण्ड साष्टांग करते हैं, एक भी क्षण विश्राम किये बिना ।। 219 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" का "रतनजी साईं समागम" नामक चौदहवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय पन्द्रहवां (चोळकर शर्कराख्यान) ।।

।। श्री गणेश को नमन।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

जिनके अगाध पुण्य फलित होते हैं, उन्हें ही साईं दर्शन प्राप्त होता है, त्रिविधताप उन्हें बाधित नहीं करते, परमार्थ का साधन साध सकते हैं।। 1 ।। श्रोताजन कृपा करके निजगुरु का चिंतन एक क्षण के लिए करें। मेरे प्रति ध्यान करके कथा में सादर मन लगायें ।। 2 ।। "आह तुम्हें हम खूब जानते हैं। तुम्हारे लिए व्यर्थ परिश्रम क्यों करें" ऐसे मत कहिए । क्षमा करिए, आप सागर से उपमा के योग्य हैं।। 3 ।। यद्यपि अपरंपार भरा हो फिर भी सागर नदी को वापस नहीं करता । मेघ सहस्रधार वर्षा करें उसे भी स्थान देता है।। 4 ।। उसी प्रकार तुम श्रोता सज्जन हो। तुम्हारे में स्नान करने की इच्छा रखता हूं ,मुझे धिक्कारो नहीं। दीन को त्यागना अच्छा नहीं होता ।। 5 ।। गंगा जल हो या गांव का गंदला सोता सागर से मिलने पर दोनों को ही स्थान मिलता है, संगम बिना खलबली के होता है।। 6 ।। इसलिए हे श्रोता तुम्हारे चित्त में संतकथा श्रवण के प्रति जो आस्था है वह स्वयं सफल होगी। कृपया मेरे प्रति ध्यान दीजिए।। 7 ।। सबूरी और श्रद्धा के साथ सादर इस कथामृत का सेवन करने से प्रेमयुक्त भक्ति प्राप्त होगी, श्रोता कृतकृत्य होंगे।। 8 ।। भक्तों को सहज ही परम प्रीति होगी, श्रोताओं को भक्ति और मुक्ति, भावार्थियों को सुख व शांति, सभी को निजविश्रांति ।। 9 ।। गुरुमुख से सुखदायी कथा सुनकर भव भय व्यथा समाप्त हो जाती है। श्रोताओं के चित्त में आनन्द होता है। निज आत्मा स्वयं प्रकट होगी।। 10 ।। इस अध्याय में प्रेमल भक्तों द्वारा साईं से प्रार्थना, कैसे प्रसन्न होकर साईं दर्शन देते हैं का निरूपण है उसे सुनो।। 11 ।। अभी-अभी पिलाकर बाहर गयी हो यद्यपि , फिर भी पुनः बिल्ली के आने पर बच्चे उसके आसपास चलने लगते हैं । प्रेम से दूध पीने के लिए दौड़ते हैं।। 12 ।। थककर उसके गुर्राने पर क्षण के लिए बच्चे सहम जाते हैं। माँ का आराम से बैठना पर्याप्त होता है दूध पीने के लिए पुनः चक्कर काटने है के लिए ।। 13 ।। (बच्चों द्वारा) स्तनपान करते, प्रेमपूर्वक लोलुपता से निगलते, माँ के स्तन में दूध उतर कर बूंद-बूंद कर निकलने लगता है। फिर अपना पहले का गुर्राना भूल कर प्रेम से जमीन पर फैल जाती है।। 14 ।। प्रेम उदित होता है थकान दूर हो जाती है चारों पैरों से अपने बच्चों को दृढ़ता से चिपकाकर पकड़कर, बार-बार चाटती है । यह उत्सव अलौकिक होता है।। 15 ।। बच्चों के तीक्ष्ण नख प्रहार से ज्यों-ज्यों माता का थन (स्तन) है विदीर्ण होता है त्यों-त्यों अधिक प्रेम बहता है, दूध अनेक धाराओं में निकलता है।। 16 ।। जैसे उसके बच्चे की अनन्य भक्ति माता में

दुग्ध उत्पत्ति करती है वैसे ही तुम्हारी साईंपदों में आसक्ति साईं के चित्त को द्रवित करती है।। 17 ।। एक बार, हरि भक्ति परायण, "थाना" के लोगों ने दासगणू के सुश्रव्य कीर्तन की व्यवस्था कौपीनेश्वर के निकट करायी।। 18 ।। शिष्ट लोगों द्वारा आग्रह करने पर गणुदास कथा कहने का उपकार करते, एक पैसे पाने की चाह अथवा दुराग्रह भी वहां नहीं होता ।। 19 ।। कीर्तन के लिए एक कौड़ी भी नहीं लगती। नंगे शरीर, सर पर पगड़ी नहीं, कमर में धोती बांधकर। श्रोताओं की भीड़ अनियंत्रित होती ।। 20 ।। इस पोशाक की भी कथा है। सुनने से मौज आती है। स्थिर चित्त से इसे सुनो और देखो बाबा की आश्चर्यता ।। 21 ।। एक बार गणुदास की कथा शिरडी ग्राम में होनी थी। अंगरखा, उपर्ण तथा सर पर पगड़ी की पोशाक पहनकर आये ।। 22 ।। शिष्टाचार के अनुसार आनन्द से बाबा की वंदना करने गये । बाबा ने देखते ही कहा, " वाह ! वाह ! अब क्या दूल्हा सजा है ।। 23 ।। ऐसा सजकर कहां जा रहे हो ?" बाबा ने उनसे पूछा । "कीर्तन करने जा रहा हूं" दासगणू ने उत्तर दिया ।। 24 ।। आगे बाबा ने उनसे कहा "अंगरखा, उपर्ण, पगड़ी। किस उद्देश्य से इतना प्रयास। ये कुछ हमारे लिए नहीं है ।। 25 ।। मेरे समक्ष इसे उतारो शरीर पर इनका भार क्यों ?" तब उनकी आज्ञानुसार उन्होंने उनके चरणों में डाल दिया।। 26 ।। उसके बाद से आज तक कीर्तन के समय सदैव हाथ में "चिपलिस" गले में माला नंगे स्वस्थ बदन दासगणू रहते हैं।। 27 ।। यद्यपि यह शैली पारंपरिक नहीं है फिर भी इसका आधार अत्यन्त शुद्ध है वह जो प्रबुद्धों में प्रबुद्ध है, नारद का प्रसिद्ध मार्ग है।। 28 ।। नारदीय (परंपरा) की मूल गद्दी यही है। यहीं से हरिदास परंपरा प्रारंभ हुई। जिसमें बाह्य सज्जा का कारण नहीं है, जिसका ध्येय अन्तःशुद्धि है।। 29 ।। अधोभाग वस्त्र से आच्छादित, चिपलिस व वीणा बजाते हुए, मुख से हरिनाम जोर-जोर से बोलते हुए, सर्वविदित, नारद का ध्यान करें ।। 30 ।। साईं समर्थ की कृपा से संतों के आख्यान की स्वयं रचना करके बिना पैसा लिए कीर्तन करते। उससे ख्याति पायी।। 31 ।। साईं भक्ति का उल्लास दासगणू ने वास्तव में फैलाया । साईं प्रेमरस की वृद्धि करके स्वानंद का सागर कर दिया।। 32 ।। भक्त शिरोमणि चांदोरकर, उनका भी अत्यन्त उपकार है साईं चरण भक्ति के विस्तार का मूल कारण यही है।। 33 ।। दासगणू के यहां आने का एक चांदोरकर ही कारण हैं, जाग जाग कर उनका कीर्तन, साईं के भजन करते ।। 34 ।। पुणे नागर व शोलापुर प्रांत (जिला) में महाराज की ख्याति पहले से ही थी। किन्तु कोंकण के लोगों में भक्ति यही दोनों लोग लाये ।। 35।। मुबई प्रांत में जो साईं भक्ति है उसके मूल में यह दो लोग हैं, साईं महाराज, कृपामूर्ति इन्हीं के माध्यम से (मुंबई में) प्रकट हुए ।। 36 ।। श्री कौपिनेश्वर मंदिर में साईंकृपा का जोर-जोर से किये गये कीर्तन व हरिनाम के जयजयकार में चोलकर को लहर उठी ।। 37 ।। कीर्तन सुनने के लिए अनेक आते, अनेक प्रकार का श्रवण करते। कोई बुवा की कुशलता (दक्षता) पसन्द करता, कोई हाव भाव-स्थिति ।। 38 ।। कोई गाने की प्रशंसा करता, वाह बुवा क्या गाते हैं, विट्ठल

के नाम में क्या रंग जाते हैं, कथा कहते-कहते प्रेम से नाचने लगते हैं।। 39 ।। किसी की भक्ति पूर्वरंग (प्रस्तावना) में होती, किसी की आसक्ति कथा भाग में होती, किसी को हरिदास की नकल रुचती, किसी की प्रीति आख्यान में होती।। 40 ।। बुवा प्राकृत (संस्कृत) में प्रवीण हैं अथवा पद के अर्थ के अनेक अर्थ करने में सिद्ध हैं अथवा केवल उत्तररंग (बाद के भाग) में प्रवीण हैं, कथा श्रवण के प्रकार हैं।। 41 ।। ऐसे श्रोता बहुत हैं, किन्तु श्रवण के साथ-साथ श्रद्धा भक्ति, ईश्वर या संत चरणों में प्रीति हो ऐसी श्रोता स्थिति वाले श्रोता दुर्लभ हैं।। 42 ।। श्रवण पूर्ण क्षमता भर किया, किन्तु अविद्या की पर्त पर पर्त है उस श्रवण का क्या प्रमाण? वह पूर्ण क्षमता भर श्रवण व्यर्थ है।। 43 ।। जिससे मैल साफ न हो उसे क्या साबुन कहा जाये । जिससे अविद्या का हास न हो उसे क्या श्रवण कहा जाये।। 44 ।। चोलकर पहले से ही श्रद्धालु थे साईं प्रेम से वह खिल गये । मन में बोले ," बाबा कृपालु, इस दीन को संभालो"।। 45 ।। बेचारा गरीब आशावान था। कुटुंबभार वहन करने में असमर्थ, सरकारी पद प्राप्त करने के लिए बाबा पर भार डाल दिया।। 46 ।। इच्छा रखने वाले लोग संकल्प करते हैं यदि अभीष्ट प्राप्त हो जायेगा तो ब्राह्मणों की संतुष्टि भर इच्छित भोजन करायेंगे।। 47 ।। श्रीमंत (धनाड्य) लोग संकल्प, वचन करते हैं। बोलते हैं सहस्र भोजन करायेंगे या सौ गौदान करेंगे, मनोकामना तृप्त होने पर ।। 48 ।। चोलकर पहले ही निर्धन थे, संकल्प करने का मन हुआ, श्री साईं चरणों को स्मरण करके दीनवदन वे बोले ।। 49 ।। "बाबा गरीबी का संसार है (मेरा)। नौकरी पर ही सारा दारोमदार है। पगार कायम रहे इसके लिए परीक्षा पास करना आवश्यक है ।। 50 ।। परिश्रम से तैयारी की है। पास होने पर सब कुछ निर्भर है। अन्यथा रोटी के सहारे की आशा भी समाप्त हो जायेगी।। 51 ।। यदि आपकी कृपा से पास हो जाता हूं आपके चरणों में सादर होऊँगा, आपके नाम की मिश्री बाटूँगा । यह मेरा दृढ़ निश्चय है" ।। 52 ।। इस प्रकार संकल्प किया । मन आनन्द से भर गया । संकल्प पूरा होने में बिलंब होने लगा तो शक्कर का त्याग कर दिया ।। 53 ।। मार्ग के लिए गांठ में कुछ होना चाहिए । खाली हाथ कैसे जाये। आज और कल टालते रहे। दिन कठिन लगने लगे।। 54 ।। सहयाद्रि पहाड़ियों की नाणेघाट चोटी पार कर सकते हैं किन्तु सांसारिक लोगों के लिए घर से उबरना बहुत कठिन है।। 55 ।। शिरडी का संकल्प पूरा न होने तक शक्कर मिला पदार्थ असेव्य था, चोलकर की चाय भी बिना शक्कर चलती ।। 56 ।। ऐसे कुछ दिन व्यतीत होने के बाद शिरडी जाने का समय हो गया, उनके द्वारा किया गया संकल्प पूरा हुआ। मन आनन्दित हो गया।। 57 ।। साईं का दर्शन होते ही चोलकर ने साष्टांग दण्डवत किया बाबा के चरणों की वंदना की, वे आल्हादपूर्ण हो गये।। 58 ।। मन को निर्मल कर लेने पर शक्कर बांटा एवं श्रीफल अर्पित किया और बोले, "आज मेरे सकल मनोरथ सफल हो गये ।। 59 ।। साईंदर्शन से आनन्दित हो गये, समर्पण से सुख मिला। चोलकर जोग के अतिथि थे, जोग के यहां जाना था।। 60 ।। जोग उठ गये पाहुन भी तैयार हो गये। बाबा जोग से

बोले, "इन्हें चाय के प्याले पिलाओ, शक्कर से खूब भर के ।। 61 ।। संकेतात्मक अक्षर कान में पड़ते ही चोलकर का मन चमत्कृत हो गया । नयनों में आनंद के आँसू आ गये । माथा चरणों में रख दिया।। 62 ।। जोग को विस्मय की अनुभूति हुई। उससे भी दोगुना चोलकर को । उसका कारण, वही जानते थे मन के अन्दर ढके संकेत को।। 63 ।। बाबा के यहां चाय का स्थान नहीं था । इस क्षण क्यों स्मरण किया? चोलकर के विश्वास को स्थिर करने के लिए, भक्ति को स्पष्ट रूप से हृदय पर चिह्नित करने के लिए ।। 64 ।। थोड़ी ही देर में पर्याप्त **इशारा किया, "चोलकर द्वारा संकल्पित शक्कर मुझे प्राप्त हो गयी है। तुम्हारे त्याग का नियम पूरा हो गया।। 65 ।। संकल्प के समय तुम्हारा चित्त, संकल्प पूरा होने में बिलंब के कारण प्रायश्चित, तुमने यद्यपि गुप्त रखा, वे सब मुझे ज्ञात हैं।। 66 ।। तुम कोई भी कहीं भी रहो, आस्था के साथ मेरी ओर खाली हथेली फैलाओगे, मैं तुम्हारे पीछे खड़ा रहूंगा रात दिन तुम्हारे भाव के अनुरूप" ।। 67 ।। मेरा शरीर है यद्यपि यहां है। तुम सात समुद्रों के उस पार होगे तुम वहां कुछ भी करो मैं तत्काल जान लेता हूं ।। 68।। दुनिया भर में कहीं भी जाओ। मैं तब तुम्हारे साथ रहता हूं | तुम्हारा हृदय मेरा घर है। मैं तुम्हारा अन्तर्यामी हूं ।। 69 ।। ऐसा तुम्हारे हृदय में रहने वाला जो मैं हूं उसी को नित्य तुम पूजो । भूतमात्र का भी अन्तर्यामी वह मैं ही हूं ।। 70।। अत: तुम्हारी भेंट जिससे-जिससे होती है घर में, दरवाजे के बाहर या मार्ग में उन-उन स्थानों पर मैं ही व्यवहार करता हूं मैं ही उनमें बसता हूं" ।। 71 ।। कीट, चींटी, जलचर, नभचर, प्राणिमात्र कुत्ता, सूअर संपूर्ण स्थान पर मैं निरन्तर व्याप्त हूं, सर्वत्र व वास्तव में ।। 72 ।। मुझसे अपने को भिन्न मत समझो। मैं ही तुम हूं निरंतर ऐसे जो नर मुझे जानते हैं उसके भाग्य बड़े हैं" ।। 73 ।।** देखने में यह वार्ता संक्षिप्त है, किन्तु गुण में महान है। चोलकर के प्रति उनकी कितनी अभिरुचि थी कि भक्ति से जोड़ दिया ।। 74 ।। उनके मन में जो जो था, वह वह बाबा ने इस प्रकार उन्हें दिखाया, संपुष्ट प्रमाण के साथ । संतों की क्या दक्षता होती है।। 75 ।। बाबा के बोल अनमोल हैं भक्त के हृदय में गहराई तक प्रवेश कर जाते हैं। प्रेम के बाग को सींचते हैं भक्ति के लिए मस्तूल की भांति है ।। 76 ।। चातक की तृष्णा दूर करने के लिए मेघ सहृदयता से जलधारा की वर्षा करता है परिणामस्वरूप अखिल पृथ्वी शीतल हो जाती है। यह भी शैली है।। 77 ।। चोलकर बेचारा कहाँ, कौन? दासगणू का कीर्तन निमित्त है, संकल्प करने का मन हुआ । बाबा भी प्रसन्न हो गये।। 78 ।। उसी से चमत्कार हुआ। संतो का अन्तर्मन ज्ञात हुआ । बाबा उपदेश के लिए तत्पर हुए ऐसा अवसर प्राप्त हुआ।। 79 ।। चोलकर केवल निमित्त है। सभी भक्तों के हित साधन के लिए अबोधगम्य बाबा नित ज्ञात व दृश्य रहते हैं।। 80 ।। ऐसी ही एक और कथा का वर्णन करता हूं फिर यह अध्याय पूर्ण करता हूं। कैसे एक ने प्रश्न किया। कैसे बाबा ने उत्तर दिया।। 81 ।। एक बार बाबा मस्जिद में अपने आसन पर स्थित थे। एक भक्त सन्मुख बैठा था । एक छिपकली की चिचियाहट सुनायी पड़ी।। 82 ।। छिपकली

का गिरना, छिपकली का बोलना आगे भविष्य के अर्थ का सूचक होता है। सहज ही बाबा से प्रश्न किया जिज्ञासावश ।। 83 ।। बाबा इस पीछे की दीवाल पर किस उद्देश्य से वह छिपकली चुकचुक कर रही है उसके अन्तर में क्या है अशुभकारक तो नहीं है न ।। 84 ।। उससे बाबा बोले, "छिपकली आनन्दित है कि उससे भेंट करने के लिए उसकी बहन औरंगाबाद से यहां आ रही है" ।। 85 ।। पहले, छिपकली जीव है क्या? उसका कैसा बाप व माँ। कैसी बहन कैसा भाई उसका संसार व्यवसाय क्या ? ।। 86 ।। अतः भक्त ने मन में यह सोचकर स्वस्थ क्षणभर बैठ गया कि बाबा विनोदपूर्ण प्रत्युत्तर में ऐसा कुछ बोले होंगे।। 87 ।। इसी समय औरंगाबाद से एक गृहस्थ घोड़े पर सवार होकर बाबा के दर्शन करने आये, बाबा तब स्नान कर रहे थे।। 88 ।। उसे आगे जाना था । दैनिक खुराक के बिना घोड़ा चल नही सकता । थोड़ा चना खरीदने के लिए बाजार जाने के लिए तैयार हुए ।। 89 ।। छिपकली का प्रश्न पूछने वाला आश्चर्य के साथ नव सौदागर को देख रहा था। तभी उसने घोड़े के मुंह का थैला कोख से (लेकर) कचरा झाड़ने के लिए झटका ।। 90 ।। अन्दर का भाग बाहर करके जमीन पर झटकने से एक छिपकली बाहर गिरी। सभी की नजरों के सामने घबड़ाते सरासर दौड़ पड़ी।। 91 ।। प्रश्न पूछने वाले से बाबा बोले, “अब उस पर लक्ष्य करो। (ध्यान से देखो) उस छिपकली की वह बहिन ही है। देखो यह चमत्कार" ।। 92 ।। वह वहां से सीधे बड़ी बहन की ओर चल पड़ी जो चुकचुक कर रही थी। उसकी आवाज की ओर रुख करके चमकते व ठुमकते वह चल पड़ी।। 93 ।। बहन की बहन से मुलाकात हुई । बहुत दिनों पर भेंट हुई । मुख का चुंबन व मित्र भाव से आलिंगन करना, प्रेम का अनुपम प्रदर्शन था।। 94 ।। एक दूसरे के चक्कर लगाते आनन्द से गोल-गोल घूमते, खड़ा, आड़ा, तिरछा, स्वच्छंद फिरकी की तरह चलने लगी।। 95 ।। कहां वह औरंगाबाद शहर ? कहां शिरडी? यह घटना कैसे? कैसे अचानक वह घुड़सवार आया। छिपकली भी उसके साथ-साथ ।। 96 ।। छिपकली औरंगाबाद की थी। घोड़े के मुंह के थैले में प्रवेश कर गयी होगी। किन्तु प्रश्नोत्तर से इसका संबंध? कैसा अवसर उपलब्ध हुआ।। 97 ।। छिपकली क्यों चुकचुकायी? प्रश्न की प्रेरणा क्यों हुई? उसका अर्थ व कारण क्यों बताया गया। तत्काल वास्तविक अनुभव भी हो गया।। 98 ।। ऐसा योग अप्रतिम है, विनोद के प्रति प्रेम सर्वत्र है, भक्त के प्रेम को बढ़ाने के लिए संत इस अनुपम विधि का प्रयोग करते हैं।। 99 ।। देखो यदि यह जिज्ञासु वहां न होता । अथवा कोई भी प्रश्न न पूछता । साईं की महिमा कैसे समझता । कौन इसका अर्थ है जान पाता ।। 100 ।। अनेक समय अनेक छिपकलियाँ शब्द करती हैं सब जगह रहती हैं कौन पूछता है उनके शब्द का अर्थ अथवा उनकी वार्ता ।। 101 ।। सारांश यह है कि जगत के खेल का सूत्र गुप्त और अबोध गम्य है उनकी अटकल कौन लगा सकता है। सभी आश्चर्य करते हैं।। 102 ।। उल्टे इस छिपकली के शब्द करने को किसी अनर्थ की सूचना का द्योतक व अनर्थ को टालने के लिए "कृष्ण कृष्ण” बोलने को लोग कहते हैं।। 103 ।। कैसी भी व्युत्पत्ति हो किन्तु क्या यह

चमत्कार है? भक्त को अपने चरणों के प्रति जोड़ने के लिए बाबा की उत्तम युक्ति है।। 104 ।। जो इस अध्याय को आदर से पढ़ेगा अथवा नियम से आवर्तन करेगा, है उसका संकट गुरुराया निवारण कर देंगे इस चिह्न को ह्रदय पर दृढ़ता से बांध लो।। 105 ।। अनन्यभाव से उनके चरणों में जो माथा समर्पित करता है उसे वास्तव में त्राता व अभयदाता मिल जाता है। कर्ता व हर्त्ता तो एक ही है।। 106 ।। इसमें अंतर मत मानो । ऐसे हैं यह साईंनाथ। अपने अनुभव का गुह्य भावार्थ मैं भक्त कल्याण के लिए कहता हूं।। 107 ।। सम्पूर्ण जगत में मैं ही एक हूं। मुझ बिन दूसरा कोई और नहीं । केवल इस लोक में अखिल त्रिलोक में मैं ही हूं।। 108 ।। जहां ऐसे अद्‌वितीयत्व का स्फुरण हो वहां भय लेशमात्र भी नहीं रहता है निरभिमान निरहंकार चिन्मात्र सारे पृथ्वी पर व्याप्त है।। 109 ।। हेमाडपंत साईं शरण में है। चरण एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ता । उसी से संसार से पार हुआ जा सकता है। रुचिकर निरूपण को ध्यान दो।। 110 ।। अगले अध्याय में सुंदर प्रसंग है। साईं गुरुवर निर्माण करेंगे। ब्रह्म ज्ञान की कैसे प्रतीति होती है लोग मिट्‌टी के बर्तन भर मांगते हैं।। 111 ।। कोई एक लोभी जन साईं से ब्रह्म ज्ञान पूछे वह उसी के जेब है से काटकर महाराज ने दे दिया ।। 112 ।। श्रोता इस कथानक को सुनें। इससे बाबा का कौतुक प्रकट होगा। है लोभ पूर्णरूप से छोड़े बिना ब्रह्मज्ञान अप्राप्त है। इसमें संदेह नहीं ।। 113 ।। कौन इसका अधिकारी है, इसका कोई विचार नहीं करता। किसको प्राप्त हो सकता है और कैसे महाराज समझायेंगे ।। 114 ।। मैं तो उनका दासानुदास हूं। मैं विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करते हुए आशा करता हूं इस साईं प्रेमविलास को अति उल्हास के साथ सुनोगे ।। 115 ।। चित्त प्रसन्न होगा | चैतन्य संतुष्टि प्राप्त होगी। इसलिए श्रोता ध्यान दें। संत महिमा का ज्ञान होगा ।। 1 16 ।। स्वस्ति, श्रीसंतसज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित "श्री साईंसमर्थ सच्चरित" का 1 "चोलकर शर्करा आख्यान" नामक पंद्रहवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय सोलहवां (ब्रह्मज्ञान कथन) ।।

।। श्री गणेश को नमन।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।।।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

चक्रवर्ती राजाधिराज शान्ति के सिंहासन पर आसीन मूर्ति स्वानंद साम्राज्यपति अनन्यगति गुरुराज को नमन करते हैं।। 1 ।। दोनों भागों में अभेद भक्ति व सहज स्थिति की चावरें चल रही हैं, स्वानुभूति व सद्यः प्रतीति जिनको अति आदर से हवा करती है।। 2 ।। स्वात्मस्थिति को धारण करते हैं, शांति व संवित्ति जिसके दण्डधारी हैं, छः शत्रु (कम , क्रोध, लोलुप्ता , भ्रम , मद , द्वेष) तथा माया मोहवृत्ति जहां क्षणभर नहीं टिकती है।। 3 ।। उनकी सभा का क्या वैभव है? चार (वेद) छः (दर्शन) अट्ठारह (पुराण) (प्रशंसा गीत गाने वाले) भाट हैं। चिन्मय चांदनी चमक रही है अत्यधिक सघन स्वानंद फैला हुआ है।। 4 ।। विरक्ति, भक्ति, शुद्ध ज्ञान, श्रवण, मनन, निदिध्यासन निज अनुसंधान और साक्षात्करण - ये आठ प्रधान सेवारत रहते हैं।। 5 ।। शांति-आत्मसंयम दिव्यमणि की भांति जिसके कंठ का भूषण बनकर चमकती है, जिनकी मधुर वाणी वेदान्त रूपी सागर की सुधा तरंगिणी है।। 6 ।। जिसकी तेज धार चमकती हो, उस ज्ञान रूपी तलवार से प्रहार करने के लिए उठे हुए हाथ को देखकर संसाररूपी वृक्ष थरथर कांपते हैं।। 7 ।। निरंजन अव्यय गुणातीत योगीराया की जय हो । परोपकारार्थ काया धारण की है, दीन जनों के उद्धार के लिए ।। 8 ।। गत अध्याय में निरूपण है, भक्त भावार्थ को पूर्ण करने के लिए, उसके व्रत को पूरा किया । मन में चिह्न दृढ़ कर दिया।। 9 ।। सद्गुरु सदा पूर्णकाम होते हैं। उनकी इच्छा शिष्य क्या पूरी करेंगे। शिष्य के सेवा कार्य को वे निष्काम पूरा कराते हैं।। 10 ।। भाव से अर्पित फूलपान को प्रेम से सेवन करते हैं। वही अभिमान से अर्पित करने पर, उसी जगह, उस मान को वापस कर देते हैं।। 11 ।। जो सत् चिद सुख के सागर हैं कर्मकाण्ड उनके लिए क्या महत्व रखते हैं। किन्तु सादर भाव के साथ अर्पित करने पर सुख से सेवन करते हैं।। 12 ।। अज्ञानता की स्थिति की आड़ में अज्ञान को समाप्त करते हैं ज्ञान प्रदान करते हैं। मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करते। सुन्दर शिक्षा देते हैं।। 13 ।। उनकी सेवा श्रद्धा से करने पर साधक

ब्रह्म से एकाकार अनुभव करता है। अन्य सभी साधन ठगी है। गुरुसेवा में लीन हो जाओ।। 14 ।। उनकी सेवा में थोड़ी भी लापरवाही अथवा थोड़ी भी चतुराई करने पर साधक को क्षति होती है। (गुरु) चरणों में विश्वास आवश्यक है।। 15 ।। शिष्य स्वयं क्या करते हैं सदगुरु अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करते हैं। शिष्य अपनी कठिनाइयां नहीं जानता है। अनजाने ही गुरु उपाय कर देते हैं।। 16 ।। गुरु से बड़ा दाता त्रिभुवन में अन्य कोई नहीं दिखता। उसकी अनन्य शरण में हो लो , जो निराश्रितों की परम शरणस्थली है।। 17 ।। चिंतामणि से उपमा की जाये तो चिंतामणि विचारे हुए अर्थ को पूरा करती है गुरु अपने भक्तों को अविचारित वस्तु देता है, परम आश्चर्य है।। 18 ।। कल्पतरु से तुलना की जाये है तो वह जो कल्पित अर्थ को पूर्ण करता है गुरुराया अकल्पित निर्विकल्प स्थिति प्रदान करते हैं।। 19 ।। कामधेनु इच्छा पूर्ण करती है गुरुधेनु उससे महान होती है। "अचिंत्यदानी", ऐसी पदवी से किसे और उसके बिना सुशोभित किया जावे ।। 20 ।। अब श्रोताओं से यही सादर कहना है, जो गत अध्याय के अन्त में कहा गया उसका वर्णन करता हूं। ब्रह्मार्थी की ब्रह्मज्ञान प्राप्ति की कथा संगति को ध्यान दें।। 21 ।। ब्रह्मज्ञान का भोक्ता आया । बाबा ने कैसे तृप्त किया, अपने भक्तों को कैसे उपदेश दिया, उनके परमार्थ के लिए, उसे सुनो।। 22 ।। संत नित्य निष्काम होते हैं। सकल परिपूर्ण सन्तुष्ट होते हैं, किन्तु भक्त अत्यन्त इच्छावान होते हैं सर्वदा उनकी इच्छाएं अतृप्त रहती हैं।। 23 ।। कोई पुत्र संतान मांगता है कोई अखंड राज्य संपत्ति, कोई मांगे भाव भक्ति, एकाद ही सांसारिकता से मुक्ति का भाव रखते हैं ।। 24।। ऐसे ही एक भावार्थी भक्त थे, किन्तु धनसंचय में निमग्न रहते, उनमें बाबा की बड़ी कीर्ति सुनकर दर्शन के लिए उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई।। 25 ।। घर में बहुत बच्चे अपरिमित संपत्ति व दास दासी थे। बाबा की उदार मूर्ति का दर्शन करने का ध्यान चित्त में आया ।। 26 ।। बाबा बड़े ब्रह्मज्ञानी हैं साधु संतों के मुकुट की मणि हैं। उनके चरणों में मस्तक रखूँ , उनके कृत्य अगाध हैं।। 27 ।। मेरी कोई दूसरी आवश्यकता नहीं है। मैं ब्रह्मज्ञान मांगू । यह साधन सहज ही मिल जाता है तो फिर मैं धन्य हो जाऊँगा ।। 28 ।। फिर उसके मित्र ने उससे कहा , "सरल नहीं है ब्रह्मज्ञान जानना। तुझ सम लोभी के भय से उसका प्रकट होना कठिन है ।। 29 ।। द्रव्य पत्नी व संतान से हटकर जिसके सुखोत्पत्ति का कोई स्थान नहीं । ब्रह्म उसके लिए भ्रांति है, कैसे विश्रांति देगा।। 30 ।। इन्द्रिय शक्ति के क्षीण होने पर जगत किसी को मान नहीं देता। तब निरर्थक व्यक्ति खाली बैठा ब्रह्म का सूत कातता रहता है।। 31 ।। इस प्रकार है तुम्हारी ब्रह्म जिज्ञासा | कंजूस के हाथ से पैसा निकलता नहीं । कोई भी

तुम्हारी इच्छा पूरी करने वाला नहीं मिलेगा।। 32 ।।" इस प्रकार ऐसी आस्था मन में लेकर ब्रह्मार्थी शिरडी जाने के लिए निकल पड़ा। वापस आने के भाड़े वाला तांगा किया। साईं चरणों में पहुंचा ।। 33 ।। साईं का दर्शन किया। उनके चरणों में नमन किया। फिर साईं मधुर वचन बोले श्रोता उसे श्रवण करें।। 34 ।। साईं कथा का यह कल्पतरु अवधान रूपी जलपान करके गहरी जड़ वाला हो जाता है। जैसे-जैसे श्रोताओं का आदर बढ़ेगा वैसे-वैसे ढेर सारे फल लगने लगेंगे।। 35 ।। सभी अंगो में रसभाव भर जायेगा | सुगंधित पुष्प फूलेंगे। मधुर फलों के भार से झुक जायेगा । भक्तों की इच्छा पूरी हो जायेगी।। 36 ।। **ब्रह्मार्थी बोले, "बाबा ! ब्रह्म का दर्शन कराओ मन में यही सोचकर आया हूं। लोग कहते हैं शिरडी के बाबा अविलंब ब्रह्म दिखाते हैं ।। 37 ।। इसलिए इतनी दूर आया हूं, मार्ग में चलने से बहुत थक गया हूं| किन्तु यदि ब्रह्म मिल जायें, कृतकृत्य हो जाऊँगा, " ।। 38 ।। बाबा बोले, "चिन्ता न करें ब्रह्म तुरंत दिखाता हूं, अभी। यहां उधारी का व्यवहार नहीं है। तुम्हारे-जैसे पूछने वाले दुर्लभ हैं ।। 39 ।। बहुत लोग धन संपदा मांगते हैं। रोग आपदा निवारण के लिए कहते हैं। लौकिक मान राज्यपद मांगते हैं सदा सुख माँगते हैं।। 40 ।। केवल ऐहिक सुख के लिए लोग शिरडी तक दौड़े आते हैं मुझ फकीर के भजन में लगते हैं। ब्रह्म कोई नहीं मांगता ।। 41 ।। ऐसों की मेरे पास बहुतायत है तुम सरीखों की कमी है। ब्रह्म जिज्ञासुओं का ही मैं भूखा हूं। यह मेरा उत्सव काल है।। 42 ।। जिस ब्रह्म नामक वस्तु के भय से रवि व शशि निश्चित मार्ग पर चलते हैं, नियम से उगते हैं नियम से डूबते हैं ,तारे नियम से प्रकाशित होते हैं।। 43 ।। ग्रीष्म, बसंतादि ऋतुकाल, इन्द्रादि देव, लोकपाल, जो नियम से प्रजा का प्रतिपालन करते हैं, वही ब्रह्म ,सब का मूल है।। 44 ।। अतः शरीर समाप्त होने के पूर्व बुद्धिमान व्यक्ति ब्रह्मपुरुषार्थ साध लेते हैं उसके बिना जन्म मृत्यु के चक्र का खाता अनन्त निरन्तर चलता रहता है।। 45 ।। इस ब्रह्म को जाने बिना यदि शरीर का पतन हो जायेगा, संसार-बंधन पीछा करेगा, पुनर्जन्म का खाता बन्द नहीं होगा ।। 46 ।। ब्रह्म क्या मैं तुझे सकल ब्रह्मचक्र दिखाता हूं| जो तुझे नख से शिख तक लपेटे है, मैं उसे खोलकर अलग करता हूं।। 47 ।।"** क्या अमृत की भांति मधुर वाणी थी ,केवल अद्वैत सुख की खान , जो प्राणी संशय के हिंडोले पर आरुढ़ हो उनके उद्धार में समर्थ ।। 48 ।। जो लोग वर्तमान के सुख प्रलोभन में दिन रात रमे हैं वे भी बाबा के वचन मार्ग पर आकर चरणों में प्रस्थापित हो जाते हैं।। 49 ।। चिंतामणि प्रसन्न होते है तो लौकिक सुख उपलब्ध होता है महेन्द्र प्रसन्न होते हैं तो स्वर्ग संपत्ति प्राप्त होती है।। 50 ।। इनसे अधिक है गुरु की अलौकिकता | गुरु समान कोई दाता

नहीं है। सुप्रसन्न होकर दुर्लभ ब्रह्म भक्तों को दिखाते हैं।। 51 ।। उनकी मधुर कथा का श्रवण करने से संसार के दुःख विस्मृत हो जायेंगे । ब्रह्मार्थी को कैसे सिखाया जाये बाबा जानते थे।। 52 ।। अतः फिर उसे बैठाया, एक क्षण के लिए अन्य व्यवसाय में उसे उलझाया उसे ऐसा दिखाया कि मानों उसके प्रश्न का ध्यान नहीं रहा ।। 53 ।। फिर बाबा ने क्या किया । एक लड़के को निकट बुलाकर बोले, "जा तुरंत तेजी से, नंदूला को खबर दो ।। 54 ।। पांच रुपये उधार लेने की बाबा की बड़ी अनिवार्यता है तत्काल उधार दे दो जो शीघ्र वापस कर देंगे। उससे कहना तुरंत दे।। 55 ।।" लड़का नन्दू के घर गया। उसके दरवाजे पर ताला लगा था । तत्काल वापस आकर समाचार निवेदन किया।। 56 ।। बाबा बोले "वापस जाओ । बाला व्यापारी घर पर होगा। उसे यही समाचार दो । रुपए लेकर आजा ।। 57 ।।" यह चक्कर भी व्यर्थ गया । बाला भी वहां घर पर नहीं था। लड़का जो-जो जैसे घटित हुआ बाबा से निवेदन किया।। 58 ।। उसके अतिरिक्त एक दो स्थानों पर और उसे तुरन्त भेजा | इस प्रयोजन की काफी निरर्थक दौड़ से थक गया, कुछ भी धन प्राप्त नहीं हुआ।। 59 ।। नंदू अथवा बाला व्यापारी व अन्य कोई एक भी उस समय घर पर नहीं है, बाबा भी पूर्णरूप से जानते थे । महाराज अन्तर्ज्ञानी थे।। 60 ।। साईं चलते-बोलते ब्रह्म थे। पांच रुपये की क्या कमी? पर उस ब्रह्मार्थी के हित के लिए यह सब कौतुक रचा गया था ।। 61 ।। अतिथि के घर आने पर उसके लिए जो मिष्ठान या शीरा तैयार करते हैं अन्य लोग भी उसका सेवन करते हैं।। 6 2 ।। वैसे ही इस ब्रह्मभोक्ता को निमित्त स्वरूप आगे करके महाराज ने सभी के कल्याण के लिए भक्तों को उपदेश दिया ।। 63 ।। दो सौ पचास से अधिक रुपये के नोट का बण्डल था ब्रह्मार्थी की जेब में, यह साईंनाथ जानते थे।। 64 ।। क्या वह ब्रह्मार्थी जानता नहीं था। क्या उसकी आंखे नहीं थीं। जेब में नोटों का बण्डल होते हुए भी संशय ने बाधित कर दिया।। 65 ।। साईं को पांच रुपये का उधार और वह भी एक घटक (24 मिनट) के लिए, उसे भी देने के लिए दृढ़ निश्चय नहीं । ब्रह्म साक्षात्कार मांगने आये ।। 66 ।। साईं महाराज सत्यवादी थे। छोटी सी रकम भी, जो उधार देने पर तुरंत वापस मिलनी थी, देने का मन होता, इसके पूर्व संशय आ जाता ।। 67 ।। पांच रुपये की कथा क्या? किन्तु उन्हें देने का मन नहीं हुआ। इतना भी निभा नहीं सका । स्वयं लोभ ने उसके रूप में जन्म लिया था।। 68 ।। अन्य कोई भोला भाला होता जिसका बाबा से खरा प्रेम होता, तो उधार लेने को वह पर्व का अवसर, अपनी खुली आंखों से देखता नहीं।। 69 ।। ब्रह्मार्थ के लिए जो इतना प्यासा था उसे क्या यह प्रश्न स्पष्ट नहीं हो सका? ऐसा थोड़ा भी नहीं है मेरे विचार

से । बल्कि वह धन के मोह से ग्रसित था।। 70 ।। वहां भी निश्चिंत होकर बैठा नहीं । वापस जाने की जल्दी में अलग खड़े होकर बोला, "हे बाबासाईं ! मुझे क्या ब्रह्म के विषय में विस्तृत रूप से बतायेंगे।। 71 ।।" बाबा बोले, "एक स्थान पर बैठे-बैठे ब्रह्म दिखाने के ही ये उपाय है। अब तक किये गये उपायों को देखो। क्या तुम्हारी समझ में नहीं आया" ।। 72 ।। "ब्रह्म के हेतु पंच प्राण, (प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान) पांच कामेन्द्रियां (हाथ, पांव, वाक, मलेन्द्रिय, जननेन्द्रिय) पांच ज्ञानेन्द्रियां (आँख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा) अहंकार, बुद्धि तथा मन को समर्पण करना पड़ता है ।। 73 ।। ब्रह्मज्ञान का मार्ग विकट है। बिना भेदभाव के सभी को सुलभ नहीं है। सौभाग्यशाली लोगों को अप्रत्याशित लाभ होता है जब उनका अच्छा समय आता है तो ब्रह्मज्ञान प्रकट होता है ।। 74।। हिरण्य गर्भ पद तक सभी उत्कर्षों से जो विरक्त है वही ब्रह्मविद्या के अधिकारी हैं। वह अन्यत्र अनासक्त हैं ।। 75 ।। जिसमें विरक्ति का लेशमात्र भी समावेश नहीं ऐसों को ब्रह्मतत्व का उपदेश करने वाला कोई कितना ही पूर्ण क्यों न हो क्या उसे सफलता प्राप्त होगी? ।। 76 ।। जो उत्तम अधिकारी हैं उन्हें ब्रह्म का बोध ग्रहण अबाधित होता है। किन्तु मध्यम अधिकारी जन को सदा शास्त्र परंपरा के अधीन रहना होता है ।। 77 ।। एक को विहंगम मार्ग (पक्षी के छोटे मार्ग) का अनुसरण करना होता है दूसरे का परंपरागत सोपान चढ़कर जाना होता है। किन्तु जिन्हें अधिकारिता ही प्राप्त नहीं है उनके लिए ब्रह्म अनुपयोगी व थकान भरा है।। 78 ।। एक आत्मविवेक, के बिन ब्रह्म प्राप्ति का कोई उत्कृष्ट साधन नहीं है। यह यद्यपि वेदान्त का सत्य वचन है। तो क्या यह सबके आधीन है।। 79 ।। अभ्यास व श्रम से जब शरीर हड्डियों का ढांचा रह जावे तो गुरु कृपा प्रकाशित होने पर धीरे-धीरे हाथ लगता है।। 80 ।। मैं एक ईश्वर हूं, मैं नियंता हूं, हिरण्यगर्भ पर जब अहंकार चढ़ता है स्वरूप विस्तृत हो जाता है तब विश्व का प्रादुर्भाव होता है।। 81 ।। "मैं स्वयं ब्रह्म हूं" का ज्ञान होने पर ज्ञाता स्वरूप में लीन हो जाता है। उस समय विश्व के आभास का विसर्जन हो जाता है यह श्रुतियों का गर्जन है।। 82 ।। स्वप्रबोध की उत्पत्ति होने पर ब्रह्माकार की अन्तःकरण वृत्ति हो जाती है, ब्रह्माग्नि में विश्व की आहूति हो जाती है सृष्टि विभूति (राख) हो जाती हैं।। 83 ।। जीव की भी यही स्थिति है जब भ्रम निवृत्ति हो जाती है तो रस्सी, किरण व शुक्ति (सीप) के भ्रम से तत्काल मुक्ति मिल जाती है।। 84 ।। शुक्ति के अज्ञान से चांदी का भ्रम होता है। चांदी का ज्ञान होने पर शुक्ति का ज्ञान होता है। भ्रम निवृत्ति काल में रूप का अवसान हो जाता है शुक्ति का विज्ञान शुद्ध (निर्मल) हो जाता है।। 85 ।। अन्योन्य मोह के लक्षण ये

हैं। ज्ञान दीप से उजाला करो, अज्ञान मल का परिक्षालन करो। भ्रम नष्ट हो जायेगा।। 86 ।। जन्म मृत्यु का बंधन न होता तो मुक्ति के लिए संकल्प किस अर्थ का होता, वेदान्त से हमारा क्या संबंध होता, फिर यह उपदेश (प्रवचन) क्या होता? ।। 87 ।। "मैं बंधन में हूँ, निर्मुक्त होना चाहता हूँ, ऐसी जिसकी व्यग्रता एवं दृढ़ निश्चय है वह ही केवल इसका अधिकारी है न अत्यन्त अज्ञानी अथवा पूर्ण ज्ञानी ।। 88 ।। बंधन नहीं तो मुक्ति कैसी यही वस्तुस्थिति है बद्धता एवं मुक्तता गुणों के संपर्क में आने से होती है। यही अब तक का अनुभव रहा है।। 89।। जहां द्वैत का अभाव है कौन किस लिए बांधेगा या छोड़ेगा । वहां न कोई बद्ध है न मुक्त है द्वैत के अद्वैत में चले जाने पर ।। 90 ।। दिन रात के ये प्रकार क्या दिनकर की उत्पत्ति हैं? दिवाकर अलिप्त है, यह तो दृष्टिदोष का व्यवहार है।। 91 ।। मैं ही एक कर्त्ता हूँ, मैं ही एक भोक्ता हूँ, यह अभिमान जब चित्त में धारण करते हैं, स्वर्ग नर्क के सुख व दुःख अनुभव किये जाते हैं। वासनासक्तता बढ़ती है।। 92 ।। आत्मा नित्य, प्राचीन व शाश्वत है, जन्म-नाश आदि विकास से वर्जित है, ॐकार अक्षर इसका प्रतीक (निशान, प्रतिभा) है । यह अनादि, अनन्त व अविच्छिन्न (सतत्) है।। 93 ।। जिसकी दृष्टि में शरीर ही आत्म है, स्वयं एवं सृष्टि भिन्न-भिन्न है, उन्हें आत्म ज्ञान के लिए परिश्रम करने पर भी वह प्राप्त नहीं होता है, यह अनुभव से प्राप्त होता है।। 94।। वाणी आदि सभी इन्द्रियों को लय करके, मन का दृढ़ संकल्प करके उस मन का क्षय करके बुद्धि स्थान में ध्यान लगाओ।। 95 ।। प्रकाश स्वरूप है यह ज्ञान बुद्धि, वहीं मन की समाधि लगाओ। मन के साथ सभी इन्द्रियों की समृद्धि एक बुद्धि के अधीन है।। 96 ।। घट (मिट्टी का पात्र) का प्रारंभिक कारण मिट्टी है। उस रीति से इन्द्रियों के लिए बुद्धि है, वह उनकी नित्य स्थिति है। बुद्धि की व्यापकता (विस्तार) इसी प्रकार है।। 97 ।। बुद्धि, निजव्यापकपन के कारण मन आदि सभी इन्द्रियों में व्याप्त है, बुद्धि को "महत्तत्व" में समर्पित कर दो। "महत्तत्व" को आत्मत्व में समर्पित कर दो।। 98 ।। यह सब मिलाकर करने पर "आत्मा" स्वरूप में सुनिश्चित हो जाता है। फिर चांदी, मृगजल सर्पाकार दृष्टि विकार मात्र रह जाते हैं।। 99 ।। वह ही पूर्ण, गुणरहित है, जन्म मृत्यु विहीन है, जिसके दर्शन बिना स्वहित नहीं है। साधु सतत बोलते हैं।। 100 ।। कार्य परिणाम का कारण होता है। आत्मा स्वयंभू बिना कारण है। "पहले की भी व नवीन भी" त्रिकाल से अकल्पित है। स्वभाव से ही बुद्धि से परे है।। 101 ।। आकाश की भांति अविच्छिन्न है। जन्म-विनाश से परे, "ॐ " प्रणव जिसका आधार है जो निरालंबन, निष्कलंक है।। 102 ।। वह परब्रह्म ज्ञान योग्य है, वह

अपर ब्रह्म प्राप्त करने योग्य है, वह प्रतीक ॐ ध्यान करने योग्य है ,सर्वदा उपासना के योग्य है।। 103 ।। जो सभी वेदों का सार है वही प्रणव स्वरूप ॐकार है। उसके पूर्ण अर्थ का सुनिश्चितीकरण (वेद के) महावाक्यों का चिन्तन (मनन) है।। 104 ।। वेद स्वयं जिसका प्रतिपादन करते हैं, जिसे लोग अति प्रयत्न से प्राप्त करते हैं, जिसके लिए ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उसी को ॐ पद कहते हैं।। 105 ।। उसका पद कितना भी ऊँचा हो, वहां तक जाना यद्‌यपि दुर्गम हो, फिर भी परम कृपा होने पर,गुरु कृपा होने पर अभ्यासियों के लिए सुगम है।। 106 ।। इन्द्रियों (शारीरिक अवयव) में जो सबसे अधिक स्थूल है वहां से अनुक्रम (सिलसिला) को पकड़ने से सूक्ष्म तारतम्य क्रम को स्वीकारने से न थकने वाले साधक को सिद्‌धि होती है।। 107 ।। ऐसा है यह अक्षर "ॐ" वाणी से उच्चारण करने योग्य । सभी तपों का सार है। उच्चारण मात्र से इसके अर्थ के सार (तत्व) का स्पन्दन होने लगता है, (मस्तिष्क में) बार-बार करने से ईश्वर का दर्शन होगा ।। 108 ।। सर्वव्यापी, चैतन्य, बृद्‌धि क्षय के परिवर्तन से रहित, ऐसी आत्मा को जानेगा, सद्‌गुरु का वह अनन्य भक्त धन्य है।। 109।। अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैव त्रिविध ताप से जो पीड़ित है सदैव, कैसे यह सौभाग्य भोगेंगे। यह वैभव तो एक संत को ही मिलता है।। 110 ।। अविद्‌या के परिणाम स्वरूप सांसारिक जीवन की उपज है। इससे निवृत्ति का जो अनिवार्य साधन ब्रह्म व आत्मा की एकत्व वृत्ति है, उसकी प्राप्ति इसी स्थान पर (संत के पास) है।। 111 ।। विषय जनित विचारों से शून्य की स्थिति में "अहं ब्रह्मास्मि इति" वृत्ति होने पर इस महावाक्य को पढ़ने से बुद्‌धि उसी में प्रवृत्त होगी।। 112 ।। गुरुवचन व शास्त्रों का अनुभव होनेपर अंतर्बाह्य करणवृत्ति (कार्य करने की वृत्ति) का मन में निरोध हो जाता है तब आत्मा का ज्ञान लाभ होता है।। 113 ।। तब ही सम्यक दर्शन प्राप्त होता है, विषयों के प्रयोजन आदि से निवृत्ति होती है, अविद्‌या आदि की हृदय ग्रन्थि खुल जाती है ,अव्यक्त में प्रविष्ट हो जाती है।। 114 ।। प्रकाश किरण में अतिसूक्ष्म कण, उससे भी सूक्ष्म प्रमाण, उस अणु से भी बारीक आत्मा का अनुमान निश्चित किया जाता है।। 115 ।। वृहद से भी वृहद ब्रह्माण्ड को जानिये, उससे भी वृहद आत्मा। किन्तु ये सब सापेक्ष प्रमाण (मापन) है। आत्मा तो प्रमाण से परे है।। 116 ।। सूक्ष्मत्व में सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, वृहदता में वृहद से वृहद परिमाण वाली है। अतः नाम व रूप आदि को केवल उपाधि जानो। आत्मा पूर्णरूप से उपाधि विहीन है।। 117 ।। आत्मा का न जन्म होता है, न मरण होता है, न ही उसका मूल कारण है, वह अज, नित्य, शाश्वत, पुरानी है। सहज निर्धारण दुर्गम है।। 118 ।। ॐकार" जो ब्रह्म का प्रतीक है वही इसका परम

स्वरूप है। आगम निगम के लिए भी जो दुर्गम है वह सर्वसाधारण को कैसे सुगम हो सकती है।। 119 ।। जिसका निर्धारण करने में वेद थक गये तपस्वी, वनवासी हो गये, उपनिषदों ने हाथ उठा दिये ,किसी को निदान नहीं मिला ।। 120 ।। आत्मस्वरूप के स्वभाव को समझने के लिए अभेददर्शी आचार्य होना आवश्यक है। इससे भिन्न कौन कैसे (अनुभव कर सकता है)। तार्किक का प्रवेश वहां नहीं है।। 121 ।। केवल तार्किकों के लिए वहां स्थान नहीं है, वे चक्कर में भ्रमित होकर फिरने लगेंगे, बिना शास्त्रों व आचार्य के। अन्य (जो शास्त्रों व आचार्य से विहित है) तत्वबुद्धि में स्थिर हैं।। 122 ।। स्वबुद्धि कल्पना के अनंत तारे चौरासी लाख योनियों के फेरे से मुक्त नहीं कर सकते। आगम-निगम आचार्य रूपी एक ही चन्द्रमा पर्याप्त है। फिर अंधकार का लेशमात्र भी शेष नहीं रहेगा ।। 123 ।। जो अन्य लोगों को बहुत प्रयास से सिद्ध हो जाता है जो उस सद्गुरु को दृढ़ता से पकड़े है उसकी सदबुद्धि प्रकाशित हो जाती है।। 124 ।। जहां अविद्या हट जाये, सच्चिदानन्द स्वरूप में स्थिर हो जाये, स्वरूप स्थिति अवतरित हो जाये उसका दूसरा नाम मोक्ष है।। 125 ।। यह ही जीवों का अत्यन्त अभीष्ट है ,जिसके लिए बहुत कष्ट करते हैं। जो निरंतर योगनिष्ट रहते हैं, सर्वदा अन्तर्निष्ठ रहते हैं।। 126 ।। स्वरूप के चंचल होने पर विषयों के प्रति इन्द्रियबोध होता है ,स्वरूप के निश्चल होने पर विषय कमजोर हो जाते हैं।। 127 ।। स्वरूप से जो विमुख है, उनके सन्मुख सदा विषय होते हैं। जो स्वरूप के उन्मुख होते हैं, विषय मुख फेर लेते हैं।। 128 ।। जो केवल मोक्ष की इच्छा करता है, मन में अन्य प्रयोजन की कोई इच्छा नहीं रखता, इस लोक व परलोक संबंधी लेशमात्र भी तृष्णा नहीं रखता, वह ही मोक्ष का अधिकारी है।। 129 ।। इनमें से एक भी लक्षण में कमी है तो वह मुमुक्ष नहीं है, यह स्पष्ट रूप से जानो । वे केवल मुमुक्ष का बहाना है, जैसे काना का देखना ।। 130 ।। अहंकार को नाकाम किये बिना, लोभ का निर्मूलन नहीं होने पर, मन का निर्वासन न होने पर, ब्रह्मज्ञान मस्तिष्क में बैठेगा नहीं ।। 131 ।। देह ही आत्मा है इस प्रकार की बुद्धि ही भ्रांति है, आसक्ति ही बंधन का कारण है, विषयों की कल्पना व स्फूर्ति को ढीला कर दो, यह ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जायेगा ।। 132 ।। निर्गुण परब्रह्म का साक्षात्कार कठिन कर्म है, सगुण का निरूपण ही महत्वपूर्ण है, वही बुद्धिमान लोगों का धर्म है।। 133 ।। आत्मा सभी भूतों में गूढ़ रूप में निवास करती है यह तत्व वेदान्ती जानते हैं। किन्तु यह सर्वत्र अनुभव की जा सकती है, ऐसी प्रतीति कैसे हो।। 134।। पहले चित्त को शुद्ध करना है होगा। उससे भी ऊपर बुद्धि का सूक्ष्म तथा कुशाग्र होना होगा । तब कृपासमृद्धि त्रिशुद्धि स्वयमेव प्रकट होती है ।। 135 ।। आत्मा नित्य व

अविकृत है (परिवर्तन रहित), इस प्रकार आत्मा को जानने वाला ही शोक रहित होता है वही धैर्यवान, बुद्धिमान, वही सदा भवनिर्मुक्त होता है।। 136 ।। यहां प्रवचन युक्ति नहीं चलती अथवा ग्रंथ के अर्थ को धारण करने की शक्ति, अथवा वेदश्रुति का ज्ञान , कुछ भी व्याख्या करने में असमर्थ है।। 137 ।। आत्मा नित्य अविकृत है। शरीर अनित्य अवस्थिति रहित है। यह जानकर जो सर्वहित साधता है , वह विहित अविहित में दक्ष है।। 138 ।। आत्मज्ञानी सदा निर्भय रहता है। एक वही एक है दूसरा नहीं है (ब्रह्मास्मि के भावानुसार एक ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं) द्वैतभाव नष्ट होने पर शोक का नाश निश्चित रूप से होता है।। 139 ।। यद्यपि आत्मा जानने में कठिन है। प्रवचन सुनने के स्थान पर भी अप्राप्य है केवल बुद्धि क्या करेगी, उसके लिए सुविज्ञेय उपाय है।। 140 ।। जो स्वयं सर्वत्र निष्काम है, आत्मज्ञान एकमात्र इच्छा है ऐसा जो आत्मा का सतत् प्रार्थी है, उसे ही परम लाभ होगा ।। 141 ।। श्रवण आदि काल में “वह ही मैं हूं" ऐसी अभेद दृष्टि से जो देखता है, ऐसा ही जिसका संबंध रहता है, उसके ऊपर आत्मा का अनुग्रह होता है।। 142 ।। सदा दुश्चरित्र में आसक्त हो, अशांत एवं अस्थिर हो, जिसका चित्त एकाग्र न हो, उसे वह ज्ञान से भी अप्राप्त हैं ।। 143 ।। श्रुतिस्मृति द्वारा प्रतिपादित विहित कार्य जो करता है, अविहित को त्यागता है, जिसका चित्त सदा स्थिर रहता है, आत्मा उसके अधिकार में होता है।। 144 ।। जो दुश्चरित्रपूर्ण व्यवहार से विरत है, जो आचार्य व गुरुपदों में विनत है, फल की इच्छा से जिसकी निवृत्ति है ,उसे ही यह आत्मा प्राप्त होता है।। 145 ।। विषयों के प्रति निष्काम न होने पर, केवल आत्मा की इच्छा न होने पर, सकल वृत्तियों का विराम न होने पर, "आत्माराम” दुर्गम है।। 146 ।। जिज्ञासु का तप देखकर स्वयं आत्मा की कृपा उपजेगी, तभी आत्मा निज स्वरूप प्रकट करता है। गुरु के बिना निश्चित रूप से आसान नहीं है।। 147 ।। तब स्वरूप प्राप्त करने हेतु साधक को श्रवण मनन आदि करना चाहिए अभेद भाव को लक्ष्य बनाकर , तभी आत्मा लाभका सुख मिलेगा ।। 148 ।। यह सारा प्रपंच अज्ञानमय है उसका प्रसार (फैलाव) अज्ञान मूलक है। ज्ञान के बिना मोक्ष का स्थान जरा भी न समझो।। 149 ।। अनुमान और युक्ति प्रभाव (कौशल बल) हो, शास्त्रों का भी अनुभव हो, ज्ञान का उद्भव प्रपंच के नाश के बाद ही होता है, अन्यथा असंभव है।। 150 ।। महात्मा हो या पापात्मा, जीवात्मा ही परमात्मा है, यह जानकर जो व्यवहार करता है, वह महात्मा है, वह एक अभेदात्मा है।। 151 ।। ब्रह्म आत्मा का एकत्व विज्ञान ही ज्ञान का परिणाम है, एक बार आत्मज्ञान प्राप्त हो जाने पर समस्त अज्ञान गायब हो जाता है।। 152 ।। आत्मज्ञान पूर्णरूप

से हो जाने पर जानने के लिए कुछ और शेष नहीं रहता है, साक्षात्कार हो जाने पर सभी वस्तुएं उसके हथेली पर उपलब्ध जैसी ज्ञात हो जाती हैं।। 153 ।। आत्मविज्ञान के परिणामस्वरूप संसार से पूर्ण रूप से निवृत्ति होती है तत्काल परमानंद प्राप्ति होती है , उसको मोक्ष व समृद्धि काल मिलता है।। 154 ।। बुद्धिगोचर कराने के लिए ही आत्मा का सर्व व्यापकता प्रकार कहा गया है , "आत्मा सूक्ष्म से सूक्ष्मतर है महत्त से महत्तर है" ।। 155 ।। वह स्वयं न सूक्ष्म है , न महत्त है , तर व तम (तुलनात्मक वृद्धि) का भाव कल्पित है , वह तो ब्रह्मदेव से लेकर झाड़ी पर्यंत चर अचर में परिपूरित है।। 156 ।। अनिर्वचनीय जैसा कि आत्मा है, जो स्वयं अपरिमित है, बुद्धि के द्वारा ग्रहण किया जा सके इसलिए इसे वाणी द्वारा सीमित किया है।। 157 ।। केवल बुद्धि वैभव के योग से शुद्ध स्वरूप हाथ नहीं लगता। साधु सद्गुरु संत का संग करने से उनकी सेवा में अनुराग प्राप्ति होती है।। 158 ।। ब्रह्म निरूपण क्या थोड़ा किया गया है। तैयार पोथी व पुस्तकें भरी पड़ी हैं, किन्तु सद्गुरु कृपा जब नहीं प्राप्त होगी ,हाथ न ही चढ़ेगा कल्प के अन्त तक ।। 159 ।। नित्य नैमित्तिक कर्म के अभाव में जब तक मन शुद्ध संस्कार युक्त नहीं होता है, तब तक ब्रह्मानुभव के लिए, परिणामस्वरूप कुछ भी हाथ नहीं लगता ।। 160।। ब्रह्म केवल नित्य, उससे भिन्न सब अनित्य है । दृश्य शाश्वत नहीं है। यह सत्य सत्य सत्य तीन बार कहा गया है।। 161 ।। ब्रह्म का वक्ता दुर्लभ है, वैसे ही निर्मल श्रोता भी दुर्लभ है, उससे भी दुर्लभ है ऐसा सद्गुरु प्राप्त करना जो प्रेमल व अनुभवशील हो ।। 162 ।। ब्रह्म क्या तर्क वितर्क में पड़ने का है। पहाड़ों व कन्दराओं में जो छिपे बैठे हैं, जो यम नियम में उलझे हैं, ध्यान धारण में लीन हैं।। 163 ।। उन्हें भी बिना गुरु कृपा के जिस ब्रह्मस्वरूप का दर्शन नहीं होता, वह तुझ सम जो लोभस्वरूप है, को कैसे प्राप्त हो सकता है।। 164।। जिसकी द्रव्य के प्रति अत्यधिक आसक्ति है उसे कुछ भी ब्रह्मज्ञान प्राप्ति कल्प के अंत तक नहीं हो सकती है, यह निश्चित रूप से गांठ बांध लो।। 165 ।। अध्यात्मिक उपदेश के श्रवण करते समय विषयों का चिंतन और प्रपंच का ध्यान करते रहने पर फिर साक्षात्करण भी वैसे ही होता है।। 166 ।। मल (क्रोध आदि) विक्षेप (विभ्रांति) तथा आवरण (अज्ञान) ऐसे त्रिदोष हैं। अन्तःकरण के निष्काम कर्म से मल निर्मूलन तथा उपासना से विक्षेप प्रक्षालन होता है।। 167 ।। स्वकर्म तथा उपासना करने से, ऐसा करने वालों के, चित्त की परिपक्वता होती है, मल विक्षेप निर्मूल होते हैं, केवल आवरण (अज्ञान) शेष रहता है।। 168 ।। यही आवरण, सभी अनर्थों का बीज है ज्ञान के प्रकट होने पर नष्ट हो जाता है जैसे रवि के प्रकाशमान

होने पर तिमिर नष्ट हो जाता है।। 169 ।। वेदांत का ज्ञान रखने वालों ने जिसे सत्य, ज्ञान व अनंत आदि लक्षणों वाला वर्णित किया है वह ब्रह्म, जिसका है वह जन ज्ञानी होकर चमकने लगता है।। 170 ।। थोड़ा अंधेरा थोड़ी चांदनी, अकेला पथिक रात्रि में चलते हुए बिचकता है। पेड़ की आड़ को तस्कर समझकर वहीं छिप जाता है।। 171 ।। मैं अकेला, जेब में पैसा फिर वह रास्ते का डाकू जैसा प्रतीक्षा कर रहा है। अब विचार करना कैसे; इस जीवन का भरोसा नहीं ।। 172 ।। दूर से दीया दिखता है, खोह की वास्तविकता प्रकट हो जाती है, उससे उत्पन्न भय गायब हो जाता है। चोर की आभासता उसे ज्ञात हो जाती है।। 173 ।। इस प्रकार अब उसे प्राप्त करने में आने वाली बाधाओं का वर्णन श्रोताओं को कर दिया। अगले अध्याय में श्रेय प्राप्त करने की इच्छा रखने वालों के लिए श्रेय के निजरूप को प्रकाशित करेंगे।। 174 ।। हेमाड साईं पदों में लोटता है जो मुंह में आता है बोलता रहता है साईं कृपा से जो जो बकू भोले भाले श्रद्धालु उसे सुनें ।। 175 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित "श्री साईं सच्चरित" का "ब्रह्मज्ञान" कथन नामक सोलहवां अध्याय सम्पूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय सत्रहवां (ब्रह्मज्ञान कथन) ।।

।।श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन ।।

गत अध्याय में पहले कहा गया है कि इस अध्याय में श्रेय और प्रेय के लक्षण का निरूपण होगा। अतः सादर श्रवण करिये ।। 1 ।। प्रकाश और अंधकार जैसे भिन्न रूप होते हुए भी परस्पर व्यवहार से जुड़े हैं वैसे ही प्रेय व श्रेय ।। 2 ।। जिसका मन प्रेय के लिए दौड़ता है स्वार्थवश वह भ्रंश हो जाता है। यह श्रेय विवेक रूप है; प्रेय अविवेक रूप है।। 3 ।। श्रेय का विषय विद्या है; प्रेय का विषय अविद्या है। बुद्धिमान कभी भी प्रेय से भ्रमित नहीं होते; बुद्धिहीन श्रेय को पसंद नहीं करते ।। 4 ।। जब तक कनक व कामिनी की होड़ रहेगी, इन्द्रियों की विषयों के प्रति इच्छा रहेगी। विवेक-वैराग्य प्राप्त नहीं किया जाता ,तब तक प्रेय ही पसंद बनी रहेगी।। 5 ।। जल व दूध के मिश्रण की भांति ही प्रेय व श्रेय का मिश्रण है। जैसे मन रूपी हंस जितना दूध है, उतनी ही मात्रा का सेवन करता है।। 6 ।। वैसे ही जो धीर, बुद्धिमान हैं, विवेकी और भाग्यवान हैं, श्रेय से ही सम्बद्ध रहते हैं, प्रेय से सर्वदा विमुख रहते हैं।। 7 ।। उन मंदबुद्धि को देखो जो शरीर, पशु, पुत्र, धन, मान आदि के योगक्षेम में लगे रहने के आदी हैं; केवल प्रेय को साधते हैं।। 8 ।। क्या श्रेय है, क्या प्रेय है दोनों को ज्ञात करके स्वावलंबी पुरुष वैसा ही ग्रहण करने का व्यवहार करता है।। 9 ।। यद्यपि दोनों के प्राप्त होने पर चुनना कठिन विषय है। मंद बुद्धि वालों के ऊपर जय करके प्रेय उन्हें आलिंगन कर लेते हैं।। 10 ।। प्रेय को दूर करने व श्रेय का आदर करने में ही पुरुषार्थ निहित है ,जैसे जल मिश्रित दूध में से हंस दूध ले लेता है।। 11 ।। श्रेय और प्रेय दोनों ही यद्यपि पुरुष के अपने अधीन हैं। किन्तु विवेकहीन मंदबुद्धि व्यक्ति विवेचन करने में असमर्थ है।। 12 ।। यह श्रेय कैसा है? आरंभ में निश्चित रूप से यह जान लें। फिर इसके मार्ग के प्रतिबंध के निवारणार्थ उपाय पूर्णरूप से किया जा सकता है।। 13 ।। यहीं पर दृष्टि के सम्मुख दृढ़स्थिति प्राप्त करके पुरुषार्थ खड़ा होता है। अतः श्रेय के लिए बुद्धि को संकल्पित करके कठिन प्रयत्न करना चाहिए ।। 14 ।। संसार के चक्र का फेर अता है, आठों प्रहर निरंतर घूमता रहता है। आध्यात्मिक आदि न टलने वाले प्रखर त्रिताप मानव सहता है।। 15 ।। अत्यधिक दुःख के कहर में परेशान होकर सहन करते हुए जर्जर होकर, फिर उससे छुटकारा पाने के लिए सुखकर साधन शोध करने लगता है।। 16 ।। यह भवचक्र का चलायमान होना दुःसह होने पर, इसका कैसे स्तंभन हो, उसके लिए क्या साधन है, यह शोध प्रारंभ कर देता है।। 17 ।। अच्छे भाग्य से यह बुद्धि उपजती है, उसी से पुरुषार्थता की उत्पत्ति होती है, फिर उल्लिखित अपने स्वार्थ के लिए सदुपाय को साधता है।। 18 ।। अनादि अविद्या अथवा माया शुक्ति में चाँदी व

मृग में जल की भांति व्यर्थ है; इस महत् अन्तर का विलय करके समाधि रूप को देखें ।। 19 ।। स्वप्न में सोने के पत्थरों की वर्षा होती है। प्रयत्न करके अत्यधिक मात्रा में एकत्र करते हैं, आवश्यकता के समय काम आने के लिए | जागृत होने पर खो देते हैं।। 20 ।। दृष्ट-अदृष्ट भोग-वासना, आशा,तृष्णा या कामना; (इन्हें) सदैव प्रतिबंधक जानो । इन्हें पहले समूल नष्ट करो ।। 21 ।। जो सूर्य के प्रकाश में भी दिखाई न दे, बुद्धि जहां से वापस लौट आती है जिसके सिरे को वेद व श्रुति न पा सकें उसे गुरु अपने हाथ से देते हैं।। 22 ।। काम-क्रोध की उभयवृत्ति ज्ञान प्राप्त नहीं करने देती है। श्रवण-मनन-समाधि को तुरंत भंग कर देती है।। 23 ।। दीप व कपूर का समागम होने पर क्या संभव है कि एक दूसरे को दूर धकेलें। दोनों पक्षों की भेंट होने की देर है कि कपूर दीपत्व को प्राप्त करता है।। 24 ।। श्रुतिस्मृति द्वारा प्रतिबन्धित दुष्कर्म में जो अविरत लोटते रहते हैं, ज्ञानी होकर भी क्या हित होगा यदि अविहित व विहित को अलग नहीं कर पाते ।। 25 ।। वैसे ही जो नित्य अशांत है, अन्तःकरण एकाग्र नहीं है, इन्द्रियों के लोभकामना से चित्त विक्षिप्त है ज्ञान में परिपूर्ण नहीं हो सकता है।। 26 ।। जिनका चित्त संतुष्ट है ,जो गुरुपुत्र आचारवान है, जिनका आत्मानुसंधान दृढ़ है, वही ज्ञानवान है।। 27 ।। संसारिक हो या मोक्षगामी ,यदि निजधाम जाना है तो शरीर रूपी रथ का स्वामी बनना होगा। केवल वाचाल क्या कर सकता है।। 28 ।। यहां वाक्पटुता का कोई स्थान नहीं है, अभ्यास ही सबका सार है। रथ के स्थान पर शरीर को जोड़ कर स्वयं स्थिर हो बैठो।। 29 ।। इस निज शरीर रूपी रथ का सारथी निज बुद्धि को बनाओ, स्वयं स्वामी बनकर रथ में बैठो, स्वस्थ चित्त होकर ।। 30 ।। दुर्गम रूप रसमार्ग को जीतने के लिए सारथी को लगाओ, दस इन्द्रियों रूपी दक्ष घोड़े उच्छृखल है, मन रूपी लगाम से नियन्त्रित करो।। 31 ।। यद्यपि घोड़े अनियन्त्रित दौड़ते हैं , लगाम उन्हें सही स्थान पर रखती है, उसे सारथी के हाथ में देकर स्वस्थ चित्त होकर बैठो।। 32 ।। सारथी कुशल और निपुण हो, तभी घोड़े शक्ति से चलते हैं। वही जब मन रूपी लगाम के अधीन होता है, तो बलहीन हो जाता है।। 33 ।। जो सारथी विवेक बुद्धिवाला है, जो मन को नियंत्रित किये है, जिसका चित्त एकाग्र है उसे ही परम पद की प्राप्ति होती है ; अन्य मार्ग में ही थक जाते हैं।। 34 ।। जिसका मन सदा अनियंत्रित है, उसे कभी संतुष्टि नहीं प्राप्त होती है, उसका उस पद पर अभिगमन नहीं होगा, सांसारिक चक्र से छुटकारा नहीं मिलेगा ।। 35 ।। ऐसे में पद बहुत महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में उसके स्थान के संबंध में मन की आशंका दूर हो जाती है। वह अपने आप प्रकट हो जाता है।। 36 ।। यहां तर्कवाद, व्यर्थ भाषण, अफवाह, वार्तालाप नहीं चलता। ईश कृपा से ही न्याय प्राप्त होता है, अन्य वाद व्यर्थ हैं ।। 37 ।। यहां तर्क की चतुराई नहीं चलती। तर्कज्ञ की मति कुंठित हो जाती है। भोला भाव ही सिद्ध होता है ; यही है यहां की अद्भुतता।। 38 ।। सम्यग्ज्ञान का जो कारण है, वह गति और है; वह बुद्धि भी और है। उन आगमज्ञ (शास्त्रों के ज्ञाता) को भी, अलग जानो जो उत्तम ज्ञान दानी है।। 39 ।। यह अनमोल काया व्यर्थ चली जायेगी। धन की कामना भी दोपहर की छाया

जैसी है। हीरे की माया को दुर्घट (कठिन) जानकर संतो के पांव लगो।। 40 ।। संत भवसागर की नाव है तुम उस पर एक यात्री बन जाओ। उसके बिना दूसरे किनारे पर उतारने में कौन समर्थ है।। 41 ।। जिन्होंने विवेक व वैराग्य को जोड़ दिया है, उन्हें बाँध कर नाव बना ली है वे पत्थर की भांति जड़ व मूढ़ ही क्यों न हों, भव सिंधु उनके लिए कठिन नहीं है।। 42 ।। भगवान के छः ऐश्वर्य गुण हैं। इनमें "वैराग्य", प्रथम ऐश्वर्य है। जिनमें वास्तव में यह है, वह महाभाग्यवान है। इस महाभाग्य [वैराग्य] के बिना इसे अनुभव नहीं किया जा सकता ।। 43 ।। विहित कर्म किये बिना चित्त शुद्धि का निर्माण नहीं होगा । चित्त शुद्धि न होने पर, यह जानो कि ज्ञान संपादन नहीं होगा ।। 44 || अतः कर्म को ही एक जानो ज्ञान प्राप्ति का मूल कारण ; नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान | उसी से मल का क्षरण होता है।। 45 ।। इस प्रकार शुद्ध किये गये चित्त में विवेक-वैराग्य की उत्पत्ति होती है, शाम दाम आदि साधन प्राप्त होते हैं। "विदेह मुक्ति" (शरीर में होते हुए भी बिना इन्द्रियों के कार्य करने की क्षमता प्राप्त करना) प्राप्त होती है।। 46 ।। फलकाम व संकल्प त्याग कर, चित्त को एकाग्रता से योजित करके, अनन्यभाव से जो गुरु की शरण में प्रवेश करते हैं सद्गुरु उसे अपनी सुरक्षा में ले लेते हैं।। 47 || जो बहिःप्रवृत्ति से शून्य हो चुके हैं, वे अनन्य निष्ठावान भक्त ज्ञान लाभ करके प्रज्ञ होते हैं। अन्य उपाय नहीं चलता है।। 48 || वह ज्ञान लाभ प्राप्त करके अधर्म मार्ग का आचरण करने पर न इस स्थान पर न उस स्थान पर न नीचे व न ऊपर त्रिशंकु की भांति झूलता रहेगा ।। 49 ।। जीव की जो अज्ञानवृत्ति है, वास्तव में उसी से संसार के प्रति प्रवृत्ति होती है। आत्मज्ञान प्राप्ति के बाद उसकी संसार से निवृत्ति हो जाती है। (वह संसार में है किन्तु उससे बंधा नहीं है)।। 50 || आत्मज्ञ अहंभाव रहित होता है। धर्म-अधर्म, शुभ-अशुभ से परे होता है। ऐसे के लिए निश्चित रूप से संसार में हित अहित क्या है।। 51 ।। देह के अहंकार की वृत्ति विरल हो जाने पर तत्काल वहां निवृत्ति का प्रवेश होता है, निश्चित रूप से यह गांठ बांध लें कि यही जीव की परमात्म स्थिति है।। 52 ।। जहां प्रवत्ति है वहां शत्रु -मित्र है। निवृत्ति तो विचित्र है। "मैं ही मैं" को सर्वत्र देखो, शत्रुत्व मित्रत्व कैसा ।। 53 ।। ऐसे महासुख के आगे देह का महादु:ख कुछ भी नहीं है। जब महासुख प्राप्त हो जाये, तो कौन सांसारिक सुख के लिए आँसू बहायेगा।। 54 ।। ऐहिक दुःख का पहाड़ उसके ऊपर गिर जावे किन्तु वह शुद्ध धीर का पहाड़ थोड़ा भी नहीं हिलेगा।। 55 ।। भगवान जिस पर प्रसन्न होते हैं, उसे ही वैराग्य देते हैं। उसको विवेक के संग बांध देते हैं, भवसागर से पार उतारने के लिए।। 56 ।। शीशे में मुख की स्पष्ट प्रतिबिम्ब की भांति, जिसके आत्मदर्शन का उद्देश्य स्पष्ट है, उसका स्थान यह भूलोक है या ब्रह्मलोक तीसरा नहीं है।। 57 ।। देवता के तृप्त होने पर यज्ञ करने वालों को पितृलोक की प्राप्ति होगी, कर्मफल का भोग प्राप्त होगा। आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होगा ।। 58 ।। गंधर्व लोक, महलोक, जनलोक, तपलोक तथा सत्यलोक यहां का आत्मदर्शन अति अस्पष्ट होता है। अतः वे जो आत्मदर्शन की आसक्ति रखते हैं भूलोक की यक्तोक्त इच्छा रखते हैं।।

59 ।। यहां चित्त शुद्धि होती है शीशे की भांति बुद्धि निर्मल होती है। शुद्ध आत्मस्वरूप की त्रिशुद्धि प्रतिबिंबित होती है।। 60 ।। दूसरा स्थान ब्रह्मलोक है, वहां भी आत्म प्राप्ति होती है। किन्तु अनेक अत्यधिक कष्ट कारक प्रयत्न करने पड़ते हैं।। 61 ।। सर्प की भांति माया लपेटती है, अन्दर से समूल अंतड़ी को दबाती है, बाहर भी सर्वांग पर लिपट जाती है, उसे टालने में कौन समर्थ है।। 62 ।। "तुम बैठे-बैठे देखते रहे, जेब में पचास गुना रुपये होते हुए। देखो, अब बाहर निकालो । ब्रह्म तुम्हारे ही जेब में है।। 63 ।।" कहने पर हाथ खींचकर अन्दर डाला | गृहस्थ ने जेब से बण्डल निकाला । दस दस के पच्चीस नोट बण्डल से गिने ।। 64।। गृहस्थ मन ही मन लज्जित हुआ । महाराज कितने अन्तर्ज्ञानी हैं। उनके चरणों में मस्तक रख दिया, आशीर्वचन की उत्कंठा से।। 65 ।। फिर उस समय बाबा बोले, "अपने ब्रह्म के बण्डल को बांध लो। लोभ के पूर्णरूप से नष्ट हुए बिना तुझे ब्रह्म नहीं मिलेगा" ।। 66 ।। पुत्र-पशु आदि व वित्त अर्जन में जिसका मन आसन्न है उसे कैसे ब्रह्म ज्ञान जब तक द्रव्य व्यवधान नहीं जाता है।। 67 ।। वित्त मोह महा कठिन है तृष्णा दुःख का कुआँ है, असहनीय मदमत्सर रूपी घड़ियाल है। केवल निःस्पृह ही तर सकता है।। 68 ।। लोभ से ब्रह्म का अखंड बैर है। वहां (लोभ है जहां) ध्यान के लिए अवसर नहीं है। सच्ची मुक्ति विरक्ति कैसी। लोभी आचारभ्रष्ट होता है।। 69।। जहां लोभ है वहां शांति नहीं, न संतुष्टि, न निश्चिंतता । एक लोभ के चित्त में बसते ही साधना मिट्टी में मिल जाती है।। 70 ।। श्रुति स्मृति द्वारा अविहित ऐसे निषिद्ध जो दुश्चरित्र है उसी में जो सदैव आसक्त रहते हैं उनका चित्त ध्यानस्थ नही रहता ।। 71 ।। उसका नाम है "विक्षिप्त चित्त" | सदैव दुष्कर्म में लिप्त रहता हैं । अखण्ड विषयों के कीचड़ में लोटते हुए वह हित अहित नहीं देखता ।। 72 ।। ब्रह्मविज्ञान सम्पन्न क्यों न हो, जो फल की इच्छा से विरक्त नहीं है, उसके लिए वह ब्रह्मज्ञान व्यर्थ है, वह आत्म सम्पन्न नहीं है।। 73 ।। कोई कुछ भी मांगता है। संत प्राथमिकता से अधिकारिता देखते हैं। जैसी जिसकी योग्यता व अयोग्यता , वैसे ही उसको वे देते हैं।। 74 ।। जिसके मन में रात-दिन देहाभिमान व विषय-चिंतन रहता है, गुरूपदेश थकाने वाला होता है। उसके दोनों ही अर्थ (स्वार्थ+परमार्थ) व्यर्थ ही लुट जाते हैं।। 75 ।। चित्त शुद्धि प्राप्त किये बिना, जो अपने को परमार्थ मार्ग में प्रवेश कराता है, वह ज्ञानगर्व की परेड कराता है, वास्तव में यह व्यर्थ मात्र है।। 76 ।। अतः जो रुचे वही बोलो, जितना पचे उतना अन्न खाओ, अन्यथा व्यर्थ अजीर्ण होगा यह तो सभी लोग जानते हैं ।। 77 ।। "मेरा भंडार भरपूर है जो-जो व्यक्ति जो-जो वस्तु चाहे देता हूं किन्तु ग्राहक की शक्ति देखकर मैं देता हूं जितना वह संभाल सके ।। 78 ।। यदि ध्यान देकर इसे सुनोगे अपना कृतकल्याण तुम पाओगे । इस पवित्र मस्जिद में बैठकर असत्य भाषण मैं नहीं करता" ।। 79 ।। ये संत वाक्य सुधा सरिता हैं इनके भावार्थ में डुबकी लगाने से अन्दर बाहर की शुद्धता प्राप्त होती है मल का क्षरण होता है।। 80 ।। ऐसी थी श्री साईंनाथ की महिमा, पूरा वर्णन की सीमा नहीं है। उस निरुपमा की उपमा कैसे करूं, वह शुद्ध प्रेम के अधीन है।। 81 ।। वह सबकी माँ है,

दुःखी थके हुए लोगों के लिए विश्रांति है, आश्रितों के लिए कल्पतरु है, दीन व गरीबों के लिए छाया है।। 82 ।। सांसारिकता को पूर्णरूप से छोड़कर पहाड़ की कन्दराओं में मौन धारण करके एकांत वास स्वीकारते हैं जो, अपने कल्याण में दक्ष हैं ।। 83 ।। ऐसे संत बहुत हैं जो केवल निज स्वार्थ साधते हैं अथवा केवल निज परमार्थ । दूसरों के लिए ये किस अर्थ के ।। 84 ।। साईं बाबा इस तरह के महंत नहीं थे। बिना नातेदार व मित्र, गणगोत्र, घर-द्वार या पत्नी बच्चे के सांसारिकता में रहते ।। 85।। पांच घरों से हथेली पर भिक्षा लेते । आठों प्रहर वृक्ष के नीचे वास करते । बिखरी हुई थोड़ी सी गृहस्थी को सहेजकर सांसारिक व्यवहार करना सिखाते ।। 86 ।। अपनी ब्रह्मस्थिति को साध कर जनता के कल्याण के लिए अपने को सुखाते ऐसे सज्जन उदार संत जगत में विरले ही हैं।। 87 ।। धन्य है वह देश, धन्य है वह कुल, धन्य है वे निर्मल माँ-बाप, धन्य उनका पवित्र गर्भ जिसने इस निर्मल रत्न को जन्म दिया ।। 88 ।। अनायास ही “पारस” प्राप्त हो गया, बहुतों ने पाषाण समझ कर फेंक दिया । बहुत काल तक शिरडी में इस परम दैवत्व को कोई नहीं पहचान सका ।। 89 ।। जैसे कूड़े के ढेर पर पड़े रत्न बच्चों के झुण्ड को मिल जाये वहां वे बिखेर कर खुश होकर पैरों के नीचे पत्थर की भांति दबाएं।। 90 ।। अतः इस प्रकार वह ब्रह्मभोक्ता आशीर्वचन पाकर तृप्त हो गया । वही गति तुम्हारी हमारी सभी की है। कठिन रास्ता छोड़ देते हैं ।। 91 ।। जब तक बाह्य विषयों का सेवन होता है---शब्द श्रवण, स्पर्श संवेदन, सुगंध घ्राणन, बाह्यांगदर्शन---तब तक विषयों का संयमन नहीं हो सकता ।। 92 ।। इन्द्रियों का निरोध किये बिना स्वभावतः विमुखपण, प्रत्यगात्मा का अवलोकन, उसका प्रबोध, असंभव है।। 93 ।। सबसे पहले सभी इच्छाओं से विहीन होकर, फिर सद्गुरु की अनन्य शरण में जाता है, ऐसा जो दृढ़ श्रद्धा सम्पन्न है, वह आत्मविज्ञान का पात्र है।। 94।। श्रोत्र आदि पंच ज्ञानेन्द्रियां स्वविषयों को त्याग देती है, मन स्वयं संकल्प विकल्प का निश्चित रूप से जिस समय त्याग कर देता है।। 95 ।। और जब मन प्रतिनिवृत्त हो जाता है और बुद्धि भी निश्चय व्यापार छोड़ देती है, तब वह वास्तविक परमगति है निर्विकार ब्रह्म है वह।। 96 ।। बुद्धि निश्चय शून्य होगी, चित्त भी जब चैतन्य प्राप्त करेगा, तब वह केवल उससे अन्य कोई नहीं, धन्य होकर आत्मज्ञान प्राप्त करेगा ।। 97 ।। विषयों से विमुख होकर इन्द्रियां आत्मोन्मुखी होगी, तब ही निज सुख प्रकट होगा। इससे भिन्न वह सब असुख है।। 98 ।। वह विषय विकार प्रच्छन्न है, आत्मज्ञान अति सूक्ष्म व इसे देखना कठिन है, परमानन्द प्राप्ति का साधन है आंकलन करने में अति गहन है।। 99।। हिरण्यगर्भपद तक इस लोक व उस लोक के विषयों से विरक्त ,वही एक ब्रह्म पद पर अभिषिक्त है ,उसी एक को मुक्त जानो।। 100 ।। धीरे-धीरे विषयों से चित्त वापस लौटकर आत्मरूप में स्थिर होता है आत्मज्ञान से जुड़ने के लिए ।। 101 ।। यहां वहां के फल भोग की इच्छा विहीन होना हर्ष शोक आदि द्वन्द का त्याग करना बुद्धिमानों का ही भोग है । यही अध्यात्म योग है।। 102 ।। आधिदैविक, आध्यात्मिक व आधिभौतिक रूपी सम्पूर्ण बडवानल की ज्वाला से संतप्त

संसार रूपी सागर में कौन सुखी होगा ।। 103 ।। वहां से अपने को ऊपर उठाने के लिए, साईंप्रसाद सम्पन्न होने के लिए, उनके चरित्र का अवलोकन, श्रवण व मनन सादर करना चाहिए ।। 104 ।। यह श्री साईंनाथ चरित्र पुत्र, मित्र, पत्नी के साथ श्रोताओं द्वारा सुनने से इस लोक व उस लोक की सिद्धि प्राप्त होगी । बाबा की लीला विचित्र है।। 105 ।। भाग्यवान, श्रद्धालु श्रोता ही इस कथा को सुनते हैं। अति संवेदनशील हृदय से सुनने में शांति को भी शांति प्राप्त होती है।। 106 ।। इस कथा रूपी झरने के प्रवाह में कर्म-अकर्म रूपी लवण घुल जाता है। श्रवण द्वार से नयनों में साईं का सुंदर रूप प्रवेश करता है।। 107 ।। चरित्र श्रवण से पाप का नाश होता है, चरित्रश्रवण से काल से भी लड़ाई में विजयी होने के लिए श्रोता तैयार हो जाता है, चरित्र श्रवण से श्रोता को बिना प्रयास के परम उल्लास प्राप्त होता है।। 108 ।। श्रवण से अन्तःकरण शुद्ध होता है, श्रवण से जन्म-मरण से मुक्ति मिलती है, श्रवण से श्रोता को ब्रह्मपन प्राप्त होता है केवल कर्म को ब्रह्म को अर्पण करने से ।। 109 ।। साईं की सेवा की इच्छा, इस प्रकार, सेवक सदा निष्काम करता है। श्री साईंराम अपने भक्तों को सर्वदा आराम देते हैं।। 110 ।। हे श्रोतागण ! इस ग्रन्थ के एक भाग का वाचन अथवा श्रवण और परिशीलन, मनन और निदिध्यासन प्रतिदिन करें, ।। 111 ।। "आनन्द में ब्रह्म है", निश्चित जानता हूं। यह यद्यपि तैत्तिरीय श्रुति विख्यात है ।बाबा भक्तों के लिए इसी श्रुति के निर्णय को अनुवादित करते हैं।। 112 ।। **"फिकर किचिंत न करो, सदा आनन्द से पूर्ण रहो। आमरणान्त चिंता न करो।"** बाबा नित्य उपदेश देते ।। 113 ।। इस प्रकार ब्रह्म तत्व का निर्धारण इस अध्याय की नीति है। वह भवतारण की नौका होगी जो साईं की शरण में जायेंगे उनके लिए ।। 114 ।। **"बार बार हित वचन बोलो, परोपकार करने को कहो।"** बाबा इसका अनुकरण करते । इसके अनुसार लोगों को प्रोत्साहित करते हैं ।। 115 ।। यह युक्ति संगत है या युक्तिसंगत नहीं है यह मतभेद केवल वैयक्तिक है। जिसमें सामान्य जन का संतोष है वही इस ग्रन्थ का उद्देश्य है।। 116 ।। यही है यहां प्रयोजन | बाबा कार्य कारण जानते थे। जैसा उनके मन में होता ,जानो, वैसा ही घटित होता ।। 117 ।। गुरुमुख की कथा सुननी चाहिए। अतर्क्य लीला का अनुभव करना चाहिए | उन्हें स्मरण करके, एकत्र करके, दूसरों को सुनानी चाहिए ।। 118 ।। साईं के ये चरित्र बहुत अच्छे हैं अत्यादर से श्रवण करने से श्रोता व वक्ता का दैन्य नष्ट हो जाता है, दुर्दिन की जगह अच्छे दिन आते हैं।। 119 ।। बाबा की अलौकिक लीला देखकर कौन अभागा चकित नहीं होगा। केवल दर्शन मात्र से शांत हो जायेगा, पदकमलों में लीन हो जायेगा।। 120 ।। साईं के इस विशद चरित्र को प्रशस्त चित्त से सुनना चाहिए। ऐसा सुखमय संयोग आने पर कौन इसे बिना कारण जाने देगा ।। 121 ।। पुत्र-मित्र-कलत्र (पत्नी) भंवर है। काम क्रोध आदि मगर भरे हैं। तिमिंगिल (एक बड़ी मछली का नाम) रूपी नाना रोग से इनका जो जल उठता रहता है कोलाहलपूर्ण इच्छाओं से उद्वेलित हो जाता है।। 122 ।। उद्वेग के झटके घटक-घटक (60 पल) हर समय आते जाते रहते हैं। द्वंद्व में पड़ कर संदेह उत्पन्न होता

है। किन्तु (लोग इनसे) संबंध नहीं तोड़ते हैं ।। 123 ।। स्वयं जीव को बोध होना चाहिए कि तू ही शुद्ध ब्रह्म है। शरीर के साथ बंधकर उस तोते (शुक) जैसा हो जाता है जो पिंजड़े में बैठने के डंडे को अपने पैरों से पकड़कर सर नीचे करके झूलता है।। 124 ।। केवल मोहमाया में भूलकर अपनी भलाई को वहीं बिसरा दिया । तुम्हें स्वयं ही सावधान होकर तुरंत स्वरूप में आना है।। 125 ।। भ्रम के कारण भ्रम बढ़ेगा। देहाभिमान आदि संभ्रम 2हैं। "मैं मेरा" मृगजल के समान है। यह जानकर निर्मम-"मैं मेरा"-के भाव से विहीन होओ।। 126 ।। इस मैं-तू पन के प्रपंच में क्यों उलझते हो, सीधा विचार करो। हे शुक बंधे हुए पांव खोल दो, ऊँचे (आकाश में) उड़कर विहार करो।। 127 ।। मुक्ति वहीं है जहां बद्धता है। बद्धता के पास ही मुक्ता बसती है। दोनों दशाओं से वापस होकर शुद्ध स्वदशा में रहें।। 1 8 ।। इस ज्ञान के लिए प्रबल रुझान होना चाहिए | सुख व दुःख सब अज्ञान है। इसे छोड़कर विशेष ज्ञान प्राप्त करो। ब्रह्मज्ञान पास ही है।। 129 ।। जब तक शरीर का मैं-तू पन है तब तक तुम अपना हित नहीं देख पाते। उसे फेंक दो स्वयं अपने को देखो, कृपणपन को दूर फेंक दो।। 130 ।। कुबेर की भांति धनवान, यदि भिक्षावृत्ति के लिए विचरता है तो वह केवल नष्ट चरित्र है। अज्ञान के कारण यही प्रतिकूलता है।। 131 ।। नित्य पवित्र शास्त्रों का श्रवण करें। सद्गुरु वचन का विश्वास के साथ पालन करें। सदा सावधान रहें उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए ।। 132 ।। लोग इस आचार पद्धति का अनुसरण करके अपने उद्धार का मार्ग खोज लेते हैं। असंख्य जीवों का उद्धार होता है उनके प्रयास के बिना ।। 133 ।। कब आयेगा ऐसा समय भवपाश से छुटकारा मिलेगा, जिसके मन में रात दिन यह उत्सुकता, वह (अनपेक्षित) अचानक बंधन तोड़ देगा।। 134 ।। सिद्धि के लिए एकांत को साधो । संसार निःसार है यह गांठ बांध लो। अध्ययन और आत्म चिंतन निरंतर करो ।। 135 ।। भक्ति व श्रद्धापूर्ण मन से शिष्य के पूर्ण विनय संपन्न होकर साष्टांग शरण में गये बिना गुरु ज्ञान का खजाना नहीं देगा।। 136 ।। हर प्रकार से गुरु की शुश्रूषा करो | बंधमोक्ष वृत्ति समझवाओ। विद्या अविद्या आदि के प्रश्न करो गुरु से फल पाने के लिए ।। 137 ।। आत्मा कौन परमात्मा कौन गुरु के बिना कोई नहीं बता सकता। गुरु भी पूर्ण शरण में आये बिना ज्ञान का कण भी नहीं देता ।। 138 ।। गुरु बिना किसी और द्वारा ज्ञान देने पर वह (ज्ञान) संसार निवर्तक नहीं होता। मोक्षफलप्रद थोड़ा भी नहीं होगा।। मन में कदापि बैठेगा नहीं ।। 139 ।। अतः गुरु बिन ज्ञान नहीं है। सभी विद्वानों को यह विदित है ब्रह्म व आत्मा के ऐक्य के संबंध में गुरु चरण ही समर्थ है।। 140 ।। वहां अपमान न करो, अभिमान को त्यागकर अखंड दण्डायमान होकर गुरु चरणों में मान को झुकाओ।। 141 ।। **"मैं तुम्हारा दासानुदास हूं। एक तुम्हारे चरणों पर आस्था है"** पांव पकड़कर यह वचन बोलो । यह दृढ़ विचार मन में करो।। 142 ।। फिर देखो उसका चमत्कार ! वह दया का सागर गुरु वास्तव में द्रवित हो जायेगा, तरंगो की अपनी शेज पर वह तुम्हें पकड़कर ऊपर कर लेगा ।। 143 ।। मस्तक पर ऊदी रगड़कर, सिर पर अभय हस्त रखकर सभी बलायें नष्ट कर देगा व पाप

की समस्त राशि जला देगा ।। 144।। इस प्रकार ब्रह्मार्थी के ब्रह्म निरूपण को केवल निमित्त जानो, जीव व शिव के ऐक्य का चिह्न भक्तों को पूर्णरूप से समझाने के लिए ।। 145 ।। अब महाराज के पास इतनी अतुल प्रज्ञा व गाढ़ी विद्या थी तो ठिठोली की शालीनता क्यों? क्यों विनोद से लगाव? ।। 146 ।। मन में सहज शंका होगी। किन्तु विचार करने पर देखोगे कि एक ही समाधान है। सावधान होकर सुनो।। 147 ।। छोटे बच्चों से बोलते हुए उनके बोल में रम जाते हैं । प्रौढत्व की कथा वार्ता थोड़ी भी हो सकती है क्या? ।। 148 ।। क्या उनके प्रति प्रेम नहीं है, उनकी बोलने की युक्ति का कैसे वर्णन करूं? किन्तु विनोद मस्करी एक बोध प्रधान कौशल है।। 149 ।। क्या रोग है क्या बालक की दृष्टि इसे अनुभव कर सकती है, यद्यपि वह पीने में हठ करने लगता है, तो भी माता दवा का कड़वा बूंट पिला देती है।। 150 ।। कभी पुचकार कर या फुसला कर, कभी क्रोध से आंख दिखाकर, कभी छड़ी का प्रयोग करके और कभी सप्रेम आलिंगन से ।। 151 ।। उसके प्रौढ़ होने लगने पर उसका प्यार करने की चाह होती है किन्तु उसकी बुद्धि तीव्र या मन्द है यह देखना होता है। वैसा ही ज्ञान के संबंध में निश्चित करना होता है।। 152 ।। तीव्र बुद्धि से तीव्र ग्रहण | उपदेश ग्रहण करने में क्षण भी नहीं लगता। वहीं जड़ बुद्धि के साथ भिन्न प्रक्रिया होती है। बहुत प्रयास करके सुरक्षित करना होता है ।। 153 ।। समर्थ साईं ज्ञान निधि हैं, जिस भक्त की जैसी बुद्धि, पात्र शुद्धि का निर्धारण पहले करते हैं फिर ज्ञान समृद्धि वितरित करते हैं।। 154।। उन्हें पूर्ण अन्तर्ज्ञान है। उन्हें सब कुछ पहले ज्ञात हो जाता है। जिसके लिए जैसा योग्य साधन उसके लिए वैसा ही नियमन ।। 155 ।। जैसा जिसका अधिकार पहले उसका विचार करते हैं योग्य अयोग्य के अनुसार भक्तों का भार बाबा लेते हैं।। 156 ।। हम देखने में बड़े हों, किन्तु सिद्ध साईं के समक्ष हम वास्तव में छोटे से भी छोटे बच्चे हैं। सर्वदा विनोद के लिए आतुर रहते हैं।। 157 ।। बाबा विनोद के भंडार थे। जिसकी जहां तहां श्रद्धा वह उसे यथेष्ठ पूर्णरूप से पूरा करते हैं भक्त को अव्यग्र रखते हैं।। 158 ।। सुबुद्धि अथवा मंदबुद्धि, इसे पढ़ने से परमानंद प्रकट होगा | सुनने से श्रवण की इच्छा बढ़ेगी। मनन से स्वानंद व संतुष्टि प्राप्त होगी ।। 159 ।। एक के बाद एक करने से परमार्थ बोध होगा। निदिध्यासन से बहुत प्रसन्नता मिलेगी। सुख अखंड व निर्बाध उपजेगा। ऐसी अगाध यह लीला है।। 160 ।। जिसे यह अनुभव करने का भाग्य मिला, थोड़ा भी भोग लिया, काया वचन मन से वह चिपक गया (साईं चरणों में) । साईं की लीला अतर्क्य है।। 161 ।। हेमाड साईं चरणों की शरण में है विनोद मार्ग से ज्ञान प्रदान व भक्त कल्याण एक प्रयोजन है। ब्रह्मार्थी को निमित्त जानो।। 162 ।। अगला अध्याय इससे भी अच्छा है। श्रवणार्थियों की इच्छा पूरी होगी। मेरे मन की गुप्त इच्छा का खुलासा होगा व पूरी की जायेगी।। 163 ।। मेरा माधव के पास जाना, बाबा का संदेश उन्हें देना, कैसे अनुग्रह प्राप्त करना, आदि से अन्त तक सुनो ।। 164 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित "श्री समर्थ साईं सच्चरित" का "ब्रह्मज्ञानकथन" नामक सत्रहवां अध्याय सम्पूर्ण ।।

।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय अट्ठारहवां (मदनुग्रह) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन।। श्री सदगुरुसाईनाथ को नमन।।

परम नित्य सद्गुरु की जय । ब्रह्मसत्य की जय | जगत के मिथ्यापन का अनुभव देने वाले माया के नियन्ता की जय जय ।। 1 ।। अनादि अनंत की जय जय । निर्द्वन्द्वा की जय जय । विकार रहित की जय जय | स्वरूप का बोध केवल तू ही कराता है।। 2 ।। सेंधा नमक की पुतली के सागर में स्नान करने हेतु प्रवेश करने पर क्या वापस आयेगी । यह तो कभी भी नहीं हो सकता है। वैसा ही तुम्हारे साथ है।। 3 ।। वेद श्रुति जिसके विषय में दिन रात विवाद करते हैं उस अलक्ष्य को तूं अंगुली से, बिना प्रयास के ही, भक्तों को दिखाता है।। 4 ।। यदि कोई दैवयोग आ जाये कि कोई तुम्हारे घेरे में पूर्णरूप से पड़ जाये फिर “आह अपना या आह दूसरे का”, इस कुतर्क को स्थान नहीं है।। 5 ।। गत अध्याय की कथा पावन थी। ब्रह्म की गाँठ (पोटली) का अविष्करण हुआ। ब्रह्मार्थी के लोभ का नियंत्रण हुआ। प्रतिबंध कारण का वर्णन हुआ।। 6 ।। अब मेरे अनुग्रह की कथा, हे श्रोता, सादर श्रवण करें। तुम्हारे चित्त को बाबा की मार्गदर्शकता का अनुभव प्राप्त होगा ।। 7 ।। यह भी मधुर कहानी है , जो जैसी घटी है वैसी ही कहूंगा । श्रोता अपने स्वार्थ के लिए स्थिर चित्त से श्रवण करें।। 8 ।। श्रवणार्थी के सादर होने पर वक्ता भी उल्लसित होता है और उसका आदर होता है। हृदय से प्रेम का झरना फूटता है दोनों आनन्द से भर जाते हैं।। 9 ।। तिल भर भी बुद्धि भेद किये बिना, जैसा जिसका अधिकार है वैसा ही उसका मार्ग, वास्तव में, उपदेश से दिखाते हैं।। 10 ।। कितने ही लोग इस मत के हैं कि गुरु द्वारा जो कथन किया जाये अन्य से इसे न बताया जाय । गुरुवाणी विफल हो जाती है।। 11 ।। यह तो केवल काल्पनिक है। प्रशंसा न हो तो निरर्थक है। प्रत्यक्ष क्या स्वप्न में कहीं व देखी गयी को भी बताना चाहिए, सबके लिए सद्बोधक होती है।। 12 ।। यदि इसे अप्रमाण मानते हैं, विद्वान कौशिक महर्षि प्रमाण है। स्वप्न में दी गयी दीक्षा “रामरक्षा स्तोत्र” का कथन सर्वत्र कर दिया ।। 13 ।। गुरु वर्षाकाल के बादल हैं जो अपनी इच्छा से स्वानंद जीवन की वर्षा करते हैं वह क्या ठूँसकर एकत्र करने के लिए है, यथेच्छ सेवन करने व औरों को सेवन करने देने के लिए है।। 14 ।। बच्चे

की ठुड्डी (हनुवटी) पकड़ कर माँ उसके आरोग्य के लिए ही स्नेह से दवा पिलाती है, वैसी ही बाबा की कुशलता ।। 15 ।। उनका मार्ग गुप्त नहीं था। किसी रीति से कैसे अनपेक्षित अपने भक्तों के हेतु को पूरा करते, सावधानी से सुनो।। 16 ।। सद्गुरु की संगति धन्य है। उसकी महत्ता का कौन वर्णन कर सकता है। उनकी एक-एक उक्ति को एकत्र करने से अपने स्पन्दन (उत्साह) में वृद्धि होती है।। 17 ।। प्रेम से ईश्वर की अर्चना करने पर, गुरु सेवा व गुरुपूजन करने पर गुरु को जाना जा सकता है, अन्य साधन सब है व्यर्थ हैं।। 18 ।। विक्षेप और आवरण ,इनसे भव मार्ग संकीर्ण होता है। गुरु के वचन दीपक की किरण हैं, निर्विघ्न मार्ग दर्शक हैं।। 19 ।। गुरु प्रत्यक्ष ईश्वर है- ब्रह्मा विष्णु महेश | गुरु ही वस्तुतः परमेश्वर है। गुरुराया परब्रह्म हैं।। 20 ।। गुरु जननी, गुरु पिता हैं। गुरुं देवों के कुपित होने पर सुरक्षा देते हैं। गुरु के कुपित होने पर कोई नहीं सुरक्षा देता है। सदा सर्वदा यह जानो।। 21 ।। गुरु प्रवृत्ति, तीर्थव्रत, निवृत्ति, धर्म-अधर्म, विरक्ति का सूक्ष्म निरूपक है; वेद श्रुति का प्रवक्ता है।। 22 ।। बुद्धि की आँख खोलकर संत निजरूप का उत्सव दिखाते हैं, भक्तों की लालसा पूरी करते हैं, अति कोमलता व करुणा के साथ ।।। 23 ।। उससे विषय वासना शांत होती है। निद्रा में भी ज्ञान की बात वह करने लगता है। विवेक व वैराग्य के जुड़वा फल, कृपा के कारण, हाथ में आ जाते है हैं।। 24 ।। सत्समागम (सत्संग), संतसेवा, संतप्रेम स्वयं भक्तों की इच्छा के कल्पवृक्ष हैं। सारा श्रम निवारण कर देते हैं।। 25 ।। सदा सत्परायण रहें, संतकथा का श्रवण करें, संत के चरण की वन्दना करें पापक्षालन होगा ।। 26 ।। “लार्ड रे" क्षेत्र-अधिपति थे। क्रार्डशाही (प्रशासन) को उलट पलट का आघात लगा | उस समय के एक प्रसिद्ध कीर्ति वाले व्यक्ति बाबा के भक्त बने ।। 27 ।। यह तापमय-संसार खोटा है। व्यापार धंधे में हानि होने पर मन थककर बहुत ऊबने लगा । लोटा लेकर निकल पड़े।। 28 ।। चित्त अति अस्थिर होने पर दूर प्रवास पर जाने का मन हुआ, सुखकर एकांत का सेवन करने के लिए। ऐसा विचार दृढ़ किया ।। 29 ।। जब जीव अतिसंकट में पड़ता है तब कष्ट में देव याद आते हैं फिर वह भक्त ऊँचे सुर में ईश्वर का नामोच्चारण करने लगता है।। 30 ।। किन्तु दुष्कर्म कम हुए बिना ईश्वर का नाम ओंठो पर नहीं आता। फिर ईश्वर उसके प्रेम व भक्ति को देखकर संत से भेंट करा देते हैं।। 31 ।। वैसे ही उस भक्त के साथ हुआ संसार से निराश व व्यथित देख उसके स्नेही तुरंत उसके हित के वचन बोले । उसे सुनो ।। 32 ।। “समर्थ साईंनाथ के दर्शन के लिए आप शिरडी क्यों नहीं जाते? उनसे प्रार्थना करिये । वह संत दया के बादल हैं।। 33 ।। संत की संगति में एक क्षण भी रहने पर चंचल मन निश्चल

हो जाता है। तत्काल हरि के चरणों में जड़ देता है फिर वापस आना कठिन होता है।। 34 ।। देश-देश से लोग जाते हैं। साईं के पांव की धूली में लोटते हैं । महाराज की आज्ञा के अनुसार व्यवहार करते हैं। सेवा करके इच्छित मनोरथ पाते हैं।। 35 ।। ऐसी उनकी प्रसिद्धि कीर्ति है बालक से वृद्ध तक सभी जानते हैं। उनकी करुणा होते ही दुःखनिवृत्ति हो जायेगी ।। 36 ।। शिरडी वर्तमान में पवित्र स्थान है। रात-दिन यात्रा होती रहती है। तुम भी देखकर अनुभव करो । संतदर्शन हितकारी होता है।। 37 ।।“ अवर्षण से उद्विग्न दरिद्र को अचानक विपुल धन की वर्षा, भूख से व्याकुल होने पर प्राण को पंच पकवान का परसना ।। 38 ।। वैसे ही स्नेहियों द्वारा कही गयी वार्ता उस भक्त को स्वीकार हो गयी। अनुभव प्राप्त करने का मन हुआ। शिरडी का रास्ता पकड़ लिया ।। 39 ।। गांव आये, दर्शन किया पांवों पर लोट गये । तत्काल नयन चमकने लगे, संतुष्टि प्राप्त हो गयी।। 40 ।। पूर्णब्रह्म सनातन स्वयं ज्योति निरंजन- ऐसे साईं का ध्यान देखकर मन सुप्रसन्न हो गया ।। 41 ।। अनुभव किया कि पूर्वार्जित भाग्य के कारण उनके पांवों तक आना हुआ, दर्शन से चित्त शांत हो गया निश्चिंतता हो गयी।। 42 ।। जिनका उपनाम साठे था, मन दृढ़ निश्चयी था, गुरु चरित्र पारायण निश्चय के साथ नियम से आरंभ कर दिया ।। 43 ।। सप्ताह पूर्ण होने की रात्रि में उन्हें बाबा ने स्वप्न दिखाया। अपने हाथ में वह पोथी लेकर साठे को अर्थ समझा रहे हैं।। 44 ।। स्वयं अपने आसन पर स्थित है। सामने साठे को बैठा दिया है। गुरुचरित्र की पोथी लेकर निरूपण आख्यान में तत्पर हैं।। 45 ।। बाबा ग्रंथ का पाठ करते, पुराणिक की भांति कथा निरूपण करते। साठे श्रोता की भांति स्थिर चित्त सादर गुरुकथा सुनते हैं ।। 46 ।। यह ऐसा उलटफेर क्यों? साठे विचार में पड़ गये। उन्हें बड़ा आश्चर्य महसूस हुआ । कंठ प्रेम से भर गये ।। 47 ।। अज्ञानरूपी तम की तकिया गर्दन के पास रखकर जो कुत्सित वासना में पड़कर खर्राटे ले रहे हैं उन्हें आप, दयालु, जगाते हैं।। 48 ।। ऐसे ही समय में, देखकर अपने गुरुचरित्र रूपी अमृत पिलाने के लिए कृपाला ने थपकी दिया ।। 49 ।। इस प्रकार का स्वप्न हो रहा था कि साठे वास्तव में जागृत हो गये । काका साहेब दीक्षित की करुणा पाने के लिए साद्यंत जो हुआ था, बता दिया।। 50 ।। बोले, "इसका अर्थ नहीं जानता । एक बाबा ही जानने में समर्थ हैं। उनके मन में क्या है नहीं जानता । काका ! साद्यंत पूछिए ।। 51 ।। पुनश्च पाठ शुरू करना है कि जितना किया है उसे पूरा समझें । बाबा का मनोरथ पूछिये । उसी से मन को शांति मिलेगी।। 52 ।। स्वप्न विवेचन किया, “देवा! आप इस स्वप्न के माध्यम से साठे को क्या जनाना चाहते हैं? ।। 53 ।। “सप्ताह" ऐसे ही शुरू रखा जाये अथवा यहीं समाप्त कर

दिया जाये। उन्हें मार्ग दिखावें ।। 54 ।। इतनी सी मेरी विनती (आपके) चरणों में है साठे महान भक्त व भावार्थी है। उनके प्रति कृपा करें, उनकी उत्कंठा पूर्ण कर दें।। 55 ।। फिर आज्ञा दी बाबा ने, “एक और पाठ होने दो । गुरु की पोथी वाचने से भक्त निर्मल होता है" ।। 56 ।। इस पोथी का पारायण करने से कल्याण होगा। परमेश्वर प्रसन्न होंगे। भवबंधन से मुक्ति मिलेगी।। 57 ।। यह कथन जब बाबा कर रहे थे मैं उनके पांव दबा रहा था मन में विस्मय हो रहा था। एक विचार का स्फुरण हुआ ।। 58 ।। बाबा का यह तरीका ऐसे कैसा है। साठे को अल्प प्रयास से फल मिल गया। मेरे सालोंसाल चले गये। उसे सात दिन में फल मिल गया।। 59।। एक ही पाठ गुरु चरित्र का। साठ्या ने सात दिन में किया। जिसने चालीस वर्षों तक पाठ किया उसका विचार नहीं किया।। 60 ।। एक को फल तो सात दिवस में, एक सात वर्षों में निष्फल रहा। मैं चातक व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रहा हूं कि कब दयाघन बरसेंगे ।। 61 ।। ऐसा दिवस कब आयेगा, कि संत चूड़ामणि प्रसन्न होंगे। मेरे मन की महत्वाकांक्षा कब पूरी करेंगे । क्या मुझे उपदेश देंगे।। 62 ।। भक्तवत्सल हैं श्री गुरुसाईं । देखो उनकी क्या अद्भुतता है? उस समय मन में वृत्ति उठी, तत्काल वह जान गये।। 63 ।। ऐसी ही अविद्या के परिणामस्वरूप अच्छी-बुरी करोड़ों वासनाएं उठती रहती हैं उन सभी पर बाबा की दृष्टि रहती है।। 64 ।। “(जो) मन सोचता है वह वैरी (भी) नहीं सोचता” | यह तो सभी निश्चित रूप से जानते हैं। अन्य कोई यद्यपि नहीं जानता महाराज तत्काल पहचान लेते हैं।। 65 ।। किन्तु वह अतिकृपालु माँ, जो सकलनिंद्य है उसे अनदेखा कर देती है। अनिंद्य को उचित समय देखकर प्रचुरता से गति देती है।। 66 ।। तब यह मनोगत जानकर बाबा मुझसे बोले, "उठो, उस श्यामा के पास जाओ, पन्द्रह रुपये लेकर आओ ।। 67 ।। उसके पास क्षणभर बैठो। परस्पर बातचीत करो। दक्षिणा दें ,वह लेकर तुरंत आकर वापस दो।। 68 ।।“ साईंनाथ की कृपा उपजी । दक्षिणा को निमित्त करके फिर बोले, "अभी जाओ शामा के पास, रुपये के लिए कहो” ।। 69 ।। ऐसी आज्ञा होने के बाद उनके सामने बैठे रहने की किसकी हिम्मत । बैठे रहने से अवज्ञा होगी। अनुज्ञा लेकर उठ गया ।। 70 ।। फिर मैंने तत्काल गमन किया। शामराव भी बाहर आ गये। अभी अभी स्नान किया था। धोती पहन रखी थी।। 71 ।। अभी अभी स्नान हुआ था। धुले हुए वस्त्र पहन कर धोती की चुन्नट ठीक करते हुए मुख से नाम (ईश्वर का) गुनगुना रहे है थे।। 72 ।। बोले, "क्या, इसी बीच में कहां ? मस्जिद से आते लग रहे हो। चेहरे पर क्यों चंचलता प्रकट हो रही है। ऐसे अकेले कैसे आज? ।। 73 ।। आओ बैठो, मैंने अभी स्नान किया है। देखो धोती की चुन्नट ठीक करते

आ रहा हूं। जाकर देव को जल चढ़ाकर समझो ऐसे ही वापस आया ।। 74 ।। आप तांबूल भक्षण करें तब तक मैं पूजा विधान कर लेता हूं। फिर संतुष्टिपूर्वक शांति से वार्ता करते हैं" ।। 75 ।। माधवराव घर में चले गये। फिर वहीं खिड़की पर नाथभागवत पोथी थी, सहज ही हाथ में उठा ली।। 76 ।। यों ही ग्रंथ खोला, अकल्पित, जहां से आरंभ किया वही भाग था जिसे सुबह पढ़ने के लिए अपूर्ण छोड़ दिया था ।। 77 ।। मन है में अति आश्चर्य हुआ। प्रातः काल जो वाचन आलस्य के कारण छोड़ दिया था बाबा ने संपूर्ण करवाया, मुझे नियमित करने के लिए।। 78 ।। नियमन अर्थात नियम से पाठ करो, सम्पूर्ण निश्चित परिशीलन न होने पर नियमित उपासना को अपूर्ण छोड़कर स्थान छोड़कर नहीं जाना चाहिए ।। 79 ।। अब थोड़ी सी उपकथा जो इसी परिप्रेक्ष्य में है, जिसे छोड़ा नहीं जा सकता, श्रोतागण सादर सुनें । वह नाथ भागवत से संबंधित है।। 80 ।। यही नाथभागवत, गुरुभक्ति से परिपूर्ण साईकृपा का पात्र होने से, दीक्षित नित्य वांचते थे।। 81 ।। जगत के उद्धार के कारण रूप नारायण ने जो ब्रह्मस्थान पर बोया था बाद में नारद रूप में, उसी स्थान पर, बीज अनाज की बाली बन गया ।। 82 ।। जिस क्षेत्र से दशलक्षणी (व्यासमुनि) ने बादरायणी की फसल काटी, शुकदेव ने उसे मांणकर भूसे से दाने को अलग किया, अनाज के दानों को साफ किया, परीक्षित के लिए।। 83 ।। स्वामी श्रीधर ने सूप से पछोरा, स्वामी जनार्दन ने उसकी माप की, एकनाथ महाराज ने प्रचुर मात्रा में रसभरित भोजन पकाया।। 84 ।। इसी भागवत पुराण के ग्यारहवें खण्ड (स्कन्ध एकादश) को भक्ति प्रेम सुख की खान जानो। उसी बत्तीस खण्डों वाली वृंदावन का दीक्षित नित्य वाचन करते हैं।। 85 ।। दिन में उसका निरूपण (आख्यान) करते । रात्रि में भावार्थ रामायण पढ़ते । यह ग्रंथ भी पूर्व कही गयी आज्ञा के अनुसार दीक्षित के लिए प्रमाण (नियम) था ।। 86 ।। भक्ति सुख अमृत का सार, ज्ञानेश्वरी का द्वितीय अवतार, वह एकनाथ महाराज का प्रचुर मूर्त उपकार महाराष्ट्र पर है।। 87 ।। प्रातः स्नान करके नित्य नियमित साईं पूजन, अन्य देव देवतार्चन नैवेद्य नीरांजन पूर्ण करके ।। 88 ।। फिर श्रोताओं के साथ विस्तार से, दूध के प्रसाद का अल्पाहार करके, नित्य क्रमानुसार सादर पोथी वाचते।। 89 ।। जिसका एक हजार मधुर पारायण, भगवतपरायण का, तुकाराम ने भंडारा (डोगंरा) की पहाड़ियों के एकान्तपन में किया था, उसकी मधुरता का वर्णन कौन कर सकता ई है।। 90 ।। क्या महाप्रासादिक दिव्य ग्रन्थ, क्या निष्टावन्त शिष्य दीक्षित, इसी लिए जीवों के उद्धार के लिए साईं समर्थ ने आदेश दिया था।। 91 ।। वन को जाने की आवश्यकता नहीं है। भगवान उद्धवगीत में प्रकट होते हैं (भागवतपुराण का ग्यारहवां खण्ड)

।जो श्रद्धायुक्त होकर पारायण (बार बार परिशीलन) करते हैं उन्हें भगवत् प्राप्ति तुरन्त होती है।। 92 ।। महाभारत में कृष्ण व अर्जुन का संवाद है, उससे भी सरस कृष्ण-उद्धव का संवाद है, एकनाथ की प्रेमल वाणी में भागवत का उपदेश वहीं है।। 93 ।। इस प्रकार यह प्रासादिक ग्रंथ ज्ञानदेव भावार्थदीपिका (ज्ञानेश्वरी) सहित ऐसा है कि समर्थ साईंनाथ कृपालु नित्य शिरडी में वचवाते ।। 94 ।। सखाराम हरी जोग, उन्हें ही बाबा ने आज्ञा दी थी। साठेवाडा में भक्तों के बड़े लाभ के लिए यह योग होता था।। 95 ।। प्रतिदिन इस ग्रंथ का श्रवण होता बाबा कितने ही भक्तों को भक्त कल्याण की इच्छा से करुणावस श्रवण करवाते ।। 96 ।। बाबा की अनुग्रह शैली अगाध है। भक्त को विभिन्न प्रकार से उपदेश देते । भक्त निकट होते या दूसरे देश में बाबा उनके हृदय में रहकर सन्निकट रहते।। 97 ।। यद्यपि स्वयं मस्जिद में रहते, किसी को कोई कार्य सौंपते, उसे अपनी शक्ति देते, वह कार्य करवाते ।। 98 ।। बापूसाहेब जोग को वाडा में पोथी पढ़ने के लिए बोलते, जिसे वे नित्य नियम से वांचते, सुनने के लिए श्रोता भी एकत्र होते ।। 99 ।। जोग भी भोजन के बाद अपराह्न में नित्य बाबा के पास जाया करते । चरण वन्दना करके विभूति लेकर पोथी वांचने के लिए आज्ञा प्राप्त करते ।। 100 ।। कभी ज्ञानेश्वरी वाचते, कभी वे नाथभागवत के अर्थ की व्याख्या के साथ पारायण आनन्दित होकर करते।। 101 ।। पाठ करने की ऐसी आज्ञा देने के बाद जो भक्त बाबा से भेंट करने आते कितनों ही को पोथी सुनने के लिए तुरंत भेजते।। 102 ।। कभी संक्षिप्त कहानी सुनाते । श्रोता जब एकत्र करके अपने कानों में बंद कर रहे होते, तभी बाबा कहते, "उठो, वाडा जाओ पोथी के लिए" ।। 103 ।। भावार्थी (निर्मल, सरल, निश्छल) श्रोता पोथी के लिए जाता, पोथी में ऐसी ही कथा प्रारंभ हो जाती जो पहले कही गयी कथा को दृढ़ करती। अर्थ का पूर्णरूप से बोध हो जाता ।। 104 ।। ज्ञानेश्वर की ज्ञानेश्वरी अथवा एकनाथ के श्लोक बाबा के कथा का अनुवाद करते । श्रोताओं को बहुत आश्चर्य होता।। 105 ।। वाचने के लिए आदेश है न होते हुए भी पोथी का कोई भाग विशेष जो पूर्ण निवेदित कहानी से संबंधित होता जोग वांचते ।। 106 ।।भगवदगीता व भागवत मुख्यतः यही दो ग्रंथ हैं भागवत धर्म के सारभूत । जोग इन्हें नित्य वांचते ।। 107 ।। ज्ञानेश्वरी गीता की टीका है जिसका नाम "भावार्थदीपिका" है। भागवत का ग्यारहवां अध्याय एकनाथ की परमार्थ की पवित्र भूमिका है।। 108 ।। इस प्रकार नित्यक्रमानुसार, भागवत वाचन की रीति के अनुसार, मैं निरंतर उसे वाचता, उस दिन अन्तर पड़ गया।। 109 ।। आधी कथा वाची थी। अन्य लोग मस्जिद जाने के लिए निकले । वाचते वाचते पोथी रखकर मैं वहां के लिए दौड़ पड़ा ।। 110

।। इच्छा थी सुनने की बाबा की है कहानी । बाबा के मन में कुछ और था। भागवत छोड़कर अन्य कार्य करुं उन्हें अच्छा नहीं लगा ।। 111 ।। इसीलिए यह क्रिया। नित्यपाठ के बाकी रह गये भागवत के अंश को वाचने के लिए राह पर लगाया । ऐसे हैं ये बाबा के महान कौतुक । स्मरण करके प्रेम में लोटपोट हो जाता हूं।। 112 ।। इस प्रकार भागवत की कथा यहीं समाप्त होती है। उपकथा इससे सरल है। माधवराव की पूजा समाप्त हुई श्रीमन् बाहर आये।। 113 ।। श्रीमन्, बाबा के संदेश हैं देखिए आपको मैं देने आया हूं, “शामा से पन्द्रह रुपये दक्षिणा लाओ" ।। 114 ।। बैठ कर सेवा कर रहा था, अकस्मात् आप स्मरण हो आये, "उठो शामा से जाकर बोलो। दक्षिणा के साथ वापस आओ ।। 115 ।। उनके घर बात करने के लिए बैठो । पलभर उनके साथ बात करो । परस्पर बोलचाल करो। फिर तुम यहां पधारो" ।। 116 ।। माधवराव ने जब यह सुना, अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए । रुपये के एवज में नमस्कार कहा । बोले यही हमारी दक्षिणा है।। 117 ।। इस प्रकार एक भला हुआ । पन्द्रह नमस्कार फेटे मे बांध लिया। किन्तु वार्ता करने के लिए शीघ्रता के लिए उनसे कहा ।। 118 ।। क्या कहानी है पूरी बताइये मेरी सुनने की उत्कट इच्छा को पूरा करने, बाबा की निर्मल यशगंगा में पाप धोने के लिए ।। 119 ।। फिर माधवराव बोले, "बैठो, इस देव के खेल ऐसे हैं। तुम भी सब जानते हो। एक क्षण विश्राम करने के लिए यहां बैठो ।। 120 ।। यह लो पान, यह लो कत्था, चूना, सुपारी डिब्बे में है। मैं एक क्षण में आता हूं। सिर पर टोपी लगा लूं।। 121 ।। साईं बाबा की लीला अगाध है। इसलिए मैं तुमसे कितनी कहूं। आपने व मैंने थोड़ा देखा है, जब से शिरडी आये हैं ।। 122 ।। मैं तो केवल देहाती हूं। आप शहरवासी हैं। उनकी प्रशंसा के लिए मेरे पास क्या है? उनकी लीला अगाध है।। 123 ।।“ ऐसा कहते हुए घर के अन्दर चले गये। देव के लिए फूल पान अर्पित किया। तत्काल टोपी पहनकर आये । बोलते हुए मेरे पास बैठ गये।। 124 ।। "देव की क्या अतर्क्य लीला है। कौन जाने उनकी कला? उनके खेल का अन्त नहीं है। निराला खेल खेलते हैं ।। 125 ।। आप लोग विद्या के भोक्ता हैं, एक से बढ़कर एक ज्ञानी। मैं देहाती बाबा के उस गूढ़ चरित्र को क्या जानूं ।। 126 ।। वे क्यों नही कहानी सुनाते । हमारे पास किसलिए भेजते हैं। उनका कार्य वही जाने । यह मानवी वृत्ति नहीं है।। 127 ।। अब इसी तारतम्य में मुझे एक अच्छी कहानी स्मरण हो रही है। फिर कुछ वार्ता करें, समय को अनुकूल बना लें।। 128 ।। मेरी दृष्टि के समक्ष प्रत्यक्ष यहीं घटित घटना सुनाता हूं। जिसके मन में जैसा निश्चय वैसा ही वह पार पाता है।। 129।। कभी कभी बाबा भी मनुष्यों को कितना तंग करते । भक्ति प्रेम की परीक्षा लेते। तब

ही उपदेश देते।। 130 ।।" उपदेश, यह शब्द कान में पड़ते ही साठे की "गुरु चरित्र" कथा स्मरण हो आयी। प्रथमदृष्टया जानो विद्युत लता मेरे चित्त में चमकी हो।। 131 ।। मस्जिद में मेरे चंचलमन में स्थैर्य तुरंत लाने के लिए शामा की योजना की कल्पना की होगी । बाबा की घटना अपनी तरह की पहली है।। 132 ।। जैसा भी हो, यह विचार जो उठा वैसे ही चित्त में दबा दिया। कथा श्रवण के लिए उत्कट इच्छा दोगुनी हो गयी है, उसकी पूर्ति करनी है।। 133 ।। तब, बाबा की कहानी की वार्ता थोड़ी-थोड़ी शुरू हुयी। चित्त को आनन्द आने लगा । भक्त वत्सलता का ध्यान करके ।। 134 ।। फिर एक और कथा सुनाई । बोले एक "देशमुख" होती थीं। उनके चित्त में सत्संग करने की इच्छा हुई।। 135 ।। साईंबाबा की कीर्ति सुनकर संगमनेर के लोगों के साथ बाई शिरडी को आयीं, बाबा के दर्शन की चाह से।। 136 ।। खाशाबा देशमुख की माँ थी इनका नाम था राधाबाई । साईं के पांव में निष्ठा धर कर साईं के दर्शन प्राप्त किये।। 137 ।। पूर्ण संतुष्टि भर दर्शन किया, मार्ग की थकान दूर हो गयी। श्री चरणों में अनुराग दृढ़ हो गया। यात्रा का उद्देश्य स्मरण हुआ।। 138 ।। उनके मन में उत्कट इच्छा थी, श्री समर्थ को गुरु बनाने की । यथार्थ का उपदेश करेंगे जिससे परमार्थ सिद्ध होगा।। 139 ।। बाई आयु से वृद्ध थी। बाबा के प्रति अत्यन्त निष्ठा थी। कुछ भी उपदेश प्राप्त करने के लिए मन में निश्चय किया।। 140 ।। "बाबा जब तक तुम मुझे स्वतंत्र रूप से एकाद कानमंत्र नहीं देते, मुझे कृपापात्र नहीं बनाते, तब तक अन्यत्र नहीं जाऊंगी ।। 141 ।। साईं के मुख से ही मन्त्र होना चाहिए। अन्य से प्राप्त किया हुआ अपवित्र होगा। श्री साईं संतों में अग्रणी पवित्र हैं। मुझे अनुग्रह पात्र बनायें ।। 142 ।।" उस बाई ने अन्तःकरण में ऐसा दृढनिश्चय करके, खानापीना छोड़ कर संकल्प धारण करके बैठ गयी।। 143 ।। पहले ही आयु से वृद्ध । तिलभर अन्न पेट में नहीं । घूँट भर पानी भी नहीं पिया । उपदेश में बड़ी श्रद्धा थी।। 144 ।। तीन दिवस रात दिन वृद्धा उपवास रही। जब तक बाबा उपदेश नहीं देते तब तक अन्न जल छोड़कर व्रत रहेंगी।। 145 ।। मंत्रोपदेश प्राप्त किये बिना शिरडी आने व यहां से जाने का क्या अर्थ है? अपने रहने के स्थान पर संकल्प धारण कर लिया। इससे निर्वाण भाव में स्थित हो गयी।। 146 ।। अन्न व जल के वर्जन करके इस प्रकार तप तीन दिन किया। इतना कष्ट करके देखमुख बहुत उदास हो गयी।। 147 ।। माधवराव विचार में पड़ गये। अभी तक जो हुआ, अच्छा नहीं हुआ है। इसे टालने के लिए क्या किया जाये। वृद्ध महिला मृत्यु से भयभीत नहीं है।। 148 ।। फिर वे मस्जिद तक जाकर बाबा के पास बैठे। नित्य की भांति आदर से कुशल वृत्तांत पूछा ।। 149 ।। "शामा

आज का क्या विचार है। समाचार ठीक है ना। वह “नारायण" तेली बहुत बावला हो गया है मुझे अत्यधिक तंग कर रहा है" ।। 150 ।। वृद्ध महिला के विचार देखकर शामा को पहले से ही अत्यधिक कष्ट था । तुरन्त बाबा से पूछा “फिर, वस्तुतः, कैसे किया जाये ।। 151 ।। देवा यह क्या रहस्य है? आपका खेल दूसरा नहीं समझ सकता । तुम्ही मनुष्यों को एक एक करके गांव लाते हो। हमसे विचार पूछते हो ।। 152 ।। वह वृद्धा, देशमुख, अन्न जल के बिना तीन दिवस उपवास रही है, तुम तक पहुंचने के उद्देश्य को धारण करके ।। 153 ।। वह वृद्धा बहुत हठी है। आपके प्रति निष्ठा अटूट है। आप तो उस पर दृष्टि भी नहीं डालते। उसे इतना कष्ट क्यों देते हैं ।। 154 ।। पहले से ही वह लकड़ी की तरह शुष्क है। दुराग्रही बहुत क्रोधी है। यह स्पष्ट है कि बिना अन्न के उसके प्राण नष्ट हो जायेंगे।। 155 ।। कहा जायेगा वृद्धा दर्शन करने गयी उपेदश की इच्छा धारण करके । किन्तु साईंबाबा को करुणा नहीं आयी । मरणाधीन कर दिया ।। 156 ।। बाबा, लोगों को ऐसा निराधार कथन न करने दीजिए | उसके भले का वचन बोलकर उस पर उपकार करिये । इस दोषारोपण को टालिये ।। 157 ।। उसके अंगों में जीवन शेष नहीं है उसके प्राण संकट में हैं, वह वृद्धा मृत्यु को प्राप्त हो जायेगी। आपका अपयश होगा ।। 158 ।। वृद्धा का व्रत पूर्ण होना कठिन है हमें बहुत चिंता हो रही है। दुर्भाग्यवश यदि वृद्धा मर जाती है, अनुचित कहानी बनेगी।। 159 ।। वृद्धा के प्रति कृपानुराग न करने पर, उसने निर्वाण की ठान ली है। मुझे उसके लिए कोई आशा नहीं दिखती। अपने मुख से उसके लिए कुछ कहिए ।। 160 ।।“ अध्याय की सीमा आ गयी है। श्रोताओं की आगे श्रवण की इच्छा अगले अध्याय में वास्तव में पूरी होगी, जो प्रेम रस से युक्त है।। 161 ।। आगे बाबा ने प्रेमलपन से उस वृद्धा के लिए जो उपदेश दिया उसे सादर सुनने से अविद्या की धारणा समाप्त हो जाती है।। 162 ।। हेमाड साईं चरणों की शरण में है। श्रोताओं के सामने दण्डवत है। अल्प प्रयास से भवतारण करने के लिए श्रवण में तत्पर होना चाहिए ।। 163 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित "श्री समर्थ साई सच्चरित” का "मदनुग्रह" नामक अट्ठरहवां अध्याय सम्पूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय उन्नीसवां (मदनुग्रह) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्रीसदगुरुसाईंनाथ को नमन ।।

सूक्ष्म से भी अत्यन्त सूक्ष्म, महत से भी अत्यन्त महत, ऐसे ब्रह्म से लेकर छोटी झाड़ी तक सब वस्तुयें साईं हैं।। 1 ।। ऐसे ईश्वर का रंग रूप व आकार आदि के साथ प्रत्यक्ष दर्शन करने की इच्छा हृदय में उत्पन्न हुई।। 2 ।। सूर्य उपासक भक्ति भाव से बत्ती से आरती करते हैं अथवा जैगरी का गणपति बनाकर गणपति भक्त जैगरी का नैवेद्य चढ़ाते हैं।। 3 ।। अथवा महासागर के मध्य से अंजली में पानी लेकर उसी के प्रति अर्पण करते हैं। प्रथम दृष्टि में अनुचित लगता है।। 4 ।। सूर्य और सागर का महाप्रभाव है। किन्तु वे भक्ति भाव देखते हैं, उचित व अनुचित को स्थान कहाँ? उनका कार्य तो भक्त गौरव है।। 5 ।। “समानशीलव्यसनेषुसख्यम्” - समान शील (प्रकृति) वाले व्यसन (दुर्व्यसन) में सखाभाव रखते हैं । यद्यपि यह सामान्य नियम है। फिर भी यह देह और आत्मा का संगम परम अनिवार्य अपवाद है।। 6 ।। दोनों में विलक्षण स्नेह है। एक दूसरे के बिना विश्राम नहीं कर सकते । एक क्षण के लिए भी अलग नहीं रह सकते ।। 7 ।। फिर भी यह शरीर नश्वर है। आत्मा निर्विकार अक्षर है। दोनों में अपरंपार प्रेम है। इसी से संसार का चक्र (जीवन व मृत्यु का) है।। 8 ।। यह आत्मा महान शक्ति है उससे भी सूक्ष्म अव्यक्त (प्रकृति) है ।यह आकाश अव्यक्त प्रकृति है इसी को माया कहते हैं।। 9 ।। इस सबसे सूक्ष्म पुरुष है। उसी में इन्द्रियाँ आदि निरुद्ध हो जाती है। वही परम व अन्तिम गति है, वही शुद्ध ब्रह्म है।। 10 ।। इस प्रकार यह आत्मा संसारी है। माया व कर्म के अनुसार भासित होता है, स्वयं में निर्विकारी व स्फटिक की भांति निर्लेप (शुद्ध) होते हुए भी।। 11 ।। स्फटिक काला, लाल, पीला जैसा रंग (जिसके सामने स्फटिक रखा हो) वैसी चमक । किन्तु वह सभी रंगों से निराला (भिन्न) है विकारों से अलग निर्मल ।। 12 ।। लम्बे चौड़े मैदान के ऊपर मृगजल, शीप में चांदी का भास, लिपटी हुयी डोरी देखकर सर्प का आभास नहीं होता? ।। 13 ।। डोरी पर सर्प का अध्यारोपण वस्तुतः अप्रमाणिक है वैसे ही "मैं शरीर हूं" यह अभिमान आत्मा का मिथ्या बन्धन है।। 14 ।। देह, इन्द्रिय, मन, प्राण; इनसे विलक्षण है आत्मा , स्वयं ज्योति शुद्ध चैतन्य विकारविहीन, निराकृति।। 15 ।। देह, बुद्धि, मन, प्राण इन सबका जब तक अभिमान है, तब तक उसका कर्तृत्व, भोक्तृत्व प्रमाण है; सुख दुःख का भान अनिवार्य है।। 16 ।। वट वृक्ष का बीज कितना ही सूक्ष्म हो उसके गर्भ में वट वृक्ष की शक्ति एकत्र रहती है। वृक्ष के अन्दर अगणित बीज होते हैं उनसे करोड़ो वृक्ष ।। 17 ।। ऐसे प्रत्येक बीज में एक वृक्ष, सृष्टि

के प्रलय होने तक यह चलता रहेगा। ऐसा ही विश्व प्रत्यक्ष है। लक्ष्य करके देखो।। 18 ।। शाश्वतता, निर्भयता, मुक्तता, स्वतंत्रता, परमात्म प्राप्तता,यही जीव की सफलता है यही जन्म का कर्तव्य है।। 19 ।। ज्ञान बिना मोक्ष नहीं, बिना विरक्ति ज्ञान प्राप्त नहीं होता, संसार है जब तक मन को अनित्य नहीं लगता, विरक्ति की कल्पना का स्फुरण नहीं होता है।। 20 ।। उसकी अनित्यता की प्रतीति होने लगती है तो विश्व के आभास से महत्वाकाक्षाएं बढ़ जाती हैं। उससे पथिक मध्य में ही आश्चर्यचकित रह जाता है, समझ नहीं पाता किधर जायें ।। 21 ।। ऐसी है यह विश्व की प्रतीति । शुद्ध बुद्धि के लिए माया विलास मिथ्या है, प्रपंच से उत्पन्न स्वप्न देखने जैसा। उसके लिए क्यों व्यर्थ प्रयास करें।। 22 ।।स्वप्न से जाग्रत होने पर यह स्वप्न अस्त हो जाता है अतः जो निज स्वरूप में स्थित है, वह प्रपंच के लिए स्मरण नहीं करता ।। 23 ।। आत्मैक्यत्व विज्ञान के बिना, आत्म यथार्थता प्रकाशित हुए बिना, शोक मोह आदि बन्धन को तोड़ने के लिए दूसरी जागृति नहीं है।। 24 ।। यद्यपि बाबा रात दिन उपदेशित करते कि सबसे श्रेष्ठ ज्ञान है फिर भी सर्वसाधारण को भक्ति मार्ग का अवलम्बन बताते।। 25 ।। ज्ञान मार्ग की महिमा रामफल के समान बताते। भक्तिमार्ग सीता फल सेवन है, स्वल्प साधन में मधुर रस ।। 26 ।। भक्ति सोज्जवल सीताफल है। ज्ञान परिपक्व रामफल है। एक से बढ़कर एक वैसे ही मधुर व सुगंधित ।। 27 ।। रामफल के गर्भ की गूदी, फल तोड़कर पकाने पर उग्र होती है। वृक्ष में पकने तक जो धैर्य धारण करते हैं उन्हीं को वह मधुर लगती है।। 28 ।। रामफल मधुर व सरस होता है, वृक्ष की डाल पर जब पकता है। जमीन पर गिरने पर खट्टा होता है। पकने पर अत्यन्त मीठा होता है।। 29 ।। बिना गिरे जो पकने दिया जाता है उससे उसका स्वाद प्राप्त किया जा सकता है। सीताफल के लिए यह प्रयास नहीं किया जाता अल्पगुण किन्तु अत्यधिक उपयोगी ।। 30 ।।रामफल को पतन का भय होता है, ज्ञानी भी निर्भय नहीं होता है, जब तक अष्टसिद्धि पर विजय प्राप्त नहीं होती है , यह देखने की बात है। थोड़ी भी लापरवाही का यहां काम नहीं है।। 31 ।। इसीलिए दयाघन साईं बहुधा अपने निज शिष्यों के लिए भक्ति एवं नाम स्मरण की ही व्याख्या करते ।। 32 ।। ज्ञान से भी श्रेष्ठ ध्यान है । भगवान ने अर्जुन के लिए कथन दिया था। भक्त का भव बंधन तोड़ने के लिए साईं ने भी यही साधन बताया है।। 33 ।। अतः, इस विषय की कथा, पूर्व अध्याय में वर्णित करते-करते अपूर्ण रह गयी थी, वह मैं अब कहता हूं, श्रोता सुनें ।। 34 ।। वयोवृद्ध, क्षीणशक्ति एक वृद्धा ने निर्वाण भाव में स्थित होकर साईं से मंत्र प्राप्त करने के लिए उपवास आरंभ कर दिया ।। 35 ।। उसकी स्थिति देखकर माधवराव को भय हुआ। बाबा की मध्यस्थता कराने के लिए गये । पूर्व कथा से यही संबंध (संगति) है।। 36 ।। श्री साईं के विचारों को दर्शाने के लिए श्री साईंचरित रूपी "ज्योति” को जलाया है जिससे उसकी दीप्ति मार्गदर्शक बने, भक्त को मार्ग का ज्ञान हो सके।। 37 ।। बाबा की ही आज्ञानुसार माधवराव ने मेरे लिए उचित एक सुन्दर कथा आरंभ

की, वही आगे चालू करता हूं।। 38 ।। बोले, “वृद्धा का संकल्प देखकर बाबा ने उस पर अनुग्रह किया। उसके मन की अवधारणा को परिवर्तित कर दिया।" कथा संग्रह अभिनव है।। 39 ।। बाद में बाबा ने प्रेम से आवाज लगायी, “माँ (आई) तूं क्यों अपने को कष्ट देने के लिए बैठी हो । क्यों तू मृत्यु को याद कर रही हो? ।। 40 ।। इस प्रकार कोई भी प्रौढ़ बाई (महिला) हो, उसे आई (माँ) कहकर पुकारते पुरुषों को "बाबा" "बापू” “भाई" । सम्बोधन का आनन्ददायक निरालापन ।। 41 ।। जैसा हृदय प्रेमयुक्त वैसी ही वाणी मंजुल (मधुर)। दीनदयाल श्री साईं निष्क्रियता को दूर करते हैं ।। 42 ।। इस प्रकार उसे बुलाया, अपने सन्मुख बैठाया अपनी गुरुत्व की (गुप्त कुंजी अपने हाथ से प्रेमपूर्वक दी।। 43 ।। भक्त के संताप के शमन के लिए, भक्त चकोर की प्यास बुझाने के लिए, बाबा ने जिस चिद्घन स्वानंद जीवन की वर्षा की, उसका सेवन करें।। 44 ।। बोले, “माँ वास्तविकता बताओ । जीवन का यह हाल क्यों किया | मैं टुकड़े मांगने वाला फकीर हूं। मुझे प्रेम से देखो" ।। 45 ।। वास्तव में मैं पुत्र, तूं माँ है। अब मेरी ओर ध्यान दो । तुझे एक अद्भुत चीज सुनाता हूं। परम सुखदायी होगी ।। 46 ।। देखो मेरे गुरु थे, महान संत कृपा के सागर । उनकी सेवा कर-कर के थक गया “कानमंत्र” नहीं दिया ।। 47 ।। मेरे भी मन में प्रबल आस थी, उनका आश्रय कभी भी न छोड़ने की, उनके मुख से मंत्र लेने की। दीर्घ प्रयास किये ।। 48 ।। आरम्भ में उन्होंने मुझे मूर्ख बनाया । मुझसे दो पैस मांगे । वह मैंने तत्काल दे दिया । मंत्राक्षर के लिए मैंने बहुत प्रार्थना की ।। 49 ।। मेरे गुरु पूर्णकाम थे। दो पैसे का क्या काम | वह निष्काम कैसे कहलाता है जो शिष्य से दाम मांगे ।। 50 ।। ऐसी शंका मन में न आने दो। उन्हें व्यवहारिक पैसे की कामना नहीं थी। यह नहीं था उनका विचार | उनके लिए सोने का क्या प्रयोजन ।। 51 ।। श्रद्धा और सब्र दो हैं वे पैसे, अन्य कुछ नहीं । वे मैंने उन्हें दे दिये, तब मेरी गुरु माँ प्रसन्न हो गयीं।। 52 ।। हे बाई! सबूरी (सब्र) ही धैर्य है। उसे छोड़ना नहीं । दूर नहीं करना । जब भी, समस्या पड़ने पर यही उस पार ले जायेगी।। 53 ।। पुरुष का पौरुष यह सबूरी ही है। पाप ताप दैन्यता का निवारण करती है। विपत्ति को प्रवीणता से दूर कर देती है। सारा भय किनारे कर देती है ।। 54 ।। सबूरी तक (जहां तक है) सफलता का मार्ग है। विपत्ति बारह हिस्सों में पलायन कर जाती है। यहां अविवेक का कांटा किसी को नहीं चुभता ।। 55 ।। सबूरी सद्गुणों की खान है, सदविचारों की रानी है। निष्ठा और यह सखी सरीखे बहनें हैं। दोनों जीव व प्राण हैं।। 56 ।। सबूरी के बिना मनुष्य जानवर है। उसकी स्थिति दीनता की भांति है। पंडित हो या महान सद्गुणी, इसके बिना उसका जीना व्यर्थ है ।। 57 ।। यद्यपि गुरु महाप्रबल होता है, किन्तु शिष्य से केवल प्रज्ञा, गुरुपद में सबल निष्ठा व धैर्य बल (सबूरी) की अपेक्षा करता है।। 58 ।। जैसे पत्थर और मणि दोनों ही सहाणी पर घिसने से उज्ज्वल हो जाते हैं, किन्तु पत्थर में पत्थरपन होता है और मणि चमकदार मणि होती है।। 59 ।। एक ही संस्कार से दोनों उज्जवल होते हैं क्या

पत्थर पर मणि का पानी चढ़ता है। मणि ही चमकदार हीरे का कण बन जाती है। पत्थर में अपने गुण के अनुरूप कुछ बाहरी चमक आ सकती है।। 60 ।। बारह वर्षों तक (गुरु के) चरणों में स्थित रहा हूं। गुरु ने छोटे बच्चे से बड़ा किया। अन्न, वस्त्र की किसी प्रकार का कोई अभाव नहीं था, उनके अन्दर प्रेम अत्यधिक था।। 61 ।। वह केवल भक्ति व प्रेम की मूर्ति थे। जिनका शिष्य के प्रति खरा स्नेह था । मेरे गुरु के समान गुरु बिरला ही है। सुख के उत्सव का वर्णन नहीं किया जा सकता ।। 62 ।। उनके प्रेम का क्या वर्णन करें। मुख देखते ही नयन ध्यानस्थ हो जाते । हम दोनों आनन्दघन की अनुभूति करते । अन्य किसी वस्तु का अवलोकन मेरे द्वारा नहीं किया गया ।। 63 ।। प्रेम से गुरुमुख का अवलोकन रातदिन करता , न मुझे भूख लगती न प्यास । गुरु के बिना मन अस्वस्थ हो जाता ।। 64 ।। उनके बिना ध्यान नहीं, उनके बिना अन्य लक्ष्य नहीं, वही एक नित्य उद्देश्य ।गुरु की कुशलता अद्भुत है ।। 65 ।। यही मेरे गुरु की अपेक्षा भी थी। इस अपेक्षा के अतिरिक्त और इच्छा नहीं रखते थे। मेरी कभी उपेक्षा नहीं की । संकट में सदैव रक्षा की ।। 66 ।। "कभी मेरा वास चरणों के पास होता है, कभी समुद्र के दूसरे किनारे पर। किन्तु संगम सुख में अन्तर न था । कृपादृष्टि से रक्षा करते ।। 67 ।। कछुवी जैसे अपने बच्चों को अपनी दृष्टि से चारा (भोजन) देती है वैसे ही मेरे गुरु की शैली थी। दृष्टि से बच्चे को संभाला ।। 68 ।। "माँ, इस मस्जिद में बैठकर तुझसे जो बोलता हूं उसे सत्य मानो । गुरु ने मेरे कान में नहीं फूंका । तुझे मैं कैसे फूंकू ।। 69 ।। कछुवी की प्रेम दृष्टि में उसके बच्चे की सुख-संतुष्टि । माँ व्यर्थ किसलिए कष्ट करती हो । उपदेश की कहानी मैं नहीं जानता" ।। 70 ।। कछुवी नदी के तट पर बच्चे दूसरे किनारे पर बालू में । पालन पोषण देख देखकर होता है। व्यर्थ मन्त्र के लिए परेशान हो ।। 71 ।। तूं जाकर अन्न ग्रहण करो। अपना जीवन संकट में न डालो। एक मुझ पर ध्यान करो। परमार्थ प्राप्त हो जायेगा ।। 72 ।। तू मुझे अनन्य भाव से देखो मैं तुझे वैसे ही देखूगा । मेरे गुरु ने अन्य कुछ मुझे सिखाया नहीं ।। 73 ।। न साधन सम्पन्नता की आवश्यकता है, न षट्शास्त्र चातुर्यता की आवश्यकता है। एक पूरा विश्वास होना चाहिए कि ऐसा गुरु कर्ता व हर्ता है ।। 74 ।। इसलिए गुरु की बड़ी महत्ता है। गुरु हरि हर व ब्रहम की मूर्ति है जो कोई उसकी गति जानता है, वह तीनों जगत में एक धन्य है" ।। 75 ।। इस प्रकार जब वृद्ध महिला को बोध कराया गया उसके मन में वह कथा अंकित हो गयी, महाराज के चरणों में माथा रखकर आदरपूर्वक व्रत से निवृत्त हुई।। 76 ।। यह समूल कथा सुनकर, (अपने लिए) इसकी उपयुक्तता जानकर, कथा की सार्थकता देखकर ,मेरा चित्त आनन्द से विस्मित हो गया ।। 77 ।। बाबा की यह लीला देखकर परमानन्द से कंठ अवरुद्ध हो गया, प्रेमावेग से मैं उद्वेलित हो गया, अन्तःकरण पर सद्बोध अंकित हो गया।। 78 ।। गद्गद कंठ देख मुझसे माधवराव बोले, "अन्नासाहेब, क्यों उद्वेलित हो रहे हैं। शांत क्यों बैठे हैं।। 79 ।। ऐसी बाबा की अगणित कथाएं हैं अब कितनी सुनाऊँ।"

ऐसा माधवराव के बोलते बोलते घंटा बजता सुनायी पड़ा ।। 80 ।। रोज दोपहर के भोजन के पहले, भक्त जाकर मस्जिद में बैठते । गंधाक्षतअर्घ्यपाद्य आदि सविधि बाबा की पूजा करते।। 81 ।। तदुपरांत उनकी पंचारती होती । बापू साहेब जोग, भक्ति व प्रेम से आरती घुमाते । भक्तजन आरती गाते।। 82 ।। उस आरती की शुभ सूचना स्वरूप घंटा घनघन बजने लगे। हमने मस्जिद की राह धर ली। मन की मनीषा (इच्छा) पूरी हो गयी।। 83 ।। मध्याह्न समय की आरती नरनारी मिलकर करते। स्त्रियां मस्जिद में ऊपर, पुरुष नीचे मंडप में।। 84 ।। तब मंगल-वाद्यों का एक साथ बजना होता, उससे झंकार होती, आरती उच्च स्वर में बोली जाती, हर्षित होकर।। 85 ।। सभी मंडप द्वार पर ,हमारे पहुंचने पर आरती वाद्यों की प्रचंड मिश्रित ध्वनि के साथ चल रही थी। पुरुष मण्डली ने सीढ़ियां को घेर रखा था, ऊपर जाने का रास्ता नहीं था।। 86 ।। मेरा मन, जब तक आरती संपन्न नहीं हो जाती, नीचे रहने का था। सम्पन्न होने के बाद फिर बाबा के पास अन्य लोगों के साथ जाने का।। 87 ।। मैं मन में यह कह रहा था और माधवराव सीढ़ी चढ़ गये। हाथ का अगला भाग धर कर मुझे भी ऊपर खींच लिया। बाबा के निकट लाये ।। 88 ।। बाबा निज स्थान पर स्थित स्वस्थ मन से चिलम पी रहे थे। सामने जोग पंचारती घुमा रहे थे, बांये हाथ से घंटी बजा रहे थे।। 89 ।। ऐसी उस आरती की प्रसन्नता के माहौल में बाबा के दक्षिण भाग में माधवराव स्वयं बैठे मुझे बाबा के सम्मुख स्थिति में बैठा दिया।। 90 ।। फिर शांतिमूर्ति संतमणि बाबा मधुर वाणी बोले, "शामराव ने मेरे लिए क्या दक्षिणा दी लाओ" ।। 91 ।। "बाबा ये शामराव यहीं हैं दक्षिणा के ऐवज में नमस्कार दिया । बोले यही पन्द्रह रुपये हैं, बाबा के प्रति अर्पित करने के लिए" ।। 92 ।। "अच्छा, वार्ता किया है क्या? दोनों कुछ बोले क्या? मुझे पूरा बताओ अब, क्या वार्ता की? ।। 93 ।। "नमस्कार की कथा किस तरह हुई। उनसे वार्ता क्या किया । क्या कैसे सम्पूर्ण अब मुझे सुनाओ" ।। 94 ।। कहानी सुनाने की भी उत्कंठा, आरती का शोर बहुत था । परमानन्द मैं अन्दर रोक नहीं सका, ओठों से प्रवाहित होने लगा ।। 95 ।। बाबा तकिया से ओट लगाये थे, कहानी सुनने के लिए आगे झुके । मैंने भी मुंह आगे कर लिया कथन आरंभ किया ।। 96 ।।" बाबा वहां जो वार्ता हुयी सब ही चित्त को मधुर लगी। उनमें से एक उस वृद्ध की कथा में अति नवलता थी ।। 97 ।। शामराव के कहानी कहने पर मैं आपकी अबोधगम्यता देख सका । उस कथा के बहाने मेरे प्रति आपने निश्चित रूप से अनुग्रह किया है।।" 98 ।। तब बाबा अति उत्सुकता से बोले, "मुझे समग्र कथा बताओ। क्या कैसी नवलता देखी। अनुग्रह कैसा" ।। 99 ।। कहानी ताजी सुनी गयी थी। इसके अतिरिक्त मन पर अधिक प्रभाव पड़ा था। बाबा से बिना त्रुटि निवेदन किया। चित्तवृत्ति प्रसन्न दिख रही थी ।। 100 ।। इसी प्रकार सब वृतान्त कह दिया । बाबा भी ध्यान देकर सुने । तुरंत फिर मुझसे बोले, "यह मन में रखते जाओ" ।। 101 ।। और अति उल्लास से पूछे, "कितनी मधुर सुनी हुई कथा है। क्या तुम्हारे चित्त पर वह अंकित हो गयी है, वास्तविक

सार्थकता मान ली क्या? ।। 102 ।।“मैंने कहा "बाबा यह कथा सुनकर मुझे निज विश्रांति प्राप्त हो गयी। मन का कष्ट दूर हो गया, निश्चित मार्ग मुझे ज्ञात हो गया" ।। 103 ।। फिर बाबा उस पर बोले, “मेरी कला न्यारी है, वह एक ही कहानी मन में धर लो। बहुत उपकारी होगी ।। 104 ।। अनुभव से प्राप्त किया गया आत्मा के ज्ञान का कारण ध्यान है। वह ध्यान ही आत्मा का अनुष्ठान है उसी से वृत्तियों का समाधान होता है ।। 105 ।। सभी इच्छाओं से विमुक्त होकर सर्वभूतों पर ध्यान केन्द्रित करो। ध्यान व्यवस्थित होगा। प्राप्तव्य प्राप्त होगा ।। 106 ।। केवल जो मूर्त ज्ञान है, चैतन्य अथवा आनन्दघन, उसे ही मेरा स्वरूप जानो ।उसका नित्य ध्यान करो ।। 107 ।। यदि ऐसा ध्यान प्राप्त न हो, सद्‌गुणरूप का अनुसंधान करो। मन में रात दिन नख से शिख तक मुझ सगुण को केन्द्र बनाओ ।। 108 ।। ऐसे मेरा ध्यान करने से मन इतना एकाग्र हो जायेगा कि ध्याता-ध्यान-ध्येय का भाव नष्ट होता जायेगा ।। 109 ।। इस प्रकार त्रिपुटी के विलय हो जाने पर ध्याता को चैतन्यघनता प्राप्त होगी। यह उस ध्यान की इतिकर्तव्यता है, ब्रह्म से समरसता प्राप्त होने पर ।। 110 ।। कछुवी नदी के इस पार के तट पर, उसके बच्चे उस पार के तट पर, न दूध न (शरीर की) गर्माहट, केवल दृष्टि बालकों का पोषण करती है ।। 111 ।। बच्चों का सदा माँ पर ध्यान रहता है, अन्य कुछ करने की आवश्यकता नहीं । न दूध की आवश्यकता, न चारा, न अन्न । माता को निहारने से उनका पोषण होता है ।। 112।। वह जो कूर्मदृष्टि से निहारती है तब उसी प्रकार प्रत्यक्ष अमृत वृष्टि होती है। बच्चे स्वानंदपुष्टि प्राप्त करते हैं। गुरु व शिष्य के मध्य ऐक्य का सृजन ऐसे ही होता है ।। 113 ।।“ साईं मुख से उच्चार होते ही आरती का शोर थम गया। सभी ने आवाज लगायी, "श्री सच्चिदानंद सद्‌गुरु जय जयकार" ।। 114 ।। सरलता से नीरांजन उपचार हुआ सरलता से ही विस्तार पूर्वक आरती हुई, फिर जोग द्‌वारा चीनी की डली अर्पित करते ही बाबा ने हथेली पसार दी।। 115 ।। नित्यक्रमानुसार जोग ने प्रेमपूर्वक, नमस्कारपूर्वक वह चीनी की डली, अंजलीभर, उस हाथ पर रख दी।। 116 ।। वह पूरी शर्करा मेरे हाथ में बाबा ने डाल दी और बोले, "कहानी चित्त में एकत्र रखोगे तो तुम्हारी स्थिति इस शर्करा की भांति हो जायेगी ।। 117 ।। जैसी यह चीनी की डली मीठी है वैसे तुम्हारे मन की इच्छायें पूरी होंगी तुम्हारा हर तरह से कल्याण होगा। तुम्हारी अन्तर की इच्छायें पूरी होंगी ।। 118 ।।“ फिर मैंने बाबा का अभिवादन किया। उनकी कृपा के दान की प्रार्थना की, “यह आशीर्वचन ही मेरे लिए पर्याप्त है। मुझे अभी से संभालने के लिए ले लीजिए" ।। 119 ।। बाबा बोले, “कथा श्रवण करो, मनन और निदिध्यासन करो । स्मरण और ध्यान करने पर आनन्दघन (ब्रह्म) प्रकट होंगे ।। 120 ।। इस प्रकार जो कानों से सुना है उसे यदि मन में धारण कर लो निज कल्याण की खान खुल जायेगी। पाप की धुलाई हो जायेगी ।। 121 ।। तीव्र वायु के चलने पर समुद्र में लहरें उठती हैं असंख्य बुलबुले तथा फेना एकत्र हो जाता है। किनारे पर आकर टकराते हैं ।। 122 ।। लहरें, बुलबुले, फेना, भंवर

- ये सब एक जल के ही प्रकार हैं। यह सरल दृग्भ्रम वायु के शांत होते ही छिन्न-भिन्न हो जाते हैं ।। 123 ।। क्या यह कहा जाये कि ये प्रकार थे या कहा जाये कि नष्ट हो गये । माया का सब कार्य जानकर आना जाना समझना चाहिए ।। 124 ।। उसी प्रकार सृष्टि का विकास है। विवेकशील की उनमें रुचि नहीं होती। वे नाशवान में विश्वास नहीं करते वे नित्य को साधते हैं।। 125 ।। ज्ञान से अधिक ध्यान का महत्व है उसके लिए यथार्थ ज्ञान होना आवश्यक है। जब तक वस्तु का पूर्ण आंकलन नहीं होता यथार्थ ध्यान नहीं लगता।। 126 ।। ध्यान का मूल सम्यग्विज्ञान है। इसका नाम है प्रत्यगात्मानुष्ठान । किन्तु जिसे विक्रियारहित जानते हो कैसे ध्यान कर सकते हो उसका ।। 127 ।। प्रत्यगात्मा ही ईश्वर है और जो ईश्वर है वही गुरु है इन तीनों में अणुमात्र भी भेद नहीं है। उसे स्पष्ट कर लो ।। 128 ।। निदिध्यासन की परिपक्वता होने पर ध्यान व ध्याता लुप्त हो जाता है। चित्त दीप की भांति शांत हो जाता है। यह शांति ही समाधि है ।। 129।। सभी इच्छाओं से विनिर्मुक्त होने पर, वह सभी भूतों में है यह ज्ञान होने पर, इस विश्वास से कि मेरे अतिरिक्त दूसरा कोई अन्य नहीं है संसार में (अद्वैत का भाव) अभय प्राप्त होने पर ही वह ध्यान में आता है ।। 130।। फिर अविद्याकृत कर्म के बंधन से संबंध तटातट टूटने लगते हैं। क्या करना चाहिए या क्या नहीं करना चाहिए इससे संबंधित नियम नियन्त्रण ढीले पड़ने लगते हैं। मुक्ति के आनन्द का भोग होने लगता है ।। 131 ।। पहले आत्मा है कि नहीं, एक ही है या जगह-जगह भिन्न है, कर्ता है या अकर्ता, यह देखने के लिए सभी शास्त्रों में ढूंढना है ।। 132 ।। आत्मा एक है यह अनुभव जनित ज्ञान ही ज्ञान की पराकाष्ठा है। मोक्ष और परमानन्द की उत्पत्ति उसी से वास्तव में है ।। 133 ।। अंधे को हाथी का वर्णन करने के लिए, वृहस्पति के समान वक्ता लायें , वक्तृत्व से स्वरूप अंधे के चित्त में नहीं आयेगा। जो वाचातीत है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है ।। 134।। वक्ता की वाणी श्रोता के श्रोत्र क्या जा चुके नेत्र को ला सकते हैं। हाथी के स्वरूप का अवलोकन करने का पात्र वास्तविकता में केवल नेत्र ही हैं ।। 135 ।। नेत्र न होने पर हाथी की प्रतीति अंधे को कैसे हो सकती है। वैसे ही है दिव्य नेत्र जो गुरु देते हैं, उसी से ज्ञान प्राप्त होता है।। 136 ।। साईं स्वरूप का यथार्थ ज्ञान ही , जो स्वयं परिपूर्ण विज्ञानघन है, उनका ध्यान, अनुष्ठान व उनका दर्शन है ।। 137 ।। अविद्या, कर्म, कर्मबंधन - इससे पूर्ण रूप से मुक्ति के लिए अन्य साधन नहीं है, इसे गांठ बांध कर एकत्र करलो ।। 138 ।। साईं तुम्हारा ही या हमारा ही नहीं है वह तो सर्वभूतों में विद्यमान है वास्तव में जैसे सूर्य सकल जग का है वैसे ही वह भी सभी का है ।। 139 ।। अब उनके बोल सुनो; सर्व साधारण और अनमोल । प्रतिपल स्मृति में रखने से सर्वदा स्वार्थ सफल होगा ।। 140 ।। "पूर्व के संबंध के बिना कोई कहीं जाता नहीं। नर क्या पशु पक्षी किसी को भी दुत्कारिये नहीं ।। 141 ।। अतिथि का आदर करो | प्यासे को जल, भूखे को रोटी, नंगे को वस्त्र, विश्राम के लिए आसरा देने से श्री हरि प्रसन्न होते हैं ।।

142 ।। किसी को पैसे की आवश्यकता होने पर, तुम्हारे चित्त में "कैसे दूँ " का भाव होता है। न दो, किन्तु क्रोधित होकर कुत्ते जैसे व्यवहार न करो ।।143 ।। कोई सौ बोल बोले, स्वयं कटु उत्तर न दो। निरन्तर सहिष्णुता धारण किये रहने से अपार सुख मिलता है ।। 144 ।। दुनिया इधर से उधर हो जाये, हमें आगे पीछे नहीं होना चाहिए। अपने स्थान पर निश्चल तैयार रहकर वह सब कौतुक देखना चाहिए ।। 145 ।। तुम्हारे हमारे मध्य की भीत (दीवार) गिराकर समस्त नष्ट करके देखो, फिर जाने आने का मार्ग प्रशस्त होगा, भय से अति मुक्त होगा ।। 146 ।। मैं व तू की भेदवृत्ति ही गुरु शिष्य के मध्य की वह भीत है, उसे न गिराये जाने पर अभेद स्थिति निश्चित ही दुर्गम है ।। 147 ।। अल्ला मालिक है, अल्ला मालिक है, उसके अतिरिक्त और कोई रक्षक नहीं है, उसकी करनी अलौकिक है, वह अमूल्य व अबोधगम्य है ।। 148 ।। वह जो करेगा वही होगा, उसका मार्ग वही दिखायेगा। समय आने में क्षण नहीं लगता । मन की मुराद पूरी होगी ।। 149 ।। पूर्व जन्मों के कर्मों के बन्धन की माला होती है। भाग्य से हमारी तुम्हारी भेट होती है। अतः परस्पर प्रेम से आलिंगन करो, सुख संतुष्टि का अनुभव करो।। 150 ।। कौन यहां अमर है जिसने परमार्थ साध लिया,, वह कृतार्थ हो गया। अन्यथा श्वासोच्छवास है, तब तक सकल जीव है ।। 151 ।।" ये कृपावचन कान में पड़ते ही मेरा आतुर मन सुखी हो गया। मुझ प्यासे को जीवन मिल गया। मैं आनन्द सम्पन्न हो गया ।। 152 ।। अतुल प्रज्ञा वास हो, वैसी ही प्रचुर व स्थिर श्रद्धा हो, किन्तु साईं समान गुरु बल से जुड़ने के लिए सबल भाग्य आवश्यक है।। 153 ।। इस का सार देखें तो भगवान ने निश्चित रूप से इसी को बोला है, यही उद्गार हैं- "ये यथा माम प्रपद्यन्ते."............ जो जिस प्रकार मुझे भजता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 4. ll) अखिल भार कर्म पर है।। 154 ।। जैसा कर्म, जैसा श्रुत, जैसा अभ्यास वैसा ही हित यही इस अध्याय में इंगित है। यही बोध अमृत यहां पर है।। 155 ।।" अनन्याश्चिंतयंतो माम्"- "मेरा अनन्य चिंतन करते हैं" यही भगवद्गीता का मर्म है | जो नित्य युक्त है उनके प्रचुर योग से क्षेत्र की व्यवस्था गोविंद करते हैं ।। 156 ।। यह मधुर उपदेश सुनकर स्मृति के वचन मन में आये। "देवान्भावयतानेन" - तुम लोग इस यज्ञ के द्वारा देवताओं को उन्नत करो, फिर वे तुझे करुणा व उत्कंठा से चाहेंगे (श्रीमद्भगवत्गीता 3. [1) ।। 157 ।। तुम जोर से खींचने में लगो (कर्म करो), दूध (फल) की सब चिंता छोड़ कर । दूध की बाल्टी लेकर मैं खड़ा हूं । मैं पीछे पृष्ठभाग में हूं ।। 158 ।। "कहो कि,मैं जोर लगाऊँ, दूध के प्याले तुम खाली करते रहो। यह तो मुझे नहीं मालूम । कार्य में दक्ष होना चाहिए ।। 159 ।। यह बाबा की प्रतिज्ञावाणी है। प्रमाण मानकर जो व्यवहार करता है। इस लोक में, परलोक में सुख की खान उसे प्राप्त होगी यह जानो।। 160 ।। अब, पुनः श्रोताओं से विनती है एक क्षण चित्त को सुस्थिर करके,एक स्वानुभव की कथा, साईं का पोषण करने का संकल्प, सुनें ।। 161 ।। अच्छाई को नियमित करने के लिए बाबा कैसे प्रोत्साहन देते । सुनो, ओठ हिलाये बिना साईं

का अनुग्रहदान ।। 162 ।। भक्ति के कौतुक को देखने के लिए भक्त को अनन्य शरण में होना चाहिए। फिर साईं की कला की नवलाई नित्य नवीन अनुभव करें।। 163 ।। अतः प्रातःकाल के प्रहर में सोते से जागने पर सदवृत्ति की लहर उठे तो उसे निश्चय ही बढ़ने देना चाहिए ।। 164 ।। ये वृत्तियां यदि परिपोषित हों तब अति संतोष होगा, बुद्धि का विकास होगा, मन को प्रसन्नता होगी।। 165 ।। यह एक संत का वचन है। मुझे लगा कि उसका अनुभव करूं । अनुभव से मन को शांति मिली। चित्त को लगा कि क्या कौतुक है।। 166 ।। शिरडी सरीखे पवित्र स्थान, गुरुवार सम शुभ दिन, रामनाम का अखंड जप कराने का मन हुआ।। 167 ।। बुधवार की रात्रि सोने तक देह निद्रा के वश में हो गयी तब मन के भीतर राम स्मरण करके उन्हें ह्रदय में रख लिया।। 168 ।। प्रातःकाल जागने पर चित्त ने रामनाम स्मरण किया फिर ऐसी वृत्ति के उठने पर जिह्वा की सार्थकता हो गयी।। 169 ।। मन की धारणा को निश्चित किया। शौच, मुख मार्जन के बाद उपलब्ध पुष्प लेकर साईं के प्रातः दर्शन के लिए निकला ।। 170 ।। दीक्षित का घर छोड़कर बुट्टी वाडा के बाहर आते ही औरंगाबादकर को एक मधुर सुंदर पद कहते हुए सुना ।। 171 ।। उस पद की समयोचितता ओवीरूप में कहने पर मूल पद का रस समाप्त हो जायेगा, श्रोता भी निराश होंगे।। 172 ।। उस पद को ही समूल कहता हूं अक्षर-अक्षर सकल मैं गाता हूं जिससे प्रेमल श्रोताजन आनंदित होंगे, मूल पद के निर्मल उपदेश से।। 173 ।।

।। पद ।।

'गुरु कृपांजन पायो मेरे भाई।

राम बिना कछ मानत नाहीं ।। ध्रु०।।

अंदर रामा, बाहर रामा । सपने में देखत सीतारामा ।। 1 ।।

जागत रामा सोवत रामा। जहां देखे वहां पूरनकामा ।। 2 ।।

एका जनार्दनी अनुभव नीका । जहां देखे वहां राम सरीखा" ।। 3 ।। गुरु०।।"

पहले ही मन में निश्चय कर लिया था। रामनाम को चित्त में नियमित करने का निश्चय जैसे ही प्रारंभ हुआ ये पद उसे दृढ़ता प्रदान करने लगे।। 174 ।। उससे मन को बोध हुआ, जब मन में निश्चय के अंकुर उगने लगे, साईं समर्थ करुणाघन ने पद रूपी जल से सिंचन किया क्या? ।। 175 ।। हाथ में तंबूरी लेकर साईं सन्मुख आंगन के भीतर औरंगाबादकर ऊँचे स्वर में गा रहे थे उसकी मिठास मैंने सुनी।। 176 ।। औरंगाबादकर बाबा के भक्त थे। मेरी भांति बाबा के चरणों में अनुरक्त। अनेक पद उन्हें ह्रदय से स्मरण थे। उस समय यही क्यों स्फुरित हुए ।। 177 ।। मेरा मनोगत कोई नहीं जानता था यही पद वह क्यों गाये जा रहे थे। बाबा जैसे सूत्र हिलाते हैं वैसे ही स्फुरण होता है।। 178 ।। हम सब केवल कठपुतली

हैं, सूत्रधार साईं माँ है। स्वयं न बोलते हुए मेरे हाथ अचूक व भली उपासना दे दी।। 179 ।। मेरे अन्तर की वृत्ति जानो बाबा के चित्त में प्रतिबिम्बित हुई। इस मार्ग से प्रत्यक्ष प्रतीति निश्चित करके प्रकट की ।। 180।। कितना अधिक है इस नाम का महत्व, जो संत महंत वर्णन करते रहे हैं। मैं पामर उसकी कितनी प्रशंसा करूं। इसी से स्वरूप प्राप्ति होती है।। 181 ।। इन्हीं दो अक्षरों को उल्टा स्मरण करने से मार्ग के लुटेरे कोली का उद्धार हो गया । बाल्या से बाल्मीकि हो गया। अद्भुत वाक्य सिद्धि प्राप्त की गयी।। 182 ।। "मरा, मरा" उल्टा बोलने से राम जीव्हा पर प्रकट हो गये। जन्म से पहले ही राम का अवतार चरित लिख दिया ।। 183 ।। रामनाम पतितपावन है, रामनाम लाभ गहन है, रामनाम अभेद भजन है, इस नाम में ब्रह्म सम्पन्न है।। 184 ।। रामनाम के जप से जन्म मरण का बंधन समाप्त हो जाता है, एक रामनाम का स्मरण करने से कोटिगुना लाभ है।। 185 ।। जहां राम नाम का गर्जन है, वहां फिर विष्णु का सुदर्शन है, कोटि विघ्नों का निर्दलन है, नाम ही दोनों का संरक्षण है।। 186 ।। साईं के उपदेश का स्थान नहीं था, न निश्चित समय की आवश्यकता। बैठते, उठते, चलते, गिरते सहज ही सकल उपदेश थे।। 187 ।। इस विषय की एक मधुर कथा है, श्रोता सादर श्रवण करें। साईं की सदयता प्रकट होगी, वैसी ही साईं की व्यापकता है।। 188 ।। एक बार एक श्रेष्ठ भक्त किसी की कहानी बताते हुए स्वयं कुतर्क में आकृष्ट होकर निंदा करने में लीन हो गया ।। 189 ।। गुण एक किनारे हो गये मुख से निंदा प्रवाह दोनों किनारों से होने लगे। मुख्य कथानक के चिथड़े हो गये। निंदा का उफान आ गया।। 190 ।। यदि कुछ कारण है कोई निंदनीय आचरण है, उसे उसके सामने समझाना चाहिए, उसे दया का पात्र जानकर ।। 191 ।। निंदा कभी न करो। यह तो प्रत्येक स्वयं जानता है किन्तु यह वृत्ति न दबायी जाये तो वह हृदय में नहीं समाती।। 192 ।। फिर यह वहां से कंठ में आती है कंठ से जीव्हा के पोर पर वहां से धीरे-धीरे ओठों पर जहां से यह सुख संतुष्टि के साथ प्रवाहित होती है।। 193 ।। त्रिभुवन में निंदक से बड़ा दूसरा उपकारी नहीं है जिसकी निंदा है उससे करो, कई प्रकार से कल्याण होता है।। 194 ।। कोई रीठे से मल धोता है कोई साबुन आदि साधन से, कोई शुद्ध निर्मल जल से । निंदक जीव्हा से धोते हैं।। 195 ।। परोपकार के लिए स्वयं की मानसिक अधोगति सहते हैं। उनकी महान उपकृति अवर्णनीय है। निंदक निश्चित अति वंद्य है।। 196 ।। प्रत्येक पल सावधान करते हैं, निंदा के बहाने दोष का ज्ञान कराते हैं, अनेक भावी अनर्थ को टलवाते हैं, इस उपकार की कितनी प्रशंसा मैं करूं ।। 197 ।। बहुत प्रकार से साधु संतो द्वारा जिनकी महानता का वर्णन किया गया है। उन निंदक वृंद के प्रति मैं साष्टांग प्रणाम करता हूं।। 198 ।। श्रोता को अरुचिकर लगने लगा, निंदक भी शौच के लिए निकल गये। मंडली मस्जिद की ओर चल दी बाबा का दर्शन करने के लिए।। 199।। बाबा पूर्ण अन्तर्ज्ञानी सही समय से भक्तों को शिक्षा देते। आगे किस प्रकार उस घटना को लाये उसे सुनो।। 200 ।। मंडली के साथ लेंडी बाग तक जाते हुए बाबा ने उस

भक्त (निंदक) के विषय में पूछा। मंडली ने कहा शौच के लिए नाले के पास गया है।। 201 ।। कार्यक्रम समाप्त करके लेंडी से बाबा की सवारी वापस आयी। नाले पर से वापस भक्त भी घर जाने के लिए मुड़ा ।। 202 ।। परस्पर भेंट होने पर उस अवसर पर जो घटा वह वृतांत सादर सुनने के लिए मैं हाथ जोड़कर श्रोताओं से विनती करता हूं।। 203 ।। वहीं पर पास में एक चारों ओर तारों से घिरा स्थान था, एक ग्रामसूकरी चटखारे मार कर विष्टा को मिष्ठान की भांति यथेष्ट खा रही थी। बाबा ने अपने हाथ से उसकी ओर दिखाया।। 204 ।। "देखो उसकी जिह्वा लोगों की विष्टा में कैसे मीठा स्वाद ले रही है। बंधु-स्वजन पर क्रोध से झपटते हुए अपनी वासना को यथेष्ट पूरी कर रही है ।। 205 ।। बहुत सुकृत एकत्र करने पर प्राप्त नर जन्म को जो इस प्रकार जाने देता है उस आत्मघ्न (जो स्वत: को क्षति पहुंचाये) को शिरडी भी क्या सुख-शांति दे" ।। 206 ।। बाबा इस प्रकार बोलते गये। भक्त अपने मन में आहत हो गया। प्रातः का विचार सब स्मरण हो आया। वे बोल चुभने वाली चोट कर गये थे।। 207 ।। इस प्रकार बाबा विभिन्न प्रकार से प्रसंग के अनुसार भक्तों को बोध कराते । जिनका सार हृदय में एकत्र किया जाये तो परमार्थ क्या दूर रहेगा? ।। 208 ।। “यदि हरि मेरा है मुझे खाट पर बैठे ही देगा।” कहावत की वास्तविकता सत्य है किन्तु यह अन्न वस्त्र की पूर्ति तक ही लागू है।। 209 ।। किन्तु जो परमार्थ पर लागू करेगा उसका परमार्थ सब ही लुट जायेगा । जैसा जो करेगा वैसा भरेगा बाबा के अमोल बोल थे।। 210 ।। और भी बाबा के बोल सुनने से वे स्वानंद के झूले देंगे। भाव भक्ति की उत्तम नमी हो तो जड़ें गहराई तक जायेंगी।। 211 ।। **"जल, स्थल, काष्ठ-स्थान, जन, वन, देश, विदेश तेजपूर्ण आकाश में मैं विद्यमान हूं। एक स्थान पर मैं नही हूं' ।। 212 ।। साढ़े तीन हाथ के शरीर की सीमा में ही जो मेरी व्याप्ति मानते हैं उनको निभ्रांत कराने के लिए ही मैं मूर्तिमंत हुआ हूं ।। 213 ।। निष्काम होकर मेरा अनन्य भजन जो रात दिन करते हैं, वे मेरे मुझपन को प्रत्यक्ष करते हैं, द्वैत भाव से रहित होकर ।। 214।। जब गुड़ मिठास विहीन हो जायेगा, सागर लहरों से अलग हो जायेगा, रोशनी आँखों को छोड़ देगी तब मेरे बिना भोला भक्त हो सकता है ।। 215 ।। जन्म मरण के चक्र को समाप्त करने का जिसके मन में निश्चय हो वह धर्मवत रहने का प्रयत्न करें सर्वदा स्वस्थ चित्त होकर' ।। 216 ।। वे तीखे बोल त्याग दें, किसी के अन्तर्मन को आहत न करें, सदा शुद्ध कर्म में निरत रहें, चित्त को स्वधर्म में स्थिर करके ।। 217 ।। मन व बुद्धि को मुझमें स्थिर करके, निरवधि समर्पित होकर मुझे स्मरण करें। देह से कहीं भी होवे, जब त्रिशुद्धि भय उसे नहीं है ।। 218 ।। जो मुझे अनन्य देखता है, वर्णन करता है, सुनता है मेरी कथा , वह धन्य है। जो मेरे अतिरिक्त भावना नहीं रखता, चित्त चैतन्य प्राप्त करेगा ।। 219।। मेरे नाम का ध्यान करो, मेरी शरण में आओ"** यह तो बोलते रहते सदैव । किन्तु मैं कौन हूं यह जानने के लिए श्रवण मनन की आशा करते ।। 220 ।। एक को भगवन्नाम स्मरण, एक को भगवत्लीला श्रवण, एक को भगवत्पादपूजन,

भिन्न-भिन्न नियम, भिन्न-भिन्न आध्यात्मिक अधिकार वाले जनों के लिए ।। 221 ।। किसी को आध्यात्म रामायण, किसी को ज्ञानेश्वरी का पाठ, किसी को हरिवरदा का पारायण, किसी को गुरुचरित्र का अवलोकन ।। 222 ।। किसी को पैरों के पास बैठाया, किसी को खडोबा मंदिर पर, किसी को विष्णुसहस्त्र नामावली के साथ, रुचि कम होते हुए भी बांधा ।। 223 ।। किसी को "राम-विजय" उपदेशित करते हैं, किसी को ध्यान व नाम का "माहात्म्य", किसी को छंदोग्य-उपनिषद व गीता रहस्य का रस विश्वास के साथ अनुभव करने हेतु ।। 224।। किसी को कहीं, किसी को कहीं दीक्षा के प्रकार की सीमा नहीं, किसी को प्रयत्क्ष किसी को दृष्टांत के अपूर्व अद्भुत ढंग से उपदेशित करते ।। 225 ।। भक्तों का सभी जातियों से जन सैलाब दौड़ दौड़कर दर्शन के लिए आता । जिनकी मद्यपान में प्रतीति होती उनके स्वप्न में जाते।। 226 ।। वक्षःस्थल पर बैठकर हाथ पांव से छाती दबाते । कान स्पर्श करके हमेशा के लिए शराब पीना छोड़ देने का व्रत लेता, तब जाते ।। 227 ।। शादी के घर में भीत के ऊपर ज्योतिषी जैसे हरि व हर का चित्र बनाते, वैसे ही किसी भक्त के लिए स्वप्न में "गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः । गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।" मंत्र लिखते ।। 228 ।। कोई चोरी से आसन प्रयोग कर रहा है हठयोग की साधना आदर से कर रहा है, बाबा अन्तर्ज्ञान से जान जाते और चुभने वाले शब्दों में बिना चूके हुए उसे बताते।। 229 ।। किसी अपरिचित का हाथ पकड़ कर संदेश भेजने के लिए देते, **"क्या रोटी खाकर संतुष्ट नहीं बैठ सकते। सबूरी धारे रहो ।। 230 ।।**" किसी को प्रत्यक्ष स्पष्ट रूप से बोलते, **"हम तो बहुत कट्टर जाति के हैं कह कर एक दो वक्त देखते हैं, फिर अन्तिम गति बहुत कठिन होती है ।। 231 ।। एक बार कहा, दो बार कहा , जिसने हमारे शब्दों को ध्यान नहीं दिया, वह फिर पेट से जुड़ा बच्चा क्यों न हो, दो टुकड़ों में चीड़ कर फेंक देते हैं ।। 232 ।।** वे महानुभाव महामति थे। मैं पामर क्या उनके चमत्कार का वर्णन करूं। किसी को ज्ञान प्राप्ति विरक्ति देते, किसी को सद्भाव भक्ति देते।। 233 ।। किसी को कुछ अच्छा व्यवहार आचरण के लिए अनुशासित करते । उदाहरण के लिए भक्त वृन्दों के लिए मैं एक उपाख्यान सुनाता हूं।। 234 ।। एक बार भरी दुपहरी में न जाने बाबा के मन में क्या आया, राधाकृष्णी (राधा -कृष्णा बाई) के घर के पास बिल्कुल अचानक सवारी आयी ।। 235 ।। उनके साथ कुछ लोग थे। बोले, "लाओ, लाओ सीढ़ी। उनमें एक तत्काल जाकर सीढ़ी लाकर वहां लगा दी" ।। 236 ।। बाबा ने उसे घर पर लगा दी । स्वयं छपरा (छत) पर चढ़ गये। कोई न जाने क्या है मन में। योजन क्या है? ।। 237 ।। वामन मोदकर के घर पर उस समय सीढ़ी लगी थी। सीढ़ी से छपरा पर चढ़ गये स्वयं श्री साईं शीघ्रता से।। 238 ।। वहां से राधाकृष्णी के छप्पर पर घर के पास ही घर था। वहां शीघ्रता से चढ़ गये । क्या चमत्कार है कोई समझ नहीं सका ।। 239 ।। उस समय राधा कृष्णा बाई को मात्र बहुत तेज शीत ज्वर आया हुआ था, वह अत्यन्त अस्थिर हो रही थी।। 240 ।। दोनों के दोनों बाजू पकड़ने की आवश्यकता

होती, तभी बाबा चल सकते थे । स्वयं इतने असक्त होते हुए यह सामर्थ्य कहां से आ गयी।। 241 ।। दूसरी ओर के छप्पर के किनारे तक वहीं से उतरने के लिए गये । वही सीढ़ी वहां भी लगा ली नीचे उतरकर आ गये ।। 242 ।। धरती पर पांव लगते ही दो रुपया सीढ़ी वाले को बाबा ने अति सतर्कता से अबिलंब, तत्काल वहीं दिया।। 243 ।। दो जगह सीढ़ी लगायी इतने ही श्रम की सेखी के लिए बाबा ने इतनी भरपाई कर दी। उसका चुकता कर दिया।। 244 ।। लोगों में सहज ही जिज्ञासा हुई। सीढ़ी वाले को इतना पैसा बाबा ने दिया किन्तु क्यों यह उनसे पूछने के लिए कहने लगे।। 245 ।। उनमें से एक ने हिम्मत की । बाबा प्रत्युत्तर देते हैं, **" किसी के भी श्रम का भार फोकट में थोड़ा भी नहीं लेना चाहिए ।। 246 ।। किसी से भी काम लो, किन्तु उसके श्रम को जानो । हृदय में एक नियम बना लो परिश्रम फोकट में न कराओ।। 247 ।।"** कौन जाने वास्तविक इशारा बाबा ने ऐसा क्यों किया? यह तो उन्हीं का वही जाने। संतो के मन गूढ़ होते हैं।। 248 ।। उनके मुख के उद्गार सुनते, वही हमारा सर्वस्व आधार होता | वैसा ही व्यवहार करने का संकल्प लेते हैं, तो व्यवहार शांतिपूर्वक चलता है।। 249 ।। अब अगला अध्याय मधुर है, इससे भी उत्तम । एक नौकरानी अबोध बच्ची ने श्रुति के एक पहेली को हल कर दिया।। 250 ।। गणूदास प्रासादिक हरिदास थे। मराठी भाषी लोगों का उपकार करने के लिए "ईशावास्य" उपनिषद का भाषान्तर करने का संकल्प किया ।। 251 ।। साईं की कृपा से ग्रन्थ लिखा, किन्तु कुछ गूढ अर्थ रह गया । उससे मन में संशय पड़ गया । बाबा ने कैसे दूर किया? ।। 252 ।। शिरडी में बैठे बाबा ने कहा, **"जब वापस पारले जाओगे। काका के घर की नौकरानी शंका समाधान करेगी।। 253 ।।** ईशवास्य रूप कमल के चक्कर लगाकर भनभनाने वाली भ्रमरी रूप वाग्देवी सरस्वती है, उस सुगंध का कुशलता पूर्वक सेवन करने के लिए श्रोता चतुराई से भोग करें ।। 254 ।। अतः अगले अध्याय में यह कथन होगा । कर्ता, कराने वाले, साईंदयाघन हैं। श्रोता इस उचित समय पर श्रवण करें। करने से कल्याण होगा।। 255 ।। पंत हेमाड साईं की शरण में है, वैसे ही जीवों व भगवान में लीन है। श्रोता अवधान दान दें। साईं निवेदन मधुर है ।। 256 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित हेमाड पंत विरचित "श्री साईं समर्थ सच्चरित" का "मदनुग्रह" नामक उन्नीसवां अध्याय संपूर्ण।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु।।

।। बीसवां अध्याय (ईशावस्य भावार्थ बोधन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।।श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईनाथ को नमन ।।

मानसरोवर रूपी सद्गुरु को ॐ नमन है, जो प्रसाद वाक्य के मोती पैदा करते हैं। अनन्य भक्त-हंसों का तुम्हारे चरणों के पास आश्रय है।। 1 ।। आप सदाश्रय महा उदार हैं। मोती रूपी प्रसाद का चारा देते हैं। निज विश्रांति का आश्रय देते हैं। थकान भरी निरर्थक यात्रा से छुटकारा दिलाते हैं।। 2 ।। साईं क्या, सिद्धाश्रम हैं। दर्शन से संसार की थकान नष्ट हो जाती है। आसपास का भवभ्रम निरन्तर साथ रहने से भाग जाता है।। 3 ।। साईं का मूल निराकार है भक्त के काज के लिए साकार है। नटी रूपी माया को स्वीकार करके नट जैसा खेल वास्तव में खेला है।। 4 ।। ऐसे साईं को ध्यान में लाते हैं, क्षण भर के लिए शिरडी स्थान को जाते हैं। दोपहर की आरती के बाद को ध्यान लगाकर देखते हैं।। 5 ।। मध्याह्न आरती के पश्चात मस्जिद के किनारे आकर महाराज अतिकृपा दृष्टि से भक्तों को ऊदी बांटते हैं।। 6 ।। प्रेमल भक्त भी तुरन्त समचरणों को पकड़कर चिपक जाते, खड़े होकर दृष्टि से मुख निहारते, ऊदी की वृष्टि का आनन्द लेते।। 7 ।। बाबा भी मुट्ठी भरभर कर भक्तों के कर संपुट (हथेली) में डालते। अंगूठे से उनके ललाट पर लगाते। इस अनुभव के बाद अनियन्त्रणीय प्रेम होता ।। 8 ।। **"जा भाऊ जा, भोजन के लिए जा, अन्ना जा, तू स्वादिष्ट ग्रास (कौर) खा | जा, सभी जा, अपने स्थान को।"** प्रत्येक से बोलते।। 9 ।। अब यदि वह देखने को नहीं मिलेगा, किन्तु वे सब बीते हुए उत्सव के अवसर, शिरडी के वे वे स्थान, वे वे समय दृढ़ध्यान लगाकर देखे जा सकते हैं।। 10 ।। अतः ऐसे ध्यान करते हैं- अंगूठे से मुख तक अवलोकन करें। प्रेम से दण्डवत करें। कथानुसंधान चालू करते हैं।। 11 ।। गत अध्याय के अंत में श्रोताओं से कहे होते हैं कि बाबा ने नौकरानी के हाथ श्रुति का अर्थ स्पष्ट करवाया ।। 12 ।। "ईशावास्य भावार्थ बोधिनी" गणुदास ने आरंभ किया था। आशंका उपजने पर सद्गुरु के चरणों में शिरडी उसे ले आए ।। 13 ।। बाबा ने उनसे यह वचन कहा "तुम्हारी इस शंका का निवारण वापस जाने पर उस समय काका के घर की नौकरानी करेगी" ।। 14 ।। यही (शब्द) वर्तमान कथानुसंधान है। अब यहां हम चालू करते हैं श्रोता दत्तावधान हो जायें। इसे स्पष्ट श्रवण होगा ।। 15 ।। जो संस्कृत भाषा में अनभिज्ञ हैं उनके लिए, "ईशावास्य उपनिषद" का अर्थ श्लोक रूप में एक-एक शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए संकलित करने के लिए ।। 16 ।। ऐसी आस्था

मन में धारण करके "ईशावास्य भावार्थ बोधिनी", प्राकृत भाषा में सुगम साधना के लिए, गणुदास ने आरंभ की।। 17 ।। इस उपनिषद में प्रचुर गूढ़ अर्थ है। एक-एक शब्द का भाषान्तर किया। बिना उसमें छुपे रहस्य के बोध के मन में आनन्द की अनुभूति नहीं हो रही थी।। 18 ।। चारों वेदों का सार, वही उपनिषदों का भण्डार है। हरिगुरुकृपा प्राप्त हुए बिना उसे समझना अति दुस्तर है।। 19 ।। कोई कहता है " सज्ञान हूं अपने मत से यत्न करुंगा उपनिषदों का आंकलन करुंगा। यथार्थ प्रतिपादन करूंगा" ।। 20 ।। तब यह कल्प के अन्त तक भी नहीं होता । गुरुकृपा जब तक प्राप्त नहीं हो जाती गुप्त प्रमेय हाथ नहीं लगता। पद पद पर मार्ग में बाधायें हैं।। 21 ।। वे जो गुरुपद से जुड़े हैं उन्हें अणुमात्र भी कठिनाई नहीं है, उनकी दृष्टि के सामने गूढार्थ अपने आप स्पष्ट होता है।। 22 ।। ये शास्त्र आत्म ज्ञान के लिए हैं। जन्ममरण का उन्मूलन करने वाले हैं शास्त्र । जो निरभिमान व निःसंग मात्र है, वही उसकी विवेचना करने का पात्र है।। 23 ।। ऐसे ही लोगों से, अपनी सुरक्षा के लिए, संपृक्त रहने (चिपके रहने) से क्षण भर में अर्थ बोधकता उपजती है। बुद्धि प्रतिबद्धकता समाप्त होती है गूढ़ अर्थ की स्पष्टता होती है।। 24 ।। ईशावास्य के प्राकृत में लाने में दासगणू की यह अवस्था थी। किन्तु साईनाथ के कृपा करने से उसकी दुर्गमता नष्ट हो गयी।। 25 ।। संस्कृत भाषा का अल्पज्ञान था तब भी आचार्य विद्यारण्य साईबाबा के चरणों की वंदना करके ओवी लेखन करना स्वीकार किया।। 26 ।। दासगणू की वाणी दुग्ध-धारा, उसमें साईं का प्रसाद शक्कर । उस माधुर्यपरंपरा को एक क्षण आदर से सुनें ।। 27 ।। इस प्रकार इस "भावार्थ बोधिनी" का दिग्दर्शन हुआ। इसे हृदयगत करने के लिए मूल का अवलोकन करें। अपनी कथा से संबन्ध के कारण स्मरण हो आया।। 28 ।। देखो किस प्रकार बिना बोले महाराज ने, अपने भक्त द्वारा ग्रंथ का अवलोकन करने पर, जब दुर्बोध वचन आये, समाधान कर दिया।। 29।। यही इस कथा का हेतु है। श्रोताओं को इसका तात्पर्य विदित हो इतना ही मेरा मनोगत है। दत्तचित्त होकर सुनें ।। 30 ।। ओवीबद्ध टीका किया। विद्वानों ने मान्यता दी । गणुदास की इच्छा पूरी हुई, किन्तु एक आशंका रह गयी।। 31 ।। पंडितों के समक्ष रखा, उहापोह हुआ। किन्तु किसी से निश्चित रूप से शंका का समाधान नहीं हो पाया ।। 32 ।। कुछ कारण से दासगणु को शिरडी जाना पड़ा। आशंका का निवारण कितनी सहजता से हो गया ।। 33 ।। साईं का दर्शन करने गये । श्री के चरणों में मस्तक रखा , साष्टांग वंदन किया, सुख संपन्न हो गये।। 34 ।। संत का कृपापूर्वक अवलोकन, संतमुख से मधुर वचन, संत का वह मुस्कराता मुख, भक्तगण का कृतकल्याण ।। 35 ।। केवल संतों का दर्शन सभी दोषों का क्षालन कर देता है। जो उनकी नित्य निकटता में है, उनके पुण्य का क्या वर्णन करूं।। 36 ।। **"क्यों गणू, कहां से आगमन इस समय?"** "बाबा ने पूछा," **कुशल है ना, चित्त सर्वदा प्रसन्न व संतुष्ट रहता है?"** ।। 37 ।। गणुदास ने प्रत्युत्तर दिया, "**आपकी कृपा छतरी होते हुए किसलिए मैं खिन्न मन होऊँगा । मैं आनन्द से भरा हूं ।। 38 ।। आप भी तो सब जानते**

हैं, लोकोपचार के लिए प्रश्न करते हैं। मैं भी जानता हूं, मन में, कुशलवृत्त क्यों पूछ रहे हैं ।। 39 ।। स्वयं मुझसे आरंभ करवाते हैं आगे रंगरूप आने लगता है तो मध्य में ही ऐसी समस्या खड़ी कर देंगे जो किसी से भी चाहे कितना ही समाधान कराना चाहे, समाधान होता नहीं ।। 40 ।। इस प्रकार परस्पर भाषण चल रहा था। गणुदास पांव दबा रहे थे। ईशावास्य-भावार्थबोधिनी के संबंध में प्रश्न पूछा ।। 41 ।। ईशावास्य-भावार्थबोधिनी लिखने जाता हूं तो लेखनी लड़खड़ाती है, मन में शंका कुशंका रहती है। बाबा उसे स्पष्ट करके बताइये ।। 42 ।। साद्यंत जो-जो घटना घटित हुई थी, बाबा के चरणों में निवेदन किया । आशंका जिसका निवारण नहीं हो सका था बाबा के समक्ष प्रस्तुत किया।। 43 ।। गणुदास ने साईंनाथ से विनती की। मेरा ग्रंथ परिश्रम व्यर्थ है। ईशावास्य की यह कथा आप सर्वथा जानते हैं।। 44 ।। आशंका दूर हुए बिना यह ग्रंथ समझ में नहीं आयेगा । महाराज ने आशीर्वचन दिया- **"तू प्रसन्न मन होओ ।। 45 ।। अरे ! इसमें क्या कठिन है? अपने स्थान पर वापस जाने पर काका की वह नौकरानी उस शंका का निवारण करेगी" ।। 46 ।।** काका भाऊ साहेब दीक्षित, बाबा के एक प्रेमल भक्त । काया, वचन, मन से सतत सर्वदा गुरुसेवा निरत ।। 47 ।। प्रख्यात मुंबापुरी नगरी, वहां से अल्प दूरी पर पारले नामक भीतरी ग्राम है। हरिभाऊ यहीं रहते हैं।। 48 ।। असली नाम उनका "हरी" था । माँ-पिता ने घर पर दिया था । यद्यपि लोग कहते भाऊसाहेब । किन्तु बाबा का (दिया हुआ नाम) भिन्न था।। 49।। महाजनी को "बड़े काका", निमोणकर को "बूढ़े काका" "बंब्या काका" भी वे कहते ।। 50 ।। माँ-बाप एक देते हैं, राशि का और होता है, उपनाम से आवाज देकर बुलाते है, इस प्रकार अनेक रीति हैं।। 51 ।। महाराज निराला नाम रखते हैं, आगे वही समय-समय पर चल जाता | उसी को आगे गुण व सम्मान का प्रतीक जानकर भक्त भी स्वीकार कर लेते ।। 52 ।। कभी भिक्षु, कभी काका | बाबा ने यही सिक्का लगाया था। इसी नाम से शिरडी के लोगों में काका प्रसिद्ध हुए।। 53 ।। दासगणु को आश्चर्य हो रहा था, सभी के मन में आश्चर्य था । काका की नौकरानी में ऐसा क्या है? कैसे व्याख्या करेगी।। 54 ।। नौकरानी तो नौकरानी । उसकी शिक्षा क्या होगी? उसमें क्या ऐसा विलक्षण है? यह सब विलक्षण था।। 55 ।। कहां श्रुति की अर्थव्युत्पत्ति, कहां नौकरानी की मति । महाराज भी परिहास करते हैं, लोगों ने ऐसा कहा ।। 56 ।। महाराज ने केवल विनोद किया है। सभी के चित्त में ऐसा ही था। किन्तु बाबा की विनोदोक्ति, गणुदास के लिए मनोरंजन वास्तविक था।। 57 ।। साईं का वह बोल सुनकर प्रथमदृष्टया लोगों को लगा कि साईं सानंद बोल गये। दासगणु के लिए वे सत्य थे।। 58 ।। साईं सानंद बोले, किन्तु सदा सर्वदा की भांति बोल के बाद की लीला देखने के लिए जन लोक आतुर था ।। 59 ।। विनोद वाणी हो अथवा न हो कभी भी बिना कारण नहीं होती। बाबा का एक-एक अक्षर अर्थ की खान होते।। 60 ।। बाबा जो-जो बात बोलते, केवल बोल न होते, ब्रह्मलिखित होते । एक भी अक्षर व्यर्थ नहीं होता उचित समय पर कार्यार्थ सिद्ध होता

।। 61 ।। यही दृढ़ भावना दासगणु की थी। दूसरों के लिए कैसी भी वह हो । **“जिसकी जैसी जहां निष्ठा, उसका फल वैसा ही"** ।। 62 ।। जैसी भावना वैसा फल । जैसा विश्वास वैसा फल। अंतःकरण जैसा प्रेमल वैसा ही निर्मल बोध ।। 63 ।। ज्ञानियों में शिरोमणि उनकी वाणी मिथ्या नहीं हो सकती। अपने भक्तों की मांग पूरी करने के लिए चरणों में धागा बांध रखा था।। 64 ।। गुरुवचन कभी अन्यथा नहीं होता । मन लगाकर यह कथा सुनो, सकल भवव्यथा हर ली जायेगी, साधनापथ पर लग जायेंगे।। 65 ।। गणुदास पारले ग्राम वापस आये। काका साहेब दीक्षित के धाम। काका की नौकरानी कैसे मेरे लिए उपयोगी सिद्ध होती है यह देखने की उत्कंठा थी।। 66 ।। दूसरे दिवस के प्रथम प्रहर गणुदास बिस्तर पर ही थे, सुबह की झपकी (नींद) का अंदर आनंद ले रहे थे, तब एक आश्चर्य घटित हुआ।। 67 ।। कोई एक कुनबी लड़की मधुर स्वर में गा रही थी कि उस गीत का सुंदर आकर्षण दासगणु के हृदय को बांध लिया।। 68 ।। दीर्घ आलापयुक्त वह गान, उसका मंजुल पद बंधन सुनकर मन तल्लीन हो गया, जैसे उन्होंने ध्यान देकर सुना ।। 69 ।। चौंक कर जाग गये, गीतार्थ का बोध कराने वाले की ओर ध्यान चला गया। सावधान होकर सुनते रहे। हृदय प्रसन्न हो गया।। 70 ।। बोले, "यह किसकी बच्ची है, सुस्वर व गंभीर गाती है।“ किन्तु ईशावास्य की उस बड़ी समस्या का निराकरण इसने कर दिया था।। 71 ।। अतः यह वही नौकरानी है। जरा देखू.... है कौन जिसकी असंस्कृत वाणी से श्रुति के अर्थ को मैं समझा हूँ ।। 72।। बाहर जाकर जो देखा वास्तव में कुनबी की वह लड़की थी, जो काका की मोरी में बर्तन (बासन) घिस रही थी।। 73 ।। शोध करने पर आश्चर्य हुआ | वहां दीक्षित के घर में एक लड़का “नाम्या” उनकी चाकरी में था। यह लड़की उसकी बहन थी।। 74 ।। यही है वह काका की नौकरानी । इस गीत के माध्यम से शंका निवारण किया । भैंसे के मुख से वेद गायन । संत क्या नहीं कर सकते।। 75 ।। ऐसा था उस लड़की का गायन । दासगणु का समाधान हो गया। बाबा के परिहास (विनोद) का महत्व सभी को ज्ञात हो गया ।। 76 ।। कोई कहता गणुदास देवपूजन पर बैठे हुए थे, वहां काका के देवधर में, तभी यह गीत सुना।। 77 ।। अतः वह जैसे हो तैसे ही तात्पर्य एक ही है। महाराज अपने भक्तों को कैसे सिखाते हैं। देखो अनेक बहाने से।। 78 ।। **"अपने स्थान पर बैठे मुझसे पूछो। अनावश्यक क्यों हर स्थान पर भटकना । मैं तुम्हारी इच्छा पूरी करुंगा। इसका भरोसा रखो ।। 79 ।। मैं सभी स्थानों में भरा हआ हूँ, इस प्रकार। कोई स्थान मेरे बिना रिक्त नहीं है। कहीं भी कैसे भी भक्तों की भक्ति के लिए प्रकट होता हूँ " ।। 80 ।।** इस प्रकार वह आठ बरस की लड़की एक फटे । कबल से अपने को लपेटे हुए है किन्तु नारंगी साडी की महिमा वह सस्वर गीत में गा रही थी।। 81 ।। **"क्या । उस साड़ी की सुनहली, रुपहली जरी, क्या उस साड़ी का संदर किनारा, क्या आनददायक उसका पदर (आचल)।“** उसी में वह चूर गाती रही।। 82 ।। खाने के लिए भरपेट नहीं मिलता था, न अगूठे तक लपेटने के लिये कंबल था, पर किसकी सुंदर नारंगी साड़ी ।

प्रसन्नता भरी वह दिख रही है।। 83 ।। उसकी दैन्य स्थिति देखकर और मन की हंसमुख वृत्ति । गणुदास में दया उत्पन्न हुई। मोरेश्वर से क्या कहा? ।। 84 ।। **"इसके नंगे अंग देखो कृपया इसे एकाद साड़ी दे दो। ईश्वर प्रसन्न होंगे। तुम्हें पुण्य भी मिलेगा"** ।। 85 ।। मोरेश्वर पहले से ही कृपामूर्ति थे। दासगणु की विनती से और हो गये। सुंदर साड़ी खरीद कर आनंद से लड़की को अर्पित किया ।। 86 ।। नित्य जो सूखे अन्न खाते हों उन्हें पंच पकवान मिल जावे उतनी ही वह लड़की सुप्रसन्न हो गयी, उस साड़ी को देखकर ।। 87 ।। दूसरे दिन उसने साड़ी पहनी । चक्कर लगाकर फिरती रही वह फुगड़ी खेलते हुए (नाचते हुए) अन्य लड़कियों से अच्छी लग रही थी, साड़ी से बहुत प्रसन्न थी।। 88 ।। उसके बाद दूसरे दिवस साड़ी अपने विशेष कपड़ों की गठरी में रखकर पूर्व की भांति वही पुराना फटा कंबल लपेट लिया किन्तु मायूस नहीं दिख रही थी।। 89 ।। पहना नहीं था अलग रख दिया था। तथापि उसका पूर्व दैन्य, भावना में भिन्नत्व के कारण, गणुदास की कल्पना में समाप्त हो गया था ।। 90 ।। नयी साड़ी घर पर रख दी थी । यद्यपि फटा कंबल पहनकर आयी थी फिर भी खिन्न मन नहीं दिखती थी, न ही उस साड़ी की कमी ।। 91 ।। **असमर्थता में फटा कंबल पहनना, समर्थता में भी वैसा ही करना, इसका नाम है संपन्नता में दैन्य को धारण करना । सुख दुःख भावना का गुण है।। 92** ।। यही गणुदास की समस्या थी। इस प्रकार जब निराकरण हो गया ईशावास्य की शंका का समाधान हो गया। वहीं अर्थबोध हो गया।। 93 ।। ईश्वर से जहां सारा ब्रह्माण्ड आच्छादित है अवधा ब्रह्माण्ड में प्रसार है उसका वहां उसके बिना खाली स्थान का कौन मन में विचार कर सकता है।। 94।। वह पूर्ण है। यह पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण निकलता है। पूर्ण से पूर्ण निकालो, अवशेष पूर्ण रहेगा ।। 95 ।। (**ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।)** लड़की के दैन्य में ईश्वरीय अंश है फटे कंबल व साड़ी में भी उसी का अंश । दाता देय दान में उसी का अंश एक ईश ही भरा है।। 96 ।। "मैं, मेरा" इसे दूर फेंक दो। सदा निरभिमानत्व में व्यवहार करो। त्यागपूर्वक भोग को भोगना चाहिए। किसी की अभिलाषा न करो।। 97 ।। ऐसी बाबा की अमोघ वाणी अनेकों को अनुभव हुई। आप्राणान्त शिरडी नहीं छोड़ा, लोगों के स्वप्न में प्रकट होते ।। 98 ।। इच्छामात्र से प्रकट होते, किसी को मच्छिंदरगढ़, किसी को किसी भी शहर में जैसे कोल्हापुर, सोलापुर, रामेश्वर ।। 99।। किसी को अपने बाह्यवेश, में किसी को जागृति में किसी को स्वप्न विशेष में दर्शन रातदिन देते भक्तों की इच्छा पूरी करते।। 100 ।। ऐसे अनुभव एक दो नहीं हैं। वर्णन करने के लिए कितना कहूं । यद्यपि शिरडी में रहने का स्थान, कहीं के लिए भी प्रस्थान कर देते बिना किसी के ज्ञान के ।। 101 ।। इसे देखिये किसकी कौन लड़की । यह कोई गरीब नौकरानी । नारंगी साड़ी के विषय में उसका वह गायन मुख से सहज ही निकला ।। 102 ।। शंका बोलकर बाबा से पूछा । इस नौकरानी ने उसका निराकरण किया। वह भी काका के इस स्थान पर। यह रचना माया की नहीं है क्या? ।। 103 ।। पहले वहां

वह नौकरानी होगी यह कैसे बाबा का ज्ञान हुआ। वह भी भविष्यकाल में श्रुति के अर्थ का बोध कराने के लिए गायन कर रही होगी।। 104।। पर ऐसा हुआ, विशेष हुआ । गणुदास को आश्चर्य हुआ। आशंका दूर हो गयी ईशावास्य का अर्थ स्पष्ट हो गया।। 105 ।। श्रोताओं के मन में शंका आयेगी यह इतना प्रयास क्यों स्वयं अपने मुख से बाबा ने वहीं आशंका दूर क्यों नहीं की।। 106 ।। यह क्या उसी स्थान पर नहीं कर सकते थे। परन्तु उस घटना का महत्व न होता । ईश उस लड़की में भी आच्छादित हैं। बाबा ने यही प्रकट किया।। 107 ।। आत्म का वास्तविक निरूपण ही सभी उपनिषदों का अन्तिम लक्ष्य है यही मोक्षधर्म का भी निष्कर्म है और यही गीतार्थ प्रवचन है।। 108 ।। प्राणी भिन्न है, किन्तु आत्मा अभिन्न है। आत्मा कर्तव्य भोक्तृत्व विहीन है, वह न अशुद्ध है, न पाप पुण्य के अधीन है। कर्म का आचरण उसका नहीं है।। 109 ।। मैं जाति का उच्च ब्राह्मण हूं, अन्य नीच वर्ण के हैं, ऐसे भेदभाव ज्ञान जब तक रहता है, कर्माचरण आवश्यक है।। 110 ।। मैं अशरीर सर्वत्र एक मेरे अतिरिक्त कोई और नहीं, मैं ही सकल में व्याप्त हूं। यह स्वरूपोन्मुख ज्ञान है।। 111 ।। पूर्णब्रह्मस्वरूप से च्युत ऐसा यह जीवात्मा है। पूर्ववत कभी-कभी होता है। अपने स्वरूप को प्राप्त करना ही निश्चित ध्येय होना चाहिए।। 112 ।। श्रुति स्मृति और वेदान्त इन सबका यही सिद्धांत है। यही निश्चित अन्तिम साध्य है। जो च्युत है, उसे अच्युत पद प्राप्ति हो।। 113 ।। "**सभी भूतों में समानरूप से",** जब तक यह स्थिति विशेष अप्राप्त है, तब तक भूतात्मा हृषिकेश ज्ञान का प्रकाश नहीं कर सकते ।। 114 ।। निहित कर्म से चित्त शुद्ध होने पर, अभेद बोध होगा। शोक, मोह आदि संसृति के विरुद्ध सिद्ध ज्ञान प्रकट होगा।। 115 ।। चराचर के साथ अखिल त्रैलोक्य को आच्छादित किये हैं जो ईश, परमेश्वर, जो निक्रिय निष्कलंक एवं सर्वोच्च है , वह अशरीर अदात्मक है।। 116 ।। यह नाम रूपात्मक विश्व अन्दर बाहर ईश से आच्छादित है। वह मैं ही मैं अशेष भरा हुआ हूं, निर्विशेष रूप से।। 117 ।। अतः वस्तुतः जो निराकार है, माया गुण के कारण साकार भासित होता है। इच्छा करने वालों के लिए यह संसार है, जो निष्काम है उनके लिए असार है।। 118 ।। निःशंक निश्चय कर लें कि यह यत्किंचित भूत भौतिक चेतनाचेतनात्मक जगत में ईश्वर ही एक है, दूसरा कोई नहीं ।। 119 ।। जगबुद्धि का यह विवेक यदि मन को स्वीकार न हो, तो कम से कम धन सोना । आदि की अभिलाषा न करें।। 120 ।। यह भी यदि नहीं होता है तो जाने कि आप कर्म के अधिकारी हैं । आमरणान्त सैकड़ों वर्ष तक कर्म ही करते रहिए ।। 121 ।। वह भी जो अपने वर्णाश्रम के लिए उचित हो । यथोक्त अनुष्ठान नित्य विहित अग्निहोत्र आदि सहित, तब चित्त अकलंकित होता है।। 122 ।। यह एक मार्ग है चित्त शुद्धि का । दूसरा है सर्वसंग परित्याग का । यह ज्ञानयोग भी नहीं पकड़ में आता है, तो कर्मयोग ही केवल बचता है।। 123 ।। अधिकारविद् (सद्गुरु) सभी को यह ब्रह्म विद्या, यह उपनिषद, नहीं देते; जब तक अभेद वृत्ति नहीं होती है, उपनिषद बोध भी शाब्दिक ही होता है।। 124 ।। फिर भी, वह

भी प्राप्त करना आवश्यक है। जिज्ञासु पहले वही मांगते हैं। इसीलिए बाबा ने जाने को कहा | बोले नौकरानी बतायेगी।। 125 ।। बाबा स्वयं यह बोध देते तो यह आगे का कार्य न घटित होता । "एक ही है द्वितीय नहीं" यह ज्ञान बाबा न करा पाते।। 126 ।। मेरे बिना और कौन है वह काका की नौकरानी, ईशावास्य जानने के लिए मैं ही वह हूं यह चिह्न दिया ।। 127 ।। थोड़ा परमेश्वर का अनुग्रह विशेष आचार्य का अनुग्रह न हो तो आत्मज्ञान प्रवेश नहीं करता। सिद्धोपदेश आवश्यक है।।128 ।। आत्मप्रतिपादक जो जो शास्त्र हैं, उन्हीं को मात्र श्रवण करें, जिन में प्रतिपादित है कि मैं ही सर्वत्र हं, मेरे बिना अन्यत्र कुछ नहीं ।। 129 ।। आत्मतत्व का निरूपण होने पर वही, मैं, आत्मा और कोई नहीं । यह जिसका अभेद संबंध है, उसकी ही आत्मा प्रसन्न होती है।। 130।। इस प्रकार आत्मनिरूपण हो तो, ऐसे ही आत्मनुसंधान रखते, ऐसे ही निश्चल आत्मा धारण करने से परमात्मा आता है।। 131 ।। अगले अध्याय के कथा के संबंध में, विनायक ठाकुर आदि की कथा कथन । श्रोता करें सादर श्रवण । परमार्थ की ओर आकर्षित होंगे।। 132 ।। यह कथा भी ऐसी ही मधुर है, सुनने से श्रोताओं की इच्छायें पूरी होंगी। महापुरुष के दर्शन की चाह भी भक्तों की पूरी होगी।। 133 ।। जैसे सूर्य के उगते ही अंधकार समाप्त हो जाता है वैसे ही इस कथा के पीयूषपान से माया खत्म होगी।। 134 ।। साईं की लीला अतर्क्य है, उनके बिना कौन करेगा कथन । मैं तो एक नीमित्त हूं। वे ही हैं जो बोलवायेंगे ।। 135 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित । भक्त हेमाडपंत विरचित श्री साईंसमर्थसच्चरित का "ईशावास्य भावार्थ बोधन" नामक बीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

।। श्री सद्गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। ।। शुभं भवतु ।।

।। इक्कीसवां अध्याय (अनुग्रह करण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन।।

गत अध्याय में कथा से संबंध, ठाकुर आदि का महापुरुष दर्शन कैसे हुआ , वह श्रवण करने के लिए एकाग्र मन करिये ।। 1 ।। उस वक्ता के क्या बोल , जो कान में पड़ते ही श्रोता झूमने न लगे । अंगों में रोमांच न हो जाये तो वे बोल व्यर्थ हो गये ।। 2 ।। जिसे सुनने से श्रोता रिझें न , कंठ वाष्प गद्गद् न हो जाये , नयन प्रेमानंद के आँसू न बहाये , वे कथन व्यर्थ गये।। 3 ।। बाबा की वाणी मनोहारिणी थी। उपदेश की अलौकिक शैली थी। जिसकी करनी प्रति पद पर अभिनव थी, उसके चरणों में मस्तक रखता हूं।। 4 ।। भाग्य के उदय न होने पर साधु संतों से मुलाकात नहीं होती। वे निकट होते हैं, तो भी महापापियों को दिखते नहीं हैं।। 5 ।। इस प्रमेय को सिद्ध करने के लिए देश विदेश जाने की आवश्यकता नहीं है, वह मैं ,अपने अनुभव श्रोताओं ,के लिए कहता हूं।। 6 ।। बान्द्रा शहर में पीर मौलाना नाम से प्रसिद्ध एक सिद्ध होते थे। उनके शुद्ध दर्शन के लिए हिन्दू, पारसी व और धर्मों के प्रबुद्ध आते ।। 7 ।। मैं उस शहर का न्यायाधीश था । मस्जिद का एक जमादार था , उसका नाम था इनूस । मुझे उनका दर्शन कराने के लिए रातदिन उसने प्रयास किया ।। 8 ।। हजारों लोग वहां आते। किसलिए मैं भी वहां जाऊँ ? सम्मान देने के लिए, अपनी प्रतिष्ठा पर आँच लगने दें।। 9।। ऐसा कुछ भाव मन में आता । दर्शन के लिए कभी भी नहीं गया। अपने अपनी छाया से डरते , दुर्दैव आड़े आ गया।। 10 ।। ऐसे कितने ही वर्ष बीत गये। बाद में वहां से बदली हो गयी। बाद में जब समय आया, शिरडी से अखंड जुड़ गया।। 11 ।। तात्पर्य यह कि संत समागम में अभागों का बलपूर्वक प्रवेश नहीं होता। यह ईश्वर की कृपा से ही सुगम होता है अन्यथा यह योग दुर्लभ है।। 12 ।। इस विषय की एक मधुर कथा है। अब श्रोता सादर सुनें। इन संतों की अनादि संस्था है । कैसी उनकी गुप्त व्यवस्था है।। 13 ।। यथाकाल- वर्तमान में, जिनको जो जो स्थान प्रिय है कार्यकारण से (अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए) अवतार लेते हैं। किन्तु वे परस्पर अभिन्न हैं।। 14 ।। देश काल व विषयवस्तु भिन्न हो सकते हैं, पर एक के मन के अन्दर की बात दूसरा संत सम्पूर्ण जानता है। अन्दर से सभी की एकता है।। 15 ।। जैसे सार्वभौम राजा के ताल्लुकों के प्रमुख केन्द्र स्थान-स्थान पर होते हैं। वहां-वहां अधिकारी नियुक्त करके (वह) समृद्धि प्रदान करता है।। 16 ।। वैसे ही यह स्वानंद सम्राट जगह-जगह प्रकट होकर अपने राज्य की गाड़ी चलाते हैं। अप्रकट सूत्र से हांकते हैं।। 17 ।। एक बार एक अंग्रेजी भाषा का ज्ञान रखने वाला बी0 ए0

उपादान से युक्त व्यक्ति धीरे-धीरे मार्ग पर बढ़ते हुए प्रसिद्ध अधिकारी हो गया ।।18 ।। बाद में मामलत (मामलतदार) मिली। बढ़ते-बढ़ते प्रांत मिला (प्रांताधिकारी)। उसका साईंबाबा से समागम हुआ, सौभाग्य प्राप्त होने पर ।। 19 ।। देखने में यह मामलत अच्छी होती है। पहाड़ी जैसी दूर से आकर्षक, निकट जाने पर काजरी की झाड़ी से लिपटी हुई दिखती है। किन्तु मान बड़ा है।। 20 ।। पहले के अच्छे दिन बीत गये, जब यह अधिकारी बनने की चाह होती थी। प्रजा भी अधिकारी को मान देती थी। परस्पर आनन्द रहता ।। 21 ।। अब का हाल न पूछो। सुख से नौकरी का वह समय गया । अब अत्यधिक उत्तरदायित्व का समय है। पैसे की बरसात के कारण अकाल है।। 22 ।। पहले मामलती का मान था। वैसे ही जैसे पूर्व प्रांताधिकारी का होता, अब वह वैभव नहीं दिखता, नौकरी परिश्रम से करने पर भी।। 23 ।। इस प्रकार अधिकार सम्पादन में, बिना अत्यधिक पैसा खर्च किये, थका देने वाला सतत अध्ययन न करने पर अन्य कौन कर सकता था।। 24 ।। पहले बी0 ए0 होना चाहिए फिर खजांची बनिये । महीने की पगार तीस रुपये । इस मार्ग की ऐसी गति है।। 25 ।। उचित समय पर घाट तक जाना होता, जमीन नापने का काम सीखने के लिए, जांच पड़ताल करने वालों (सर्वेक्षकों) के मध्य रहना होता, परीक्षा पास करनी होती ।। 26 ।। फिर जब कोई एक व्यक्ति स्वयं वैकुंठधाम जायेगा अपनी जगह खाली करेगा, यह उसके काम आयेगी।। 27 ।। अतः अब यह उबा देने वाले विवरण (वृत्तातं) काफी हो गये कोई क्यों प्रलाप करें। यह कथा सुनो कैसे ऐसा एक व्यक्ति साईं से मिला ।। 28 ।। बेलगांव के निकट बडगांव नामक ग्राम है। सर्वेक्षकों का एक दल आया। वहां डेरा डाल दिया।। 29 ।। गांव में एक सत्पुरुष थे। उनके दर्शन के लिए (वे बी0 ए0 उपादान से युक्त व्यक्ति) गये । चरणों में शीश रखा प्रसाद आशीष प्राप्त किया।। 30 ।। उस सत्पुरुष के हाथ में निश्चलदास कृत "विचार सागर" नामक ग्रन्थ था जिसे वह बाँच रहे थे।। 31 ।। बाद में कुछ देर बीतने पर वापस जाने के लिए खड़े हुए। उस साधु ने उस गृहस्थ से जो उल्हास से कहा वह सुनो।। 32 ।। "**अच्छा अब आप जायें । इस ग्रन्थ का अवलोकन करें। इससे आपका मनोरथ पूरा होगा इसे ध्यान रखो ।। 33 ।। बाद में अपने कार्य के लिए उत्तर दिशा में जाते-जाते तुम्हें । महाभाग्यवश मार्ग के अन्त में महापुरुष के दर्शन होंगे ।। 34 ।। आगे का मार्ग दिखायेगा। मन को निश्चलता प्रदान करेगा। फिर उपदेश देकर अपना बोध तुम्हारे चित्त पर करायेगा ।। 35 ।।“** फिर उनका कार्य वहां सरल हो गया। वहां से जुन्नार को स्थानांतरण हो गया । नाणे घाट चढ़ना हुआ, उस संकट को झेलना था ।। 36 ।। वहां मार्ग अति विकट है। भैंसे के ऊपर बैठकर यह घाट चढ़ा जाता है। भैंसा ही उस हेतु सवारी है। चढ़ने के लिए निकट लाया गया ।। 37 ।। बाद में बड़ा अधिकारी बनने पर घोड़ागाड़ी मोटर मिलेगी। आज तो लो भैंसा हाजिर है, इस समय, सजाया हुआ।। 38 ।। पैदल घाट चढ़ना असंभव था। भैंसे के बिना कोई सुविधा नहीं थी। ऐसी उस नानेघाट की नवलाई थी। वाहन की भी अपूर्वता ।। 39।। फिर उन्होंने विचार किया

। बुलाकर भैंसा तैयार किया, उस पर काठी की गद्दी चढ़ायी । कठिनाई से चढ़े।। 40 ।। चढ़ गये किन्तु चढ़ाई सीधी थी। भैंसे जैसा अपूर्व वाहन था। पीठ में चुभने वाला दर्द भर गया ।। 41 ।। इस के आगे वह प्रवास सरल हो गया। जुन्नार का कार्यक्रम पूरा हो गया। फिर बदली का हुकुम हुआ। वहां से मुकाम के लिए चल दिये ।। 42 ।। कल्याण के लिए बदली हुई, चंदोरकर से भेंट हुई ,साईंनाथ की कीर्ति सुनी, दर्शन की इच्छा उदित हुई ।। 43 ।। दूसरे दिन बारी आयी । चंदोरकर तैयारी करने लगे। बोले, "चलो साथ-साथ शिरडी की तार्थ यात्रा करें ।। 44 ।। बाबा का दर्शन करें। दोनों उनको नमन करें। वहां एक दो दिन रहें। कल्याण वापस आ जायें ।। 45 | किन्तु उसी दिन थाने शहर में दीवानी की अदालत में मुकदमें की सुनवाई निश्चित थी उसके लिए साथ छोड़ दिया ।। 46 ।। नानासाहेब ने आग्रह किया चलिए बाबा समर्थ हैं। दर्शन का तुम्हारा उद्देश्य पूरा कर देंगे। मुकदमा क्या चीज है।। 47 ।। किन्तु वह कहां उनसे पटने वाले ? तारीख खोने का भय था । मस्तक की पट्टी पर लिखी हुई निरर्थक यात्रा को कौन टाल सकता था ।। 48 ।। नाना साहेब चंदोरकर ने पूर्व के अनुभव कहे कि दर्शन की इच्छा हृदय में धारण रखने वाले के सारे विघ्न किनारे हो जाते हैं।। 49।। किन्तु जीव को विश्वास नहीं हुआ। क्या करते अपने स्वभाव का? बोले, "पहले इस कष्टदायक व्याकुलता को ठीक कर लें। दावे को बन्द करा दूं" ।। 50 ।। उस प्रकार फिर वे थाने गये | चंदोरकर शिरडी के लिए निकल पड़े। दर्शन प्राप्त करके वापस फिर लिये, इधर आश्चर्य घटित हुआ।। 51 ।। यद्यपि समय पर वे हाजिर रहे, दावे का काम आगे के लिए निश्चित हो गया। चंदोरकर भी चले गये। मन में खींज (उलझन) हुई ।। 52 ।। अच्छा होता कि विश्वास किया होता । चंदोरकर साथ ले जाते। दर्शन का कार्य पूरा हो जाता शिरडी में स्वस्थचित्त ।। 53 ।। दावा भी समाप्त नहीं हुआ। संत समागम भी नहीं हुआ। तुरंत शिरडी जाने का निश्चय किया।। 54 ।। न जाने मेरे शिरडी जाने पर उस समय नाना से भेंट हो जाये | स्वयं साईंनाथ की सुरक्षा में दे देवें । चित्त सानंद हो जावे ।। 55 ।। शिरडी में कोई परिचित नहीं है। वहां मैं सर्वथा अपरिचित हूं। नाना से भेंट होती तो उचित रहता, यद्यपि इसका योग कम है।। 56 ।। ऐसे विचार करते-करते वे ट्रेन (अग्निरथ) में बैठ गये । दूसरे दिन शिरडी पहुंच गये । नाना का वहां न होना स्वाभाविक था।। 57 ।। इनका जिस दिन आना हुग नाना का उसी दिन जाना हुआ। इससे वे बहुत हताश हुए | मन में अति व्याकुल हो गये।। 58 ।। इसप्रकार फिर वहां उनसे उनके दूसरे भले स्नेही से भेंट हो गयी। उन्होंने साईं के दर्शन कराये । मन का उद्देश्य पूरा हो गया।। 59 ।। दर्शन से चित्त (साईं के) पांवों में स्थिर हो गया । साष्टांग दण्डवत किया । शरीर पुलकांकित हो गया। नयनों से प्रेमाश्रु बहने लगे।। 60 ।। फिर वे क्षण भर खड़े रहे। त्रिकालज्ञ बाबा ने मुस्कराते मुख से उनसे क्या कहा, उसे सावधान चित्त से सुनो।। 61 ।।" **कन्नड़ अप्पा के कथनानुसार, जैसे भैंसे के साथ घाट चढ़ना हो गया । ऐसे यहां चलना सरल नहीं है। शरीर को घिसकर मिटा**

देना अनिवार्य है।। 62 ।। " जैसे ही ये सारगर्भित अक्षर कान में पड़े अंतरंग अत्यधिक आनंद में भर गया। पूर्व में कहे गये सत्पुरुष के वचन सत्य थे।। 63 ।। फिर दोनों हाथ जोड़कर साईं चरणों में माथा रखकर बोले "साईंनाथ कृपा करिये मुझ अनाथ को अभी इसी समय शरण में ले लीजिए ।। 64।। आप ही मेरे महापुरुष हैं। निश्चलदास के ग्रन्थ का उपदेश आज मुझे पूर्णरूप से समझ में आ गया। विशेष रहित सुख बोध हो रहा है।। 65 ।।" कहां बड़गांव कहां शिरडी सत्पुरुष व महापुरुष की क्या जोड़ी है। कितनी स्पष्ट व स्वल्पाक्षर भाषा है कैसे उपदेश का प्रेषण हुआ है।। 66 ।। एक कहता है " ग्रन्थ पढ़ो बाद में महापुरुष से संगम होगा फिर वह भविष्य के कर्तव्य का वास्तविक उपदेश करेगा"।। 67 ।। दैव योग से वही मिल गये । वही है ये चिह्न भी निश्चित कर दिया। किन्तु उन एक का पढ़ा दूसरे के अनुसार आचरण करना है।। 68 ।। साईंनाथ उनसे बोले, "अप्पा ने जो कहा वह यथार्थ है। पर जब उन्हें क्रिया में लाओगे तब पूर्ण मनोरथ होगा" ।। 69।। निश्चलदास का "विचार सागर" बड़गांव में भक्तार्थ कहा गया ग्रंथपारायण के बाद समय पर शिरडी में आचरण करने को कहा गया ।। 70 ।। पहलेग्रन्थ का श्रवण करो, फिर उसी का मनन करो। पारायण बार-बार करने से निदिध्यासन होता है ।। 71 ।। उनको पढ़ना ही अन्त नहीं है उन्हें व्यवहार में लाना आवश्यक है अन्यथा उल्टे घड़े के ऊपर जल उड़ेलने जैसा ही सब होगा ।। 72 ।। ग्रंथवाचन व्यर्थ होता है जब इनसे अनुभवज्ञान न हो। ब्रह्म संपन्न गुरु की कृपा बिना पुस्तक का ज्ञान निष्फल होता है।। 73 ।। इसी उद्देश्य से एक छोटी कथा है, जो भक्ति की यथार्थता एवं पुरुषार्थता की अति आवश्यकता उद्घाटित करती है। श्रोता निजस्वार्थ के लिए सुनें।। 74 ।। एक बार पुणे नगर के एक निवासी, नाम था अनंतराम पाटणकर, में साईं दर्शन की उत्कट इच्छा हुई। तुरंत शिरडी आये ।। 75 ।। सकल वेदान्त का श्रवण किया था । समूल उपनिषदों को टीका सहित पढ़ा था। किन्तु उनका मानस सदैव चंचल रहता, उनकी वासना समाप्त नहीं हो रही थी।। 76 ।। साईं समर्थ के दर्शन प्राप्त करके पाटणकर के नयनों को ठंडक पहुंची। चरणों के अभिवंदन करके यथोक्त पूजन संपादित किया ।। 77 ।। फिर हाथ जोड़कर बाबा के निकट सम्मुख बैठकर अनंतराव ने प्रेम व करुणा में स्थित होकर पूछा ।। 78 ।। विविध ग्रन्थों का अवलोकन किया। वेद-वेदांग व उपनिषदों का अध्ययन किया। सभी शास्त्रों व पुराणों का श्रवण किया, किन्तु मेरा यह मन क्लांत कैसे है? ।। 79 ।। वह वाचना व्यर्थ गया, अब ऐसी प्रतीति होने लगी है। अक्षरहीन भक्त भले हैं। मुझसे अच्छे लगते हैं।। 80 ।। ग्रन्थावलोकन व्यर्थ गया, शास्त्र परिशीलन व्यर्थ हुआ। ये सकल पुस्तकीय ज्ञान व्यर्थ है, जब तक यह मन अस्वस्थ है।। 81 ।। शास्त्रों की दक्षता (प्रवीणता, निपुणता) निरर्थक है। महा वाक्य का जप किस अर्थ का है, जो चित को शांति लाभ न दे, ब्रह्मज्ञान क्या है? ।। 82 ।। **(वेदों के चार महावाक्य सूत्र हैं:- 1- "प्रज्ञानां ब्रह्म (ऋग्वेद) : प्रज्ञा ब्रह्म है ,२- "तत त्वं असि' (सामवेद) : वह तुम हो ,3- "अहं ब्रह्मास्मि' (यजुर्वेद) : मैं ब्रह्म हूँ, 4-**

"अयं आत्मा ब्रह्म : यह आत्मा ब्रह्म है।) कानों कान यह समाचार सुना कि साईदर्शन से चंचलता का निवारण हो जाता है। विनोदपूर्ण कहानियों की चर्चा करते-करते सहज ही सदमार्ग पर ला देते हैं ।। 83 ।। इसलिए, हे महाराज! आप जो तपो राशि हैं, आपके चरणों में आया हूं। आशीर्वचन ऐसा दीजिए कि मेरे मन में स्थैर्य आ जाये ।। 84 ।। तब महाराज ने विनोदपूर्वक आख्यान कहा था, जिससे अनंतराव का समाधान हुआ था, ज्ञान का साफल्य प्राप्त हुआ था ।। 85 ।। वह अल्पाहार परमसार कथा कहता हूं। तत्पर होकर सुनें। विनोदपूर्ण किन्तु बोधदायक है। कौन अनादर कर सकता है।। 86 ।। बाबा प्रत्युत्तर देते हैं, **"एक बार एक सौदागर आया, वहां उसके सम्मुख एक घोड़े ने नौ लेड़ियाँ निकाली ।। 87 ।। सौदागर निजकार्य में तत्पर था। लेड़ियां गिरते ही धोती का पल्लू पसार दिया, उन सभी (नौ) को कस कर बांधकर लिया, चित्त की एकाग्रता का लाभ हुआ" ।। 88 ।।** साईं समर्थ ये क्या बोले? उसका सार क्या है? सौदागर द्वारा लेड़ियों का संग्रह क्यों किया गया? कुछ भी अर्थ स्पष्ट नहीं है।। 89।। ऐसा विचार करते-करते अनंतराव वापस आये। दादा केलकर से उन्होंने विस्त्रित संभाषण बताया।। 90 ।। बोले, "वह सौदागर कौन है ? लेड़ियों का क्या प्रयोजन है। नौ का क्या कारण है। मुझे खोलकर बताइये" ।। 91 ।। दादा यह क्या पहेली है? मुझ अल्पबुद्धि को. समझ में नहीं आता। मुझे तुरंत इस प्रकार बताओ कि बाबा के हृदय की बात स्पष्ट हो जाये" ।। 92 ।। दादा बोले मुझे भी स्पष्ट नहीं है। बाबा ऐसे भाषण बोलते हैं किन्तु उन्हीं की स्फूर्ति के बल पर जो मैं समझ सकता हूं, बोलता हूं।। 93 ।। यह घोड़ा ईश्वर की कृपा है। वह नवधा भक्ति की लेड़ियां हैं। बिना भक्ति परमेश्वर से जुड़ाव नहीं हो सकता है। केवल ज्ञान से नहीं प्राप्त किया जा सकता।। 94 ।। श्रवण, कीर्तन, विष्णु स्मरण, चरणसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सांख्य आत्मनिवेदन- ये नवधा भक्ति जानो ।। 95 ।। हृदय में पूर्ण भाव रखकर इनमें से एक भी यदि सिद्ध कर लें तो भाव के भूखे श्री हरि भक्त के घर पर ही प्रकट हो जाये ।। 96 ।। जप, तप, व्रत, योग साधन, वेदोपनिषद परिशीलन, प्रचुर आध्यात्म ज्ञान निरूपण, भक्ति के बिना व्यर्थ है।। 97 ।। वेदशास्त्र में निपुणता नहीं चाहिए, न ही ज्ञानी के रूप में विश्वव्यापी कीर्ति चाहिए, न ही शुष्क भजन प्रीति चाहिए, प्रेमल भक्ति चाहिए ।। 98 ।। स्वयं को सौदागर समझिये, तब फिर इस भावार्थ को समझिये । श्रवण आदि भक्ति की पताका लहरायेगी, तब ज्ञान राजा उत्साहित होंगे।। 99।। घोड़े ने नौ लेड़ियाँ गिरायीं । सौदागर आतुरता से पकड़ने के लिए दौड़ा। उसी प्रकार नवधा भक्ति भाव को पकड़कर मन को शांति प्रदान करो।। 100 ।। मन में स्थैर्य आयेगा, सबके प्रति सद्भाव, गांभीर्य । उसके बिना चंचलता निश्चित है गुरुवर प्रेमपूर्वक कहते हैं।। 101 ।। दूसरे दिन अनंतराव साईं के चरणों की वंदना करने गये उनसे पृच्छा की गयी, **"क्या लेड़ियाँ पल्लू से बांध लिए"** ।। 102।। अनंतराव ने तब प्रार्थना की. **"दीन के प्रति आपकी कृपा हो तो फिर सहज ही वे बंध जायेंगी। इसमें उनकी महानता क्या है"** ।। 103 ।। तब बाबा ने आशीर्वाद

दिया । आश्वासन दिया कल्याण होगा । अनंतराव चित्त में आनन्दित हुए, सुख शांति प्राप्त हुई।। 104 ।।अब एक और अल्पकथा श्रोता सादर चित्त सुनें, बाबा के अन्तर्ज्ञान को समझें , वैसे ही सन्मार्ग प्रवर्तकता को भी।। 105 ।। एक बार एक वकील आए | आते ही समय मस्जिद गये । साईंनाथ के दर्शन प्राप्त किये उनके पावों की वंदना की ।। 106 ।। फिर लायी हुई दक्षिणा देकर वकील बाजू में बैठ गये । वहां साईं का संभाषण चल रहा था। श्रवण के प्रति आदर उत्पन्न हुआ।। 107 ।। तब बाबा ने मुख उधर फेरा । वकील को लक्ष्य करके बोले । बोल अंदर तक छेद कर गये । वकील को अनुतोष प्राप्त हुआ।। 108 ।। "लोग कितने झूठे हैं। पांव पड़ते हैं। दक्षिणा भी देते हैं और अंदर से गाली देते हैं। उनके बोलने में क्या चमत्कार है ।। 109।। यह सुनकर वकील शांत रहे किन्तु अपने हृदय (मन) में पूर्णरूप से समझ गये। उनके उद्गार का अन्वर्थ ढका हुआ था, तात्पर्य मन में गहरे बैठ गया ।। 110 ।। बाद में जब वे वाड़ा में गये । दीक्षित से कहने लगे । वह बाबा जिसके लिए बोल रहे थे। वह सब वास्तविकता है।। 111 ।। आरोपों की झड़ी मेरे प्रति जो फेंकी गयी वह मुझे केवल इशारा दिया है किसी भी प्रकार की निंदात्मक चर्चा को मन में स्थान नहीं देना चाहिए ।। 112 ।। शारीरिक स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण हमारे मुन्सिफ त्रस्त हो गये। अवकाश लेकर यहां शांति से रहे, अपनी अस्वस्थता में सुधार लाने के लिए ।। 113 ।। वकीलों के कमरे में मुन्सिफ के संबंध में वार्ता होने लगी। बोलने वालों का इस विषय से संबंध नहीं था। तर्क-वितर्क चलता रहा ।। 114 ।। औषधि के बिना शरीर की आपदा साई से मिलने से टालने में लगे हैं, मुन्सिफ के पद को प्राप्त हैं।। 115 ।। इस प्रकार उनकी निंदा चल रही थी। साई की उपहासता चल रही थी। अंशतः मैं भी उनमें था। उसी अनुचितता को दिखाया। ।। 116 ।। आरोपों की बौछार नहीं अनुग्रह था, व्यर्थ किसी के संबंध में तर्क-वितर्क उपहास निंदा आदि का कुत्सित संग्रह असत्य परिग्रह की वर्जना के लिए ।। 117 ।। एक और प्रमाण, सौ कोस के अंतर पर रहते हुए साईं सबके अंदर की बात जानते थे विशुद्ध अन्तर्ज्ञानी थे।। 118 ।। एक और बात निश्चित हो गयी। मध्य में पर्वत हो, पहाड़ हो कुछ भी साईं की दृष्टि में आड़े नहीं है उनके सामने गुप्त स्पष्ट हो जाता है।। 119 ।। फिर उसके बाद वकील ने निश्चय किया कि पर निंदा गाली समन्वित वचन से दूर रहेंगे, कान नहीं देंगे ।। 120 ।। आप कुछ भी करे कहीं भी करें। साईं की दृष्टि से बच नहीं सकते | इस विषय में वह निश्चित हो गये । असत्य कार्य की रुचि समाप्त हो गयी।। 121 ।। सत्कार्य के प्रति जागरुकता उदित हुई । साईं आगे पीछे साथ में साईं हैं। उनसे कौन वंचित है यह विश्वास निश्चित रूप से चित्त में बैठ गया।। 122 ।। इस कथा का संबंध उस वकील से है यद्यपि, फिर भी देखते हैं कि वह सबके लिए सब तरफ के लिए हैं। सभी के लिए बोधक हैं।। 123 ।। वकील, वक्ता, श्रोता सभी और भी अन्य साईं भक्तों का ऐसा ही विश्वास हो, मेरी वस्तुतः यही प्रार्थना है।। 124 ।। साईंकृपा के बादल वर्षा करते हैं तो हम सब तृप्त होंगे। इस अर्थ

में कुछ भी आश्चर्य नहीं है। सभी प्यासे शांत हो जायेंगे ।। 125 ।। साईंनाथ की महिमा अगाध है। उनकी परमकथा अगाध है। अगाध है साईंचरित्र की सीमा । मूर्त परब्रह्मावतार हैं।। 126 ।। अब अगले अध्याय की कथा। श्रद्धालु श्रोता सादर सुनें । तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा। चित्त को स्थैर्य देगा।। 127 ।। भक्तों की भावी संकट की अवस्था साईंसमर्थ पहले ही जान जाते, । बोलते, विचार वार्ता करते, हंसते, खेलते, टाल देते ।। 128 ।। भक्त हेमाड साईं की शरण में है । यह कथानक पूर्ण हुआ। आगे की कथा का संबंध भक्तों के संकट निवारण से है।। 129 ।। कैसे साईं कृपा सागर भक्तों के भावी दुर्धर संकट पहले से जान कर टाल देते । समय से इशारा कर देते ।। 130 ।। ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्री साईसच्चरित "अनुग्रहकरण" नामक इक्कीसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सदगरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। बाइसवां अध्याय (अपमृत्यु निवारण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

ज्ञान स्वरूप परमपावन, आनन्दघन सद्‌गुरु की जय हो। भवभय निकंदन कलियुग के मल का दहन करने वाले, परिपूर्ण की जय जयकार हो ।। 1 ।। तूं आनंदसागर, जिसपर नानावृत्ति रूपी लहरें उठतीं, उन्हें तुम्हीं, केवल तुम्ही, निरुद्‌ध करते हो निजभक्तों पर कृपा करके ।। 2 ।। अल्प अंधेरे में जो सांप ,वही प्रकाश होने पर अपने आप डोर दिखती है । अल्प अंधकार व प्रकाश के स्वरूप का, दोनों का, सृजनकर्ता तूं ही एक है ।। 3 ।। सर्पाकार वृत्ति का सृजन करते हो । उसे छोड़कर डोरी का आकार देते हो, तूं ही भय उत्पन्न करते हो अन्त में निवारण तूं ही करते हो ।। 4 ।। पहले जब पूर्ण अंधकार होता है न सर्प न ही डोर होती है। वृत्ति उठने के लिए कोई स्थान नहीं । वह निराकार (अंधकार) भी तूं है ।। 5 ।। फिर निराकार में आकार उस अल्प प्रकाश के अवसर पर सर्प का आभास वह होने लगता है, उस आभास का कारण तूं है ।। 6 ।। ऐसा दृश्य अदृश्य का भाव तुम्हारे आनंदवृत्ति का प्रभाव है। भाव अभाव रहित स्वभाव, किसी को इसकी गहराई का ज्ञान नहीं हुआ ।। 7 ।। जिसके लिए शुति मौन हो गयी, अशेष मुखों से स्तुति करते हुए शेष (नाग) वास्तविक स्वरूप न जान सके वह मैं कैसे समझ सकता हूं ।। 8 ।। बाबा तुम्हारे स्वरूप के दर्शन के अतिरिक्त कुछ मन को अच्छा नहीं लगता तुम्हारे ध्यान लगाते ही प्रतीत होता है कि आँखों के सामने है (तुम्हारा स्वरूप) ।। 9 ।। केवल शुद्‌ध ज्ञान मूर्ति आत्यंतिक सुख की प्राप्ति करने के लिए तुम्हारे चरणों में पड़ने के सिवाय कोई और हमारी गति नहीं है ।। 10 ।। क्या तुम्हारी वह नित्य की बैठक है । अनेक भक्त दर्शन के लिए आते, पांवों पर मस्तक रखते। प्रेम से निजसुख लूटते ।। 11 ।। वह भी तुम्हारा पांव कैसा, जैसे शाखा के मध्य चन्द्रमा, वैसे हाथ में अंगूठा पकड़े हैं, दर्शन जिज्ञासा पूरी करने के लिए ।। 12 ।। कृष्णपक्ष की पन्द्रहवीं तिथि अमावस्या की अंधेरी रात के गुजरते ही चन्द्र का दर्शन होता है। सभी को सहज ही होता है ।। 13 ।। कृष्ण पक्ष की रात्रि को समाप्त होते ही चन्द्रदर्शन की आशा उपजती है जिनमें, वे पश्चिम दिशा की ओर देखते हैं आकाश में दृष्टि लगाकर ।। 14 ।। आप अपने भक्तों की अपने चरणों के पास रहने की उत्कट इच्छा पूरी करते हैं, वाम जाँघ पर दाहिने पैर को रखकर उस समय ।। 15 ।। बायें हाथ की तर्जनी व मध्यमा अंगुली की शाखा के बीच अंगूठा जो पकड़ा है वह दक्षिण पांव का अंगूठे का नख चन्द्रमा की भांति चमकता है।। 16 ।। दर्शन की जिज्ञासा बहुत है। बिना प्रयास नभ में (चन्द्र) कोर नहीं दिखता। फिर ज्ञाताजन कहते हैं वह

डालियों के मध्य सामने अपनी नजर डालो।। 17 ।। अब डालियों के मध्य दिखायी पड़ता है, संमुख दर्शन होता है, यद्यपि कोर छोटा होता है। वहां से दृष्टिगोचर होता है ।। 18 ।। धन्य है, अंगूठे की महिमा । वेणीमाधव (श्रीकृष्ण) स्वयं बनकर गंगा यमुना प्रकट करके दासगणू को तुष्ट किये ।। 19 ।। प्रयाग तीर्थ में स्नान करने के लिए आज्ञा मांगी। **"मेरे इस अंगूठे को प्रयाग जानो यहीं पर स्नान करो"** ।। 20 ।। इस प्रकार बाबा के कहने पर दासगणू ने अपना सर चरणों पर रख दिया। गंगा यामुना दोनों उसी स्थान पर देखो प्रकट हो गयीं ।। 21 ।। उस प्रसंग पर दासगणू के वे सुन्दर पद, "अगाध शक्ति अघटित लीला " । श्रोता यदि श्रवण तत्पर हैं ।। 22 ।। साईसच्चरित के चतुर्थ अध्याय में दासगणू ने अपनी वाणी से उसे गाया है। पुनश्च श्रोता उस स्थान पर पढ़ें पुनः चमत्कार प्रकट होगा ।। 23 ।। इसलिए शाखा चन्द्र की भांति अंगूठा तर्जनी व मध्यमा दोनों से पकड़ कर साईं माँ ने अपने भक्तों को उपाय दिखाया ।। 24 ।। इसलिए निरभिमान होकर सभी भूतों में अपने मान को डुबाकर, एक अंगूठे का ध्यान करो। भक्ति का सरल साधन है ।। 25 ।। अब पूर्व कथा से संबद्ध भक्तानुग्रह कथन हो गया। आगे अपूर्व चरित्र श्रवण,ध्यानपर्दूक सुनें ।। 26 ।। शिरडी पुण्यक्षेत्र हो गया। बाबा से अति पवित्र हो गया। दिन-रात यात्रा होने लगी। | सत्पात्र पुण्यार्थी आते ।। 27 ।। जिसके साक्ष्य से दसों दिशाएं प्रत्यक्ष व परोक्ष भरी रहती हैं। साईं बाबा कल्पवृक्ष हैं, शिरडी में प्रत्यक्ष अवतार लिये ।। 28 ।। अकिंचन अथवा सम्पत्तिवान सभी को एक समान देखते थे। अपनी अतर्क्य लीला किसी को दिखाते, भक्त का कल्याण साधते ।। 29 ।। क्या निःसीम प्रेमलता, नैसर्गिक ज्ञान सम्पन्नता, वैसी ही अत्यधिक सर्वात्मभावता | धन्य है वे भाग्यवान जिन्होंने उनका अनुभव किया ।। 30 ।। कभी दृढ़ मौन धारण ही जिनका ब्रह्मव्याख्यान होता, कभी चैतन्य आनंदघन भक्तगण से घिरे रहते ।। 31 ।। कभी गूढार्थ ध्वनित होता बोल में, कभी विनोद पूर्ण बात करते। कभी संदिग्धता छोड़कर क्रोध में आ जाते ।। 32 ।। कभी भावार्थ कभी विवेक कभी निश्चयात्मक स्पष्ट, इस प्रकार अनेकानेक ढंग से उपदेश करते ।। 33 ।। ऐसा था साईं समर्थ का आचरण | मन, बुद्धि वाणी से परे। अज्ञात करनी अकल्पित, अनिरज्ञात व अनपेक्षित थी ।। 34 ।। मुख अवलोकित करते रहने से मन नहीं भरता , बात करते रहने से मन नहीं भरता, वार्ता सुनते रहने से मन नहीं भरता, आनन्द चित्त में समाता नहीं है ।। 35 ।। वर्षा की धारा की गणना की जा सकती है, तूफानी वायु को बण्डल में बांधा जा सकता है किन्तु साईं के इन चमत्कारों को कौन माप करने में सक्षम है ।। 36 ।। इसलिए अब आगे की कथा | साईं की भक्त संरक्षण की चिंता | वैसी ही कठिन प्रसंगों की निवारणता। स्थिर चित्त से सुनें ।। 37 ।। कैसे भक्तों के संकट को जानकर समय पर धैर्य प्रदान करते, उसे टाल कर अपने चरणों में स्थिर करते । सदा कल्याण तत्पर सर्वदा रहते ।। 38 ।। इस संदर्भ में एक कहानी आप श्रोता गणों को रिझायेगी । साईं समागम सुख में वृद्धि होगी। श्रद्धा भक्ति उपजेगी ।। 39 ।। हीन हो, दीन हो, गरीब हो, साईं की

कथा में उनकी रुचि बढ़ेगी। हर समय साईंनाम जपने से साईं उसे दूसरे पार (किनारे) लगा देंगे ।। 40 ।। काका साहेब मिरीकर का निवास अहमदनगर शहर में था, जिनसे प्रसन्न होकर सरकार ने "सरदार" की पदवी प्रदान की थी ।। 41 ।। पुत्र भी कर्त्तव्य तत्पर था, कोपर गांव का "मामलतदार" था। चिपली के भ्रमण पर शिरडी दर्शन के लिए आये ।। 42 ।। मस्जिद में जाकर बैठे, बाबा के चरणों में मस्तक रखा, क्षेमकुशल सबकी पूछते हुए कथा वार्ता प्रारंभ हुई ।। 43 ।। वहां बहुत लोग थे माधवराव भी निकट थे। कथामृत की नवलाई को अवधानशील श्रोता सेवन करें।। 44 ।। कैसी भावी संकट सूचना । उपाय के साथ उसके निवारण की योजना। भक्तजनों को कैसे रक्षित किया जाये । बाबा की यह आश्चर्यजनक घटना है।। 45 ।। बाबा ने मिरीकर से उस स्थान पर देखो क्या अद्भुत प्रश्न पूछा, "यह जो अपनी द्वारकामाई है, क्या तुम इसकी थाह जानते हो" ।। 46 ।। बाबासाहेब को कुछ भी तात्पर्य समझ में नहीं आया तब बाबा बोले, "**अब देखो , द्वारकामाई यही है ।। 47 ।। यही मस्जिद अपनी द्वारकामाता है। इसकी गोद में बैठे रहने पर बच्चों को निर्भयता प्रदान करती है। चिंता लेशमात्र भी नहीं शेष रहती ।। 48 ।। यह मस्जिदमाई बड़ी कृपालु है। भोले भक्तों की यह माँ है। कोई कैसी भी आपदा (संकट) में पड़ा हो यह वहां रक्षा करती है ।। 49 ।। एक बार जो उसकी गोद में बैठ जाता है उसका बेड़ा पार हो जाता है। उसकी छाया में जो विश्राम करता है वह सुखासन पर आरुढ़ हो जाता है ।। 50 ।। यह द्वारका द्वारावती है"** बाबा ने फिर उन्हे विभूति दी। सिर पर अभय का हाथ रखा । मिरीकर जाने के लिए निकले ।। 51 ।। और बाबा के मन में हुआ, मिरीकर से प्रश्न पूछा, "क्या तुम लांब बाबा को जानते हो और उसकी नवलाई को" ।। 52 ।। फिर कलाई पर हाथ को मोड़कर दाहिने हाथ को कुहनी के पास पकड़कर घुमाते हुए मुंह से बोले, "ऐसा भयंकर वह होता है ।। 53 ।। किन्तु वह अपने को क्या करेगा। आपन द्वारकामाई के बच्चे हैं। कोई इसकी करामात को नहीं जानता। देखो कौतुक, चुपचाप ।। 54 ।। द्वारिकामाई के रक्षक होते हुए क्या लांब बाबा (सांप) मारेंगे ? बचाने वाले के आगे मारने वाली की गति, वह क्या , कितनी समझो " ।। 55 ।। इस प्रसंग का खुलासा बाबा ने क्यों किया मिरीकर से क्या संबंध ? सभी को जिज्ञासा होने लगी ।। 56 ।। बाबा से पूछने की हिम्मत नहीं थी। वैसे ही चरणों में सिर रखकर चिथलो जाने के लिए हो रहे बिलंब के लिए कहकर मिरीकर उतरे ।। 57 ।। माधवराव साथ में थे। दोनों जब मंडपद्वार तक पहुंचे होंगे। माधवराव को आवाज दी, बोले, "क्षण भर के लिए आओ" ।। 58 ।। बोले, "शामा तूं भी तैयार हो कर उनके साथ जाओ। चिथली तक का चक्कर लगा लो बहुत आनन्द मिलेंगे" ।। 59।। तत्काल शामा नीचे उतरे मिरीकर के पास आये। बोले, "आपके तांगा में मुझे चिथली तक चलना है" ।। 60 ।। "घर जाकर तैयारी करके तुरंत आता हूं जानिये। बाबा बोलते हैं तुम्हारे साथ चिथली तक मुझे जाना है"।। 61 ।। मिरीकर उनसे बोले, "चिथली तक इतनी दूर तुम किस कारण आओगे | व्यर्थ ही तुम्हें कष्ट होगा" ।। 62 ।।

माधवराव वापस मुड़ गये, वे बाबा से जो हुआ बता दिये । बाबा बोले, "अच्छा हुआ। अपना क्या जाता है" ।। 63 ।। मंत्र, तीर्थ, द्विज, देव, ज्योतिषि (दैवज्ञ), वैद्य अथवा गुरु में जैसी आस्था होगी वैसे फल का उद्भव होगा ।। 64 ।। हमें नित्य हित की इच्छा करनी चाहिए। उसी अर्थयोग्य उपदेश देना चाहिए। जिसके जैसे कर्म होंगे वैसा ही निश्चित घटित होगा ।। 65 ।। शीघ्र ही मिरीकर शंका में पड़ गये | बाबा के शब्द मान लेने चाहिए थे। माधवराव को धीरे से इशारा किया, बोले, “चिथली चलिए" ।। 66 ।। फिर वे बोले, रुकिये" पुनः बाबा की अनुज्ञा ले लूं। उनके कहते ही उसी क्षण वापस आ जाऊँगा, अभी आता हूं' ।। 67 ।। "निकल पड़ा था तुम्हीं ने वापस कर दिया। बाबा बोले अच्छा हुआ। अपना क्या जाता है। मुझे शांति से बैठा दिया" ।। 68 ।। "अब पुनः विचार लेना होगा । वे कहते हैं तो तुरंत आता हूं। जैसा कहेंगे वैसा करुंगा। मैं उनकी आज्ञा का दास हूं ।। 69 ।। फिर वह बाबा के पास गये। बोले, "मिरीकर बुला रहे हैं चिथली तक मुझे साथ ले जाएँगे । आपकी आज्ञा मांग रहे हैं" ।। 70 ।। फिर हंसते हुए साईं बोले, "अच्छा वे ले जा रहे हैं तो तुम जाओ। इसका नाम मस्जिद माई है, क्या वचन से वापस होगी" ।। 71 ।। "माँ तो माँ है बहुत ममतामयी। बच्चों के प्रति अति दयालु । किन्तु जब बच्चे अविश्वासी हो जावें कैसे उन्हें संभालेगी” ।। 72 ।। फिर साईं चरणों की वंदना करके माधवराव जाने के लिए निकले । मिरीकर जिस स्थान पर थे तांगे में आकर बैठ गये ।। 73 ।। वे दोनों चिथली को गये। पूछने पर ज्ञात हुआ कि वरिष्ठ आफिस के लोग जिनको आना था, पर नहीं आये। फिर वे आराम से बैठ गये ।। 74 ।। “मारूति” के देवालय में विश्राम की व्यवस्था थी फिर दोनों उसी स्थान पर तुरंत प्रयाण कर गये ।। 75 ।। रात्रि का एक प्रहर हुआ था । रंगीन धागे की चटाई, बिछौना व तकिया बिछाकर बत्ती के उजाले के पास बात करते, पूछते हुए बैठ गये ।। 76 ।। वहीं समाचारपत्र था, मिरीकर खोलकर बांचने लगे। अद्भुत घटना विशेष में चित्त ध्यानमग्न हो गया, जब आश्चर्यजनक घटना घटी ।। 77 ।। उस भयंकर (काल) बेला में एक सर्प कैसे कहां से निकल कर आया कुण्डली मार कर बैठ गया, सभी की निगाह बचाकर ।। 78 ।। मिरीकर के कमर पर उपर्ण का पल्लू पड़ा था। उस मृदुल आसन पर शांत निर्भय बैठा था ।। 79 ।। आहिस्ता-आहिस्ता प्रवेश करते हुए सुर सुर सुर सुर कागज बजने लगा। परंतु कोई उस आवाज से सर्प की शंका नहीं कर सका ।। 80 ।। यद्यपि इतना भयंकर प्रसंग था मिरीकर खबरपत्र में खोये थे। पर चपरासी के हृदय में कल्पना तरंग बहने लगी ।। 81 ।। वह आवाज कहां से आ रही है? इसका क्या कारण हो सकता है? बोलते हुए बत्ती को जरा ऊपर उठाया तो लांबू महाराज दिख गये ।। 82 ।। देखते ही घबड़ा गया। “साँप रे साँप" धीरे से चिल्लाया ! मिरीकर का धैर्य छूट गया। सभी अंग कांपने लगे ।। 8 3 ।। शामाराव भी चकित रह गये। बोले, “बाबा यह क्या किया? कहां से यह वर्तमान विघ्न भेज दिया? अब इससे छुटकारा दिलाइये" ।। 84 ।। फिर यह अवस्था देखकर जिसके हाथ जो जो लगा वह लेकर तुरंत दौड़ा बिना पैरों से

आवाज निकाले ।। 85 ।। तब वे सर्प को कमर से नीचे हलू हलू सरकते देखे । सर्प क्या अनर्थता की मूर्ति उतर रही थी ।। 86 ।। देखते-देखते ग्रहण समाप्त हो गया। पहले से ही उठे हुए डण्डे धड़ धड़ सर्प के ऊपर पड़ने लगे। उसके टुकड़े हो गये ।। 87 ।। इस प्रकार संकट टलता देखकर मिरीकर अति भावुक हो गये । साईं समर्थ के प्रति प्रेम अतिशय छलक पड़ा ।। 88 ।। दु:ख के झटके दब गये । प्रेम आँखों से बहने लगा। कितना बड़ा संकट टल गया। बाबा कैसे जानते थे ।। 89 ।। खतरा टल गया | बाबा कैसे समय से सचेत कर दिये थे। मना करने पर भी तांगे में बैठाकर शामा को सहायतार्थ दिया।। 90 ।। कितनी दया है उनके हृदय में? उनकी अन्तर्दृष्टि क्या है? पहले से ही बुरा समय जानकर उचित सलाह बता दी ।। 91 ।। दर्शन का माहात्म्य दिखाया | मस्जिद का महत्व मस्तिष्क पर छप गया। निज प्रेम का प्रदर्शन किया सहज ही लीला करके ।। 92 ।। एक बार एक बड़ा ज्योतिषी जिनका नाम नाना डेगले था श्रीमंत बुट्टी के निकट, उनसे क्या कहा वह सुनें ।। 93 ।। आज का दिन बहुत अशुभ है आप के लिए खतरा है। अपने अन्दर धैर्य (साहस) धारण किये रहें, बहुत सावधान रहें ।। 94 ।। डेगले के ऐसा कहने पर बापू साहेब अशांत चित्त हो गये । बार-बार चिंता करते रहे दिन बीत नहीं रहा था ।। 95 ।। फिर बाद में नित्य के समय मस्जिद के लिए मंडली चल पड़ी, बापू साहेब नाना आदि सभी जाकर बाबा के साथ बैठ गये ।। 96 ।। तत्काल बाबा बुट्टी से पूछे, “क्या? नाना क्या बोलते हैं? वे क्या तुम्हें मारने पर तुले हैं। हमें डरना नहीं चाहिए" ।। 97 ।। "देखते हैं कैसे मारते हैं? निर्भय होकर उन्हें उत्तर दे दो कि मारो” | इस प्रकार इसके बाद क्या चमत्कार हुआ उसे देखो ।। 98 ।। सांयकाल शौच क्रिया के लिए बापू साहेब एकान्त में गये हुए थे कि उसी समय एक सर्प आ गया ।। 99 ।। उस भयंकर विघ्न को देखकर बापू साहेब बाहर आ गये। उनके लहानू (उनके सेवक का नाम) ने सोचा कि इसको पत्थर से मार डालूंगा ।। 100 ।। लहानू पत्थर उठाने चला तो बापू साहेब ने मना कर दिया। बोले, “जाकर डंडा ले आओ। इस काम में जल्दबाजी अच्छी नहीं" ।। 101 ।। नौकर जब डंडा लेने गया सर्प भीत पर चढ़ने लगा । झुकाव पर नियंत्रण खो देने से अचानक गिर गया। बिल के बाहर सरपट चला गया ।। 102 ।। फिर वहां से वह भागता हुआ चला गया। मारने का कोई कारण शेष नहीं रहा । बाबा के शब्द स्मरण हुए। दोनों के लिए (स्वयं एवं सर्प) संकट निवारण हो गया ।। 103 ।। इस प्रकार साईं समागम के उत्सव भाग्य से जिनकी आँखों ने देखा है वे कभी विस्मृत नहीं कर सकेंगे ।। 104 ।। ऐसे ऐसे अनुभव दिखाकर भक्तों के हृदय को आकर्षित करते। वर्णन करने पर कागज पूरे नहीं होंगे (कम पड़ जायेंगे)। वर्णन कदापि तुलनीय नहीं है ।। 105 ।। ऐसी ही दूसरी कथा है रात्रि का दूसरा प्रहर था। चावड़ी में प्रत्यक्ष घटित हुई, बाबा के समक्ष । उसे सुनो ।। 106 ।। कोपर गांव तालुके का, कोराले जिनका मूल गांव था, जिसका नाम था अमीर शक्कर ,उनकी भक्ति साईं चरणों में थी ।। 107 ।। जाति का खटिक, धंधे का दलाल | बान्द्रा में जिसका बोलबाला

था। एक भयंकर बीमारी से ग्रस्त हो गये । अति विकल हो गये ।। 108।। संकट पड़ने पर देव (ईश्वर) याद आते हैं। धंधे की उलझने छोड़कर, लेन-देन निपटाकर, शिरडी पहुंचने के लिए दौड़ पड़े ।। 109 ।। कुंती पांच पांडवों की माँ थी। अज्ञातवास व वनवास पाया था। यद्यपि अत्यन्त विपत्ति व कष्ट में थी। देव (श्रीकृष्ण) से संकट (में रहने) की ही प्रार्थना की थी ।। 110 ।। बोली, "देवा परमेश्वर, सुख दो जो इसे मांगते हैं। मुझे निरंतर दुःख लगातार दो, जिनके पड़ने से तुम्हारा नाम न बिसरे" ।। 111 ।। यही मेरी मांग है, देवा दे तो मुझे यही दे, फिर तुम्हारे नाम से गुंथा अखंड अलंकार मेरे कंठ में होगा ।। 112 ।। श्रोता, वक्ता रात दिन साईं से यही मांगते तुम्हारा नाम कभी न बिसरे पांवों में आश्रय दो ।। 113 ।। इस प्रकार अमीर ने नमन किया। विधियुक्त बाबा के हाथ का चुंबन किया । व्याधि का सविस्तार निवेदन किया । दुःख विमोचन की प्रार्थना की ।। 114 ।। भयंकर वातविकार जो हो गया था, उसका प्रतिकार पूछा | बाबा फिर उत्तर देते हैं। “चावडी में रहो” ।। 115 ।। मस्जिद से नियम से प्रति दूसरी रात बाबा चावडी के लिए जाते। अमीर के रहने के लिए वही स्थान था ।। 116 ।। अमीर संधिवात (गठिया) से ग्रस्त थे। कहीं भी गांव में सुख से रह सकते थे, कोराले वापस जा सकते थे, उन्हें अधिक सुविधा होती ।। 117 ।। चावडी बहुत पुरानी थी। अंदर व बाहर से जीर्ण हो गयी थी, जहां गिरगिट/छिपकली, बिच्छू, सर्प स्वेच्छा से घूमते व सुख से रहते ।। 118 ।। वहीं कुष्ट के रोगी भी रहते । कुत्ते वहीं स्वाद लेकर खाते । अमीर को बहुत कष्ट हुआ। बाबा के सामने कोई तर्क नहीं चलता था ।। 119 ।। पीछे के भाग में कचरा भरा था । घुटने-घुटने तक छिद्र थे। भूखे कुत्ते जैसा हाल था। वह एक जन्म की यात्रा थी।। 120 ।। ऊपर से वर्षा, नीचे सीलन, जगह गहरो ऊंच नीच । ठंडी वायु का भयंकर शोर । अमीर का मन चिंतित हो गया ।। 121 ।। शरीर में जोड़ों का दर्द वायू व वर्षा उस स्थान पर, वहां सीलन, ऐसे में बाबा के वचन की औषधि थी।। 122 ।। उनसे बाबा ने दृढ़ता से कहा था, वायु हो, वर्षा हो या सीलन जगह ऊँच नीच या गड्ढे युक्त, उसका विचार न करो ।। 123 ।। यद्यपि वह स्थान संशयात्मक है। साईं समागम महाप्रसाद है। उनके वचन ही औषधि मानने पर सुखदायी रहते हैं ।। 124 ।। चावडी में चढ़ते ही वही सामने मध्य में बिस्तर डालकर (फैलाकर) नौ महीने वहीं चावडी में अमीर शक्कर रहे ।। 125 ।। अंगों में गठिया रोग बैठ गया था । बाह्यतः अनुपान सब विपरीत। किन्तु अन्दर निश्चित विश्वास । जिससे हृदय को संतुष्टि थी।। 126 ।। नौ महीने वहां पर वास नियम से अमीर का होना था । मस्जिद आकर दर्शन करने की मनाही थी ।। 127 ।। किन्तु उस चावडी स्थान पर वहां नियम से बाबा के अपने आप दर्शन प्राप्त होते । बिना प्रयास ये होता ।। 128 ।। वह भी रोज सांयकाल (फेरी के समय) सुबह (भिक्षा के लिए निकलते समय) इसके अतिरिक्त एक दिन के अन्तर पर दोनों बेला वहां उनका चावड़ी का उत्सव भरपूर देखने को मिलता ।। 129।। रोज सुबह भिक्षा के लिए जाते हुए चावड़ी से होकर बाबा का रास्ता था सहज दर्शन

प्राप्त हो जाता। अमीर को स्थान नहीं छोड़ना पड़ता ।। 130।। वैसे ही रोज सूर्यास्त के समय चावड़ी के समक्ष बाबा आकर तर्जनी व मस्तक घुमाते हुए लीन होकर दिशाओं का वंदन करते ।। 131 ।। वहां से फिर वापस समाधि गृह के कोने तक जाकर वहां से वापस मस्जिद । भक्तों के साथ वे जाते ।। 132 ।। चावडी में एक दिन के अन्तर पर। नाममात्र का एक परदे की आड़। दोनों ही वार्तालाप में आनन्द लेते ।। 133 ।। वही पूजा , वहीं आरती करके भक्तजन घर जाते, उसके बाद स्थिरचित्त होकर फिर वह परस्पर बोलते ।। 134 ।। बाह्यरूप से यह बंदिवास था। अंदर साईं के साथ दृढ़ सहवास था । भाग्य के बिना यह लाभ भोगना दूसरों के लिए दुर्लभ था ।। 135 ।। फिर अमीर ऊबने लगे, एक ही स्थान पर बंद होकर रहने से उन्होंने महसूस किया कि गांव में कहीं जाना चाहिए ।। 136 ।। मन में स्वतंत्रता की उत्कठ इच्छा । उन्हें परतंत्रता कैसे अच्छी लगती। अब बहुत हो गया बंदीखाना । अमीर के मन में कल्पना हुई ।। 137 ।। बाबा की अनुज्ञा लिए बिना ही अपने लिए नियत स्थान छोड़कर कोपरगांव तक गये। जाकर धर्मशाला में ठहरे ।। 138 ।। वहां चमत्कार देखो। एक फकीर मरने के कगार पर प्यास से बहुत व्याकुल था बोला घूट भर पानी पीने के लिए दे दो ।। 139 ।। अमीर को दया आ गयी। पानी पिलाने के लिए गये । पानी पीते क्षण उसी स्थान पर शरीर निश्चेष्ट हो गया ।। 140 ।। उसका देहावसान हो गया। आसपास कोई नहीं था वह भी रात्रि का समय देखकर अमीर का मन घबड़ा गया ।। 141 ।। प्रातःकाल मृत्यु के कारण की पूछताछ होगी। उस आकस्मिक मृत्यु के संबंध में धरपकड़ शुरू होगी सरकार जांच करायेगी ।। 142 ।। यद्यपि जो घटित हुआ है, सत्य है एकदम, कौन विश्वास करेगा? किन्तु निर्णय साक्ष व प्रमाण पर निर्भर करता है। ऐसा ही न्याय है ।। 143 ।। मैंने ही उसे पानी पिलाया फकीर अचानक जीवन से मुक्त हो गया । ऐसी सत्य वार्ता मेरे द्वारा बताने पर अपना हाथ आसानी से लिप्त हो जायेगा।। 144 ।। पहले मेरा संबंध आयेगा । उस संबंध से मुझे पकड़ेंगे ! फिर मृत्यु का वास्तविक कारण सुनिश्चित होने पर मैं निरपराध ठहराया जाऊँगा ।। 145 ।। किन्तु यह सुनिश्चित होने तक की अवधि में हाल दुःसह हो जायेगा । जैसे आये वापस भागने का तत्काल निश्चय किया ।। 146 ।। इसलिए अमीर रातोंरात वहां से निकल पड़े। कोई देख न ले । मार्ग भर चंचल चित्त आगे जाते, पीछे देखते ।। 147 ।। चावडी कैसे पहुंचेंगे, तब तक मन निश्चिंत नहीं होगा । ऐसी शंकावृत्ति अमीर की थी। शिरडी के लिए चल दिये ।। 148 ।। बोले, "बाबा यह क्या कर दिया । यह कौन पाप मुझे खींच लाया । मेरा कर्म मुझे फलित हो रहा है, यह मैं पूर्णरूप से समझ रहा हूं ।। 149 ।। सुख के लिए चावडी छोड़ दी। इसीलिए मुझे दण्ड दिया है। अतः अब इस दुःख को दूर करो । मुसीबत से बचाकर शिरडी ले चलो ।। 150 ।। तुरंत तैयारी की । अमीर रातोंरात निकल पड़े, धर्मशाला में उस रात वहां वैसे ही मृत शरीर छोड़कर ।। 151 ।। "बाबा बाबा" मुख से बोलते हुए, क्षमा करो, करुणा करो बोलते हुए जब चावडी पहुंचे अन्त में चित्त स्थिर हुआ ।। 152

।। संक्षेप में यह एक सबक था। तब से सतर्क हो गये। तत्पश्चात असत्य कुमार्ग छोड़कर सत्य मार्ग पर चलने लगे ।। 153 ।। इस प्रकार विश्वास के गुण स्वरूप गठिया से मुक्ति मिली। फिर कैसा प्रसंग आता है कैसे घटित होता है उसे सुनें ।। 154 ।। चावडी तीन भागों में बंटी थी। आग्नेय कोण बाबा का स्थान था, लकड़ी के तख्ते से चारों ओर से घिरा हुआ । वहां बाबा शयन करते ।। 155 ।। पूरी रात बत्ती जलती रहती। सदैव उजाले में सोते । फकीर फुकरे बाहर बैठते । बाह्य स्थान में अंधकार होता ।। 156 ।। अमीर उनमें से एक जाना जाता । आजू-बाजू अन्य लोग थे। वे भी वहीं लेटते । ऐसे अनेक थे ।। 157 ।। वहीं बाबा के पीछे हिस्से में सरसमान रखने की जगह थी। भक्त अब्दुल परम विरागी (इच्छा विहीन), सेवा के लिए सशरीर तार ।। 158 ।। ऐसे में ही मध्यरात्रि में बाबा अब्दुल के लिए आवाज लगाने लगे। बोले, "मेरे बिछावन के पास भूत परेशान कर रहा है ।। 159।। हाँक पर हाँक देने लगे। अब्दुल बत्ती हाथ में लेकर आया । बाबा ऊँचे स्वर में उससे बोले "वह अभी यहीं था" ।। 160 ।। अब्दुल बोले, "सारा देख लिया यहां कुछ नहीं दिख रहा है।" बाबा बोले, "आँखें खोलकर ठीक से सब जगह देखो ।। 161 ।।" अब्दुल बार-बार देखने लगा | बाबा सटके से जमीन पर मारने लगे। बाहर सो रहे सभी लोग जागृत होकर देखने लगे ।। 162 ।। अमीर शक्कर जाग गये। बोले आज क्या कहर हो गया। यह रात्रि के असमय में सटके का प्रहार बार-बार क्यों भला हो रहा है ।। 163 ।। बाबा की लीला देखकर अमीर तत्काल मन में निष्कर्ष निकाल लिए ,सर्प कहीं प्रवेश कर गया है। बाबा को इसका ज्ञान हो गया है ।। 164 ।। उन्हें बाबा का बहुत अनुभव था, बाबा का स्वभाव और उनका बोलने का ढंग। इससे वह सब समझ गये ।। 165 ।। जब अरिष्ट भक्तों के सिरहाने होता बाबा बोलते," वह उनके पास खड़ा है। अमीर भाषा से अवगत थे। इसी से उन्होंने अपने मन में निष्कर्ष निकाल लिया ।। 166 ।। अचानक उन्हीं के सिरहाने कुछ रेंगते हुए पर दृष्टि पड़ी। अमीर तेज आवाज में बोले, "अब्दुल बत्ती रे बत्ती इधर" ।। 167 ।। बत्ती बाहर आने पर बड़ा सांप पसरा हुआ दिखा ।। प्रकाश से वह विषधर चुंधिया गया। अपना फन ऊपर नीचे करने लगा ।। 168 ।। वहीं पर उसको शांत कर दिया गया। बाबा का बहुत उपकार मानते हुए लोग बोले, "क्या विलक्षण पद्धति है, कैसी जागृति देते हैं" ।। 169 ।। कैसा भूत? कैसी बत्ती? सकट के समय जागृति देने के लिए, अपने भक्तों को संकट से मुक्ति देने के लिए, यह युक्ति थी ।। 170 ।। ऐसी सांपों की अगणित कथायें बाबा के चरित्र वर्णन में आयेंगी। ग्रन्थ की अति विस्तारता हो जायेगी। अतः संक्षेप में प्रस्तत करेंगे ।। 171 ।। "सर्प बिच्छू नारायण हैं" साधु तुकाराम के वचन हैं। "किन्तु वे सब दूर से वंदनीय हैं, ये भी उन्हीं के वचन हैं" ।। 172 ।। वही उन्हें "अधर्म" कहते हैं, उनको "जूतों से काम" | उनके संबंध में व्यवहार का क्रम स्थायी निर्बन्ध समझ में नहीं आता ।। 173 ।। जिसका जैसा स्वभाव धर्म, तदनुसार उसका कर्म । जैसा ईश्वरी विधान । यही यहां का मर्म है ।। 174 ।। इस शंका का समाधान बाबा के पास एक

ही था। जीवमात्र सब समान है, सभी के लिए अहिंसा का नियम है।। 175 ।। क्या बिच्छू, क्या सर्प ईश्वर सभी में बसते हैं, उसकी इच्छा न होने पर अपाय उनका क्या कर लेगी।। 176 ।। यह सारा जगत ईश्वर के अधीन है यहां कुछ भी स्वतंत्र नहीं है। यह बाबा का अनुभव ज्ञान था। हमारा दुरभिमान हमें छोड़ता नहीं ।। 177 ।। पानी के टैंक में पड़ा बिच्छू छटपटाता है। पानी की तली में नीचे चला जाता है। एक आनन्द से ताली बजाता कहता है तू ऐसा ही यंत्रणा देता है ।। 178 ।। एक उस ताली को सुनकर दौड़ता हुआ देखने के लिए टैंक तक आता है बिच्छू को बार बार नीचे डूबते उतराते देख करुणा से द्रवित हो जाता है।। 179 ।। फिर वह उसके पास जाकर बिच्छू को, धीरे से ही, चुटकी से पकड़ता है। इससे अचानक क्रोधित होकर जाति स्वभाववश अंगुली में डंक मार देता है।। 180 ।। यह हमारा ज्ञान क्या है ? हम सर्वथा पराधीन हैं। बुद्धिदाता नारायण हैं। वास्तव में यह स्वयं घटित होता है (जैसा ईश्वर चाहता है)।। 181 ।। अनेक के अनेक अनुभव हैं मैं भी अपना अनुभव कहता हूँ । साईं वचन पर सम्मानपूर्ण विश्वास करें। केवल निष्ठा से वैभव है ।। 182 ।। काका साहेब दीक्षित जैसे नित्य दिवस नाथ भागवत बांचते, वैसे वे प्रति रात्रि को भावार्थ रामायण (एकनाथ महाराजकृत) पढ़ते ।। 183 ।। देवता के लिए फूल टल सकता था, एक समय का स्नान टल सकता था, अन्य सभी नियम टल सकते थे, पाठन का समय नहीं टल सकता था ।। 184 ।। ये दोनों ही ग्रन्थ “एकनाथ महाराज" के हैं। परमार्थ का सर्वस्व सार है। समर्थसाईं के दीक्षित के प्रति अनुग्रह का वास्तव में द्योतक था ।। 185 ।। ये अद्वितीय आनन्दप्रद ग्रन्थ हैं। आत्मज्ञान व वैराग की नीति है, जिनकी अखंड त्रिगुण ज्योति दिव्य दीप्ति प्रकाशित होती है ।। 186 ।। जिस भाग्यवान के ओठों तक बोधामृत का प्याला आता है, उसका त्रिताप तुरंत शमित होता है। मोक्ष पावों में लगता है ।। 187 ।। साईकृपा से दीक्षित को श्रवण के लिए एक श्रोता चाहिए था। भागवत श्रवण का योग प्राप्त हुआ। मेरे ऊपर उनका उपकार हुआ ।। 188 ।। दिन रात जाने लगा, उस पवित्र कथा को सुनने के लिए | भाग्य से श्रवण सत्र प्रारम्भ हुआ। जिससे श्रम पावन हो गये ।। 189 ।। इस प्रकार ऐसी ही एक रात पवित्र कथा चल रही थी एक विचित्र घटना घटी। श्रोता इस चरित्र को सुनें ।। 190 ।। क्या करूं? एक का गुणगान करते हैं मध्य में ही दूसरी का स्मरण चित्त में हो जाता है। उसकी श्रवणार्थता जानकर किसलिए मुझसे उपेक्षित हो ।। 191 ।। सुरस रामायणी कथा चल रही थी। माता (द्वारा बताये गये) चिह्न से हनुमान संतुष्ट थे फिर भी स्वामी की समर्थता की परीक्षा लेने में अन्त में अनर्थता भोगनी पड़ी ।। 192।। रामबाण के पिछले हिस्से की हवा लगने से हनुमान आकाश में चक्कर लगाते फिरे। प्राण घबड़ाकर संतप्त हो गया। उस अवसर पर पिता (वायु) पदार्पण किये ।। 193 ।। उनके हित वचन सुनकर हनुमंत राम की शरण में आये। इस भाग का श्रवण हो रहा था, विलक्षण घटित हुआ उसे सुनो ।। 194 ।। चित्त कथा श्रवण में संलग्न था। सभी श्रवणानंद में मग्न थे। एक विघ्न मूर्ति बिच्छू

कैसे उत्पन्न हो गया।। 195 ।। मालूम नहीं । उसकी क्या रुचि थी। बिना मेरे ज्ञान के मेरे कंधे पर कूद कर छुपकर बैठ गया। कथा का मधुर रस चखने लगा।। 196 ।। यहां भी बाबा का साथ है। मेरे द्वारा उसका ध्यान नहीं दिया गया। किन्तु जो हरिकथा में । (तत्पर) दक्ष है उसके संरक्षक स्वयं हरि हैं।। 197 ।। सहज ही मेरी नजर गयी, भयंकर बिच्छू मेरे दक्षिण कंधे पर उपर्ण (आंचल) पर सुस्थिर देखा ।। 198 ।। न चलन व वलन, स्थिर चित्त दत्तावधान, जानो श्रवण परायण श्रोता स्थिर अपने आसन पर बैठा हो ।। 199 ।। अनावश्यक देहस्वभावानुसार पूंछ को थोड़ा भी हिला देता, तो बैठने न देता; बिल्कुल नियंत्रणीय दुःख देता ।। 200 ।। रामकथा रुचिकर हो रही थी, श्रोता वक्ता पोथी में ध्यानस्थ थे। सभी का रंगभंग हो जाता, ऐसी यह दुर्धर कुसंगति थी ।। 201 ।। रामकथा की ही महिमा है। विघ्न, का वहां प्रभाव नहीं होता है, तृप्ति को प्राप्त होती है अपने धर्म (स्वाभाव) को बिसरा कर ।। 202 ।। राम की कृपा से उस समस्या को धीरे से दूर फेंकने की बुद्धि मुझे आयी। चंचल बुद्धि प्राणी पर चरम सीमा होने तक विश्वास नहीं किया जा सकता था ।। 203 ।। कंधे पर पड़े हुए उपर्ण के दोनों किनारों को धीरे से पकड़ा उसके अंदर बिच्छू को दृढ़ता से लपेटा, बाग में ले जाकर खोल दिया।। 204।। बिच्छू जाति ही भयंकर है, जाति स्वभाव के अनुसार किसी समय व्यवहार कर सकता है। मेरा भय सही था, किन्तु बाबा की आज्ञा भी स्पष्ट थी मारने का साहस नहीं हुआ ।। 205 ।। यहां श्रोताओं को सहज शंका होती है। घातक बिच्छू वध्य नहीं है क्या? डंक मारकर क्या वह सुख देता है? यह समझ में नहीं आता कि क्यों न मारें ।। 206 ।। सर्प व बिच्छू विषैले प्राणी हैं। कभी कोई उनकी उपेक्षा नहीं करता। बाबा क्यों इन्हें छोड़ने के लिए कहते हैं ।। 207 ।। श्रोताओं की शंका सही है। मेरी भी यही थी, किन्तु ऐसे ही पूर्व प्रसंग के अंदर बाबा के वचन सुनो ।। 208 ।। इससे भी विकट प्रश्न था । शिरडी में काका के वाड़ा में एक बार ऊपर के तल्ले पर खिड़की के निकट प्रकट होकर विकट सांप दिखायी पड़ा ।। 209 ।। चौखट के नीचे छिद्रद्वार से सांप भीतर प्रवेश कर गया। दीपक की ज्योति से चुंधिया कर कुंडली मारकर बैठ गया ।। 210 ।। यद्यपि दीप के प्रकाश से चुंधिया गया था, मनुष्यों के चलने फिरने से चकित था । भीड़ होने से चकित था । एक क्षण के लिए शांत रहा ।। 211 ।। न पीछे जाये न आगे आये सर अपना ऊपर नीचे करता। फिर एक ही अनिश्चित जल्दबाजी थी कि कैसे उपायसे मारा जाये ।। 212 ।। किसी ने डंडा किसी ने काठी उठायी, तुरंत आये। उसके लिए जगह संकरी थी बहुत कष्ट था ।। 213 ।। सहज ही एक सरपट मारता और दीवाल के नीचे उतरता । पहले मेरे ही बिछावन की गठरी में गडमड करता। बड़ा संकट टल गया ।। 214 ।। यदि उसे कोमल स्थान पर घाव लग जाता, उसे (काट) कर क्षति पहुंचाकर बदला चुकाता। उसका स्थान देखने के लिए बत्ती आयी तब तक उसे अवसर मिल गया।। 215 ।। उसका समय नहीं आया था। हम सब का भाग्य भी सबल था, यद्यपि वह समय संकटपूर्ण था, बाबा ने रक्षा की ।। 216 ।। जिस मार्ग से

त्वरित आगमन किया था उसी से तुरंत बाहर चला गया। स्वयं निर्भय, अन्य भी निर्भय, परस्पर सुख बांटते हुए ।। 217 ।। फिर मुक्ताराम उठे, बोले, "बेचारा, अच्छा हुआ निकल गया। उस छिद्र द्वार से न निकल जाता, अपने प्राण खो देता" ।। 218 ।। मुक्ताराम की दयार्द्र दृष्टि देखकर मेरे मन में कष्ट हुआ । दुष्टों के प्रति दया किस काम की। सृष्टि कैसे चलेगी ।। 219 ।। मुक्ताराम यहां यदाकदा होते हैं, हम यहां सांझ सवेरे बैठेते हैं, मेरा तो बिस्तरबंद खिड़की के निकट था, मुझे उनकी बोली अच्छी नहीं लगी ।। 220 ।। पूर्व पक्ष उन्होंने कहा उत्तर पक्ष मैंने उचित ठहराया । वाद विवाद बढ़ गया। निर्णय वैसे ही रह गया ।। 221 ।। एक बोलता सांप को मार देना चाहिए। एक भी क्षण की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। दूसरा बोलता निरपराध जीव है क्यों शत्रुभाव रखते हो ।। 222 ।। एक मुक्ताराम को धिक्कारता दूसरा मुझे बढ़ावा देता। वाद परस्पर बढ़ गया अन्त नहीं हो रहा था ।। 223 ।। मुक्ताराम नीचे चले गये। मैंने अपनी जगह बदल ली । छिद्र में एक डाट लगा दी। सोने के लिए बिस्तर खोल लिया ।। 224 ।। आँखें निंदासी होने लगीं। लोग सोने चले गये। मुझे भी जम्हाई आने लगी। वाद अपने आप थम गया ।। 225 ।। रात के बाद उजाला हुआ । शौच मुखार्जन समाप्त कर लिया। बाबा लेंडी से वापस आ गये। लोग मस्जिद में एकत्र हो गये ।। 226 ।। नित्य की भांति प्रातःकाल नित्य के समय मस्जिद आया। मुक्ताराम आदि सर्वमण्डली आकर अपने-अपने स्थान पर बैठ गयी ।। 227 ।। कोई हाथ से तम्बाकू मसल रहा था, कोई बाबा की चिलम भर रहा था, कोई उनके हाथ पांव दबा रहा था। सेवा इस प्रकार हो रही थी ।। 228 ।। बाबा सभी की वृत्ति से अवगत थे। फिर उन्होंने धीरे से प्रश्न पूछा, "वाद विवाद वह क्या हो रहा था । वह गतरात्रि वाडे में" ।। 229 ।। फिर मैंने जो जो जैसे घटित हुआ था वैसे-वैसे बाबा से कह दिया । पूछा कि सर्प का इस स्थिति में अचानक मारना चाहिए या नहीं मारना चाहिए ।। 230 ।। बाबा का एक ही उत्तर "**यद्यपि सर्प हो या बिच्छू फिर भी ईश्वर सभी के अंदर रहता है। सभी के लिए प्रेम करो ।। 231 ।। ईश्वर जग का सूत्रधार है। उसी की आज्ञा से सारा व्यवहार होता है फिर सर्प बिच्छ क्यों न हो, आज्ञा के विपरीत व्यवहार नहीं करेगा ।। 232 ।। इसलिए प्राणी मात्र के प्रति प्रेम और दया करो, हिंसा छोड़ सबूरी धारण करो। श्री हरि सबकी रक्षा करते हैं" ।। 233 ।।** इस प्रकार कितनी ही कथायें साईंबाबा की यहां कही जायेंगी। इसलिए इनका सारतत्व लेने के लिए श्रोता ध्यान करें ।। 234 ।। अगला अध्याय इससे भी मधुर है। भक्ति व श्रद्धा का वह जोड़ है भक्त श्री हरी सीताराम दीक्षित का कठिन प्रसंग है, बकरा मारने के लिए तैयार होने का ।। 235 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्री साईसच्चरित का "अपमृत्यु निवारण" नामक बाइसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। तेइसवां अध्याय.(गुरु भक्त लीला दर्शन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

यह जीवात्मा वस्तुतः सत् रज तम तीनों गुणों से परे है। किन्तु माया से विमोहित होकर, सत्, चिद, आनन्द, अपने रूप को विसार कर अपने को देह मान लेता है ।। 1 ।। फिर इस देह के अभिमान से "मैं कर्ता, मैं भोक्ता" मानने लगता है। निरंतर अनर्थ से त्रस्त रहता है। बचने का मार्ग ज्ञात नहीं होता ।। 2 ।। गुरु के चरणों में सप्रेम भक्ति योग ही एक अनर्थ का उपशम करने वाला मार्ग है। साईं श्री रंग (श्रीकृष्ण), महानाटक कार हैं। भक्तों को अपने रंग में रंग लेते हैं ।। 3 ।। हमें उन्हें अवतार मानना चाहिए । कारण उनमें सारे लक्षण हैं। परंतु अपने लिए बोलते हैं, "मैं अल्लाह की शरण में हूं" ।। 4 ।। यद्यपि स्वयं अवतार | पूर्ण लोकाचार दिखाते। शुद्ध वर्णाश्रम आचार का उचित प्रचार चलता रहता ।। 5 ।। कभी किसी से बराबरी न करते न दूसरों को करने देते । चर अचर में जिसने विश्वम्भर को देखा है उसे विनय शोभा देता है ।। 6 ।। न किसी की अवगणना करते, न किसी को तुच्छ समझते। भूतमात्र में नारायण चैतन्यघन को वे देखते ।। 7 ।। कभी नहीं कहा, **"मैं परमेश्वर (अनल हक्क) हूं।**" नित्य जपते "**मैं परमेश्वर का एक दास हूं। मैं गरीब परमेश्वर की इबादत में हूं, (यादे हक्क)। अल्लाह मालिक" ।। 8 ।।** किसी संत की क्या जाति है, कैसे बर्ताव करता है, क्या खाता है, इससे उसकी स्थिति नहीं आंकते । वह तो सर्वदा इनसे परे होता है ।। 9 ।। जड़ जीवों के उद्धार के लिए परोपकारी संतों का अवतार होता है, पृथ्वी पर सर्वेश्वर की कृपा से ।। 10 ।। यदि पूर्व कर्मों के पुण्य संचित हैं तभी संतों की कहानियाँ सुनकर सुख संतुष्टि पाने की रुचि उदित होगी ।। 11 ।। एक बार एक योगाभ्यासी साथ में चांदोरकर को लेकर आया । बाबा के दर्शन के लिए मस्जिद में आकर खड़ा हो गया ।। 12 ।। पंतजलि के योगशास्त्र का सम्पूर्ण अभ्यास किया था । देखा जाये तो उसके अनुभव विचित्र थे। क्षण मात्र के लिए समाधि नहीं साध पाता था ।। 13 ।। महाराज साईं योगेश्वर हैं। मुझ पर यदि कृपा हो जाये मेरी शंका दूर हो जायेगी। समाधि निश्चित रूप से लग जायेगी ।। 14।। अतः ऐसा उद्देश्य लेकर साईं के दर्शन करने आया। वह प्याज के साथ भाकर (रोटी) बैठे हुए खा रहे

थे ।। 1 5 ।। अपने सम्मुख बासी सूखी रोटी व प्याज मुख में डालते देखा। यह क्या मेरी शंका का निवारण करेंगे। प्रबल आशंका का उद्भव हुआ ।। 1 6 ।। उनके मन में संदेह उत्पन्न हुआ। साईं महाराज अन्तर्ज्ञानी हैं। बोले बाबा, "**प्याज जिसे पचे उसी को खाना चाहिए ।। 17 ।। पचाने की शक्ति हो, उसी को प्याज खानी चाहिए, निर्भय होकर।"** सुनकर योगी मन में चकरा गया। सद्भाव के साथ शरण में चला गया ।। 18 ।। इसके बाद वह योगाभ्यासी आकर बाबा की गादी के पास बैठा | शंकाविहीन अन्त:करण के साथ बाबा के पास बैठा ।। 19।। सावधानीपूर्वक पूछा । शंका समाधान पाया । ऊदी व आशीर्वचन का लाभ लेकर प्रसन्न मन वापस चला गया ।। 20 ।। ऐसी ही और बहुत सी कथाएं हैं। भक्ति भाव के साथ श्रवण करने पर दुःख मोह आदि अनर्थो का उपशमन भक्त तुरंत प्राप्त करेगा ।। 21 ।। कितना ही अल्प जलाशय हो, अतिशय दुर्गन्ध युक्त भी हो, उसी में अतिशयरहित सुख, सूअर बिना संशय के मानता है ।। 22 ।। जीव व शुक एक ही प्रकार से हैं। एक शरीर में, दूसरा पिंजड़े में । यद्यपि शुक स्वतंत्रता खो चुका है, उस परतंत्रता को अच्छा मानता है ।। 23 ।। शुक कूपमंडूक सम है। पिंजड़े में ही उसका सारा सुख है। स्वातन्त्र्य का कौतूक नहीं जानता। सकाम जीव भी वैसा ही है ।। 24 ।। कितना मजेदार है मेरा पिजड़ा। सुवर्ण डण्डी पर बार-बार आना यदि मैं उलटे टंग जाऊँ, अच्छे भले, फिर भी पांव छटेगा नहीं ।। 25 ।। पर बाहर यह सुख खो देंगे। फिर न तो अनार का दाना न ही स्वादिष्ट मिरची खाने को । स्वसुख स्वयं ही लुटाना ।। 26 ।। किन्तु शुक की घड़ी (अच्छा समय) आते ही अघटित घड़ी से उसकी भेंट होती है। उसे प्रेम से थपकी मारती है। आँखों में अंजन लगाती है ।। 2 7 ।। उस थपकी के शक्तिपात से नेत्रपात खुलते ही शुक निकल भागता है, पंख की वायु से विहार करने लगता है। कौन फिर उसे नियन्त्रित कर सकता है ।। 28 ।। विस्तृत जगत उसके लिए खुला है। यथेच्छ अनार व अमरूद के बाग हैं खुले गगन में स्वच्छन्द बिहार। फिर स्वतन्त्रता के उत्सव का आनन्द लेता है ।। 29।। वैसी ही इस जीव की स्थिति है। ईश्वर के अनुग्रह से गुरु की प्राप्ति होती है। दोनों लाभ होने पर बंधनमुक्ति होती है। स्वातन्त्र्य मुक्ति का अनुभव होता है ।। 30 ॥ अब क्षणभर ध्यानस्थ होकर, भाविक श्रोता, तुम सब शुद्ध प्रेम की रसमय कथा क्या सुनोगे ।। 31 ।। पिछले अध्याय में चमत्कार, शामा को साथ के लिए देकर चिथली के दौरे पर बाबा ने मिरीकर को भेजा ।। 32 ।। साईं ने भविष्य जानकर सांप के विघ्न से मिरीकर को सावधान करके समय से संकट की सूचना दे दी ।। 33 ।। केवल सूचना ही नहीं थी। निवारणार्थ उपाय भी योजित किया। इसीलिए गले नहीं बांध दिया (शामा को भेजा),

मिरीकर की संकट से रक्षा करने के लिए ।। 34 ।। बाबा भक्त कल्याण में तत्पर रहते । बाला साहेब मिरीकर का संकट टालकर विचित्र अनुभव कराया ।। 35 ।। वहीं शामा की स्थिति देखो। अचानक सर्पदंश हुआ । जीव के बचने की आशा ही नहीं थी। बाबा ने निर्मुक्त किया ।। 36 ।। वह भी एक बाबा की लीला है। पहले कहता हूं श्रोताओं के लिए । यद्यपि सांप ने डस लिया था। उपाय क्या किया देखो ।। 37 ।। रात्रि का समय था । हाथ की कनिष्ठिका में एकाएक सांप ने डस लिया। वह भाग विषदग्ध हो गया ।। 38 ।। वेदना अत्यन्त असह्य हो गयी। प्राणान्त होने को था। माधवराव भयभीत हो गये। अन्तर्मन चिंतित होने लगा ।। 39 ।। उनके अंग (शरीर) लाल हो गये। संबंधी व मित्र सभी एकत्र हो गये। विरोबा (विरोबा शंकर भगवान का एक स्थान है वहां सर्पदंश से पीड़ित जीव को लाभ होता है) की ओर चलने को कहा। जीवन संकट में पड़ गया ।। 40 ।। नाना साहेब निमोणकर आगे आये, बोले, "ऊदी लेकर जाओ।" माधवराव मस्जिद को दौड़े। बाबा ने क्या किया ।। 41 ।। बाबा की आँखों से आँखें मिलते ही, देखो बाबा का चमत्कार। अत्यधिक गाली देने लगे। उन्हें ऊपर तक आने नहीं दिया ।। 42 ।। "भटुरड़या (क्रोध में ब्राह्मण को किया गया संबोधन)। ऊपर चढ़ना नहीं। खबरदार यदि चढ़े तो। चल निकल जा। नीचे उतर ।" दीर्घस्वर में गर्जन किया ।। 43 । बाबा का क्रोध अति अद्भुत था । अकल्पित आग उगलने (फटकने) लगे। माधवराव चकितहो गये। किस प्रयोजन से कटु वचन निकाल रहे हैं ।। 44 ।। ऐसा ढंग देखकर माधवराव बहुत घबराये। कुछ भी विचार सोच नहीं पा रहे थे। बैठ गये नीचे सिटपिटाकर ।। 45 ।। देवा (बाबा) भी जब क्रोधित हो गये हैं, जब बाबा ने दुत्कार दिया, सभी उपाय व्यर्थ हो गये, माधवराव का हृदय बैठने लगा ।। 46 ।। कौन नहीं घबड़ा जायेगा, दुर्धर क्रोध वृत्ति देखकर, गालियों व बद्दुआओं की भरमार सुनकर । प्रसंग भयंकर हो गया ।। 47 ।। **"यह मस्जिद मेरी माँ का घर है। मैं साईं का अपना (पेट का) बच्चा । ऐसा होते हुए माँ का बच्चे के प्रति, आज अत्यधिक क्रोध क्यों?" ।। 48 ।। सर्प डसने की परिवेदना माँ के अतिरिक्त कौन स्वीकारेगा किन्तु वही जब पदाघात करके मार दिये तो कारुणिक मुंह बना लिया ।। 49 ।। बालक जैसे माता के निकट होता है वैसे ही माधवराव बाबा के लिए थे। यह नाता रातदिन होने पर आज ही यह स्थिति कैसी ।। 50 ।। माता जब पदाघात करके मारे तो बच्चे की कौन रखवाली करेगा।"** माधवराव ने उस समय जीवित रहने की आशा का परित्याग कर दिया ।। 51 ।। कुछ समय व्यतीत होने पर, बाबा के शांत होने पर माधवराव को हिम्मत हुई तब उनके पास जाकर बैठ गये ।। 52 ।। बाबा बोले, **"हिम्मत न छोड़ो। मन**

में कुछ भी फिक्र मत करो। फिक्र छोड़ो। अच्छा होगा । दयालु फकीर संभालेगा ।। 53 ।। घर जाकर निश्चित बैठो। घर के बाहर नहीं जाने का । निर्भय निश्चित मन रहो। मुझ पर विश्वास धारण करो" ।। 54 ।। फिर उनके घर वापस पहुंचते ही बाबा ने तात्या, गणपत पाटिल काते को भेजा संदेश के साथ समाचार लेने के लिए ।। 55 ।। "**उससे कहो सोने का नहीं । घर के अंदर ही टहलते रहें। वे जो चाहे प्रसन्नता से खावें । इतना भर संभल कर रहें" ।। 56 ।।** उस रात काका साहेब दीक्षित से भी बाबा ने कहा, "**रात्रि में उसे लहर आयेगी। सोने नहीं देने का**" ।। 57 ।। इस प्रकार ऐसी सावधानी रखने पर बाधा दूर भाग गयी । वास्तव में, थोड़ी जलन रह गयी थी, अंगुली के भीतर विष होने से ।। 58 ।। बाद में वह भी अच्छी हो गयी। कैसी भयंकर बेला टल गयी। ऐसी दयालु है साईं माँ । भक्तों के लिए कृपा करने के लिए उत्प्रेरित रहते हैं ।। 59।। "भटुरइया ऊपर चढ़ना नहीं" ऐसे बाबा के शब्द प्रहार। क्या वे माधवराव के लिए बाबा ने छोड़े थे ।। 60 ।। माधवराव को अनुलक्षित करके वे शब्द उन्हें उद्देश्य करके नहीं थे, डसने वाले सांप के लिए थे। आज्ञा का पालन तीव्रता से हुआ।। 61 ।। "खबरदार यदि चढ़े तो" साईं मुख से यह प्रखर आज्ञा । विष का संचार उसी जगह स्थिर हो गया आगे की गति रुक गयी ।। 62 ।। जैसे इतना पर्याप्त न हो। "चल निकल जा, नीचे उतर" यह साईं का पंचाक्षरी मंत्र था, तत्काल विष को उतारने के लिए ।। 63 ।। दूसरे साधनों - लौकिक मंत्री अथवा पंचाक्षरी - को प्रयोग में लाये बिना, ऐसे ही, साईं भक्त को संकट में विभिन्न प्रकार से संरक्षण देते ।। 64 ।। न ही मन्त्रावर्तन करते। न ही चावल पानी को अभिमंत्रित करते । न ही पानी के छींटे मारते । फिर भी विष कैसे उतरता ।। 65 ।। क्या यह चमत्कार नहीं है। केवल संत मुखोद्गार । माधवराव का संकट कम होने लगा। उनकी कृपा का पार नहीं है ।। 66 ।। अब गत अध्याय में सूचित अद्भुत और सुरस कथा । श्रोता दत्तचित्त होकर आदि व अन्त के साथ उसे सुनें अब ।। 67 ।। पूर्व अध्याय में वर्णित कथा से भी अधिक यह अद्भुत है। साईं कैसी लीला करते थे श्रोताओं के लिए वर्णन किया जायेगा ।।68 ।। ये सुरस कथानक सुनकर गुरु के वचन एकत्र होकर मस्तिष्क पर छप जायेंगे। कर्म, अकर्म, विकर्म स्पष्ट हो जायेगा। गुरुचरणों में श्रद्धा बैठ जायेगी ।। 69।। सरल से भी सरल उपाय हैं । हृदय में स्मरण करो साई चरणों को । यही एक तरण का उपाय है। माया धुंध स्पष्ट हो जायेगी ।। 70 ।। संसार का भय बहुत बड़ा है। यह विक्षोभ माया से उत्पन्न होता है। कथा श्रवण से दो टुकड़े हो जायेगी अखंड आनन्द से जुड़ जाओगे ।। 7 1 ।। एक बार शिरडी में महामारी आयी। ग्रामीण अंदर से भयभीत हो गये। आना जाना

सारा बंद कर देने के उद्देश्य से नगाड़े पीटने का एक विचार हुआ ।। 72 ।। महामारी का बहुत आतंक था। ग्रामवासी भयभीत थे। दूसरे स्थानों के लोगों से संबंध विच्छेद कर लिया था। सारा व्यवसाय बंद पड़ा था ।। 73 ।। महामारी जब तक गांव में चलती है किसी को बकरा नहीं मारना था। सीमा के अंदर कोई गाड़ी नहीं आने देनी थी । नियम सभी को व्यवहार में लाना था ।। 74 ।। ग्रामवासियों का यह ईश्वर के प्रति अंधविश्वास था । बाबा मूलतः नापसंद करते, मना करते । उनके मत से यह कुकल्पना थी, लोगों का अनाड़ीपन था ।। 75 ।। वहां उनके द्वारा नियमन कराया जाता बाबा उस पर खटाई डाल देते। कैसे कैसे वे करते सादर मन होकर सुनें ।। 76 ।। ग्रामपंचों का इस संकल्प का ग्रामवासी सच्चाई से अनुपालन करते। जो नियम को थोड़ा भी भंग करता दंड देने के बाद ही मुक्त होता है ।। 77 ।। बाबा को दंड का भय नहीं था। वे सदा सर्वदा निर्भय रहते । हरि चरणों से जुड़कर उनमें लय हो गये थे। संकटपूर्ण काल में भी सदैव दुर्गम रहते ।। 78।। एक बार एक दूसरे गांव की गाड़ी, जिसमें जलावन की लकड़ी भरी थी सीमा पर आकर संकट में पड़ गयी। लोग अनुचित व्यवहार करने लगे ।। 79।। लकड़ी की वहां कमी थी ग्रामीण इसे मन से जानते थे। किन्तु नियमोल्लंघन की अनुचितता से वे सभी उदास चित्त थे ।। 80 ।। गाड़ीवान की ओर बढ़े और उसकी गाड़ी वापस करने लगे। यह समाचार बाबा को ज्ञात हुआ। आखिरकार उस स्थान पर पहुंच गये ।। 81 ।। स्वयं गाड़ी के आगे खड़े हो गये। गाड़ीवाले की हिम्मत बढ़ गयी। ग्रामवासियों का दुराग्रह टूट गया गाड़ी सीमा के अंदर आ गयी ।। 82 ।। वहां से वह मण्डपद्वार पर । मण्डप के भीतर लाकर खाली करा दिया। किन्तु किसी के मुंह के बाहर एक शब्द नहीं आया ।। 83 ।। ग्रीष्म, शरद , हेमन्त, वर्षा या बसंत ऋतु हो, मस्जिद में आठों प्रहर बाबा की धूनी जलती रहती ।। 84 ।। क्या विचित्र संकल्प था बाबा का ? अग्निहोत्री के अग्निहोत्र की ही भांति रातदिन प्रज्ज्वलित रहती वह बाबा की पवित्र धूनी ।। 85 ।। केवल इस धूनी के लिए बिकने के लिए उपलब्ध लकड़ी के टुकड़े खरीद कर बाबा मंडप में सामने दीवार से ढेर लगाते ।। 86 ।। बाजार के अवसर का लाभ उठाकर बाबा लकड़ी एकत्र कर लेते। उस पर पड़ोसियों की स्वार्थी आँखें लगी रहती। दुलर्भ भोलापन था ।। 87 ।। "बाबा चूल्हे के लिए लकड़ी नहीं है। लकड़ी के बिना चूल्हा नहीं जलेगा" | ऐसे जो असत्य बोलते उन्हें भी लकड़ी बांट देते ।। 88 ।। स्वार्थी जन जाति से अपकारी होते हैं, सभा मण्डप में दरवाजा नहीं था। उससे गरजू व धोखेबाज को एक समान अवसर मिलता था ।। 89 ।। बाबा अत्यन्त परोपकारी थे। उनके बड़प्पन का क्या वर्णन करें। बाहर से वे उग्र

दिखते किन्तु अंदर से अति सौम्य ।। 90 ।। उनकी महिमा अगाध है। जब वाणी निरभिमान हो जाये, उनके चरणों का अभिवंदन करें, तब ही डुबकी लगा सकेगी ।।91 ।। विश्वंभर चर-अचर में व्याप्त होकर भी शेष बनकर रहते हैं, यह निरंतर विचार करते हुए किसी से वैर न करो ।। 92 ।। सर्वसृष्टि उसी से भरी है दसों दिशायें आगे पीछे। किसी के प्रति वक्र दृष्टि करने से उसे कष्ट होता है ।। 93 ।। वैराग्य को पूर्णरूप से प्राप्त होने के बाद भी, स्वयं लोक संग्रह के लिए गृहस्थ की भांति आचरण करते आश्रितों (भक्तों) को शिक्षा देने के लिए ।। 94 ।। इस महात्मा की क्या सरलता थी, सुनकर चित्त आश्चर्यचकित रह जायेगा। उनकी भक्त प्रेमलता दिखने लगेगी। उनके अवतार की सार्थकता होगी ।। 95 ।। उनके हृदय में अतुल दीनवत्सलता थी। लघुता (अहंकार विहीनता) से बहुत लगाव था । करोड़ों कहानियाँ इसके प्रमाण स्वरूप कही जा सकती हैं ।। 96 ।। न कभी उपवास, न तप हठयोग का प्रयास , न कभी रसासक्ति की आस , अल्पाहार का सेवन करते ।। 97 ।। कुछ घरों में जाकर तैयार रूखी-सूखी रोटी मांगते । यही भिक्षा नित्य की मधुकरी थी। जिह्वा से रुचि नहीं रखते ।। 98 ।। रसना को संतुष्ट करने में लिप्त नहीं होते थे, मिष्ठान के प्रति लालायित नहीं होते। मिले तो अच्छा, न मिले तो भी अच्छा। (जैसा मिला) उसे अच्छा मान लिया ।। 99 ।। इस प्रकार प्राण धारण किये थे। शरीर की रक्षा करते थे क्योंकि वह ज्ञान व मोक्ष का साधन है। सर्वदा निरभिमान रहते ।। 100 ।। निजशांति जिनका भूषण थी, उनके लिए मालामण्डन क्यों ? उन्हें चन्दन व विभूति मलने की आवश्यकता नहीं थी, श्री साईं पूर्ण ब्रह्म थे ।। 101 ।। यह आख्यान भक्ति प्रधान बोधदायक व अति पावन है। जो सावधान होकर श्रवण करते हैं, उनकी भव भान समाप्त होने लगेगी ।। 102 ।। जब जब भावार्थी श्रोता जुड़ते हैं, तब तब साईं का भण्डार खुलता है। क्लिष्ट, कुतर्की को यह साध्य नहीं है। सरल सप्रेम भक्त इसे भोगता है ।। 103 ।। अब आगे की कथा से संबंध । श्रोता एकाग्र मन से सुनें तो प्रेम का स्फुरण होगा नयनों में आनंद जीवन होगा ।। 104 ।। बाबा की क्या बुद्धि कौशलमय रीति थी। क्या उनकी युक्ति प्रयुक्ति थी। समय-समय के अनुभव से सद्भक्त इनका मर्म जानते थे ।। 105 ।। यह साईंचरित्र अमृतपान है। सादर ध्यान लगाओ, गुरुचरणों में मन लगाओ, आगे की कहानी पर ध्यान दें ।। 106 ।। यह कथा अपूर्व मिष्ठान भोजन है। सेवन करते श्रोता शीघ्रता न करें। एक-एक पदार्थ की अपूर्वाई व नवलाई यथेष्ठ चखें ।। 107 ।। अब गाड़ी की कथा समाप्त करते हैं, उससे भी विलक्षण बकरे की वार्ता है। श्रोताओं को चित्त में आश्चर्य की अनुभूति होगी, गुरुभक्तों को आनन्द ।। 108 ।। एक बार एक कौतुक घटित

हुआ। कोई एक बकरा ले आया, आसन्न मरण, दुर्बल देख लोग देखने के लिए आगये।। 109 ।। जिसका कोई मालिक रक्षक नहीं होता उसे साईंमाँ संभालते । तन्हा पड़े हुए, परित्यक्त, मस्जिद में विश्राम करते ।। 110 ।। फिर वहां उस समय बड़े बाबा निकट थे। बाबा बोले इसकी बलि दे दो, एक ही प्रहार मार दो।। 111 ।। बड़े बाबा की क्या महत्ता थी। बैठने का स्थान दाहिने हाथ था। बड़े बाबा के कश खींचने के बाद फिर बाबा चिलम का सेवन करते ।। 112 ।। उस बड़े बाबा के बिना बाबा का पत्ता भी नहीं हिलता था। उनके ग्रास सेवन न करने तक बाबा भी भोजन नहीं करते।। 113 ।। एक बार दीपावली सरीखा उत्सव था। थालियों में पकवान पूर्णरूप से परस दिया गया था। पंगत अपने स्थान पर बैठ गयी थी। बड़े बाबा रूठकर चले गये ।।114 ।। बड़े बाबा के पंक्ति में न होने पर साईंबाबा अन्न का सेवन नहीं करते। और जब साईबाबा ही ग्रास नही लेते अन्य कैसे जेवन करते ।। 115 ।। ऐसे में सभी प्रतीक्षा करने लगे। बड़े बाबा खोजकर लाये गये फिर जब पंक्ति में बैठ गये बाबा ने अन्न सेवन किया ।। 116 ।। अब वर्तमान छोड़कर बड़े बाबा की दिग्दर्शनवार्ता श्रोताओं को सुनाने के लिए एक छोटी कथा का बुरा न मानें ।। 117 ।। बड़े बाबा, बाबा के अतिथि थे। सभामण्डप में जेवन के समय नीचे बैठे होते, प्रतीक्षा करते हुए। कान बुलाने की आवाज पर लगे रहते ।। 118 ।। दोनों बाजू दो पंक्ति, मध्य भाग में बाबा विराजते, बड़े बाबा की जगह बाबा के बांये हाथ सुरक्षित रहती ।। 119 ।। सकल नैवेद्य थालियों में परोसकर उन थालियों को पंक्ति में व्यवस्थित करके रखते। जेवन करने वाले अपने स्थान पर बैठते, भोजन का समय होने पर ।। 120 ।। फिर बाबा परम आदर से स्वयं उच्च स्वर में पुकारते । “बड़े मियां” कहते ही तुरंत नमन करते हुए ऊपर आते ।। 121 ।। अन्न के प्रति जो बिना कारण रूठा उसका आदर कैसा? जिसने अन्न का अपमान किया उसका इतना सम्मान ।। 122 ।। फिर यह भी लोकसंग्रह रीति है। बाबा स्वयं आचरण करके दिखाते । पंक्ति में अतिथि को लिये बिना अन्न का सेवन अनुचित था ।। 123 ।। यह जो गृहस्थ के लिए निर्धारित मर्यादा है बाबा कभी उल्लंघन नहीं करते। जिससे भक्तों की आपदा टलती वह आचरण सदा स्वयं करते ।। 124 ।। अतिथि पूजन से इष्ट प्राप्ति होती है। इससे अनिष्ट निवृत्ति होती है। वैसे न करने पर बाधा निश्चित है। इसीलिए शिष्ट लोग उन्हें पूजते हैं ।। 125 ।। अतिथि के भोजन विहीन रहने पर पशु, पुत्र, धन धान्य का विनाश होता है। अतिथि को भूखे रखना अनर्थ को आमंत्रण देना है ।। 126 ।। उन्हें प्रतिदिन साईंसमर्थ पचास रुपये दक्षिणा देते । उन्हें विदा करने बाबा एकशत कदम स्वयं जाते।। 127 ।। उस बड़े बाबा का क्रम उस बकरे

(को मारने) के लिए सबसे पहले आया, तो मुख से बहाना निकला, "अनावश्यक इसको बिना कारण काटना" ।। 128 ।। माधवराव वहीं थे। बाबा ने उन्हें आज्ञा दी। "शामा , तुम चाकू लेने जा, बकरे को काटने के लिए, जा अब।" ।। 129 ।। माधवराव निर्भय भक्त थे। राधाकृष्णा बाई के पास आकर चाकू लाकर वहां बाबा के समक्ष रख दिया ।। 130 ।। यद्यपि वह चाकू लाना माधवराव के लिए कष्टकारक था। बाबा की इच्छा नहीं थी कि वह चाकू के बिना आएं ।। 131 ।। इसी मध्य इस समाचार की सुगबुगाहट राधा कृष्णाबाई के कानों में पड़ी । हृदय में दया का उद्भव हुआ | चाकू वापस मांगकर ले लिया ।। 132 ।। फिर माधवराव को और चाकू लेने के लिए जाना हुआ । वे वहीं वाड़ा में बैठे रह गये कि हत्या उनके हाथ से न हो ।। 133 ।। फिर काका का मानस देखने के लिए तब उन्हें आज्ञा दी, "जाओ, तुम चाकू लाओ काटने के लिए। उसे कष्ट से निर्मुक्त करो"।। 134 ।। काका शुद्धतम गुण के सोना थे। यद्यपि बाबा पूर्णरूप से जानते थे। तथापि उन्हें तपाये बिना लोगों की आँखों को ठंडक नहीं मिलेगी ।। 135 ।। वह चोख है या मिश्रित, सुराक न करने या रेती पर परीक्षा न करने पर, बोले हुए पर, विश्वास नहीं करेंगे ।। 136 ।। हीरे को भी अपना वैभव प्राप्त करने के लिए घन (बड़ा हथौड़ा) के घाव को सहना पड़ता है। टॉकी (छैनी) के घाव को सहे बिना फोकट में दैवीय वैभव का गौरव नहीं प्राप्त होता ।। 137 ।। काका यद्यपि श्रीसाईं की आँख की पुतली थे। अन्य कैसे अनुभव करते। हीरे को सूत से बांधकर पारखी अग्नि में तराशता है ।। 138 ।। संत वचन पर संदेह करने वाले का संकल्प असफल, निःसत्व, निष्फल, खाली बकवास होता है। थोड़ा भी परमार्थ सिद्ध नहीं होता ।। 139 ।। जो गुरुवचन के अर्थ को वंदनीय मानता है उसका स्वार्थ व परमार्थ सफल होता है। जो उसमें दोष कुटिलता देखता है, वह अद्यःपतन को प्राप्त होता है ।। 140 ।। गुरु की सेवा करने के लिए जो तत्पर है, गुरु की आज्ञा का जो आदर करता है इष्ट अनिष्ट का सब विचार गुरु के सिर पर छोड़कर ।। 141 ।। गुरु की आज्ञा का वह नौकर है, उसके विचार स्वतंत्र नहीं है। सार असार देखे बिना नित्य गुरु वचन पालन करता है ।। 142 ।। चित्त साईंनाम का स्मरण करता हो, दृष्टि साईंसमर्थ के चरणों में हो, वृत्ति साईं के ध्यान व धारणा में हो, देह साईं की सेवा के लिए हो ।। 143 ।। आज्ञा देने व आज्ञा का पालन करने में, दोनों में एक क्षण का अंतर हो, वह बिलंब भी सहन न हो। यह विलक्षण दक्षता है ।। 144 ।। दीक्षित विशुद्ध, सत्व व धीरू थे। निश्चय में महामेरू पर्वत थे। "बकरे की जान कैसे मारूँ" विचार जिन्हें छुआ भी नहीं ।। 145 ।। निरपराध बकरा मरेगा। उसकी आत्मा तड़पेगी, उनका निज स्वच्छ यश मलिन होगा, महापाप

के संपर्क में आने से ।। 146 ।। यह विचार वहां नहीं था, जहां आज्ञा भंग करना पाप था । आज्ञा का परिपालन करने से बड़ा पुण्य नहीं ।। 147 ।। गुरु आज्ञा जिसके लिए प्रमाण (सत्य) था, उसे विलक्षण स्फुरण चढ़ रहा था। सहज कोमल अन्तःकरण प्राण लेने के लिए तैयार ।। 148 ।। फिर वे साठेवाड़ा गये, आज्ञा के अनुसार शस्त्र ले आये। बकरा मारने के लिए निश्चय कर लिया तिलमात्र भी डिगे नहीं ।। 149 ।। गुरु आज्ञा का परिपालन, उससे वीरश्री का स्फुरण । शास्त्रों का आलंबन करके अन्तःकरण को दृढ़ किया ।। 150 ।। जन्म निर्मल ब्राह्मण वंश में। जन्म के आरंभ से ही अहिंसा का व्रत। उनके लिए ऐसा प्रसंग ,हाथ कैसे चलेगा ।। 151 ।। गुरु आज्ञा का पालन करने चले, मन को एक बार दृढ़ किया। किन्तु छाती धड़ाधड़ उछलने लगी, पसीना अधिक मात्रा में निकलने लगा ।। 152 ।। काया वाचा वा मन से शब्द प्रहार भी जिसने न किया हो, उसके द्वारा शस्त्र प्रहार करना। यह दुर्धर घटित होगा ।। 153 ।। जो गुरुवचन की अवमानना करते हैं, उनकी दूसरी गति नहीं होती। उनके पूर्वपुण्य कर्म नष्ट हो जाने निश्चित हैं ।। 154 ।। गुरु अनुज्ञा का परिपालन ही भूषणों में भूषण है, यही सच्चे शिष्य की पहचान है। आज्ञा का उल्लंघन महापाप है ।। 155 ।। गुरु आज्ञा का पालन करने में एक क्षण भी जाने नहीं देना चाहिए। जो विचार करता है, हिचकता है, उसे बिना सींग का नरपशु समझें ।। 156 ।। वहां मुहूर्त, शुभ, अशुभ, तुरंत या बाद में, नहीं देखना चाहिए। जो तत्काल आज्ञा मान ले, वह बुद्धिमान है, दीर्घसूत्री दुर्भाग्यशाली ।। 157 ।। फिर एक हाथ से धोती की चुन्नट पकड़कर दूसरे से शस्त्र उठाये हुए आस्तीन चढ़ाते-चढ़ाते जहां बकरा था, उस स्थान पर आये ।। 158 ।। ग्रामवासी आश्चर्य करते।यह क्या अलौकिक कृत्य है। काका के मन की कोमलता कैसे डूब गयी।। 159 ।। मुसलमान, मांसाहारी , फकीर बाबा ने डरे हुए बकरे के प्रति शस्त्र धारण नहीं किया, वहीं काका तैयार हैं ।। 160 ।। वज्र से भी कठोर, कुसुम से भी कोमलतर, इस प्रकार जो असाधारण होते हैं, उनके हृदय में वे सच्चे होते हैं।। 161 ।। फिर छुरा हाथ में मजबूती से पकड़कर अपना हाथ ऊँचा करके बोले, “मारूँ क्या बाबा इसे । एक बार मुझे बोल दो”।। 162 ।। शस्त्र धारण संतप्त के त्राण के लिए करते हैं, वही निरपराध बकरे के हनन के लिए, किन्तु गुरु की सेवा में प्राण बिक गये थे, इसलिए हिचक मन में ।। 163 ।। शीघता से मारने जा रहे थे, उनके हृदय में कृपा उपज गयी। छुरा हिचक के साथ पीछे गया हाथ आगे नहीं आया ।। 164 ।। "हूं, क्या देखते हो, अभी मारो," | ऐसी आखिर आज्ञा सुनकर आवेश में प्रहार करने के लिए वे अर्द्धवृत्त घूमे ।। 165 ।। छुरा सहित हाथ उठाया, बकरे का काल आ गया। किन्तु देव उसके रखवाले हैं

तत्काल उसकी सुन ली ।। 166 ।। अब निश्चित वार कर देंगे, ऐसा देखकर साईंमाँ आपदा को समाप्त करने की इच्छा से बोले, “रे जाने, रहने दो ।। 167 ।। काका पीछे होओ। क्या रे तुम्हारी निष्ठुरता | ब्राह्मण होकर हिंसा करते हो। चित्त में विचार नहीं क्या “ ।। 168 ।। ऐसा सुनते ही छुरा फेंक दिया। छोटे बड़े आश्चर्य में थे। बकरे को जीवनदान प्राप्त हुआ। गुरु भक्ति शिखर पर चढ़ गयी ।। 169 ।। फिर काका छुरा फेंककर क्या बोले, ध्यान दो, “बाबा आपके अमृत वचन, वे हमारे लिए धर्मशासन हैं ।। 170 ।। हमारा दूसरा धर्म नहीं है। हमें लाज शरम नहीं है। गुरु वचन पालन ही सार है, यह हमारा वेद शास्त्र है ।। 171 ।। गुरु की आज्ञा का परिपालन, यही शिष्य का शिष्यपण है। यही हमारा अपना भूषण है। अवज्ञा सभी अर्थो में धब्बा है ।। 172 ।। सुखी होऊँ या दुःखी परिणाम पर दृष्टि नहीं है, जैसा भाग्य में है घटित होगा, परम इष्ट ध्यान रखेंगे ।। 173 ।। हमारा तो एक ही आश्रय है आपका नाम नित स्मरण करना, स्वरूप नयनों में संचित रखना , रातदिन आज्ञांकित रहना ।। 174 ।। हिंसा अहिंसा हम नहीं जानते। हमारे तारक सद्गुरुचरण है। आज्ञा किस उद्देश्य से है। यह मन में नहीं रहता। प्रतिपालन कर्तव्य है ।। 175 ।। जब गुरु आज्ञा स्पष्ट है, युक्त अयुक्त कष्ट अनिष्ट का यह विचार करने वाला शिष्य नष्ट हो जाता है, मेरे विचार से सेवा भ्रष्ट हो जाता है ।। 176 ।। गुरु आज्ञा का उल्लंघन उस जीव का अधःपतन है। गुरु आज्ञा परिपालन मुख्य धर्माचरण है ।। 177 ।। चित्त गुरुचरणों में ध्यानस्थ रहे प्राण रहे या जाये । हमारे लिए गुरु की आज्ञा ही प्रमाण है। परिणाम निर्वाण वह जाने ।। 178 ।। हम अर्थ अनर्थ नही जानते, हम स्वार्थ परमार्थ नहीं जानते, जानते हैं एक गुरु काम करना, उसी में हमारा परमार्थ है ।। 179 ।। गुरुवचन के आगे विधि व निषेध व्यर्थ व असहाय है। लक्ष्य गुरु द्वारा निर्देशित कर्तव्य पालन होना चाहिए । शिष्य की कठिनाइयाँ गुरु के माथे ।। 180 ।। हम आपकी आज्ञा के दास हैं। योग्य अयोग्य मन में नहीं है। समय आने पर जीवन दे दूंगा पर गुरु वचन का परिपालन करुंगा” ।। 181 ।। स्वभाव से जो दयालु है उनका मन पाषाणवत हो जाता है।। म्लेच्छ भी जो करने के लिए आगे नहीं आता ब्राहमण करने को तैयार है ।। 182 ।। श्रोताओं को यह भ्रमात्मक प्रतीत होगा। किन्तु सद्गुरु घर का यही मायाजाल है। एक बार गुरु वचन पर आरुढ़ हो लो, तत्काल रहस्य प्रकट हो जायेगा ।। 183 ।। एक बार उनका पल्लू धर लें, चरणों में फिर पूर्ण विश्वास स्थापित कर लें, फिर शिष्य की चिंता उनकी। प्रयास करने की आवश्यकता नहीं होती ।। 184।। सर्वथा ही चरणों में ध्यान लगा रहे फिर उसे भय नहीं। केवल उसका वही विश्वास उसे पार लगायेगा ।। 185 ।। शिष्य

तीन प्रकार के होते हैं। उत्तम, मध्यम, अधम वृत्ति के। प्रत्येक प्रकार की अति संक्षेप में अभिव्यक्ति करता हूं ।। 186 ।। बिना बताये अभीष्ट जाने ले, जानते ही सेवा करने में लग जाये । प्रत्यक्ष आज्ञा लेने के लिए प्रतीक्षा न करें, उसे उत्तम शिष्य जानो ।। 187 ।। गुरु द्वारा दी गयी आज्ञा मानता है, अक्षर-अक्षर प्रतिपालन करता है, कार्य में बिलंब नहीं करता, उसे मध्यम शिष्य जानो ।। 188 ।। गुरु आज्ञा करते रहते हैं; करता हूं, करता हूं कहता जाये ,प्रतिपद पर प्रमाद करें ,उसे अधम शिष्य जानो ।। 189 ।। हृदय में परम वैराग्य न हो, अनित्य नित्य का विवेकज ज्ञान न हो, उस पर गुरु कृपा कैसे हो, यद्यपि पूरा जीवन लगा दे।। 190 ।। फिर जो निरंतर गुरुचरणों में है, उनकी इच्छा ईश्वर पूर्ण करते हैं। निश्चल निष्काम तुरंत कर देते हैं उस सर्वोच्च से जुड़ाव होने पर ।। 191 ।। निर्मल श्रद्धाबल हो, प्रज्ञाबल भी प्रबल हो, धैर्य (सबूरी) का स्थायी जोड़ हो, उसका परमार्थ सबल है।। 192 ।। इसमें प्राण के निरोध (प्रणायाम) की आवश्यकता नहीं है। अपान वायु व उदान वायु का शोध, हठयोग, समाधि व उद्बोध - ये साधन हमारे लिए कठिन हैं ।। 193 ।। शिष्य की भूमिका तैयार हो, सद्गुरु सिद्धि में बिलंब नहीं होता। वह तो सदैव अनुग्रह करने के लिए तत्पर है, एक ही पांव पर खड़े ।। 194 ।। सगुण साक्षात्कार प्रतीति, केवल भक्त ही इनका अनुभव करते हैं। भाविकों में भक्ति उपजती है अन्य के लिए पाखंड युक्ति है ।। 195 ।। आगे फिर बाबा काका से बोलते हैं, "यह पानी का टमरेल हाथ से पकड़ो। अब मैं निश्चित रूप से "हलाल" करता हूं। इसे सद्गति देता हूं" ।। 196 ।। बकरा तो पहले से ही मरणोन्मुख था। नजदीक ही वहां “तकिया”{ फ़क़ीरों के विश्राम का स्थान) था । फकीर बाबा को समय सूचक एक विचार आया। ।। 197 ।। बाबा का विचार बकरे को "तकिए” पर मारने के लिए लिया। इसी बहाने स्थलान्तर करते समय बकरा मर गया।। 198 ।। बकरे की मृत्यु अटल थी। सभी जान चुके थे। किन्तु उचित समय पाकर बाबा ने अपनी लीला की ।। 199।। जो सद्गुरु की शरण में जाते हैं, वे सद्गुरु के रूप में चले जाते है। नमकसिंधु के स्नान के लिए जाने पर क्या वह बाहर आता है ।। 200 ।। जीव इस जगत का भोक्ता है, ईश्वर जगत के भोग का प्रदाता है। किन्तु सद्गुरु ही मोक्षदाता है, निज-आत्म-ऐक्यता का खजाना है ।। 201 ।। हृदय में कृपा उत्पन्न होने पर सद्गुरु दिव्यदृष्टि देते हैं। फिर उनसे सकल सृष्टि की माया एक बार ही दिख जाती है।। 202 ।। हेमाड साईं चरणों की शरण में, वही देहाभिमान अर्पित करके मन में सावधान हो बोले, मुझे निरभिमान रखना ।। 203 ।। अब आगे के दो अध्यायों में ठिठोली विनोद रस होगा। कैसे साईं महाराज करते हैं, उसकी नवलाई देखो ।। 204।। देखने

में विनोद, मनोरंजक किन्तु वह अत्यन्त बोधदायक। जो भाविक भक्त अध्ययन करेंगे, परम सुख पायेंगे ।। 205 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्री साईंसमर्थसच्चरित का "गुरुभक्त लीला दर्शन" नामक तेइसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु।।

।। अध्याय चौबीसवां (विनोद विलास) ।।

।। श्रीगणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री साईं रामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथ को नमन।।

गत अध्याय के अन्त में दिये गए वचन के अनुसार श्री साईंनाथ गुरु करुणाघन हंसी-मजाक करते हुए कैसे शिक्षा देते मैं वह कथन करता हूं ।। 1 ।। "कथन करता हूं" यह अहंकार है। गुरु के चरणों में निरहंकार रहना चाहिए। इससे कथा से रिसाव फूटेगा, सादर स्वाद लेने के लिए ।। 2 ।। साधु सज्जन महापुरुष नित्य निर्मल व निष्पाप होते हैं। जैसे स्वच्छ व बादल रहित आकाश वैसे वे शुद्‌ध व निर्दोष होते हैं ।। 3 ।। महाराज साईं के भजन स्वार्थ व परमार्थ के साधन हैं। स्वस्वरूप का ध्यान होता है। आन्तरिक संतुष्टि प्राप्त होती है ।। 4 ।। जिसका मन स्वहित साधने का हो, कथा के प्रति आदर धारण करें। इससे सहज परमानन्द भोगेंगे, जीवन की सार्थकता सिद्‌ध होगी ।। 5 ।। श्रवण करने से निजविश्रांति का लाभ होगा। भवभय व भ्रांति निर्मूल होगी।परमानंद की प्राप्ति होगी, श्रोताओं को तत्काल सद्‌गति प्राप्त होगी ।। 6 ।। साईं समर्थ अन्तर दृष्टि से भक्त के भावार्थ को पूर्ण जानते हैं। अपने कर्तव्य का अर्थ संपादित करके वचन से निर्मुक्त हो जायेंगे ।। 7 ।। साईसमर्थ बुद्‌धि-प्रेरक हैं। वही अपने वचन का अर्थ बुलवाते हैं। स्वार्थ परमार्थ साधक, उनके भावार्थ, को यथामति कहता हूं ।। 8 ।। न अंधे हैं, न रतौंधी है। आंखे होते हुए भी अज्ञानी (अंधे) हैं। केवल देह या बुद्‌धि के बल पर निजहित उन्हें प्राप्त नहीं हो सकता है ।। 9।। देह है, किन्तु ऐसा जिस पर क्षणभर भी भरोसा नहीं कर सकते । मैं हाथ की अंजली पसारता हूं एक क्षण के लिए , कथा का रस चखाने के लिए ।। 10।। हंसी-मजाक से सबको प्रीति है। बाबा की वह रीति अलौकिक है। विनोद से सार (तत्त्व) मस्तिष्क में बैठा देते, जो सभी के लिए हितकारक होता ।। 11 ।। लोग हंसी की बात को ध्यान नहीं देते हैं, किन्तु बाबा की हंसी-मजाक की बात अति स्नेह से लेते। अपना क्रम कब आएगा स्नेहपूर्वक राह देखते ।। 1 2 ।। हंसी-मजाक बहुधा किसी को अच्छा नहीं लगता। किन्तु बाबा के विनोद बहुत रुचिकर होते। जब अभिनय से जोड़ दिए जाते तो तुरन्त कार्यसिद्‌ध हो जाता ।। 1 3 ।। सहज, अभिनव, बिना प्रयास, सस्मितवदन, नयनविलास, इनमें जब विनोद का रस भर जाता उसकी सुरसता अवर्णनीय होती ।। 14 ।।

अब एक अनुभव कहता हूँ, अभिनव व तुरंत बोध कराने वाली कथा, विनोद से परमार्थ का उद्भव, उसके शब्द गौरव को सुनें ।। 1 5 ।। सप्ताह के प्रति रविवार शिरडी में बड़ा बाजार लगता। खुले में टेण्ट लगाकर सामान्य व्यापार चलता ।। 16 ।। फिर वहीं मार्ग पर भाजी के लिए ताजे पत्तों की ढेर पड़ जाती । तेली, तांबोली इनकी भीड़ चौराहे पर बैठती ।। 1 7 ।। इस प्रकार एक रविवार को दोपहर में बाबा के पास पैर दबाते-दबाते अद्भुत घटना घटित हुई ।। 18 ।। वह दोपहर का दरबार नित्य ही बहुत अधिक भरा होता, उस पर बाजार और रविवार, लोग अत्यधिक संख्या में प्रवेश करत ।। 19 ।। सीधे बाबा के सन्मुख बैठकर, गर्दन को नीचे झुकाकर मैं पांव दबाने का कार्य कर रहा था, नामस्मरण के साथ-साथ ।। 20 ।। माधवराव जी बाएं भाग में, वामनराव दाहिने अंग की ओर, श्रीमंत गोपाल राव बुट्टी उसी जगह सेवा करने के लिए बैठे थे ।। 21 ।। काका साहेब (श्रीमंत हरी सीताराम दीक्षित) भी वहीं बैठे थे। इसी बीच माधवराव हंसे, "क्या अन्ना साहेब, वहां किस प्रकार दाने हैं, जम गए दिखते हैं" ।। 22 ।। ऐसे बोलते हुए कोट की आस्तीन माधवराव ने अंगुली से स्पर्श की । कोट की सलवट के ऊपर दाने दिखने लगे ।। 2 3 ।। इसलिए, यह क्या है देखने के लिए बायीं कोहनी लम्बी (सीधी) की, तो तले हुए चने एकाएक नीचे गिरने लगे। मंडली को एक-एक उठाते हुए देखा ।। 24 ।। एक-एक करके उठाकर एकत्र कर लेने पर पांच पचीस (लगभग पचीस) चने हुए, वही विनोद का कारण उत्पन्न हुआ । ऐसा कैसे घटित हुआ ।। 25 ।। अटकल पर अटकल लगने लगी। जो थे, वे विचारों में डूबे थे। चने का कोट से सम्पर्क, सभी विस्मित थे ।। 26 ।। खाकी कोट में कितनी सलवटें होंगी। उनमें ये दाने कैसे समा सकते हैं। कहां से आए व कैसे रुके हुए हैं, कोई निश्चित नहीं समझ पा रहा था ।। 27 ।। चरण दबाते रहे, 'नाम' पर ध्यान केंद्रित किए हुए, बीच में तले हुए चने का आख्यान कैसे उत्पन्न हो गया ।। 28 ।। इतना समय सेवा करते व्यतीत हो गया, कभी ये क्यों नहीं गिरे। यही आश्चर्य हो रहा था कि इतने समय, वास्तव में, ये चिपके रहे। सभी के चित्त इसी के आस-पास थे ।। 29।। कहां से तले हुए चने वहां आए। सलवटों में कैसे स्थिर रहे, यह वे आश्चर्य करते रहे। फिर बाबा बोले, उसे सुनें ।। 30।। शिक्षण की विलक्षण पद्धति, अनेक के लिए अनेक होती। बाबा, जिसकी जैसी गति, उसे वैसी ही, शिक्षा देते ।। 31 ।। महाराज की पद्धति विचित्र थी-सीधी, स्मरणीय, बहुत मजेदार । अन्यत्र वैसा देखने-सुनने का मुझे अनुभव नहीं है ।। 32 ।। बोले, "**इनकी बुरी । आदत है, अकेले-अकेले खाना अच्छा लगता है। आज बाजार का अवसर पाकर तले हुए चने चबाते हुए चले आए" ।। 33 ।। अकेले-अकेले खाना**

अच्छा नहीं है। इनकी बुराई मैं तुरन्त जान चुका हूं। ये चने इसके प्रमाण हैं। किसी भी कारण, से इसमें आश्चर्य नहीं है ।। 34 ।।“ फिर मैं बोला, "किसी को दिए बिना खाना मेरे चित्त को मालूम नहीं । वहां इस बुरी आदत की कैसी वार्ता | अंग से चिपकाइये चिपकेंगे नहीं।" ।। 35 ।। "बाबा. मैनें आज, इस समय, तक शिरडी का बाजार नहीं देखा है। तब जाना, चने लेना, फिर बाद में खाना।" ।। 36 ।। उनके लिए हो सकता है जिन्हें अच्छा लगता है। मेरी तो नहीं ऐसी बुरी आदत | पहले दूसरों को थोड़ा दिए बिना मैं वस्तु मुंह में नहीं डालता।" ।। 37 ।। फिर, बाबा की युक्ति देखो, कैसे अपने चरणों में भक्ति को स्थापित करते हैं। मेरी स्पष्टोक्ति को सुनकर क्या कहा उसे ध्यान दीजिए। ।। 38 ।। **"सन्निकट है उसे देते हो । न होने पर फिर तुम क्या करते हो। फिर मैं उसका क्या कर सकता हूं। क्या मुझे याद करते हो?" ।। 39 ।। “मैं तुम्हारे निकट नहीं हूं क्या? क्या मुझे कौर (ग्रास) देते हो?”** इस प्रकार तले चने मात्र बहाना थे तत्त्व को निश्चल मस्तिष्क में बैठाने के लिए ।। 40 ।। देवता-प्राण-अग्नि को धोखा देकर वैश्वदेवताओं का अतिथिवर्जन करके जिससे शरीर का पोषण करते हैं वह अन्न बहुत दूषित होता है ।। 41 ।। यह सिद्धान्त छोटा प्रतीत होता है, व्यवहार में लाने पर अति महत्त्वपूर्ण हो जाता है। रसास्वादन तो अलंकार विशेष हैं, जिसमें अंश मात्र से संपूर्ण का बोध हो जाता है (उपलक्षण)। पंचविषयत्व का यही परिणाम है ।। 42 ।। जिसकी विषयों के प्रति हवस है,परमार्थ उनके पल्ले नहीं पड़ता, उन (विषयों) पर जिसने पल्लू डाल दिया, परमार्थ उसका दास हो गया ।। 43 ।। "यदा पंचावतिष्ठते” इस मंत्र से जो श्रुति ने कहा है वही बाबा इस परिहास को निमित्त बनाकर दृढ़ कर रहे थे ।। 44 ।। **(यदा पंचावतिष्ठते ज्ञानानि मनसा सह। बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम् ।। (कठोपनिषद अध्याय 2 बल्ली 3, मंत्र 10)- जब पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ मन के साथ अवस्थित हो जाती हैं, बुद्धि भी चेष्टा नहीं करती , उसे कहते हैं परम गति ।)** शब्द, स्पर्श, रूप, गंध- इस चतुष्टय का भी वही संबंध है। कितना बोधप्रद है बाबा की कथा से जुड़ा हुआ उपदेश ।। 45 ।। **"मन बुद्धि आदि इन्द्रियगण को विषयों का सेवन कराते हैं तब पहले मेरा स्मरण करें उन्हें अंश-अंश मुझे समर्पित करें ।। 46 ।। इन्द्रियाँ विषयों के बिना रहेंगी यह तो नही हो सकता कल्प के अन्त तक । यदि इन विषयों को गुरुपद में अर्पित कर दें सहज ही आसक्ति निरूद्ध हो जायेगी ।। 47 ।। यदि इच्छा होती है मेरे प्रति इच्छा होने दो, क्रोध आता है मेरे प्रति क्रोध करो । अभिमान दुराग्रह समर्पित होने दो। भक्ति का प्रवाह मेरे चरणों में होने दो ।। 48 ।। काम, क्रोध, अभिमान की व्रित्ति जब कडकडाते हुए उठे. एक मुझे लक्ष्य कर लो। मेरे प्रति**

स्पष्टतः छोड दो ।। 49 ।। इस प्रकार एक-एक क्रम से हरि वृत्तियों का नाश कर देंगे। फिर इन विष-त्रय की लहरों को गोविंद शांत कर देंगे ।। 50 ।। अधिक क्या (संक्षेप में) ये मनोविकार मेरे स्वरूप में लय प्राप्त करेंगे या वे स्वयं मेरा रूप बन जायेंगे। मेरे चरणों में विश्राम करेंगे ।। 51 ।। ऐसा अभ्यास होते रहने से वृत्ति स्वयं ही क्षीण होती है। कालान्तर में समूल निर्मूलन होकर मन वृत्तिशून्य हो जाता है ।। 52 ।। गुरु निरन्तर सन्निकट हैं ऐसी दृढ़ बुद्धि का विकास होने पर उसे कभी भी विषय इस विधि से बांध नहीं पाएंगे ।। 5 3 ।। जहां यह सद्भाव दृढ़ता से बैठा हुआ है। वहां भवबंधन छूट (खुल) जाएंगे। विषय-विषय में गुरु प्रकट होते हैं। विषय ही गुरु रूप धारण कर लेते हैं ।। 54 ।। यत्किंचित विषय सेवन हो, बाबा के सन्निकट होने पर, सर्वप्रथम, देखते ही, मन में सेव्यता-असेव्यता का विचार उठेगा ।। 55 ।। असेव्य विषय सहज ही छूट जायेंगे | व्यसनी भक्तों के व्यसन छूट (नष्ट हो) जायेंगे। असेव्य के प्रति मन विरक्त हो जायेगा । अभ्यास से यह विमुख हो जायेगा ।। 56 ।। विषयों का सादर नियमन होता है। वेद इन नियमों के मूल स्थान हैं। विषयों का सेवन करें किन्तु नियमानुसार, स्वेच्छाचार न बरतें ।। 57 ।। ऐसी आदत में मन लग जाने पर विषय-कल्पना क्षीण होती है। गुरु भजन के प्रति रुचि उपजती है। शुद्ध ज्ञान यहां से अंकुरित होता है ।। 58 ।। शुद्ध ज्ञान के बढ़ने लगने से देह बुद्धि की बेड़ी टूटती है। वही बुद्धि 'अहंब्रह्म' के भाव में डुबकी लगाती है। फिर अनंत सुख लाभ होता है ।। 59।। यद्यपि यह देह देखने में क्षणभंगुर है, किन्तु यह परमपुरुषार्थ साधक है। जो प्रत्यक्ष मोक्ष से भी बड़ा है, क्योंकि यह भक्ति योग प्रदायक है ।। 60 ।। चारों पुरुषार्थो से यह पंचम पुरुषार्थ एक सीढ़ी ऊँचा है। इस भक्ति योग की बराबरी कहीं नहीं पाओगे। भक्ति की विधि अलौकिक है ।। 61 ।। गुरु सेवा से जो कृतार्थ हो गया हो, वही इस रहस्य के यथार्थ का आंकलन कर सकता है। भक्ति ज्ञान व वैराग्य में स्वार्थ है। जिसका, वही परमार्थ प्राप्त करेगा ।। 62 ।। जिसका चित्त गुरु व देव में अन्तर करके भेद देखता है, उसे अखिल भागवत के अन्त तक भगवान नहीं दिखेंगे ।। 6 3 ।। अखिल रामायण पढ़ने के बाद न जाने कि सीता राम की कौन थीं। द्वैत दर्शन को छोड़ गुरु व देव को अभिन्न जानो ।। 64।। गुरु सेवा निर्मल होने पर विषय वासना निर्मूल होगी, चित्त शुद्ध सोज्ज्वल होगा, उज्ज्वल स्वरूप प्रकट होगा ।। 65 ।। इस प्रकार इच्छाशक्ति प्रबल होने पर तले हुए चने (पैदा करना) बाबा के हाथ का मैल है। इससे भी विलक्षण खेल करने में उन्हें समय नहीं लगता ।। 66 ।। केवल पेट के लिये लौकिक जादूगर इन्द्र जाल रचकर, हड्डी का टुकड़ा घुमाकर सम्मोहित करता है। जो

चाहे वह पदार्थ निकाल देता है ।। 67 ।। साईंनाथ अलौकिक जादूगर, उनके खेल की क्या प्रौढ़ता थी? इच्छा होने पर एक क्षण में अगणित चने पैदा कर देंगे ।। 68 ।। पर इस कथा का सार क्या है? उस पर अपने को ध्यान देना है। पाँचों में से कोई विषय बाबा के बिना सेवन नहीं करना चाहिए ।। 69 ।। मन को यह सिखा देने पर बार-बार स्मरण होता रहेगा। देते-लेते साईंचरण से संबंध बना रहेगा ।। 70 ।। यह शुद्ध ब्रह्म की सगुणमूर्ति नयनों के समक्ष निश्चित रहेगी, भक्ति-मुक्ति विरक्ति उपजेगी, परम प्राप्ति होगी ।। 71 ।। नयनों से (बाबा का) सुन्दर रूप देखते ही सांसारिक भूख-प्यास समाप्त होगी, ऐहिक सुख का भान समाप्त होगा, मन को संतुष्टि मिलेगी ।। 72 ।। 'ओवी' (गीत) याद करने पर भी याद नहीं आती परन्तु जाँते पर पर बैठते ही याद आ जाती है। वैसे ही चने की लीला कहते-कहते सुदामा की कथा याद आ गयी ।। 73 ।। एक बार राम (बलराम) कृष्ण और सुदामा गुरु (सांदीपनी) के आश्रम में सेवा करते हुए, लकड़ी लाने के लिए कृष्ण व बलराम को भेजा गया ।। 74 ।। गुरु पत्नी की आज्ञा से कृष्ण व बलराम अरण्यमार्ग पर कुछ आगे निकले ही होंगे कि सुदामा को संग भेज दिया गया ।। 75।। उन्हीं के पास दिया गया चना था । गुरुपत्नी ने आज्ञा दी थी कि जंगल में फिरते, भूख लगने पर तीनों ही खायेंगे ।। 76 ।। बाद में जंगल में कृष्ण से भेंट हुई। बोले, "दादा प्यास लगी है | चने की बात न करते हुए क्या बोले ? सुनिए ।। 77 ।। "भूखे पेट पानी नहीं पीना चाहिए । एक क्षण विश्राम कर लो।" बोले सुदामा । किन्तु ये चने खाओ नहीं बोले । कृष्ण जाँघ पर विश्राम करने लगे।। 78 ।। कृष्ण की आँख लग गयी (नींद आ गयी) देखकर, सुदामा चने खाने लगे। तब कृष्ण बोले, "दादा क्या खा रहे हैं? यह कैसी आवाज है।" ।। 79।। **"यहां खाने के लिए क्या है रे। ठण्ड के कारण दाँतों की पंक्तियाँ किटकिटा रही हैं। विष्णु सहस्रनाम भी मुख से स्पष्ट उच्चारित नहीं हो पा रहा है"।।** 80 ।। सुदामा का यह उत्तर सुनकर सर्वोच्च सर्वसाक्षी कृष्ण बोले,"मैं भी वास्तव में, बिल्कुल वैसे ही स्वप्न में डूबा था" ।। 81 ।। "एक की वस्तु दूसरा खाता है। क्या खा रहे हो ऐसा पूछने पर वह बोलता है खाऊँ क्या मिट्टी । वाणी "वैसी ही होओ" प्रकट होगी ।। 82 ।। "अरे, अच्छा, यह स्वप्न है। दादा! आप मेरे बिना क्या कभी खाएंगे। क्या खा रहे हैं? यह प्रश्न भी तभी का है। स्वप्न में ही रहते हुए पूछा था ।। 83 ।। पूर्व में आश्रम में ही रहते हुए सुदामा ने कृष्ण लीला समझ ली होती तो उनसे त्रुटि नहीं होती, न ही परिणाम भोगना पड़ता ।। 84।। फिर भी वह अत्यधिक दारिद्र्य क्या साधारण है। अतः जो लोग दूसरे को दिए बिना खाते हैं उन्हें स्मरण रखना चाहिए ।। 85 ।। परमात्मा कृष्ण जिसके सखा

सुदामा सरीखा ऐसा वह भक्त, नीति से यत्किंचित विहीन होने पर संसार में संकट पाया ।। 86 ।। वही, अपनी पत्नी द्वारा परिश्रम से अर्जित मुट्ठी भर पोहा प्रेमपूर्वक अर्पित किए। कृष्ण प्रसन्नचित्त होकर उन्हें ऐश्वर्य से तृप्त कर दिए ।। 87 !!ऐसी ही अब एक और बोध प्रदायक कहानी सुनाता हूं, पहले आनंद-विनोद सुख अन्त में जो बोध प्रमुख है ।। 88 ।। किसी को परमार्थ बोध अच्छा लगता है किसी को तर्क युक्त वाद-विवाद | किसी को ठिठोली विनोद अच्छा लगता है। सभी को आनन्द ही आनन्द ।। 89।। यह भी एक ठिठोली है। बाई और बुवा उत्तेजित होकर हठ पकड़ लिए | साई दरबार में झगड़ा हो गया, (किन्तु) किसी पर बट्टा लगे बिना सुलझ गया ।। 90 ।। यह कथा भी परम सुरस है, श्रोताओं को अत्यधिक आनंद दायी । भक्तों के एक दूसरे से झगड़ने से हास्य रस परिपक्व हो गया ।। 91 ।। भक्त दामोदर घनश्याम, बाबरे जिनका उपनाम था, का चलतू नाम था अण्णा चिंचणीकर | बाबा से निःसीम प्रेम था ।। 92।। स्वभाव बहुत निष्ठुर और निर्भय था । किसी के भी सम्मान का ध्यान किए बिना विहित व अविहित, हित व अहित न देखते हुए स्पष्ट बोलते थे ।। 93 ।। अण्णा की वृत्ति जितनी कड़क थी वे उतने ही सरल व सात्विक थे। जैसे माथे पर भरी हुई बन्दूक, बारूद में आग लगते ही भड़कने वाली है ।। 94 ।। सकल कार्य तुरन्त होता उधार की कहानी नहीं जानते। किसी के सम्मान का ध्यान किए बिना तुरन्त व्यवहार करते ।। 95 ।। जो समय पर हाथ पर आग रख लेते हैं, उनसे भी अति प्रखर थे अण्णा । किन्तु वे निष्कपट-स्वभाव की जाति के थे। इसी से बाबा से प्रीति थी ।। 96 ।। एक बार मध्याह्न के समय मस्जिद का दरबार भरा था, बायां हाथ काठ की रेलिंग पर रखकर बाबा की सवारी बैठी थी ।। 97।। बाबा देखने में तटस्थपन में रहते, बिना किसी को अनुभूत हुए भक्तों में झगड़े का स्फुरण कर देते ।। 98 ।। कोई बाबा के शरीर के बगल का हिस्सा दबाता, कोई पीठ-पेट दबाता, कोई पैर दबाता | इस रीति से सेवा करते ।। 99।। बाबा बाल ब्रह्मचारी, शाश्वत जितेन्द्रिय, शुद्ध आचारी, नर नारी सभी को सेवा-चाकरी करने देते ।। 100 ।। अण्णा बाहर से आगे झुके हुए धीरे-धीरे बाम हाथ दबा रहे थे। वहीं दाहिने बाजू की परिस्थिति स्थिर चित्त होकर सुनो ।। 101 ।। वहां, एक बाई थी, बाबा के चरणों में अनन्यभक्त । बाबा जिसे _ 'आई' कहते, जनलोक मावसीबाई ।। 102 ।। मावसीबाई सभी कहते। वेणुबाई मूलनाम था। कौजलगी कुलनाम था । साईंपदों में अनुपम भाव था ।। 103 ।। अण्णा पचास पार कर गए थे, मुंह में बत्तीसी नहीं थी। वह मावसी भी वयस्क अनुभवी थी। इन दोनों में विवाद उत्पन्न हो गया ।। 104 ।। अण्णा पत्नी के साथ सेवा करते। आई विधवा थी। बाबा का पेट दबाते

हुए श्वासोच्छवास उनके नियन्त्रित नहीं रहते ।। 105 ।। मावसीबाई, मन की निर्मल, साई की सेवा बल पूर्वक करती। दोनों हाथों को घुमा कर सवेग पेट की मालिस करतीं ।। 106 ।। पीछे से बाबा का पेडू दोनों हाथों से पकड़कर दबा दबा कर मंथन करती जैसे दूध मक्खन की मथनी हो ।। 107 ।। 'साईंनाम' में लय होकर मावसीबाई निर्भय दबाने का कार्य कर रही थी। बाबा हायहूय (शारीरिक वेदना को व्यक्त करने वाले उच्चारण) नहीं करते, मानो उनके लिए स्वास्थ्यवर्धक हो ।। 108 ।। किन्तु विलक्षण दबाने की शैली थी, पीठ, पेट सपाट करके । उनका प्रेम था। किन्तु उस अवसर पर (देखने वालों के) हृदय में दया उत्पन्न होती थी ।। 109 ।। साईं का यह निष्कपट प्रेम, अनुत्तम सेवा को स्वीकृति देते, कि वे निरन्तर निजस्मरण करते रहे की भक्तों का भला हो ।। 110 ।। अपनी तपश्चर्या कितनी होगी जिससे यह संतसंगति का लाभ प्राप्त हुआ। किन्तु यह साईं का निश्चित दीनवात्सल्य है कि भक्तों को उपेक्षित नहीं करता ।। 111 ।। हिलाने का उसका क्या कौशल था । बाबा ऊपर नीचे हिलते उसी प्रकार वह भी हिलती । यह सेवा का नवलपन था ।। 112 ।। किन्तु अण्णा झुके हुए स्थिर थे। बाई अपनी सेवा में चूर थी। उससे उनका मुख ऊपर नीचे हो रहा था। फिर किस प्रकार हुआ।। 113 ।। साईं सेवा का सुख; पेट को मरोड़ने में झोका खाने पर, अण्णा के मुख के सन्निकट, देखो, उसका मुख आ गया ।। 114 ।। ऐसा अवसर देखकर ; मावसीबाई, जो बहुत विनोदी थी, बोलीं, "क्या है, अण्णा, खब्ती हो? चुम्बन माँगते हो मुझसे" ।। 115 ।। । पके बालों की लाज नहीं है। देखो मुझसे चुम्बन मांगते हैं। ऐसे मावसीबाई के बोलते ही अण्णा ने आस्तीन चढ़ा ली ।। 116 ।। बोले, "मैं इतना बुज़ुर्ग हूं। क्या मैं मूर्ख, दुनियां का पागल हूँ। तू ही मुँह के पास मुँह लाकर मुझसे लड़ने की तैयारी कर रही हो।" ।। 117 ।। कलह को बढ़ता हुआ देख, दोनों को शीतल करने की प्रबल युक्ति योजित की । बाबा उन दोनों में रुचि रखते थे ।। 118 ।। प्रेम से बोले, "अरे अण्णा, बिना कारण हंगामा क्यों? मां का चुम्बन लेने में अनुचित क्या है, समझ में नहीं आता "।। 119 ।। सुन कर दोनों मन में झेंप गए। विनोदवाणी वहीं दब गयी। सप्रेम हास्य हिलोरें लेने लगा। परिहास सभी को अच्छा लगा ।। 120 ।। देखने में कहानी छोटी है, मार्मिक श्रोताओं को अच्छी लगती है। इस स्थान पर कैसे अनेक प्रकार की शिक्षा दी गयी है। कथा से तुरन्त दिखता है ।। 121 ।। मां-बेटे जैसी प्रीति व प्रेम बुद्धि दोनों में होती, वहां कलह उत्पन्न न होती । क्रोधवृत्ति न उठती।। 122 ।। चाबुक से मार जाने पर हंसी उठ सकती है। फूल से मारे जाने पर रोते हुए (व्यक्ति) गिर सकता है। वृत्ति की तरंग भावना के बल होती है। कौन इसे अनुभव नहीं करता ।। 123

।। बाबा की सहज युक्ति नवल थी। समयोचित बोल बोले, जिससे श्रोता अन्दर से शान्त हो गए, तत्काल बोध लाभ भी हुआ ।। 124 ।। ऐसे ही एक बार पेट रगड़ते समय बाबा के परम भक्त में रुचि, दया और चिन्ता उपजी उसकी अतिरेकता देखकर ।। 125 ।। बोले, "बाई दया करो। यह क्या शरीर दबाने का तरीका है? हृदय में थोड़ी दया रखो । बाबा की शिराएं टूट जायेंगी।" ।। 126 ।। कान में इतने अक्षर पड़ते ही बाबा तुरन्त उसी स्थान खड़े हो गए। अपना सटका अपने हाथ में लेकर भूमि पर तीव्र प्रहार किया ।। 127 ।। दुर्धर क्रोध की वृत्ति चढ़ गयी। सामने कौन खड़ा रहेगा? नेत्र जलते अंगारे की भांति चमकते हुए चारों ओर फिरने लगीं ।। 128 ।। अंधेरे में बिल्ली की आंखे जैसी वैसी दिन में आंखें चमकने लगीं। लगता था नयनों की ज्वाला से समस्त सृष्टि को जला देंगे ।। 129 ।। सटके का एक किनारा दोनों हाथों से पकड़ कर पेट के गड्ढे में घुसा दिया; दूसरा सामने के खंभे पर टेक कर खंभे को दृढ़ता से चिपटा लिया ।। 130 ।। सटका सवा हाथ लम्बा था, लगा कि पूरा पेट के अन्दर घुस गया है। अब विस्फोट होकर प्राणांत क्षण में ही होने वाला लगा ।। 131 ।। खंभा स्थिर तो कैसे हिले, बाबा निकट से निकट होते गए खंभे से पेट को दृढ़ता से सटा दिया । देखने वाले भयाक्रान्त हो गए ।। 132 ।। अब होगा पेट का विस्फोट सभी आश्चर्य चकित खड़े थे। हे बाप! क्या कठिन अवसर है दुर्धर संकट आ गया है।। 133 ।। लोग ऐसी चिन्ता करने लगे। इस परेशानी में क्या किया जाये? इतना संकट उस मावसी का किया है। भक्ताधीनता का व्रत (का बाबा द्वारा निर्वाह किया जा रहा था) ।। 134 ।। कहीं किसी के द्वारा सेवा करते मध्य में अनुचितता दिखाने पर अथवा सेवा करने वाले भक्त के लिए कोई बोलता बाबा बर्दाश्त नहीं करते ।। 135 ।। भक्त के हृदय में उपजे प्रेमवश मावसीबाई को इशारा दिया गया था। साईंबाबा को आराम देने के लिए | क्या ऐसा परिणाम होना था ।। 136 ।। देव को करुणा आ गयी। साईं के मन में शान्ति उत्पन्न हुई। उस भयप्रद कल्पना को छोड़ कर आकर आसन पर बैठ गए ।। 137 ।। प्रेमल भक्त यद्यपि निर्भीक था। बाबा का सख्त स्वभाव देखकर उसके कान खड़े हो गए। आगे के लिए शिक्षा प्राप्त हो गयी ।। 138 ।। इसके बाद से उसने निश्चय किया किसी के मार्ग में नहीं जायेंगे जिसके मन में जैसा आए तैसा उसे करने दो।। 139 ।। समर्थ स्वयं ही सामर्थ्यवंत है। निग्रह अनिग्रह का ज्ञान है। सेवक जन के गुणावगुण को मैं किसलिए देखू ।। 140 ।। एक की सेवा साईं को सुखकर है, दूसरे की प्रखर है। यह यद्यपि अपनी बुद्धि के विकार हैं वास्तविकता का हमें ज्ञान नहीं है ।। 141 ।। इस प्रकार अब यह हास्य-विनोद की साईं कथा से भक्त जैसा बोध हो शिक्षा

ग्रहण करें ,जैसे मकरन्द रस ग्रहण करता है।। 142 ।। हेमाड साईं पदों में लीन है। अगला अध्याय इससे भी गहन है। भक्त दामोदर की इच्छा पूर्ण करेंगे साईं दयाधन हैं।। 143 ।। वह भी बड़ा चमत्कार है। दामोदर संसार से बहुत त्रस्त थे। उन्हें, अपने सामने बुला कर उनकी उत्कण्ठा शान्त की ।। 144 ।। स्वस्ति श्रीसंत सज्जन प्रेरित, भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईं समर्थ सच्चरित में "विनोद विलास" नामक चौबीसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवत् ।।

।। अध्याय पच्चीसवां (भक्ताभीष्ट संपादन)।।

।। श्रीगणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथ को नमन।।

साईंमहाराज कृपा सागर, साक्षात ईश्वर के अवतार, पूर्णब्रह्म, महायोगेश्वर, उन्हें साष्टांग नमस्कार ।। 1 ।। संतो के माथे के तिलक की जय जय । मंगलधाम, आत्माराम, भक्तविश्राम पूर्ण काम, साईंसमर्थ तुझे नमन ।। 2 ।। पूर्व अध्याय में हास्य-विनोद के परिशीलन का निरूपण है। इस प्रकार भक्त भावन साईं भक्तों का मनोरंजन नित्य करते ।। 3 ।। साईं परम दयामूर्ति थे। एक भाव चाहिए, अनन्य भक्ति । भक्त श्रद्‌धालु और सरल हो तो, इच्छित को पूरा करने में कमी नहीं है ।। 4 ।। कृष्ण ने उद्‌धव से कहा है, सद्‌गरु, वह ही, मेरा रूप है। सद्‌गुरु को ऐसी प्रीति से भजना चाहिए , इसका नाम है अनन्य भक्ति ।। 5 ।। श्री साईं सच्चरित लिखने का मनोरथ हृदय में उदित हुआ । सुनने योग्य अति अद्‌भुत लीला लिखवाने के लिए मुझे निश्चित किया ।। 6 ।। अधिकारिता व ज्ञान व्युत्पत्ति (कुशलता जो शास्त्रों के ज्ञान से होती है) के न होते हुए भी, मुझ पामर में स्फूर्ति (प्रेरणा) उत्पन्न की, मेरे हाथ से ग्रन्थ लिखवाकर निज भक्तों को जागृति देने के लिए ।। 7 ।। "प्रामाणिक प्रलेख लिपिबद्‌ध कर रखें" ऐसी अनुज्ञा जैसे ही हुई मुझसम अज्ञानी को, तैसे ही मेरी अल्प प्रज्ञा धैर्य विज्ञान सम्पन्न हो गयी ।। 8 ।। तभी से मुझमें धैर्य आ गया कि यह गुण गंभीर साईं, निजभक्तों के उद्‌धार के लिए अपना प्रामाणिक प्रलेख लिपिबद्‌ध कराकर रखने का काम अपने हाथ में ले लेंगे ।। 9 ।। अन्यथा यह वाग्विलास, क्या मेरा यह साहस होता, संतचरण-प्रसाद पावन ऐसा सुधारस चरित ।। 10 ।। भक्तों के लिए यह साईं सच्चरित रूपी साई कथामृत 'पानपोई' है। साईकृपा से यथेच्छ सेवन करें। संसार रूपी दावाग्नि के ताप के निवारण के लिए ।।11 ।। यह चरित नहीं है 'सोमकान्त' है (चन्द्रकान्त मणि जो चन्द्रमा की किरणों के घनीकरण से बनती तथा तदनुसार उसके प्रकाश के प्रभाव से पिघलती है, ऐसा माना जाता है)। साईंकथा का चन्द्रामृत रिसता है। भक्त चकोर जो प्यास से व्याकुल है, इच्छा भर तृप्त होवे ।। 12 ।। अब प्रेमल श्रोताजन, संकोचरहित एकाग्रमन हो इस कलिमल दहन साईं की पावन कथा को सुनें ।। 13 ।। एक बार अनन्य निष्ठा अच्छी प्रकार स्थापित

हो जाये तो उस भक्त का सकल अनिष्ट टाल कर अभीष्ट प्रदान करते हैं। उसके कष्ट का निवारण करते हैं।। 14 ।। इस संदर्भ की एक कथा है, साईं की भक्तवत्सलता प्रदर्शित होगी। श्रोताओं का चित्त, सादर श्रवण करने से, आनन्दित होगा ।। 15 ।। फिर, मन लगाकर, यह अभिनव कथा सुनें। मानस पटल पर अनुभव करें कि गुरुमां कैसे दया के सागर हैं।। 16 ।। यद्यपि कथा बहुत संक्षिप्त है अर्थ बोध में अति उत्तम है। एक घड़ी ध्यान दीजिए समस्यायें हल हो जायेंगी ।। 17 ।। अहमदनगर का सुखवस्तु गृहस्थ (स्थान विशेष पर बिना किसी अचल सम्पत्ति के सुख से रहने वाला गृहस्थ) कासार जाति (चूड़ी बनाने वाले) का धनवंत दामू अण्णा • नामक एक भक्त था, जो साईं के चरणों में अनुरक्त था ।। 18 ।। उस परम भक्त की कथा आनन्दित हो कर श्रवण करने से साईं की भक्त रक्षण तत्परता प्रत्यक्षतः दिखेगी ।। 19 ।। रामनवमी-वार्षिकोत्सव पर दो नयी बड़ी पताकाए शिरडी गांव में शोभायात्रा के साथ निकाली जातीं । वहां प्रत्येक व्यक्ति जानता है ।। 20 ।। उनमें से एक नाना साहेब निमोणकर की होती, दूसरी इन दामू अण्णा की । कई वर्षों तक उनका भक्ति प्रेम निरन्तर नियम से चलता रहा ।। 21 ।। दामू अण्णा की दो स्त्रियां थीं। पुत्र संतति किसी से नहीं थी। साईं का आशीर्वाद-लाभ प्राप्त होने पर पुत्ररत्न प्राप्त हुआ ।। 22 ।। 'पताका' व्रत किया रामनवमी के उत्सव में। शोभायात्रा आरंभ हुई इसी वर्ष से पताका के साथ ।। 23 ।। 'कोंड्या' बढ़ई के घर शोभायात्रा की तैयारी होती। वहीं से आगे वाद्यों की तेज धुन पर पताका के साथ शोभायात्रा निकलती ।। 24 ।। मस्जिद के दोनों किनारों पर वे दीर्घ पताकाएं बांध दी जातीं। पवित्र महोत्सव समारोह के साथ प्रतिवर्ष करते, लोग देखते ।। 25 ।। उसी प्रकार वहां जो फकीर आते उन्हें यथेष्ट जेवन कराते । यह सेठ इस रीति रामनवमी का पालन करते ।। 26 ।। यह उन्हीं दामूअण्णा की कथा है जिसे अब श्रवणार्थियों के लिए निवेदित करता हूं। श्रवण ध्यान से करने पर साईं समर्थता प्रकट होगी ।। 2 7 ।। मुम्बई नगरी के उनके मित्र ने मुम्बई से पत्र लिखा कि दो लाख का शुद्ध लाभ होगा, ऐसा लाभकारी धंधा करें क्या ।। 28 ।। देखो, तुम व मैं भागीदार, प्रत्येक लाख-लाख कमाएगा। धंधा चोख व निर्भय है, उत्तर भेजो, शीघ्रता करो ।। 29।। इस समय कपास खरीदेंगे। शीघ्र ही भाव चढ़ेगा। जो समय पर सौदा नहीं करते फिर वे बाद में पछताते हैं ।। 30 ।। ऐसा अवसर जाने नहीं देना चाहिए । अण्णा के मन में खलबल उठने लगी। उस मित्र पर पूर्ण विश्वास था। निश्चित विचार नहीं बन पा रहा था ।। 31 ।।धंधा किया जाये या न किया जाये, यह विचार अण्णा के मन में घूम रहा था । क्या कैसे होगा, देवा? मन संशय में पड़ गया ।। 3 2 ।। दामू अण्णा भी

गुरुपुत्र थे। बाबा को पत्र लिखा। हमारी बुद्धि स्वतन्त्र नहीं है आप हमारे छत्र हैं ।। 3 3 ।। प्राग्दृष्टया यह व्यापार करने का मन में आ रहा है। किन्तु लाभ होगा या हानि कृपा करके बताइए ।। 34 ।। पत्र माधवराव को लिखा गया था। कि बाबा को पढ़कर सुनाएं । जैसी आज्ञा हो, सूचित करें। उद्यम अच्छा प्रतीत हो रहा है ।। 3 5 ।। दूसरे दिन तीसरे प्रहर पत्र माधवराव के हाथ में पड़ा । वहां से लेकर मस्जिद के अन्दर चरणों पर रख दिया ।। 36 ।।"क्या शामा, क्या जल्दी है? कैसा कागज पावों पर रखा है?" "बाबा वह नागर का दामूसेठ कुछ विचार चाहता है आपसे ।। 37 ।। "क्यों? अच्छा, वह क्या लिखता है? क्या, किस प्रकार की, योजना बना रहा है। लगता है आसमान हाथ ले लेगा। देव ने उसे दिया नहीं है" ।। 38 ।। - "पढ़ो-पढ़ो उसका पत्र" | शामा बोले, "जो बोला है, वही दामूअण्णा के पत्र का वास्तविक अक्षरशः अर्थ है।। 39।। देवा! आप निश्चल बैठे रहते हैं। भक्तों में उत्तेजना उत्पन्न करते हैं, फिर मन में उत्कट इच्छा उत्पन्न होती है, चरणों के पास ले लेते हैं ।। 40 ।। किसी को स्वयं खींच लेते हो, किसी से पत्र लिखवाते हो। अंतःस्थ आशय पहले बोल देते हो। फिर किस लिए पढ़वाते हो।। 41 ।। "अरे शामा पढ़ो-पढ़ो मुझे क्यों सच्चा मानते हो? (सच्चा तो अल्लाह है)। ऐसे समय मैं स्वयं सच्चा नहीं होता हूं बिना कारण जो मन में आता है बोलता हूँ ।। 42 ।।" फिर माधवराव ने पत्र पढ़ा, बाबा ने ध्यान देकर सुना । फिर बाबा ने रुचि से कहा, "सेठ की मति भ्रष्ट हो गयी है।" ।। 43 ।। "उसे उत्तर में कहो कि उसके घर में क्या कमी है। आधी रोटी अपने लिए पर्याप्त है। लाखो भरी हों उनमें डूबो नहीं।" ।। 44।। दामूअण्णा क्षण-क्षण प्रत्युत्तर की वाट देख रहा था । उत्तर आते ही उसी क्षण दामूअण्णा ने पढ़ा ।। 45 ।। उस प्रत्युत्तर पर ध्यान दिया तो दामूसेठ शिथिल हो गए। मनोरथ का दुर्ग ढह गया। आशा का वृक्ष जड़ से उखड़ गया ।। 46 ।। अब एक लाख कमाऊँगा । आधा लाख ब्याज पर लगाऊँगा । तत्काल लाखों का साहूकार बन जाऊँगा । आनन्द से नगर में रहूंगा ।। 47 ।। जो काल्पनिक राज्य बनाया था, देखते-देखते पिघल गया। दामूअण्णा अत्यन्त निराश हो गए। यह बाबा ने क्या किया ।। 48 ।। पत्र लिखा इसी से फंस गए । अपने आप अपना अनहित किया । देखते-देखते सामने परसी गयी थाली को अपने आप लात मार दी ।। 49 ।। फिलहाल, उस पत्र में दामूअण्णा को ऐसा इंगित किया गया था कि यहां समक्ष आएं, क्योंकि सुनने व देखने में अंतर हो जाता है ।। 50 ।। ऐसा माधवराव ने सुझाव दिया तो सामने जाना उचित प्रतीत होता है। न जाने उसी में हित हो । कदाचित अनुमति दे देंगे ।। 51 ।। ऐसा विचार मन में करके अण्णा शिरडी आए | आकर, साष्टांग दण्डवत करके बाबा

के सन्निकट बैठ गए ।। 5 2 ।। धीरे-धीरे पांव दाबने लगे, प्रश्न करने की हिम्मत नहीं थी। बाबा को हिस्सा देने की वृत्ति हृदय में उठी ।। 53 ।। मन में बोले, "साईंनाथ, यदि इस व्यापार में सहायता कर देंगे, तो नफा का कुछ भाग पावों में पड़कर अर्पित करूँगा।' ।। 54 ।। मस्तक साईंचरणों पर रखकर दामूअण्णा एक क्षण बैठे रहे। संकल्प-विकल्प मन के लक्षण हैं। व्यापार अन्दर से चलता रहा ।। 5 5 ।। भक्त इच्छा करते हैं, वे अपना हित ठीक से नहीं जानते । एक गुरु शिष्य का हित जानता है, भावी-भूत-वर्तमान ।। 5 6 ।। अपने मन का मनोगत कोई कितना ही गुप्त रखे, साईं समर्थ सर्वांतर्यामी हैं अन्तर्वृत्त (मन में विद्यमान विचार) वे जानते हैं ।। 57 ।। जब कोई मन की इच्छा साईंचरणों में प्रेम से निवेदित करे, पूर्ण विश्वास के साथ अनुज्ञा प्रार्थित करे, साईं उसे सत्पथ दिखाते हैं ।। 58 ।। यह तो उनका निजव्रत है, समस्त भक्त यह जानते हैं। जो-जो अनन्य शरण में आया उसकी आपदा टल गयी ।। 59।। गुरु ही वस्तुतः माता-पिता हैं, अनेक जन्मों का पालनकर्ता व रक्षा करने वाला । वही हरि, हर और ब्रह्मा है। कर्ता व कराने वाला वही एक है ।। 60 ।। बालक मीठा व स्वादिष्ट भोजन मांगता है मां 'बोलकडू' (एक कड़वी औषधि का नाम) पिलाती है। बालक तड़फड़ाए अथवा रोये । प्रेमवस किया गया निर्णय ऐसा होता है ।। 61 ।। 'बोलकडू' का कड़वापन; उचित समय आने पर उसका गुण चढ़ेगा । बालक क्या जाने उसका लक्षण | माता का चिह्न माता जाने ।। 62 ।। यद्यपि अण्णा हिस्सा दे रहे थे बाबा क्या उससे आकर्षित हो जाते । उनकी प्रीति बिना लाभ के होती है। निज भक्तों के हित में तत्पर रहते हैं ।। 63 ।। धन-कनक जिसके लिए मिट्टी हो उसके लिए हिस्सा क्या चीज है? ये संत केवल दीन जनों के उद्धार के लिए जग में अवतार लेते है ।। 64 ।। यम-नियम, शम-दम से सम्पन्न, माया-मात्सर्य दोष से विहीन, केवल दूसरे पर अनुग्रह के प्रयोजन के लिए जिनका जीवन है, वे 'संत' हैं।। 65 ।। दामूअण्णा का भी हिस्सा (देने का विचार) मन ही मन गुप्त था । बाबा ने प्रकट उत्तर दिया, सादरवृत्ति से सुनें ।। 66 ।। जीव मात्र के मनोगत से बाबा सब अवगत थे-- वर्तमान-भविष्य-भूत, जैसे हाथ की हथेली पर आंवला ।। 6 7 ।। अपने भक्त की भावी स्थिति समस्त बाबा को ज्ञात थी। कैसे समय पर स्पष्टोक्ति द्वारा सावधान करते, सुनिए ।। 68 ।। बाबा ने प्रेमपूर्वक सूचना दी," किसी भी प्रकार, रे बापू, अपना नहीं।" व्यापार अच्छा है किन्तु साईं को उपयुक्त नहीं लग रहा है। अण्णा मन में शार्मिदा हुए ।। 69 ।। बाबा के ये वचन सुनकर दामूअण्णा अप्रत्यक्ष सुझाव समझ गए । मन का संकल्प छोड़कर, मुख नीचे करके, बिना बोले बैठे रहे ।। 70 ।। पुनः मन में विचार उठा । क्या दूसरा व्यापार करूं,

चावल-गेहं खाद्यान्न का? बाबा का प्रत्युत्तर सुनें ।। 71 ।। "तुम पांच सेर खरीदोगे, सात सेर बेचोगे"| बाबा के ये बोल सुनकर अण्णा तब मन में शर्मिदा हुए ।। 72 ।। ऐसे कहीं कुछ भी नहीं घटता जो श्री साईं की दृष्टि में न पड़े। नीचे, ऊपर, यहां, वहां सर्वत्र उनके लिए खुला है ।। 73 ।। उधर वह उनका मित्र, देखो, गहन विचार में पड़ा था, "क्या करें कुछ समझ में नहीं आ रहा था। अण्णा का उत्तर भी नहीं मिला ।। 74 ।। तब तक उस सेठ (दामूअण्णा) ने, जो घटित हुआ उसका वृत्तांत सूचित करते हुए पत्र लिख दिया था। पढ़कर स्नेही विस्मित हुआ। बोला कर्मगति विचित्र है ।। 75 ।। क्या (अच्छा) सौदा चलकर आया था। स्वयं क्यों नहीं विचार किया। किस लिए फकीर के विचार लेने लगे। व्यर्थ में लाभ से हाथ धो बैठे ।। 76 ।। "देव देते हैं कर्म लेता है। होनी के अनुरूप बुद्धि हो जाती है। जब इतना चोखा धंधा था ,तो वहां फकीर को क्यों होना चाहिए ।। 77 ।। जगत व्यवहार को छोड़कर, दरवाजे-दरवाजे पागलों की भांति पेट भरने के लिए जो टुकड़े मांगते हैं वे क्या शिक्षा देंगे ।। 78 ।। जैसा भी हो, उसके भाग्य में नहीं है इसी से उसकी ऐसी बुद्धि हो गयी। दूसरा कोई भागीदार देखते हैं। "जो नहीं होना है वह नहीं होता है" ।। 79।। और इस प्रकार अण्णा स्थिर मन बैठ गए। जो अपने कर्मवश खिंचे चले आए, वे उनके मित्र के भागीदार हुए, मुसीबत में फंसने के लिए ।। 80 ।। सट्टा करने गये किन्तु उनके दिन पलट गए । ठोकर लगी हानि हुयी। फकीर का कैसा सोटा है ।। 81 ।। मेरे दामूअण्णा का क्या नसीब है। बहुत समझदार हैं। उसके साईं उच्चकोटि के खरे हैं। भक्तों के प्रति कितनी करुणा है ।। 82 ।। मित्र हूं, इसलिए मेरे फंदे में पड़कर स्वेच्छा से लुट जाता । फकीर की सलाह मान कर तर गया। उसकी बुद्धि कितनी दृढ़ है ।। 83 ।। उसके पागलपन का उपहास किया। अपनी समझदारी पर घमण्ड व्यर्थ किया । व्यर्थ उत्तेजना । वास्तव में यही अनुभव है ।। 84 ।। बिना कारण उस फकीर की निंदा न करके उनके विचार ले लेते। मुझे भी वे समय पर जगा देते, यह दगा न होता ।। 85 ।। अब एक और कहानी कहकर अण्णा की किताब बंद करूं। श्रोताओं के चित्त में आनन्द होगा बाबा की आश्चर्यता की अनुभूति होगी ।। 86 ।। देखो, एक बार ऐसा घटित हुआ । गोवा से पार्सल आया। किसी ने प्रसिद्ध (नामवर) आम भेजे। उसका नाम मामलेदार राले था ।। 87 ।। माधवराव के नाम पर । बाबा के चरणों में सादर प्रस्तुत किया गया था। इसलिए कोपर गांव में प्राप्त करके शिरडी ले आए ।। 88 ।। मस्जिद में बाबा के समक्ष खोला गया । आम सुन्दर निकले। सब मिलाकर तीन सौ से ऊपर थे। वे फल मधुर सुगंध बिखेर रहे थे ।। 89 ।। बाबा ने उन सब को देखा । माधवराव के पास में दे दिया। उनमें से

चार एक बड़े मिट्टी के बर्तन में रख कर वे (माधवराव) बचे हुए सभी को ले गए ।। 90 ।। मिट्टी के बर्तन में फल पड़ते ही बाबा के मुख से क्या उद्गारित हुआ? "ये फल दामूअण्णा के लिए हैं इन्हें वहीं पड़े रहने दो" ।। 91 ।। उसके बाद दो घण्टे बीतने पर पूजा करने के लिए, दामूअण्णा, पुष्प सामग्री लेकर मस्जिद में आए ।। 92 ।। वहां का पूर्ववृत्त वे नहीं जानते थे। बाबा जोर-जोर से बोलने लगे।"आम दामू के हैं, वे अपने नहीं हैं। यद्यपि लोग खाने के लिए, प्रतीक्षारत, देख रहे हैं" ।। 93 ।। "जिसके आम हैं उसी को लेना चाहिए। हमारे किस अर्थ का, किसी का होवे। जिसका है उसी को खाना है खाते-खाते मर जावें तो भी ।। 94 ।। प्रसाद का है इस भाव से अण्णा ने स्वाभाविक रूप से स्वीकार कर लिया। विपरीत अर्थ लगने का भय नहीं है, अण्णा को पूर्ण विश्वास था ।। 95 ।। पूजा सम्पन्न करके अण्णा चले गए। पुनः आकर पूछने लगे। समझ नहीं पाया किसको, बड़ी या छोटी को ये फल दूं" ।। 96 ।। बाबा बोले, "छोटी को दो। उसे आठ बच्चे होंगे। चार लड़के चार लड़कियां । इस आम की लीला से प्रसव होगा।" ।। 97 ।। चूंकि कोई पुत्र संतान नहीं थी इसके लिए बहुत प्रयत्न किया। कृपा व आशीर्वचन प्राप्त करने के लिए साधुसंतों का भजन किया ।। 98 ।। इसी के लिए साधु संतों की सेवा की । ग्रहों का प्रसाद प्राप्त करने के लिए ज्योतिर्विद्या का शौक लगा। स्वयं ज्योतिर्विद हो गए ।। 99।। नसीब में संतान नहीं है। यही ज्योतिर्विद्या का निदान है। अण्णा पूर्णरूप से जानते थे। निराश होकर बैठ गये ।। 100 ।। तथापि यह आश्वासन, साईं संत के मुख के वचन | समर्थ साईं के प्रसन्न होते ही पुनःश्च आशा उत्पन्न हो गयी ।। 101 ।। अतः आगे समय आने पर बाबा के अक्षर फलित हुए । संत प्रसाद का आम अंकुरित हुआ संतति फल प्रसवित हो प्राप्त हुआ ।। 102 ।। जैसे बोले वैसे घटित हुआ । अपना ज्योतिष निष्फल हो गया । साईं के बोल अमोघ सिद्ध हुए । वचन के अनुसार बच्चे हुए ।। 103 ।। बाबा के देहधारी होते हुए इस प्रकार उन बाबा की वाणी थी। फिर आगे देह त्यागने के बाद स्वयं अपनी महिमा को निधारित किया ।। 104 ।।**"जब प्राण निकल जायें तो भी, मेरे बचन को सत्य मानना। मेरी हड्डियां कबर से तुम्हें आश्वासन देंगी ।। 105 ।। मैं क्या मेरी कबर भी तुमसे बोलती रहेगी। जो उसके अनन्य शरणागत है उसके साथ डोलती रहेगी। ।। 106 ।। आंखों से ओझल होने पर भी तुम मेरे प्रति चिंता न करना। मेरी हड्डियों को बोलते हुए सुनोगे, तुम्हारे साथ व्यक्तिगत-हित की बातें करते हुए। ।। 107 ।। मात्र मेरा स्मरण करो, विश्वास युक्त अन्तःकरण से; निष्काम भजन कर लेने पर कल्याण सिद्धि का लाभ प्राप्त होगा ।। 108 ।।"** हे भक्त की इच्छा के कल्पतरू समर्थ साईं श्री

सद्गुरु हेमाड पंत तुम्हारे चरणों से अलग न हो। विभिन्न प्रकार से इस करुणा का आश्वासन दीजिए ।। 109 ।। हे गुरुवरा! पावों पर दौड़े आओ। भक्तजन पर करुणा करो। इस संसार में एक क्षण का विश्राम नहीं है। अब थकान भरी यात्रा बहुत हो गयी।। 110 ।। हमारा स्वभाव सांसारिक है; बाह्य विषयों में लिप्त रहने में तत्पर, विषयभोग पास से बंधा हुआ । वृत्ति को अंतर्मुखी करिए ।। 111 ।। जैसे तूफानी लहरों में टूटी हुई वस्तु इधर-उधर बहती है हम संसार सागर में चलते हैं। संकट में हाथ देकर क्या भव निमुक्त करोगे ।। 112 ।। इन्द्रियां इधर-इधर बहती हैं। उच्छृखल नदी पर बांध बांधकर इन्द्रियगण को वापस फेर (मोड़) दो ।। 113।। जब इन्द्रियां अन्तर्मुख न होगी तो आत्मा कभी भी संमुख नहीं होगी। उसके बिना कैसे आत्यंतिक सुख | जन्म निरर्थक हो जायेगा।। 114 ।। पत्नी-पुत्र मित्रों की पंक्ति कोई भी अंत में काम नहीं आएगा। तू ही एक आखिर का साथी है। तू सुख व निर्मुक्ति दायक है ।। 115 ।। महाराज ! कृपाबल से कर्म-अकर्म के जाल को खोलकर दीन व दुर्बल के दुःख तुरन्त दूर करके उद्धार करिए ।। 116 ।। सुनिर्मल साईंराया, वाद विवाद व अन्य बुराईयों को कृपाबल से समूल नष्ट करके रसना (जिह्वा) को नाम लेने में लगा दो।। 117 ।। हृदय में ऐसा प्रेम दो कि संकल्प विकल्प निकल जाये, देह व गेह (घर) का भान विसर जाये, मेरा मैं पन भी नष्ट हो जाये ।। 118 ।। तुम्हारा नाम स्मरण रहे अन्य कुछ याद न रहे मन में निश्चलपन आवे, चंचलपन छू न जाये ।। 119 ।। मुझे तुम्हारे द्वारा अपने संरक्षण में लेते ही अज्ञान रूपी अंधेरी रात समाप्त हो जायेगी। तुम्हारे प्रकाश में सुख से रहेंगे। मेरे पास क्या कमी होगी।। 120 ।। तुमने यह जो मुझे निज चरित का अमृत पिलाया है, जो पीठ थपथपा कर जागृति की है, यह क्या सामान्य सुकृत है ।। 121 ।। अगले अध्याय इससे भी मधुर हैं। श्रवणार्थियों की उत्कट इच्छा पूरी होगी । साईंचरणों में रुचि बढ़ेगी। श्रद्धा भी सुदृढ़ होगी।। 122 ।। एक भक्त दर्शन के लिए आता है, अपने गुरु के चरणों को छोड़कर, साईं पदों में अभिवंदन करते ही निज गुरु स्थान को दृढ़ कर दिया ।। 123 ।। वैसे ही एक दूसरे गृहस्थ, श्रीमंत किन्तु विपद्ग्रस्त, पुत्र-पत्नी सहित साईं के दर्शन के लिए आए ।। 124 ।। कैसे उनका उद्देश्य पूरा किया। कैसे मिरगी (अपस्मार) से व्यथित पुत्र को दर्शन करने से व्याधि निर्मुक्त कर दिया । पूर्व दृष्टांत स्मरण कराया ।। 125 ।। अतः हेमाड साईं की शरण में है। श्रोताओं से आदर पूर्वक निवेदन करता हूं साई कथा प्रवण होवें। जो श्रवण को सार्थक बनायेगा ।। 1 26 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित, भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईं समर्थ सच्चरित में 'भक्ताभीष्ट संपादन' नामक पच्चीसवां अध्याय सम्पूर्ण हुआ।।

।। श्री सद्‌गुरु साईनाथर्पणमस्तु ।। शुभ भवतु ।।

।। अध्याय छब्बीसवां (अपस्मारात्म हत्या निवारण तथा निज गुरुपद स्थिरीकरण) ।।

।। श्रीगणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथ को नमन ।।

भूत भौतिक समस्त विषय जिसके अन्तर्गत अखिल विश्व है, दपर्ण में प्रतिबिम्बित नगर की भांति मायिक है। माया की झलक है ।। 1 ।। वस्तुतः वह उद्‌भूत नहीं है, आत्म स्वरूप में निरन्तर बिना रुकावट गतिशील है। वह ही विश्व स्वरूप में स्थिर होकर चराचर उद्‌भूत दिखता है ।। 2 ।। जो-जो कुछ दर्पण में दिखता है, वह वस्तुतः वहां नहीं होता है। जैसे निद्रा में वासनामय होने का आभास होता है, किन्तु जागृत होने पर वह नहीं होता है ।। 3 ।। जागृत अवस्था प्राप्त होने के समय स्वप्न में उपलब्ध प्रपंच पिघल (समाप्त हो) जाता है। सद्‌गुरु द्‌वारा महावाक्यों (चार वैदिक महावाक्य) को समझाने पर अद्‌वय आनन्द प्रकाश प्रकट होता है ।। 4 ।। जो विश्व का सत्ता-स्फुरण है, उस (ब्रह्म) का अन्य निरपेक्ष अधिष्ठान वह गुरु-आत्मा है। ईश्वर जब प्रसन्न होता है, तभी साक्षात्करण होता है ।। 5 ।। उस स्वप्रकाश सदात्मक को ही आत्मस्वरूप देखो । वही विश्व भूत भौतिक माया का कौतुक खेल है ।। 6 ।। ब्रह्म से लेकर छोटी झाड़ी पर्यंत यह भूत भौतिक सब कल्पित हैं। ऐसे यह विस्तृत जगत केवल माया की झलक है ।। 7 ।। जैसे डोरी को स्वरूप के यथार्थ के ज्ञान के अभाव में सर्प, माला,दंड अथवा धारा मान लेते हैं। वैसे ही यह सकल जगत का प्रसार है। इसका स्वरूप में स्थान नहीं है ।। 8 ।। यह समस्त दृश्य जगत मायामय है, जिसका लय तत्वज्ञान में होता है। गुरु वाक्य से प्रबोध होने के समय यह प्राप्त होता है ।। 9 ।। "गृ" संस्कृत भाषा की धातु का तृतीय पुरुष एक वचन "गृणाति" रूप का अर्थ अध्यापन करना , मन में धारण करें। शिष्य को 'तत्व का उपदेश देने में एक ही व्यक्ति समर्थ है - गुरू ।। 10 ।। इसलिए बाबा से प्रार्थना करें कि बुद्‌धि को अन्तर्मुखी करें , नित्य व अनित्य के विवेक से युक्त करें व मुझे वैराग्यरत करें।। 11 ।। मैं तो सदा अविवेकी ,मूर्ख, अविद्‌या का गूढ व्यवधान हूँ । बुद्‌धि सर्वदा कुतर्क पर आरूढ़ है, इसी से मैं गूढ समस्या में पड़ गया हूँ ।। 12 ।। गुरु व वेदान्त वचन पर अटल भरोसा मैं करूं। जैसा दर्पण ऐसा मेरा मन कर दो। निज बोध मन पर छप कर प्रकट हो।। 13 ।। सर्वोत्तम सद्‌गुरु साईं समर्थ अर्थ के अनुरूप ज्ञान करावें । बिना अनुभव जुबानी बड़बड़ से क्या परमार्थ सिद्‌ध हो सकता है।। 14 ।। अतः बाबा अपने प्रभाव से इस ज्ञान को मुझे अंगीकृत करावें, अनुभूत करावें, सहज सायुज्य पद मुझे प्राप्त हो। हे साईं, कृपा का दान दें।। 15 ।। तदर्थ देवा, सद्‌गुरु साईं ! आपके चरणों में मैं देहाभिमान अर्पित करता हूं। अब से तुम्ही तुम देखो मुझमें मैं पन नहीं रहे ।। 16 ।। मेरा देहाभिमान ले लो। सुख-दुःख की अनुभूति मुझे नहीं चाहिए । इच्छानुसार अपने

सूत्र से चलाओ, मेरे मन को निरूद्ध करो।। 17 ।। अथवा मेरा जो मैंपन है, वह आप स्वयं अपने हो जाओ, सुख-दुःख भोक्तापन ले लो। मुझे उसकी बेकार की परेशानी नहीं उठानी है।। 18 ।। जय जयकार पूर्ण काम (साईं) की । तुम्हारे प्रति प्रेम स्थिर हो । हे मंगल धामा ! चंचल मन तुम्हारे पावों में विश्राम पावे ।। 19 ।। तुम्हारे बिना दूसरा कौन है, जो हमारे हित का वचन बोलेगा, मेरे दुःख को दूर करेगा, मन को संतुष्ट करेगा ।। 20 ।। बाबा, शिरडी का भाग्य था, कि आप का वहां आगमन हुआ। बाद में वहां निवास किया। वह स्थान पवित्र स्थान बन गया ।। 21 ।। शिरडी के सुकृत धन्य हैं कि वह साईं कृपावंत इस स्थल को भाग्यवंत बनाए, अपने निवास से अलंकृत किए ।। 22 ।। तूँ ही मुझे जाग्रत करते हो, तूँ ही मेरी वाणी का चलाते हो, तब मैं कौन हूं तुम्हारा गुण गाने वाला? कर्ता-कराने वाला तूँ ही एक है ।। 23 ।। तुम्हारा नित्य समागम ही हमारे लिए आगम-निगम (शास्त्र व वेद) है; नित्य तुम्हारा चरित्र श्रवण ही हमारे लिए पारायण (पवित्र ग्रन्थों का पाठ) है ।। 24 ।। एक क्षण व्यर्थ किए बिना तुम्हारे नाम का उच्चारण ही हमारा कथा कीर्तन है, यही हमारा नित्य उद्देश्य है, यही हमारी संतुष्टि है ।। 25 ।। मुझे ऐसा सुख नहीं चाहिए जिससे मैं भजन विमुख होऊँ। इस अद्यःपतन से अधिक परमार्थ बाधक क्या हो सकता है ।। 26 ।। आनन्द के आंसू गरम जल हैं; इसी से चरण प्रक्षालन करूं; शुद्ध प्रेम चन्दन का लेप है, सत् श्रद्धा का परिधान पहनाऊँ।। 27 ।। बाह्योपचार पूजा के स्थान पर इस अंतरंग पूजा विधान से तुझे सुप्रसन्न या सुख सम्पन्न करूँ ।। 28 ।। अति निर्मल अष्टदल कमल रूपी सात्विक अष्टभाव, मन को एकाग्र अविकल करके अर्पित करूँ व अपना फल प्राप्त करूँ।। 29 ।। भावार्थ का बुका (सुगन्धित गहरा पाउडर) भाल पर लगाऊँ, दृढ़ भक्ति की मेखला बांधू, पावों के अंगूठों पर मस्तक अर्पित करूँ, अलौकिक उत्साह का भोग करूँ ।। 3 0 ।। प्रीति रूपी रत्न के आभूषण पहनाऊँ, सर्वस्व का निंबलोण (नजर उतारने के लिए नीम की पत्ती राई नमक आदि व्यक्ति के चेहरे पर घुमाना) करूँ; पंच प्राण की चामर चलाऊँ (घुमाऊँ); तन्मयता रूपी छत्र से ताप निवारण करूँ ।। 3 1 ।। इस प्रकार चन्दन के लेप व पवित्र किए हुए चावल आदि के साथ स्वानन्द अष्टांग पूजा समर्पित करूँ; साईंराजा तुझे पूजूँ , अपने काज के लिए ।। 32 ।। इच्छित अर्थ को सिद्ध करने के लिए 'साईंसमर्थ' मन्त्र का नित्य स्मरण करूँ। जिस से परमार्थ सिद्ध होगा; निजनिष्ठा कृतार्थ होगी।। 3 3 ।। पूर्व अध्याय में कथन है कि कैसे दयाघन साईंसमर्थ अपने भक्तों को कल्याण साधने के लिए शिक्षा देते ।। 34।। अब इस अध्याय में निरूपण होगा किस प्रकार से भक्त को अपने गुरु के चरणों में स्थापित करते। इस अद्भुत कथा को सुनो ।। 3 5 ।। गत अध्याय के अन्त में उल्लिखित भक्त पंत के कथा अमृत को श्रोता दत्तचित्त होकर सुनें, तत्व को सुनिश्चित करने के लिए ।। 36 ।। कैसे-कैसे अनुभव देते,कैसे नेत्रों में निष्ठा का अंजन डालते, कैसे स्वगुरु के पदों में दृढ़ करते, कैसे मन को शान्त करते ।। 37 ।। एक बार पंत नामक भक्त बहुत प्रयास के बाद मित्र के साथ शिरडी गए, साईं के दर्शन की इच्छा से ।। 38 ।। वे पहले ही अनुग्रहीत थे, अपने गुरु के चरणों में स्थित थे । शिरडी किस निमित्त जायें मन में शंकित थे ।। 39 ।। तथापि जिसका जैसा योग, वैसा अकल्पित भोग घटित होता है। साई दर्शन की लहर आयी। अमोघ सुखदायी हुयी ।। 40 ।। हम एक कल्पना योजित करते हैं, ईश्वर

का और ही मन है। भाग्य के आगे कुछ चलता नहीं है। इसे स्वस्थ मन से सुनें ।। 41 ।। शिरडी के लिए प्रस्थान करने के लिए कई लोग अपने-अपने स्थान से अग्निरथ पर बैठने के लिए निकल पड़े। सभी आनन्द से एकत्र हुए ।। 42 ।। वे जैसे ही गाड़ी पर चढ़े अचानक वहीं वे पंत मिल गये। उनके शिरडी जाने की योजना से पंत अवगत हुए ।। 43 ।। मंडली में कुछ पंत के स्नेही थे। कुछ उनके बच्चों के सास व ससुर थे। पंत का मन जाने का नहीं था, किन्तु आग्रह व दबाव में उनके साथ हो लिए ।। 44 ।। आरंभ में पंत का विचार जहां तक जाने का था, उनका टिकट वहां तक का था। बाद में उन्होंने विचार बदला ।। 45 ।। मित्र व समधी बोले चलिए, साथ-साथ शिरडी जाते हैं। मन न होते हुए भी, आग्रह किए जाने पर सहमति दे दी पंत ने ।। 46 ।। पंत विरार में उतर गए । मंडली मुम्बई चली गयी। खर्च के लिए उधार लेकर पंत भी फिर मुंबई गए ।। 47 ।। मित्रों की इच्छा मानकर, अपने गुरु का अनुमोदन लेकर फिर वे शिरडी आए सभी आनंद से मिले ।। 48 ।। सुबह ग्यारह बजे के समय सभी मस्जिद गए, पूजन के लिए भक्तों की भीड़ देखकर उल्लसित हुए ।। 49 ।। बाबा की आकृति देखकर सभी आनंद संपन्न हो गए। कुछ ही समय में पंत को चक्कर आया । वे बेसुध होकर पड़ गए ।। 50 ।। शरीर कमजोर होकर निष्क्रियता को प्राप्त हो गया। साथी चिंतित हो गए। मन अति व्यग्र हो गया ।। 51 ।। मंडली की बड़ी मदद व साईं बाबा की कृपा दृष्टि थी । मस्तक पर जल की छींटे मारने से निष्क्रियता (निचेष्टिता) समूल चली गयी ।। 52 ।। चैतन्य होने पर हड़बड़ा कर उठकर बैठ गए ।मानों नींद में थे अभी उठकर बैठे हैं ।। 53 ।। बाबा पूर्ण अन्तर्ज्ञानी थे। उनकी गुरुपुत्रता जानकर, उन्हें अभयता का आश्वासन देकर निजगुरु के भजन में स्थापित कर दिया ।। 54।। बोले, "कुछ भी परिस्थिति आए । अपने गुरु का स्थान नहीं छोड़ना चाहिए। सदासर्वदा निश्चल रहो । एकत्व अनन्य देखो ।। 55 ।। पंत ने संकेत पा लिया। निजगुरु को स्मरण किया। साईंबाबा की करुणा जन्म भर स्मरण रही ।। 56 ।। वैसे एक मुंबापुर वासी हरिश्चन्द्र नामक सज्जन थे। पुत्र मिरगी की व्यथा से ग्रस्त था। इससे अति त्रस्त थे ।। 57 ।। देशी विदेशी वैद्य थे, कुछ एक उपाय नहीं चला। सभी प्रयत्न निष्फल होता देखा , साधु संत शेष रहे ।। 58 ।। सन् 1910 के वर्ष में दासगणु ने कीर्तन किए। श्री साईनाथ की कीर्ति का प्रसार हुआ, शिरडी की तीर्थयात्रा बढ़ गयी ।। 59।। छोटा ग्राम किन्तु भाग्य बड़े। शिरडी पंढरपुर हो गया। महिमा अपरंपार बढ़ गयी। तीर्थ यात्रा अपार बढ़ गयी ।। 60 ।। रोग केवल दर्शन से समाप्त हो जाते, अथवा केवल हाथ के स्पर्श से, अथवा शुद्ध कृपावलोकन से। अनेक ने अनुभव किया ।। 61 ।। अनन्य शरणागत होकर भक्त कृतकल्याण प्राप्त करता। सबके मनोगत जानकर सबके मनोरथ पूरा करते ।। 62 ।। ऊदी धारण करने से पिशाच पलायन कर जाते। आशीर्वचन से पीड़ा टल जाती। कृपा निरीक्षण से बाधा समाप्त होती। लोग दौड़ते आते ।। 6 3 ।। कथा कीर्तन, दासगणु के ग्रंथों से व कानों कान (एक कान से दूसरे कान) बाबा का माहात्मय सुनकर दर्शन की उत्कंठा उत्पन्न हुई।। 64।। सभी बाल बच्चों, व नाना प्रकार के पूजा के फल लेकर सेठ हरिश्चन्द्र पितले शिरडी ग्राम आए, दर्शन के लिए पूर्व अर्जित के बल से ।। 6 5 ।। पुत्र को बाबा के चरणों में डालकर स्वयं साष्टांग दण्डवत करने लगे। वहां एक विपरीत घटित हुआ। पितले (हरिश्चन्द्र पितले) अत्यन्त भ्रमित हो गए ।। 66

।। साईं से दृष्टादृष्ट (देखा-देखी) होते ही लड़का बेहोशी की अवस्था को प्राप्त हो गया। आंखें अचानक पलट गयीं। माता-पिता परेशान हो गए ।। 6 7 ।। भूमि पर संज्ञाहीन होकर पड़ गया। मुंह से अत्यधिक फेना आने लगा। माता-पिता को चिंता ने घेर लिया । क्या भाग्य कराता है ।। 68 ।। ऐसा लगा कि श्वास रुक गयी है, मुंह से फेना निकलता रहा, सभी अंगों से पसीना निकलने लगा; जीवित रहने की आस छलांग लगा गयी ।। 69 ।। इसके पूर्व लड़के को ऐसे झटके अनेक समय आए गए। किन्तु इतना बिलंब नहीं हुआ। यह अवसर एक ही था ।। 70 ।। 'न हुआ, न होगा'। प्राणांत की गति ला दी। माता के आंख से अश्रु न रुकते बालक की स्थिति देख कर ।। 71 ।। किस लिए आए थे क्या हो गया। उपाय अपाय हो गया। इस प्रकार घातक ये चरण हो सकते हैं क्या? क्या प्रयास व्यर्थ हो गया ।। 72 ।। घर में प्रवेश करें चोर के भय से, वह घर ही शरीर के ऊपर गिर जाये। वैसे ही यह हमारा आना हुआ। वह बाई बोली ।। 73 ।। व्याघ्र खा जायेगा इसलिए गाय जीवन के भय से भाग जाती है, मार्ग में उसकी भेंट कसाई से होती है। वैसे ही देखो हुआ ।। 74।। पथिक धूप की गरमी से तप कर वृक्ष की छाया में विश्राम करता है। वह वृक्ष ही गिर पड़ता है। उनकी गति ऐसी हुई ।। 75 ।। देव के प्रति विश्वास करके मंदिर के अंदर पूजा के लिए जाता है। मंदिर ही शरीर पर गिर पड़े, वैसा ही तब हुआ ।। 76 ।। फिर बाबा ने उन्हें आश्वस्त किया । **"चित्त में थोड़ा धीर धरें। लड़के को सावधानी से उठाकर ले जायें। उसमें चेतना आ जायेगी ।। 77 ।। लड़के को अपने स्थान पर ले जायें। और एक घड़ी होते ही उसका शरीर सजीव हो जायेगा। बिना किसी कारण जल्दबाजी मत करो ।। 78 ।।"** इसी प्रकार फिर किया गया । बाबा के बोल सत्य सिद्ध हुए। पितले घरवालों के साथ आनंदित हुए । कुतर्क विलुप्त हो गए ।। 79 ।। वाडा में लड़के को ले जाते ही तत्काल होश आ गया । माता-पिता की चिन्ता साफ हो गयी। बहुत आनंदित हुए ।। 80 ।। फिर पितले स्त्री सहित बाबा के दर्शन के लिए आए। साष्टांग प्राणिपात किया अति विनीत होकर ।। 81 ।। अपने पुत्र को खड़ा हुआ देखकर कृतज्ञ मन से आनन्दित होते हुए बैठकर बाबा के चरण दबाने लगे। बाबा सस्मित पूछते हैं ।। 82 ।। **"क्या संकल्प विकल्प की लहर (वृत्ति) शांत हो गयी, कम से कम अब तो। धैर्य धारण करके जो विश्वास करते हैं उनकी श्रीहरि रक्षा करते हैं"** ।। 83 ।। पितले मूल रूप से श्रीमंत (ऐश्वर्य पूर्ण) , अच्छे परिवार के, प्रसिद्ध व्यक्ति थे। मेवा मिठाई बांटी, बाबा को फल-पान अर्पित किया ।। 84।। उनकी पत्नी बहुत सात्विक थीं, प्रेमल श्रद्धालु व विश्वसनीय | खंभे के निकट बैठकर बाबा को एक टक देखती रहतीं ।। 85 ।। देखते-देखते आंखें भर आतीं। ऐसा वह रोज करती। उनकी प्रेम की नवलाई देखकर बाबा अत्यन्त मुग्ध हो जाते।। 86 ।। जैसे देव वैसे संत । वे भक्त के अत्यंत पराधीन होते हैं। अनन्य भाव से उन्हें जो भजते हैं, उनके प्रति कृपावंत हो जाते हैं ।। 87 ।। इस प्रकार यह मंडली जाने के लिए निकली । मस्जिद में दर्शन के लिए आए । बाबा की अनुज्ञा ऊदी प्राप्त करके निकलने की तैयारी थी।। 88 ।। अचानक बाबा ने अपनी जेब से तीन रुपये निकाले। पितले को निकट बुलाया । उसे सुनें जो वचन बोले ।। 89 ।। **"बापू तुझे मैंने पहले दो दिए थे उसके बाद ये तीन रखो। इनका पूजन करना। कृतकल्याण होगा।" ।। 90 ।।"** पितले ने रुपये प्राप्त किये। प्रसाद जानकर आनंद से स्वीकार किया। पावों में दण्डवत किया । बोले महाराज कृपा करो

।। 91 ।। मन में विचार लहर उठी। मेरी तो यह प्रथम फेरी है। फिर बाबा यह क्या बोलते हैं यह मैं निश्चित समझ नहीं पा रहा हूं ।। 92 ।। बाबा को पहले नहीं देखा । पहले दो कैसे दिए । अर्थ व बोध कुछ भी समझ में नहीं आया। पितले मन में विस्मित हुए ।। 93 ।। कैसे स्पष्टीकरण हो? मन की जिज्ञासा बढ़ गयी। बाबा कोई संकेत नहीं दे रहे थे। मुग्धता वैसी ही बनी रही ।। 94 ।। यद्यपि संत सहज उद्गार करते हैं फिर भी उनकी वाणी सत्य होती है। पितले मन से जानते थे। इसलिए वह विचार में पड़ गये ।। 95 ।। किन्तु बाद में जब वे मुम्बई अपने घर गए । घर में एक म्हातारी (वृद्ध महिला) थी। उसने जिज्ञासा पूरी की ।। 96 ।। म्हातारी (वृद्ध महिला) पितले की माता थीं। सहज शिरडी का वृत्तांत पूछने पर, तीन रुपए की वार्ता आयी, जिसका संबंध कथा से नहीं जुड़ सका था ।। 97।। विचार करने पर स्मरण आया, फिर वृद्ध महिला पितले से बोली। अब मुझे यथार्थ स्मरण हो आया । बाबा वे सत्य बोले थे ।। 98 ।। अभी तुम अपने पुत्र को लेकर शिरडी साईं के दर्शन करवाए, वैसे ही पहले तुम्हारे पिता अक्कलकोट तुम्हें लेकर गए थे ।। 99।। वहीं एक सिद्ध महाराज, परोपकारी महाप्रसिद्ध, अन्तर्ज्ञानी प्रबुद्ध योगी थे। पिता भी शुद्ध आचरण के थे ।। 100 ।। तुम्हारे पिता की पूजा स्वीकार करके योगीराज प्रसन्न हुए । प्रसाद में दो रुपये दिए पूजा करने के लिए ।। 101 ।। ये ही पूर्व के दो रुपए स्वामी ने, बच्चे ! तुम्हारे लिए प्रसाद दिए थे ,पूजा अर्चना करने के लिए ।। 102 ।। तुम्हारे देव देवता के अर्चन में वही दो रुपये रखे रहे। नियम से पूजा करते रहे अति निष्ठा से तुम्हारे पिता ।। 103 ।। उनकी निष्ठा मैं ही एक जानती हूं। उनके कार्य व्यवहार निष्ठा के प्रमाण थे। उनके पश्चात पूजा उपकरण बच्चों के खेल बन गए ।। 104 ।। देव के प्रति निष्ठा समाप्त होने लगी। पूजा करने में लाज लगने लगी। पूजा में बच्चों को लगा दिया जाता । रुपयों को महत्व कौन देता।। 105 ।। ऐसे कितने ही वर्ष बीत गए । वे रुपये महत्वहीन हो गए। स्मरण भी बिल्कुल नहीं रहा, रुपयों की जोड़ी खो गयी।। 106 ।। अब तुम्हारे महाभाग्य, साईं के रूप में अट्टल कोट के स्वामी महाराज से भेंट हुई, विस्मरण की पर्त को पोंछने के लिए, वैसे ही संकट दूर करने के लिए ।। 107 ।। अतः अब इससे आगे, संदेह व अविश्वास छोड़ो अपने पूर्वजों को देखो। कुटिल व्यवहार त्याग दो ।। 108 ।। संत प्रसाद को भूषण मान कर रुपयों का पूजन करते जाओ । समर्थ साईं ने लक्ष्य को निश्चित किया है, भक्ति को पुनर्जीवन दिया है ।। 109 ।। माता की कथा सुनते ही पितले के चित्त को परमानन्द मिला। साईं की व्यापकता दृढ़ हो गयी और दर्शन की सार्थकता भी ।। 110 ।। माता के वे शब्दामृत नष्ट भावना को जागृत कर दिए । पश्चाताप व प्रायश्चित देकर भावी हित दर्शाया ।। 111 ।। इस प्रकार होनी घटित हुई। आगे कार्य के लिए संत ने जागृत किया। उनका भला उपकार मानते हुए निजकार्य में सावधान रहे ।। 112 ।। ऐसी ही एक और अनुभूति कहता हूं। स्वस्थचित्त से सुनें । भक्त की मनोवृत्ति उच्छृखल थी। बाबा ने कैसे निरुद्ध किया ।। 113 ।।पाल नारायण आंबडेकर नामक एक बाबा के भक्त प्रवर थे, पुणे के रहने वाले । उनकी कथा सादर सुनें ।। 114 ।। अंग्रेज सरकार के अधीन आबकारी विभाग में नौकरी दस वर्षों तक पूरी करके सुस्त हो गए । छोड़कर घर बैठ गए ।। 115 ।। भाग्य विमुख होकर छिन गया। सभी दिन एक समान नहीं होते। ग्रहदशा के भंवर में आने पर (समय की) भिन्नता को कौन नहीं भोगता? ।।

116 ।। आरंभ में थाणे जिला में नौकर थे। बाद में दैववस जव्हार आए। वहां अम्मलदार हुए थे। वहीं बेकार हो गए ।। 117 ।। नौकरी अळू के पत्तों पर पानी है। पुनः कैसे पूर्व स्थान प्राप्त हो सकता है। प्रयत्न करके वे हार गए, पहले उस समय जो किया था ।। 118 ।। किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। स्वतन्त्र रहने का निश्चय किया । परेशानियों की चरम सीमा हो गयी। सभी ओर से हताश हो गए ।। 119 ।। वर्षो वर्ष खाली रहने से संपत्तिक स्थिति बिगड़ती गयी।आपत्ति पर आपत्ति आयी। गृह की स्थिति दुःसह हो गयी ।। 120 ।। ऐसे ही सात वर्ष व्यतीत हो गए। सालों साल शिरडी जाते। बाबा के सामने अपना दुःख गाते । दिन-रात दण्डवत करते ।। 121 ।। वर्ष 1916 में बेजारी अत्यन्त हो गयी। प्राणघात करने की सोची, शिरडी क्षेत्र गए ।। 122 ।। कुटुंब के साथ उस समय शिरडी में दो मास रहे। एक रात क्या हुआ उस घटना को सुनें ।। 123 ।। दीक्षित वाडा के समक्ष एक बैलगाड़ी पर आंबडेकर बैठे थे। विचार तरंगे चल रहीं थीं ।। 124 ।। जीवन से थक कर अत्यन्त उदास वृत्ति हो गयी। बहुत हो गया, अब और परेशानी नहीं । जीवन की आस छोड़ दी ।। 125 ।। ऐसा विचार करके, जीवन के प्रति उदास होकर कुएं में कूदने के लिए अंबडेकर तत्पर हो गए ।। 126 ।।दूसरा कोई निकट नहीं हो, ऐसी एकान्त वेला साध कर अपने मन का उत्साह पूरा करूँगा, दुःख से छुटकारा होगा ।। 127 ।। आत्महत्या दुर्धर पाप है। फिर भी यह विचार दृढ़ किया। किन्तु साईं बाबा सूत्रधार हैं, उनका यह विचार टाल दिया ।। 128 ।। वहां से चार कदम पर एक भोजनालय वाले का घर था। उसके भी बाबा आधार थे। वह भी बाबा का परिचारक था ।। 129 ।। सगुन ने दरवाजे पर आकर अंबडेकर से उस वक्त पूछा, “यह अक्कलकोट महाराज की पोथी कभी पढ़ी है क्या?" ।। 130 ।। “देखू-देखू क्या है यह पोथी।” कहते हुए अंबडेकर हाथ में ले लिए । सहज पन्ने देखने लगे। मध्य से पढ़ने लगे ।। 131 ।। कर्म, धर्म, संयोग कैसा ? वैसा ही विषय पढ़ने के लिए आया। अंतरवृत्ति के अनुरूप ही अध्ययन तत्काल स्पष्टरूप से मस्तिष्क पर चिह्नित हो गया ।। 132 ।। सहज ही जो कथा आयी। वह मैं समस्त श्रोताओं को निवेदित करता हूं, ग्रन्थ के विस्तारित होने के भय से तात्पर्य व अर्थ को अति संक्षेप में ।। 133 ।। अक्कल के महाराज अंतर्निष्ठ व वरिष्ठ संत थे। एक भक्त बहुत बीमार था । दुःसह कष्ट पा रहा था।। 134 ।। बहुत दिन सेवा किया, कहते हैं, व्याधि विहीन होने के लिए। वह कष्ट सहन न होने पर अति उद्विग्न हो गया ।। 135 ।। आत्महत्या करने का निश्चय करके, रात्रि का प्रहर देखकर, एक कुएं तक जाकर उसमें कूद गया ।। 136 ।। अचानक महाराज वहां आये। अपने हाथ से उसे बाहर निकाला। उसे उपदेश दिया, "**निश्चित रूप से, सारे भोक्तृत्व को भोगना पड़ता है ।। 137 ।। अपने पूर्व कर्मो का फल व्याधि कुष्ट क्लेश अथवा रोग का पूर्ण भोग किये बिना आत्महत्या का उपाय क्या करेगा ।। 138 ।। यह भोग अपूर्ण रहने पर दूसरा जन्म लेना तुरन्त पड़ता है। इसलिए वैसे ही थोड़ा और कष्ट सहो । आत्महत्या से कुछ नहीं होगा ।। 139 ।।”** यह समयोचित कथा पढ़ कर आंबडेकर का चित्त जहां का तहां रह गया । बाबा की व्यापकता देखकर लज्जित हुए ।। 140 ।। आंबडेकर मन में समझ गए । प्रारब्ध का भोग निश्चित है। यही उस अवसर पर उन्हें सोचवाया गया। सोचा हुआ साहस उनके भले का नहीं है ।। 141 ।। आकाशवाणी जैसी यह प्रत्यक्ष किया था। साईं की अद्भुतता से साईं के चरणों से वे और निकटता

से जुड़ गए ।। 142 ।। इस अकल्पित पुस्तक द्वारा साईं ने सगुण मुख से इशारा किया। इसमें जरा भी बिलम्ब होता तो जीवन मिट्टी में मिल जाता ।। 143 ।। अपने जीवन से मुक्त होकर दुर्धर कुटुंब घात करता; स्त्री के ऊपर अनर्थ ला देता। स्वार्थ-परार्थ खो देता ।। 144 ।। पोथी को निमित्त बनाकर बाबा सगुण प्रवृत्त हुए । चित्त को आत्मघात से विपरीत वृत्ति में कर दिया ।। 145 ।। यदि इस प्रकार घटित न होता तो बेचारा व्यर्थ जीवन से हाथ धो बैठता। किन्तु जहां साईं सम तारने वाला है उसे मारने वाला कैसे मारेगा ।। 146 ।। इस भक्त के पिता अक्कल कोट स्वामी के भक्त थे। यही आगे चलती रहे, इस अनुभव की बाबा ने पुनरावृत्ति करायी ।। 147 ।। इस प्रकार, आगे अच्छा होता गया । ये दिन भी बीत गए । ज्योतिर्विद्या में परिश्रम का फल भी उमड़कर आया ।। 148 ।। साईं कृपा का प्रसाद पाया। आगे के दिन अच्छे आए । ज्योतिर्विद्या में प्रवीणता प्राप्त हुई। पूर्व की दीनता समाप्त हो गयी ।। 149 ।। गुरुपदों में प्रेम की बृद्धि हुई। सुख कुशल क्षेम हुआ । गृह सौख्य आराम प्राप्त हुआ । परम आनंद मिला ।। 150 ।। ऐसे अगणित चमत्कार, एक से एक बड़े । कहने से ग्रंथ विस्तार होगा इसलिए सार कहते हैं ।। 151 ।। हेमाड साईं पदों की शरण में है। अगले अध्याय में मधुर कथन है। माधवराव देशपाण्डे को विष्णु सहस्त्रनाम दान दिया ।। 152 ।।शामा के ना ना कहने पर भी बाबा का उनके प्रति असीमित प्रेम होने के कारण, सुन्दर महात्म्य बताते हुए जबरदस्ती (बलपूर्वक) सहस्रनाम दिया ।। 153 ।। अब सादर उस कथा को सुनो । समय आने पर शिष्य की इच्छा न होते हुए भी बाबा अनुग्रह देते हुए दिखते हैं।। 154 ।। अनुग्रह का अलौकिक प्रकार कैसा सद्गुरु के घर है। अध्याय के अन्त में दिखेगा । श्रोता आदर से सुने ।। 155 ।। कल्याणों में जो कल्याण है। वह यह साईं गुणों का खजाना है। भाग्य से पुण्य श्रवण कीर्तन होता है, जिनकाचरित्र पावन है।। 156 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्रीसाईं समर्थ सच्चरित में "अपस्मारात्महत्यानिवारण तथा निजगुरुपद स्थिरीकरण" नामक छब्बीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

।। श्री सदगुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभ भवतु ।।

।। अध्याय सत्ताइसवां (दीक्षा अनुग्रह दान) ।।

।। श्रीगणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरु साईंन नमन ।।

श्री सद्‌गुरु चरणों को दृढ़ता से धरने से ब्रह्मादि त्रिमूर्ति को नमन , साक्षात परब्रह्म का अभिवंदन होता है । स्वानंदघन सुप्रकट होता है ।। 1 ।। सागर में एक डुबकी मारने से सभी तीर्थो की धर्मयात्रा सिद्‌ध हो जाती है । गुरुपदों के निकट बैठने से सकल देव निकट सम्पर्क में आ जाते हैं ।। 2 ।। जय जयाजी साईं सद्‌गुरु , जय जयाजी सायुज्य मुक्ति देने वाले कल्पतरु । जय जयाजी निजबोध के सागर , कथा के प्रति आदर उपजावें ।। 3 ।। जैसे मेघ के जल के लिए चातक वैसे ही तुम्हारे कथामृत के लिए दृढ़ अनुयायी । सभी भक्त तेरा सेवन करें , सदैव सुख पावें ।। 4 ।। तुम्हारी निर्मल कथा सुनकर सर्वत्र शरीर पर पसीना निकल आए , नेत्रों में प्रेमजल गहरा हो जाये , प्राण पंगु होकर रह जायें ।। 5 ।। मन भावाकुल हो जावे , उस पर रोमांच उठे । बारंबार रोना व सुबकना हो श्रोताओं का सपरिवार ।। 6 ।। परस्पर विरोध टूट जावे , छोटे - बड़े का भेद मिट जावे । यही गुरुकृपा बोध अन्तर्मन का शोध करायेगा ।। 7 ।। यह दृष्टि से नहीं दिखता । सभी इन्द्रियों के लिए अगोचर है । सद्‌गुरु बिना इसका दाता त्रिभुवन में ढूढने पर नहीं मिलेगा ।। 8 ।। गुरुपदों में परम निष्ठा न उपजने पर कामादि षट्‌विकारों का उपशमन व भक्तिभाव , निःसीम प्रेम, अष्टभाव का उद्‌गम नहीं होता ।। 9 ।। भक्तों का जो निजसुख है वही गुरु का परम हर्ष है । भक्त ज्यों - ज्यों परमार्थ की ओर उन्मुख होता है त्यों - त्यों गुरु कौतुक करते हैं ।। 10 ।। देह , गृह , पुत्र , पत्नी- यह निरन्तर मैं व मेरा व्यर्थ है । यह सब क्षणिक माया है जैसे दोपहर की छाया ।। 11 ।। माया की गुत्थी में नहीं बंधना है इस प्रकार थोड़ा भी मन हो तो साईं के प्रति अनन्यभाव में हों व शरणागति प्राप्त करें ।। 12 ।। माया का अंत पाने में वेद शास्त्रों ने हाथ टेक दिए । जो भूतों में भगवंत को देखते हैं वही निश्चित तरते हैं ।। 13 ।। निजामशाही छोड़कर , धन्य है वह चांद पाटिल जो , अपने साथ फकीर साईं को लेकर आरंभ में नेवासा ले आए ।। 14 ।। वहीं छः मास या एक वर्ष फकीर का निवास रहा । वहीं कानड गांव के ' कमा ' का साथ रहना हुआ ।। 15 ।। बहरहाल , बाद में , प्रसिद्‌ध टाकली

(गांव) के दगडू तांबोली मिले । कमा व बाबा के साथ यह मंडली वहां से शिरडी आयी ।। 16 ।। जगह - जगह अगणित पवित्र स्थल तीर्थ बहुत हैं, पर साईं के भक्तों के लिए शिरडी अत्यन्त पवित्र है ।। 17 ।। यदि , भाग्यवश , यह योग न आता फिर कैसे यह महाभाग्य कि हम दीनों का यह साईं से समागम होता । यह हमारा महाभाग्य है ।। 18 ।। जो - जो भक्त शरणागत हैं । उनके कार्यार्थ को सधवाने के लिए साईं उनके हित के लिए उन्हें यथार्थ सन्मार्ग दिखाते हैं ।। 19 ।। अतः श्रोतागण एकाग्र मन होकर सच्चरित का पाठ करो । यह साईं का पावन चरित्र गुरुकृपा का परम साधन है ।। 20 ।। गत अध्याय में एक का निज गुरुपदो में स्थापन का निरूपण है । अक्कल कोट स्वामी का चिह्न एक को देकर जागृत किया ।। 21 ।। एक का आत्मघात रोका । अकल्पित युक्ति योजित की।क्षण में जीवन दान दे दिया । हाथ बढ़ाकर देहान्त टाल दिया ।। 22 ।। अब इस अध्याय का कथन । कभी साईं कैसे प्रसन्न होकर भक्तों को अनुग्रहदान करके सुख सम्पन्न करते ।। 23 ।। दीक्षा का वह अद्भुत प्रकार । कैसे किसी को विनोदपूर्ण हंसते खेलते होती । श्रोता सावधान चित्त से सुनें ।। 24 ।। उपदेश की अनेक रीति ,पीछे इस ग्रंथ में वर्णित है । जैसी जिसकी प्राप्त करने वाले की स्थिति , वैसे ही मार्ग उपदेशित करते ।। 25 ।। वैद्य रोग का निदान जानता है । उसे दवा का गुण ज्ञात रहता है । रोगी उसे न जानते हुए पहले गुड़ लाओ कहता है ।। 26 ।। गुड़ मीठा पर अपकारी (हानि कारक) होता है , रोगी उसी के लिए हठ करता है , लगता है औषधि नहीं लेगा हाथ पर गुड़ रखे बिना ।। 27 ।। रोगी के साथ कठोर नहीं बनते । वैद्य तब युक्ति योजित करता है । पहले गुड़ फिर औषधि देते हैं , किन्तु निजकार्य साधते हैं ।। 28 ।। केवल अनुपान (दवा का मिश्रण) इतना बदलता है कि जिससे गुड़ का दोष समाप्त हो जाये ! योजित औषधि कार्यक्षम बनी रहती । ऐसी ही रीति बाबा की थी ।। 29 ।। यह भी सर्वत्र नियम नहीं था । अधिकार और मनोधर्म , जैसी , सेवा , भक्त - प्रेम वैसे ही अनुग्रह का उपक्रम ।। 30 ।। बाबा की अद्भुत लीला नवल होती । जिस किसी पर प्रसन्न होते तब उसे वे अनुग्रह देते । किस स्थिति में , उसे सुनो ।। 31 ।। एक बार उनके मन में आजाये । किसी के मन में ध्यान हो या नहीं । सहज हंसी विनोद करते भक्त की कृतार्थता साधते ।। 32 ।। ग्रंथ पढ़ने की इच्छा होने पर भक्त के मन में सहज ही आता । ग्रन्थ को हाथ में देकर प्रसाद कहकर उसे लेंगे ।। 33 ।। बाद में फिर उस ग्रन्थ का पाठ करने से श्रेय सम्पादन होगा ! श्रोता व वक्ता का परम कल्याण होगा, उस प्रसाद पूर्ण श्रवण से ।। 34 ।। कोई दशावतार का चित्र , कोई दशावतार - स्तोत्र , कोई पंचरत्नी गीता के सम पवित्र पुस्तक

व चरित्र अर्पित करता ।। 35 ।। दासगणू की संत लीलामृत भी , भक्त लीलामृत भी अर्पित करते । कोई ' विवेक सिन्धु ' ग्रन्थ । बाबा उन्हें शामा को दे देते ।। 36 ।। ये पुस्तकें , शामा , तुम्हारी हो गयी , " घर में बांधकर रख लो । " शामा आज्ञा को सिर वंदन करते । पुस्तकों को सुरक्षित रख देते ।। 37 ।। ऐसे भक्त के मन में आता । दुकान से ग्रंथ लेकर उसे बाबा के हाथ में देंगे । प्रसाद कहकर मांगेगे ।। 38 ।। यद्यपि उदार स्वभाव था बाबा का । यह भी करने के लिए हिम्मत चाहिए थी । माधवराव को साथ लेकर उनका सामना करते ।। 39 ।। उनके माध्यम से बाबा के हाथ में समय देखकर ग्रंथ देते । बाबा जैसे ग्रंथ की महत्ता वैसे ही भक्त की स्थिति जानते थे ।। 40 ।। भक्त हाथ में ग्रंथ देते । बाबा एक के बाद एक पन्ने पलटते । भक्त उसे वापस लेने के लिए हाथ आगे करते ।। 41 ।। किन्तु बाबा उसे नहीं देते । उसे माधवराव को देते । बोलते , " शामा , अभी अपने पास इस नयी प्रति को रखो ।। 42 ।। शामा के स्पष्ट शब्दों में पूछने पर कि ये जो आतुरता से हाथ पसारे हैं, उनको उनकी प्रति दे दूं । तब भी वे बोलते " तू रख " ।। 43 ।। एक बार भक्त काका महाजनी जिनकी रुचि भागवत पाठन में थी , साथ में ग्रंथ की प्रति लेकर शिरडी पहुंचे ।। 44 ।। माधवराव भेंट के लिए आए | पढ़ने के लिए कहकर पुस्तक उठा लिए । हाथ में लेकर मस्जिद गए । बाबा ने सहज पूछ लिया ।। 45 ।। " शामा यह हाथ में पुस्तक किस प्रकार की है ? " शामा ने निवेदन किया । बाबा ने हाथ में लेकर , देखकर वापस कर दिया ।। 46 ।। यही पुस्तक, यही प्रति , यही नाथ-भागवत', श्री साईं बाबा के हाथ से प्रसाद स्वरूप महाजनी पहले प्राप्त किए थे ।। 47 ।। "वह ग्रंथ के मालिक नहीं है, काका महाजनी का है, पाठन करने की तात्कालिक इच्छा हुई।" स्पष्ट बात बता दी ।। 48 ।। फिर बाबा ने माधवराव से कहा, जिसके लिए मैंने इसे तुझे दिया है, तू अपने संग्रहालय में रखो। रखने पर काम आएगी " ।। 49 ।। बहरहाल कुछ समय के बाद काका महाजनी पुनः शिरडी आए। साथ में भागवत की अन्य प्रति लाए। साईं के हाथ में अर्पण कर दी ।। 50 ।। प्रसाद कहकर वापस दे दी। आज्ञा दी,"यथोचित अपनत्व से रखो।" यह काका को आश्वासन दिया, "यह आपके लिए उपयोगी है" ।। 51 ।। "यही आप के काम आएगी, किसी अन्य को न दें।" इस प्रकार बल देकर रुचि लेकर कहा । काका ने सप्रेम वंदना की ।। 52 ।। बाबा की स्वयं की सभी इच्छाएं पूर्ण थी। पदार्थ मात्र के प्रति पूर्ण निष्काम थे। जो भागवत धर्म का आचरण करता हो उसके लिए संग्रह के लिए श्रम करना किस प्रयोजन का? ।। 53 ।। कौन जाने बाबा का मन, किन्तु यह ग्रंथ संग्रह व्यावहारिक दृष्टि से अत्यन्त पावन था। निजभक्त का

श्रवण साधन था ।। 54 ।। अब शिरडी पवित्र स्थान है। देश-देश से बाबा के शिष्य, समय-समय पर एकत्र होंगे, ज्ञानसत्र आयोजित होगा ।। 55 ।। तब इन ग्रन्थों का उपयोग होगा,शामा अपने संग्रह से दिखाएंगे। स्वयं मैं निजधाम जा चुका होऊंगा । ग्रंथ प्रतिमा होंगे ।। 56 ।। इस प्रकार इन परम पावन ग्रन्थों को, शिरडी हो या अन्य स्थान, बांचते समय भक्तों को स्मरण होना चाहिए कि संग्रह के कारण हुआ है ।। 57 ।। यह रामायण हो या भागवत, परमार्थ का कोई भी ग्रंथ, राम व कृष्ण आदि का चरित्र पढ़ते साईं आगे पीछे दिखते हैं ।। 58 ।। मानो ग्रंथ की विभूति का रूप उसी स्थिति में साईं ने ले लिया है। श्रोता वक्ता नित्य सामने देखते हैं साईं की मूर्ति ।। 59 ।। गुरु को ग्रंथ अर्पण करें अथवा ब्राह्मण को दान करें, वह भी देने वाले के लिए कल्याणकारी है। इस हेतु शास्त्र प्रमाण है ।। 60 ।। वह जो बाबा का शामा के लिए निर्देश होता, "तुम यह ग्रंथ घर ले जाओ, सावधानी पूर्वक सुरक्षित रखो," का क्या स्वल्प प्रयोजन है ।। 61 ।। जैसे शामा निःसीम भक्त थे, वैसे ही उनके प्रति बाबा का प्रेम | उन्हें कुछ अनुशासित करने की इच्छा बाबा के मन में उदित हुई ।। 62 ।। तब, देखो, वे क्या करते हैं? यद्यपि शामा की इच्छा नहीं थी, फिर भी उनके प्रति अनुग्रह किया। किस स्थिति में, यह सुनें ।। 63 ।। एक दिन मस्जिद में एक रामदासी बुवा थे उनका नित्य नियम था रामायण पाठ ।। 64 ।। प्रातःकाल मुखमार्जन, स्नान-संध्या, भस्मर्चन करके भगवा वस्त्र पहनकर अनुष्ठान पर बैठते ।। 65 ।। विष्णुसहस्रनाम का उच्चारण, तत्पश्चात अध्यात्म रामायण, पारायण के बाद पारायण श्रद्धापूर्वक चलता रहता ।। 66 ।। ऐसे पर्याप्त समय बीत गए । माधव राव का समय आया । साईंसमर्थ के चित्त में क्या आया वह विवरण सुनें ।। 67 ।। माधव राव की सेवा फलित हुई । माधव राव को अनुशासन में लाने के लिए भक्ति मार्ग का प्रसाद हो, सांसारिक चिन्ताओं से विश्राम लाभ हो ।। 68 ।। ऐसा बाबा के मन में आया । रामदास को पास बुलाया । बोले, “पेट में तेज दर्द उठा है, अंतड़ियां टूट पड़ रही हैं ।। 69 ।। जाओ, यह पेट दर्द बन्द नहीं होगा, तुरन्त सोनामुखी लाओ। थोड़ी से फांकी मारे बिना पेट की परेशानी जायेगा नहीं ।। 70 ।।“ रामदास बेचारा विश्वास करने वाला । पोथी में चिह्न रखकर दौड़ते हुए बाजार तक गया, बाबा की आज्ञा मानते हुए ।। 71 ।। रामदास नीचे उतरा । इधर बाबा ने क्या किया । तत्काल आसन पर से उठे. पोथी के पास गए ।। 72 ।। वहां अन्य पोथियों में विष्णुसहस्रनाम पोथी थी। उठा कर बाबा ने हाथ में पकड ली। फिर अपने स्थान पर आ गए ।। 73 ।। बोले, "शामा, यह पोथी भी, देखो, बहुत कल्याणकारी है। इसलिए तुझे देता हं। तुम इसे अभी ऊँची आवाज में पढ़ोगे। ।। 74 ।। एक

बार मुझे दर्द उठा। कलेजा धड़कने लगा। मन परेशान हो गया। बचने का कोई मार्ग नहीं दिख रहा था मुझे ।। 75 ।। ऐसे ही अवसर पर, क्या कहूं तुमसे शामा, यह 'विष्णुसहस्रनाम' का जो उपयोग हुआ। इसी से जीवन संकट से उबरा ।। 76 ।। एक क्षण छाती पर रखा । तत्काल कलेजे को ठंडक पहुंची, परमेश्वर, मानो, इसमें उतर गए हों। इसी से जीवन बच गया ।। 77 ।। इसलिए शामा यह तुम ले जाओ। धीरे-धीरे वांचते जाओ। रोज एकाद ही अक्षर लो। यह बहुत आनन्द दायी है ।। 78 ।।" शामा बोले "यह मुझे नहीं चाहिए । रामदास मेरे प्रति क्रोध से भर जायेगा । वह कहेगा कि उसके पीछे मैंने यह खोटा काम किया है।। 79 ।। पहले ही स्वभाव से आधा-पागल है, फिरे हुए माथे का झगड़ालू व क्रोधी । व्यर्थ में क्यों यह उपाय हो। मुझे यह कटकट नहीं चाहिए ।। 80 ।। इसके अतिरिक्त पोथी संस्कृत लिपि में है। मेरी वाणी असंस्कृत व अरुचिकर है। संयुक्त अक्षर भी जीह्वा से नहीं निकलते । मेरा उच्चारण स्पष्ट नहीं है ।। 81 ।।" बाबा का सरल कृत्य देखकर लगता था मानो झगड़ा कराना चाहते हो । बाबा शामा के लिए कितना लगाव रखते थे, शामा को इसका अन्दाज नहीं था ।। 82 ।। **"मेरा शामा पागल है किन्तु मेरा उससे लगाव है। उसने मेरे हृदय में स्नेह पैदा कर दिया है, उसके प्रति मेरे अन्दर बड़ी दया है ।। 83 ।। यह विष्णुसहस्रनाम माला अपने हाथ से उसके गले में बांधूंगा, उसे भव दुःख से मुक्त करूंगा, वाणी को चलाऊंगा।" ।। 84 ।। "नाम", पाप का पहाड तोड़ सकता है। नाम शरीर का बंधन तोड़ सकता है। नाम करोड़ों दुर्व्यसनों को समूल तुरन्त दूर भगा देता है। ।। 85 ।। नाम काल (मृत्यु) का मान तोड़ देता है । जन्म-मरण के खिंचाव से बचाता है। सहस्त्रनाम ऐसा खजाना है, शामा को अच्छा लगेगा। ।। 86 ।। प्रयत्न पूर्वक नाम लेना उत्तम है, अप्रयत्न पूर्वक भी बुरा नहीं है। अनपेक्षित यदि मुख से आ जाये तो भी प्रभाव प्रकट करेगा। ।। 87 ।। नाम की तुलना में, सरल अन्तःशुद्धि का दूसरा साधन नहीं है। नाम जिह्वा का भूषण है ,नाम परमार्थ का पोषण करता है। ।। 88 ।। नाम लेने के लिए स्नान करना आवश्यक नहीं है। नाम के लिए विधि विधान नहीं है। नाम में सकल पाप निर्दलन है। नाम सर्वदा पावन है ।। 89 ।। मेरा नाम अखण्ड लेने से निश्चित ही बेड़ा पार होगा। अन्य साधनता की आवश्यकता नहीं होगी। मोक्ष हाथ में उपलब्ध होगा ।। 90 ।। जो मेरा नाम बार-बार लेता है, उसके पाप घुल जायेंगे। वह मेरे लिए गुणियों से भी गुणी है जो मेरा नाम सतत व हलू-हलू जपता है ।। 91 ।।"** यही बाबा का मनोगत था, तदनुसार फिर वह व्यवहार करते रहे। शामा यद्यपि इंकार करते रहे। बाबा ने उनके जेब में डाल दी।। 92 ।। पूर्वजों के सबल पुण्य थे उसी से साईकृपा का फल

। यह ‘सहस्त्रनाम' ऐसा निर्मल है, सांसारिकता की कष्टमय अशान्ति समाप्त हो जाती है।। 93 ।। अन्य कर्मो में विधि होना आवश्यक है, नाम कभी भी निरवधि लिया जा सकता है। प्रदोष बाधा से उसके पाठ में व्यवधान नहीं होता ।। 94 ।। एकनाथ ने भी इसी रीति से एक अपने पड़ोसी को सहस्त्रनाम में लगाया; परमार्थ पंथ में प्रवेश कराया ।। 95 ।। एकनाथ के घर में नित्य पुराण का पाठ होता। पड़ोसी, जाति का ब्राह्मण, स्नान-ध्यान विहीन दुराचरण में निमग्न रहता ।। 96 ।। वह कभी पुराण श्रवण नहीं करता। दुर्जन एकनाथ के वाडा में पैर नहीं रखते। एकनाथ ने सकरुण होकर उसे बुलवाया ।। 97 ।। उच्च वर्ण का होते हुए भी जन्म व्यर्थ व्यतीत हो रहा था। यह रहस्य जानकर 'नाथ' में परम कृपा उपजी, कैसे उपरम प्राप्त हो ।। 98 ।। इसलिए उसके न कहने पर भी 'सहस्रनाम प्रति दिया। एक-एक श्लोक पढ़ते-पढ़ते निज-उद्धारता प्राप्त हुयी ।। 99 ।। इस 'सहस्रनाम' का पाठ चित्त शुद्धि का सीधा मार्ग है। यह परिपाठ परंपरागत है। इसी से बाबा की यह रुचि ।। 100 ।। तब तक रामदास जल्दी से आया सोनामुखी औषधि लेकर । अण्णा चिंचणकर ने खड़े होकर झगड़ा करवाने के लिए साद्यंत वृत्तांत बता दिया ।। 101 ।। रामदास पहले से ही उग्र थे। उस पर नारद की मध्यस्थता । फिर उस अवसर की अपूर्वाई कौन यथार्थ गा सकता है ।। 102 ।। पहले से ही रामदास कुतर्क की प्रतिमा थे। चित्त में माधवराव के लिए संशय हुआ । बोले, “मेरी पोथी हथियाने के लिए बाबा की मध्यस्थता प्राप्त की। ।। 103 ।। सोनामुखी की बात भूलकर माधवराव पर टूट पड़े। वृत्ति प्रकोप अनियन्त्रणीय हो गया । प्रचुर मात्रा में निरर्थक शब्द बरसाने लगे ।। 104 ।। पेट-दुखने का यह सब ढोंग है। तुमने बाबा को उद्यत किया । तुम्हारी निगाह मेरी पोथी पर थी। यह मेरे आगे नहीं चलेगा ।। 105।। नाम से मैं निडर रामदास हूं। निश्चित बता देता हूं कि पोथी न देने पर यह मस्तक देखो तुम्हारे सामने फोड़ लूंगा। रक्त की धारा बहेगी ।। 106 ।। तुम्हारी मेरी पोथी पर निगाह थी। स्वयं कपट विद्या की रचना की । सब बाबा के गले में डाल दिया, अपना नाम अलग रखते हुए ।। 107 ।। माधवराव ने बहुत समझाया। रामदास शांत नहीं हुए। तब माधवराव ने सौम्यवृत्ति से क्या कहा उसे सुनें ।। 108 ।। मैं कपटी हूं यह दोष वृथा मेरे माथे पर न मढ़ो। तुम्हारी इस पोथी की क्या कथा है? यह अनुपलब्ध नहीं है ।। 109 ।। तुम्हारी पोथी में क्या सोना है या हीरा जड़ा लिया है? बाबा पर भी विश्वास जिसके कारण नहीं रहा । तुम्हारा जीना धिक्कार है ।। 110 ।। उनकी उग्रता देखकर बाबा उनसे मधुर वाणी बोले,” **हे रामदास क्यों बिगड़ रहे हो? व्यर्थ बहस का प्रयास क्यों ।। 111 ।। अरे शामा अपना बच्चा है। तुम क्यों व्यर्थ**

शिराओं को खींच रहे हो। किसलिए इतना कष्ट व दुःख | जग को तमाशा दिखा रहे हो ।। 112 ।। ऐसे कैसे तुम कलह तत्पर हो गए। क्यों मधुर उत्तर नहीं बोल सकते हो। अरे यह पोथी निरन्तर पढ़ने पर भी मन अशुद्ध है।। 113 ।। प्रतिदिन अध्यात्म रामायण पढ़ते हो । सहस्त्रनाम का पाठ बार-बार करते हो, तब भी उच्छृखल वृत्ति नहीं छूटती और रामदास कहलवाते हो।। 14 ।। ऐसा कैसा रामदास तूं है। तुम्हें सभी अर्थों में उदास होना चाहिए। किन्तु पोथी का लोभ नहीं टूट रहा है। इस कर्म को क्या कहा जाये ।। 115 ।। रामदासी में ममता नहीं होनी चाहिए। बड़े छोटे में समता होनी चाहिए। फिर भी तुम्हारी उस बच्चे के प्रति बैर भाव, अपनी पोथी के लिए हाथा पाई ।। 116 ।। जाओ, स्थान पर बैठो। पोथी पैसे में पसेरी भर मिलती है; कल्प पर्यंत (अच्छा) मनुष्य नहीं मिलता, यह विचार मन में सुरक्षित कर लो ।। 117 ।। तुम्हारी पोथी का क्या महत्व है? शामा के लिए उसकी कौन गति? उसे मैंने अपनी इच्छा से उठाया । उस प्रति को उसे मैंने दिया ।। 118 ।। तुलना की जाय तो तुम्हें तो यह कंठस्थ है। शामा के देने का मन में आया । बार-बार पढ़ता रहेगा। अत्यन्त कल्याण होगा ।। 119 ।।“ क्या उस वाणी की सरसता थी? मधुरता और दयालुता जैसे स्वानंद जल की शीतलता। उनमें अति अपूर्वता थी ।। 120 ।। रामदास ने मन में स्पष्ट रूप से समझ लिया था। माधवराव से चिड़चिड़ाते हुए कहा । बदले में “पंचरत्नी गीता' लेकर ,यह अब तुझे बता देता हूं ।। 121 ।। रामदास इतना शांत हो गया। माधवराव को आनंद हुआ । “एक क्या मैं बदले में दस तुम्हें दूंगा” ।। 122 ।। इस प्रकार बाद में वह झगड़ा शांत हो गया। गीता ग्रंथ जमानत रही। गीता के देव (श्रीकृष्ण) को जो नहीं जानता उसके लिए गीता क्यों? ।। 123 ।। साईं के सन्मुख आध्यात्म रामायण पाठ पर पाठ जो जानकर करता, वही रामदास इस प्रकार साई से आमना-सामना किया, झगड़ा करने के लिए, क्यो? ।। 124 ।। फिर भी मैं कैसे कहूं? दोष किसी को कैसे दूं। यह इस प्रकार न हुआ होता तो कैसे महत्व समझाते।। 125 ।। इतना झगड़ा जिसके कारण हुआ, बाबा की पीड़ा दूर हो गयी, जिसमें मेरा कल्याण है, वह साईं की अलौकिक देन है ।। 126 ।। यदि यह प्रयास न होता, माधवराव का विश्वास न बैठता, जिह्वा पर सही अच्छर नहीं चढ़ते, उनसे पाठ होता ही नहीं ।। 127।। ऐसे हैं साईनाथ प्रेमल । परमार्थ का खेल प्राप्त करना कठिन है कब व कैसे रहस्य दिखायेंगे। उनकी करनी समझ से परे है ।।128 ।। बाद में शामा की निष्ठा सुदृढ़ हो गयी। हरी सीताराम दीक्षित व प्रोफेसर गणेश गोविंद नरके ने शिक्षा दी। अक्षर की पहचान करना सीख गए । पोथी जिह्वा पर चढ़ गयी ।। 129।। इस प्रकार माधवराव का यह प्रकरण साईं शुद्ध बोध

का अनुवाद है। यह विनोद परमानंदपूर्ण है। निर्विवाद सुखदायी है ।। 130 ।। वैसे ही ब्रह्मविद्या का अभ्यास करने वाले लोग हैं। उनके प्रति बाबा की बहुत प्रीति थी। कैसे प्रसंग होने पर अभिव्यक्ति, देखें ।।131 ।। एक बार जोग के लिए शिरडी पोस्ट आफिस में पार्सल आया । स्वीकारने के लिए उस जगह संपर्क किया ।। 132 ।। पुस्तक देखी तो वह भाष्य, लोकमान्य का गीता रहस्य निकली। बगल में दबाकर मस्जिद दर्शन के लिए आए ।। 133 ।। नमस्कार के लिए सिर झुकाया पार्सल बाबा के पैरों पर गिर पड़ा । बाबा ने वहीं उनसे पूछा,"बापू साब क्यों, यह क्या है?" ।। 134।। फिर पार्सल समक्ष खोला गया। कैसे क्या है बात बतायी। बाबा के हाथ में ग्रंथ के साथ पार्सल दिया गया। बाबा ने अवलोकन किया ।। 135 ।। ग्रंथ निकाल कर हाथ में ले लिया । क्षणभर के लिए इसके पन्नों को देखा | जेब से एक रुपया निकाला उसके ऊपर रखा, आश्चर्य ।। 136 ।। रुपये के साथ वह ग्रंथ जोग के उपर्ण में रख दिया । बोले इसे साद्यंत पढ़ो । कल्याण प्रद होगा ।। 137 ।। इस प्रकार बाबा की अनुग्रह कथा वर्णित की जाये तो असंख्य होगी। ग्रंथ अति विस्तृत हो जायेगा । इसलिए संक्षेप में प्रेषित कर रहा हूं ।। 138 ।। एक बार शिरडी में ऐसा हुआ। दादा साहेब खपार्डे आए । सपरिवार वहां रहे। बाबा के प्रेम में रंग गए ।। 139 ।। खपार्डे सामान्य गृहस्थ नहीं थे। अति विद्वान बहुत वरिष्ठ। साईं के निकट हाथ जोड़कर मस्तक चरणों में झुकाते ।।140 ।। आंग्लविद्या में पारंगत | सभी विषयों पर धारा प्रवाह तर्क संगत वक्तृत्व से झकझोड़ देने में कीर्तमंत थे । साईं के समक्ष मौन धारण किए रहते ।। 141।। बाबा के असंख्य भक्त पर उनके पास मूकव्रत खापर्डे, नूलकर व बुट्टी के अतिरिक्त अन्य भक्त न रखते ।। 142 ।। अन्य सब बाबा से बोलते । कुछ तो आमना सामना करते । न सम्मान न भय । मूक व्रत इन्हीं तीन का होता ।। 143 ।। बोलने का ही क्या कहना । बाबा सन्मुख माथा झुका लेते। उनकी विनय शीलता अवर्णनीय थी, वैसी ही श्रवण शालीनता ।। 1 44 ।। विद्यारण्य की पंचदशी की समझ जिनके पास लोग लेते, वे दादा साहेब मस्जिद आने पर मूक वृत्ति धारण कर लेते ।। 145 ।। शब्दब्रह्म (वेद) में कितना ही तेज हो, शुद्ध ब्रह्म के आगे निस्तेज है। साईं सतेज परब्रह्म मूर्ति थे विद्वता को लजवा देते ।। 146 ।। चार माह उनका वास रहा। पत्नी सात मास रहीं। दिनों दिन दोनों अति उल्हास अनुभव किए ।। 147 ।। पत्नी बहुत निष्ठावंत थी। साईं पदों में अत्यन्त प्रेम था। साईं के लिए नित्य नैवेद्य लातीं मस्जिद में अपने हाथों से ।। 148 ।।जब तक नैवेद्य ग्रहण नहीं होता तब तक बाई उपवास रहती। महाराज के सेवन कर लेने पर बाई जेवन करती ।। 149 ।। इस प्रकार एक बार समय आया

। बाबा परम भक्त वत्सल बाई की अचल श्रद्धा देखकर, पवित्र मार्ग दिखाये ।। 150 ।। अनेक के अनेक, पर बाबा की (शैली) बिल्कुल न्यारी था। हंसते खेलते अनुग्रह वितरित करते। जो हृदय में दृढ़ता से स्थापित हो जाता ।। 151 ।। एक बार सांजा , शिरापुरी, भात, दाल ,खीर ,सांडग, पापड और कोशिंबीरी बाई ,थाली भर, लाई।। 152 ।। इस प्रकार उस थाली के आने के समय बाबा अति उत्कंठित मन कफनी आस्तीन तक खींचकर आसन से उठ गए ।। 153 ।। जाकर बैठ गए भोजन स्थान पर थाली सन्मुख खीच लिया ऊपर के आच्छादन को हाथ से अलग किया। अन्न सेवन को तैयार ।। 154।। अन्य नैवेद्य भी बहुत आता | इससे भी बहुत सरस। कितने समय वे पड़े रहते । क्यों इस के ही प्रति इतनी इच्छा।। 155 ।। यह सांसारिक बातें है। संत के चित्त को क्यों छूती हैं ? माधवराव जी ने साईंसमर्थ से कहा, "यह विषमता क्यों करते हैं?" ।। 156 ।। सभी थालियों को ठेल देते हैं। किसी की चांदी को भी दूर फेंक देते हैं। मात्र इस बाई की आने पर उठते हैं, खाने लगते हैं। यह अद्भुतहै ।। 157 ।। यह ही अन्न क्या इतना मधुर है , देवा, हमारे लिये यह बहुत गूढ़ है। फिर भी यह क्या माया तेरी है? पसंद-नापसंद तुम्हारे लिये क्या है" ।। 158 ।। बाबा बोले, "**कैसे कहूं? क्या है इस अन्न की अपूर्वाई । पूर्व (जन्म) में यह एक व्यापारी की गाय थी। दुधारू व बहुत विशाल थी ।। 159 ।। फिर वह कहीं खो गयी। माली के यहां जन्म लिया। उसके बाद क्षत्रिय के यहां गयी। वाण्या की पत्नी बनी ।। 160 ।। फिर वह ब्राह्मण के पेट से उत्पन्न हुई । बहुत काल के बाद दृष्टि पड़ी। प्रेम का वो कौर पेट में सुख सन्तुष्टि से जाने दो ।। 161 ।।**" ऐसा कहकर यथेष्ट जेवन किया । मुंह और हाथ धोया । सहज तृप्ति की डकार ली। आकर गादी पर बैठ गए ।। 162 ।। बाई ने फिर नमन किया। साईं चरणों को दबाना प्रारम्भ किया। बाबा यह संयोग पाकर बाई के हित की बात बताते रहे ।। 163 ।। बाई, जो, मगन होकर चरण दबा रही थी उन हाथों को बाबा अपने हाथ से दबा रहे थे। देव द्वारा भक्त की चाकरी देखकर शामा ने तब मस्करी की ।। 164 ।। यह ठीक चल रहा है देवा । क्या मौज का दृश्य है। यह परस्पर भाव देखकर अत्यन्त आश्चर्य की अनुभूति हो रही है ।। 165 ।। उसकी सेवा की इच्छा देखकर बाबा का हृदय प्रसन्न हो गया। धीरे से बोले, "**राजाराम, राजाराम जिह्वा से बोलो ।। 166 ।। ऐसे नित्य बोलते रहो। माँ तुम्हारा जीवन सफल हो जायेगा। तुम्हारा चित्त शांत होगा। अपरिमित हित प्राप्त होगा ।। 167 ।।**" उस वचन का क्या प्रभाव था? अन्तस्थल हिल गया । वचनयोग से शक्तिपात क्षणभर में किया ।। 168 ।। ऐसे कृपाालु हैं श्रीसमर्थ, विनम्र व आज्ञाकारी के पालक साईंनाथ, नित्य भक्त का मनोरथ

पूरा करते हैं उसका निजहित साधते हैं ।। 169 ।। अत्यन्त हितकारी, प्रिय व मित्रवत विनती अत्यन्त लीन श्रोताओं के प्रति करता हूं, मैं उनको चित्त में धारण करने के लिए कहता हूं ।। 170 ।। गुड़ की मिठास का आदी चींटा उसकी मुंडी टूटने पर भी छोड़ता नहीं। वैसे ही साईंचरणों में प्रणिधान करो । कृपा करते हुए तुम्हारी रक्षा करेंगे ।। 171 ।। गुरु व भक्त भिन्न नहीं हैं। दोनों ही एक शरीर हैं। बलपूर्वक अलग करने का प्रयत्न करने वालों का कर्त्तापन का अभिमान टूट कर गिर जाता है ।। 172 ।। एक के बिना एक अधूरा है। कच्चा गुरु तो कच्चा ही चेला है। पर जो पक्के गुरु का शिष्य है द्वैत पर वह अबोला होगा ।। 173 ।। गुरु एक गांव में रहे व उसका शिष्य दूसरे गांव में रहे, ऐसा जिनके मन में भाव है वे दोनों ही महानुभाव हैं ।। 174 ।। जब मूल रूप से दो नहीं हैं फिर कैसे वे अलग हो सकते हैं। एक एक के बिना नहीं रह सकता है। इतने अनन्य वे दोनों होते हैं ।। 175 ।। गुरु व भक्त में अंतर नहीं है। ऐसा निरन्तर एक साथ रहते हैं। गुरु के चरणों में भक्त सिर ही स्थूल का उपचार है (यथा षोडसोपचार) ।। 176 ।। भक्त अद्वैत भाव से पूजा करे गुरु भक्त से अद्वैत भाव रखे। ऐसा परस्पर समरसता न होने पर वह व्यवहार केवल नाम का होता है ।। 177 ।। कैसे अन्न व वस्त्र प्राप्त होंगे क्षणमात्र भी चिंता न करें। ये सब तो प्रारब्ध के अधीन है। बिना प्रयत्न मिल जाते हैं ।। 178 ।। ये सामग्री प्राप्त करने का प्रयत्न करेंगे तो श्रम व्यर्थ होगा। परमार्थ प्राप्त करने के लिए प्रयत्न होना चाहिए । रात दिन पही चिंतन करें ।। 179 ।। 'उठो' और 'जागो' | गहरी निद्रा में पड़े क्यों खर्राटे ले रहे हो। माँ श्रुति(कठोपनिषद्) तार (उच्च) स्वर में गर्जती है भक्तों को जगाने के लिए ।। 180 ।। सर्वानर्थ का बीजभूत अविद्या रूपी निद्रा में जो जो पड़ा रहता है वे समय से जागृत होकर गुरुज्ञान रूपी अमृत का सेवन करें ।। 181 ।। उसके लिए अति विनीत होकर गुरु चरणों में शरणागत होना चाहिए । वह एक जानता है क्या योग्य, क्या अयोग्य । हम तो अज्ञानी बालक हैं ।। 182 ।। साहंकार जीव अल्पज्ञ है, निरहंकार शिव सर्वज्ञ है। दोनों में अभेद भाव जानने का उपाय एक गुरु ही है ।। 183 ।। अविद्या की उपाधि से आत्मा जीव है, माया की उपाधि से आत्मा शिव है। इस भेदभाव को दूर फेंकने का ज्ञान कराने में अकेला गुरु ही समर्थ है ।। 184 ।। मन संकलविकल्प के अधीन है। साईं चरणों में समर्पण करो। फिर वहां से जो स्फुरण प्राप्त होगा उससे अहंपन छूट जायेगा ।। 185 ।। उसी प्रकार सकल क्रिया शक्ति । उन्हें साईं के प्रति समर्पित करें। फिर वह जिस रीति की आज्ञा दें वैसी स्थिति का बर्ताव करें ।। 186 ।। सब साईं की सत्ता जानो। उन्हीं पर भार डाल कर निरभिमान होकर कार्य करो

पूर्ण सिद्धि हाथ में होगी ।। 187 ।। परन्तु बोलोगे, “मैं यह करता हूं, अति अल्प भी अभिमान धारण कर लिया, फल आता हुआ तत्काल दिखेगा । क्षण भी बिलंब न लगेगा ।। 188 ।। मायामोह की रात्रि में इस करवट से उस करवट हेमाड आलस करता रहा गुरु कृपा से हरि मिल गए ।। 189 ।। वह भी केवल दैववस बिना अभ्यास अथवा प्रयास । ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने केवल निज उद्देश्य से मुझे गौरवान्वित किया है ।। 190।। भक्त का उद्धार करने के लिए निज चरित्र सुनिश्चित करने के लिए बलपूर्वक उसका हाथ पकड़कर सविस्तार ग्रंथ लिखवाया ।। 191 ।। अखण्ड सम्बन्ध के सूत्र में अनन्य प्रेम पुष्प विचित्र गूंथ कर मनोहर हार साईं को सादर अर्पण करें ।। 192 ।। आत्मस्वरूप रूपी स्वराज्य के सिंहासन को प्राप्त करने के लिए स्वपद में विराजमान होकर निरभिमान स्वानन्द को भोग करें, निज अन्तस्थल में सुखायमान हों ।। 193 ।। ऐसा अगाध साईंचरित्र है। आगे की कथा इससे भी विचित्र है। पवित्र श्रवण करने के लिए क्षणमात्र दत्तावधान हों ।। 194।। आगे तीन अध्याय आयेंगे । बाबा ने उसी जगह पर बैठे बैठे दृष्टि (अन्तर्दृष्टि) की अपूर्वाई दिखायी, आश्चर्य देखें ।। 195 ।। उनमें से पहले अध्याय में लाला लक्ष्मीचन्द का विषय है पावों में प्रेमसूत्र बांध कर उन्हें निज स्थान दिखाया ।। 196 ।। बरहानपुर की एक बाई थी। उसकी खिचड़ी के प्रति प्रबल इच्छा हुई। दर्शन के लिए उत्सुक हुई । प्रेम का कौतुक दिखाया ।। 197 ।। बाद में मेघा (नामक भक्त) को स्वप्न में त्रिशूल लाने का दृष्टान्त (स्वप्न) हुआ। उसके बाद अकस्मात शंकर का लिंग प्राप्त हुआ ।। 198 ।। इस प्रकार की अनेक कथाएं अब इसके बाद आयेंगी। श्रोताओं के भक्तिपूर्वक सुनने से श्रवण सार्थकता होगी ।। 199 ।। जैसे नमक का सिंधु में डूबना वैसा हेमाड का साईंशरण में होना । 'सोहं' भाव का अभिन्नपन उनके अनन्यपन को नमन करता है ।। 200 ।। प्रभु से प्रेम पूर्वक विनय करता है रात दिन साईं का ध्यान लगे उनके बिना ध्यान में कोई अन्य न आए। मन सावधान रहे।। 201 ।। जो बीत गया मिट जाये, आने वाला निर्दलित होकर उस पार चला जाये । मध्यंतर, जो अवशेष है (वर्तमान), में निरंतर गुरु चरणों में रहूं ।। 202 ।।स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित में “दीक्षानुग्रहदान” नामक सत्ताइसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

श्री सद्गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय अठ्ठाइसवां (दृष्टान्त कथन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

साईं एक देश के नहीं हैं। साईं सर्वभूत निवासी हैं। ब्रह्म से लेकर कीट-चींटी, मक्खी-तक सर्वत्र (संपूर्ण) में व्यापक हैं ।। 1 ।। साईं पूर्ण वेद (शब्द ब्रह्म) हैं। परब्रह्म का संकेत देते हैं। इस प्रकार दोनों भागों में प्रवीण हैं, इसी से उनका सद्गुरुपन है ।। 2 ।। स्वयं बहुत गहन ज्ञानी होते हुए शिष्य का प्रबोधन न करें अथवा निज स्वरूप में अवस्थान न करें, उसका सद्गुरुपन उसी तक है ।। 3 ।। पिता देह को जन्म देता है, जनन के पीछे मरण लगा है। गुरु जनन-मरण का निर्दलन करता है। इनमें दयालुता अधिक है ।। 4 ।। अब पहले से संबंधित सन्दर्भ | स्वप्नाध्याय का श्रवण करें। कैसे भक्तों के स्वप्न में जाकर बाबा उन्हें दर्शन देते ।। 5 ।। किसी से कहते, 'त्रिशूल निकालो किसी के पास खिचड़ी मांगते, किसी की पीठ, गुरु का भेष धारण करके, हाथ में छड़ी लेकर, वे तोड़ते ।। 6 ।। किसी के स्वप्न में जाकर डरवाते, सुरापान आदि बुरी आदतों को तोड़ते । भक्तों के अनेक संकटो को टालने के लिए अपने चरणों के प्रति उनमें रुचि उत्पन्न करते ।। 7 ।। कैसे किसी की पीठ तोड़ दी, लोढ़े से छाती पीस दी। दसवें (वास्तव में तेरहवें) अध्याय में यह बात कही गयी है। श्रोता पहले ही सुन चुके हैं ।। 8 ।। आगे की कथा की अपूर्वाई , इसे सुनने वाला धन्य, जो गाएं वह धन्य । दोनों समरस होकर एक स्थान पर बैठे रहेंगे। अक्षय सुख प्राप्त करेंगे ।। 9।। असत कथा व निन्दा आदि के श्रवण के पाप का क्षालन होगा । संतकथा का अनुवादन करते हैं जो सदा परम पावन हैं ।। 10 ।। अब उस कथा का निरूपण | श्रोता सादर श्रवण करें। पद पद पर साईं का कृपालुपन दिखेगा ।। 11 ।। राली-बन्धु ग्रीक व्यापारी थे। पूरे हिन्दुस्तान भर में खरीद करते । शहर शहर में उनकी दुकानें थीं । मुंबई नगरी में भी एक थी ।। 12 ।। वहीं पर उस समय लक्ष्मीचन्द की नौकरी अधिकारियों के अधीन थी। अति विश्वासी व आज्ञाकारी थे। मुनीम का काम करते थे। ।। 1 3 ।। रेलवे विभाग में आरंभ हुई , तत्पश्चात व्यंकटेश मुद्रण में (नौकरी की)। वहीं साईं समागम कैसे प्राप्त हुआ, उसे सुनें ।। 14 ।। **"मेरा आदमी दूसरे देश में हजारों कोस दूर क्यों न हो चिड़िया के बच्चे जैसे खींच लूंगा दोनों पैरों**

को बांध कर।" ।।15 ।। ऐसे बाबा कितनी बार बोले थे । बहुत लोगों ने बहुत सुना था। वैसे ही अनुभव भी प्राप्त हुआ था । बाबा की उस लीला को कहता हूं ।। 16 ।। ऐसे कितने ही बच्चों को लाए , अनेक देशोदेश से शिरडी । उनमें से ही एक लक्ष्मीचन्द बाबा के आस्थावादी बच्चे ।। 17 ।। जब बहुत जन्म प्राप्त करने के बाद प्रारब्ध कर्म उदित होता है, तभी संत समागम लाभ होता है, मोहजनित अंधकार का नाश हो जाता है ।। 18 ।। विवेकाग्नि प्रदीप्त होती है। भाग्योदय से वैराग्य प्राप्त होता है। संचित कर्म क्षरित हो जाता है, जीवन सफल होता है।। 19 ।। दृष्टि में साईंनाथ भर जावें, तो दूसरा वहां स्थान लाभ नहीं प्राप्त करता | नयन बन्द होने पर वहां साईंनाथ चारों ओर होते हैं ।। 20 ।। लाला जी से भेंट हुयी। उनके द्वारा जो स्वानुभव वार्ता कही गयी,उसे प्रेम से हृदय की पंखुड़ियों में एकत्र कर लिया। उन्हें कहने की अन्दर से उत्कंठा हो रही है ।। 21 ।। देखो, उनके लिए बुलावा आया (याद किया), वह भी लीला अलौकिक है। मन व कान को एक करके श्रद्धावान श्रोता सुनें ।। 22 ।। सन 1910, क्रिस्मस दिवस देखो। जब शिरडी प्रयाण का योग लाला जी को प्राप्त हुआ ।। 23 ।। तब ही प्रथम प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। पर यह योग आने का चिह्न एक या दो माह पहले जान गए थे। कैसे घटा उसे सुनें ।। 24।। सांताक्रुझ गांव में (अब मुम्बई नगर का हिस्सा) थे। मन में ऐसा कुछ ध्यान नहीं था। अचानक उन्हें स्वप्न हुआ। अद्भुत स्वप्न देखा ।। 25 ।। एक दाढ़ीवाला बुजुर्ग साधु भक्त वृंद से घिरा हुआ। ऐसा महात्मा खड़े देखा तो उन्होंने सप्रेम अभिवंदन किया ।। 26 ।। बाद में, दत्तात्रेय मंजूनाथ, बिजूर उपनाम के गृहस्थ के यहां लक्ष्मीचन्द गणुदास के कीर्तन के लिए आए ।। 27 ।। दासगणु की नित्य पद्धति थी, बाबा की मढ़ी हुई छवि (चित्र) सामने रखते। उसे देखते ही लक्ष्मीचन्द को स्वप्न की मूर्ति स्मरण हो आयी ।। 28 ।। वही दाढ़ी, वही वय (उम्र), वही अवयव, वही पैर । लक्ष्मीचन्द को लय लग गयी , क्या यह वही महात्मा हैं।। 29 ।। पहले तो दासगणु का कीर्तन, उस पर तुकाराम का आख्यान । उससे भी अच्छा स्वप्न वाले साधु के दर्शन । लाला जी बहुत तल्लीन हो गए ।। 30 ।। लक्ष्मीचन्द मन से कोमल थे। आंखों में प्रेमाश्रु जल आ गया । मन में बेचैनी रहने लगी, कब यह प्रेमल मूर्ति देखूगा ।। 31 ।। पहले जो स्वप्न में देखा उनकी प्रतिमा हूबहू कीर्तन की छवि की नकल थी,उसी पर अन्तर्वृत्ति लग गयी। और कुछ चित्त में नहीं आता।। 32 ।। क्या किसी स्नेही से भेंट होगी, जो मेरा साथ शिरडी तक दे। कब मैं इस संत के पांवों में सर रखकर प्रत्यक्ष होऊगा ।। 3 3 ।। इस साधु के दर्शन कब होंगे? क्या उनका प्रेमानन्द भोगूँगा । ऐसी उत्सुकता लक्ष्मीचन्द को सदा लगी रहती।। 34 ।। खर्चे की समुचित व्यवस्था

देखनी होगी। अब आगे क्या करें? दर्शन तुरन्त कैसे हों? उपाय सोचने लगे ।। 3 5 ।। देव सदा भाव के भूखे रहते हैं। देखो कैसा चमत्कार घटित हुआ | उसी रात आठ बजे मित्र ने दरवाजा खटखटाया ।। 36 ।। फिर दरवाजा खोला तो देखा, वह शंकर राव उनका मित्र था। लक्ष्मीचन्द को देखते ही पूछा, शिरडी चलोगे क्या? ।। 37 ।। नारायण महाराज के दर्शन के लिए केड गांव जाने का मन था। फिर मन में आया कि क्यों न पहले शिरडी जावें ।। 38 ।। जिस प्रीति के लिए प्रयास करना था, वही जब बिना प्रयास चलकर आयी आनन्द का पारावार नहीं था , लक्ष्मीचन्द के मन में ।। 39 ।। चचेरे भाई से रू0 15/- उधार लिया। शंकर राव ने भी वैसे ही किया। प्रयाण करने की तैयारी पूरी कर ली ।। 40 ।। बिस्तरा-बिछौना लेकर निकलने की तैयारी की । जाते ही समय से जाने का टिकट मिल गया। दोनों ने गाड़ी पकड़ी ।। 41 ।। शंकरराव अच्छे भजनी थे। गाड़ी में दोनों भजन करने लगे। लक्ष्मीचन्द चौकसपन के कारण रास्ते भर पूछताछ करते रहे ।। 42 ।। शिरडी से संबंधित कोई व्यक्ति मिलता तो उसे नमन करते साईंबाबा की महिमा का अपना प्रमाणित अनुभव बताते ।। 43 ।। “साईंबाबा महान संत थे। अहमद नगर के पास अति विख्यात थे।" बोले, "उनका कुछ अनुभव हमें निश्चित बताएं" ।। 44 ।। डिब्बे में चार मुसलमान थे जिनके स्थान शिरडी के निकट थे। परस्पर बातचीत करने से दोनों को संतुष्टि हुई ।। 45 ।। लक्ष्मीचन्द अति श्रद्धावान थे, उनसे प्रीति से पूछे,“साई बाबा की महानता के संबंध मे कुछ जानते हों तो हमें बताएं।। 46 ।।“ “साईं बाबा महान संत हैं शिरडी में बहुत वर्षों से रह रहे हैं। महान अवलिया व महंत हैं,” उन्होंने उन्हें प्रत्युत्तर दिया ।। 47 ।। इस प्रकार बोलते-चालते आनन्द से मार्ग व्यतीत हो गया। कोपर गांव दोनों के आने पर शेटी (लक्ष्मीचन्द) के चित्त में स्मरण हुआ ।। 48 ।। साईं बाबा की अमरूद से प्रीति है, कोपर गांव में अमरूद पैदा होता है। इसलिए गोदावरी के किनारे बिकता है बाबा को यही समर्पित करूँगा ।। 49 ।। पर गोदावरी के तट पर आते, दृश्य देखकर हृदय हर्षित हो गया । तांगा दूसरे तट पर पहुंच गया। अमरूद की बात भूल गए ।। 50 ।। वहां से शिरडी चार गांव (दूर) था। तांगा पूरी गति से चलने लगा। लक्ष्मीचन्द को जब स्मरण हुआ, वहां अमरूद का अतापता नहीं था ।। 51 ।। तब एक वृद्धा सर पर टोकरी लिए गाड़ी के पीछे दौड़ती दिखी। उसके लिए गाड़ी रोकी। अमरूद की वह भेंट आयी थी।। 52 ।। लक्ष्मीचंद आनंद से भर गए। चुन चुन कर अमरूद लिया । जो शेष बचा उसके लिए वृद्धा बोली, "बाबा को मेरी प्रीति के लिए देना।" ।। 53 ।। अमरूद की स्मृति और विस्मृति । अचानक वृद्धा से मिलना, उसपर भी वह साईं भक्त देखकर दोनों के चित्त

विस्मित हो गए ।। 54 ।। आरंभ में वृद्ध को स्वप्न में देखा । उसी का पुनः कीर्तन में प्रकट होना। लाला जी ने मन में विचार किया कि वह ही यह वृद्धा भी, अन्य कोई नहीं।" ।। 55 ।। फिलहाल गाड़ी फिर आगे हांकी गयी। बोलते-बोलते शिरडी पहुंच गए। दूर से मस्जिद के निशान (झंडे) दिखे। दोनों में भाव से वंदना की।। 56 ।। फिर वे पूजा सामग्री लेकर तत्काल मस्जिद गए। साईं के दर्शन पाकर वे आनंदचित्त हो गए।। 57 ।।आगन के द्वार से सभा मंडप में प्रवेश करने पर दूर से बाबा की मूर्ति (मुख) देखकर मन सद्गद हो गया ।। 58 ।। इच्छित मूर्ति के दर्शन होने पर लक्ष्मीचन्द तल्लीन हो गए । भूख प्यास भूल गए। स्वानंद जीवन प्राप्त हो गया।। 59 ।। हाथ में निर्मल जल लेकर चरण कमल प्रक्षालित किया । अर्घ्यपाद्य आदि सकल पूजा की, श्रीफल अर्पित किया ।। 60 ।। धूप, दीप, तांबूल दक्षिणा, मानसिक प्रदक्षिणा किया । पुष्पहार समर्पण करके चरणों के पास बैठ गए ।। 61 ।। लक्ष्मीचन्द प्रेमल भक्त थे। उस पर भी गुरुकृपा का आनंद । साईं चरणारंविद पाकर वे रम गए, जैसे भंवरा ।। 62 ।। **तब बाबा बोले, "साले, रास्ते में भजन करते , और दूसरे आदमी से पूछते । क्या दूसरे से पूछना ।। 63 ।। सब कुछ अपनी आंखों से देखना । कायकू दूसरे आदमी से पूछना । झूठा है क्या सच्चा सपना । करलो अपना विचार आप ।। 64 ।। मारवाड़ी से उधार लेकर क्या जरूरत थी दर्शन करने की? हुई क्या अब मुराद की पूर्ति?"** सुनकर चित्त को आश्चर्य हुआ।। 65 ।। अपने मार्ग में पूछताछ किए । बाबा को यहां वह कैसे ज्ञात हो गया। यही परम आश्चर्य मन में लक्ष्मीचन्द ने अनुभव किया ।। 66 ।। अपने घर में स्वप्न पड़ा। गाड़ी में आपन भजन किए | बाबा को बैठे-बैठे ज्ञात हो गया। क्या अन्तर्ज्ञान है ।। 67 ।। दर्शन की उत्कंठा थी। यह भी ठीक कि पैसे की कमी होने पर उधार लेकर पूरा किया! वह देखो ,ये जानते हैं ।। 68 ।। लक्ष्मीचन्द को परम आश्चर्य | सकल भक्त वृद को आश्चर्य। सदपद रूपी पंकज के भवरों को आश्चर्य । बाबा की लीलाएं अतर्क्य हैं ।। 69 ।। ऋण लेकर उत्सव करना या यात्रा पर्यटन करना । बाबा को बाजार भर से कर्ज लेना पसंद नहीं था। यहां यही शिक्षा दी ।। 70 ।। इस प्रकार वे सभी भक्तों के साथ साठेवाड़ा जाकर दोपहर के जेवन के लिए आनंद भरित मन से बैठे ।। 71 ।। इसी मध्य बाबा का प्रसाद बताकर कोई भक्त 'सांजा' लाकर थोड़ा-थोड़ा थालियों में परोसा। उसे सेवन करके तृप्त हो गए ।। 72 ।। दूसरे दिवस भोजन के समय लाला जी को 'सांजा' की याद आयी। किन्तु वह कुछ नित्य का नहीं था। उत्सुकता मन में रह गयी ।। 73 ।। फिर तीसरे दिन की नवलाई! अपूर्ण इच्छा की भरपाई किस उपाय से साईं महाराज करते, यह देखें ।।

74 ।। गंध अक्षत पुष्प आदि समेत घंटा नीरांजन पंचारती लेकर जोग मस्जिद आए । बाबा से पूछने लगे ।। 75 ।। "आज क्या नैवेद्य लाएं। आज्ञा करें महाराज।" "थाली भर सांजा मेरे लिए लाओ। आरती पूजन फिर करना" ।। 76 ।। पूजा सामग्री वहीं रखकर जोग तत्काल वापस गए। तुरन्त शीरा अपने साथ लेकर वापस आ गए, सबके लिए पर्याप्त ।। 77 ।। फिर दोपहर की आरती हुई भक्त पहले ही नैवेद्य लाए थे। थालियां ऊपर आने लगीं। तब बाबा निज भक्तों से बोले ।। 78 ।। "आज का दिन अच्छा है। सोचता हूं, सांजा का प्रसाद होना चाहिए" ,ले आओ, तुरन्त मंगाओ। सभी के सेवन के लिए यथेष्ट ।। 79 ।। फिर भक्त जाकर लाए सांजा के दो पात्र भरकर । लक्ष्मीचन्द को भूख लगी थी। पीठ भी सुन्न हो गयी थी ।। 80 ।। पेट की भूख, पीठ में ज्वरात्मक संवेदन । उससे लक्ष्मीचन्द अस्वस्थ मन थे। बाबा के मुख से तब जो वचन आए श्रोता ध्यान दें ।। 81 ।। "भूख लगी है अच्छा हुआ कमर में दर्द है, दवा चाहिए। अब सांजे का समय है। एकत्र होकर आरती करो ।। 82 ।। जो-जो लक्ष्मीचन्द के मन वह वह बाबा के बचन से प्रस्फुटित हुआ | शब्द के बिना प्रतिध्वनि । महाराज अन्तर्ज्ञानी थे ।। 83 ।। इस प्रकार आरती पूर्ण होने पर भोजन के वक्त सांजा मिला । लक्ष्मीचन्द की आसक्ति पूरी हुई। चित्त आनन्दित हो गया ।। 84 ।। तभी से बाबा के प्रति प्रेम स्थापित हो गया। अगरबत्ती, नारियल व माला नियमित हो गयी। पूजा उपक्रम चलने लगा लक्ष्मीचन्द को आनन्द लाभ हुआ ।। 85 ।। साईं के प्रति भक्ति इतनी प्रबलता से स्थापित हो गयी कि शिरडी को जाने वाला मिलता तो उसके हाथ माला, दक्षिणा, कपूर अगरबत्ती भेजते ।। 86 ।। कोई भी जावे शिरडी को लक्ष्मीचन्द को खबर लगते ही, ये तीन वस्तुएँ दक्षिणा के साथ नियम से बाबा को भेजते ।। 87 ।। इन्हीं खेप में चावड़ी में रात में उत्सव देखने के लिए जाने पर बाबा को खांसी उठी, बहुत तंग हो गए ।। 88 ।। लक्ष्मीचन्द मन में बोले," कितना कष्ट दे रही है यह खांसी। लगता है लोगों की नजर लग गयी। उसी से खांसी उठी है।" ।। 89 ।। यह तो केवल मन की वृत्ति लक्ष्मीचन्द के चित्त में उठी। सुबह मस्जिद आने पर बाबा वही बोले आश्चर्य देखो ।। 90 ।। वहां माधवराव के आने पर बाबा अपने आप बोले," कल मुझे खांसी आयी थी। यह क्या नजर का परिणाम है ।। 91 ।। मुझे लगता है किसी की नज़र सचमुच लग गयी है उसी से यह खांसी हर प्रकार से मन को बेजार कर रही है "।। 92 ।। लक्ष्मीचन्द के मन में आश्चर्य हुआ । यह तो बिल्कुल अपने ही विचार बोल रहे हैं। फिर बाबा कैसे जान गये । क्या सबके अन्दर बसते हैं ।। 93 ।। फिर वे हाथ जोड़कर विनती किए, "आपके दर्शन से बहुत आनन्दित हुआ । ऐसी ही कृपा करते रहिए,

महाराज, रक्षा करें ।। 94 ।।अब मेरे लिए इन चरणों की अतिरिक्त जगत में अन्य देव नहीं हैं। आप के भजन में मन रम गया है, सर्वदा आप के ही चरणों में ।। 95 ।।इसलिए चरणों में माथा रखता हूं। साईं समर्थ विदा मांगता हूं। अब मुझे आज्ञा हो, ऐसे ही अनाथ को संभाले ।। 96 ।। नित्य कृपा दृष्टि रहे जिससे संसार का कष्ट न हो। तुम्हारे नाम संकीर्तन का आश्रय प्राप्त हो । सर्वथा सुख संतुष्टि रहे ।। 97 ।।“ आशीर्वाद के साथ ऊदी लेकर स्नेह मिश्रित आनन्द पाकर मार्ग में साईंगुणानुवाद गाते लक्ष्मीचन्द वापस गए ।। 98 ।। ऐसी ही और दूसरी चिड़ी बांध कर बाबा शिरडी लाए , प्रत्यक्ष दर्शन की घड़ी आने पर । उस अद्भुत कहानी को सुनें ।। 99 ।। चिड़ी थी एक प्रेमल बाई। उसकी कथा परम अद्भुत थी। बरहाण पुरी में स्वप्न हुआ। उसने महाराज साईं को देखा ।। 100।। कभी प्रत्यक्ष दर्शन नहीं हुआ था। फिर भी उस बाई को स्वप्न हुआ । बाबा उसके द्वार पर आकर खिचड़ी भोजन मांग रहे हैं ।। 101 ।। बाई तत्काल जाग्रत हो गयी। देखा तो कोई उस जगह नहीं था । दृष्टान्त बताने के लिए सभी के पास गयी ।। 1 02 ।। उनके पति उसी शहर में थे। वहीं डाक विभाग में अधिकारी थे। फिर अकोला के लिए बदली होने पर शिरडी की तैयारी की ।। 103 ।। दंपति बहुत श्रद्धालु थे। साईं दर्शन के इच्छुक थे। दृष्टान्त उन्हें कौतुक लग रहा था। साईं की माया अलौकिक है ।। 104 ।। बाद में सुविधानुसार दिन देखकर दोनों शिरडी की ओर निकल पड़े। मार्ग में गोदावरी तीर्थ की वंदना की, शिरडी पहुंच गए ।। 105 ।। प्रेम से बाबा के दर्शन किए । भाव पूर्वक पूजन किये। नित्य बाबा के चरणों की सेवा करते हुए सुख सम्पन्न हुए।। 106 ।। इस प्रकार वह दम्पति आनंद मन से शिरडी में दो महीने रहे। बाबा भी खिचड़ी भोजन से तुष्ट हुए, उनकी भाव भक्ति से उनके द्वारा समर्पित ।। 107 ।। खिचड़ी-नैवेद्य समर्पणार्थ दम्पति शिरडी तक आये । चौदह दिन बीत गए खिचड़ी वैसी ही अनिवेदित रह गयी ।। 108 ।। कृत संकल्प को पूरा करने में बिलम्ब बाई के चित्त को अच्छा नहीं लगा। पन्द्रहवें दिन मध्यान्ह होते ही खिचड़ी के साथ पहुंच गयीं ।। 109।। वहां परदे गिर चुके थे, अपने भक्तों को साथ लेकर बाबा पहले ही भोजन के लिए बैठ चुके थे। बाई को ऐसा समझ में आया ।। 110 ।। ऐसे भोजन चलते समय परदे के अन्दर कोई नहीं जाता था। किन्तु उस बाई को जल्दी थी। वह नीचे निश्चिंत नहीं रह सकती थी ।। 111 ।। केवल खिचड़ी निवेदन करने के उल्हास के लिए अकोलासे शिरडी का प्रवास अंगीकार किया जिसने, उसकी उत्कंठा कैसी अपूर्व थी ।। 1 12 ।। किसी का कुछ न मानते हुए परदा अपने हाथों से स्वेच्छा से उठाकर किसी की अनुमति लिए बिना स्वयं प्रवेश किया । इच्छा की पूर्ति साधने के लिए ।।

113 ।। वहां बाबा ने अद्‌भुत किया। खिचड़ी के लिए इतने भूखे थे कि वही पहले सीधे मांगे। उसे ही दोनों हाथों से पकड़ लिए ।। 114 ।। खिचड़ी देखकर उल्हास हो गया । कौर (ग्रास) पर कौर उठाकर बाबा अपने मुंह में भरते गए। सब को कौतुक हो रहा था।। 115 ।। बाबा की वह आतुरता देखकर सब के चित्त विस्मय से भर गए थे। खिचड़ी की कथा सुनकर साईं की अलौकिकता की अनुभूति होती है ।। 116 ।। अब इसके आगे की कथा सुनने से चित्त प्रेम से भर जायेगा । एक गुजराती ब्राह्मण सेवा करने के लिए अचानक शिरडी आया ।। 117 ।। राव बहादुर साठे के अधीन आरंभ में जिसने चाकरी किया | उसकी शुद्‌ध मन से सेवा। बाबा के चरण मिल गए ।। 118 ।। उसी की कथा बहुत अच्छी है। जिसकी भक्ति में प्रेम की वासना है। कैसे श्री हरि उसके मन की उत्कट इच्छा पूरी करते, सुनें ।। 119 ।। 'मेघा' उनका नाम था। साईं से ऋणानुबंध था। उसी से वह शिरडी स्थान प्राप्त हुआ। कथा सुनने के लिए तत्पर हों ।। 120 ।। "साठे" खेड़ा जिले में प्रांत अधिकारी थे वहीं मेघा से अचानक भेट हुई। शिवालय में नित्य पूजा के लिए उसकी तैनाती कर दी ।। 121 ।। बाद में ये साठे शिरडी आए । उनका भाग्य उदित हुआ । वहीं महाराज साईं से जुड़े। उनके चरणों में चित्त स्थिर हो गया ।। 122 ।। यात्रियों की भीड़ देखकर उनके मन में निश्चित विचार आया कि यहां अपना वाडा हो तो रहने की सुविधा हो जायेगी ।। 123 ।। फिर अग्रणी ग्रामवासियों से मिले। वहां जगह प्राप्त किया जहां बाबा आरंभ में प्रकट हुए थे। वह स्थल वाड़ा के लिए निश्चित कर दिया गया ।। 124 ।। इस पवित्र जगह की महिमा चतुर्थ अध्याय में पहले ही वर्णित है। पुनः कहने का कारण नहीं है। आगे का निरूपण चालू रखते हैं ।। 125 ।। इस प्रकार मेघा के महान संचित कर्म से उसे राव बहादुर साठे मिले। वहीं से परमार्थ के मार्ग पर लग गया, उन्हीं के प्रयास व पद्‌धति से ।। 126 ।। परिस्थितियों के वश होकर उसका कर्मभ्रंश हो गया था। उसे गायत्री मंत्र का उपदेश देकर सन्मार्ग में प्रवेश कराया।। 127 ।। मेघा के साठे की सेवा में लग जाने से परस्पर आदर में वृद्‌धि हुई । साठे मेघा के गुरु हो गए। उनके प्रति स्नेह स्थापित हो गया ।। 128 ।। इस प्रकार एक बार सहज बात करते हुए अपने गुरु की महानता बताते हुए साठे के चित्त में प्रेम भर गया । मेघा से सादर पूछा ।। 1 29 ।। बाबा को गंगा जल से स्नान कराने की मेरे मन में इच्छा है। इसीलिए मुख्यतः तुम्हें शिरडी को भेज रहा हूं, यह जानो ।। 130 ।। इसके अतिरिक्त तुम्हारी अनन्य सेवा देखकर मन में आता है कि सद्‌गुरु का तेरा संगम हो जाये । चरणों में तुम्हारा भाव स्थिर हो जाये ।। 131 ।। तुम्हारा देह सार्थक होगा । इस जन्म का परम कल्याण होगा। जाओ-जाओ काया,

मन व वाणी से सद्गुरु के चरणों से लग जाओ।। 132 ।। मेघा ने उनका जात पूछी।। 132 ।। वस्तुतः साठे को भी वह अज्ञात थी। बोले, "कुछ लोग अविन्ध' कहते है इसलिए कि मस्जिद में बैठते हैं" ।। 133 ।। 'अविन्ध' यह शब्द कान में पड़ते मेघा का मन में दुश्चित्तता आयी, "यवन से नीच कोई नहीं उसकी क्या गुरुता ।। 134 ।। 'नहीं' बोलने पर साठे क्रोधित होंगे, हा कहने पर दुर्गति प्राप्त होगी। क्या किया जाये बुद्धि चल नहीं रही थी। वे चिंता में पड़ गए ।। 135 ।। इधर कुआँ उधर खाई। मन अस्थिर व चंचल हो गया। किन्तु साठे का बहुत आग्रह । दर्शन का निश्चय किया ।। 136 ।। फिर मेघा शिरडी आया । मस्जिद के आंगन में पहुंचा। सीढ़ी जब चढ़ने लगा बाबा की लीला आरंभ हो गयी ।। 137 ।। उग्र स्वरूप धारण किया । पत्थर हाथ में लेकर बोले,**"खबरदार, सीढ़ी पर पांव रखा तो। इस स्थान पर यवन रहता है ।। 138 ।। तूं तो उच्चवर्ग ब्राहमण हो । मैं नीच से नीच यवन । तुम्हें गन्दगी लग जायेगी। तुरन्त वापस जाओ" ।। 139 ।।** क्रोधावस्था का वह रूप प्रलय में रुद्र का दूसरा स्वरूप था। देखने वाले थर-थर कांपने लगे। तब मेघा डर से कांपने लगा ।। 140 ।। परन्तु यह क्रोध केवल ऊपरी था अन्दर दया का भंडार था । मेघा आश्चर्य चकित था, कैसे मेरे अन्दर का इन्हें ज्ञान हुआ ।। 141 ।। कितन दूर है खेडा जिला। कहां दूर अहमदनगर। विकल्प से आक्रिष्ट मेरे अंतरमन का यह इनका प्रत्यक्षीकरण है।। 142 ।। बाबा जैसे जैसे मारने के लिए दौड़ते, त्यों त्यों मेघा का धैर्य डूबता । पांव एक एक पीछे पड़ता। आगे जाने की हिम्मत नहीं थी ।। 143 ।। वैसे ही कुछ दिवस रहे, बाबा का रागरंग देखते । यथा सम्भव वह सेवा करते गए । किन्तु दृढ़ विश्वास नहीं हुआ ।। 144 ।। बाद में फिर वह घर गए । ज्वर हो गया, बिस्तर पर पड़ गए। वहां बाबा का ध्यान लगा । शिरडी वापस आ गए ।। 145 ।। वह जो आए तो रम गए । साईं चरणोंमें भक्ति दृढ़ हो गयी। साई के अनन्य भक्त हो गए | साईं ही उसके एक देव बन गए ।।146 ।। मेघा पहले शंकर भक्त थे। साईं पदों में अनुरक्त होने पर शंकर के भाव में साईंनाथ हो गए। वही उनके उमानाथ हो गए ।। 147 ।। मेघा रात दिन साईंशंकर नामा का घोष करते । बुद्धि अशेष तदाकार हो गयी। चित्त दोष रहित हो गया ।। 148 ।। साईं के अनन्य भक्त हो गए । साईं को प्रत्यक्ष शंकर मान लिया । शंकर शंकर मुख से तेज स्वर में बोलता । अन्य देवता को नहीं मानता ।। 149 ।। साईं ही उनके देवतार्चन थे। साईं ही उनके गिरिजा पति (शंकर) थे। यही दृष्टि उन पर डालते हुए मेघा नित्य प्रसन्न मन रहते ।। 150 ।। शंकर को बेल पसंद था। शिरडी में बेल के पेड़ नहीं थे। इसके लिए मेघा कोस डेढ़ कोस जाकर अपनी चाह पूरी करते ।। 151 ।। डेढ़ कोस

का क्या महत्व बेल के लिए पहाड़ लांघ जाते । किन्तु पूजने की चाह पूरी करते, मन की अभिलाषा पूरी करते ।। 152 ।। लम्बी दूरी से बेल लाकर, पूजा सामग्री पूर्ण एकत्र करके, ग्राम देवताओं को अनुक्रम से चढ़ा कर सभी की यथाविधि पूजा करते ।। 153 ।। फिर, इसे पूर्ण करके, मस्जिद को जाते बाबा की गादी की वंदना करते । पाद संवाहन आदि (चरण दबाना) करके पाद तीर्थ (चरण धोने के बाद का जल) का पहले वह सेवन करते ।। 154 ।। मेघा की और कहानियां हैं। श्रवण करके आनंद होगा। ग्राम देवताओं के विषय में साईं का सम्मान दिखेगा, साईं की व्यापकता भी ।। 155 ।। मेघा, जब तक शिरडी में रहे तब तक, दोपहर की आरती नित्य करते। परन्तु समस्त ग्राम देवों को पहले पूजकर मस्जिद जाते होते।। 156 ।। ऐसा उनका नित्य का क्रम था। एक दिन यह अनुक्रम चूक गए । परिश्रम करने पर भी खंडोबा की पूजा छूट गयी।। 157 ।। पूजा करने के लिए यत्न किया । प्रयत्न करने पर द्वार नहीं खुला। इसलिए वह पूजा वैसे ही छोड़कर वह आरती लेने आ गए ।। 158 ।। वहां बाबा उनसे बोले, “आज तुम्हारी पूजा में विघ्न पड़ गया । सब देवताओं की पूजा हो गयी। एक पूजा के बिना रह गया।" ।। 159 ।। जा वह करो, फिर यहां आओ।” मेघा बोले, “द्वार बन्द था। खोलने पर भी वह नहीं खुला । पूजा छोड़ कर भाग आया।" ।। 160 ।। बाबा बोले, “तुम जाकर देखो । अब द्वार खुला है।" मेघा तत्काल तेजी से गए बाबा के वचन को अनुभव किया ।। 161 ।। खंडेराया की पूजा की। मेघा की भी बेचैनी चली गयी। फिर बाबा ने मेघा को अपनी पूजा करने दिया ।। 162 ।। फिर गंध पुष्प आदि अष्टोपचार पूजा अति आदर के साथ समर्पित किया। यथा शक्ति दक्षिणा हार, फल समूह अर्पित किया।। 163 ।। एक बार मकर संक्रांति का दिन था। गोदावरी का पानी लाकर बाबा के शरीर पर चंदन मल कर स्नान कराने का मन हुआ।। 164 ।। आज्ञा के लिए पीछे पड़ गया । बोलने पर कि जाओ जो इच्छा है करो, मेघा तुरन्त गागर लेकर पानी लेने निकल पड़ा ।। 165 ।। सूर्योदय होने से पहले ही मेघा खाली पानी की गागर (कलश) लेकर नंगे पांव बिना छाता (लिए) गोदावरी का जल लेने निकल पड़े।। 166 ।। जाना आना आठ कोस लगता है, मार्ग को पूरा तय करने में । कष्ट और प्रयास करना पड़ता है। यह स्वप्न में भी उन्हें नहीं आया ।। 167 ।। यह मेघा की चिन्ता नहीं थी। अनुज्ञा मिलते निकल पड़े। निश्चय में दृढ़ता हो तो कार्य के प्रति उल्हास साथ होता है।। 168 ।। गंगा के जल से साईं का स्नान कराएं ऐसा मन होने पर, कैसा प्रयास, कैसी थकान । दृढ़ श्रद्धा ही एक प्रमाण है।। 169 ।। इस प्रकार, फिलहाल, वह पानी लाकर ताम्र के गंगाजली (गंगा जल एकत्र रखने का पात्र) में खाली किया।

स्नानार्थ उठने के लिए आग्रह करना प्रारम्भ किया किन्तु बाबा नहीं माने।। 170 ।। मध्यान्ह की आरती हो गयी। भक्तगण अपने अपने घर वापस चले गये। स्नान की सकल तैयारी पूर्ण हो गयी। दोपहर हो जाने पर मेघा बोले ।। 1 71 ।। मेघा का अति आग्रह देखकर फिर वह लीला विग्रही (लीला दिखने के लिए जिसने अवतार लिया हो) साईं मेघा का हाथ अपने हाथ में लेकर संबोधन किए ।।172 ।। "मुझे गंगा स्नान नहीं चाहिए, रे। ऐसा कैसा तूं नादान । मुझ फकीर के कारण। गंगाजल मुझे क्या?" ।। 173 ।। पर मेघा ने उनकी कुछ न सुनी । शंकर के समान जो बाबा को समझता। गंगा स्नान से शंकर प्रसन्न होते हैं। यह एक ही बात उसे ज्ञात थी।। 174 ।। बोले,"बाबा आज के दिन मकर संक्रान्ति का उत्सव है। गंगाजल से शंकर को स्नान कराने से वह सुप्रसन्न होते हैं" ।। 175 ।। फिर मेघा का प्रेम, शुद्ध हृदय और उनका अटल नियम देखकर बोले, "इच्छा पूरी करो अपनी।" ।। 176 ।। ऐसा कहते हुए वे उठे। स्नान के लिए रखे हुए पाटे पर बैठ गए । मस्तक मेघा के आगे झुका कर बोले, "इसी पर जल डालो।" ।। 177 ।। "सभी अंगों में सिर प्रधान होता है उसी पर थोड़ा जल सिंचन करो। वह पूर्ण स्नान करने के समान है। इतना मान ले रे, कम से कम" ।। 178 ।। "अच्छा" कहकर कलश उठाया। सिर के ऊपर बड़े प्रेम से उड़ेल दिया। 'हरहर गंगे' कह कर खाली कर दिया । पूरे शरीर पर उड़ेल दिया ।। 179 ।। मेघा अत्यन्त आनन्दित हो गए। मेरे शंकर ने वस्त्र सहित स्नान कर लिया । घड़ा खाली करके जब नीचे रखा तो आश्चर्य से देखते रह गए ।। 180 ।। यद्यपि पुरे शरीर पर जल डाला था, एक सिर ही मात्र भीगा था अन्य अवयव सूखे थे । वस्त्र भी सूखा था, जल नहीं था ।। 181 ।। मेघा का अभिमान गल गया। निकटवर्ती विस्मित रह गए । ऐसा अपने भक्तों के प्रति प्यार था । श्री साई संपूर्ण संतुष्टि देते ।। 182 ।। तेरा मन स्नान कराने का है। जा, अपनी इच्छानुसार उड़ेलो। उसमें भी मेरे अन्तरचिहन को सहज ही जान पाओगे ।। 183 ।। साईं भक्ति का यही मर्म है। सुदैव से मात्र समागम होना है फिर वहां कुछ दुर्गम नहीं है। धीरे-धीरे (क्रमवार) सब सुगम है।। 184 ।। बैठते, उठते, बातचीत करते, सुबह दोपहर फेरी करते, भक्त श्रद्धा व स्थैर्य धारण किए हैं, तो इच्छित मनोरथ संपादित हो जाता है।। 185 ।। किन्तु ऐसा कुछ (अन्तर) चिहन प्रत्यक्ष व्यवहार में बांध कर क्रमानुसार मिठास लाकर परमार्थ की अनुभूति उसे कराते ।। 1 86 ।। ऐसी ही मेघा की और कथा है। श्रोता सुनकर सुखी होंगे | साईं के भक्त देखकर आनन्द चित्त होंगे ।। 187 ।। बाबा का एक नया बड़ा चित्र नाना साहेब चन्दोरकर द्वारा दिया गया था। उसी को मेघा वाड़ा में रख कर भक्ति से पूजा में लाते ।। 188 ।। मस्जिद

में प्रत्यक्ष मूर्ति थी वाडा में प्रतिमा (चित्र) पूर्ण प्रतिकृति थी। दोनों स्थानों पर पूजा आरती दिन रात चलती रहती ।। 189 ।। ऐसी सेवा होते-होते सहज बारह मास बीत गए । मेघा भोर के समय जागृत थे। उन्होंने दृष्टांत देखा ।। 1 90 ।। मेघा बिस्तर पर थे । यद्यपि नेत्रपट बन्द थे, अन्दर से पूर्ण जागृति थी। बाबा की स्पष्ट आकृति देखी।। 191 ।। बाबा भी उसकी जागृति को जानते हुए विछावन पर अक्षत फेंक कर बोले, **"मेघा त्रिशूल खींचो रे।"** वहीं गुप्त हो गए ।। 192 ।। बाबा के ये शब्द सुनकर अति उल्हास के साथ आखें खोली। बाबा को अन्तर्धान देख कर मेघा को बहुत विस्मय हुआ ।। 193 ।। मेघा ने तब चारों ओर देखा । बिस्तर पर इधर-उधर चावल था । वाडा के किवाड़ पूर्ववत बन्द थे। वे उलझन में पड़ गए ।। 194 ।। तत्काल मस्जिद जाकर बाबा के दर्शन किया। मेघा ने त्रिशूल कथा कही। त्रिशूल के लिए आज्ञा मांगी ।। 195 ।। दृष्टांत साद्यन्त मेघा ने बताया । बाबा ने कहा, "दृष्टांत कैसा, क्या मेरे शब्द नहीं सुने त्रिशूल खींचने को बोलते हुए ।। 196 ।। मेरे बोल को दृष्टांत कहकर क्या तौल कर रहे हो? मेरे बोल के अर्थ गहरे हैं। एक अक्षर भी व्यर्थ नहीं है।" ।। 197 ।। मेघा बोला, "आपने जगाया, ऐसा आरंभ में मुझे प्रतीति हुयी। परन्तु द्वार एक भी खुला नहीं था इसलिए वैसा इसे माना" ।। 198 ।। इसे बाबा का उत्तर सुनो,"मुझे प्रवेश के लिए द्वार की आवश्यकता नहीं है न ही मेरा आकार है न विस्तार, निरंतर सर्वत्र बसता हूं ।। 199 ।। "मेरे ऊपर भार डालकर जो वास्तव में मुझसे मिल जाता है उसका सब शरीर व्यापार , मैं, सूत्रधार, चलाता हूं।" ।। 200 ।। फिलहाल आगे अद्भुत कौशल त्रिशूल का प्रयोजन, श्रोता सावधान होकर सुनें । सम्बन्ध पर विश्वास होगा ।। 201 ।। इधर जब मेघा वापस लौटा त्रिशूल खींचना आरंभ किया, वाडा में चित्र के निकट भीत पर। त्रिशूल रक्त वर्ण से रेखांकित किया ।। 202 ।। दूसरे दिन मस्जिद में पुणे से रामदास भक्त आया । प्रेम से बाबा को नमस्कार किया । शंकर का लिंग अर्पित किया।। 203 ।। इसी समय मेघा भी वहां आया । बाबा को साष्टांग प्रणाम किया। बाबा बोले, "यह शंकर आ गए, अब तूं इन्हे संभालो।" ।। 204 ।। ऐसे लिंग का प्राप्त होना, त्रिशूल-दृष्टांत के पीछे अचानक, मेघा तटस्थ लिंग को देखते रहे प्रेम से सद्गदित हो गए ।। 205 ।। लिंग का एक और काका साहेब दीक्षित का अनुभव देखने के लिए श्रोता सादर सब सुनें । साईं पदो में भरोसा दृढ़ होगा ।। 206 ।। इधर जब लिंग लेकर मेधा मस्जिद से निकले दीक्षित वाडा में स्नान समाप्त करके नाम स्मरण में निमग्न थे ।। 207 ।। धुले वस्त्र से अंग पोंछते शिला के ऊपर खड़े रहे, तौलिया सर पर रखे साईं का स्मरण करते हुए ।। 208 ।। नित्य नियम के अनुसार सिर

को आच्छादित करके नामस्मरण करते हुए लिंग दर्शन हुआ।। 209 ।। नाम स्मरण चलते हुए आज ही क्यों लिंग दर्शन हुआ, ऐसे जब दीक्षित विस्मित थे, मेघा सुप्रसन्न सन्मुख थे ।। 210 ।। मेघा बोले, "देखो काका, देखो, बाबा ने लिंग दिया है।" काका लिंग विशेषदेख कर आश्चर्य के साथ प्रसन्न हुए ।। 211 ।। रूप, रेखा, आकार, लक्षण, जब पूर्वक्षण का ध्यान आया वही लिंग उस क्षण देखकर दीक्षित का मन सुखी हो गया।। 212 ।। इस प्रकार बाद में मेघा के हाथ त्रिशूल लेखन पूर्ण हुआ। छवि के पास लिंग स्थापन साईं ने करवाया ।। 213 ।। मेघा की रूचि शंकर पूजन में थी। शंकर लिंग प्रदान करके उसकी भक्ति का दृढ़ीकरण किया। साईं का कौशल अद्‌भुत है।। 214 ।। ऐसी क्या एक ,ऐसी अपरिमित सुना सकता हूं, किन्तु ग्रंथ विस्तारिता होगी। इसलिए श्रोता क्षमा करें।। 215 ।। तथापि तुम श्रवणोत्सुक हो इसलिए एक और कहूंगा। अगले अध्याय में साई का कौतुक जिसमें अलौकिक दिखेगा ।। 216 ।। हेमाड साईं की शरण होकर साईं चरित्र श्रवण कराता है इससे भव भय हरण होगा। सभी के पापों का निवारण होगा ।। 217 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्रीसाईं समर्थ सच्चरित में “दृष्टान्तकथन” नामक अट्‌ठाइसवां अध्याय सम्पूर्ण हुआ।।

श्री सद्‌गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय उन्तीसवां (स्वप्न कथा) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

गत अध्याय में कथन था इस अध्याय में श्री साईं के उससे भी अधिक अतर्क्य कौशल का श्रवण करें। कथानुसंधान एक ही है ।। 1 ।। बाबा की अगाध लीला सुन कर, सन 1916 में एक भजनी मंडली दर्शनार्थ शिरडी आयी ।। 2 ।। मंडली के सभी लोग प्रवासी थे। मद्रास में कीर्ति सुनी । काशी की यात्रा पर जाते हुए मार्ग में शिरडी में उतर गए ।। 3 ।। साईं बाबा महा संत, धीर, उदार और दानी । यात्रा करने वालों के प्रति कृपावंत । पैसे अत्यन्त बांटते ।। 4 ।। डेढ़ पैसा, दो आना हाथ का मैल । चार आना आठा आना की बरसात होती है ।रुपया दस, किसी को बीस, किसी को पचास दे देते ।। 5 ।। यह क्या उत्सव के दिन, कार्य विशेष या पर्वकाल में, प्रति दिन उक्त प्रमाण में संतोष से अर्पित करते ।। 6 ।। पाहुड व भवय्ये (तमासगीर) आते व नाचते, गवय्ये गाते, भाट स्तुतिगान करते, तमासगीर सलाम करते हरि भक्त भजन में रंगे रहते ।। 7 ।। महाराज की ऐसी उदारवृत्ति, दान धर्म में खुले हाथ की स्थिति थी। यह कीर्ति कानोंकान सुनकर दर्शन की इच्छा धारण करते ।। 8 ।। कहीं बाबा के चित्त में आ गया तो राहगीरों को पैसे बांटते । दीन दुर्बल को परामर्श देते । साईंनाथ कृपा मूर्ति थे।। 9 ।। एक पुरुष तीन स्त्रियां | पूरी मंडली चार लोगों की थी। पत्नी की बहन, स्वपत्नी, पुत्री व स्वयं । संत दर्शन की अभिलाषा ।। 10 ।। साईं के दर्शन पाकर मंडली संतुष्ट हो गयी। प्रतिदिन नियम से साईं के निकट प्रेमल भजन करते ।। 11 ।। रामदासी सम्प्रदाय के थे भजन अति उल्हास से करते । बाबा भी रुपया आठ आने जैसा मन में आता उन्हें देते ।। 12 ।। कभी उन्हें बर्फी देते। कभी खाली हाथ वापस भेज देते । बाबा ऐसे ही सदा उद्यत रहते। किन्तु कुछ भी निश्चित नहीं था ।। 13 ।। पैसे बांटते थे यह तो सत्य था। इसमें कुछ भी असत्य नहीं है। किन्तु वे सभी को नहीं देते। किसी को मनोगत ज्ञात नहीं होता ।। 14 ।। फकीर, मुफ्तखोर, भिखारी सदैव बाबा के द्वार पर आते। बाबा यद्यपि बड़े दयालु थे, सभी को धर्मार्थ नहीं देते।। 15 ।। जिसके लाभ काल की घड़ी है, उसी के सुख के लिए संत के हाथ के स्पर्श की कौड़ी (पैसा) भाग्य से प्राप्त होती है।। 16 ।। इस अर्थ की

एक कहानी है। सुनकर श्रोता संतुष्ट होगें। इस बार उसी पर पहुंचते हैं फिर आगे की वाट धरेंगे।। 17 ।। प्रातः काल का नाश्ता होने के बाद बाबा के स्तंभ के पास बैठते, धुनी के निकट मस्जिद में वहां 'अमनी' (नाम की)लड़की आयी।। 18 ।। लड़की तीन वर्ष की निर्वस्त्र (नंगी), हाथ में जिनतन (खाने की गोली) की खुली डिब्बी, मां जमली के साथ शीघ्रता से समय देखकर वह आती।। 19 ।। अमनी जांघ पर बैठ जाती, डिब्बी बाबा के हाथ में दे देती, बाबा का हाथ धर कर, “बाबा रुपय्या” कहती।। 20 ।। बाबा को बच्चों के प्रति बड़ा प्रेम था। यह लड़की भी गोल-मटोल व सलोनी थी। चुंबन लेकर दुलारते, बच्ची को सुरक्षा में लेकर।। 21।। बाबा अपनी सुरक्षा में लेते, अमनी का चित्त रुपये में होता। 'बाबा दे दे न मुझे' बोलती सारा ध्यान जेब पर होता ।। 22 ।। अमनी का तो बच्चे का स्वभाव, बड़े और महान लोगों की भी यही कामना होती है। स्वार्थ के लिए दौड़ भाग । किसी एक में परमार्थ भाव होता है ।। 23 ।। लड़की गोद में बैठी होती मां दूर रेलिंग के बाहर होती। दूर से लड़की को इशारा करती जब तक न दें हिलना नहीं ।। 24 ।। "तुम्हारे बाप का मैं क्या लगूँ । उठते ही मुझसे मांगने के लिए दौड़ी चली आती है, तूं व्यर्थ फोकट में मांग कर खाने वाली।" ।। 25 ।। किन्तु यह क्रोध दिखावटी (बाहरी) था । अन्तर में प्रेम की लहर उठी। जेब के भीतर हाथ डालकर रुपया बाहर निकाला ।। 26 ।। उसे डिब्बे में डालकर ढक्कन बंद करने से जो खट की आवाज होती, डिब्बी हाथ में पड़ते ही तुरन्त घर का रास्ता पकड़ती।। 27 ।। यह तो होता नाश्ते के समय | उसी प्रकार जब वे लेंडीबाग के लिए निकलते । वहां भी अमनी को रुपया देते, वैसे ही क्रोध करते ।। 28 ।। ऐसे प्रति दिन दो उसे, छः उस जमली को देते, पांच दादा केलकर को, दो-दो भाग्य व सुन्दरी को ।। 29 ।। दस से पन्द्रह तात्या को, पन्द्रह से पचास फकीर बाबा को, आठ जरूरतमंद व गरीबों को नित्य नियम से देते ।। 30 ।। इस प्रकार ऐसी ही दान शीलता की चर्चा मद्रासियों ने सुनी तो सहज ही अर्थ स्वार्थता उत्पन्न हो गयी भजन करना प्रारम्भ कर दिया ।। 31 ।। बाह्यतः वे भजन सुन्दर थे। अन्तर में द्रव्य का दुर्धर लोभ । पैसे देंगे इस आशा में सपरिवार शिरडी में रहे ।। 32 ।। उनमें से तीन में बड़ा लालच था । बाबा से बहुत द्रव्य लेने की , किन्तु साईंचरणों में भजन का सदभाव एक स्त्री का निजभाव था ।। 33 ।। मेघ को सामने देखकर मोर आनंद से नाचने लगता है। चन्द्रमा के प्रति जैसे चकोर का वैसा ही उसका आदर था।। 34 ।। एक बार मध्यान्ह की आरती चलते कृपामूर्ति साईं ने बाई की सद्भाव स्थिति देखकर रामरूप में दर्शन दिया ।। 35 ।। अन्य के लिए नित्य के साईंनाथ बाई की दृष्टि में जानकी कांत । आंखों से छलछल अश्रु

बहता लोग विस्मित देखते रहते ।। 36 ।। दोनों ही हाथों से ताली बजाती रही, साथ ही नयनों से आंसू बहते रहे। उस समय यह अपूर्व देखकर मंडली विस्मित थी ।। 37 ।। ऐसा वह दृश्य देखकर सभी के मन में जिज्ञासा हुई । इतनी प्रेम की बाढ़ क्यों लुढ़क रही है, क्यों इसी को आनंद हो रहा है ।। 38 ।। बाद में अपने पति से तीसरे प्रहर स्वयं आनंद निर्भर होकर रामदर्शन की नवलता, साईं द्वारा जो आचरित थी, बता दी ।। 39 ।।बोली "नीले कमल की पंखुड़ियों की भांति श्याम, भक्त की इच्छा के कल्पवृक्ष, वह भरत के अग्रज, सीता के अभिराम, दशरथ के राम मुझे दिखे ।। 40 ।। किरीटकुंडलमंडित, वनमालविराजित, पीतवस्त्रधारी, चार भुजाओं वाले जानकी नाथ, मुझे दिखे। ।। 41 ।। शंखचक्रगदाधर, श्रीवत्सलक्षण, कौस्तुभहार, उसी उत्कृष्ट पुरुषोत्तम का मनोहर रूप देखा। ।। 42 ।। वह मानवरूप धारी असामान्य लीलावतारी जानकी जीवन, मनोहारी धनुर्धारी मुझे दिखे। ।। 43 ।। बाह्यरूप में वह फकीर दिखते हैं दर दर भिक्षा मांगते हैं। मुझे जानकी जीवन मनोहारी धनुर्धारी दिखते हैं ।। 44 ।। इस प्रकार यह अवलिया ऊपर-ऊपर किसी को कैसा ही दिखे, अन्दर से मनोहारी, जानकीजीवन, धनुर्धारी मुझे दिखता है" ।। 45 ।। बाई बहुत सरल व उत्कृष्ट थी। उसका पति अत्यंत स्वार्थी था। "स्त्रियों की जाति ऐसी भोली होती है रघुपति इस स्थान पर कैसे ।। 4 6 ।। मन में जैसे-जैसे बसा होता है भोले भाले लोगों को तैसे ही आभासित होता है हम सभी को साईं दिखे ! रामरूप कैसे?” ।। 47 ।। ऐसे नाना कुतर्क करते हुए उसकी अवहेलना की । बाई के मन में विषाद नहीं हुआ । असत्य कल्पना वह नहीं करती थी ।। 48 ।। पहले उनकी बड़ी आध्यात्मिक पात्रता था। उनका नाम बहुत था । सुखकारी रामदर्शन उन्हें प्रहर प्रहर होते ।। 49 ।। बाद में द्रव्य के प्रति लोभ का उद्भव हुआ । द्रव्य के पास देव नहीं होते। रामदर्शन का अभाव हो गया। लोभ का ऐसा स्वभाव है ।। 50 ।। साईं इन सबसे अवगत थे यह जानकर कि उसके पाप धुल गये हैं, पुनः राम दर्शन देकर उसका हेतु पूरा किए ।। 51 ।। इस प्रकार बाद में उस रात कैसा अद्भुत घटित हुआ । पति ने निद्रा में भारी भयंकर स्वप्न देखा ।। 52 ।। स्वयं एक शहर में है। एक पुलिस ने पकड़ लिया है, मुसक कसकर बांध कर गुर्राते हुए (रस्सी का) किनारा हाथ में लिए पीछे खड़ा है।। 53 ।। वहां उसी स्थान पर एक पिंजरा है। निकट उसके बाहरी भाग में साईं भी सब देखने में लगे हैं, निश्चल बिना कारण खड़े ।। 54 ।। महाराज को निकट देखकर दोनों हाथ जोड़ कर, मुख की वाणी को दयापूर्ण करके दीन वाणी से तब बोला।। 55 ।। “बाबा आपकी कीर्ति सुनी आपके चरणों में आये हैं। यह संकट हमारे लिए क्यों तुम जब प्रत्यक्ष हो ।। 56 ।।

महाराज प्रत्युत्तर देते हैं, "कृतकर्म गूढ है व भोगना अनिवार्य है" | गृहस्थ अति विनीत बोला, “मैनें ऐसा कुछ नहीं किया है ।। 57 ।। इस जन्म में यद्यपि कुछ नहीं किया, जिस कारण ऐसे संकट से गुजरना होता।” उससे महाराज बोले, “दूसरे जन्म में किया होगा।" ।। 58 ।। फिर उनका उत्तर दिया, "पिछले जन्म का मैं क्या जानूं । फिर भी आपके दर्शन होने से निश्चित ही भस्म हो गए होंगे ।। 59 ।। मुझे आपका दर्शन होते ही अग्नि के समक्ष जैसे तृण, तैसे वे समूल नष्ट होकर, आपके पास मेरी मुक्ति कैसे नहीं है" ।। 60 ।। तब महाराज उससे बोले, “ऐसा तुम्हारा विश्वास है क्या? गृहस्थ के हाँ बोलने पर आखें बन्द करने की आज्ञा दी" ।। 61 ।। आज्ञा मानते हुए आंखें बन्द की। तब तत्क्षण खड़े रहते हुए, किसी के गिरने के धमाके की आवाज कानों में सुनी।। 62 ।। आवाज कान में पड़ते, झटका लगा। आंखें खोलकर देखने लगा, अपने को बन्धन से निर्मुक्त देखा पुलिस वाला अत्यधिक रक्त में पड़ा था ।। 63 ।। उसके मन में अत्यन्त घबराहट हुई महाराज को देखने लगा। फिर हंसते हुए वे उससे बोले, "अच्छा तुम अब पकड़े जाओगे ।। 64।। अब अमलदार आऐंगे यहां सब प्रकार देखकर; तू ही दंबग और अनुशासनहीन है, इसलिए पुनः गिरफ्तार किए जाओगे” ।। 6 5 ।। फिर वह गृहस्थ तत्त्वतः बोला, “बाबा आप सही कह रहे हैं, अब कैसे भी छुड़वाइएँ । तुम्हारे बिना त्राण नहीं दिख रहा है" ।। 66 ।। ऐसा सुनकर साईं बोले, “पुनः नेत्र बंद करो। तैसा करके आंखे जो खोली एक और नवल स्थिति ।। 6 7 ।। अपने पिंजड़े के बाहरी भाग में था । महाराज साईं अपने पास थे उनको साष्टांग नमन किया । बाबा फिर उससे पूछते हैं ।। 68 ।। "तुम्हारे अब के नमस्कार और इसके पूर्व जो निरन्तर करते रहते थे, क्या दोनों में अंतर है? विचार करके मुझे बताओ” ।। 69 ।। तब उस गृहस्थ ने उत्तर दिया; “जमीन आसमान का अन्तर। पूर्व नमस्कार केवल द्रव्यार्थ होता था, अब परमेश्वर भाव से। ।। 70 ।। पहले कुछ भी भाव नहीं होता था । इतना ही नहीं अपने मुसलमान होकर हम हिन्दू को भ्रष्ट कर रहे हैं यह रोष चित्त में होता" ।। 71 ।। इस पर बाबा पूछे,"क्या तुम्हारे चित्त में मुसलमान देवों की भक्ति नहीं है। गृहस्थ बोला, “नहीं” ।। 72 ।। बाबा उस पर पूछे, “पंजा क्या तुम्हारे घर में नहीं है, पूजते नहीं हो क्या ताबूत के दिन? मन में निश्चित विचार करो।" ।। 73 ।। 'काड-बिबी' (नाम का देव) भी सदन में है। लग्नकार्य में तुम पूजते हो उपहार व सम्मान से तुष्ट करते हो, वह मुसलमान देव है" ।। 74 ।। 'हां' कहकर स्वीकार किया। पूछा और क्या इच्छा है? गृहस्थ की निजगुरु रामदास के दर्शन की आस्था उपजी ।। 75 ।। महाराज फिर उससे बोले, "पीछे मुड़ कर देखो" | फिर जो पीछे मुड़ कर देखा समर्थ रामदास

स्वयं सन्मुख थे ।। 76 ।। समर्थ रामदास, चरणों में पड़ते ही, उसी स्थान पर अदृश्य हो गए। फिर उसने जिज्ञासा पूर्वक देखा और कुछ पूछने का विचार करने लगा ।। 77 ।। “बाबा आपकी वय हो गयी है शरीर वृद्ध दिख रहा है आपके आयु की मर्यादा क्या आप जानते हैं" ।। 78 ।। “क्या बोलता है मैं बूढ़ा हो गया हूं। मेरे साथ दौड़ कर देखो।” कहकर साई जब दौड़ने लगे वह पीछे लग लिया ।। 79 ।। महाराज सवेग दौड़ते रहने से धूल में, जो उड़ने लगी, उसी समय अदृश्य हो गए, गृहस्थ जाग गया ।। 80 ।। इस प्रकार वह जब जागृत हो गया, स्वप्न स्थिति का मन में विचार करने लगा । तत्काल चित्तवृत्ति पलट गयी, बाबा की महानता का गुणगान करने लगा ।। 81 ।। ऐसा चमत्कार देखकर साईं चरणों में भक्ति दृढ़ हो गयी। बाबा के विषय में संशय वृत्ति व पूर्व परिस्थिति समाप्त हो गयी थी ।। 82।। देखने में पूरा स्वप्न था किन्तु उसके उत्तर और प्रश्न सुनकर श्रोता इसके अन्दर के गहन भावार्थ को ग्रहण करता है ।। 8 3 ।। उस प्रश्नोत्तर के वार्तालाप से मद्रासी को परमबोध प्राप्त हुआ। साई संबंधी विरोध पिघल गया हास्य विनोद से ।। 84 ।। दूसरे दिन प्रातःकाल मंडली दर्शन के लिए मस्जिद आयी । साईनाथ ने कृपा करके दो रुपए की बर्फी दी ।। 85 ।। वैसे ही पल्लू से दो रुपए उन सबको दिए। लेकर कुछ दिन रुके। भजन पूजन चलता रहा ।। 86 ।। फिर कुछ समय व्यतीत होने पर मंडली जाने के लिए निकली । यद्यपि बहुत पैसा नहीं मिला, भरपूर आशीर्वाद का लाभ मिला ।। 87 ।। "अल्ला मालिक बहुत देगा। अल्ला तुम्हारा अच्छा करेगा” | आगे यही उपयोग में आया जब मार्ग पर गये।। 88 ।। साई के आशीर्वचन, साई का स्मरण ध्यान मन में दिन रात मार्ग पर चलते रहे । स्वप्न में भी तिल भर दुःख नहीं हुआ ।। 89 ।। आशीर्वाद के अनुरूप ही घटित हुआ । यथा कथन अनेक यात्राएं हुई यत्किंचित ताप की अनुभूति नहीं हुई। सुखी रूप में अपने घर वापस आ गए ।। 90 ।। मन में एक सोची थी, वह घटित होने के बाद, अनेक तीर्थ यात्राएं हो गयी। साई वचन के कौतुक को कहते-कहते उन सबको अनुपम आनंद मिला ।। 91 ।। इसके अतिरिक्त संत का आशीर्वचन 'अल्लाह अच्छा करेगा' यह वचन अच्छर-अच्छर सत्य होकर मनोरथ पूर्ण हुआ ।। 92 ।। ऐसे वे समस्त तीर्थोपासक थे, भगवद्भक्त मद्रासी लोग सकल सत्त्वस्थ व सात्विक, साई उनके बंधमोचक थे ।। 93 ।। ऐसी सरस एक और कथा कहता हूं, श्रोता सादर सुनें । भक्ति भाव से श्रवण करने से चित्त में आश्चर्य प्रकट होगा ।। 94 ।। भक्त के कार्य के कल्पवृक्ष कैसे साईं परम दयालु थे। कैसे सप्रेम भक्तों का काम सर्वदा बिना विश्राम किए पूरा करते ।। 95 ।। थाना जिला में वान्द्रा शहर है, वहां के एक भक्त प्रवर रघनाथराव तेंदुलकर- चतुर, धीर

व विद्वान ।। 96 ।। सदा आनन्दित बहुत प्रेमी. साई के कमल चरण में ध्यानस्थ । वहीं मकरन्द रूपी बोध की इच्छा से अखण्ड नाम जपते रहते ।। 97 ।। 'भजनमाला' को रूप देकर जिसने साई लीला का वर्णन किया, जो भक्ति प्रेम से उसे पढ़ेगा पद पद पर साई को ही पाएगा।। 98 ।। सावित्री नाम की उसकी पत्नी थी, बाबू उनका ज्येष्ठ पुत्र । उनका विचित्र अनुभव देखो । साईं के चरित्र को सुनें ।। 99 ।। एक बार बाबू सशंकित मन हो गया। वैद्यकीय पाठशाला में परदेश में वैद्यकी की शिक्षा ली। परीक्षा में नहीं बैठा ।। 100 ।। उसने रात दिन एक कर दिया । अभ्यास बहुत कस कर किया । सहज ज्योतिषी से प्रश्न किया। क्या परीक्षा में उत्तीर्ण होऊंगा।। 101 ।। पंचांग के पन्ने पलटने के बाद ज्योतिषी ने ग्रहों का स्थान देखा । राशि नक्षत्रों की अंगुलियों से गणना करके चिंतित मुद्रा में दिखा ।। 102 ।। बोला,"बहुत परिश्रम किया है, किन्तु इस वर्ष ग्रहों का जोर नहीं है। अगला वर्ष बहुत श्रेयस्कर है उस वर्ष परीक्षा में डर नहीं है" ।। 103 ।। यदि श्रम निरर्थक होगा तो परीक्षा में बैठने का क्या अर्थ ,विद्यार्थी को इस भय ने घेर लिया। उसका मन तो भौचक्का था।। 104 ।। उस विद्यार्थी की माता कुछ समय बाद, शिरडी गयी। साईं चरणों में माथा नवाया कुशल वार्ता चलने लगी।। 105 ।। वहीं यह कथा निकली। करुण वाणी से बाबा से प्रार्थना की । बोली लड़का परीक्षा में बैठा होता, ग्रहों की अनुकूलता होती तो ।। 106 ।। ज्योतिषी ने कुंडली देखकर बोला इस वर्ष योग नहीं है। अभ्यास की तैयारी होते हुए भी लड़का परीक्षा में नहीं गया ।। 107 ।। किन्तु बाबा यह ग्रह दशा क्या है? इस वर्ष ऐसी निराशा क्यों? ऐसी सभी की बहुत आशा है कि एक बार वह परीक्षा पास हो जाये ।। 108 ।। सुनकर बाबा बोले वचन, “उससे कहो मेरी माने । कुंडली को मोड़कर रख दे। स्वस्थ मन से परीक्षा में जाकर बैठे" ।। 109 ।। प्रसन्नता से रहे, किसी से सम्पर्क न करे। जन्म पत्री न दिखाए । सामुद्रिक पर विश्वास न करे। पढ़ाई का अभ्यास चालू रखे।। 110 ।। लड़के से बोलो, 'यश होगा'। स्वस्थ मन से परीक्षा में बैठे। इस प्रकार निराश न हो ! मुझ पर विश्वास करे" ।। 111 ।। इस प्रकार बाबा की आज्ञा लेकर मां ग्राम वापस चली गयी। लड़के से बाबा का संदेश कहा । उत्साह से जननी ने आश्वस्त किया ।। 112 ।। साईं वचन का ऐसा उल्हास था कि लड़का परीक्षा में बैठा। प्रश्नों के उत्तर लिखे, निर्धारित समय में दे दिया।। 113 ।। लिखित परीक्षा पूर्ण हो गयी। उत्तर भी संपूर्ण लिखा । पर आत्म-अविश्वास ने घेर लिया। स्थिर बुद्धि संशय में पड़ गयी।। 114 ।। सम्यक उत्तर लिख दिया था। उत्तीर्ण होने के लिए इतना पर्याप्त था। किन्तु विद्यार्थी को लगा कि वे अपर्याप्त थे। उसका धैर्य छूट गया ।। 15 ।। वस्तुतः लिखित

परीक्षा में पास हो गया ,फिर भी उसे लगा कि वह पास नहीं हुआ है। इससे वह उदास होकर मौखिक परीक्षा में नही बैठा ।। 116 ।। मौखिक परीक्षा आरंभ हो गयी। प्रथम दिवस वैसे ही चला गया। दूसरे दिवस एक स्नेही आया। विद्यार्थी को भोजन करने बैठे देखा ।। 117 ।। बोला, “यह क्या आश्चर्य है। परीक्षक को तुम्हारी चिन्ता है, बोला, “जाओ देखकर आओ , तेंदुलकर कल क्यों नहीं आया।" ।। 118 ।। "लिखित परीक्षा में फेल है तो मौखिक परीक्षा में प्रयास का क्या अर्थ है। इसलिए घर में वह बैठा है, उदास,” मैंने उससे यह स्पष्ट कह दिया ।। 119।। तब परीक्षक ने कहा, "तुम जाओ। वह जैसा है उसे ले आओ। लिखित परीक्षा पास कर लिया है यह आनन्ददायी खबर उसे दे दो ”।। 120 ।। फिर उस आनन्द का क्या पूछना? महाराज साईं से प्रार्थना करते हुए बिना क्षण विश्राम किए उल्हास भाव से दौड़ा ।। 121 ।। इस प्रकार आगे अच्छा हुआ। परीक्षा की शर्त पूरी हो गयी। साईं ने इच्छा पूरी करके अपने पदों में दृढ़ता से जोड़ लिया।। 122 ।। जँते की खूट को दलने के लिए घुमा-घुमा कर दृढ़ता से बैठाते हैं, वैसे ही गुरु चरणों में निष्ठा की कहानी है। साईं ने घुमा कर उत्कृष्ट किया।। 123 ।। ऐसा किसी से कभी भी नहीं कहते, जिससे चित्तवृत्ति न घूम जाये । बाबा के साथ यह नित्य का अनुभव था। निष्ठा इस रीति से दृढ़ करते।। 124 ।। बताए हुए मार्ग पर चलते जाते, आरंभ में अच्छा लगता है। बाद में कांटेदार झाड़ियां ऐसे फैली होंगी, कि चारों ओर कांटे ही कांटे ।। 125 ।। फिर उसकी निष्ठा टूट कर बंटने लगती है। सहज मन में संशय भर जाता है। मन में यह होता है कि साईं किसलिए इस उपमार्ग पर लाए ।। 126 ।। किन्तु जब ऐसा प्रतीत होने लगे, तब श्रद्धा दृढ होनी चाहिए। ये संकट प्रत्यक्ष कसौटी हैं। उससे दृढ़ श्रद्धा प्रवेश करती है।। 127 ।। संकट का सामना करने के लिए अखंड साईं स्मरण करने से सरल विपदा टुकड़ों में टूट जाती है। नाम की प्रचंड शक्ति है।। 128 ।। यही इन विपदाओं का प्रयोजन है। उनका भी साईं ही निर्माण करते हैं। तभी साईं स्मरण होता है तभी संकट का उपशमन भी।। 129 ।। और इस बालक के पिता बाबा के प्रेमल भक्त थे- धीर, उदार, सत्त्वशील । अंग शिथिल हो गए थे।। 130 ।। प्रसिद्ध विदेशी व्यापार संस्था जिसका कार्यालय मुम्बई शहर में था। उनके आश्रय में ईमान व विश्वास के साथ उनकी नौकरी की ।। 131 ।। फिर वृद्धावस्था होने पर नेत्र अन्त में बन्द होने लगे। इन्द्रियाँ निजकार्य में असमर्थ निश्चल आराम चाहने लगीं।। 132 ।। काम करने की शक्ति शेष नहीं रही । इसलिए स्वास्थ्य में सुधार लाने के लिए रघुनाथ अवकाश लेकर स्वस्थ विश्रांति भोग करने लगे।। 133 ।। फिर वह अवकाश पूरा समाप्त हो गया पूर्ण विश्रांति लाभ नहीं हुआ।

इसलिए पुन: अर्जी लिखी और अवकाश की प्रार्थना की ।। 134 ।। अर्जी देखकर वरिष्ठ ने अपेक्षित अवकाण की सिफारिश कर दी। किन्तु इस कार्यालय का वरिष्ठ अधिकारी पूर्ण दयालु व विचारवान था।। 135 ।। मन का उदार धनी (मालिक) अपने ईमानदार नौकर को देखकर प्रेम से आधा वेतन देता है, जिससे आगे की जीविका चलती रहे।। 136 ।। ऐसी ही सरकारी पद्धति है। उत्तम व्यापारिक प्रतिष्ठान भी यथोचित समय पर विश्वसनीय सेवकों के लिए, प्रोत्साहन स्वरूप इसका अनुपालन करते हैं।। 137 ।। किन्तु यह मेरा मालिक क्या मुझे पेन्शन देगा, जब मैं नौकरी विहीन हो जाऊंगा। ऐसी ही चिन्ता में वे पड़ गए।। 1 38।। मेरी पूरी पगार डेढ़ सौ रुपया ,पौन सौ की पेन्शन पर दिनचर्या का भार पड़ेगा। मन में विचार घूम रहा था ।। 139।। किन्तु आगे मौज हो गयी। बाबा की देखें । रघुनाथ राव की पत्नी से अन्तरंग बातें हो रही थीं। जो पूछा वह कौतुक सुनें ।। 140 ।। अन्तिम आदेश होने में पन्द्रह दिन की अवधि बाकी थी। उनके स्वप्न में जाकर उनके विचार पूछे।। 141 ।। "सौ देने का मेरा मन है। तुम्हारे मन की आशा पूरी हो जायेगी न ।" बाई बोली "यह क्यों पूछते हो? हमारा आप पर भरोसा है।। 142 ।।" उधर अर्जी पर निर्णय हुआ। रघुनाथ राव ईमानदार नौकर थे। आज तक बहुत सेवा कर चुके हैं। वेतन की आधी पेन्शन उन्हें दी जाये। ।। 143 ।। यद्यपि मुख से सौ बोले । दस और बढ़ा कर दिया । ऐसे ये समर्थ करुणाकार हैं। भक्तों के प्रति असीमित प्रेम है।। 144।। अब एक और मनोरंजक सुन्दर कथा सुनो, भक्त प्रेमोल्हास कारक श्रोताओं के लिए आनन्ददायक ।। 145 ।। कैप्टन हाटे नामक एक डाक्टर बाबा का बहुत श्रद्धालु भक्त था। बाबा का स्वप्न में दर्शन भोर में देखने का सुन्दर कथानक ।। 146 ।। 'हाटे' ग्वालियर में रहते थे। बाबा को स्वप्न में देखा । बाबा की प्रश्न कुशलता देखो । हाटे भी उत्तर में क्या बोलते हैं?।। 147 ।। बाबा बोले, "मुझे बिसरा दिया क्या? तत्काल हाटे ने पांव पकड़ लिया। यदि बच्चा मां को विसरा देगा, कल्याण (उद्धार) कैसे होगा?" ।। 148 ।। उठकर बाग में शीघ्रता से गए, ताजी वाल पापड़ी तोड़ी। शिद्धा सामग्री दक्षिणा का पैसा (एकत्र किया)। भक्ति के उद्देश्य को सिद्ध किया ।। 149।। इस प्रकार सिद्धि की पूर्ति देखकर हाटे वह सूप जब अन्त में समर्पण करने लगे अचानक नेत्रपात खुल गए | उन्हें ज्ञान हुआ कि वह स्वप्न था ।। 150 ।। तत्काल ये समस्त पदार्थ प्राप्त करने के लिए बाजार जाने का, बाबा को प्रत्यक्ष अर्पण व तदर्थ शिरडी जाने का मन हुआ।। 151 ।। पर उन्होंने तब ग्वालियर से मुंबई के मित्र को साद्यंत सूचित करते हुए वृतांत पत्र लिखा। स्वयं शिरडी जाने की विनती की ।। 152 ।। डाक मार्ग से पैसा आएगा, शिद्धा लेने के लिए, सुंदर वाल

पापड़ी निश्चित रूप से जिस भी तरह मिले।। 153 ।। शेष पैसा साथ लेकर शिधा समेत बाबा को दें। चरण वन्दन करके प्रसाद मांगे। वह मुझे देने के लिए भेज दें।। 154 ।। पैसा आते ही शिरडी जाकर सामान लेने के लिए निकल पड़े। पापड़ी के लिए किंचित कठिनाई हुई तो एक टोकरी वहां आ गयी।। 155 ।। वह जिस बाई के सर पर थी उसे बुलाकर देखा गया वांछित पापड़ी हाथ लग गयी। सभी को आश्चर्य हुआ।। 156 ।। फिर वे सभी सामग्री लेकर महाराज को समर्पित की गयी । उन्हें निमोणकर को दिया दूसरे दिन पका कर नैवेद्य निवेदित किया गया ।। 157 ।। बाद में बाबा भोजन के लिए बैठे। दाल-भात आदि नहीं हुआ ।जितनी सब्जी थी उठाकर ले ली। सभी को आश्चर्य हुआ।। 158 ।। जितनी सब्जी थी ग्रहण किया। जितनी थी वही मुख में डाला, जब वृत्तांत की सूचना मिली, हाटे को बहुत आनन्द हुआ।। 159 ।। जिसके मन में जैसा भाव वैसाही उन हाटे ने अनुभव किया। आगे की कथा की नवलाई सुनें। साईं की कुशलता मधुर है।। 160 ।। “साईं के हाथ का स्पर्श किया हुआ एक रुपया घर के अंदर हो” हाटे के मन में इच्छा उत्पन्न हुयी। साईं ने उनका मनोगत पूरा किया ।। 161 ।। मन की वृत्तियां कोटि-कोटि हैं। बुरी वृत्तियों को त्याग कर अच्छी वृत्ति को धारण किए रहें। फिर देखो साईं की कैसी कुशलता है भक्तों के पीछे खड़े रहते हैं।। 162 ।। ऐसी सदिच्छा का निर्माण होते ही सफल होने में क्षण नहीं लगा। तत्क्षण एक मित्र साईं दर्शन की इच्छा से निकल पड़ा ।। 163 ।। वृत्ति मात्र अच्छी होनी चाहिए। साईं द्वारा पूरा किया जाना अद्भुत है। जिसकी सदवृत्ति में रुचि है। उसकी चाह उनके हाथ में है।। 164 ।। तब हाटे ने उस मित्र को एक रुपया अति प्रेम से देते हुए बोले, "विस्मृत न होने देना बाबा के हाथ में रखना" ।। 165 ।। स्नेही जब शिरडी गए तत्काल बाबा के दर्शन प्राप्त किए। उनके चरणों में सर नवाया बाबा के सम्मुख बैठ गए ।। 166 ।। दक्षिणा के लिए हाथ पसारने पर प्रथमतः अपनी दक्षिणा दी। बाबा ने अबिलंब जेब में डाल ली। पुनः उसे (एक रुपया) हाथ से निकाला।। 167 ।। वह रुपया हाथ जोड़कर बाबा के हथेली में रख दिया । बोले यह मेरे माध्यम से डाक्टर हाटे ने भेजी है।। 168 ।। यह साईं सर्वहृदयवासी हैं। यद्यपि हाटे ग्वालियर के निवासी थे, उनके मन की इच्छा जान कर बैठे हुए रुपया निहारते रहे।। 169 ।। प्रेमवश होकर बाबा ने रुपया सन्मुख धर दिया। आश्चर्य , एक टक देखने लगे। लोग एकटक देखते रहे ।। 170 ।। दाहिने अंगूठे से लगातार हवा में उछालते बाबा अपने हाथ से पकड़ते। ऐसी क्रीड़ा क्षणभर को | रुपया उन्हें वापस कर दिया ।। 171 ।। बोले, "यह जिसका है उसे दे दो। इसके साथ ऊदी का प्रसाद ले जाओ। उससे बोलना स्वस्थ रहे। मुझे तुम्हारा कुछ नहीं

चाहिए।" ।। 172 ।। बाबा के चरणों में । साष्टांग दण्डवत करके ले जाने के लिए ऊदी प्रसाद रख कर बाबा की आज्ञा लेकर वह स्नेही ग्वालियर में अपने घर आया ।। 173 ।। ग्वालियर आकर डाक्टर को रुपया देकर सकल वृत्तांत सुनाया । हाटे का अन्तःकरण प्रेम से भर गया ।। 174 ।। बोले, “मन में जैसा हेतु था, मेरा मनोगत जानकर जैसा संकेत था, वैसा किया । बाबा ने मनोरथ पूरा किया" ।। 175 ।। ऐसा हाटे के मन को लगा । पर यह उनकी फिर भी कल्पना है। कौन जाने संतो की योजना, उनका प्रयोजन ।। 176 ।। यह यदि निश्चित कहना है तो दूसरा अनुभव देखें । वह तो इसके विपरीत है। उनका मनोगत वही जानें ।। 177 ।। एक का रुपया वापस देते । एक का वह खीसे में डाल लेते। निश्चित कारण क्या बता सकते हैं। बाबा के चित्त में क्या है? ।। 178 ।। उनका कारण वही जानें हम तो केवल मौन देखते हैं। ऐसा सुन्दर अवसर छोड़ना नहीं चाहिए । इस अर्थ की एक कथा सुनें ।। 179 ।। एकबार वामन नार्वेकर ने जिसका बाबा में अपार प्रेम था, एक सुन्दर रुपया लाकर भक्तिपूर्वक अर्पित किया।। 180 ।। एक ओर राम-लक्ष्मण-सीता दूसरी ओर सुन्दर मूर्ति हाथ जोड़े मारूति की खुदी थी।। 181 ।। उसे अर्पित करने के पीछे हेतु था। हाथ से स्पर्श कराकर वापस ऊदी प्रसाद के साथ प्राप्त करने का। इसलिए हाथ पर रखा ।। 182 ।। किसके मन में क्या हृदयगत है बाबा वह सकल जानते थे। फिर भी रुपया हाथ में रखते ही तत्काल जेब में डाल लिया ।। 183 ।। वामनराव के मन की बात माधवराव ने बाबा को बतायी। रुपया वापस करने के लिए उनसे अत्यन्त विनती की ।। 184 ।। "उसे क्यों दें। अपने लिए रखना है।" वामन राव के समक्ष बाबाने स्पष्ट वचन कहा ।। 185 ।। फिर भी वह इसका मोल रुपया 25/- देते हैं तो बदले में मैं यह दे दूंगा । उससे बोल बोले ।। 186 ।। फिर उस एक रुपये के लिए वामन राव ने शीघ्रता की। उसे जगह-जगह से लेकर बाबा को दिया।। 187 ।। उन्हें भी पूर्ववत खीसे में डाल लिया । बोले “रुपया ढेर ला दो फिर भी उस रुपये का तोल नहीं है।" उसके सामने इनका मोल कम है।। 188 ।। बोले, "शामा इसे तुम लो। इसे अपने संग्रह में रखो। देव-स्थान पर रखो । पूजा करते जाना।" ।। 189 ।। अब ये ऐसा क्यों करते? प्रश्न पूछने की किसकी सत्ता थी। साईं योग्य-अयोग्य जानतेथे। देने लेने में समर्थ थे।। 190 ।। इस प्रकार अब यह कथा समाप्त करते हैं। श्रोताओं के चित्त को विश्राम देते हैं जिससे मनन और निदिध्यासन कर सकें, सुनी हुई कथा का ।। 191 ।। कान से क्या सुना मनन किए बिना पचता नहीं है, उसके बाद निदिध्यासन न किया जाये तो श्रवण उद्देश्यहीन हो जाता है।। 192 ।। हेमाड साईं की शरण में है। साईं के चरण में मस्तक धरता है। सकल

साधना का यह साधन है। आगे का निवेदन आगे होता रहेगा ।। 193 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्री समर्थ सच्चरित में 'स्वप्न कथा' नामक उन्तीसवां अध्याय संपूर्ण।।

।। श्री सद्‌गुरू साईंनाथर्पणमस्तु ।। ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय तीसवां (नवसादिकथाकथन) ।।

॥ श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन।। श्री कुलदेवता को नमन।।श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

हे दयावान साईं, भक्त वत्सल करुणा के भण्डार, दर्शन से भक्त के भवभय को दूर करने वाले, आपदा को विलय करने वाले ईश्वर; नमन करता हूं।। 1 ।। आरंभ में निर्गुण रहते हो । वह तूं, भक्त के भाव के गुणों से बुनकर सगुण बन जाते हो ; हे संत चूड़ामणि साईंनाथ ।। 2 ।। अपने भक्तों का उद्धारण कार्य संतो के लिए सर्वदा अपरिहार्य है। तूं तो संत वृंदो के आचार्य हो, तुम्हारे लिए भी वह अनिवार्य है।। 3 ।। जिसने भी तुम्हारे चरणद्वय धर लिए, सकल पाप नष्ट हो गये, पूर्व संस्कारों का उदय हो गया, मार्ग निर्भय व निष्कंटक हो गया।। 4 ।। आप के चरणों को स्मरण करके महातीर्थो के ब्राह्मण आते गायत्री पुरश्चरण (गायत्री-तप) करते, पोथी पुराण वांचते।। 5 ।। संस्कारहीन अल्पशक्ति मैं भक्ति क्या जानूं । यदि सभी मुझे छोड़ दें, साईं नहीं छोड़ेंगे ।। 6 ।। जिनके ऊपर वह कृपा करते हैं, अचिंत्य महाशक्ति पाता है, आत्म व अनात्म-विवेक सम्पत्ति के साथ ज्ञान प्राप्त होता है।। 7।। साईं सुख के वचन (सुनने) की लालसा से भक्तजन दीवाने हो जाते हैं। एक-एक शब्द मन पर दृढ़ता से छप जाता है। भरोसे की प्रतीति होती है।। 8 ।। अपने भक्त का मनोरथ साईंनाथ संपूर्ण जानते हैं। पूरा करने में वही समर्थ हैं। इसी से उनके भक्त कृतार्थ हैं।। 9 ।। हे साईंनाथ, पांव से दौड़े चले आओ। माथा तुम्हारे चरणों में रखता हूं। समस्त अपराध बिसराकर दास की चिंता का निवारण करो।। 10 ।। ऐसे संकट से त्रस्त होने पर जो भक्त साईंनाथ का स्मरण करता है, उसके उद्विग्न चित्त के शन्ति दाता वही एक हैं।। 11 ।। ऐसे दया के सागर साईं ने मुझ पर कृपा की, जिससे यह मंगल कारक ग्रंथ पाठकों को प्रस्तुत कर सका हूं।। 12 ।। अन्यथा मेरा क्या अधिकार? कौन यह कार्य सिर पर लेता। जिसके वही असल में देख-रेख करने वाले हों मुझ पर कैसा भार ।। 13 ।। मेरी वाणी के प्रकाशक, ज्ञान के दीपक, अज्ञान रूपी तम के विध्वंसक साईं समर्थ के होते हुए किस लिए शंकाग्रस्त होऊँ।। 14 ।। उस दयाधन प्रभु का भरोसा है। इससे अणुमात्र भी श्रम की प्रतीति नहीं होती है। यह उनका कृपा प्रसाद है कि मेरी मन की अभिलाषा पूरी हुई।। 15 ।। यह ग्रन्थरूपी संत सेवा, मेरे पूर्व

के एकत्र पुण्य, स्वीकार करके, देवा ने अच्छा किया। इससे मैं भाग्यवान व धन्य हो गया ।। 16 ।। गत अध्याय में श्रवण किया है कि नाना प्रकार से दृष्टांत देकर कैसे भक्तों को दयाघन साईं बोध प्रदान कराते ।। 17 ।। अब वर्तमान अध्याय में भी एक, सप्तश्रृंगी देवी के उपासक, के सुंदर आनन्ददायक कथानक को सुनें ।। 18 ।। देव-देवी अपने भक्तों को कैसे संतो के हाथ में देख रेख के लिए देते हैं, यह एक चमत्कार है, सादर चित्त से देखें ।। 19 ।। महाराज की कथा बहुत है। एक से बढ़कर एक अद्भुत । यह कथा श्रवण करने लायक है, ध्यान से सुनें ।। 20 ।। यह कथा नहीं अमृत पान है। इससे संतुष्टि प्राप्त होगी। साईं की महिमा का , वैसे ही व्यापकपन का, ज्ञान होगा ।। 21 ।। चिकित्सक और तर्कवादी का यहां प्रयास नहीं, यहां वादावादी नहीं, असीमित प्रेम चाहिए ।। 22 ।। भक्त को ज्ञानी, श्रद्धाशील, विश्वासपूर्ण होना चाहिए अथवा संतों के घर का चाकर। अन्य को ये कहानियां अवास्तविक प्रतीत होंगी।। 23 ।। यह साईं लीला का कल्पतरु, निःसंदेह, पुष्प व फल धारण करता है। जो भक्त प्रबल भाग्यवान हैं वही इन्हें नीचे उतारेगा।। 24 ।। इस परमपावनी, कथा को सुनें, परमार्थ व मोक्षदायिनी, सकल साधनाओं में मुख्य सभी के लिए कृतकल्याणी है।। 25 ।। सहजता से जड़-जीवों का उद्धारण हो, यह है साईं कथामृतपान । प्रपंच में लिप्त जनों के लिए है संतुष्टि व मुमुक्ष जनों के लिए मोक्ष का साधन है ।। 26 ।। यहां एक का विचार करते हैं अनेक कल्पनातीत कहानियां आ जाती हैं। इसलिए हेमाड विनीत होकर श्रोताओं को श्रवण के लिए कहता है।। 27 ।। इस प्रकार एक-एक . कथा कहने से लीला का रसास्वादन बढ़ जायेगा। सांसारिक कष्टों का समाधान होगा। यही है साईं समर्थता ।। 28 ।। जिला नासिक, ग्राम वनी, काकाजी वैद्य नामक कोई वहां रहता था। वहां देवी-स्थान पर । पुजारी थे।। 29 ।। देवी का नाम सप्तश्रृंगी है। पुजारी का अन्तःकरण अस्थिर था । सांसारिक समाज के अनेक दुर्धर आपत्ति प्रसंग तंग किए थे।। 30 ।। कालचक्र का जब फेर आता है, मन भंवर की भांति घूमने लगता है। शरीर भी इधर-उधर दौड़ता है। क्षणभर की शांति नहीं मिलती है।। 31 ।। इससे काका जी अति दुःखी थे। देवालय में देवी के निकट जाकर करुणा के लिए कहा, चिंता रहित होने के लिए ।। 32 ।। मनोभाव से प्रार्थना की, देवी भी भाव देखकर तुष्ट हो गयीं। उसी रात दृष्टांत हुआ । श्रोता नवलाई को सुनें ।। 33 ।। देवी सप्तश्रृंगी मा काका जी के स्वप्न में आयीं । बोली, "तुम बाबा के पास जाओ । मन सुस्थिर होगा" ।। 34 ।। ये बाबा कहां हैं? कौन हैं? देवी स्पष्टीकरण करेंगी इसके लिए काका उत्कंठित मन थे, कि वे जाग गए ।। 35 ।। उनकी जिज्ञासा वैसी ही रह गयी। स्वप्न वृत्ति तत्काल मिट

गयी। काका जी ने बुद्धि चलायी, जिन्हें 'बाबा' बोलीं वह कौन हैं? ।। 36 ।। काका जी ने मन में निश्चय किया 'बाबा' त्र्यंबकेश्वर हैं। तुरन्त दर्शन करने के लिए निकल पड़े । मन की अस्थिरता बनी रही।। 37 ।। काका जी दस दिन त्र्यंबकेश्वर में वास किया। आखिर तक उदास रहे । मनोल्लास नहीं प्राप्त हुआ।। 38 ।। मन की दुश्चित्तता गयी नहीं; उसकी चंचलता का शमन नहीं हुआ। दिनोंदिन उद्विग्नता बढ़ती गयी। काका जी पुनः निकल पड़े।। 39 ।। नित्य प्रातः स्नान करते । रुद्रावर्तन, शिवलिंग पर सतत धार से अभिषेक करते । किन्तु अन्तःकरण अस्थिर रहता।। 40 ।। पुनः देवीद्वार पर जाकर बोले क्यों त्र्यंबकेश्वर भेज दिया? अब तो मुझे स्थिर करो। यह आना जाना नहीं होगा ।। 41 ।। इस प्रकार अति करुण भाव से देवी की उन्होंने वन्दना की । देवी ने उन्हें रात में दर्शन दिया। स्वप्न में उनसे बोलीं।। 42 ।। बोलीं,"मैंने जो 'बाबा' कहा, वे शिरडी के साईंसमर्थ हैं। त्र्यंबकेश्वर का गमन, क्यों मेरी समझ में नहीं आता, निरर्थक किया?" ।। 43 ।। शिरडी कहां है कैसे जायें। इन बाबा को मैं जानता नहीं हूं। अब यह जाना कैसे होगा। समझ में नहीं आता कैसे क्या हो ।। 44 ।। किन्तु जो संत चरणों में रत होकर दर्शन के हेतु मन में धारण करते हैं संत क्या, उनकी सदिच्छा ईश्वर पूरी करता है।। 45 ।। जो संत हैं वही अनंत (ईश्वर) हैं। दोनों में लेशमात्र अन्तर नहीं है। दोनों को अलग-अलग मानना द्वैत है। संत अनंत अद्वैत है।। 46।। संत दर्शन के लिए चले जायेंगे, स्वेच्छा से मन की कामना पूरी करेंगे। यह तो केवल अभिमान से उछलना है। संतो की घटना अघटित होती है।। 47।। बिना संतो के मन में आए कौन उनके दर्शन के लिए जायेगा । आश्चर्य है उनकी सत्ता के बिना वृक्ष का पत्ता नहीं हिलता ।। 48 ।। जैसी जिसकी दर्शन की उत्कंठा, जैसा भाव, जैसी निष्ठा भक्त श्रेष्ठ सानंद अनुभव की पराकाष्ठा (लाभ) पाते हैं।। 49 ।। कैसे जायें साईं दर्शन के लिए। इधर काका जी की चिंता थी। उधर उनका ठिकाना पूछते हुए शिरडी से एक पाहुन आ गया।। 50 ।। पाहुन क्या सामान्य था। सबसे अधिक जो बाबा को मान्य था। जिसके प्रेम की कोई तुलना नहीं थी, जिसकी अधिकारिता धन्य थी।। 51 ।। माधवराव नाम से जाने जाते । देशपांडे उनका वतन। बाबा के निकट दुलार से रहते, अन्य किसी की नहीं चलती थी।। 52 ।। सदा सर्वदा प्रेम से झगड़ना। तू-तेरा, एक वचन के बोल । परिणामस्वरूप लड़के की भांति विलक्षण प्रेम । तत्क्षण वहीं पहुंचे ।। 53 ।। जब बच्चा बीमार हो गया। मां ने देवी से अपना दुःख गिड़गिड़ाया, “तुम्हारी गोद में इस अबोध को डालती हूं। रक्षा करना या मारना तुम्हारे ऊपर है। ।। 54 ।। मेरे बालक के ठीक होने पर वास्तव में चरणों में प्रस्तुत कर दूंगी।" इस प्रकार देवी से प्रतिज्ञा

करने पर बालक को आराम मिल गया।। 55 ।। क्या वैद्य, क्या देव, कार्य पूरा होते ही विस्मृत हो जाते हैं। विपत्तिकाल में वचन याद आता है जब वह पूरा नहीं हुआ होता है तो भय होता है।। 56 ।। कितने ही वर्ष माह व दिवस व्यतीत हो गए वचन विस्मृत हो गया। अन्त में माता ने अन्त समय में माधवराव से विनती की।। 57 !! बहुत वर्षों का यह वचन है पूरा करते-करते यह दिन आ गया। बहुत दीर्घ सूत्रता अच्छी नहीं है। देवी के दर्शन के लिए तुम जाओ।। 58 ।। वैसे ही माता के दोनों स्तनों में घाव (दरार) पड़ने से परेशानी हो रही थी। बहुत दुःसह क्लेश होने से एक और वचन देवी को दिया ।। 59।।" माता, साष्टांग दण्डवत करती हूं इस यातना से यदि मुक्ति दे दो तो चांदी के दो स्तन तुम्हें, आरती करके चढ़ाऊंगी।। 60 ।।" वह मनौती (वचन) भी शेष रह गयी है, पूरी करते हैं पूरी करते हैं कहते-कहते । देहावसान के समय मां के चित्त में वही स्मरण हुआ।। 61 ।। उसी की स्मृति बब्या (माधवराव) को दिलायी। पूरी करने का वचन लेकर माता इच्छाविहीन होकर हरिचरणों में विलीन हो गयी।। 62 ।। तत्पश्चात फिर जाऊंगा कहते-कहते दिन महीना वर्ष व्यतीत हो गए । माधवराव को विस्मृत हो गया । मनौती पूरी करने को रह गयी ।। 63 ।। इस प्रकार तीन वर्ष हो जाने पर क्या घटता है शिरडी में? उस स्थान पर पहुंच कर एक ज्योतिषी रहने लगे।। 64 ।।ज्योतिर्विद्या का गहन ज्ञान था। भूत,भविष्य,वर्तमान जानता था । अनेक जिज्ञासुओं को तृप्त किया था । वाहवाही मिल रही थी।। 65 ।। श्रीमंत केशवराव जी बुट्टी आदि बहुतों के प्रकरण की भविष्य वाणी की। सभी को तुरन्त संतुष्टि प्राप्त हुई।। 66 ।। माधवराव के कनिष्ठ भ्राता बापा जी ने अपना भविष्य पूछा । ज्योतिषी ने भविष्य वाणी की कि देवी की उन पर अप्रसन्नता है।। 67 ।। बोले, "मां ने मनौती मानी थी। उसका देहान्त का समय आया तो तुम्हारे ज्येष्ठ बंधु को पूरा करने की आज्ञा दी थी।। 68 ।। उन्होंने आज तक पूरी नहीं की। देवी भारी संकट दे रही हैं।" माधवराव के घर आने पर बापा जी ने सारी कथा कही।। 69 ।। माधवराव ने संकेत समझ लिया । स्वर्णकार को बुलाकर दो चांदी के स्तन बनवाए। इन्हें लेकर मस्जिद गए ।। 70 ।। बाबा को साष्टांग दण्डवत करके फिर दोनों स्तन बाबा के समक्ष रख कर बोले, "वह मनौती पूरी कराओ, लो अभी ।। 71 ।। तुम्हीं मेरी सप्तश्रृंगी हो । तुम्ही हमारे लिए देवी हो । यह वचन प्रदत्त भेंट लीजिए। लेकर शान्त रहिए ।। 72 ।। बाबा प्रत्युत्तर में बोले, "सप्तश्रृंगी मंदिर जाकर, ये सुन्दर स्तन ले जाकर, उनका उन्हीं के चरणों में अपने हाथों से अर्पित करो" ।। 73 ।। बाबा का यह आग्रह होने पर माधवराव का मन की चाह वैसी हो गयी घर, छोड़ कर दर्शन के लिए जाने का संकल्प लिया

।। 74 ।। बाबा का दर्शन प्राप्त करके शुभ आशीर्वचन की प्रार्थना की। ऊदी प्रसाद ग्रहण करके निकलने की अनुज्ञा ली।। 75 ।। वह सप्तश्रृंगी पहुंचकर कुल उपाध्याय (पुरोहित) को ढूंढने लगे। सुदैव से काका जी का घर अनायास प्राप्त हो गया।। 76 ।। काका जी की उत्कंठा प्रबल थी, बाबा से शीघ्र भेंट हो तब ही माधवराव से भेंट । क्या यह सामान्य घटना है।। 77 ।। आप कौन, कहाँसे, पूछा। शिरडी से आये हैं, उनके आनन्द का पारावार क्या? दोनों में निकटता हुयी।। 78 ।। इस प्रकार वे दोनों प्रसन्नचित्त हुए । साईं लीला प्रत्येक टुकड़े में है। मनौती का कार्य पूर्ण होने पर पुरोहित शिरडी के लिए निकले।। 79 ।। माधवराव जैसा रास्ते का साथी उन्हें बिना कल्पना के मिल गया। उपाध्याय बुवा आनन्द से भर गये। मार्ग का लक्ष्य शिरडी की ओर था।। 80 ।। मनौती कार्य को शीघ्र गति से पूरा करके दोनों शिरडी को पहुंचे। आते ही साईं दर्शन के लिए निकले, परम प्रीति व उत्कंठा के साथ।। 81 ।। पहले जैसी मन की अनुरक्तता थी, वैसे ही पांवों के चलने में शीघ्रता थी। काका जी गोदावरी के तट पर पहुंचे। जहां से शिरडी सन्निकट है।। 82 ।। पुजारी ने बाबा के चरणों की वन्दना की सजल नयनों से स्नान कराते हुए । दर्शन सुख संपन्न होकर चित्त प्रसन्न हो गया।। 83 ।। देवी का दृष्टांत इसीलिए हुआ था । बाबा समर्थ को दृष्टि से देखते काका को यथार्थ सुख हुआ। उनका मनोरथ पूरा हो गया।। 84।। इस प्रकार काका जी सुख संपन्न हुए । दर्शन सेवन से चित्त प्रसन्न हो गया । कृपाघन की वर्षा से वास्तव में मन निश्चिंत हो गया ।। 85 ।। मन का चंचलपन समाप्त हो गया स्वयं उन्हें विस्मय हुआ। अपने आप से पूछे यह करनी (लीला) कितनी विलक्षण है।। 86 ।। न कुछ वचन बोले । न ही प्रश्न या समाधान किया । न ही आशीर्वचन दिया । केवल दर्शन सुखदाई हुआ।। 87 ।। मेरी चंचल चित्तवृत्ति । केवल दर्शन से निवृत्ति प्राप्त हो गयी, अलौकिक सुख संपन्नता प्राप्त हुई। इसका नाम है "महान दर्शन" ।। 88 ।। साईं चरणों में दृष्टि स्थिर हो गयी। उससे वाणी में मिठास पड़ गयी। कानों से बाबा की कथाएं सुनकर आनन्द अन्दर नहीं समा रहा था ।। 89।। उपाध्याय बुवा निजभाव से साईं समर्थ की शरण में गए, निज सुख प्राप्त किए । पूर्व की वृत्तियों को बिसरा दिए ।। 90 ।। इस प्रकार काका जी बारह दिन वहां शिरडी में रहे। सुस्थिर मन होकर सप्तश्रृंगी के पास वापस गए ।। 91 ।। स्वप्न के सही होने का समय से सम्बन्ध है। उषाकाल या प्रातःकाल में जो पड़ते हैं, वे ही सफल होते हैं इसके अतिरिक्त स्वप्न निर्फल होते हैं।। 92 ।। ऐसा सर्वत्र प्रसिद्ध है। किन्तु शिरडी के स्वप्नों की यह सिद्धि भक्त अबाधित अनुभव करते हैं वे कहीं और कभी पड़े।। 93 ।। इस अर्थ की एक छोटी कहानी है। श्रोताओं के लिए प्रस्तुत

करता हूं। चित्त को परम कौतुक अनुभव होगा। श्रवणोल्लासता में वृद्धि होगी।। 94।। एक दिन दूसरे प्रहर बाबा ने दीक्षित से कहा, "तांगा लेकर रहाटा जाओ। खुशाल भाऊ को लेकर आओ ।।95।। "कितने दिन बीत गए । भेंट करने के लिए मन क्लान्त है। बोलना "बाबा ने तुम्हें भेट प्रीति के लिए बुलवाया है" ।। 96 ।। आज्ञा का अभिवंदन करके दीक्षित तांगा लेकर गए । खुशाल भाऊ से तत्क्षण भेंट हुई । आगमन का प्रयोजन निवेदित किया।। 97 ।। बाबा का समाचार सुनकर खुशाल भाऊ को अत्यधिक आश्चर्य हुआ । बोले, "नींद लेकर उठा हूं। नींद में मुझे यही आज्ञा हुई है। ।। 98 ।। अभी मैं दोपहर का भोजन करके बिस्तर पर आराम कर रहा था आंखों को नींद लगते क्षण ही बाबा ने स्वप्न में यही कहा" ।। 99 ।।बाबा बोले,"अभी शिरडी चलो।" मेरी भी इच्छा प्रबल हो गयी। क्या करता? घोड़े पास नहीं थे। लड़के को खबर करने के लिए भेजा ।। 100 ।। लड़का गांव के बाहर हुआ ही था कि आप का तांगा आ गया । दीक्षित विनोद से उनसे बोले, "इसीलिए मुझे आज्ञा हुई "।। 101 ।। अब आप स्वयं आते हैं, तो तांगा बाहर तैयार है। फिर वह दीक्षित के साथ आनंद से भरे शिरडी पहुंचे ।। 02 ।। तात्पर्य, खुशाल भाऊ से भेंट हुई, बाबा का मनोरथ पूरा हुआ । खुशाल भाऊ बाबा की यह लीला देखकर भावातिरेक से भर गए ।। 103 ।। एक बार एक पंजाबी ब्राह्मण, नाम था रामलाल, मुंबई के मध्य बसा था | बाबा ने इसे स्वप्न दिया।। 04 ।। दिशा, वायु, रवि, वरुण आदि देवताओं के अनुग्रह की सत्ता से बाह्य अन्तःकरण की विषय ग्राह्यता है। इसे जागृतावस्था कहते हैं।। 105 ।। जब सकल इन्द्रियगण विश्राम में हो, संस्कार प्रबोधक जागृत होता है, ग्राह्य-अग्राह्य रूप में स्फुरण होता है। ये स्वप्न के लक्षण हैं।। 106 ।। उनका स्वप्न तो विलक्षण था। बाबा का रूप लक्षण नहीं जानते थे। पहले कभी नहीं देखा था । बाबा बोले, "मेरे पास आ जाओ।" ।। 107 ।। आकृति से महंत दिखते थे। परन्तु मालूम नहीं था कि वे कहां रहते हैं। रामलाल जागृत होकर विचारों से आकुलित हो गए ।। 108 ।। इस प्रकार जाने का मन तो था किन्तु ठाव-ठिकाना पता नहीं था। किन्तु जिसने उन्हें दर्शन के लिए बुलाया है, उसकी रचना वही जाने ।। 109 ।। फिर उसी दिन दोपहर में सहज ही रास्ते पर घूमते हुए दुकान में एक छवि (चित्र) देखकर अन्तर्मन चमक (चकित हो) गया ।। 110 ।। स्वप्न में जो रूप उनका देखा था, वही है, रामलाल ने अनुभव किया । तत्काल दुकानदार से प्रश्न करने लगे।। 111 ।। ध्यान पूर्वक छवि को देखा । यह कौन, कहां के हैं ये । यह जानकर कि यह साई शिरडी में हैं रामलाल का मन शान्त हो गया ।। 112 ।। बाद में और पता किया। रामलाल शिरडी गए । बाबा के निर्वाणकाल पर्यंत उन्हीं के पास रहे।। 113 ।।

अपने भक्तों का हेतु पूरा करना, उन्हें दर्शनार्थ बुलाना, स्वार्थ व परमार्थ पूरा करना, यही मनोरथ था बाबा का ।। 114 ।। अन्यथा वे अवाप्तकाम थे। स्वयं सर्वदा निष्काम थे। निःस्वार्थ, निरहंकार, अनासक्त। भक्त के काम के लिए अवतार ।। 115 ।। क्रोध जिसे छू न गया हो, द्वेष जिनमें आश्रय न पावे, पेट भरने की जिन्हें चिन्ता न हो, उसे खरा साधु समझो।। 116 ।। सब के लिए निःस्वार्थ प्रेम ही जिसका परम पुरुषार्थ हो, पल भर वाणी को व्यर्थ, धर्म विषय के अतिरिक्त खर्च न करे।। 117 ।। सारांश, मेरा हाथ धर कर यह निजचरित लिखाने में यही इंगित होता है यहां कि भक्त उनके स्मरण में रत रहें।। 118 ।। इसलिए हेमाड अति विनीत होकर नित्य श्रोताओं से विनती करता है श्रद्धाभक्ति समन्वित होकर साईं सच्चरित सुनें ।। 119 ।। इससे मन की शान्ति होगी। उत्पन्न हुई व्यसन मग्नता शान्त हो जायेगी। भवनिर्मुक्ति दायक भक्ति साईं चरणों में स्थिर हो जायेगी ।। 120 ।। इस प्रकार अब अगले अध्याय में संन्यासी विजयानंद की कथा है, जिसे मानसरोवर जाते अपने पदों में निर्मुक्तता दे दी।। 121 ।। भक्त बालाराम मानकर को भी उसी प्रकार विश्राम दिया। नूलकर व मेघा की इच्छाएं भी श्री साईंनाथ ने बहुतायत में पूरी की ।। 122 ।। व्याघ्र के समान क्रूर प्राणी को चरणों में स्थान दिया। ऐसी अगाध साईं की लीला ।। श्रवण करना दुर्लभ महोत्सव है ।। 123 ।। स्वस्ति श्रीसंत सज्जन प्रेरित भक्त हेमात पंत विरचित श्री साईं समर्थ सच्चरित "नवसादिक कथाकथन" नामक तीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथर्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय इकत्तीसवां (दर्शन महिमा)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‍गुरु साईंनाथ को नमन।।

गत अध्याय के कथन में सप्तश्रृंगी के भक्त का आख्यान हुआ । माधवराव की प्रतिज्ञा साईं ने पूर्ण करायी।। 1 ।। कैसे स्वप्न में दर्शन दिया, खुशाल सेठ और रामलाल को। कैसे आनिर्वाण रामलाल को अपने आश्रय में रखा ।। 2 ।। उससे भी अपूर्व है यह वर्तमान कथा । श्रोता अति सादरता से सुनें । मानस सरोवर को जाते हुए एक संन्यासी ने कैसे निजमुक्तता प्राप्त किया ।। 3 ।। कैसे बालकराम मानकर, तात्या साहेब नूलकर और मेघा की सम्पूर्ण इच्छा पूरी की । ये तो नर थे पर एक क्रूर बाघ को अपने पदों में जगह दी।। 4 ।। कथा अति विस्तृत है। ग्रंथ विस्तार बहुत होगा । संक्षिप्त सारभूत कहता हूं, निजहित साधक होगी।। 5 ।। अंत काल में जैसी मति वैसी ही गति प्राण को प्राप्त होती है। कीड़े भयवश भ्रमर बनते हैं। प्रीतिवश हरिण बन गए जड़भरत ।। 6 ।। अंत काल में जो जो ध्यान होता है उसी उसी रूप में पुनर्जन्म होता है। भगवद् पदों में लीन हो जाने वाला जन्म विहीन हो जाता है।। 7 ।। इसीलिए जो नाम स्मरण करने का अभ्यास करते हैं विपरीत समय आने पर विभ्रान्त नहीं होते, अंत में नाम स्मरण रहता है।। 8 ।। जीवन भर जागृत रहे अंतकाल में यदि झपकी ले लें, तो जिसके लिए सत्संग किया उसका नतीजा व्यर्थ चला जाता है।। 9 ।। अतः जो सरल भक्त हैं वे अपना जीवन संत के हाथ सौंप देते हैं। क्योंकि वे गति-निर्गति जानते हैं। अंतकाल में वे एकमात्र साथी हैं।। 10 ।। इस अर्थ की एक मधुर कथा है। साईं के समक्ष घटना घटी। श्रोताओं को, ध्यान से सुनने पर, साईं की भक्त वत्सलता दिखेगी।। 11 ।। कहां मद्रास, कहां शिरडी । कहां मानस सरोवर की सीधी चढ़ाई। कैसे भक्त की घड़ी पूरी होने पर खींचकर चरणों के निकट लाते हैं।। 12 ।। एकबार एक मद्रासी संन्यासी, जिसका नाम विजयानंद था, मद्रास से मानस-सरोवर के लिए बहुत उल्हास से निकला।। 13 ।। एक जापानी प्रवासी का मानस-सरोवर का मानचित्र देखकर दर्शन की उत्कट इच्छा हुई ।। 14 ।। मार्ग में शिरडी गांव का पड़ाव | बाबा का प्रभाव कानों में पड़ा । दर्शन की इच्छा धारण करके खोजते हुए स्थान पर आए ।। 15 ।। साईं महाराज महान संत, जगविख्यात कीर्तिमंत हैं,

सुनकर दर्शन करने की इच्छा धारण की । मार्ग में जाते-जाते रुक गए ।। 16 ।। उस समय शिरडी में हरिद्वार के स्वामी सोमदेव जी थे। भक्त समाज में दोनों की सहज ही भेंट हो गयी।। 17 ।। फिर उनसे संन्यासी ने पूछा कि मानसरोवर कितनी दूर है? स्वामी बोले गंगोत्री से ऊपर पांच सौ मील पर वह है।। 18 ।। वहां बर्फ बहुत पड़ती है। पचास कोस (सौ मील) पर भाषा बदल जाती है। भूटान वासियों में शंका उत्पन्न होती है। परदेशियों को बहुत पीड़ा होती है।। 19 ।। स्वामी के मुख से समाचार सुनकर खिन्न वदन संन्यासी का मन दुःखी हो गया । वह चिंता निमग्न हो गए ।। 20 ।। साईं का दर्शन किया, चरणों में साष्टांग दण्टवत किया,चित्त सुप्रसन्न हो गया, आसन लगाकर बैठ गए ।। 21 ।। बाबा आक्रामक हो गए, फिर वे वहां की मण्डली से बोले," इस संन्यासी को यहां से भगाओ इसकी संगति निरर्थक है" ।। 22 ।। संन्यासी वैसे भी नये थे। बाबा का स्वभाव नहीं जानते थे। यद्यपि मन खीझ उठा, सेवा (कार्य) देखते हुए बैठे रहे।। 23 ।। प्रातःकाल का दरबार था । मस्जिद में बहुत लोग थे। भक्तोपचार व पूजा सामग्री देखकर शांत बैठे रहे।। 24।। कोई बाबा का पांव धोकर अंगूठे का तीर्थ (धोने से निकला हुआ जल) चम्मच में लेकर शुद्ध सद्भाव से सेवन (पान) करता, कोई उसे नेत्र से स्पर्श कराता ।। 25 ।। कोई उन्हें गंध (चंदन का लेप) लगा रहा था। कोई अत्तर सुगंध मल रहा था । ब्राह्मण-शूद्र आदि जातियों का बंधन नहीं था। जाति संबंध को विसार दिए थे।। 26 ।। बाबा यद्यपि क्रोध से भर गए थे, संन्यासी अनुराग से ओतप्रोत थे। उनके पांव पीछे नहीं हटे। बैठने की जगह से उठे नहीं।। 27 ।। शिरडी में दो दिवस रहे इसी मध्य उनका पत्र आया। गांव में माता अति अस्वस्थ हैं। इससे वे उदास हो गए ।। 28 ।। माता से भेंट करने के लिए मन में आया कि स्वदेश वापस जावें। किंतु बाबा की आज्ञा प्राप्त किए बिना वहां से पैर बाहर नहीं निकाल सकते थे।। 29 ।। फिर वह पत्र हाथ में लेकर, संन्यासी मस्जिद गए । बाबा से विनती करने लगे। माता की स्थिति निवेदित की।। 30 ।। महाराज साईं समर्थ, मन में माता से भेंट करने की उत्सुकता है। प्रसन्नचित होकर आज्ञा दीजिए | मुझ मार्गस्थ (यात्री) पर कृपा कीजिए ।। 31 ।। दौड़कर बाबा के चरणों में पड़ गए | क्या, कृपा करके, आज्ञा होगी? माता प्राण कंठ में लिए जमीन पर बिस्तर पर पड़ी होंगी।। 32 ।। मेरी वाट देख रही होंगी। मुझे दृष्टि भेंट की अनुमति दीजिए। उसे कष्ट सहय हो जायेगा। सुख से अंत होगा ।। 33 ।। साईं समर्थ अन्तर्ज्ञानी थे। उसकी भी आयु की अवधि सरलता से जानकर उससे क्या बोले ध्यान देकर उसे सुनें ।। 34 **।। "माता से इतना लगाव था तो यह वेष क्यों स्वीकार किया। इस वेषधारी को यह ममत्व शोभा नहीं देता है। भगवा**

को कलंकित किया है ।। 35। जाकर बैठो, तुम उदास मत होवो | कुछ दिन व्यतीत होने दो फिर पुनः विचार करते हैं। अपने चित्त में धैर्य धारण करो।। 36 ।। वाडे में बहुत चोर हैं । दरवाजा बंद करके होशियार रहना । सर्वस्व छीन लेंगे। क्रूर आक्रमण करेंगे ।। 37 ।। वैभव कभी भी शाश्वत नहीं है। यह शरीर तो सर्वदा अनित्य है। मृत्यु को नित्य निकट जानते हुए धर्म को जागृत करते रहो' ।। 38 ।। देह, स्त्री, पुत्र आदि से संबंधित जो मैं व मेरा का इस संसार में अभिमान है उसी का परिणाम है तापत्रय- आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक । इन्हीं को सांसारिक अनर्थ कहते हैं ।। 39 ।। दूसरा अनर्थ पारलौकिक है। लोग जिस परलोक की इच्छा रखते हैं वह मोक्ष की प्राप्ति में बाधा है। सर्वदा पतनोन्मुख रहता है (परलोक में रहते हुए पृथ्वी लोक पर वापसी का भय बना रहता है) ।। 40 ।। वहां (परलोक में) पुण्य की बढ़ोत्तरी नहीं होती है उस स्थान की प्राप्ति निर्भय नहीं है। पुण्य क्षीण होने पर पतन का भय वहां भी निःसंशय रहता है ।। 41 ।। यद्यपि ये ऐहिक व पारलौकिक दोनों ही भोग अनर्थ वाहक हैं उनका पूर्णरूपेण से त्याग आनंद का आदि-उत्पादक है।। 42 ।। संसार से परेशान होकर जो हरि चरणों में स्थिरता से समाहित हो जाते हैं उनके बन्धन के बटन ख़ुल जाते हैं। अविद्या की पकड ढीली हो जाती है।। 43।। हरिभजन व स्मरण की घड़ी पाप ताप व दैन्य को भगाती है। ध्यान करने पर (हरि) बहुत प्रेम से आते हैं संकट को दूर कर देते हैं ।। 44 ।। तुम्हारे पूर्व के पुण्य गहन हैं इसी कारण इस स्थान पर आकर खड़े हो। अब मेरी बात पर ध्यान दो। जीवन की सिद्धि प्राप्त करो ।। 45 ।। कल से भागवत का वास्तविक परिशीलन करो। तीन सप्ताह इस ग्रंथ का कायावाचामने परिशीलन करो ।। 46 ।। इच्छा रहित होकर इस ग्रंथ का श्रवण करो अथवा मनोभाव से वाचन करो, निदिध्यासन (मनन, चिंतन) में तत्पर होकर ।। 47 ।। भगवान प्रसन्न होंगे, सर्व दु:खों का अंत करेंगे, माया मोह शांत होगा, अत्यन्त सुख लाभ होगा ।। 48 ।।शुद्ध होकर हरिचरणों में मन लगाकर यह व्रत पूर्ण सम्पादित करो, मोह निर्मुक्त हो जाओगे।। 49।।" अपने शरीर का संकट निकट आता देख बाबा ने भी यही उपाय योजित किया। 'राम विजय' पढ़वाया जिससे मृत्युंजय संतुष्ट होते हैं।। 50 ।। दूसरे दिन प्रातःकाल मुखमार्जन व स्नान पूरा करके, बाबा को पुष्पांजलि अर्पित करके चरणधूल की वंदना की।। 51 ।। बगल में भागवत दबा कर, पाठ करने के लिए एकांत देखा । गांव में लेंडी शांत स्थान उन्हें उचित (पसंद) लगा।। 52 ।। आसन लगाकर बैठ गए | पारायण प्रारम्भ किया । वे संन्यासी भगवत्परायण थे दो सप्ताह पूरा किया।। 53 ।। तीसरा सप्ताह प्रारंभ करते ही एकाएक अस्वस्थता अनुभव किया ।

अशक्तता बढ़ने लगी। वैसे ही अपूर्ण छोड़ दिया ।। 54 ।। वाड़े में वापस आये। दो दिन कष्ट में व्यतीत किए तीसरा दिन उदित होते ही बुवा ने नयन बंद कर लिए ।। 55 ।। अपना शरीर फकीर बाबा की जांघ पर रखकर संन्यासी वहीं स्थिर हो गए, मुक्त शरीर, विदेही।। 56 ।। संन्यासी के देहावसान को बाबा से निवेदित किया गया। उनकी आज्ञा हुई "शरीर को दिन भर रखे रहें। ।। 57 ।। इस अवधि के मध्य कुछ करना नहीं" | होगा इनका पुनर्जीवन, लोगो ने बहुत आशा बांधकर शरीर की रक्षा की ।। 58 ।। एक बार प्राण निकल जाने पर यह क्या वापस आता ? किन्तु बाबा के शब्द सत्य होते हैं। उस शरीर का जतन किया गया ।। 59 ।। परिणामस्वरूप फल प्राप्त हुआ । लावारिस मृत शरीर की रक्षा की गयी। पुलिस का संशय दूर हो गया। जिसकी मृत्यु हो गयी उसे जीवन कैसे ।। 60 ।। यह क्या बाबा नहीं जानते थे कि कैसे मृतक को उठाया जाये? उद्देश्य था कि मृत शरीर को जमीन में न गाड़ा जावे, उचित जांच पड़ताल के बिना।। 61 ।। लावारिस (वस्तु) राजा (सरकार) का धन होता है, मृत्यु की जांच होती है। मृत शरीर को पहले ही न दफना दिया जाये, इसलिए बाबा ने बहाना किया था।। 62 ।। इसके बाद में यह सब हुआ । यथा विधि उस मृत शरीर का संस्कार किया गया । फिर उचित स्थान पर वह (संस्कार) पूरा किया गया। संत का कार्य पूर्ण हुआ।। 63 ।। ऐसी ही एक और कथा है। अब श्रोताओं के लिए कहता हूं। क्षणभर सादरचित्त से सुनें। साईं की व्यापकता दिखेगी।। 64 ।। एक भक्त था 'बालकराम' जिसका उपनाम था मानकर । बाबा का परम भक्त था गृहस्थाश्रम में था।। 65 ।। पर बाद में उसकी पत्नी के पंचतत्त्व में विलीन होने पर गृहस्थाश्रम के कार्य में अवरोध हो गया | मन में स्थिरता आ गयी। उसका परमैश्वर्य बढ़ गया।। 66 ।। पूर्वार्जित की फल प्राप्ति हुई। साईं चरणों की संगति प्राप्त हुई। उनमें निश्चल भक्ति स्थिर हुई। संसार से पूर्ण विरक्ति हो गयी।। 67 ।। सांसारिक आशा व इच्छा का बंधन, लड़के लड़की का यह सब बंधन, तोड़कर भाग्यवान मानकर संसार से विरक्त हो गया ।। 68 ।। परमार्थद्वार की रुकावट , पर सेवा की मोहनमाला, अपने पुत्र के गले में डालकर सांसारिकता पर ताला लगा दिया ।। 69।। यह भी एक प्रकार का संन्यास है। संन्यास के प्रकार बहुत हैं किन्तु जहां ज्ञानगर्भन्यास (ब्रह्मज्ञान का खजाना) नहीं उत्पन्न होता है, वहां प्रत्येक कदम पर कठिनाई है।। 70 ।। साईं, उदारमूर्ति, के मन में, मानकर की अनन्य भक्ति के कारण कृपा करने को आया । उनकी विरक्ति को दृढ़ किया ।। 71 ।। अनंत जन्मों का संस्कार पटल | चंचल मन अचल नहीं रह रहा था । मनोराज्य की प्रबल तरंग | वैराग्य स्थिर नहीं हो रहा था।। 72 ।। **"शिरडी ही मेरा स्थान नहीं है, मैं तो देश**

काल से अविच्छिन्न हूं" यह सप्रमाण प्रदर्शित करने के लिए मानकर को आज्ञा दी।। 73 ।। **"अब शिरडी में बहुत रह लिए। यह बारह रुपये खर्च के लिए लो। तप करने के लिए मच्छिंदरगढ़ जाओ। सुख सुनिश्चित करने मे लिए वहीं रहो।। 74 ।।**" साईं के ऐसे वचन सुनकर आज्ञा को शिरोधार्य करके साष्टांग दण्डवत करके चरणों का अभिवंदन किया ।। 5 ।। अति विनीत होकर बालाराम साईं से बोले, "जहां आपका दर्शन नहीं वहां मैं क्या करूंगा ।। 76 ।।यहां नित्य चरणों के दर्शन होते हैं। चरणतीर्थ का सेवन होता है। सहज ही दिन रात चिंतन होता है वहां मैं अकिंचन अकेला रहूंगा ।। 77 ।। बाबा, आपके बिना वहां मेरा क्या स्वहित है, यह समझने में, मैं समर्थ नहीं हूं । मुझे किस लिए उस स्थान पर भेज रहे हैं" ।। 78 ।। किन्त एक भक्त को अपने गुरु के वचन के प्रति अल्प भी विकल्प (सदेह) नहीं धारण करना चाहिए। तत्काल मन में यह संकल्प उठा और मानकर शंका विहीन हो गए ।। 79 ।। बोले, "बाबा क्षमा कीजिए । मेरे विचार क्षुद्रबुद्धि के हैं। शंका हुई उसके लिए मैं लज्जित हूं। यह शंका मुझे शोभा नहीं देती ।। 80 ।। मैं तो आपका आज्ञा पालक हूँ । नाम स्मरण में तत्पर रहते हुए केवल आपकी सामर्थ्य पर **गढ़** में रहूँगा।। 81 ।। वहीं आप का ध्यान करूंगा। आपकी कृपामूर्ति का स्मरण, आपके चरणों का चिंतन यही निरंतर मेरा तप है ।। 82 ।। मैं आप की अनन्य शरण में हूं। मेरी गमनागमन स्थिति आप हाथों में सौंप दिया है। क्यों इस चिंता का विचार करूँ ।। 83।। तुम्हारी आज्ञा की अपनी शक्ति वहां भी मन को शांति देगी। ऐसी तुम्हारी सामर्थ्य है, मैं व्यर्थ की चिंता वहन कर रहा हूं" ।। 84।। साईं समर्थ ब्रह्म सनातन हैं। उनके वचन ब्रह्मलिखित हैं। जो विश्वास स्थापित करके देखेगा, उसे पूर्ण अनुभव प्राप्त होगा ।। 85 ।। फिर बाबा उससे बोले, **"मन को सावधान करके तुम मेरे वचन को सुनो। विकल्प में पड़ने का प्रयास न करो ।। 86 ।। तुरन्त मच्छिंदरगढ़ जाओ। प्रतिदिन तीन बार तप करो। कुछ समय व्यतीत हो जाने पर स्वानंद से भर जाओगे"।। 87** ।। ऐसा आश्वासन सुनकर मानकर मौन हो गए "मैं दीन इसके बाद क्या बोलूं।" गढ़ को अभिगमन आरंभ किया ।। 88 ।। पुनः साईं चरणों को स्पर्श किया। ऊदी-प्रसाद-आशीर्वचन प्राप्त किया, फिर मानकर स्वस्थमन मच्छिंदर भुवन को निकल पड़े ।। 89 ।। उस रम्य स्थान पर पहुंच कर, जहां शुद्ध निर्मल जीवन था, मंद मंद पवन बह रही थी, संतुष्टि प्राप्त की ।। 90 ।। साई द्वारा इस प्रकार प्रयुक्त मानकर **गढ़** में बिना साईं के रहे। यथोक्त तप का आचरण किया । यथा निर्देश वहां रहे।। 91 ।। बाबा का चमत्कार देखो । मानकर तप निमग्न थे। गढ़ में प्रत्यक्ष दर्शन दिया। उन्हें साक्षात्कार हुआ।। 92 ।। समाधिस्थ होने पर

दर्शन होगा इस अर्थ में कोई आश्चर्य नहीं है। पर आसन स्थित उत्थानावस्था में श्रीसमर्थ को देखा ।। 93 ।। केवल दृष्टि से नहीं देखा। बालकराम ने समक्ष पूछा, "बाबा मुझे क्यों यहां भेजा?" क्या उत्तर दिया ।। 94।। "शिरडी में रहते हुए अनेक कल्पना होती थी। नाना प्रकार की तरंग उठने लगी थीं। इसलिए तुम्हारे चंचल मन को गढ़ जाने के लिए तैनात किया गया।" ।। 95 ।। "पृथ्वी जल आदि के मिश्रण से यह घर (शरीर) रच-रचकर बना है। साढ़े तीन हाथ के इस शरीर तथा शिरडी के बाहर तुम्हारे लिए मैं नहीं था।। 96 ।। अब जो यहां है वही वहाँ है क्या? स्वस्थ चित्त से देख लो। वहां से जो मैने तुझे भेजा है वह इसी निमित्त था, यह तू जान ।।97।। इस प्रकार, बाद में, यह मानकर निर्धारित समय व्यतीत हो जाने पर अपने मुकाम पर आ गए, उस मच्छिंदरगढ़ को छोड़कर ।। 98 ।। बांद्रा ग्राम उनके रहने का स्थान था वहां जाने का मन हुआ । पुणे से दादर तक अग्निरथ से जाने का कार्यक्रम बनाया।। 99।। पुणे के स्टेशन तक गए । टिकट लेने का अवसर आने पर खिड़की के पास आने पर, तब, एक चमत्कार घटित हुआ ।। 100 ।। कटि प्रदेश में एक लंगोटी, कंधे पर कम्बल, कुणवी वेष में ऐसा एक अपरिचित प्रवासी खिड़की के पास दिखा ।। 101 ।। दादर का टिकट लेकर कुणवी पीछे मुड़ा सीधे बालकराम से देखा देखी होते ही निकट आया ।। 102 ।। बोला, "तुम कहां जा रहे हो । बालकराम के बोलने पर " दादर को " टिकट देकर बोला "इसे अब तुम ले लो ।। 103 ।। मुझे वहां जाना था किन्तु यहां महत्वपूर्ण कार्य का कर्तव्य स्मरण हो आया, इसलिए नहीं जा पा रहा हूं"।। 1 04 ।। गांठ का दाम खर्च करने पर टिकट मिलना कठिन काम । वही बिना श्रम के प्राप्त हो गया । मानकर को परम संतोष हुआ ।। 105 ।। तत्पश्चात वे मोल चुकाने के लिए जेब से पैसा जब काढा तब वह कुणवी भीड़ में घुसकर कहां खिसक गया, पता नहीं? ।। 106 ।। उस कुणवी को वहां ढूंढने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु वह सब निष्फल गया। आकर अग्निरथ खड़ी हो गयी ।। 107 ।। पावों में चप्पल का जोड़ा नहीं, एक फटा-पुराना चिथड़ा सिर पर बांधे हुए, कंधे पर कम्बल, लंगोटी पहने कुणवी भाई कौन था ।। 108 ।। भाड़ा थोड़ा मोड़ा नहीं था। उसे अपने पल्लू के पैसे से दिया । क्यों मुझ पर आभार की उलझन । यह उलझन की स्थिति स्पष्ट नहीं हो रही है।। 109।। अन्तःकरण से उदार और निरपेक्ष ऐसा देखने में यह कौन कुणवी था? यह अंत तक अनिश्चित रह गया। मानकर उतावले बने रहे ।।110 ।। फिर वैसे ही आश्चर्य चकित, भेंट की इच्छा धारण किए हुए अग्निरथ के जगह से हिलने तक दरवाजे पर तटस्थ खड़े रहे।। 111 ।। बाद में जब गाड़ी चल दी भेंट की समूल आशा समाप्त हुई जानकर गाड़ी के दरवाजे

की छड़ पकड़कर गाड़ी में कूद गए ।। 112 ।। गढ़ में प्रत्यक्ष सम्पर्क हुआ था वैसे ही यहां यह निराला प्राकट्य । कुणवी की विचित्र वेशभूषा देखकर मानकर को व्याकुलता होने लगी।। 113 ।। इस प्रकार फिर ये सद्भक्त साईंचरणों में पूर्ण अनुरक्त हो गए | भक्ति संयुक्त दृढ़ श्रद्धा के साथ शिरडी में कृतार्थ हुए ।। 114 ।। साईं पदपंकज की रज में संलग्न भक्त-भ्रमर बालकराम जी अपने ओठों से साईं नाम बुदबुदाते हुए शिरडी में रहे।। 115 ।। बाबा की अनुज्ञा लेकर मुक्ताराम को साथ लेकर कभी-कभी वे शिरडी छोड़कर बाहर भ्रमण करते।। 116 ।। किन्तु शिरडी केन्द्र स्थान था। समय-समय पर वापस आते । आखिर में परमपावन शिरडी में देह विसर्जन किया ।। 117 ।। पूर्व कर्म सुदैव के कारण वह धन्य थे जो साईं से संपर्क हुआ, उनके चरणों में लय होकर निर्भय मृत्यु को प्राप्त हुए ।। 118 ।। तात्या साहेब नूलकर धन्य थे। भक्त प्रवर मेघा धन्य थे। अन्त में शिरडी में भजन तत्पर रहते जिन्होंने कलेवर विसर्जित किया।। 119 ।। मेघा ने जब पंचतत्व को प्राप्त किया तब अन्त्येष्टि क्रिया के महत्व को तथा बाबा के भक्त सखापन को देखो । मेधा तो पहले ही कृतकृत्य हो गया था।। 120 ।। समस्त भक्तों को साथ लेकर ग्रामवासी श्मशान की यात्रा पर गए । बाबा भी श्मशान तक गए, मेघा पर पुष्प वर्षा की ।। 121 ।। मेघा की अन्त्येष्टि क्रिया हो जाने पर बाबा की आंखों में आंसू आ गए। मानव के समान मायानुवर्ती हो गए। मन शोकाकुल हो गया ।। 122।। बाबा ने प्रेम से अपने हाथों मृतदेह को पुष्प से आच्छादित किया, करुण स्वर से शोक करते हुए फिर वे वापस मुड़ गए ।। 123 ।। मानव का उद्धार करते ऐसे बहुत संत देखे। किन्तु साईं बाबा की महत्ता का कितना वर्णन किया जाये ।। 124 ।। व्याघ्र सरीखे क्रूर प्राणी, क्या वह मनुष्य की तरह ज्ञानी है? किन्तु वह भी उनके चरणों में लग गया। बाबा की करनी अघटित है।। 125 ।। इस अर्थ की एक रम्य कथा है। ध्यान देकर सीधे सुनें। फिर बाबा की व्यापकता व सब की समचित्तता का ज्ञान होगा।। 126 ।। शिरडी में एक बार चमत्कार हुआ । बाबा द्वारा स्वतः देहावसान करने के सात दिन पूर्व एक बैलगाड़ी आयी द्वार पर खड़ी हो गयी।। 127 ।। उस पर पीछे एक प्रचंड व्याघ्र, जिसके गले में लम्बी मोटी, जंजीर बंधी थी। भयंकर मुंह था।। 128 ।। उसे कुछ व्यथा थी । दरवेशी उपाय करते थक गए थे। उन्होंने मन से स्वीकारा कि संत दर्शन उत्तम उपाय है।। 129 ।। वे दरवेशी तीन थे। वह व्याघ्र उनकी जीविका का साधन था। गांव-गांव खेल करके अपना गुजारा करते ।। 130 ।। उस तरफ फिरते-फिरते बाबा की लीला कानों में पड़ी। इसलिए दर्शन करने चल दिए व्याघ्र को लेकर उस जगह ।। 131 ।। "उनके चरण चिंतामणि है। आठो सिद्धियां साष्टांग प्रणत

करतीं, नव निधियां लुढ़कते हुए आतीं उनके चरणों का तीर्थ लेने ।। 132 ।। उनके चरणों में माथा रखकर व्याघ्र के लिए दुआ मांगते हैं। संतो के आशीर्वचन से सब का कल्याण होगा" ।। 1 33 ।। इस अर्थ के लिए वे दरवेशी व्याघ्र को, द्वार के निकट, उतारे | मोटी सांखल को मजबूती से पकड़ कर द्वार पर प्रतीक्षा करते रहे।। 134 ।। पहले से ही भयानक हिंसक व मस्त था, उस पर वह रोग ग्रस्त हो गया, उससे वह अत्यन्त बेचैन था। सभी कौतुक देखते रहे।। 135 ।। व्याघ्र की स्थिति बाबा के कानों में दरवेशियों ने पूर्णरूप से डाल दी। बाबा की पूर्व अनुमति लेकर द्वार पर वापस आ गए।।। 136 ।। जंजीर को दृढ़ता से कस लिया जिससे तोड़ कर भाग न जाये। फिर उसे संभालकर साईं के समक्ष लाए ।। 137 ।। साईं की तेज राशि देखकर व्याघ्र पावों के पास आकर नजाने क्यों मन में चौंक गया। अति आदर से अधोमुखी हो गया ।। 138 ।। देखो क्या चमत्कार है। परस्पर नजरानजर होते ही व्याघ्र सीढ़ी चढ़ते हुए प्रेमपूर्वक देखता रहा ।। 139 ।। पूंछ के गुच्छे को फुलाया तीन बार , धरती पर प्रहार किया साईंचरणों में शरीर रखकर निर्जीव निश्चेष्ट पड़ गया।। 140 ।। एक बार भयंकर गर्जना की। तत्काल वही पंचतत्व में विलीन हो गया । सकल जन विस्मयापन्न हो गए, व्याघ्र को शान्त हुआ देखकर ।। 141 ।। दरवेशी खिन्न हो गए, फिर प्रसन्न दिखने लगे कि रोग ग्रस्त मरणासन्न प्राणी को निर्वाण प्राप्त हो गया ।। 142 ।। साधुसंतो की दृष्टि के सम्मुख मृत्यु की बड़ी विशिष्टता है- कृमि हो, कीट हो या व्याघ्र । वह समग्र पाप से तर जाता है।। 143 ।। कुछ पूर्व जन्म का ऋण था ऋण चुका कर मुक्त हो गया । शरीर साईंचरणों में रख दिया। विधि की करनी अघटित है।। 144 ।। संत चरणों में सर रखकर जिस प्राणी का मरण आता है, तत्काल उसका उद्धार होता है। यही जन्म की कमाई है।। 145 ।। वास्तव में बिना बड़े भाग्य के संतों की दृष्टि के समक्ष क्या शरीर त्याग करेगा व उसका उद्धार होगा।। 146 ।। साधु की दृष्टि के सम्मुख देह छोड़ने का परमसुख विष पीते ही अमृत होने जैसा है। मरण का न हर्ष, न दुःख ।। 147 ।। दृष्टि के सामने संत चरण होते जिस प्राणी का मरण हो जाये ,उस देह का कृष्णार्पण धन्य है। उसका पुनर्जन्म नहीं होता है।। 148 ।। संत दृष्टि के सन्मुख जो देह त्यागते हैं, उन्हें मरने पर वैकुण्ठ सुख की प्राप्ति होती है, जिन्हें मृत्यु लोक का न भय होता है, न शोक होता है ।।149 ।। संत को देखते-देखते देह त्यागते हैं, उनकी पुनरावृत्ति नहीं होती है। उनके सभी पापों की निष्कृति हो जाती है। उद्धार गति प्राप्त होती है।। 150 ।। सिर से नख तक संतावलोकन करते-करते जो शरीर का विनाश होता है, क्या उसे मरण कहते हैं वास्तव में वह अपना उद्धार है।।

151 ।। पूर्वविधान को देखा जाए तो वो, पुण्यवान यद्यपि, विद्याभिमान का प्रदर्शन करते हरिभक्त का अपमान किया होगा ।। 152 ।। उसी के शाप से यह क्रूर योनि प्राप्त हुई, उसी शाप योग से चरणों में आया। भक्तों की करनी अभिनव है।। 153 ।। ऐसा लगता है कि उस शाप के उपशमन से साईंदर्शन हुआ जिससे पाप नाम जल गया । बंधन टूट गया, ताप समाप्त हो गया । अपने आप उद्धार हो गया।। 154 ।। वास्तव में बिना पूर्व सौभाग्य के कैसे संत दृष्टि के समक्ष मरण । त्रिताप, त्रिपुटी व त्रिगुण का मर्दन हो गया। निर्गुण हो गया ।। 155 ।। ऐसे पूर्व कर्मानुबंध से क्रूर देह संबंध टूट गया। लोहे की श्रृंखला का बंधन टूट गया। यह एक ईश्वरी निर्बंध है ।। 156 ।। साधु-संतों के चरणों के अतिरिक्त अन्यत्र कहां उद्धारगति। वह व्याघ्र को प्राप्त होते ही दरवेशी प्रसन्नचित्त हो गए ।। 157 ।। व्याघ्र उनकी जीविका का साधन था। व्याघ्र उनके कुटुंब का पोषण था । उस व्याघ्र की मृत्यु आने पर दरवेशी खिन्न वदन हुए ।। 158 ।। दरवेशी महाराज से पूछते हैं, अब आगे कैसी गति हो? उसे कैसे दफनाया जावे? अपने हाथों से सद्गति दीजिए ।। 159 ।। महाराज बोले दुःख मत करो। उसका अंत यहीं होना था । वह बड़ा पुण्यवंत था अत्यन्त सुख पा गया ।। 160 ।। उसे तकिया से आगे वहां शंकर का मंदिर जहां है, ले जाकर नंदी के निकट दफना दो।। 161 ।। उसे वहां दफना दोगे तो उसे भी सद्गति प्राप्त होगी, ऋणनिर्मुक्ति, बंधमुक्ति तुम्हारे हाथों पायेगा।। 162 ।। गत जन्म का देनदार था ऋण चुकाने के लिए यह अवतार था। तुम्हारे बंधन में जो आज तक वास्तव में रहा ।। 163 ।। दरवेशी फिर उसे उठाकर मंदिर के पास ले गए । नंदी के पीछे के हिस्से में उसे नाले में दफना दिया ।। 164।। क्या वह चमत्कार हुआ था । व्याघ्र तत्काल कैसे शांत हो गया था। इस प्रकार घटित हुआ विस्मृत क्यों हो जाता ।। 165 ।। किन्तु इसके सातवें दिन बाबा ने अपना शरीर धरती पर छोड़ दिया। इसी कारण बार-बार मन में स्मृति उठती है।। 166 ।। अगला अध्याय इससे भी अच्छा है। बाबा ने अपने गुरु की पसंद का वर्णन किया है। गोखले बाई की प्रतिज्ञा, अनुग्रह करके पूरी की।। 167 ।। हेमाड साईंनाथ की शरण में है। गुरु ने हाथों से कुएं में उलटे टांग कर बाबा पर कैसी कृपा संपादन किया, उसे श्रवण करें।। 168 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित में 'दर्शन महिमा' नामक इकत्तीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय बत्तीसवां (गुरुमहिमा वर्णन) ।।

।। श्री गणेश को नमन।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथ को नमन।।

अब पूर्व अध्याय में किया गया कथन। विजयानंद ने निर्वाण प्राप्त किया । बालकराम भी साईं पदों के निकट स्वानंद में लीन हो गए ।। 1 ।। वैसे ही तात्या साहेब नूलकर, निःसीम भक्त प्रवर मेघा, दोनों ने शरीर समर्पित कर दिए, साईं की दृष्टि के समक्ष ।। 2 ।। इससे भी बड़ा चमत्कार व्याघ्र सरीखा क्रूर प्राणी के निधन का प्रकार श्रोताओं ने सविस्तार सुना है।। 3 ।। अब इस अध्याय में स्वयं बाबा के मुख से वर्णित ऐसा सुन्दर वृतांत कथित है। श्रोताओं के लिए अति हितकारी है।। 4 ।। एक बार बाबा वन में थे अकल्पित गुरुदर्शन हो गया। गुरु की कैसी अद्‌भुत करनी इसे ध्यान देकर सुनें ।। 5 ।। इस कथा की परम नवलाई मैं पामर क्या, कितना वर्णन कर सकता हूं, भक्ति श्रद्धामुक्ति दायक ,जिसे साईं ने स्वमुख से कहा है।। 6 ।। वैसे ही एक बाई का मन हुआ बाबा का दर्शन करने का । तीन दिन वहां रहीं। बिना कुछ खाए व्रत रहीं।। 7 ।। कैसे यह अवसर आया, कैसे निश्चय भंग कर दिया, कैसे पूरन-पोलिस स्वादिष्ट व सुंदर रंग की तैयार करवायी उनके हाथ से।। 8 ।। पोलिस कवल तैयार ही नहीं करवाया, यथेच्छ खिलाया भी। पर कार्यार्थ देह को थकाना, सार्थक करना श्रेयस्कर है।। 9 ।। उसमें परम कल्याण है, उपासना से अधिक गुण हैं। कैसे उनके मन में बैठा दिया कि कभी भी विस्मरण नहीं हुआ।। 10 ।। वैसे ही जिन्हें परमार्थ की लालसा है, कैसे दृढ़ अभ्यास करना चाहिए | कैसे कठिन साहस नित्य करके उद्‌देश्य को सिद्ध करना चाहिए ।। 11 ।। इस अर्थ की कहानियों का क्रम है अमृत से भी परम मधुर, श्रोताओं में भक्ति उत्पन्न करने वाली। दुःखों का निवारण होगा।। 12 ।। अब यहां से मधुर कथा होगी। श्रवणार्थियों की लालसा पूरी होगी। वक्ता व श्रोता को स्वानंद प्राप्त होगा। श्रवण करने वालों की अभिलाषा पूरी होगी।। 13 ।। प्रेमभरित अलौकिक कथानक साईं बोलेंगे व मैं मूर्ख पामर लिखते-लिखते पद-पद पर कौतुक देखूंगा ।। 14 ।। जैसे गंगा दर्शन से पाप अथवा चन्द्रमा दर्शन से ताप (कष्ट) वैसे ही साईं के मुख का वचन पाप संताप हारक है।। 15 ।। अब श्रोताजन श्रवण के लिए अपना मन तैयार कर लें, निज गुरु दर्शन कारक महाराज साईं मुखके वचन ।। 16 ।। यद्‌यपि वेद-वेदांग का अध्ययन कर लें, श्रुतिशास्त्र का पारायण हो,

गुरु की कृपा के बिना ज्ञान नहीं होता, अन्य (प्रयास) केवल श्रमकारक है।। 1 7।। आदि अव्यक्त से स्थूल तक यह संसार वृक्ष अति विस्तृत है। शोकाकुलित जन्म मरण दृष्टिजात है। नाशवान है।। 18 ।। यह काटने योग्य नाशवान है ,इसीलिए इसे वृक्ष कहते हैं ।वह यह अव्यक्त से स्थूल तक संसार वृक्षोपमित है ।। 19 ।। यह नष्ट स्वरूप दृश्य जगत उर्ध्वमूल वृक्ष है, जिसकी शाखाओं का प्रसार अपार है। किसी को थोड़ा भी समझ नहीं पड़ता है ।। 20 ।। क्षण-क्षण यह फैलती रहती है , इसकी शाखाओं का प्रसार होता रहता है। दूर से यह कभी रमणीय लगता है। आलिंगन करने पर सभी अगों में कांटे लगते हैं।। 21 ।। केले के तने जैसा निःसार है। जैस मृगजल अथवा गंधर्व नगर तृष्णारूपी जल से बांधते हैं। ऐसा यह बाह्य रूप से आकर्षक तरुवर है।। 22 ।। अविद्या व कामकर्म (इच्छा जनित कर्म) से उत्पन्न हुआ है। इसकी उत्पत्ति अव्यक्त बीज से हुई है। स्वयं अभावात्मक होते हुए प्रतिक्षण अन्यथा स्वभाव का प्रतीत होता है।। 23 ।। इसका स्थान अनर्थात्मक है। अविद्या से इसका जन्म हुआ है। ईर्षणा व तृष्णा आदि रूपी पानी उसके चारों ओर एकत्र है ।। 24 ।। धन-धान्य पुत्र, पत्नी के परिवार में जो फैला हुआ है। देह बुद्धि के मूल में इसका आश्रम है। इसके व्यवहार का यही आधार है।। 25 ।। लिंग भेद से अनंत प्राणी ही इस वृक्ष के स्कंध है। कर्म वासना आदि इसकी नीचे लटकती निर्बंध प्रशाखाएं हैं। इन्हीं के संबंध से ये बढ़ती हैं।। 26 ।। श्रुति स्मृति के पत्रों से भरा हुआ, शब्द स्पर्श आदि प्रस्फुटित पल्लव है। यज्ञ,दान-क्रिया रूपी कुसुम से ढका हुआ | नर-मादा के रस से सराबोर ।। 27 ।। इसके फलों का अंत नहीं है। यह सभी के उपजीविका के स्रोत हैं। भूः भुवः आदि सकल लोक इसके बिना नहीं हैं ।। 28 ।। कहीं नृत्य, गीत, वादन, कहीं क्रीड़ा, हास्य, रूदन ऐसा यह सनातन अश्वत्थ (पीपल का पेड़) सर्वदा अधोवदन रहता है ।। 29 ।। शबल ब्रह्म से इसका आविर्भाव हुआ है। असंग रूपी शास्त्र से इसका अभाव होता है सद्भाव इसका शुद्ध मूलाधार है ज्योति इसका स्वभाव जानो ।। 30 ।। सब का आधार यह ब्रह्म सत्य है। यह जगत स्वप्नाकार मिथ्या है। जिसका न अन्त, न आदि है, न आधार है, इसके मध्य कैसे वास किया जाये ।। 31 ।। जिसके लिए विरक्त परिश्रम करते हैं, संत जिससे सदा अनुरक्त रहते हैं। जो मुमुक्षुओं को अपेक्षित है एवं साधको को अभीप्सित है ।। 32 ।। उसे तलाशने की जो इच्छा रखता हो संतो की शरण में जावे; फिर जो कहें उसे सुने, कुतर्क से समूल वर्जित रहें ।। 33 ।। मन को बांधकर असहाय कर दो, बुद्धि को औंधे मुंह कर दो (अहंकार विहीन कर दो) निपट निःसंग होकर सीधे गुरु चरणों को लक्ष्य करो ।। 34 ।। कुतर्क को झाड़ दो नहीं तो मार्ग में झगड़ा करेंगे। अभिमान को

पावों के नीचे रगड़ दो तब ही उस पार पहुंचोगे।। 35 ।। इस संदर्भ की एक मधुर कहानी, बाबा ने स्वयं कहा है, सुनें। गुरु वचन के अमृत का सेवन करके परम आनन्द प्राप्त होगा ।। 36 ।। **" एक बार हम चार लोग, पोथी पुस्तक पुराण बांच कर ब्रह्म निरूपण करने लगे, ज्ञान संपन्न होकर।" ।। 37 ।। ""उद्धरेदात्मनात्मानं' (अपने से अपना उद्धार करें) गीता का वचन लेकर एक ने ऐसा प्रवचन किया "परावलंबन सर्वथा अयुक्त है।" ।। 38 ।। अन्य ने उसका प्रत्युत्तर दिया "वही धन्य है जिसका मन स्वाधीन है"। संकल्प-विकल्प से शून्य होकर अपने बिना जग में कुछ नहीं है ।। 39।। सभी परिवर्तन शील अनित्य है एक निर्विकार नित्य है। अतः नित्य अनित्य का विचार निरन्तर करें "तीसरा बोला" ।। 40 ।। चौथा पुस्तकीय ज्ञान से सहमत नहीं था। विहित आचरण का आदर करता था । शरीर, वचन, पंचप्राण गुरुचरणों में समर्पण किया था ।। 41 ।। गुरु परमात्मा चर-अचर में अन्दर-बाहर भरा हुआ है ऐसा अपना विश्वास बनाने के लिए अपार निष्ठा आवश्यक है ।। 42 ।। अनागम के ज्ञाता केवल तार्किक, वाद-विवाद के लिए उन्मुख तथा परीक्षण करने वाले होते हैं उन्हें स्वप्न में भी सम्यक ज्ञान नहीं होता है। शुद्ध आस्थावादी होना चाहिए ।। 43 ।। इस प्रकार हम चार सुबुद्ध निकल पड़े कुछ शोध करने के लिए। वह शोध स्वबुद्धि से होना चाहिए स्वतन्त्र निश्चिन्त मानस से ।। 44 ।। ऐसी इच्छा तीनों के मन में थी। किन्तु वन में स्वच्छन्द विचरते हुए मार्ग में एक वनजारे से भेंट हो गयी। उसने हमसे प्रश्न किया ।। 45 ।। "प्रखर गर्मी पड़ रही है। किस लिए यात्रा कर रहे हैं और कहां तक जा रहे हैं?" उसका उत्तर दिया, "वन व वनांतर को ढूंढने।" ।। 46 ।। उस वनजारे ने हमसे पूछा, "तो किसका शोध कर रहे हैं?" हमने उत्तर में कहा, "जिसका अर्थ गुप्त है उसका खुलासा करना अच्छा नहीं है" ।। 47 ।। उनकी धांवाधांव (भाग दौड़) देखकर वनजारे का चित्त करुणा से भर गया, बोला, "वन दुर्गम है, इसे जाने बिना स्वेच्छा स्वभाव से स्वयं विचरण न करें ।। 48 ।। वियावान में भ्रमण के लिए साथ में मार्गदर्शक ले लें। भरी दोपहरी में ऐसा साहस करना किस अर्थ का ।। 49 ।। गुप्त अर्थ न बताओ, किन्तु बैठो, रोटी का टुकड़ा खाओ. फिर पानी पीओ तब जाओ, धैर्य रखो मन में" ।। 50 ।। यद्यपि इतनी करुणा से निवेदन किया, हम वैसे ही आगे चल पड़े, उसकी विनती को धिक्कारते हुए । किन्तु बाद में मार्ग में थक गए ।। 51 ।। "हम सभी बुद्धिमान हैं अपना मार्ग खोज लेंगे, मार्गदर्शक का क्या प्रयोजन" यह अभिमान हमारे अन्दर था ।। 5 2 ।। किन्तु वह जंगल अति विस्तीर्ण था। विशाल ऊंचे फैले हुए वृक्ष जहां सूर्य किरण न प्रवेश कर सकें वहां मार्ग पर आगे बढ़ना कैसे ।। 5 3 ।। दिशा भूल कर**

निष्फल इधर-उधर घूमते रहे। महाभाग्य से उसी स्थान पर पुनः आकर स्थिर हो गए ।। 54 ।। भाग्य ने जिस मार्ग से आए थे वहां ला दिया । पुनः पूर्व के वनजारे से भेंट हो गयी। बोला, "लगता है गलत मार्ग पकड़ लिये । चातुर्य बुद्धि को कम करती है"।। 55 ।। कार्य छोटा हो या बड़ा, मार्ग दिखाने वाली अंगुली आवश्यक है। खाली पेट शोध नहीं होता है। बुद्धि भी बहुत भटकती है ।। 56 ।। वास्तव में बिना ईश्वरी विधान के मार्ग में किसी से भेंट नहीं होती। अन्न को पीठ मत दो। न ही परोसी गयी थाली ढकेलो ।। 57 ।। रोटी का टुकड़ा कोई दे;"लो खाओ" | उसके बोले वचन को पूर्ण शुभ शकुन मानो । कार्य निर्विघ्नकारक होता है ।। 58 ।। अब अल्पाहार करिए । चित्त में किंचित धैर्य धारण करिए। किन्तु उन्हें यह सुविचार रुचिकर नहीं लगा । पुनः निराहार चल पड़े ।। 59 ।। कुछ शोध न होने तक अन्न सेवन नहीं करना है। ऐसा बोलकर फिर वे, देखो, दुराग्रह से बाधित हो गए ।। 60 ।। मुझे भूख लग रही थी। प्यास से कंठ सूख गए थे। वनजारे का भी प्रेम अलौकिक था। उसके प्रति मेरे मन में प्रशंसा थी ।। 61 ।। हम विद्वान बहुत पढ़े थे। दया माया कुछ नहीं थी। जूठे हाथ, धनी होने पर, कौआ कोई नहीं हांकता ।। 62 ।। यह तो अविद्वान अनधिकारी नीच वर्ण वनजारा जाना जाता, किन्तु अन्तःकरण में स्वाभाविक प्रेम से बोला, “भाजी रोटी खाओ" ।। 63 ।। ऐसे बिना लाभ के प्रेम जो करे वह ही परम सुबुद्ध है। मुझे लगा कि उसके प्रति सम्मान ही विद्या प्राप्त करने का अप्रतिम उपक्रम है ।। 64 ।। इसीलिए आदरपूर्वक, वनजारे द्वारा दिया गया एक चौथाई (रोटी का टुकड़ा) खाकर पानी मैंने पिया | क्या कौतुक हुआ।। 6 5 ।। गुरुराज अकल्पित आ गए। बोले वाद-विवाद किस लिए। फिर अभी तक घटित उन्हें बताया ।। 66 ।। क्या मेरे साथ आओगे ? तुरन्त शोध करके देता हूं। किन्तु मेरे वचन के अर्थ का जो सम्मान करेगा उसी का स्वार्थ फलित होगा ।। 67 ।। अन्यों ने नहीं माना। पर मैंने पूर्ण सम्मान के साथ माना । अन्य सब चले गए फिर मुझे गुरुराया ले गए ।। 68 ।। एक कुएं पर ले गए। दोनों पावों में डोर बांधी। ऊपर पांव नीचे सिर पानी के बराबर छोड़ दिया ।। 69 ।। पानी तक हाथ नहीं पहुंचता | पानी मुख में नहीं जाता ऐसे मुझे अलग रखते हुए गुरुराया ने कुएं में लटका कर छोड़ दिया ।। 70 ।। किनारे पर एक पेड़ था उसी से डोरी का दूसरा किनारा गुरुराया ने बांध कर वे निःशंक कहां चले गए, कोई नहीं जाना ।। 71 ।। लगभग चार से साढ़े चार घण्टे व्यतीत होने के बाद वे वापस आए । मुझे तुरन्त बाहर निकाला। पूछे, “क्या तुम अच्छे से हो।" ।। 72 ।। फिर मैंने प्रत्युत्तर दिया। “अत्यन्त आनन्द निर्भर था। जो अपार सुख भोगा मैं पामर उसका क्या वर्णन करूं" ।। 73

।। मेरे ये वचन सुनकर गुरुराया सुख संपन्न हो गए। अपना हाथ मेरे शरीर पर फेरा, अपने पास रहने के लिए स्वीकार कर लिया ।। 74 ।। यह बताते हुए प्रेम उमड़ रहा है। फिर गुरु मुझे पाठशाला ले गये। पक्षी जैसे बच्चों को पंख से चिपका कर रखती है, मेरे प्रति उसी रीति से करुणामय थे।। 75 ।। गुरु की शाला कितनी आकर्षक थी? पिता-माता के प्रति आसक्ति छूट गयी, मोह ममता की श्रृंखला टूट गयी। खेल-खेल में मुक्ति प्राप्त हो गयी।। 76 ।। अवांछित बंधन छूट गए। प्रवृत्ति प्रतिबंध-निरोध भंग हो गए । लगा कि मैं गुरु के गले से लग गया उन्हें आंखों में बसा लिया।। 77 ।। उनका प्रतिबिंब आंखों में न होने पर वे शुद्ध अंश का गोला हैं अथवा उनके बिना मैं अंधा रहूंगा। मेरे लिए ऐसी शाला थी।। 78 ।। ऐसी शाला में पांव पड़ने पर कौन दुर्भाग्यशाली वापस जाता | मेरा घर द्वार मां-बाप सब ही गुरु राया थे।। 79 ।। अन्य इन्द्रियों के साथ मन अपना स्थान छोड़कर एक नयनों में आकर बस गया ध्यान-अवधान के कारण ।। 80 ।। दृष्टि के ध्यान में एक गुरु हैं। अन्य सब गुरु समान हैं। गुरु के बिना दूसरा कुछ नहीं है इसका नाम है "अनन्य अवधान" ।। 81 ।। गुरु स्वरूप का ध्यान करते-करते बुद्धि मन काम करना बन्द कर देता है। इसलिए, निःशब्द मौन धारण करके, अन्ततः नमन करें।। 82 ।। ज्ञानार्थ गुरु नहीं करना चाहिए। सदुपदेश के नाम पर शून्य । दक्षिणा देकर धन विहीन हों। परिणाम में अनुताप मिलता है।। 83 ।। गुप्तज्ञान का ओछापन, खुलेपन के चिराग का दिखावा, जिनका पालन दंभ पिलाकर किया गया हो वह अंततः क्या देंगे।। 84 ।। बाह्यरूप से बहुत शुद्ध हो, हृदय से कोमल न हो, अनुभव में जो दृढ़ न हो, उसकी शाला व्यर्थ है।। 85 ।। जहां शब्द ज्ञान की बहुतायत है ब्रह्मज्ञान की अनुभूति नहीं है। गुरु स्वमुख से निज गरिमा का मान करता है; शिष्य का निजहित कैसे? ।। 86 ।। जिनके बोल से तीक्ष्ण अनुभूति न हो, साक्षी का मन आश्वस्त न हो, उसका गुरुत्व किस काम का? व्यर्थ की बक-बक प्रलाप है।। 87 ।। इस प्रकार ऐसी सेवा दी मुझे ज्ञान भण्डार दिखाया । मुझे शोध नहीं करना पड़ा, अर्थ के लिए थोड़ा भी प्रयास नहीं करना पड़ा ।। 88 ।। अर्थ स्वयं प्रकट हो गया, बिना प्रयास हाथ में आ गया। गुरु कृपा की ऐसी नवलाई शोध वहीं प्रचुर हो गया।। 89।। नीचे सिर ऊपर पैर, उल्टा कर जो गुरुराया ने टांगा था उसमें मुझे कैसे आनंद हुआ, गुरु मां ही जानने में समर्थ हैं।। 90 ।। संतों के घर के संकेत उल्टे होते हैं। यह अनुभव जन्य ज्ञान है। यहां निष्ठा ही एक प्रमाण है एक साधन गुरु कृपा है।। 91 ।। कर्मठ के लिए विधि व निषेध पन, ज्ञानी के लिए ज्ञान का अभिमान, योगी के लिए श्रम का दंभ है। विश्वास के बिना काम नहीं चलेगा।। 92 ।। पंडितों की आंखे गर्व से अंधी

होती हैं। अभिमान के प्रत्यक्ष पुतले होते हैं। ज्ञानी उन्हें देखकर भाग लेते हैं उनका संग नहीं करते ।। 93 || ज्ञानी बोलता है मेरे बिना दूसरा कौन देव है? मैं स्वयं ज्ञान संपन्न हूं मैं ही परिपूर्ण चिद्घन हूं ।। 94 ।। भक्त अपने स्वयं के भक्तिभाव के कारण ज्ञान की प्रौढ़ता का प्रदर्शन नहीं करता । तन मन धन से स्वामी में संलिप्त रहते हैं। सर्वस्व स्वामी को न्यवक्षावर करते हैं।। 95 ।। यह एक मेरी योग्यता है, यह मेरी बड़ी सामर्थ्य है, यह मेरे बुद्धि वैभव का प्रमाण है। वह इनके दंभ से फूलता नहीं है।। 96 ।। जो जो होता है वह देव की इच्छा से होता है। वही उतारता है वही चढ़ाता है। वही लड़ता है या लड़ाता है वही एक कर्ता व कराने वाला है।। 97 ।। कर्तृत्व को स्वामी के माथे डालकर स्वयं अति नम्रता स्वीकारता है। भक्त सदैव देवाधीन होता है स्वतन्त्रता उसकी नहीं होती है ।। 98 ।। इस प्रकार वे जो चार प्रबुद्ध थे कैसा शोध कर रहे थे यह अब तक अनिर्धारित रहा है उसका स्पष्टीकरण सुनें ।। 99 ।। वे सब कर्मठ वैदिक विद्वान थे विद्वता का घमंड परिणाम स्वरूप था । शब्द ज्ञान का ओछा प्रदर्शन करते समय देव का विषय आया ।। 100 ।। अपने ज्ञान से तुरन्त देव से कैसे, कहां, किस राह से युक्ति से अपनी भेंट हो ।। 101 ।। प्रबुद्धों में एक श्री साईं थे। मूर्तिमंत वैराग्य विवेक स्वयं परब्रह्म, क्यों इस अविवेक का आलंबन लिया ।। 102 ।। श्रोताओं को ऐसी आशंका हो सकती है किन्तु यह लोक संग्रह के लिए था। भक्त उद्धारक साई समर्थ को हीनत्व कैसे आ सकता है ।। 103 ।। स्वयं अपने अवतारी होते हुए वनजारे को वहां माना, अन्न ब्रह्म को स्वयं निर्धारित करते हुए सेवन करते हुए उसकी महानता की प्रशंसा की ।। 104 ।। वैसे ही जो अवमान करता है उसकी कैसे हानि होती है। प्रबुद्धों की कहानी सुनाई कि बिना गुरु के कोई ज्ञानी नहीं बन सकता है ।। 105 ।। माता पिता व आचार्य के अनुशासन के बिना धर्म ज्ञान असंभव है। वे भी सब अध्ययन के अधीन हैं। बिन अनुष्ठान वे सब व्यर्थ हैं ।। 106 ।। आशीर्वचन प्राप्त करने के लिए मातृवान, पितृवान और आचार्यवान होना आवश्यक है, ऐसा श्रुति वचन प्रसिद्ध है ।। 107 ।। ये तीनों जिनके लक्ष्य हैं अथवा यज्ञ अध्ययन व दान- जन्म मृत्यु का उल्लंघन करने के लिए एक परम साधन हैं।। 108 ।। ये सब चित शुद्धि के साधन हैं। इनके बिना आत्मवस्तु का धन हाथ नहीं लगता । ऐसे जो जीते हैं उनके जन्म व्यर्थ हैं ।। 109 ।। शरीर इन्द्रिय और मन, वुद्धि भी आंकलन नहीं कर पाती है, ऐसी जो गहन आत्म स्वरूप है उसका दर्शन गुरुकृपा से होता है ।। 110 ।। जहां प्रत्यक्ष' व 'अनुमान' दोनों प्रमाण अप्रमाण हैं उसे हथेली पर आंवला के समान गुरु के बिना कौन दिखा सकता है ।। 111 ।। धर्म ,अर्थ व तीसरा काम प्राप्त करने

के लिए श्रम करते हैं परन्तु चौथा परम पुरुषार्थ गुरु बिना प्राप्त नहीं हो सकता, कितना भी श्रम कर लें ।। 112 ।। इस शिरडी के संत के दरबार में भविष्य वक्ता आते, प्रणाम करते, नर देह की भविष्यवाणी बोलते । भविष्य-महान व ऊँचा ।। 113 ।। तपस्वी रागी व वैरागी दर्शन के लिए उत्सुक रहते ।। 114 ।। जपी, तपी, व्रती, संन्यासी, यात्री तीर्थस्थानों पर निवास करने वाले, गायक नर्तक परिवार के साथ दर्शन के लिए शिरडी आते ।। 115 ।। निम्न जाति के लोग भी इस साईं के दरबार में आते; बोलते, "यही एक सच्चे माई बाप हैं जन्म के क्रम से मुक्त कराएंगे। ।। 116 ।। जिसके गले में शिवलिंग (आत्मलिंग), जिसके मस्तक पर विभूति लगी रहती, जिनकी आंखें कोरे अन्न की भिक्षा पर हों जंगम (जाति विशेष) का उत्सव देखने योग्य होता ।। 117 ।। ढोंगी मदारी (बाजीगर, जादूगर) आते । गोधली (नाचने गाने वालों की एक जाति) शोरगुल करते प्रेम से; भाव पूर्वक जोगवा (भिक्षा) मांगते अति प्रेमपूर्वक बाबा से ।। 118 ।। अंधे, पंगु, कानफाटी (गोरखनाथ को मानने वाले कान में बड़ा रिंग पहनने वाले) जोगी, नानक, भाट, दिवटे समर्थ साईं के भक्ति नगर में बड़े प्रेम से दौड़ते आते।। 119।। डुगडुगी बजाने वाले, सरोदी पंगु व कोल्हाटिणी खेल करते। वहीं वह प्रेमल वनजारा सही समय पर आया ।। 120 ।। साईं की आकृति धन्य-धन्य है। वैराग्य के सांचे में ढली हुई मूर्ति निर्विषय, निःसंग, निःस्वार्थी । भक्त के प्रति प्रेम अतुलनीय ।। 121 ।। अतः अब पूर्व कथानक से संबंध स्थापित करते हैं। मुख्य कथा का धागा धर कर जो आख्यान प्रारम्भ करते हैं श्रोता ध्यान दें ।। 122 ।। बाबा न स्वयं उपवास करते थे, न किसी को रहने देते। उपवास करने वाले का चित्त शान्त नहीं रहता, उसे कैसे परमार्थ ।। 123 ।। देव खाली पेट नहीं प्राप्त होता है। पहले आत्मा को संतुष्ट करो। इस उपदेश की और कहानी श्रोताओं के लिए निवेदित करता हूं ।। 124 ।। ऐन दोपहर के वक्त भूख लगती है, जब मिट्टी को ऊपर नीचे कर रहे हों । चित्त की वृत्ति में अन्नब्रह्मपद की स्पष्टता उपजती है ।। 125 ।। ऐसी कठिन बेला में अन्न का निवाला (ग्रास) मुंह में न देने से, हीन दीन इन्द्रिय समूह अपनी सब कला भूल जाते हैं ।। 126 ।। पेट में भोज्य अन्न न हो, देव किस आंख को दिखेंगे, किस वाणी से महिमा का वर्णन होगा, कान से सुनें तो किसे ।। 127 ।। सारांश सभी इन्द्रियों में शक्ति होगी तभी देव की भक्ति होगी। जब अन्न के बिना क्षीणत्व आ जाये तब उनकी गति परमार्थी नहीं होती ।। 128 ।। वहां भी अति भोजन हितकर नहीं है। वास्तव में संतुलित भोजन सुखकर होता है। अत्यधिक उपवास भयंकर होता है निरंतर असुख भोगना होता है।। 129 ।। एक बार एक बाई, केलकर (दामोदर वामन) के लिए पत्र

लेकर, मन में परम उल्लास लेकर, साईं के दर्शन के लिए शिरडी आयीं।। 130 ।। महाराज के चरणों के पास तीन दिवस उपवास करते रहने का बाई ने मन में निश्चित किया। जो उनके पास ही रह गया ।। 131 ।। बाबा के नित्य क्रम के अनुसार परमार्थ का विचार करते ,पहले कमर में रोटी बांध लो। बाई का संकल्प इसके विपरीत था ।। 132 ।। जिसका मन देव से मिलने का हो, पहले रोटी का टुकड़ा खा ले । वास्तव में जीव को संतुष्ट किए बिना, कैसे देव को ढूढेंगे ।। 133 ।। भूखे पेट देव मिलेंगे यह तो कल्पना में भी नहीं हो सकता है। यहां साईं के यहां उपवास व तप का संकट नहीं चलता।। 134 ।। महाराज अन्तः साक्षी हैं ,वे पिछले दिन ही जान गए । पहले ही दादा केलकर के निकट होने पर बोले थे।। 135 ।। अब यह शिमगा (होली) के उत्सव पर क्या मेरे बच्चे उपवास रहेंगे। कैसे मैं उन्हें रहने दूंगा। फिर मेरी क्या आवश्यकता ।। 136 ।। ये उद्गार साईं के मुख से बाहर पड़े नहीं थे कि उसके दूसरे दिन यह बाई शिरडी पहुंच गयी।। 137 ।। बाई का उपनाम गोखले था। उक्त प्रकार से मन में संकल्प किया । दादा के यहां सामान रखकर उन्हें पत्र दिया ।। 138 ।। काशीबाई कानीटकर पारिवारिक संबंधी ने पत्र दिया था। दादा से साईं बाबा का दर्शन कराने की विनती की थी।। 139 ।। बाई शिरडी पहुंच कर तत्काल बाबा के दर्शन के लिए गयीं। दर्शन करके क्षणभर बैठी थी कि उन्हें उनका उपदेश ।। 140।। किसी के अन्तर्मन में क्या है साईंनाथ सब जानते हैं। भूमंडल पर्यन्त ऐसा कुछ नहीं है जो उन्हें ज्ञात नहीं है।। 141 ।। अन्न और अन्न को खाने वाला विष्णुरूप है। उपवास, तप व निर्लेप निराहार व निरजल ,किस लिए यह झूठा प्रसार ।। 142 ।। "अपने को उपवास व तप करने की क्या आवश्यकता।" बाबा अपने आप उससे ये बोल बोले ।। 143 ।। "उन दादा भट के घर जाओ। उबली पिसी दाल का पराठा बनाओ, उसे बच्चों को खिलाओ स्वयं भी पेट भर खाओ।" ।। 144 ।। नवलाई यह कि "शिमागा' सरीखे पर्व । बाई के आने का योग भी विलक्षण | दादा की पत्नी उस क्षण (समय) स्पर्श करने की स्थिति में न होने के (मासिक धर्म) कारण बैठ गयी।। 145 ।। उपवास करने का जोश गायब हो गया । स्वयं भोजन पकाने घरेलू काम करने आयी। किन्तु वह परम प्रेमभाव से बाबा की आज्ञा का पालन किया ।। 146 ।। बाबा के चरणों की अभिवन्दना करके दादा के घर जाकर पुरणपोली का जेवन किया, सभी को जेवन परोसा ।। 147 ।। यह आख्यायिका कितनी सुन्दर है? अन्तर्गत अर्थ का क्या उपसंहार है? गुरुवचन में ऐसे स्थिर होते जावें फिर उद्धार में विलम्ब नहीं होगा ।। 148 ।। ऐसी ही एक और कथा साईं समर्थ को स्मरण हो आयी। सभी भक्तों को प्रेम से कही। सादर श्रोता सुनें ।। 149 ।। जिसके मन

में परमार्थ की आस है उसे प्रयास करना चाहिए, दृढ़ अभ्यास करने का | थोड़ा साहस भी होना चाहिए ।। 150 ।। ऐसे ये सत्कथामृत रूपी चरणतीर्थ का सेवन नित्य कल्याण के लिए करना चाहिए । संत चरणों में विनीत होने से हृदय पुनीत होता है।। 151 ।। **एक बार मैं जब छोटा था, पेट के चारों ओर कपड़ा बांध कर निर्वाह करने के लिए धंधा प्राप्त करने का मन में लेकर निकल पड़ा ।। 152 ।। चलते-चलते बीडगांव आया । वहां विश्राम किया। मेरे फकीर का निराला संकल्प था । मन को आनन्द अनुभव हुआ ।। 153 ।। वहां जरी का काम मिला । मैंने बिना विश्राम किए परिश्रम किया। मेरा सकल श्रम फलित हुआ । फकीर का पराक्रम देखो ।। 154 ।। मुझसे पहले, चार लड़के, समझदार कहे जाने वाले, काम करने के लिए लगे थे। उस समय उनका भी मूल्यांकन हुआ ।। 155 ।। एक ने 15 रुपये का किया , दूसरे ने 100 रूपये का, तीसरे ने 150 रूपये का, मेरा सबसे दुगना ।। 156 ।। मेरी समझदारी देखकर सेठ के हृदय में बहुत आनंद हुआ, मेरे प्रति भारी प्रेम हुआ, मुझे बहुत गौरव दिया।। 157 ।। मुझे उसने वस्त्र दिए , सिर पर पगड़ी ,अंग पर 'शेला'। किन्तु मैंने उसे जैसे दिया, वैसे गठरी में बांध लिया ।। 158 ।। किसी का दिया हुआ कैसे पूरा होगा। कितना भी दे सदा अपूर्ण रहेगा। मेरा परमेश्वर जब देने लगे काल के अन्त तक उसका अन्त नहीं है ।। 159।। देना एक मेरे सरकार का उसकी तुलना अन्य से कैसे? असीमित का सीमित से । कैसे शोभा होगी? ।। 160 ।। मेरे सरकार बोले, "ले जाओ" वे बोलते "दे दे "। कोई मेरी बोली को लक्ष्य नहीं करता । एक भी ध्यान से नहीं सुनता ।। 161 ।। खजाना अन्दर नहीं समा रहा है एक भी कोई गाड़ी नहीं लाता । कहने पर कोई गड्ढा नहीं खोदेगा। कोई प्रयत्न नहीं करेगा ।। 162 ।। मैं कहता हूं, "उसे धन के लिए खोदो, गाड़ी भर कर लूट कर ले जाओ। मां के सच्चे सपूत बनो । उससे भंडार भर लो ।। 163 ।। आखिर हमारी गति क्या है? मिट्टी मिट्टी हो जायेगी। वायु वायु के संग जायेगी। यह समय वापस नहीं आयेगा ।। 164।। इस प्रकार मेरे फकीर की कला, मेरे भगवान की लीला, मेरे सरकार का ताला, बहुत निराला न्यारा ।। 165 ।। मैं भी कहीं कभी जाता हूं किसी स्थान पर जाकर बैठता हूं पर यह जीव माया से भ्रमित रहता है गोता खाता रहता है अनियन्त्रित ।। 166 ।। माया बहुत कठिन है उसने मुझे दीन हीन कर दिया है! मैं रात दिन अपने लोगों का याद करता रहता हूं ।। 167 ।। जो-जो, जैसे-जैसे करेगा, वह-वह, वैसे-वैसे भरेगा। मेरे बोल पर जो ध्यान देगा वह अमोल सुख पायेगा"** ।। 168 ।। हेमाड साईं की शरण में है यह अपूर्व कथा निरूपण साईं जो अपना स्वयं कर रहे हैं मेरा मैं पन उससे फीका पड़ रहा है ।। 169 ।। वह ही इस

कथा के कहने वाले हैं, वही पढ़ने वाले, वही सुनने वाले। वही लिखने व लिखाने वाले अर्थ बोधकता भी वही हैं ।। 1 70 ।। साईं स्वयं इस कथा के पात्र हैं वही इस कथा की रुचिरिता हैं। वही श्रोता, वक्ता, स्वानंद भोक्ता वही हैं ।। 171 ।। फिर ऐसे श्रवण की मधुरता क्या परमार्थ प्राप्ति के लिए थोड़ी है। सौभाग्यशाली भक्त है जो इस प्रकार के सुख का आनंद भोगते हैं ।। 172 ।। अब अगले अध्याय का सार, साईं की ऊदी की महिमा अपार, श्रोता सज्जन सादर सुनें, विनीत अनुनय है ।। 173 ।। हेमाड अति विनीतता से कहता है। साईं समर्थ की कृपा उपजी, उसी से अपना सच्चरित बोले अपूर्व रस भरी कथा ।। 174 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित, भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईं सच्चरित का “गुरु महिमा वर्णन” नामक बत्तीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ।।

।।श्री सद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय तैतीसवां (उदी प्रभाव) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

अब संत सज्जन को नमन करते हैं जिनके कृपावलोकन होने से तत्काल पाप के पर्वत का दहन तथा कलियुग के मल का क्षालन तुरन्त होता है ।। 1 ।। जिनके उपकार की राशि जन्म जन्मान्तर तक उतारी नहीं जा सकती है। हितोपदेश के उनके सहज बोल परम अविनाशी सुखदायी होते हैं ।। 2 ।। 'यह अपना है यह पराया है' को जिनके चित्त में स्थान नहीं है। भेदभाव की वृत्ति, सांसारिकता की उठान जिनके मन में समाप्त हो गयी हो ।। 3 ।। पूर्व अध्याय श्रवण हुआ था, गुरु महिमा का अंशतः निरूपण हुआ था । अब इस अध्याय में श्रोताजन ऊदी की महिमा सुनें ।। 4 ।। मांग-मांग कर दक्षिणा लेते, दीन दुर्बल को दान देते, शेष से मोल खरीदते, काष्ठ, ढेर सारे एकत्र करने के लिए ।। 5 ।। उस शुष्क काष्ठ को सन्मुख धूनी में होम करते उससे जो अत्यधिक राख होती वही ऊदी भक्तों को देते ।। 6 ।। शिरडी से गांव वापस आते बाबा के पास अनुमति मांगते सभी भक्तों को मालूम था कि ऊदी देने की परिपाटी थी ।। 7 ।। "कुछ अधिक, ऊदी लाओ" बोलने पर वास्तविक अनुज्ञा अब हो गयी, इसलिए उनकै चित्त में वापसी उल्हास का अनुभव होता ।। 8 ।। वैसे ही शिरडी में वस्तुतः रहने पर प्रातः मध्यान्ह व सायं बाबा किसी को ऊदी नहीं देते खाली हाथ भेजते।। 9 ।। यह प्रतिदिन का क्रम था। किन्तु उस ऊदी का क्या धर्म था? मस्जिद में धूनी क्यों निरन्तर? क्यों यह नित्य उपक्रम ।। 10 ।। विभूति देने का मनोगत, बाबा क्या सोचते, "विश्व के अन्तर्गत यह सकल दृश्य राख है, यह निश्चित मन से समझो ।। 11 ।। देह भी पंचभूत रूपी लकड़ी है, भोग भोगने के लिए शेष है। भोग पूरा होते ही निचेष्ट पड़ जाता है, राख हो जाता है, स्पष्टतः ।। 12 ।। तुम्हारी हमारी भी यही स्थिति है। यही तुम्हें स्मरण कराने के लिए, रात दिन मैं जागृत रहूं, इसीलिए विभूति देता हूँ ।। 13 ।। अखिल विश्व माया के खुले मुंह में है। ब्रह्म सत्य है ब्रह्मांड असत्य है इसी का सत्य प्रतीक है यह ऊदी। यह निश्चित अर्थ मानो ।। 14 ।। यहां कोई किसी का नहीं है। पत्नी, पुत्र, मामा भांजे । नग्न आना नग्न जाना । ऊदी इसी की प्रतीक है ।। 15 ।।" ऊदी का लेपन करने से आधि-

व्याधि समाप्त होती है। किन्तु इस ऊदी का तत्वार्थ गहन है -विवेकपूर्ण वैराग्य ।। 16 ।। जो देना है दक्षिणा दें, वैराग्य लक्षण की प्रवृत्ति को साधने के लिए | आगे फिर वैराग्य का चिह्न- निवृत्ति धीरे-धीरे ज्ञात होगी ।। 17 ।। यद्यपि वैराग्य हाथ आ जाये फिर भी विवेक साथ में नहीं है तो वह मिट्टी हो गया इसलिए विभूति सादर लें ।। 18 ।। विवेक-वैराग्य का जोड़, जैसे ही विभूति दक्षिणा का बंधन, बांधे बिना भव रूपी नदी के घाट को पार करना अति कठिन है ।। 19 ।। बड़े छोटे दर्शन के लिए आते । बाबा के चरणों में विनत होकर जैसे-जैसे वापस जाते बाबा उन्हें विभूति देते ।। 20 ।। मस्जिद में नित्य की धूनी रात दिन अक्षय प्रदीप्त रहती, वहीं से मूठ-मूठ राख (विभूति) देते बाबा, अलविदा करते ।। 21 ।। प्रसाद कहकर राख देते, अपने अंगूठे से माथे पर लगाते सभी के सिर पर हाथ रखकर भक्तों के कल्याण की इच्छा करते ।। 22 ।। राख, विभूति और ऊदी शब्द तीन पर एक अर्थ बताने वाले । बाबा यही प्रसाद नित्य निरवधि अबाधित बांटते ।। 23 ।। संसार ऊदी समान है, यही एक ऊदी की महिमा है। एक दिन ऐसा आएगा मन में स्मरण रखें ।। 24 ।। कमल दल पर जल के समान इस नश्वर देह का गिरना होगा, इसलिए इसका अभिमान त्याग दो । ऊदी देकर यही दिखाते ।। 25 ।। सकल विश्व का यह प्रसार राख-रंगोली के समान है, निश्चित मानो । जगत के मिथ्या होने का विचार करें। सत्यत्व ऊदी में निवास करता है।। 26 ।। इसलिए ऊदी केवल मिट्टी है। परिवर्तनशील जगत में नाम-रूप की अन्तिम गति मिट्टी से सत्यत्व की प्रतीति होती है।। 27 ।। स्वयं बाबा भी प्रेम (मस्ती) में आने पर गाना गाते हुए सुने गए हैं । उसकी ऊदी से संबंधी हृदय स्पर्शी टुकडा श्रोता सादर सुनें ।। 28 ।। **" रमते राम आयोजी आयोजी । उदियां की गोनियां लायोजी ।।"** मन में लहर आने पर हर्ष निर्भर होकर इतना ही ध्रुपद बार-बार अति सुन्दर स्वर में बोलते ।। 29 ।। सारांश यह कि बाबा की धूनी ने कितनी ऊदी की बोरियां पैदा की गणना करने में कोई समर्थ नहीं है। ऊदी परम कल्याणी है।। 30 ।। ऊदी दान का गुह्यार्थ सुनकर वैसे ही परमार्थ व भावार्थ श्रोता शुद्ध स्वार्थ वश पूछते ऊदी का रोग व क्षेम में उपयोग ।। 31 ।। ऊदी के अन्दर यह भी गुण है। इसके बिना इस की महत्ता कैसे बढ़ेगी। साईं परमार्थ मार्ग में सिद्ध थे, स्वार्थ साधकर परमार्थ देते ।। 32 ।। इस ऊदी की योग क्षेम कथा सुनाएं तो असंख्य निकलती हैं। किन्तु अति सूक्ष्मता से कहता हूं ग्रंथ विस्तार टालने के लिए ।। 33 ।। एक बार नारायण मोती राम, जिनका उपनाम 'जानी' था, ब्राह्मण 'औदीच्य', गृहस्थ आश्रम, नासिक स्थान पर बसे थे ।। 34 ।। वैसे ही बाबा के अन्य भक्त नाम था रामचन्द्र वामन मोडक। ये नारायण राव उनके

सेवक थे। बाबा के सत्यनिष्ठ भक्त थे ।। 35 ।। बाबा जब देह धारी थे माता श्री को साथ लेकर बाबा के दर्शन के लिए नारायण राव गए हुए थे ।। 36 ।। तब वहां होने पर बाबा ने पहले ही अपने आप इंगित कर दिया था अब आगे सेवा धर्म से अपना संबंध नहीं रहेगा ।। 37 ।। अब ताबेदारी बहुत हो गयी। स्वतंत्र धंधा इससे अच्छा होगा । फिर आगे अल्प काल व्यतीत होने पर ईश्वर की दया उत्पन्न हुई ।। 38 ।। नौकरी की पराधीनता ढीली हो गयी। स्वतंत्रता अच्छी लगने लगी। भोजन व रहने की गृह-व्यवस्था अपनी स्वयं की वहीं स्थापित कर ली ।। 39।। नाम रखा 'आनंदाश्रम'। इसके लिए परिश्रम किया दिन-दिन नाम बढ़ने लगा। चित्त को आराम हुआ ।। 40 ।। यह बात घटित होते हुए देख कर साईं पदों में निष्ठा बढ़ी। फिर वह दृढभक्ति स्वरूप में बढ़ गयी। अनुभव दृढ़ता से मस्तिष्क पर छप गया ।। 41 ।। साईं की वाणी प्रत्यक्ष हुई श्रवणार्थियों के लिए कहानी बन गयी। साईं चरणों में प्रेम बढ़ गया । साई की करनी अनोखी है ।। 42 ।। पूरा प्रथम पुरुष में बोलते, किन्तु वे नित्य दूसरे से संबंधित होतीं। ध्यान देकर देखने वालों की रातदिन की अनुभूति है यह ।। 43 ।। आगे जैसा-जैसा अनुभव भक्ति प्रेम का वैभव बढ़ने लगा। एक और अभिनव (कथा) भक्ति भाव से सुनें ।। 44 ।। इस प्रकार एक बार एक दिन नारायण राव के एक मित्र को बिच्छू ने डंक मारा । बहुत वेदना से विवश हो गए ।। 45 ।। दंश के स्थान पर मलने पर बाबा की ऊदी बहुत उपयोगी है। पर ढूंढने लगने पर उसका पता नहीं लगा ।। 46 ।। मित्र की वेदना सहन नहीं हो रही थी । ऊदी का कहीं पता नहीं लग रहा था। बाबा की तस्वीर का दर्शन करके बाबा की करुणा के लिए प्रार्थना की ।। 47 ।। फिर वहीं उनकी तस्वीर के नीचे अगरबत्ती के जलने से राख थी। उसी स्थान पर राख पड़ी थी। क्षण भर के लिए ऊदी का भाव आ गया ।। 48 ।। उसी में से एक चिमटी लेकर दंश की जगह मल दिया, मुख से साईंनाम का मंत्र बुदबुदाते। भावना के अनुरूप अनुभव होता है ।। 49 ।। सुनकर बहुत आश्चर्य होगा। राख (ऊदी) अंगुली से मलते उसी क्षण वेदना जिस रास्ते आयी थी उड़ गयी। दोनों प्रेम से भर गए ।। 50 ।। यह यद्यपि अगरबत्ती की विभूति थी, व्यथित को लगायी गयी थी। किन्तु मार्ग की मिट्टी को ऊदी कहें तो ऐसा ही अनुभव प्रकट होगा ।। 51 ।। यद्यपि मिट्टी, किन्तु उसका संसर्ग जिन्हें दुःख व रोग हुआ है उनके अतिरिक्त अन्य पर प्रयोग करने पर भी उपयोगी होता है ।। 52 ।। एक बार एक भक्त की पुत्री को जो दूसरे गांव में रहती थी ग्रंथि ज्वर हो गया। यह समाचार अचानक आया। पिता को चिंता उत्पन्न हो गयी।। 53 ।। पिता वान्द्रा शहर वासी थे। पुत्री अन्य गांव में रहती थी। पास में ऊदी का संग्रह नहीं था । नाना के पास संदेश

भेजा।। 54 ।। आप बाबा से प्रार्थना करें मेरी चिंता दूर करावें | चन्दोरकर से प्रार्थना करने को कहा कि ऊदी प्रसाद भेज दें।। 55 ।। संदेश लेकर जाने वाला नाना से मार्ग में मिला जो पत्नी के साथ उस समय कल्याण को जा रहे थे।। 56 ।। थाना शहर में स्टेशन के पास वह संदेश नाना को प्राप्त हुआ। ऊदी देखा उपलब्ध नहीं है, मार्ग की मिट्टी उठा ली ।। 57 ।। वही रास्ते में खड़े रहते, साई समर्थ से प्रार्थना की, पीछे मुड़कर अपनी स्त्री के माथे पर चुटकी की मिट्टी लगा दी।। 58 ।। इधर वह भक्त निकला | जहां लड़की थी उस गांव में पहुंचे। वहां उसका जो वृत्तांत सुना, सुनकर अत्यन्त सुखी हुए ।। 59 ।। लड़की को तीन दिन ज्वर अत्यन्त तीव्र आया हुआ था । वेदना से जर्जर हो गई थी। कल ही थोड़ा आराम हुआ ।। 60 ।। देखा गया कि वह वही वेला थी जब मिट्टी से ऊदी का टीका किया गया । जब नाना ने साईं की प्रार्थना की तभी उतार हुआ था ।। 61 ।। इस प्रकार इस दर्द की कथा सविस्तार कहने योग्य है, उचित समय पर आगे कही जायेगी। यह अंश ऊदी के संदर्भ में था ।। 62 ।। यही प्रेमल चन्दोरकर गामनेरी के मामलतदार थे। निज भक्त के कल्याण के लिए तत्पर साईं चमत्कार किया, सुनो।। 63 ।। इस ऊदी की महिमा अपार है। श्रोता श्रवण तत्पर हों । जो दूसरा चमत्कार कह रहा हूं, बहुत आश्चर्य का अनुभव होगा।। 64 ।।नाना जी की पुत्री प्रसव में थी। असह्य प्रसूति व्यथा हो रही थी। जामनेर से ही साईं समर्थ को सर्वथा बुलाया ।। 65 ।। जामनेर की स्थिति शिरडी में किसी को मालूम नहीं थी। बाबा सर्व गति के सर्वज्ञ, जगत का कुछ भी उन्हें अज्ञात नहीं।। 66 ।। बाबा में भक्त की एकात्मता, नाना की ऐसी अवस्था जानकर साईं समर्थ का चित्त द्रवित हो गया। उन्होंने क्या वस्तुतः किया? ।। 67 ।। ऊदी भेजने का मन हुआ। अचानक गोसावी रामगीर बुवा को अपने गांव जाने की इच्छा मन में उठी।। 68 ।। उनका गांव खानदेश । निकलने की सभी तैयारी कर ली बाबा के पास पहुंचे मस्जिद में दर्शन के लिए।। 69 ।। बाबा के देहधारी रहते हुए पहले उनके पैर पड़े बिना, कोई, किसी भी कार्य के निमित्त अनुज्ञा लिए बिना, जाता नहीं था ।। 70 ।। लग्न हो या जनेऊ बंधन, मंगल कार्य का विधि विधान,कार्य, कारण अथवा प्रयोजन, बाबा का अनुमोदन आवश्यक होता।। 71 ।। बिना उनकी पूर्ण अनुज्ञा, ऊदी प्रसाद, आशीर्वचन के कोई भी काम निर्विघ्न नहीं होता, सबको पूर्ण विश्वास था।। 72 ।। इस प्रकार उस गांव की यह रीति थी। उसी अनुरोध के लिए रामगीर आए, बाबा के पांव लगे, जाने की अनुज्ञा मांगी।। 73 ।। बोले, "बाबा खानदेश गांव जाने के लिए आया हूं। मुझ दास को जाने की अनुज्ञा व ऊदी आशीर्वाद दीजिए ।। 74 ।। जिसे बाबा प्रेम भाव से बापूगीर नाम से बुलाते,

बोले तुम खुशी-खुशी गांव जाओ। मार्ग में थोड़ा विश्राम लेना ।। 75 ।। पहले जामनेर जाओ, वहां नाना के घर उतरो, उनका समाचार लेकर फिर तुम आगे का मार्ग धरो।। 76 ।। माधवराव देश पाण्डे से बोले, "**शामा तुम अडकर की आरती कागज पर उतार कर गोसावी के हाथ नाना को भेज दो"** ।। 77 ।। फिर गोसावी को ऊदी दिए। और थोडी पुडिया में बांधा। पुड़िया उनके हाथ में देकर बाबा ने नाना के लिए भेजी।। 78 ।। बोले,"यह पुड़िया और यह आरती ले जाकर नाना को देना। क्षेम कुशल स्थिति पूछना। फिर अपने गांव के लिए निकलना" ।। 79 ।। जैसी रामजनार्दन कृत "आरती ज्ञान राजा" यह आरती 'आरती साईं बाबा' निश्चित वैसी ही। दोनों की स्थिति समान थी।। 80 ।। रामजनार्दन जनार्दन स्वामी के भक्त थे, माधव अडकर साईं पदों में डूबे थे। रचना अत्यन्त प्रसाद पूर्ण | इसके बिना भजन अपूर्ण होता है।। 81 ।। यह बाबा की पसंद की थी। श्रोता साद्यंत आरती सुनें । ऊदी समेत बाबा ने भिजवायी। आगे फलश्रुति दिखेगी।। 82 ।।

आरती साईं बाबा । सौख्यदातार जीवा चरणरजातलीं द्यावा दासां विसांवा ,भक्तां विसांवा ।। ।। आरती ।। ध्रु० ।।

जीवों को सुख देने वाले साईंबाबा की करते हैं आरती ,चरण रज के नीचे दास को विश्राम दो, भक्तों को विश्राम दो ।।

जाळुनियां अनंग | स्वस्वरूपीं राहे दंग। मुमुक्षजना दावी। निजडोळां श्रीरंग | डोळां श्रीरंग । आरती।।

कामदेव को जलाकर अपने स्वरूप में ध्यानमग्न, मुमुक्ष जनों को निज आखों से श्रीकृष्ण का दर्शन कराते हो , आखों से श्री कृष्ण का दर्शन कराते हो ।।1।।

जया मनी जैसा भाव, तथा तैसा अनुभव। दाविसी दयाधना । ऐसी तुझी ही भाव । तुझी ही भाव । आरती।।

जिसके मन में जैसा भाव उसको वैसा अनुभव कराते हो, दया धन! ऐसी तेरी ही माया है तेरी ही माया है ।।2।।

तुमचें नाम ध्यातां । हरें संसृतिव्यथा। अगाध तब करणी । मार्ग दाविसी अनाथा । दाविसी अनाथा। आरती ।।

तुम्हारे नाम का ध्यान करने से सांसारिक व्यथा हर जाती। तुम्हारी करनी अगाध है। अनाथ को मार्ग दिखाते हो। मार्ग दिखाते हो।।3।।

कलियुगी अवतार । सगुण ब्रह्म साचार । अवतीर्ण जाहलासे । स्वामी दत्त दिगंबर दत्त दिगंवर।

आरती ।।

कलियुग के अवतार हो । वस्तुतः सगुण ब्रह्म के रूप में। हे स्वामी दत्त दिगंबर, दत्तदिगंबर अवतीर्ण हए हों ।।4।।

आठां दिवसां गुरुवारी । भक्त करितीवारी। प्रभुपद पहा वया, भवभय निवारी, भय निवारी। आरती ।।

सप्ताह में गुरुवार को भक्त तीर्थ यात्रा करते हैं, प्रभु के चरणों का दर्शन करने के लिए । भव भय का निवारण करने , भय का निवारण करने ।।5।।

माझा निज द्रव्यठेवा । तब चरणरज सेवा। मागणें हेंचि आतां । तुम्हां देवाधिदेवा । देवाधिदेवा । आरती ।।

मेरे अपने धन का खजाना तुम्हारे चरण रज की सेवा है ,अब यही मांगता हूं तुमसे, देवाधिदेव, देवाधि देव) ।। 6 ।।

इच्छित दीन चातक। निर्मल तोय निजसुख। पाजावें माधवा या । सांभाल आपुली ही भाक । आपुली ही भांक । आरती ।।

दीन चातक द्वारा निजसुख के निर्मल जल की इच्छा की गयी है, इसे माधव को पिला दें। अपना वचन भी पूरा करें, वचन भी पूरा करें।।7।।

गोसावी बाबा से बोले, मेरे पास मात्र दो रुपए है। इतने से कैसे मैं पहुंचूंगा, बाबा,जामनेर जाकर ।। 83 ।। बाबा बोले, "तुम आराम से जाओ। तुम्हारी सारी सुविधा का ध्यान रखा जायेगा" साईं के चरणों में विश्वास रखते हुए गोसावी जाने के लिए निकल पड़े।। 84 ।। आज्ञा का सम्मान करते हुए बापूगीर, ऊदी प्रसाद पाकर, बाबा का ऐसा उद्देश्य लेकर तुरन्त कार्य के लिए निकल पड़े।। 8 5 ।। अब जैसा कि जामनेर तक वहां अग्निरथ का रास्ता नहीं था । यात्रा की सुलभता नहीं थी। गोसावी को चिंता

उत्पन्न हुई ।। 86 ।। अग्निरथ (रेलगाड़ी) में बैठकर यात्री जलगांव में उतरते । वहां से आगे का समस्त मार्ग पैदल जाना पड़ता।। 87 ।। एक रुपया चौदह आना रेल गाड़ी का देकर केवल दो आने का सिक्का शेष बचा । आगे कैसे जाना होगा ।। 88 ।। इस प्रकार गोसावी चिंतित हुये जलगांव स्टेशन पर आ गए जब बाहर टिकट देकर निकले दूर सिपाई देखा।। 89।। सिपाही पहले से ही खोज कर रहा था। यात्री के समक्ष आकर शिरडी के बापूगीर को पूछा, वह कौन है, सही बताइए ।। 90 ।। यह जानकर कि केवल अपने विषय में वह सिपाही पूछ रहा है, गोसावी आगे होकर बोले,"वह मैं ही हूं क्या कहना है" ।। 91 ।। वह बोला,"मुझे तुम्हारे पास चन्दोरकर ने भेजा है तुरन्त तांगे में बैठकर चलें। तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं।" ।। 92 ।। बुवा को अत्यन्त आनंद हुआ । नाना को शिरडी से संदेश गया, तभी इस समय पर तांगा आया । बड़ी कठिनाई दूर हो गयी।। 93 ।। सिपाही बहुत चतुर दिख रहा था, दाढी कल्लेदार मूंछे, साफ सुथरी पतलून पहने । तांगा भी सुन्दर दिख रहा था।। 94 ।। जैसा तांगा वैसे घोड़े, वे क्या भाड़े के घोड़े थे? अन्य तांगों से आगे निकलते रहते कार्य के उत्साह का खिंचाव होने से ।। 95 ।। बारह घटका (24 मिनट का एक घटका) रात्रि पूरी होने पर (लगभग 11 बजे) तांगा जो वेग से चला तो भोर में वह रुका मार्ग में नदी के पास ।।96।। तब उस तांगे वाले ने अपने घोड़ों को पानी पीने के लिए ढीला कर दिया । बोला अभी तुरन्त आता हूं, सुखपवूक सूक्ष्म नाश्ता करते हैं।। 97 ।। थोड़ा पानी लेकर आता हूं हम आम व पेड़ा खाते हैं और गुड़-पापड़ी का टुकड़ा । फिर घोड़े जोत कर निकलेंगे।। 98 ।। दाढ़ी, मुसलमानी मेहराब, उसकी ऐसी वाणी सुनकर रामगीर मन में सशंकित हुए, क्या यह नास्ता किया जाये।। 99।। इसलिए उसकी जाति पर प्रश्न किये जाने पर बोला तुम क्यों संशंकित हो, मैं हिन्दू गड़वाली क्षत्रिय पूत हूं, मैं जाति से राजपूत हूं।। 100 ।। यह नाश्ता नाना ने दिया है मेरे साथ, तुम्हारे लिए । निश्चिंत हो, यत्किंचित शंका मत करो । शान्त मन से सेवन करो।। 101 ।। ऐसा जब विश्वास हो गया, फिर वे दोनों नाश्ता किए । तांगेवाले ने तांगा जोड़ा, सूर्योदय तक यात्रा पूरी हो गयी।। 102 ।। तांगा के गांव में प्रवेश करते ही नाना की कचहरी दिखने लगी। घोड़े भी क्षणभर विश्राम किए | रामगीर मन में सुखी हुए ।। 103 ।। बुवा लघुशंका के लिए एक बाजू में बैठ गए । पूर्व स्थान पर वापस आने पर क्या आश्चर्य घटित हुआ देखा ।। 104 ।। न तांगा, न घोड़ा । तांगे वाला आदमी नहीं दिखा। उस समय कोई भी वहां नहीं दिखा | स्थान खाली दिखा ।। 105 ।। रामगीर ने मन में विचारा । यह क्या चमत्कार है। मुझे यहां तक लाकर इतने में कहां दूर चला गया ।। 106 ।। नाना से भेंट करने के लिए उत्कंठित बुवा कचेहरी तक गए । अपने गृह पर है, यह समाचार जानकर वहां जाने के लिए पैदल चल दिए ।। 107 ।। बुवा मार्ग में पूछते हुए सहज नाना का पता लगा लिए। बराण्डा में जैसे ही जाकर बैठे नाना ने अन्दर बुला लिया ।। 108 ।। परस्पर भेंट हुई। ऊदी व आरती बाहर की , नाना के सन्मुख रखी, संपूर्ण

समाचार निवेदित किया।। 109 ।। आश्चर्य यह कि जब ऊदी आयी, उसी समय नाना की पुत्री की प्रसूति में कठिनाई हुई, अति कष्ट हुआ।। 110 ।। उसे संकट मुक्त करने के लिए नवचण्डी हवन चल रहा था। सप्तशती का पाठ पठन देखकर गोसावी विस्मित हुए ।। 111 ।। जैसे भूख से पीड़ित को अकल्पित मिठाई से भरी थाली आ जाए या तृषित चकोर के मंह में अमृत वैसे ही तब नाना के लिए हुआ था ।। 112 ।। पत्नी को बुलाया । पिलाने के लिए ऊदी दी। नाना ने स्वयं आरती पढ़ना आरंभ कर दिया ।। 113 ।। क्षणभर का समय जाते-जाते अन्दर से बाहर समाचार आया। ऊदी का प्याला ओठों से लगाते ही पुत्री को आराम हो गया।। 114 ।। तत्काल क्लेश निर्मुक्ति हो गयी । मुलगी निर्विघ्न प्रसूति प्राप्त हुई, लोगों की चिन्ता दूर हुई, सुखपूर्वक बच्चे को जन्म दिया ।। 115 ।। तांगेवाला कहां गया? नाना से रामगीर ने पूछा, यहां भी मुझे नहीं दिख रहा है। आप द्वारा भेजा गया तांगा कहां है? ।। 116 ।। नाना बोले, मैने नहीं भेजा । तांगा कहां मुझे नहीं मालूम । आप आ रहे हैं यह किसे ज्ञात था, तांगा मैं कैसे भेजता? ।। 117 ।। फिर बुवा ने तांगे की समस्त कथा, विस्तार से व प्रारम्भ से कहा । नाना का चित्त विस्मित हो गया, बाबा की वत्सलता देखकर ।। 118 ।। कहां तांगा, कहां सिपाही, साईं मां की माया (खेल) है। भक्तों के प्रति प्रेमवस संकट के समय दौड़ते हुए चले आते हैं।। 119 ।। इस प्रकार, अब कथा संबंध से पूर्व कथानक को आगे चलाते हैं। बाद में कुछ समय बाद बाबा भी निर्वाण प्राप्त किए ।। 120 ।। सन् 1918 विजयदशमी, दशहरा का पर्व, बाबा ने यह अच्छा शुभ दिन देखकर अपना शरीर पृथ्वी को अर्पित कर दिया ।। 121 ।। फिर आगे समाधि बनी। नारायण राव उससे पहले, बाबा देहधारी थे, तभी दो बार दर्शन प्राप्त किए ।। 122 ।। समाधि को तीन वर्ष हो गए थे, यद्यपि दर्शन की इच्छा प्रबल थी किन्तु योग्य अवसर न उपलब्ध होने पर वे अधीर हो गए ।। 123 ।। समाधि के बाद का वर्ष पूरा होते-होते नारायण राव व्याधि से पीड़ित हो गए। सभी सरल औषधोपचार हुआ; लोक प्रचलित उपाय असफल हो गए ।। 124।। यद्यपि व्याधि से परेशान हो गए थे, रात दिन बाबा का ध्यान करते। गुरुराया का कैसा मरण? बाबा ने नारायण को दर्शन दिया ।। 125 ।। एक रात्रि स्वप्न हुआ। साईं एक तहखाने (भूमि गृह) से नारायण राव के पास आते हैं। उन्हें आश्वासन देते हैं।। 126 ।। कुछ भी चिंता मन में न धरो। कल से आराम होने लगेगा। एक सप्ताह समाप्त होते-होते तुम स्वयं उठ कर बैठने लगोगे।। 127 ।। इस प्रकार आठ दिन व्यतीत हो गए। एक एक अक्षर सत्य घटित हआ | नारायण राव उठ कर बैठ गए। ह्रदय अत्यधिक संतुष्ट हो गया ।। 1 28 ।। ऐसे ही कुछ दिवस व्यतीत होने पर नारायण राव शिरडी आए समाधि दर्शन के लिए । वहीं यह अनुभव सुनाया ।। 129 ।। क्या देह धारी थे, इसलिए जीवित थे, समाधिस्थ हो गए तब मृत हो गए। साईं जन्म व मरण से परे सदा अचर-चर में व्याप्त हैं।। 130 ।। अग्नि जैसे काष्ठ में गुप्त रहती है,

दिखती नहीं। पर उसमें अन्तर्हित (छुपी) रहती है। घर्षण प्रयोग से प्रदीप्त होती है। वैसे ही भक्तों के लिए वह साईं हैं।। 131 ।। एक बार जिसने प्रेम से देखा, उस पर आजन्म अंकित हो गए । केवल प्रेम के भूखे हैं उन्हें बुलाओ, उत्तर देते हैं।। 132 ।। उन्हें न समय लगता है, न दूरी (स्थान)। सर्वकाल निरन्तर खड़े रहते हैं। कैसे कौन उपाय कुशलता करेंगे उनको करनी समझ से परे है।। 133 ।। कुछ ऐसी रचना की है कि मन में कुतर्क आएगा | जब चरणों में दृष्टि स्थिर करेंगे तब ध्यान धारण में वृद्धि होगी।। 1 34 ।। ऐसे एकाग्र मन होने पर अत्यन्त साईं चिन्तन होगा । यही यह साई करवाते हैं । कार्य भी निर्विघ्न सिद्ध हो जाता है ।। 135 ।। सांसारिकता छोड़ने की आवश्यकता नहीं है । उत्कंठा अपने आप समाप्त हो जायेगी , इस प्रकार मन को अभ्यास कराने से कार्य भी बिना प्रयास होगा ।। 136 ।। शरीर कर्मभूमि में आया है , कर्म निःसंदेह घटित होगा । स्त्री , पुत्र , वित्त और गृह का यथेच्छ संग्रह होवें ।। 137 ।। होनी को यथेष्ट होने दो । हमारा अभीष्ट सद्गुरु चिंतन हो । संकल्प विकल्प नष्ट होता है । संचित अनिष्ट टल जायेगा ।। 138 ।। भक्त भाव देखकर कैसे साई महानुभाव भक्त को एक एक अनुभव दिखाते हैं भक्त का वैभव बढ़ता है ।। 139 ।। जैसा अच्छा लगता है वेष धारण कर जहां मन में होता है प्रकट होते हैं । भक्त कल्याण के लिए कहीं भी फिरते । शिष्य को भावार्थी (श्रद्धालु) होना चाहिए ।। 140।। इस अर्थ की एक और कथा है । श्रोता सादर चित्त से सुनें संत अपने भक्तों के लिए कैसे रात - दिन श्रम करते हैं ।। 141 ।। कान के किवाड़ खो4लकर हृदय मन्दिर खोल दें । कथा को अन्दर तक प्रवेश होने दें । भव भय की कठिनाई दूर होगी ।। 142 ।। यह जो वर्तमान में प्रसिद्ध जर्मनी देश का युद्ध समाप्त हुआ । लश्कर बनने लगी थी शत्रु विरूद्ध संग्राम के लिए ।। 143 ।। आंग्ल भूमि के राज्याधिकारी भारत भूमि के भीतर थे । शहर - शहर में लश्कर भर्ती होने लगी चारों ओर ।। 144 ।। सन् 1917 का वर्ष । एक भक्त का समय आया । थाना जिला में तैनाती हुई । अद्भुत कथा घटित हुई ।। 145 ।। अप्पा साहेब कुलकर्णी नाम था । साई चरणों में स्थिर भाव था । साई का वह प्रभाव था । उनकी लीला अगाध है ।। 146 ।। उसके बहुत वर्ष पूर्व बाबा साहेब भाटे के हाथ से बाबा का चित्र प्राप्त हुआ था । पूजा होने लगी थी ।। 147 ।। शरीर वाणी व मन से उपलब्ध गंध अक्षत् पुष्प लेकर नित्य नियम से चित्र का पूजन करते । नैवेद्य समर्पण करते ।। 148 ।। कब कर्म भोग समाप्त होगा । कब मन की इच्छा पूरी होगी । साईं का प्रत्यक्ष दर्शन योग होगा । अप्पा को हृदय का रोग लग गया ।। 149 ।। साईं बाबा की छवि के दर्शन उनके प्रत्यक्ष दर्शन समान हैं। मात्र भाव - पूर्ण होना चाहिए समय पर संकेत प्राप्त होगा ।। 150 ।। केवल छवि का दर्शन होने से प्रत्यक्ष दर्शन की उसकी समानता होती है । इस विषय के पीछे का अर्थ क्या है ? श्रोता सादर सुनें ।। 151 ।। एक बार बाला बुवा सुतार मुम्बापुर के भजनकार आधुनिक ' तुकाराम ' नाम से जाने जाते , शिरडी दर्शन के लिए गए ।। 15 2 ।। यही उनकी प्रथम भेंट थी । पूर्व में

कभी भी भेंट नहीं हुई थी । दोनों की आंखों से आंखें मिलते ही साईं ने उनसे स्पष्ट क्या कहा ? ।। 153 ।। " देखो , चार बर्षो से मेरी इनकी पहचान है । " बालाबुवा विस्मित हुए , “ ऐसा क्यों ये बोल रहे हैं । ।। 154 ।। बाबा ने शिरडी नहीं छोड़ी । मैंने भी आंखों से आज ही देखा है । उनका मुझसे चार वर्ष पहले से परिचय है यह कैसे ? ।। 155 ।। ऐसा विचार करते - करते चार वर्ष पहले की घटना कि एक बार बाबा की छवि (चित्र) को नमन किया था । बुवा के चित्त में स्मरण हो आया ।। 1 56 ।। फिर उनके बोल के पीछे का अर्थ बालाबुवा को वस्तुतः समझ में आ गया । बोले , “ देखो संतों की व्यापकता । यह उनकी ही भक्त वत्सलता है ।। 1 57 ।। मैंने तो केवल छवि को नमन किया । प्रत्यक्ष मूर्ति आज ही देखी है किन्तु बाबा ने पहचान बना ली । मैं तो कभी का भूल गया था ।।158।। बोले , भूल गया था कहना भी सत्य नहीं है । तत्काल उस बोल का अर्थ नहीं समझ सका | छवि - नमन से परिचय हो गया उनके कथन का अर्थ जानने की सामर्थ्य मुझमें नहीं थी ।। 159 ।। बाबा से मेरा परिचय है इसका मुझे ज्ञान नहीं था ।संत जब स्मरण कराते हैं तब ही प्रकाशित होता है ।। 160।। निर्मल आइना (दर्पण) या जल हो तब सूर्य का शुद्ध प्रतीक । यह छवि भी एक प्रतिबिंब है ।। 161।। इसलिए संतों की छवि का दर्शन प्रत्यक्ष दर्शन के समान है। संतों को सर्वदर्शी जानो , यही सभी के लिए संतों की शिक्षा है ।। 162 ।। अतः अब पूर्व की कथा सुनने के लिए सावधान होवें श्रोता। अपने चित्त में तारतम्य बनाए रखें ।। 163 ।। अप्पा थाना शहर में निवास करते थे । कार्यवश भिवंडी आए । एक सप्ताह में वापस आएंगे यह कह कर बाहर निकले ।। 164 ।। दो दिन व्यतीत होते - होते यहां देखो , उनके घर थाना में अपूर्व घटित हुआ । दरवाजे पर एक फकीर पहुंचा ।। 16 5 ।। उससे आंख मिलते ही सभी को स्पष्ट लगा कि साईं हैं । नख से शिख तक छवि व संपूर्ण रूप रेखा में समानता ।। 166 ।। पत्नी व बाल - बच्चे सभी की आंखे फकीर के ऊपर विस्मयापन्न हो गयीं । बाबा आए हैं , लगा ।। 167 ।। पहले किसी का प्रत्यक्ष दर्शन नहीं हुआ था । किन्तु चित्र के सदृश होने से यही बाबा हैं ऐसा जानकर जिज्ञासा सम्पन्न हो गए ।। 168 ।। क्या आप शिरडी के वही साईं हैं, फकीर से इसी मध्य प्रश्न किया । उनसे उस फकीर ने जो निवेदन किया , सावधान होकर सुनें ।। 169 ।। वास्तव में मैं स्वयं साईं नहीं हूं । पर मैं उनका आज्ञाकारी (शिष्य) बंदा हूं, उन्हीं की आज्ञा से बाल बच्चों के समाचार के लिए आया हूं ।। 170 ।। फिर वह दक्षिणा मांगने लगे । बच्चों की माता ने संभावना करते हुए तत्क्षण एक रुपया दिया । उन्हें ऊदी प्रदान की गयी ।। 1 71 ।। साईं बाबा ने ऊदी (विभूति) दी पुड़िया में बांधकर बाई को । बोले इसे चित्र के साथ रखिए सौख्य प्राप्ति होगी ।। 172 ।। अपना कार्य व अर्थ संपादित करके , " साई मार्ग देख रहे होंगे , ऐसा कहकर विदा लेकर फकीर मार्गस्थ हो लिए ।। 17 3।। फिर वहाँ से जो निकले ,आने वाले मार्ग पर चलते रहे। यहाँ पर जो वृतांत हुआ, वह साई की अपूर्व लीला थी।।174 ।। अप्पा साहेब भिवंडी गए थे । आगे न जाकर मार्ग से वापस हो लिए

। तांगे के घोड़े बीमार हो गए आगे की यात्रा रह गयी ।। 175 ।। वे फिर दोपहर में थाना आए । सब घटना जानने के बाद अप्पा साहेब मन में दुःखी हुए कि वे दर्शन से वंचित रह गए ।। 176 ।। एक रुपया दक्षिणा दी इससे मन में लज्जा अनुभव किया । मैं होता तो दस से कम देकर विदा न करता ।। 177 ।। ऐसा बोलकर अप्पा साहेब किंचित मन में खिन्नता का अनुभव किए । फकीर मस्जिद में मिल सकता है, बिना कुछ खाये ढूंढने निकल पड़े ।। 178 ।। मस्जिद , तकिया , जगह - जगह , जहां ,जहां कोई रुकता सभी स्थानों पर अप्पा ने ढूंढा फकीर के लिए तब ।। 179 ।। शोध करते - करते थक गए । फकीर कहीं भी उन्हें न मिला फिर तब निराश होकर भूखे भोजन के लिए गए ।। 180 ।। किन्तु उन्हें नहीं ज्ञात था कि खाली पेट शोध नहीं होता । पहले अपनी आत्मा को सन्तुष्ट करो । फिर शोध प्रारम्भ करो ।। 181 ।। इस अर्थ की बाबा की कथा है । इस निजतत्त्वता के यथार्थ को दर्शाती है । किस लिए यहां उसकी पुनरावृत्ति करें । गत अध्याय से श्रोता अवगत हैं ।। 182 ।। गत अध्याय में गुरु गरिमा नाम से एक सुन्दर कथा जिसमें अपने मुख से निज गुरु का संकल्प कारुणिक साईं ने वर्णित किया है ।। 183 ।। उसी का सत्य अनुभव हुआ अप्पा जेवन करके निकले साथ में मित्र श्री चित्रे को लेकर । सहज चाल से फिरते रहे ।। 184 ।। इस प्रकार कुछ मार्ग चलने पर अपने को लक्ष्य करके एक व्यक्ति आता दिखा उसी स्थान पर अति तीव्रता से ।। 185 ।। निकट आकर खड़ा रहा । अप्पा साहेब ने धीरे से देखा ! यही आए होंगे सुबह उन्हें ,उस समय ,यह लगा ।। 186 ।। पहले जिसे ढूंढ रहे थे मुझे लगता है यह वही फकीर है । नाखून के अग्र भाग तक चित्र से मिलता है मेरी बुद्धि विस्मित हो रही है ।। 187 ।। इस प्रकार अप्पा मन में तर्क कर रहे थे । तभी उस फकीर ने हाथ पसारा | उसके हाथ पर एक रुपया रख दिया अप्पा ने उस अवसर पर ।। 188 ।। और मांगने पर एक और दिया । उस पर देखो तीसरा । फिर उस फकीर ने और मांगा । आगे नवल कौतुक है ।। 189।। चित्रे (नामक मित्र) के पास तीन थे । उसे भी अप्पा ने मांग कर ले लिया । उसे फकीर को दे दिया । फिर उसने मांगना बन्द नहीं किया ।। 190 ।। अप्पा साहेब ने उनसे कहा , " मैं और दूंगा घर आने पर " | बोले , ' अच्छा । तीनों उस समय घर तक वापस आए ।। 191 ।। घर आकर और तीन रुपए निकाल कर हाथ पर दिया । नौ हो गए । फिर भी फकीर सन्तुष्ट नहीं हुआ ।। 192 ।। और अधिक दक्षिणा मांगी । अप्पा साहेब बोले , “ वस्तुतः अब दस रुपये का बंधा नोट बाकी रह गया है " ।। 193 ।। छुट्टा रुपया सब समाप्त हो गया है । दूसरा कुछ शेष नहीं है । फकीर बोले , “ नोट दो ना” । अप्पा ने वैसा ही किया ।। 194 ।। जब नोट हाथ लग गया नौ रुपए वापस दे दिया । फिर तो फकीर जिस मार्ग से आया था, अति वेग से वापस चला गया ।। 195 ।। इस कथा का सार देखो । जिस भक्त का जैसा उद्गार वैसे उसे पूर्ण करवाना है । यह साईं का सत्य संकल्प है ।। 196 ।। श्रोताओं की श्रवणोत्सुकता देखकर , इस अर्थ की और घटना है जो मुझे

प्रसंग वश स्मरण हो आयी है, अति सादरता के साथ सुनें ।। 197 ।। एक श्रद्धावान भक्त था । नाम था हरिभाऊ कार्णिक , डहाणू ग्राम का निवासी . साई का अनन्य सेवक ।। 198 ।। सन् 1917 में पवित्र गुरु पूर्णिमा देखकर शिरडी की यात्रा की । उसी का अल्प चरित्र सुनाता हूं ।। 199 ।। यथा विधि पूजा हुई । दक्षिणा वस्त्र अर्पण किया । आज्ञा लेकर नीचे उतर आए। मन में कल्पना आयी ।। 200 ।। उन्हें लगा कि और एक रुपया पुनः जाकर बाबा को दूं । वह विचार उन्हें त्यागना पड़ा । रुपया वैसे ही रखना पड़ा ।। 201 ।। जिन सज्जन (माधवराव देशपाण्डे) ने आज्ञा दिलायी थी । उन्होंने ही ऊपर से संकेत किया अब एक बार आज्ञा हो गयी अपने मार्ग पर आगे बढ़िए ।। 202।। संकेत पर विश्वास करके कर्णिक वैसे ही आगे बढ़े । मार्ग में मित्र समेत नासिक में उतर गए ।। 203 ।। काला राम के मन्दिर में कर्णिक दर्शन के लिए गए । नृसिंह महाराज संत का दर्शन अचानक हो गया ।। 204 ।। भक्त परिवार से घिरे हुए महाराज अकस्मात उठ गए । कर्णिक की कलाई पकड़ी बोले मेरा रुपया दो ।। 205 ।। कर्णिक मन में विस्मित हुए । रुपया बड़े आनन्द से दिया । कैसे साईं ही सोचा हुआ रुपया मानो स्वीकार कर रहे हैं ।। 206 ।। साईं ने स्वीकारा यह भी सत्य नहीं है । मन में ध्यान उस प्रकार का न होते हुए भी बलपूर्वक खींचकर मांगते हैं । वैसा ही यह अनुपम हुआ ।। 207 ।। यह मन संकल्प - विकल्पात्मक है । अनेक तरंग पर तरंग । पहले झटके में एक भाव अवसर आने पर और कल्पना ।। 208 ।। आरंभ में चित्त में जो लहर उठती है उसकी सदवृत्ति अच्छी है तो मात्र उसी का परिपोषण होता है वही एक कल्याणकारी है ।। 209 ।। उसी को लक्ष्य करो , दृढ़ अभ्यास व निदिध्यासन करो । मन से विस्मृत न होने पावे, वचन रखने का प्रयत्न करो ।। 210 ।। अप्पा साहेब ने बोल दिया फिर आगे विसरा दिए थे । बोल उठते ही पूरे होने चाहिए । भक्ति की नवलाई दर्शायी ।। 211 ।। क्या उस फकीर के पास नोट समवेत उन्नीस नहीं थे यद्यपि , अप्पा को क्यों नौ दिए इस प्रकार दस रह गए ।। 212 ।। जिन पर बाबा का हाथ लगा , वे नौ सोने की गिन्नियों के हार थे । नौ प्रकार की प्रेम पूर्ण भक्ति का स्मरण बाबा ने कराया ।। 213 ।। देह विसर्जन कथा सुनो । स्वयं बाबा निजदेह त्यागते समय , नौ रुपए का दान उस समय (लक्ष्मी बाई को) दिया था । अभिनव दानता करते हैं ।। 214 ।। पत्नी द्वारा काया - वाणी - मन से एक रुपया दिया गया । अति सन्तुष्टि के साथ स्वीकार किया । उन्होंने अधिक नहीं मांगा ।। 215 ।। किन्तु अपनी पत्नी के देने पर अप्पा के मन में विचार उठा कि मैं होता तो दस गुणा देता उस समय फकीर को ।। 216 ।। इस प्रकार जो अप्पा वचन दिए दस रुपए देने को कहा । वह पूरा न देने पर वचन निर्मूल होकर ऋण मुक्त कैसे होते ।। 217 ।। यह फकीर अन्य की भांति नहीं था । क्या वह कोई भिखारी था । जिसके हाथ में कुछ भी पड़ने पर वापस चला जाता ।। 218 ।। दिन बीता नहीं था , बोलने का दिन ही पुनः आये । पर वह कोई अपरिचित फकीर था जिसके लिए अप्पा सशंकित थे ।। 219 ।। आरंभ में मांगते समय छ :

रुपए पास थे किन्तु वह रकम उसके लिए उन्होंने हासे नहीं छोड़ी ।। 220 ।। इस प्रकार अप्पा के प्रति प्रेम न होता फकीर वेष में बाबा क्यों आते ? यदि दक्षिणा का बहाना न करते कथा में इतना रस कैसे आता ।। 221 ।। अप्पा साहेब केवल निमित्त हैं । तुम्हारी हमारी एक ही गति है । यद्यपि आरंभ में उद्देश्य अच्छा होता है अवसर आने पर प्रसंग से भिन्न आचरण करते हैं ।। 222 ।। हम सब वाग्दान में तत्पर हैं दान काल में बहुत शंका होती है । मन ऊपर नीचे होता है तब निश्चितता दुर्लभ है ।। 223 ।। तथापि हितकारी और कम बोलो । जैसा बोलो वैसा व्यवहार करो । निज बोल को खरा करके दिखाओ । एकाध ही हरि के लाल हैं, ऐसे ।। 224 ।। अतः जो भक्त अनन्य श्रद्धालु हैं, जो जिस अर्थ की इच्छा रखता है ,यह इस संसार की हो या अगले , साई समर्थ फलदायक हैं ।। 225 ।। यद्यपि ये अप्पा साहेब होशियार थे । आंग्ल विद्या विभूषित चतुर थे । आरंभ में चालीस रुपए पगार सरकार उन्हें देती थी ।। 226 ।। बाद में वह चित्र पाने पर धीरे - धीरे बढ़ने लगी चालीस से बहुत गुना अधिक पगार अब हो गयी थी ।। 227 ।। एक का दस गुना देते हैं । दस गुणा अधिकार दस गुना सत्ता बाबा का यह अनुभव सभी हाथों हाथ देखते हैं ।। 228 ।। इसके अतिरिक्त , निष्ठा के अन्दर परमार्थ की दृष्टि , बढ़ने लगती है । यह क्या सामान्य लाभ है ? बाबा की कुशलता विचित्र है ।। 229 ।। फिर फकीर द्वारा दी गयी विभूति अप्पा साहेब ने मांगी । देखने पर यह पुड़िया दी । प्रेम से देखते उसे खोला ।। 230 ।। वस्तुतः ऊदी के साथ पुष्प अक्षत पुड़िया में से निकला । अति सम्मान से ताईत बनवा कर अपने हाथ में बांध ली ।। 231 ।। फिर बाबा का दर्शन किया । जो बाबा ने स्वयं दिया था वह केश अति प्रेम के साथ ताईत में रख लिया ।। 232 ।। बाबा की ऊदी शंकर का भूषण है । जो श्रद्धा से मस्तक पर लगाते हैं तत्काल विघ्न निरसन होता है ।। 233 ।। मुखमार्जन स्नान करके जो नित्य ऊदी का विलेपन करते हैं चरण तीर्थ (पूजा का जल) के साथ पान करते है वे पुण्यपावन हो जाते हैं ।। 234 ।। इसके अतिरिक्त इस ऊदी विशेष की विशेषता यह है कि सेवन करने से पूर्ण आयु जीवन होगा, समस्त (अशेष) पापों का निरसन होगा सर्वदा सुख सन्तोष रहेगा ।। 235 ।। इस प्रकार इस मधुर कथा अमृत की दावत साईं ने अप्पा के कारण दी है वहां हम आगन्तुक पाहुन (अतिथि) हैं ,पंक्ति में यथेष्ट जेवन करने के लिए ।। 236 ।। पाहुन अथवा घरवाला दोनों की एक ही मेजबानी । रसास्वादन में प्रपंच नहीं । स्वानन्द भोजन करके तृप्त होवें ।। 237 ।। हेमाड साईं चरणों की शरण में है । अब तक का यह श्रवण पर्याप्त । अगले अध्याय में कथन होगा । इससे भी अधिक ऊदी की महिमा का ।। 238 ।। ऊदी लगाने से साईं दर्शन से कष्टकारी नासूर का निर्मूल निरसन हुआ । चर्मरोग का निवारण, प्लेग हरण, ध्यान पूर्वक सुनें ।। 239 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित में “ऊदी प्रभाव” नामक तैतीसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्रीसद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।।अध्याय चौतीसवां (उदी महिमा) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्रीकुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरुसाईनाथ को नमन ।।

पूर्व अध्याय में ऊदी की महिमा का कथन यथा तथ्य किया है । वर्तमान अध्याय में भी उसी का निरूपण है। गुण लक्षण का विवरण है ।। 1 ।। उसी पीछे की कथा के सम्बन्ध में , उसी ऊदी के वैभव वर्तमान में श्रोता स्वस्थ चित्त से सुनें , सुख संवृत्ति के लिए ।। 2 ।। नासूर दुर्धर व दुखदायी रोग है । किसी भी उपाय से शमन नहीं होता है । साई ने हाथ से ऊदी लगा कर व्यथा का निर्मूलन कर दिया ।। 3 ।। इस प्रकार इस ऊदी की अनेक कथाएं हैं । दिग्दर्शन के लिए एक कहता हूँ । श्रवणकर्ता को कौतुक लगेगा , अनुभव पूर्वक कहने पर ।। 4 ।। जिला नासिक , मालेगाँव में , एक डाक्टर अपेक्षित पदवीधारी था । उनके भतीजे को कुछ व्यथा थी जो औषधि से नहीं जा रही थी ।। 5 ।। स्वयं वैद्य थे , मित्र भी वैद्य । नाना विधि उपचार किया । कुशल शस्त्रक्रिया प्रबुद्ध । निर्बुद्धि होकर थक गए ।। 6 ।। वह रोग था हाड्याव्रण (पुराना नासूर) हाड्यावर्ण का प्रचलित अपभ्रंश। व्याधि महादुर्धर विलक्षण । औषधियों के गुण फलित नहीं हो रहे थे।। 7 ।। देशी विदेशी सभी उपचार हुए सभी उत्कट अभिलाषा समाप्त हो गयी । शस्त्रक्रिया भी की गयी थी, कुछ भी सफल नहीं हुई ।। 8 ।। भतीजा वय में छोटा था । उससे वेदना सहन नहीं होती थी । कष्ट से प्राण मुसीबत में आ गए । निकट संबंधी उद्विग्न मन हो गए ।। 9 ।। चरमसीमा तक उपाय हुए । यत्किंचित भी व्याधि का शमन नहीं हुआ । उनके निकट संबंधी बोले देवताओं की आराधना करो ।। 10 ।। देव , दैवत व गुरु स्वामी इनमें से कोई भी काम नहीं आया । सुनाई पड़ा कि शिरडी ग्राम में एक नामी अवलिया रहता है ।। 11 ।। वह शिरडी के संत प्रवर योगेश्वर साईं महाराज थे, केवल दर्शन ही व्याधि को वास्तव में भगा देता है ,सुना गया ।। 12 ।। साई दर्शन की इच्छा उत्पन्न हुई । माता पिता ने निश्चित किया देव का नाम लेकर , तब यह भी उपाय करके देखते हैं ।। 13 ।। कहते हैं कि महान अवलिया है, उसके द्वारा अपने हाथ से ऊदी लगाए जाने पर दुर्धर रोग विलय हो जाता है । अनुभव करने में क्या जाता है ।। 14 ।। चलें उनके चरणों की वंदना करते हैं । यह अन्तिम करके देखते हैं यदि इसी से यह अपाय टल जाता है, यह एक अन्तिम उपाय है ।। 15 ।। इस प्रकार फिर उनके माता - पिता सामान बांध कर साई दर्शन के लिए आतुर होकर शिरडी तुरन्त पहुँचे ।। 16 ।। आते ही बाबा के दर्शन किए । चरण वंदना करके साष्टांग दण्डवंत किया ,

बालक का दुःख निवेदन किया , सन्मुख खड़े होकर ।। 17 ।। विकल वाणी व जुड़े हुए हाथ से , साईं चरणों में ध्यानस्थ होकर , मुख दयनीय करके , साईं से विनती करने लगे।।18 ।। बोले , " यह बालक व्यथा पीड़ित है । हम से दुःख देखा नहीं जाता । आगे क्या करें सोच नहीं पा रहे हैं । हमें बचने का संयोग नहीं दिख रहा है ।। 19 ।। पुत्र को दुःख से पीला होते देख बहुत थक गए हैं । साईं समर्थ , अभय का हाथ इसके माथे पर रख कर व्यथा का निवारण करें ।। 20 ।। आपकी महिमा सुनकर हमने यहां तक आगमन किया है । अनन्य भाव से शरण में आए हैं । इतना जीवन दान हमें दे दें ।। 21 ।।“ तब करुणा मूर्ति साई ने उन्हें आश्वासन दिया , “ **मस्जिद के आश्रय में जो आते हैं उनकी दुर्गति कल्प के अन्त तक नहीं हो सकती ।।22।। अब तुम निश्चिन्त होओ । ऊदी लेकर उस अल्सर पर लगाओ (रगड़ो) । लगभग आठ दिन मैं असर होगा । देव पर भरोसा रखो ।। 23 ।। यह मस्जिद नहीं द्वारावती (द्वारका) है यहां जिसके पांव लगते हैं तत्काल क्षेम व आरोग्य प्राप्त करता है । तुम्हें इसकी प्रतीति होगी ।। 24।। यहां आने पर आराम न पड़े यह तो तीनों कालों में नहीं हो सकता । जो इस मस्जिद की सीदी चढ़ता है उसका बेड़ा पार हुआ जानो ।। 25 ।।“** फिर बाबा ने आज्ञा की । व्यथित को सन्मुख बैठाया गया । पांव पर बाबा ने हाथ फेरा, उस पर कृपावलोकन किया ।। 26 ।। यह तो केवल दैहिक व्यथा थी । वह दैविक क्यों न हो अथवा दुर्धर मानसिक, दर्शन समूल हारक होता है ।। 27 ।। श्री साईं के मुख को देख कर वहीं सकल दुख दूर हो गया । वचनामृत का सेवन करके रोगी को परम सुख हुआ ।। 28 ।। अतः आगे चार दिन तक वैसे ही वहाँ रहे । व्याधि के जाते ही आराम पड़ने लगा । साईं पदों में विश्वास भी स्थिर हो गया ।। 29 ।। तदन्तर वे तीनों जन बाबा के पूर्ण अनुमोदन से आनन्द निर्भर मन से सन्तुष्ट हो कर गांव को वापस हो गए ।। 30 ।। यह क्या छोटा चमत्कार है ? हाड्यावर्ण में उतार पड़ गया । ऊदी और कृपा की नजर , यही अपूर्व उपचार था ।। 31 ।। ऐसा है महापुरुष का दर्शन । भाग्य से आश्वासन , कल्याण कारक आशीर्वचन प्राप्त होने पर इसी से व्याधि का निर्मूलन हो जाता है ।। 32 ।। इस प्रकार कुछ दिवस जाने पर अल्सर पर ऊदी लगाने व सेवन करने से घाव भरते सूखते - सूखते उस बालक को आरोग्यता प्राप्त हो गयी ।। 33 ।। मालेगांव में उस चाचा ने सुना । साई दर्शन की उत्सुकता उपजी । मन में बोले मुंबई वापसी में यह आतुरता पूरी करुंगा ।। 34 ।। बाद में मुंबई के लिए जब निकले , माले गांव और मनमाड इन दोनों ठिकानों पर किसी ने चित्त में विकल्प (शंका) डाल दी । शिरडी का निश्चय त्याग दिया ।। 35 ।। सत्कार्य की ऐसी ही रीति है । आरम्भ में कुत्सित जन रुकावट डालते हैं । लोक प्रवाद जिन पर बली नहीं पड़ता उन्हीं की अंत में सद्गति होती है ।। 36 ।। फिर वे साईं दर्शन जानबूझ कर छोड़कर सीधे मुम्बई गए । अवशेष छुट्टी अलीबाग में रहकर व्यतीत करने का उनके मन में संकेत हुआ ।। 37 ।। ऐसा निश्चय करने

के बाद निरन्तर तीन रात्रि निद्रा में ध्वनि सुनते , " अभी भी मुझ पर अविश्वास न “।। 38 ।। लगातार यह अशरीरी वाणी सुनकर डाक्टर का मन विस्मित हुआ । शिरडी प्रयाण निश्चित किया, ध्वनि के पीछे के अर्थ की अनुभूति के लिए ।। 39 ।। किन्तु एक का दूषित ज्वर , डाक्टर द्वारा ही उसका उपचार । उसके आराम पड़ने पर तुरन्त निकलने का निर्णय किया ।। 40 ।। किन्तु वह ज्वर बहुत तेज था, कोई उपचार फलित नहीं हो पा रहा था । लेशमात्र भी उतार नहीं पड़ रहा था। तुरन्त निर्गमन नहीं हो पाया ।। 41 ।। फिर उन्होंने ये मन में संकल्प किया , " यदि आज दवा प्रभावी होती है, तो मैं कल क्षण गवाए बिना शिरडी को प्रयाण करुंगा” ।। 42 ।। ऐसा दृढ़ संकेत करते प्रहर दो प्रहर में ज्वर भी उतरने लगा । उनका उद्देश्य सफल हो गया । डाक्टर शिरडी के लिए निकल पड़े ।। 43 ।। यथा संकल्प शिरडी गए । मनोभाव से चरण वंदन किया । बाबा ने भी अन्तःकरण के अनुभव को स्वीकृति दी । निज सेवा के लक्ष्य में लगा दिया ।। 44 ।। मस्तक पर आशीर्वाद के साथ हाथ रखा ऊदी प्रसाद दिया। साई की अगाध महिमा देखकर आश्चर्य चकित रह गए ।। 45 ।। वहां चार दिन रहे । डाक्टर आनन्द मन से वापस आए । पन्द्रह दिन पूरे नहीं हुए कि विजापुर पदोन्नति पर गए ।। 46 ।। हाड्याव्रण के कारण खिंचाव । साई दर्शन का रास्ता बना । संतचरण के प्रति आकर्षण स्थिर हुआ । अक्षय खजाना प्राप्त कर लिया ।। 47 ।। इसी प्रकार डाक्टर पिल्ले चर्मरोग की व्यथा से व्याकुल थे । एक के बाद एक सात हुए । जीव को बहुत कष्ट हुआ ।। 48 ।। साईंबाबा के प्रति भारी प्रेम था । प्रचलित नाम ' भाऊ ' था । भाऊ का नित्य कुशल क्षेम परम प्रेम से पूछते ।। 49 ।। मस्जिद में सायं सुबह लकडी (की रेलिंग) के सन्निध भाऊ का स्थान । भाऊ के साथ बहुत समय तक लम्बी गोष्ठी की परंपरा थी ।। 50 ।। चिलिम खींचते समय भाऊ को वहां होना चाहिए । बीड़ी फूंकते समय भाऊ को वहां होना चाहिए । न्याय सुनिश्चित करते समय भाऊ को वहां होना चाहिए । निकट न होने पर समय अच्छा नहीं बीतता ।। 51 ।। इस प्रकार ऐसी उनकी कथा थी । नासूर की व्यथा दुःसह होने पर भाऊ ने विकल होकर बिस्तर पकड़ लिया । दुःख की उद्वेगता दुर्धर थी ।। 52 ।। ऐसा वह दारुण बुरा समय । मुख से ' साई ' नामस्मरण । यातना बहुत हो गयी , इससे अच्छी तो मौत है । साई की शरण में पहुँचे ।। 53 ।। बाबा को समाचार भेजवाया । यह दुःख भोगते थक गया हूँ । ये कितने घाव हैं शरीर पर ? मुझमें बर्दाश्त करने की क्षमता नहीं है ।। 54 ।। शुद्ध आचरण का बर्ताव करने पर मेरी यह दुःखावस्था क्यों ? दुष्कर्म के मार्ग पर न जाने पर मेरे माथे यह पाप क्यों ? ।। 55 ।। नासूर की वेदना मरण

प्राय है । बाबा अब अपने से बर्दाश्त नहीं होता । इससे अच्छा अब मृत्यु आ जाये । यातना आगे भोगेंगे ।। 56 ।। भोग बिना गति नहीं है । और जन्म लेने पड़ते हैं । किन्तु प्रारब्ध भोग टाला नहीं जा सकता है । मैं मन्दबुद्धि भी यह जानता हूँ ।। 57 ।। सुख से दस जन्म ले लूंगा तभी यह अपना कर्म भोगूंगा । वर्तमान जन्म को समाप्त कर दें , इतनी भिक्षा मुझे परस दें ।। 58 ।। इस जन्म का जीना अब बहुत हो गया । मेरे जीवन प्राण को मुक्त कर दें । अब यह कष्ट नहीं सहा जाता । यही पुनः मांगता हूं ।। 59 ।। सिद्धों में राणा (साईं महाराज) के अन्तःकरण में प्रार्थना सुनकर दया उपजी । डाक्टर पिल्ले के समाधान के लिए जो करुणामृत वर्षा की उसका सेवन करें ।। 60 ।। फिर , भक्त की इच्छा के कल्पतरु (बाबा) ने उनकी परम दुःखावस्था को देख कर , उनका शमन करने के लिए कैसी व्यवस्था प्रारंभ की ।। 61 ।। समाचार दीक्षित द्वारा लाया गया था बाबा ने वह समाचार सुनकर बोले , " **जाकर उनसे कहो , आप निर्भय मन रहिए** " ।। 62 ।। और उनसे कहने के लिए भिजवाया , " **दस जन्मों में किस लिए बांटना । समस्त दस दिन में भोगो । परस्पर बांट कर भोगते हैं ।। 63 ।। मोक्ष , स्वार्थ व परमार्थ देने में मेरे समर्थ होते हुए , तुम्हारा क्या यही पुरुषार्थ है , कि मरण का अनर्थ मांगते हो ।। 64 ।। उन्हें उठाकर लाओ । भोग को भुगता जावे व सहा जावे । इस प्रकार घबराया न जावे । पीठ पर लादकर लाओ"** ।।। 65 ।। इस प्रकार डाक्टर ऐसी ही स्थिति में मस्जिद तक तत्काल लाये गए । बाबा ने पीछे का तकिया हाथ से निकाल कर उन्हें दे दिया ।। 66 ।। अपने दाहिने भाग में रखा । फकीर बाबा बैठते थे उस जगह | बोले , "**इसे टेक लगाकर पड़ जा । बिना कारण झूठी चिंता मत करो ।। 67 ।। आराम से पांव लम्बा करो जिसमें तुझे आराम हो । संचित (कर्म) भोगे बिना समाप्त नहीं होता है । यही इसका सही उपाय है ।। 68 ।।इष्ट - अनिष्ट , सुख - दुःख संचितानुसार अमृत अथवा विष । प्रवाह के साथ बहने वाले द्वंद को देख हर्ष अथवा शोक न धरो ।। 69 ।। जो जो आए उसे सहो । अल्ला मालिक रक्षक है । सदा उसी के चिंतन में करो । सारी चिंता का वह वहन करता है ।। 70 ।। चित्त - वित्त , काया - वाणी के साथ उसके चरणों में समर्पित हो जाओ । उसके स्मरण में निरन्तर रहो । इसकी करनी दिखेंगी** "।। 71 ।। तब वे पिल्ले डाक्टर बोले , ' नासूर पर नाना साहेब चांदोरकर ने पट्टी बांधी थी किन्तु कुछ आराम नहीं है । ।। 72 ।। बाबा बोले , "नाना पागल है । पट्टी खोलो वरना तुम मर जाओगे । अब कौवा आकर चोंच मारेगा । फिर तुम चंगे हो जाओगे ।। 73 ।। इस प्रकार ऐसी वार्ता चल रही थी कि अब्दुल तत्काल ऊपर आया मिट्टी के दियो में तेल

डालने के लिए । अचानक क्या घटित हुआ ।। 74 ।। मस्जिद पहले से संकरी थी । भक्तों की बहुत भीड़ थी । उस पर पिल्ले की गड़बड़ । अब्दुल को पांव रखने में कठिनाई हो रही थी ।। 75 ।। अब्दुल्ला अपने कार्य में दक्ष थे । मिट्टी के दियों पर उनका ध्यान था । उससे पिल्ले की अनदेखी हो गयी । तब विलक्षण प्रकार से घटना घटी ।। 76 ।। अब्दुल्ला तब क्या करता । होनी के आगे उपाय नहीं है । पिल्ले का जो पांव लम्बा किया गया था भूल कर उसके ऊपर पांव पड़ गया ।। 77 ।। पांव पहले से सूजा था उस पर अब्दुल्ला का पांव पड़ गया फिर पिल्ले ने जो शोर मचाया । उनका अन्तःकरण तिलमिला गया ।। 78 ।। एक बार चीख मारी । मस्तक के अन्दर भिनती (प्रवेश करती) सी चली गयी । बाबा से अंजलि जोड़ कर विनती की , करुणा के साथ , उसे सुने ।। 79 ।। नासूर फूट कर बहने लगा । पिल्ले अत्यन्त अधीर चित्त हो गए । एक तरफ आक्रोश करते दूसरी तरफ गाने लगे-

“ **करम कर मेरे हाल पर तू करीम। तेरा नाम रहिमान है और रहीम ।**

तू ही दोनों आलम का सुलतान है । जहा में नुमाया तेरी शान है ।

फना होने वाला है सब कारोबार । रहे नूर तेरा सदा आशकार ।

तूं आसिक का सदा मददगार है । " ।। 80 ।।

रह रह कर असहय दर्द उठता मन तिलमिला कर विकल हो गया । सभी ने अनुभव किया कि यह साई बाबा का खेल था ।। 81 ।। बाबा बोले , “ देखा भाऊ , अच्छा अब गाने लगे । पिल्ले उनसे पूछते हैं वह कौवा अब भी खाने आएगा क्या ।।। 82 ।। तब बाबा बोले , “ तुम जाओ । आराम से वाडा में पड़े रहो । अब कौवा को वापस आकर चोंच मारने की आवश्यकता नहीं है ।। 83 ।। वही क्या आकर चला नहीं गया । वही तो जिसने पांव रखा । वही तो कौवा था , चोंच मारी , उड़ गया , घातक नासूर को दबा दिया ।। 84 ।। कैसा कौवा और चोंच मारना ? कहे के अनुसार होनी को घटित कराया । कौवा अब्दुल्ला के रूप में प्रकट हुआ । वचन को सत्य सिद्ध किया ।। 85 ।। बोल नहीं ब्रह्मलेख हैं । कर्म के ऊपर कील ठोंक देते हैं । अर्थात कर्म को फलित होने वाली गति को रोक देते हैं । थोड़ी ही देर में भाऊ देखो सुख की अनुभूति करने लगे ।। 86 ।। ऊदी लेपन , ऊदी सेवन यही औषधि यही अनुपान । समूल रोग का शमन हो गया , जैसे दसवां दिन उदित हुआ ।। 87 ।। जीवित सात जंतु बारीक तंतु की भांति घाव में से निकले । दुर्धर वेदना शान्त हो गयी । दुःख का

अंत हो गया ।। 88 ।। ऐसा चमत्कार जान कर पिल्लै का अंतर आश्चर्य से भर गया । नेत्र से प्रेम धारा बहने लगी , उनका उत्कृष्ट कृत्य देखकर ।। 89 ।। बाबा के चरण को हथेली में लेकर पिल्लै वहीं चिपक गए । कंठ वाष्प से अवरूद्ध हो गए । ओठो से कोई बात नहीं निकली ।। 90 ।। एक और अनुभव कहकर ऊदी प्रभाव को संपूर्ण करूँगा । जिसके मन जैसा भाव यही ग्रंथ का गौरव ।। 91 ।। माधवराव ज्येष्ठ थे। बापा जी उनके कनिष्ठ बंधु थे । कैसे उन पर अरिष्ट (विपत्ति) आयी , ऊदी से अभीष्ट प्राप्त हुआ ।। 92 ।। ऐसा इस ऊदी का प्रभाव है । उसकी नवलाई का मैं कितना वर्णन करूँ ? ग्रन्थिज्वर आदि सभी रोगों में ऐसी अपूर्व औषधि जैसी दूसरी नहीं है ।। 93 ।। सांऊलविहीर (शिरडी के निकट एक स्थान) में रहते हुए पत्नी को ज्वर आ गया । जांघ पर ग्रन्थि उमड़ आयी । बापा जी का मन घबराया ।। 94 ।। पत्नी को अति हैरान देखकर , कैसा भयानक रात्रि का समय , बापा जी का मन भ्रान्ति पूर्ण हो गया । उनकी हिम्मत छूटने लगी ।। 95 ।। रातोंरात दौड़ पड़े ; कांपते हुए भयभीत शिरडी आए । समस्त बात कही वहां अपने भाई (माधवराव) से ।। 96 ।। बोले , “ दो गांठे आ गयी हैं । ज्वर संतप्त होने से कष्ट में है । चलकर अपनी दृष्टि से उसे देखें । मुझे कहानी अच्छी नहीं दिख रही है ।। 97 ।। बापा जी के दयनीय वाणी से बोलने पर माधवराव जी का मन चौंक गया । मुंह का पानी सूख गया (चेहरा पीला पड़ गया) । मन अस्थिर हो गया ।। 98 ।। माधवराव बहुत विवेकशील थे , ग्रन्थि बोलने पर झटका लगा । ग्रन्थिज्वर की तत्काल अवधि ज्ञात थी ।। 99 ।। अवसर खुशी का हो या कठिनाई का , कार्य इष्ट हो या अनिष्ट पहले साई से पूछने के लिए वार्ता करते । शिरडी की चली आ रही परिपाटी थी ।। 100 ।। फिर वे जैसे जैसे कहते उसी मार्ग का अनुसरण करते । वही संकट का निवारण करते । कितने अनुभवों का वर्णन करें ।। 101 ।। इस प्रकार इस नित्य पाठ के अनुसार माधवराव ने भी विचार करके , पहले बाबा को साष्टांग नमस्कार पूर्वक निवेदन किया ।। 102 ।। बोले , " जय जय साईंनाथ , हम अनाथ पर दया करिए । यह क्या संकट अब आ गया ,अनावश्यक चिंता उत्पन्न हो गयी ।। 103 ।। तुझे छोड़कर और कौन , जिससे याचना करने जाऊँ । उस लड़की की यातना दूर करिए । आशीर्वचन दीजिए ।। 104 ।। इतना संकट हरण करिए । तुम बिन हमारा रक्षक कौन है ? इस दुर्धर ज्वर का शमन करिए । वचन का संरक्षण करिए ” ।। 105 ।। जाने के लिए अनुज्ञा पूछी । तब बाबा उनसे बोले , “**देर रात के समय न जाओ । ऊदी देकर उसके लिए भेजवा दो ।। 106 ।। कैसी ग्रन्थि कैसा ताप । अपने पिता अल्लाह मालिक हैं । अपने आप अच्छा होगा**

। निःसंदेह सुखी होगी ।। 107 ।। तुम सुबह सूर्योदय होने पर मात्र सांऊलविहीर जाकर आना । अभी जाने की शीघ्रता न करो । तुम यहां स्वस्थ रहो ।। 108 ।। कल जाकर आ जाना । निरर्थक कष्ट क्यों उठाते हो ? ऊदी श्रद्धा से लगावें व सेवन (पीना) करें । हम किसलिए डरें " ।। 109 ।। यह सुनकर बापा जी डर गये । वह बहुत निराश हो गए । माधवराव को पत्तियों की औषधि की जानकारी थी । परन्तु इस समय उपयोग नहीं था ।। 110 ।। एक साईं कृपा के बिना औषधि काम नहीं करेगी । यह एक नाजुक प्रतीक माधवराव पूर्णरूप से जानते थे ।। 111 ।। बाबा की आज्ञा का पालन किया । ऊदी भेजवा दी । माधवराव स्वस्थ मन रहे । बापा जी उद्विग्न वापस आए ।। 112 ।। पानी में ऊदी मिलाकर पीने के लिए दिया व अंग पर लगा दिया । पसीना डबडबा कर छूटा । निद्रा लग गयी ।। 113 ।। सूर्योदय होने तक पत्नी ताजगी अनुभव करने लगी , न ज्वर न विषैली गांठ । बापा जी आश्चर्य करने लगे ।। 114 ।। इधर माधवराव उठे , शौच मुखमार्जन पूरा किया । साऊलविहीर जाने के लिए निकले । दर्शन के लिए मस्जिद आए ।। 115 ।। बाबा का दर्शन किया । चरणों में साष्टांग दण्डवत किया । ऊदी समवेत आशीर्वचन मिलने पर वहां से निकले ।। 116 ।। मस्जिद की सीढ़ी उतरते बाबा उनको आज्ञा देते हुए सुने गए , शामा तुरन्त वापस आना । विलंब करने का काम नहीं है ।। 117 ।। भावज कितनी विह्वल होगी । दो ग्रन्थियों की जलन कैसे सह रही होगी । पड़ी हुई तड़प रही होगी । मार्ग में जेठ को चिन्ता हो रही थी ।। 118 ।। बाबा ने कुछ इशारा किया था । क्यों यह तुरन्त वापस आना बोलते । इससे शामा घबरा गए । मार्ग में तेजी से चलने लगे ।। 119 ।। जल्दी - जल्दी साऊलविहीर तक पहुंचने तक धैर्य नहीं था ।। देहली पर पांव रखते ही हृदय चमत्कृत हो गया ।। 120 ।। जिसे गत रात्रि ग्रन्थिज्वर था, चूल्हे पर चाय बनाते देखा । माधवराव का हृदय विस्मित हुआ स्थिति में अन्तर हुआ देखकर ।। 121 ।। तब वे बापा जी से पूछते हैं , यह तो नित्य की भांति कार्यरत है । बापा जी बोले यह सब करामात बाबा की ऊदी की है, निश्चित तौर पर ।। 122 ।। बोले , " मैने आकर ऊदी पिलाई , रगड़ - रगड़ कर शरीर पर लगायी । तत्काल तन में पसीना निकला। आराम से निद्रा लग गयी ।। 123 ।। बाद में जब सूर्योदय हुआ उठकर बैठ गयी तरोताजा । ग्रन्थिज्वर सहित समाप्त हो गयी । यह सब साई का चरित्र है ।। 124 ।। शामा को , ऐसी स्थिति देखकर , तत्काल साईं की उक्ति स्मरण हो आई , " तुरन्त आना तुम वापस " | चित्त को आश्चर्य हुआ ।। 125 ।। जाने से पहले ही कार्य संपादित हो गया । चाय लेकर माधवराव वापस हो लिए | मस्जिद जाकर पहले बाबा

की चरण वंदना की ।। 126 ।। बोले , " देवा ! यह क्या खेल है । तू ही मन में खलबल उत्पन्न करते हो । (अपनी) जगह बैठे हुए तुम ही तूफान मचा देते हो पुनः तू ही निश्चल कर देते हो " ।। 127 ।। बाबा उन्हें उत्तर देते हैं ," **देखो , कर्म की गति गहन है । निश्चित ही कुछ भी न मैं करूं न कराऊँ । मेरे माथे पर कर्तव्य मढ़ दिया जाता है ।। 128 ।। कर्म जो जो भाग्यवश घटित होता है मैं तो वहां साक्षीभूत हूं । कर्ता करवाने वाला तो एक अनंत है । कृपावंत भी वह एक ।। 129 ।। मैं ना देव , ना ईश्वर मैं ना ' अनल हक्क ' न परमेश्वर । यादे हक मैं यादगार हूं । मैं अल्लाह का लाचार बंदा हूं ।। 130 ।। "** अहंकार छोड़कर उसका आभार मानकर उसके ऊपर जो भार डाल देता है उसका बेड़ा पार हो जाता है ।। 131 ।। एक ईरानी था । महत्व का अनुभव सुनें । उसकी छोटी बच्ची की वाणी हर घण्टे - घण्टे पर बन्द हो जाती थी ।। 132 ।। हर घण्टे पर मूर्छा आती तो अकड़ कर उस स्थान पर पड़ जाती , गंभीर बीमारी से वेसुध हो जाती । कोई उपाय कारगर नहीं हुआ ।। 133 ।। बाद में उनके एक मित्र ने उनसे ऊदी के चरित्र का वर्णन किया । बोले , " ऐसी विचित्र रामबाण औषधि अन्यत्र नहीं है " ।। 134 ।। बिना बिलम्ब के पारले जाओ दीक्षित से ऊदी मांगो । उनके पास संग्रह होगा, तो अति उल्लास से देंगे ।। 135 ।। फिर वह ऊदी रोज थोड़ी श्रद्धापूर्वक साईं स्मरण करके पिलाने से मूर्छा चली जावेगी । इस विधि से सुख प्राप्त होगा ।। 136 ।। ऐसा सुनकर फिर वे पारसी दीक्षित के पास से ऊदी मांग कर नित्य नियम से पुत्री को पिलाये । उससे आरोग्य लाभ हुआ ।। 137 ।। घण्टे - घण्टे पर जी घबराता था तत्काल ऊदी के कारण वरी हो गयी । लहर (मोज़) लहर के मध्य का अन्तर सात घण्टे हो गया ।। 138 ।। घण्टे - घण्टे पर आने वाली लहर में सात घण्टे का अन्तर पड़ गया । कुछ समय के बाद समग्र समाप्त हो गया ।। 139 ।। हर्दा के निकट एक गांव में एक वृद्ध गृहस्थ था । किडनी के पत्थर की व्याधि से ग्रस्त था । बहुत त्रस्त हो गया था ।। 140 ।। इस रोग का शस्त्रक्रिया के बिना , अन्यथा इसका निवारण नहीं है । इसीलिए कुछ लोग बोले शस्त्र क्रिया प्रवीण को दिखाओ ।। 141 ।। रोगी बहुत चिंतातुर था । क्या करना है यह निश्चित नहीं कर पा रहा था । शरीर कृश होकर मरणोन्मुख हो गया । अनियन्त्रणीय दुःख सहन नहीं हो रहा था ।। 142 ।। शस्त्र प्रयोग में धैर्य की आवश्यकता थी । रोगी का मन स्थिर नहीं था । भाग्यवश उसके दुर्भाग्य समाप्त हुए । उस आश्चर्य को सुनें ।। 143 ।। इधर यह स्थिति थी उधर गांव का इनामदार साईं बाबा का भक्त गांव आया है, की सूचना मिली ।। 144 ।। उसके पास बाबा की विभूति नित्य रहती है यह सब जानते थे । रोग से

पीड़ित के सगे संबंधी आकर ऊदी के लिए उनसे प्रार्थना किए ।। 145 ।। इनामदार ने ऊदी दिया । पुत्र ने पिता को पानी के साथ पिलाया । पांच मिनट भी नहीं व्यतीत हुआ था कि वहां क्या अद्‌भुत हुआ ।। 146 ।। ऊदी प्रसार जैसे ही शरीर में भिना किडनी स्टोन अपने स्थान से हिला मूत्रद्‌वार से बाहर निकला । तत्काल आराम पड़ गया ।। 147 ।। मुम्बई के एक गृहस्थ जाति के कायस्थ प्रभु थे , प्रसूत समय आने पर स्त्री सर्वदा अति बीमार हो जाती ।। 148 ।। फिर कितना ही उपाय करते एक भी उपचार प्रभावी नहीं होता । बाई का जीव घबरा जाता । बेचारा त्रस्त हो जाता ।। 149 ।। ' श्रीराममारुति नाम से विख्यात एक साईं के भक्त थे, उनसे विचार करके ये गृहस्थ शिरडी जाने के लिए निकले ।। 150 ।। प्रसूति का समय आने पर दोनों महान संकट में पड़ जाते । एक बार मन में निश्चय किया शिरडी में निर्भय होने का ।। 151 ।। होनी के न होने का क्या निदान है ? होना है तो वह बाबा के निकट हो । ऐसा संकल्प दृढ़ करके शिरडी में आकर रहे ।। 152 ।। ऐसे ही दोनों कई मास शिरडी में वास करते रहे । पूजा , अर्चना , साईं के साथ रहना , दोनों को आनंद था ।। 153 ।। ऐसा कुछ समय व्यतीत हुआ । प्रसूति का समय निकट आ गया । प्रबल चिंता उत्पन्न हुई कैसे यह संकट टलेगा ।। 154 ।। ऐसे बोलते बोलते प्रसूति का दिन आ गया । गर्भ द्‌वार का मार्ग अवरूद्‌ध था सभी विचार में पड़ गए ।। 155 ।। बाई को यातना होने लगी । क्या करे कुछ सोच नहीं पा रहे थे । ओठों से बाबा की प्रार्थना करते । उनके अतिरिक्त किसे करुणा आवेगी ।। 156 ।। पड़ोसिनें दौड़ती आयीं । बाबा से प्रार्थना करते हुए एक ने प्याले में पानी डाल कर ऊदी मिलाकर पिला दी ।। 157 ।। पांच मिनट जाते न जाते उस बाई को छुटकारा मिल गया । गर्भ स्थिति निर्जीव दिखी । गर्भस्थ शिशु चेतना विहीन था ।। 158 ।। इस प्रकार यह गर्भ की कर्मगति थी । पुनः गर्भ प्राप्ति होगी । बाई भय निर्मुक्ति पा गयी | सुख की स्थिति को प्राप्त हो गयी ।। 159 ।। वेदना रहित गर्भ गिर गया । हाथ पाव सुख से ढीले हो गए । महान चिंता का समय टल गया । जन्म की ऋणी हो गयी ।। 160 ।। अगला अध्याय इससे भी मधुर है । सुनने से श्रोताओं की इच्छा पूरी होगी । चिकित्सकपन की बुरी आदत का निवारण करेगी । भक्ति से मुक्ति होगी ।। 161 ।। “ हम निराकार की उपासना करते हैं । हम दक्षिणा नहीं देंगे हम मान (सिर) को झुकाएंगे नहीं । तभी दर्शन के लिए आऊंगा । " ।। 162 ।। ऐसा जिसने निश्चय किया था वही साईं के चरण देखते ही , दक्षिणा सहित शरीर साष्टांग किया । यह क्या चमत्कार है ।।163।। ऊदी की भी अपूर्व महिमा , भक्ति प्रेम से नेवास्कर द्‌वारा कैसे भुजंग को दूध

पिलाया गया, गृहस्थ धर्म का संरक्षण करने के लिए ।। 164 ।। यह और ऐसी उत्तम कथा सुनने से भक्ति प्रेम उपजेगा । संसार के दुःख का उपशमन होगा । उससे अधिक परम सुख क्या है ।। 165 ।। इसलिए हेमाड विनती करते हैं । साईं चरणों में प्रणाम करते हैं । श्रोताओं को प्रेम देने के लिए स्वयं को सच्चरित में रमाये रखने के लिए ।। 166 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साई समर्थ सच्चरित ” में “ ऊदी महिमा " नामक चौतीसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्रीसद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय पैंतीसवां (चिकित्सा खंडन-विभूति मंडन)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

पहले गत अध्याय के अंत में दिग्दर्शित कथा के अनुक्रम में उन्हीं कथाओं को वर्तमान में कहूंगा । स्वस्थ चित्त हो उन्हें सुनें ।। 1 ।। परमार्थ पर विचार करने में पंथाभिमान भयंकर कठिनाई है । इस अभिमान के समान अति दुर्धर विघ्न दूसरा नहीं है ।। 2 ।। **हम निराकार के उपासक हैं । हां , साकार देव भ्रम मूलक है । साधु संत , ये मानव ही हैं , देखो । उनके आगे क्या मस्तक नमाना ।। 3 ।। उनको साष्टांग दण्डवत नहीं करना है । उन्हें दक्षिणा दान नहीं देना है । सिर को थोड़ा भी नहीं झुकाना है ; यह भक्ति की विडम्बना है ।। 4 ।। शिरडी के सम्बन्ध में कुछ , कोई कुछ , बातें कही जाती हैं, देखो । सभी निश्चित रूप से विश्वसनीय नहीं होती हैं।। 5 ।। कहते हैं वहाँ दर्शन के लिए जाने पर साईंबाबा दक्षिणा मांगते हैं । जब साधु द्रव्य संपादन में लग जाता है , वह साधु की हीनता है ।। 6 ।। अंध श्रद्धा अच्छी नहीं है । प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करने के उपरान्त अपने अन्तर्मन में निर्णय करूँगा किस प्रकार का बर्ताव करना है ।। 7 ।। अपने को दक्षिणा नहीं देनी है । जिसके मन में वित्त की कामना हो उसका साधुत्व, मन नहीं समझ पाता है । हम उस अपात्र को नमन नहीं करेंगे ।। 8 ।। इस प्रकार हम शिरडी जायेंगे । आकर उनसे भेंट करूंगा । चरणवंदन नहीं करना है , न दक्षिणा प्रदान ।। 9 ।।** जिसने जिसने इस प्रकार कुतर्क प्रारंभ किया , यद्यपि अपने निश्चय के प्रति सजग थे आखिर में वही दर्शन करने पर साई की शरण में आ गए ।। 10 ।। जिस जिसने साई को सीधे देखा वह सभी उसी जगह खड़े रह गए पुनः पीछे नहीं वापस हुए। साई के चरणों में खो गए ।। 11 ।। दातों में तिनका दबाकर जैसे कोई शरण में आता चरण वंदन के बाद वैसे ही उसे अपना निश्चय विस्मृत हो जाता ।। 1 2 ।। जहां पंथाभिमान को पूर्णरूप से शान्त कर दिया जाता है। जीव को अत्यन्त सुख की अनुभूति होती है, उस इस अध्याय को श्रोता सादर सुनें ।। 1 3 ।। वैसे ही ऊदी की ख्याति सूचित है । बाला नेवासकर का अनुभव , कैसे साईं का सांप के प्रति भाव देख कर प्रेम से उसका सम्मान किया ।। 1 4 ।। श्रोता मुझ पर कृपा करें । मैं तो केवल आज्ञा पालक नौकर हूँ

सादर आज्ञा पालन करते जाने से साई सच्चरित के ये अच्छर उत्पन्न होते हैं।। 15 ।। चरणों पर दृष्टि जमाने से उससे उठने वाली पद लहरी से , पवित्र चरित्र के कुंभ में मैं ऊपर तक भर रहा हूँ ।। 16 ।। हम कछुवी के बच्चे हैं केवल दृष्टिक्षेप से पोषित होते हैं -----न प्यास , न भूख , न थकान । सदैव संतृप्त रहते हैं ।। 17 ।। दृष्टि का एक सुख होते हुए, हमें अन्न जल की आवश्यकता नहीं होती है । दृष्टि प्यास व भूख हर लेती है । कैसे उस कौतुक का वर्णन करें ।। 18 ।। हमारी भी सकल दृष्टि का विषय कृपासिन्धु साईराम हैं, दृष्टि द्रष्टा व दर्शन की त्रिपुटी वहाँ समाप्त हो जाती है ।। 19 ।। वैसे ही हमारी त्वचा व स्पर्श दोनों ही स्थान पर साईं प्रकाश है । या घ्राण व वास हो वहाँ भी साईं का निवास है ।। 20 ।। अथवा कानों में शब्द पड़े , पड़ते ही साईं का रूप प्रकट होता है । श्रोत्र का विषय , श्रावक व श्रवण उड़ जाते हैं । त्रिपुटी तुरंत झड़ जाती है ।। 21 ।। अथवा जहाँ रसना रस घोलती है वहाँ साईं समरस हो जाते हैं । रसना , रस व रसास्वाद कैसे । बेचारी त्रिपुटी रहस्यमयी ।। 22 ।। यही गति कर्मेन्द्रियों की है । वे भी एक साई की सेवा में लग जायें सकल कर्म विलय हो जायेंगे , नैष्कर्म्य स्थान पर प्रकट होगा ।। 23 ।। इस तरह अब ग्रंथ लम्बा हो रहा है, साई प्रेम में कहाँ बह गए । पूर्व कथा के क्रम को ध्यान करते हैं अपने कथा भाग को चलाते हैं ।। 24 ।। एक मूर्ति पूजा से विमुख निराकार का परम भजक शिरडी जाने के लिए उत्सुक हुआ , केवल जिज्ञासा के कारण ।। 25 ।। बोले , " मैं शिरडी आकर केवल साधु का दर्शन प्राप्त करूंगा । मैं कभी सिर नहीं झुकाऊं , न दक्षिणा प्रदान करूँ " ।। 26 ।। ये दोनों शर्ते मानेंगे तभी उस शिरडी को आऊँगा । अपने मित्र के ' अच्छा " कहने पर स्वस्थ मन से संग जाने के लिए निकले।। 27 ।। काका महाजनी , उनके मित्र , संत के लिए जिनकी भावना पवित्र थी, किन्तु उनके मित्र शंका - कुशंका के पात्र थे ।। 28 ।। दोनों शनिवार को निकले मुंबई से रात्रि के प्रहर । रविवार को सुबह शिरडी के अन्दर पहुंचे ।। 29 ।। दोनों मस्जिद गए । साई दर्शन करने के लिए । उस समय क्या घटित हुआ स्वस्थ मन से सुनें ।। 30 ।। सीढ़ी पर पांव रखते ही उनके मित्र को दूर से देखते ही , " क्यों आए हैं जी " इस प्रकार बाबा ने मधुर स्वर में पूछा ।। 31 ।। ये प्रेम वचन सुनकर उनके मित्र संकेत को पहचान गए । शब्दोच्चारण का तरीका उन्हें पिता का स्मरण करा गया ।। 32 ।। " क्यों आए हैं जी " यह उच्चार करते बाबा ने जो स्वर निकाला उसे सुनकर काका के मित्र का अन्तर (हृदय) विस्मित हो गया ।। 33 ।। मोहक स्वर का तरीका सुन कर स्वर्गीय पिता का स्मरण हुआ । उन्हीं के स्वर की तरह पूर्णता से । यथार्थ अनुकरण लगा ।। 34

।। क्या वाणी की मोहक शक्ति थी । काका के मित्र विस्मित चित्त थे । बोले ये मेरे पिता के बोल हैं , ये स्वर निश्चित पहचान रहा हूँ ।। 35 ।। पिता के मुख की जैसी इस वाणी को सुनकर उनके मित्र का हृदय द्रवित हो गया । बाबा के चरणों में सिर से वंदन किया पूर्व निश्चय को विसारते हुए ।। 36 ।। फिर बाबा ने दक्षिणा मांगी । वह भी केवल काका से । काका ने दी , दोनों वापस गए । पुनः दोपहर बाद गए ।। 37 ।। तब भी वे साथ गए । दोनों का मुंबई जाना था । काका ने तब आज्ञा हेतु प्रार्थना की । बाबा ने उनसे दक्षिणा मांगी ।। 38 ।। वह भी केवल काका के पास से । बोले मुझे सत्रह रुपये दो । उनके मित्र से कुछ नहीं मांगा । फिर उनके मन में खिन्नता (ग्लानि) हुई ।। 39 ।। तब वे काका से धीरे से पूछे , तुम से ही क्यों दक्षिणा मांगी , सुबह भी तुम्हीं से , अब भी तुम्हीं से मांगे " ।। 40 ।। मैं तुम्हारे साथ हूं दक्षिणा के लिए मुझे क्यों छोड़ दिया । काका ने धीरे से उत्तर दिया , " यह बाबा से पूछो " ।। 41 ।। अचानक बाबा काका से पूछे , " वह क्या पूछ रहे हैं तुमसे । तब स्वयं उनके मित्र बाबा से पूछते हैं , " दक्षिणा देने को बोलते हैं क्या ।। 42 ।। तब बाबा उत्तर देते हैं , "तुम्हारा मन देना नहीं चाहता था , इसलिए तुमसे नहीं मांगा । देने का मन हो तो दो " ।। 43 ।। बाबा मांगते भक्त देते । उनके ये मित्र दोष मानते हुए अवमूल्यन करते । वही बिना मांगे जब देने के लिए बोले तब काका आश्चर्य से भर गए ।। 44 ।। बोलने पर कि चित्त में हो तो दो उनके मित्र ने शीघ्रता की , सत्रह रुपये की भरपाई चरणों में की बिना मांगे ।। 45 ।। बाबा फिर उनसे बोले , " जाइयेगा , एक क्षण बैठिए " । मधुर उपदेश किया सभेदात्मता को समाप्त करने के लिए ।। 46 ।। "तुम्हारे हमारे मध्य "तेली" की भीत (दीवार) है । पूर्ण रूप से गिरा दो । फिर मार्ग प्रशस्त होगा आस पास भेंट करने के लिए ।। 47 ।। फिर आज्ञा दी । माधवराव ने प्रार्थना की , आकाश को बादलों से आच्छादित देखकर , बरसात आते ही भीग जायेंगे ।। 48 ।। बाबा उनको प्रत्युत्तर दिए । उन्हें सहज मन से जाने दें । बरसात का कुछ भी भय उन्हें मार्ग में नहीं है ।। 49 ।। साईं चरणों की अभिवंदना करके जैसे ही दोनों गाड़ी में बैठे बिजली चमकी , घना कोहरा हो गया गोदावरी का पानी बढ़ कर जोर मारने लगा ।। 50 ।। आकाश गड़गड़ा कर गरजने लगा । मार्ग में नौकागमन आ गया । काका के मन में पूर्ण विश्वास था , बाबा का आश्वासन होने के कारण ।। 51 ।। उनके मित्र को चिंता हुई कैसे सुखपूर्वक प्रवास होगा । मार्ग में कष्ट हुआ , व्यर्थ में आने के लिए निकल पड़े ।। 52 ।। इस प्रकार आगे वे सुख पूर्वक गए । अग्निरथ पर आरूढ़ हुए । मेघ फिर वहां से बरसने लग। निर्भय मुंबई पहुंचे ।। 53 ।। आगे

जब घर आए । खिड़की व दरवाजे खोलकर देखा , बन्द हो गयी गौरैया उड़ गयी , दो मरी हुई मिली ।। 54 ।। ऐसा दृश्य देखकर मन को बहुत बुरा लगा । अन्न पानी के बिना बेचारे जीवों की मृत्यु हो गयी ।। 55 ।। जब शिरडी जाने को निकले थे , यदि खिड़की खुली रहती तो काल की छलांग न पड़ती । बेचारी मेरे हाथों मर गयीं ।। 56 ।। बोले , " अभी जो उड़ी है मानो उसी की चिन्ता थी बाबा को ,इसीलिए आज ही वापस होने की अनुज्ञा देने के लिए राजी हो गए थे । ।। 5 7 ।। नहीं तो वह भी मरती । बिना अन्न के कैसे जीवित रहती । आयु पूरी होने पर उनकी यह गति हुई । निश्चित एक यह बच गयी ।। 58 ।। और इनका एक अनुभव है । वह सुनने के योग्य सुन्दर है । एक पांव की एड़ी में दुःख वे कितने माह तक भोगते रहे ।। 59 ।। शिरडी जाने की घड़ी के पूर्व बहुत माह यह व्याधि भोगते रहे । वहां से वापस होने पर दर्द नहीं रहा । अल्प अवधि में ही समाप्त हो गया ।। 60 ।। ऐसी और एक दूसरी कथा है । संत का अंत जानते जानते चरणों में माथा रख दिया मन न होते हुए भी । उसे सुनें ।। 61 ।। वैसे ही दक्षिणा नहीं देना था , मोहपाश में फंस गए । अपना दृढ़ निश्चय भंग किया,दक्षिणा देने में कैसे उन्होंने ।। 62 ।। ठक्कर धरमसी जेठाभाई मुंबई के रहने वाले सॉलिसीटर , पूर्व पुण्य की शक्ति से साईं से भेंट करने का मन हुआ ।। 63 ।। महाजनी के यही सेठ थे । दोनों में अंतरंगता थी । शिरडी सीधे जाकर प्रत्यक्ष भेंट करने का मन हुआ ।। 64 ।। ठक्कर जी की गद्दी पर काका मुख्य प्रबंधक थे । निरन्तर छुट्टी लेते । शिरडी की तैयारी करते ।। 6 5 ।। काका क्या तब समय से वापस होते । आठाठ दिन शिरडी में पड़े रहते । कहते साईं की आज्ञा नहीं थी । यह क्या रीति है काम की ।। 66 ।। ये संत के ऐसे कैसे तरीके हैं । व्यवस्था भंग करने का यह आचरण हमें पसंद नहीं है । सेठ शिभागा (होली) की छुट्टी में निकल पड़े साईं का अंत जानने ।। 67 ।। दुर्धर देहाभिमान था अपने शरीर में अपने ऐश्वर्य तथा महिमा का । संत तो मानव समान हैं । किसलिए मान (सिर) झुकाना ।। 68 ।। साईं की अधिकार स्थिति देखकर शास्त्री पंडित जहां अवनत होते वहां बेचारे धरमसी कितना ? उनका क्या निश्चय टिकता ।। 69 ।। किन्तु अंधश्रद्धा अच्छी नहीं होती । यह स्वयं को आश्वस्त करना है । मन में ऐसे निश्चय करके शिरडी की तैयारी की ।। 70 ।। ऊपर एक मित्र का वर्णन किया गया है धरमसी भी उसी रीति काका के साथ निकल पड़े और उनसे बोले ।। 71 ।। " शिरडी जाकर वहीं रहते हो । यह बात इस खेप में नहीं चलेगी । मेरे साथ निश्चित ही वापस आना होगा । यह निश्चितता से जान लें ।। 72 ।। तब काका उनसे बोले । " यह तो मेरे हाथ में नहीं "। तब धरमसी

मार्ग के लिए और एक साथी साथ ले लिए ।। 73 ।। न जाने , काका नहीं लौटे । मार्ग में साथी के बिना नहीं चलेगा । इसलिए और एक तीसरा ले लिए । तीनों शिरडी के लिए निकले ।। 74 ।। जग में ऐसे कितने ही परोपकारी भक्तों की जाति है । उनके संशय की निवृत्ति कराने के लिए बाबा बलपूर्वक पकड़ कर लाते ।। 75 ।। फिर जब वे वापस जाते अपने अनुभव दूसरों से कहते , किसी के हाथ से लिखवाते लोगों को सत्यपथ पर लाने के लिए ।। 76 ।। तात्पर्य यह कि जो कोई जाता दर्शन सुख से तृप्त होता । आरंभ में कैसी भी उसकी वृत्ति अंत में परमानन्द की प्राप्ति होती ।। 77 ।। कहने को अपने पैरों से जाते । क्या उत्सुकता प्रीति नहीं थी । पर वस्तु स्थिति निराली है । कार्य साधते बाबा का ।। 78 ।। बाबा उन्हें स्फूर्ति देते तभी बाहर पांव निकालते । स्वाभाविक वृत्ति को जाग्रत करके उन्हें परमार्थ पर लगाते ।। 79 ।। कौन जाने उनकी कुशलता ? जानने के लिए जाते, नीचे आ जाते । निरभिमान होकर पावों में लोटते, तो सुख का भोग उमंग से करते ।। 80 ।। देव , द्विज व गुरु के द्वार खाली हाथ जाना अच्छा नहीं होता इसलिए दो सेर अंगूर काका ने मार्ग में खरीदा ।। 81 ।। जिसके अन्दर बीज नहीं होता ऐसी भी अंगूर की एक जाति होती है । किन्तु उस समय सबीज प्राप्त हुआ । काका ने खरीद ली ।। 82 ।। इस प्रकार बातचीत करते हुए ये तीनों लोग शिरडी पहुंचे । तीनों साथ - साथ दर्शनार्थ बाबा की मस्जिद गए ।। 83 ।। बाबा साहेब तर्खड भक्त थे । वे भी वहीं उपस्थित थे । सेठ धरमसी निराशा से प्रेरित होकर उनसे पूछते हैं, उसे सुनो ।। 84 ।। " यहां क्या है, क्यों आते हो ? " तर्खड बोले , दर्शन करने के लिए । सेठ बोले , " समाचार सुना है कि यहां तो चमत्कार घटित होता है "।। 85 ।। तब तर्खड उनसे बोले , " यह तो मेरी भावना नहीं है । जैसी जिसके मन में उत्कंठा वह कामना सिद्धि पाता है "।। 86 ।। काका ने सिर चरणों पर रख दिया । अंगूर बाबा को अर्पित किया । बांटने की शुरुआत हो गयी । मंडली जमी हुई थी ।। 87 ।। बाबा ने तब अन्य के साथ धरमसी को भी दिया कुछ । किन्तु वे इस जाति के (अंगूर) पसंद नहीं करते थे । उनको निर्बीज अच्छा लगता था ।। 88 ।। इस अंगूर से उन्हें अरुचि थी आरंभ में समस्या उत्पन्न हुई । कैसे सेवन करें समस्या प्रतीत हुई । मना करना भी मन को भारी लगा ।। 89 ।। इस के अतिरिक्त डाक्टर ने मना किया था , अंगूर धोये बिना मत खाना । स्वयं धोना उचिन नहीं लगा । नानाविधि संशय उठने लगा ।। 90 ।। तत्पश्चात् वैसे ही मुंह में डाल लिया । बीजा (बीज) चूस कर खीसे में रख लेते । वह साधु का पुनीत स्थान था जूठन से अपुनीत नहीं करना चाहिए ।। 91 ।। तब वे सेठ मन में बोले , " साधु

होकर कैसे ये अनजान हैं कि ये अंगूर मुझे पसंद नहीं हैं । बलपूर्वक क्यों मुझे देते हैं ।। 92 ।। ऐसी उनकी वृत्ति उठने पर बाबा ने उन्हें वही और दिया । उन्हें सबीज जानकर हाथ में रख लिया । मुख में धरमसी ने नहीं डाला ।। 93 ।। यह सत्य है कि सबीज अंगूर पसंद नहीं थे किन्तु वे बाबा ने हाथ में दिए थे । धरमसी सेठ के मन में व्याकुल थे किस प्रकार बर्ताव करे ।। 94 ।। मुँह में डालने का मन नहीं हो रहा था । मुट्ठी में जतन से रख लिया था । तब बाबा बोले , “ खाओ रे । सेठ ने आज्ञा स्वीकार की ।। 95 ।। बाबा बोले , " खाओ ' | धरमसी ने मुंह में डाला । वे सब बीजरहित लगे । अति आश्चर्य हुआ ।। 96 ।। ऐसे निर्बीज अंगूर लगते ही धरमसी विस्मित चित्त हो गए । मन में बोले , अजब सत्ता है । क्या इन संतो के लिए असंभव है । " ।। 97 ।। मेरे मन की इच्छा जान कर सबीज व बिना धुले होते हुए भी , साईं मुझे जो जो देते , वे वे बीजरहित व हितकारी होते ।। 98 ।। चित्त वृत्ति थक गयी । जाने की उत्सुकता विस्मृत हो गयी | सभी अंहकार समाप्त हो गया । संत में प्रीति उत्पन्न हो गयी ।। 99 ।। पूर्व संकल्प विलय हो गए । हृदय में साईं प्रेम उत्पन्न हो गया । शिरडी आने की जो उत्कंठा थी दृढ़ संकल्प के समान हो गयी ।। 100 ।। बाबा तर्खड भी वहीं थे । बाबा के पास बैठे थे । बाबा ने उनमें से उन्हें भी कुछ बांटे थे ।। 101 ।। तब धरमसी ने उनसे पूछा , " आपके अंगूर कैसे थे ? बाबा (तर्खड) जब बोले कि सबीज थे । " चित्त अतिशय विस्मित हुआ । 102 ।। इससे यह श्रद्धा बैठ गयी कि वे साधु हैं । दृढ़ करने के लिए कल्पना का स्फुरण हुआ । साधु हो तो इसके बाद काका को उसी जाति (निर्बीज) का दो ।। 103 ।। बाबा बहुतों को बांट रहे थे । पर यह सेठ के चित्त में स्फुरण होते ही काका के पास जुड़ गए । सेठ को आश्चर्य हुआ ।। 104 ।। ऐसा साधुत्व का संकेत , इस प्रकार दूसरे के मन को समझ लेना धरमसी के मन के लिए साई को साधु मानने के लिए पर्याप्त था ।। 105 ।। माधवराव वहीं थे । उन्होंने फिर बाबा से निवेदित किया , " काका के मालिक सेठ हैं ये । बाबा को समझाया ।। 106 ।।“ “ये कहां से काका के मालिक हैं ? उनका मालिक और है । " बाबा ने खरा उत्तर दिया । काका के लिए यह आनन्द दायक था ।। 107 ।। और कैसा आश्चर्य ? अप्पा नामक एक खाना बनाने वाला था वहीं धूनी के पास खड़ा था बाबा उसी पर डाल दिए ।। 108 ।। बोले , " ये सेठ जी यहां तक आए , वे मेरे लिए श्रम नहीं किए , अप्पा के लिए प्रेम उमड़ा है इसीलिए शिरडी आ गए " ।। 109 ।। इस प्रकार ऐसे यह भाषण हुआ धरमसी अपना निश्चय भूल कर अपने आप चरणों पर पड़ गए । फिर वे वाडा वापस गए ।। 110 ।। इस प्रकार मध्यान्ह आरती हुई । घर जाने

की तैयारी चलने लगी । आज्ञा प्राप्त करने की वेला आ गयी । मंडली मस्जिद के लिए निकली ।। 111 ।। धरमसी तब काका से बोले । " मैं तो आज्ञा नहीं मांगता । तुम्ही मांगों तुम्हारे लिए आवश्यक है" । तब माधवराव क्या बोले ।। 112 ।। " काका के लिए सही नहीं है । एक सप्ताह पूरा हुए बिना आज्ञा नहीं होनी है । अपने लिए क्यों नहीं पूछ लेते " ।। 113 ।। फिर ये तीनों जाकर बैठे । माधवराव ने आज्ञा मांगी । बाबा ने कहानी सुनानी आरंभ कर दी । उसे सहज चित्त से सुनो ।। 114 ।। " एक चंचल बुद्धि व्यक्ति था घर में धन धान्य की समृद्धि थी । शरीर में आधि - व्याधि नहीं थी । अवास्तविक समस्याओं से लगाव रखते " ।। 115 ।। बिना कारण बोझ माथे पर वहन करते । इधर - उधर घूमते , मन सहज नहीं रहता । स्टाक खाली करते पुनः मन में तूफान आ जाता । मन की निश्चलता नहीं थी ।। 116 ।। उनकी ऐसी स्थिति देखकर मेरे मन में दया आयी , कहा , " अब उसे एक स्थान पर लगाओ , निश्चितता रखो ।। 117 ।। बिना कारण ऐसा भ्रमण । एक स्थान पर सहज होकर बैठो । " कहानी धरमसी को लग गयी । माना कि ये इशारा अपनी ओर है ।। 118 ।। यथास्थित वैभव होते हुए , यत्किंचित कारण न होते हुए धरमसी सदा चिंता से आक्रांत रहते । बिना कारण सिर पीटते ।। 119 ।। विपुल सम्पत्ति व मान रहते हुए संतुष्टि नहीं थी । काल्पनिक दुःख के पीछे जो गहराई है, उसी में सर्वदा निमग्न रहते ।। 120 ।। साईं मुख से कथा सुन कर सेठ जी का चित्त परम विस्मित हुआ । यह तो अपने मन की अवस्था है । अति सादरता से सुने ।। 121 ।। काका को इतनी जल्दी आज्ञा , करोड़ों में असम्भव घटना । किन्तु वह भी बिना प्रयास मिल गयी । धरमसी का मन सन्तुष्ट हो गया।। 122 ।। काका साथ - साथ निकलें , धरमसी की बड़ी इच्छा थी । वह भी बाबा ने , जाने की अनुमति देकर , पूरी कर दी ।। 123 ।। यह भी सेठ जी का संकल्प था । बाबा ने कैसे संकेत जान लिया । यह भी एक साधु का लक्षण है । धरमसी को विश्वास हो गया इस अद्भुतता का ।। 124 ।। संशय निवृत्ति हो गयी । साईं साधु है यह अभिव्यक्ति हो गयी । जिसके मन में जैसी वृत्ति वैसी ही अनुभूति कराते ।। 125 ।। जिस - जिस मार्ग से जाने की इच्छा करते उस - उस मार्ग पर उसे लगाते । साईं अध्यात्मिक क्षमता को जानकर परमार्थ की प्राप्ति कराते ।। 126 ।। भक्त विश्वास योग्य अथवा टालमटोल वाला है साईं दोनों के प्रति समान रूप से कृपालु हैं । एक को टाल दे, दूसरे को चिपकाले यह कृपालु मां नहीं करती ।। 127 ।। तब वे दोनों जब निकले , पंद्रह रुपये काका से बाबा ने दक्षिणा मांग कर ली, साथ ही काका से बोले ।। 128 ।। " **दक्षिणा के रूप में जिसने मुझे एक रुपया दिया होता है, मुझे उसे बदले**

में गिनकर दसगुना देना पड़ता है ।। 129 ।। मैं क्यों किसी से फोकट में लूं । मैं सभी से बिना अन्तर किए नहीं मांगता । फकीर जिसकी ओर उंगली दिखाता है उसी से दक्षिणा की बात होती है ।। 130 ।। वह भी फकीर जिसका ऋणी है उसी से ' मांगना करता है । देने वाला देना करके बीज बोता है आगे फसल काटकर एकत्र करने के लिए " ।। 131 ।। " वित्त को केवल धर्मद्वार में लगाने से धनवान का हित होता है । धर्म ही एक फल है जिससे वस्तुतः बड़ा ज्ञान लाभ होता है ।। 132 ।। यह वित्त दुःख देता है यदि केवल इच्छित उपभोग में लगाया जाय । व्यर्थ निष्कारण खर्च होता है । धर्म संचित करने की अवगणना (अनदेखी , अवहेलना) करके ।। 133 ।। कौड़ी - कौड़ी करके अरबों रुपया जो जोड़ा उसे पसंदीदा विषयों के स्वार्थ के लिए न जाने दे वही सुखी है ।। 134 ।। ' नादत्तमुपतिष्ठति - ' दिए बिना मिलता नहीं ' यह श्रुति सभी जानते है ; पूर्वदत्त सामने होता है तदर्थ दक्षिणा मांगते हैं ।। 135 ।। रामावतार ' में रघुनन्दन ने अपार स्वर्ण - स्त्रियों का दान किया था , उसके फल स्वरूप कृष्ण को सोलह हजार गुना प्राप्त हुई ।। 136 ।। भक्ति - ज्ञान - वैराग्य हीन जो ऐसा भक्त है वह अति दीन है । उसमें प्रथम वैराग्य स्थापित करते हैं फिर भक्ति ज्ञान देते हैं ।। 137 ।। जो दक्षिणा प्रदान करवाते हैं वह वैराग्य का संकेत है फिर भक्ति पंथ में लगाकर ज्ञान प्रवीण कराते हैं ।। 138 ।। **" मैं फिर क्या करता हूँ एक पट लेता हूँ दस पट देता हूँ । क्रम - क्रम से ज्ञान पथ पर लगाता हूं । "** धरमसी में लोभ उठा ।। 139 ।। अपना पन्द्रह रुपये था । बाबा के हाथ पर रख दिया । पूर्व कृत संकल्प विसर गए । सारा तरीका अपूर्व था ।। 140 ।। लगता है इसके पूर्व लम्बी - लम्बी बकवास व्यर्थ करता था । अच्छा हुआ कि समझ आयी । साधु कैसे होते हैं बोध हुआ । अनुभव से उनके प्रति प्रेम व श्रद्धा की प्रेरणा मिली ।। 141 ।। इस प्रकार मन से विचार किए बिना मैं आकर नमन नहीं करने पर दृढ़ था । वही अपने आप आना हुआ । साधु की करनी अगम्य है ।। 142 ।। अल्लाह मालिक मुख पर निरन्तर रहता है । उनके लिए क्या दुष्कर है । मैं देखने के लिए आतुर था , केवल साधु के चमत्कार ।। 143 ।। अपना प्रण वृथा हो गया । मानव को साष्टांग दण्डवत किया । बिना मांगे दक्षिणा प्रदान की , अपने आप ।। 144 ।। वृथा अपनी सारी बड़ायी । अपने आप हो गया अपना सिर साईं चरणों में पूज्य भाव से समर्पित । दूसरा आश्चर्य क्या हो सकता है ।। 145 ।। साईं की कुशलता का क्या वर्णन करूँ ? यद्यपि यह सब वह स्वयं कर रहे हैं, बाहयरूप में अलिप्तता धारण किए हैं । इससे बड़ा दूसरा आश्चर्य है क्या ? ।। 146 ।। कोई वंदन करे या न करे । दक्षिणा दान दे अथवा न

दे । आनंद कंद दयाधन साईं किसी को अनदेखा नहीं करते ।। 147 ।। पूजित होने पर न आनन्द होता है, अवमानित होने पर न खेद होता है । जहां हर्ष नहीं वहां, विषाद कैसा ? यह उनकी पूर्ण निर्द्वंद्व स्थिति है ।। 148 ।। अतः किसी का कोई भी उद्देश्य हो , एक बार जिसे दर्शन देते हैं, उसकी भक्ति चरणों में जड़ लेते हैं। यह साईं की अद्भुत शक्ति है ।। 149 ।। इस प्रकार बाद में ऊदी प्रसाद पाकर, आशीर्वाद लेकर, निर्विवाद हो वापस गए । साईं की ख्याति अगाध है।। 150 ।। वहाँ से निर्गमन करने के लिए बाबा की आज्ञा आवश्यक होती । उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने पर विघ्नों को निमन्त्रण देना होता ।। 1 51 ।। अपने मन से वापसी करने पर अनुताप (दुःख) और अपमान, मार्ग में दारूण रुकावटें आती , उनका निवारण दुष्कर होता ।। 152 ।। वहां से निकलने की स्थिति जैसे वर्णित है वैसी थी । अपनी भी वैसी ही स्थिति । **" मेरे बुलाए बिना कोई नहीं आता** ।" ऐसा बाबा बोलते ।। 153 ।। मेरी इच्छा हुए बिना देहरी कौन त्याग सकता है । किसको स्वेच्छा से दर्शन होगा , शिरडी आगमन होगा ।। 154 ।। साईं समर्थ कृपामूर्ति हैं उनके अधीन हमारी शान्ति है । उनके चित्त में कृपा का उद्भव होता है तभी दर्शन सम्भव होता है ।। 155 ।। इसी प्रकार वहां गमन - आगमन होता है । जब तक साईं का चित्त प्रसन्न नहीं होगा , ऊदी - प्रसाद के साथ किसी को भी आज्ञा नहीं होगी ।। 156 ।। ' अभिवंदन ' करके आज्ञा मांगने पर ऊदी के साथ आशीर्वचन होता यही निकलने की आज्ञा होती ।। 1 57 ।। अब एक विभूति का अभिनव , अनुभव श्रोताओं के लिए कहता हूँ । फिर नेवासकर का भक्ति प्रभाव , व साईं महानुभाव की कृपा ।। 158 ।। वांद्रा शहर के एक सज्जन उनकी जाति थी ' प्रभु कायस्थ' | रात में सहज नींद नहीं आती थी । प्रयत्न की शिकस्त हो जाती ।। 159 ।। आंखों में निद्रा आयी एकक्षण आंख लगते ही अकस्मात स्वप्न में उनके मृत पिता प्रतिदिन जागृत करा देते ।। 160 ।। पहले की अच्छी - बुरी बातें , गुप्त , आरोपयोग्य व क्लिष्ट विचार गाली व शाप पूर्वक उच्चार करते हुए वाक्प्रहार से उकसाते वे ।। 161 ।। प्रतिदिन ऐसा प्रसंग । प्रतिदिन निद्राभंग होती । कुछ समझ में नहीं आ रहा था । पिछला भोग समाप्त नहीं हो रहा था ।। 162 ।। इससे ये सज्जन यंत्रणा (पीड़ा) में थे उन्हें कुछ उपाय नहीं सूझ रहा था । तब एक साईं भक्त से पूछा कि क्या इलाज करायें ।। 163 ।। हम अन्य उपाय नहीं जानते । साईं महाराज महानुभाव में यदि तुम भी भाव (विश्वास) रखते हो ; ऊदी अपना प्रभाव प्रकट करेगी ।। 164 ।। जैसे - जैसे उनके द्वारा कहा गया , वैसे - वैसे उनके द्वारा किया गया । अनुभव भी वैसे ही आया । दुःख स्वप्न पुनः नहीं पड़ा ।। 165 ।। कर्म - धर्म के

कारण उनके मित्र साईं समर्थ के भक्त थे , ऊदी की विचित्र महिमा का वर्णन किया । उन्हें थोड़ा दिया ।। 166 ।। बोले , " अपने आवास पर जाकर थोड़ी मस्तक पर लगाएं । पुड़िया बांधकर तकिया के नीचे रखें । मन में श्रीसाईं को स्मरण करें । ।। 167 ।। " अन्तर में भक्ति भाव रखें । फिर देखें इस ऊदी का प्रभाव । तत्काल पीड़ा का अभाव करेगी , इसका यह सहज स्वभाव है।। 168 ।। ऐसा होने पर उन्हें रात्रि में गाढ़ी निद्रा आने लगी । दुष्ट स्वप्न समाप्त हो गया , सज्जन को अति आनंद हुआ ।। 169 ।। फिर उनके उस आनंद का क्या पूछना - देखना ? पुड़िया नित्य तकिया के नीचे रखते , नित्य ही , साई का स्मरण करते ।। 170 ।। बाद में बाबा की छवि लाए । गुरुवार आने पर माला अर्पित की । सिरहाने दीवाल पर लगायी । आदर से उनकी पूजा की ।। 171 ।। चित्र का दर्शन करने लगे । गुरुवार को माला समर्पण । नित्य मानसिक पूजन करते , पीड़ा निवारण हो गया ।। 172 ।। ऐसी नियम में निष्ठा चलने लगी , स्थाई अभीष्ट प्राप्त हुआ । निद्रा भंग , दुःख स्वप्न अनिष्ट आदि पूर्व के कष्ट विसर गए ।। 173 ।। यह तो ऊदी का एक उपयोग है । और अद्‌भुत योग कहता हूं । कैसे भी संकट में प्रयोग करने पर वह अभीष्ट भोग देती हैं ।। 174 ।। एक बड़ा भक्त था बालाजी पाटिल नेवासकर । बाबा के लिए शरीर को घिस डाला । लोकोत्तर (विशिष्ट) सेवा करके ।। 175 ।। गांव के अन्दर जाने - आने के , वैसे ही लेंडी (बाग) को जाकर लौटने के, ये बाबा के रास्ते झाड़ने का काम नेवासकर नित्य करते ।। 176 ।। इस सेवा की परिपाटी उनके पीछे भी चालू रही । राधा कृष्णा बाई के हाथों से यह बहुत अलौकिक काम होता रहा ।। 177 ।। वर्ण ब्राह्मण पूर्णरूप से वंद्‌य और यह सेवा ऐसी निंद्‌य , उनके निर्दोष हृदय को कभी यह मूर्खतापूर्ण विचार छू भी नहीं गया । 178 ।। सुबह के प्रहर उठकर अपने हाथ में झाडू लेकर स्वयं ही बाबा के रास्ते स्वच्छ करती । उनकी चाकरी धन्य थी ।। 179 ।। काम निर्मल व तुरन्त होता था । उनके समान और कौन होता । फिर , बाद में कुछ समय व्यतीत होने पर अब्दुल आगे आ गया ।। 180 ।। इसी प्रकार उस पाटिल का महाभाग । संसार में व्यवहार करते हुए संसार से विरक्त थे । कितना उनका स्वार्थ त्याग था , कथा के उस भाग को सुनिए ।। 181 ।। खेत की फसल कट जाने पर समस्त अन्न मस्जिद लाते, वहां आंगन में ढेर लगा देते । बाबा के चरणों में समर्पण करते ।। 182 ।। बाबा को सर्वस्व का धनी मानते हुए । वे जितना देते उतना ले लेते । उतना ही अन्न घर ले जाते , जीवन यापन के लिए ।। 183 ।। महाराज के स्नान करने से , हाथ , पांव , मुंह धोने से नाली से आकर गिरता हुआ पानी बाला पीते रहते ।। 184 ।। नेवासकर के जीवन

पर्यंत यह नियम निरन्तर चलता रहा । आज भी उनका प्रेमल पुत्र यह व्रत चला रहा है, अंशतः ।। 185 ।। वह भी सतत धान्य भेजता है । उसी की ज्वार की भाकर (रोटी) नित महाराज अपने निर्वाण तक चारों वेला खाते रहे ।। 186 ।। इस प्रकार एक बार क्या हुआ, बाला की वार्षिक श्राद्ध आयी । अन्न परसने के लिए तैयार हो गया था, परसने वाले परसने लगे ।। 187 ।। आने वाले अतिथियों का अन्दाज धर के घर में भोजन पकाया गया था । परसते समय अंदाजा हुआ कि संख्या तीन गुनी हो गयी है ।। 188 ।। घरवाली मन में घबराई सासूबाई से फुसफुसाने लगी , फजीहत की बारी आ गयी कैसे समाधान होगा ।। 189 ।। सासू बाई की बहुत निष्ठा थी । साईं समर्थ स्वयं खड़े हैं किसलिए चिंता करनी है । बोली वे , " तुम निश्चिंत रहो । " ।। 190 ।। ऐसे सासू बाई ने आश्वासन दिया । एक मुट्ठी ऊदी लेकर अन्न के प्रत्येक बासन में डाल दिया बासनों को वस्त्र से आच्छादित कर दिया ।। 191 ।। बोली , तू जा खुश होकर परोस । कपड़ा काढ़ कर परोसना पुनः पूर्ववत कपड़ा ओढ़ा देना । यह संकेत दृढ़ता से संभालना ।। 192 ।। " यह साईं के घर का अन्न है । अपना एक भी कण नहीं है । वही करेंगे लज्जा रक्षण | उसमें कमी उनकी होगी ।। 193 ।। इस प्रकार जैसा उनकी सासू का निश्चय था वैसी उन्हें प्रतीति हुई । कुछ एक भी अवरोध नहीं हुआ ; सभी अतिथियों ने एक साथ भोजन किया ।। 194 ।। सभी भोजन करने आए चले गए ,सब पूर्ण हो गया , फिर भी अन्न शेष रह गया , पात्र पूर्ववत भरे रहे ।। 195 ।। इस ऊदी का ऐसा प्रभाव । संतो का यह सहज स्वभाव है, जिसके मन में जैसा भाव उसका अनुभव भी वैसा ।। 196 ।। इस प्रकार ऊदी की महिमा गाते नेवासकर की एक और कथा चित्त में स्मरण हो आयी । उनकी भक्तिमत्ता सुनिए ।। 197 ।। क्या विषयान्तर होगा , एक बार मन में शंका होती है । होती है तो होवे पर उसे प्रसंगानुसार प्रस्तुत करता हूं ।। 198 ।। ऐसा मन में निश्चय करके कथा इस स्थान पर कहता हूं । यदि वह अस्थानी (असामयिक) लगे तो श्रोता क्षमा करेंगे ।। 199 ।। एक बार शिरडी के रहने वाले , जिनका नाम रघु पाटिल था नेवाशा अतिथि के रूप में गए , उनके (बाला जी) घर पर उतरे ।। 200 ।। एक रात जानवर रस्सी से बंधे थे कि एक भुजंग फू फू शब्द करता अचानक गोशाला में प्रवेश किया ।। 201 ।। ऐसा प्रसंग (स्थिति) देखकर सब की मति निष्क्रिय (सुन्न) हो गयी । भुजंग फन करके पूर्णरूप से बैठ गया ।। 202 ।। जानवर परेशान होने लगे । छूटने के लिए जोर लगाकर प्रयास करने लगे । नेवासकर को दृढ़ विश्वास था कि साईं प्रकट हुए हैं ।।203।। अब जानवरों को छोड़ने के सिवाय यहां अन्य उपाय नहीं था । यदि किसी का पांव पड़

गया, तो तबाही आ जायेगी ।। 204 ।। दूर से भुजंग देखा , नेवासकर में हर्ष की तरंग आ गयी । सर्वांग पुलकित हो गए । साष्टांग प्रणिपात किया ।। 205 ।। बोले , साईं की कृपा दृष्टि है , भुजंग के रूप में मिलने आये हैं । वाटी (कटोरी) में दूध भर कर लाए , उस भुजंग के लिए ।। 206 ।। उन बाला जी की क्या वृत्ति थी, जिनके चित्त में अणुमात्र भय नहीं था । सुनिए क्या कहा भुजंग से । सावधान होकर श्रोता सुनें ।। 207 ।। हे बाबा, क्यो फों - फों करते हैं क्यों हमें भय दिखाते हो । यह दूध की कटोरी (वाटी) लीजिए , सहज चित्त से सेवन करिए ।। 208 ।। कटोरी (वाटी) से उसका क्या होता , तपेला भर कर दूध लाए । निर्भय हृदय से आगे रख दिया । सारा भय भावना से है ।। 209 ।। उसके निकट दूध रखकर जाकर बैठ गए पूर्व स्थल पर , न दूर न निकट अद्भुत भुजंग की ओर मुख करके ।। 210 ।। भुजंग का आगमन भय प्रद था । सभी का क्या एक समान मन होता है । सभी स्तब्ध रह गए कैसे यह विघ्न निरसन होगा ।। 211 ।। बाहर आते हैं तो भय कि भुजंग घर के अन्दर चला जायेगा । वहां से बाहर निकालना कठिन होगा । दृष्टि रखे हुए बैठ गए ।। 212 ।। इधर भुजंग तृप्त हो गया , सभी की आंखे बचाकर न जाने किस स्थान पर चला गया सभी को आश्चर्य हुआ ।। 213 ।। फिर वे सारी गोशाला ढूंढ डाले किन्तु यत्किंचित सुराग नहीं लगा । बहुतों का मन स्थिर हो गया । नेवासकर का मन खिन्न था ।। 214 ।। आरंभ में गोशाला में जब प्रवेश किया तब जैसे दृष्टि पड़ी वैसे ही जाते समय नहीं दिखे यही उनका दुःख था ।। 215 ।। बाला की दो स्त्रियां थीं । पुत्र संतति छोटे थे । कभी - कभी नेवशा से दर्शन करने आतीं ।। 216 ।। बाबा उन दोनों के लिए चोली व साड़ी खरीद लेते , उन्हें आशीर्वाद अर्पित करते । ऐसे थे वे भक्त बालाजी ।। 217 ।। इस सच्चरित का मार्ग सपाट है, जहां जहां इसका पाठ वहीं वहीं द्वारकामाई का मठ । साईं भी निश्चित प्रकट होते हैं ।। 218 ।। वहीं गोदावरी तट , निकट शिरडी क्षेत्र , वहीं साईं धूनी के साथ स्मरण करते ही संकट निवारते हैं ।। 219 ।। जहाँ साईं चरित पठन , वहां सदा साई का निवास । श्रद्धापूर्वक चरित्र को बार - बार पढ़ा जाये, तो वे सर्व भाव से प्रसन्न होते हैं ।। 220 ।। साई स्वानंदघन को स्मरण करने से प्रतिदिन उनका नाम जपते रहने पर अन्य जपतप - साधन , धारणा , ध्यान की परेशानी की आवश्यकता नहीं रह जाती है ।। 221 ।। साई चरणों में प्रीति रख कर जो - जो इन साई की विभूति नित्य नियम से सेवन में लाते हैं, उन्हें फल इच्छित प्राप्त होता है ।। 222 ।। धर्म आदि चारों पुरुषार्थ पाकर वे कृतार्थ होते हैं, सकल गुह्य अर्थ प्रकट होता है, स्वार्थ परमार्थ सहित ।। 223 ।। महापाप आदि प्रबल

पाप वैसे ही सभी छोटे - छोटे पाप ऊदी के सम्पर्क से निर्मूल हो जाते हैं ।अंदर बाहर निर्मलता हो जाती है ।। 224 ।। इस प्रकार विभूति धारण करनी चाहिए । भक्त इसकी महिमा जानते हैं । श्रोताओं का भी कल्याण हो, इसीलिए यह विस्तृत वर्णन किया ।। 225 ।। विस्तृत , यह भाषा अर्थहीन है , मैं भी यथार्थ महिमा नहीं जानता । फिर भी श्रोताओं के हित के लिए संकलित अर्थ ही निरूपित किया है ।। 226 ।। इसलिए श्रोताओं से यही प्रार्थना है कि साईं की वंदना करके वे स्वयं अनुभव प्राप्त करें । मेरी इतनी सी बात मान लें ।। 227।। यहां तर्क का काम नहीं है, पूज्य भाव का विशेष काम है । बुद्धि चापल्य उपक्रम की आवश्यकता नहीं है, परम श्रद्धालु की आवश्यकता है ।। 228 ।। श्रद्धाविहीन केवल तार्किक , वाद - विवाद के प्रति उन्मुख व खोज बीन करने वालों को सम्यक संतज्ञान नहीं होता । यह शुद्ध भाविक को मिलता है ।। 229 ।। कथा के अन्तर्गत कम व अधिक सब साईं प्रेरित मानकर दोष दृष्टि से मुक्त होकर साईं सच्चरित को पढ़े ।। 230 ।। साईं परम कृपालु . प्रीति करने वाले , रसिक , वाचक वृंद के चित्त में आकर अपनी मूर्ति स्थापित कर दें , नित्य स्मरण करने के वास्ते ।। 231 ।। कहाँ गोमांतक (गोआ) कहाँ शिरडी । वहां की चोरी की कथा प्रकट की । साई ने साद्यंत सुख व विधि पूर्वक कही । उत्तम कथा आगे है ।। 232 ।। इसलिए हेमाड साईं चरणों में अन्त: करण के साथ मस्तक रखता है । अति नम्रता से श्रोताओं से विनती करता है सादर श्रवण करने के लिए ।। 233 ।। स्वस्ति संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईसच्चरित का " चिकित्साखंडन - विभूतिमंडन ' नामक पैतीसवा अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय छत्तीसवां (साई सर्वव्यापकता तदाशीर्वचन साफल्यता) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

अब गत अध्याय के क्रम में आकर्षक चोरी की कथा का निरूपण है । आश्वासन दिया होता है । उसके लिए ध्यान देना चाहिए ।। 1 ।। कथा नहीं यह स्वानंद जीवन है । पीते ही दारुण तृष्णा बढ़ती है , उसी का शमन करने के लिए कथा के बाद कथन होगा ।। 2 ।। ऐसी रसाल है यह कथा ,जिसके सुनने से श्रोता सुखी होता है । संसार की थकान व व्यथा का निवारण करती है । सुखावस्था लाती है ।। 3 ।। निज हित साधने की कामना जिस सौभाग्यशाली के मन में हो, वे साईं कथा निरूपण का सादर श्रवण करते रहें ।। 4 ।। संत महिमा अपरंपार है । कोई भी वास्तविक वर्णन नहीं कर सकता है । वहां मेरा क्या अधिकार है, यह सत्य मुझे ज्ञात है ।। 5 ।। वक्ता का इतना मैं पन पर्याप्त है। साईं स्वयं ही लघुता लाकर , किसी से अपने गुण का कथन करा लेते हैं , अपने भक्तों को श्रवण कराने के लिए ।। 6 ।। वह ईश्वर रूपी सरोवर के हंस हैं । हंस , सोहं वृत्ति , उदास , ब्रह्म रूपी मोती का सेवन उल्लास के साथ करते हैं । अत्यन्त साहस है जिनमें ।। 7 ।। जिनका नांव - गांव नहीं है । अंगों में अपरंपार वैभव है । क्षणों में रंक से राजा कर देती है जिनकी भृकुटी लीला ।। 8 ।। वह तत्वज्ञानावतार , स्वयं अनुभव करके लोगों को ईश्वर का दर्शन उनकी आंखों से कराते । नाम स्थान से दूर रहते हुए नाना विधि घटनाएं घटाते रहते ।। 9 ।। वे जिस पर कृपा करते उसे विविध रूप दिखाते , अघटित असंख्य घटना रचते । उनके प्रौढ़ प्रताप को सुनिए ।। 10 ।। उन्हें जो जो ध्यान में आंकलित करते हैं अथवा प्रेमल भजन गाते हैं , उनकी कमी बिना दिए दूर हो जाती है । उसे पूर्णता से संभालते हैं ।। 11 ।। अपनी कथाओं के बहुत प्रेमी हैं । इसलिए अनवरत स्मरण कराते रहते हैं, श्रोता व वक्ता को निमित्त बनाकर भक्तों का मनोरथ पूरा करने के लिए ।। 12 ।। परमार्थ पूर्ण कर लिया है। अभिमान व प्रपंच पर पानी डाल दिया है। जिसने हाथ में चक्र लिया है। अनंत प्राणियों का उद्‌धार किया है ।। 13 ।। देश - विदेश में जिसे भजते हैं , जिसका भक्ति ध्वज फड़कता रहता है। दीन दुर्बल को बुलाते हैं सभी की कामना पूरी करते हैं ।। 14 ।। इस प्रकार अब यह पवित्र साईं चरित्र सादर सुनें

। श्रोताओं का श्रोत्र वक्ताओं की वक्त्र (वाणी) सर्वत्र पावन हो ।। 15 ।। गोमांतक के दो गृहस्थ (सज्जन) आए साईं दर्शन के लिए , दोनों साईं चरणों से जुड़ गए दर्शन से आनन्दित होकर ।। 16 ।। दोनों यद्यपि साथ - साथ आए दक्षिणा एक ही से साईं मांगे । बोले पन्द्रह रुपये मुझे दो । वे मांगे वह आनंद से दिए ।। 17 ।। दूसरे के पास से कुछ नहीं मांगे । अपने आप पैंतीस रुपये दिए । साईं ने तत्काल अस्वीकार कर दिया , उन्हें अति आश्चर्य हुआ ।। 18 ।। ऐसे उस समय पर माधवराव वहीं थे । उनकी भेदवृत्ति देखकर साईं से उन्होंने पूछा उसे सुनिए ।। 19 ।। " बाबा ऐसे कैसे करते हो ? दोनों मित्र साथ - साथ आते हैं , एक से दक्षिणा मांग कर लेते हो दूसरे का स्वयं दिया हुआ वापस कर देते हो ।। 20 ।। " संत के पास यह क्या विषमता है । आप स्वयं एक से मांगते हो । स्वेच्छा से कोई देता है तो अस्वीकार कर देते हो , उसको तोड़ देते हो ।। 21 ।। " थोड़ा धन लेने में रुचि है अधिक के प्रति निर्लोभ वृत्ति है। यदि मैं आपकी स्थिति में होता इस रीति से आचरण न करता " ।। 22 ।। " **शाम्या तुझे समझ नहीं है । मैं तो किसी से कुछ नहीं लेता हूं । मस्जिद माई (मस्जिद की अधिष्ठात्री देवता) पुरानी देनदारी मांगती है देने वाला ऋणमुक्त होता है ।। 23 ।। मेरा क्या घर है या मेरा संसार है जो मुझे वित्त की जरूरत होगी । मैं तो सर्व प्रकार से निर्धार हूं ।। 24 ।। किन्तु ऋण , वैर और हत्या कल्प के अन्त तक भी कर्ता से नहीं चुकती । गरज पूरी कराने के लिए देवी से संकल्प कर लेते हैं उद्धार करने के लिए मुझे कष्टप्रद प्रयास करना पड़ता है ।। 25 ।। तुम्हें उसकी चिन्ता नहीं है समय पूरा होने पर अति विनम्रता से प्रार्थना करते हो । भक्तों में जो बिना ऋण के होता है मैं उससे सदा प्रसन्न रहता हूं ।। 26 ।। आरम्भ में यह अकिंचन (गरीब) था । पन्द्रह रुपये देने की मनौती (संकल्प) की , पहिली पगार देवता को देने की । बाद उसे भूल गया ।। 27 ।। बाद में पन्द्रह से तीस हुई , तीस से साठ , साठ से सौ । दोगुना , चार गुना पगार बढ़ी , विस्मरण अत्यन्त बढ़ गया ।। 28 ।। होते होते सात सौ हो गयी अपने कर्मवश यहां पहुंचे तब मैंने अपना पन्द्रह रुपया दक्षिणा के बहाने ऐसे मांग लिया ।। 29 ।। "** एक दूसरी कहानी ।" एक बार समुद्र तट पर फिरते हुए एक बड़ी हवेली के निकट आया । उसके बरामदे में बैठ गया ।। 30 ।। " हवेली का मालिक ब्राहमण था । कुलीन व बहुत धनी था । प्रेमपूर्वक स्वागत किया । यथेष्ट जल व अन्न अर्पित किया ।। 31 ।। वहीं एक अलमारी के पास खासी स्वच्छ सुन्दर जगह मुझे लेटने के लिए दिया । मुझे निद्रा आ गयी ।। 32 ।।निद्रा आते ही सुस्त देखकर , पत्थर खिसकाकर भीत (दीवार) तोड़ दी । मेरी जेब (खीसा) बिना मेरे जाने

काट लिया । मेरा समस्त उसने लूट लिया ।। 33 ।। जागने पर जब ज्ञात हुआ तो एकाएका आंसू बह निकले। रुपये तीस हजार गए । मन अत्यन्त दुःखी हो गया ।। 34 ।। वह सब नोट थे । ऐसा अचानक नुक़सान होने पर मेरे हृदय को झटका लगा । ब्राह्मण उल्टा समझाने लगे ।। 35 ।। अन्न पानी अच्छा नहीं लग रहा था यो ही दीन मुख से पन्द्रह दिन उसी स्थान पर बरामदे में बैठे रहे । ।। 36 ।। पन्द्रहवां दिन पूरा होने पर सवाल करता रास्ते पर फिरता एक फकीर अचानक आया । मुझे रोते हुए देखा । ।। 37 ।। फिर मुझसे दुःख का कारण पूछा । मैनें उससे समस्त निवेदन किया । वह बोला कि निवारण होगा , मैं जैसा बताता हूँ,करने पर । ।। 38 ।। एक फकीर तुझे बताता हूं, उसका ठाव - ठिकाना देता हूं । तुम उसकी शरण में जाओ तो तुम्हारा धन तुम्हें देगा ।। 39 ।। पर मेरे बताए को व्रत की तरह आचरण में लाओ इच्छित अर्थ प्राप्त होने तक प्रिय पदार्थ तुझे त्यागना होगा । उससे तुम्हारा कार्यार्थ सिद्ध होगा ।। 40 ।। ऐसा करते फकीर से भेंट हो गयी मेरा पैसा मुझे मिल गया । फिर मैनें वह वाडा छोड़ दिया । पूर्ववत समुद्र का किनारा पकड़ लिया । ।। 41 ।। मार्ग पर चलते - चलते नाव तक पहुंचे। वहां मुझे प्रवेश नहीं मिला । तब एक अच्छे स्वभाव के सिपाही ने नाव में मुझे स्थान दिया । ।। 42 ।। सुदैव अच्छा होने से नाव दूसरे तीर पर आ गयी । गाड़ी में बैठकर जब घर आया, नेत्रों ने इस मस्जिद माई को देखा “ ।। 43 ।। यहां बाबा की कहानी समाप्त हो गयी । फिर शामा को आज्ञा हुई कि इस पाहुन मण्डली को लेकर जाओ घर पर इन्हें जेवन कराओ ।। 44 ।। इस प्रकार थाली परस चुकने के बाद माधवराव को जिज्ञासा हुई पाहुनों से पृच्छा की । वह कहानी तुम्हें विश्वसनीय लगी क्या ? ।। 45 ।। वास्तव में देखा जाए तो साईं बाबा यहीं स्थायी रूप से रह रहे हैं , न समुद्र , न नाव , न नाविक । उन्हें ये कभी भी नहीं जाने ।। 46 ।। कैसा ब्राह्मण , कैसी हवेली , वृक्ष के नीचे जग बीत गया । कहां से इतनी सम्पत्ति आयी जो फिर चोर चुरा लिए ।। 47 ।। इस लिए यह कहानी जो कही गयी वह भी तुम्हारे आने पर आरंभ की ।इसके बहाने , लगता है , तुमसे संबंधित घटित हुई पूर्व कथा है ।। 48 ।। तब पाहुन भाव विह्वल हो कर बोले कि साईं सर्वज्ञ हैं , परब्रह्म - अवतार निर्बंध हैं , अद्वैत अभेद व्यापक हैं ।। 49 ।। उन्होंने जो अभी कहा अक्षर - अक्षर वह हमारी कथा है । चलें, यह मधुर भोजन समाप्त करके तुमसे सविस्तार कहते हैं ।। 50 ।। बाबा जो - जो बोलते गए वह - वह सब घटित हुआ है । परिचय न होते हुए उन्हें कैसे ज्ञात हुआ । इसलिए यह सब अद्भुत है ।। 51 ।। इस प्रकार भोजन पूरा होने पर , माधवराव के साथ रहते हुए तांबूल

चबाते हुए कथा निरूपण आरंभ हुआ ।। 52 ।। दोनों में से एक बोले , “ घाट (पश्चिमी सहयाद्रि पहाड़ियों) मेरा मूल मुल्क (स्थान) है । पर उस समुद्र पट्टी को देखें ; अन्न - जल का संबंध था ।। 53 ।। उसी लिए गोमांतक तक गए । नौकरी पाने के लिए मन में आया । दत्तात्रेय की , उसके लिए , आराधना की । अत्यन्त आदर से संकल्प किया ।। 54 ।। देवा , " कुटुंब की रक्षा के लिए नौकरी प्राप्त करनी है अतः कृपावंत होकर दीजिए । पांव लगता हूं । " ।। 55 ।। आज से अल्प समय में यदि तूं अपना वचन रखते हो , प्रथम मास में जो प्राप्त होगी समग्र तुम्हें अर्पित करुंगा ।। 56 ।। भाग्य से दत्तात्रेय प्रसन्न हुए अल्प काल में संकल्प पूरा हुआ । पन्द्रह रुपये मेरी पगार आरंभ से मिलने लगी ।। 57 ।।बाद में साईं बाबा ने वर्णन किया वैसे ही मेरी पदोन्नति हुयी । संकल्प का स्मरण समूल बुझ गया । वह मुझे इस प्रकार कराया ।। 58 ।। किसी को लगे कि दक्षिणा दिया । दक्षिणा नहीं वह ऋण अदा किया । इस देनदारी के बहाने मुझे अत्यन्त पुराना संकल्प स्मरण कराया “।। 59 ।। तात्पर्य साईं द्रव्य नहीं मांगते । निज भक्तों को भी मांगने नहीं देते । अर्थ को नित्य अनर्थ मानते हैं । भक्त को उसके मोह में पड़ने नहीं देते ।। 60 ।। म्हालसापति सरीखे भक्त , सदा साईं पदों में अनुरक्त यद्यपि जीविका संकट में चलती रही , उन्हें थोड़ा भी अर्थ जोड़ने नहीं दिया ।। 61 ।। स्वयं साईं लोगों को अनेक बार दक्षिणा के बहाने आयी संपदा बांटते थे पर कभी एक पाई आपदा त्रस्त उन्हें (म्हालसापति) नहीं दिया ।। 62 ।। वह भी बड़े आत्मसम्मानी थे । यद्यपि साईं ऐसे उदार थे , उसके लिए कभी हाथ नहीं पसारा , याचना तत्पर होकर ।। 63 ।। सांपत्तिक स्थिति निकृष्ट थी किन्तु वैराग्य अति उत्कृष्ट था । सर्वदा अल्पसंतुष्ट रहते , गरीबी के कष्ट से दबे होने पर भी ।। 64 ।। एक बार एक दयालु व्यापारी हंसराज नामधारी को म्हालसापति को कुछ देने का मन में हुआ ।। 65 ।। गरीबी का संसार देखकर यथा संभव उपकार करने के लिए कुछ सहायता करने का सहज सुविचार उपजा ।। 66 ।। ऐसी यद्यपि उनकी अवस्था थी । अन्य कोई भी देने जाता उसे भी साईंनाथ नापसंद करते । द्रव्य के प्रति उदासीनता उन्हें पसंद थी ।। 67 ।। फिर उस व्यापारी ने क्या किया ? उस भक्त के लिए मन से द्रवित होकर दरबार में होते हुए दोनों के समक्ष उनके हाथ में द्रव्य रख दिया ।। 68 ।। अति विनीत होकर म्हालसापति उन्हें वापस किये , बोले , “ साईं के आज्ञा के बिना मुझे स्वीकार नहीं है । ।। 69 ।। यह पैसे का भक्त नहीं था , परमार्थ का बहुत भूखा था . शरीर व वाणी से चरणों में लीन । प्रेमल मन का निःस्वार्थी ।। 70 ।। हंसराज ने साई से विनती की । साई एक कवड़ी भी नहीं छुए । बोले ,

भक्तों को द्रव्य भ्रमित नहीं करता । वित्त के वैभव में वह नहीं फसता । ।। 71 ।। इसके बाद फिर दूसरा अतिथि बोला , " मुझे भी संकेत मिल गया । समस्त कथन सुना रहा हू । श्रवण से उल्हास आएगा । ।। 72 ।। " पैंतीस वर्ष तक मेरा ब्राह्मण आलस्य विहीन व विश्वासपूर्ण था । दुर्दैव से बुद्धि भ्रष्ट हो गयी । मेरे धन का हरण उसने कर लिया ।। 73 ।। मेरे घर की भीत के अन्दर अलमारी बनी हुई है । उसी में धीरे से पत्थर खिसका कर बिना पता चले उसमें छेद कर दिया । ।। 74 ।। बाबा जो अलमारी बोले उसी में उसने छेद किया । उसके लिए भीत में पत्थर खिसकाया । सभी निद्रा में पड़े थे । ।। 75 ।। फिर बाबा और बोले , " मेरे रुपये चोर ले गए " , वह भी पूर्ण सत्य से भरा है । नोटों का छोटा बण्डल ले गए " ।। 76 ।। " उसकी कीमत तीस हजार थी । मालूम नहीं बाबा कैसे अवगत हैं श्रम से अर्जित वित्त जाने पर मैं रात - दिन बैठा रोता रहता । ।। 77 ।। शोध करते - करते बुद्धि थक गयी । समझ में नहीं आता क्या गति करें । पन्द्रह दिन तक चिंतित पड़ा रहा उससे निकल नहीं पा रहा था ।।78।। एक दिन बरामदे में अति दुःखी हृदय से बैठा हुआ था । मार्ग पर चल रहा था एक फकीर सवाल करते - करते ।। 79 ।। मुझे खिन्न वदन देखकर , फकीर ने खेद का कारण पूछा फिर मैनें आदि से अन्त तक निवेदन किया । उसने मुझे निवारण बताया ।। 80 ।। कोपर गांव तालुके में शिरडी नामक एक गांव है । साईं फकीर वास करता है । तुम उसके लिए संकल्प करो ।। 81 ।। जो तुम्हें अच्छा लगता हो उसका सेवन वर्जित कर दो , उनसे सत्य बोलो , "तुम्हारा दर्शन होने तक वर्जित करता हूं ।। 82 ।। ऐसा मुझसे फकीर के कहते अन्न वर्जित करने में क्षण नहीं लगा । बोला , " बाबा चोरी (गया धन) मिलने पर , दर्शन होने पर , इसका सेवन करूंगा " ।। 83 ।। फिर एक पखवाड़ा व्यतीत हुआ न जाने क्या मन में आया ब्राह्मण अपने आप आया मेरा धन मुझे दे दिया ।। 84 ।। बोला , " मेरी बुद्धि चली गयी थी । इसी से ऐसा कर्म कर डाला । अब चरणों में सिर रखता हूं । " क्षमा मुझे किया ऐसा कहें । ' ।। 85 ।। इस प्रकार आगे अच्छा हुआ । साईं दर्शन की प्रिय इच्छा उदित हुई । वह उत्कण्ठा भी आज पूरी हो गयी यह भाग्य का योग धन्य है ।। 86 ।। खिन्न होकर , संकट में दुःखी स्वयं बरामदे में बैठे होने पर मुझे सांत्वना देने जो आए थे उनसे पुनः भेंट नहीं हुई ।। 87 ।। जिसके अंदर मेरे लिए इतनी उत्सुकता , जिन्होंने साईं की कहानी बताई , जिन्होंने शिरडी की ओर उंगली दिखाई पुनः उससे भेंट भी नहीं हुई ।। 88 ।। जिससे मेरी अचानक भेंट हुई , जो वाक्पटुता से सवाल करता आया , जो संकल्प कराकर अंत में चला गया ; उससे पुनः भेट भी नहीं हुई

।। 89 ।। वही फकीर वास्तव में लग रहे हैं तुम्हारे अवलिया साईं । हमें निजदर्शन का लाभ देने के लिए स्वयं लालच देकर आकर्षित किए थे ।। 90 ।। किसी की कुछ लेने की लालच हो , मुझे इस दर्शन की इच्छा नहीं ही थी । फकीर ने आरंभ में प्रवृत्ति उत्पन्न की वित्त प्राप्ति के लिए ।। 91 ।। जिसका संकल्प करने से बिना प्रयास वह वित्त प्राप्त हो गया, वह क्या मेरे इस पैंतीस रुपये का लालच करेगा । यह संभव नहीं ।। 92 ।। उल्टे हम अज्ञानी नर है । हमें परमार्थ तत्पर कराने के लिए , हमारे कल्याण के लिए वह निरंतर परिश्रम करते हैं , इस बहाने मार्ग पर लाने के लिए ।। 93 ।। इसीलिए यह अवतार है । नहीं तो हम अभक्त पामर , यह भव कैसे पार होता । स्वस्थ मन से इस पर विचार करें ।। 94 ।। इस प्रकार चोरी गया धन मिलने पर मुझे जो बड़ा हर्ष हुआ । परिणाम हुआ कि व्रत का विस्मरण हो गया । वित्त का मोह दुर्धर होता है ।। 95 ।। बाद में , देखो , एक दिन कुलाबा के बगल में था स्वप्न में साईं को देखा । वैसे ही शिरडी के लिए निकल पड़े ।। 96 ।। समर्थ ने निज प्रवास का कथन किया , नाव में चढ़ने पर मना होने पर सिपाही के प्रयास से वह कठिनाई दूर हुई यह सत्य है ।। 97 ।। यह तो सब मेरी अड़चने थीं । नाव के ठिकाने पर जब पहुंचा , वास्तव में , एक कोई सिपाही ने मेरे लिए खुशामद की थी ।।98 ।। तब ही नाव के अधिकारी ने , आरंभ में यद्यपि मुझे डांट चुका था , मुझे नाव में जगह दी । मैंने उसका आभार व्यक्त किया ।। 99 ।। सिपाही भी बिल्कुल अपरिचित था । बोला उसने कि मुझे जानता है, इसलिए हमें किसी ने नहीं रोका नाव में सुखपूर्वक बैठ गए ।। 100 ।। ऐसी ही नाव की वार्ता वैसी ही उस सिपाही की कथा हमारे सम्बन्ध से घटित हुई थी, साईं ने अपने माथे ले ली ।। 101 ।। ऐसी अद्भुत स्थिति देखकर मेरी मति कुंठित हो गयी है । मुझे लगता है, इस भूत जगत में साईं व्याप्त हैं ।। 102 ।। इनके बिना कोई जगह खाली नहीं है, एक - एक अणु में व्याप्त हैं । जैसा अनुभव मुझे दिया अन्यों को भी वैसा ही देते हैं ।। 103 ।। हम कौन , निवास कहां , हमारे भाग्य कितने गहन हैं कि हमें शीघ्रता से निकट खींच कर इस प्रकार राह पर ला दिए ।। 104 ।। क्या हमसे संकल्प करवाया , क्या हमारा धन चुराया गया , क्या संकल्प पूर्ति की नवलाई है। धन भी मिल गया तुरन्त ।। 105 ।। हमारे भाग्य कितने गहन हैं, जिनका पहले दर्शन नहीं हुआ था , न चिंतन , न श्रवण उसे हमारा स्मरण था ।। 106 ।। फिर उनकी संगति में हैं । वर्षों वर्ष जो जो लीन है , जो जो अहर्निश उन चरणों की सेवा करते हैं , वे भागवत भक्त धन्य हैं ।। 107 ।। जिनके संग साईं खेलते हैं , हंसते हैं , बैठते हैं , बोलते हैं , चलते हैं , जेवन करते है, पहुड़ते

हैं , क्रोध करते हैं वे सब श्रेष्ठ भाग्यवान हैं ।। 108 ।। हमारे हाथ से कुछ नहीं हुआ , इतना हमारा जब ध्यान है तुम तो उनकी संगति में नित्य हो तुम्हारी भाग्य स्थिति धन्य है ।। 109 ।। लगता है तुम्हारी सत्कृति द्‌वारा अर्जित पुण्य ने मनुष्य आकृति धारण कर ली है । तुम परम भाग्यवान हो । यह मूर्ति शिरडी लाए हो ।। 110 ।। अनंत पुण्यों की अभिलाषा हुई , उससे हमें शिरडी मिली । लगता है कि साईं के दर्शन के लिए सर्वस्व समर्पित कर दूं ।। 111 ।। साईं सज्जन स्वयं अवतार हैं । महान वैष्णव सा व्यवहार । सच्चे ज्ञान - वृक्ष के मूल अंकुर (आधार) हैं । ज्ञान रूपी आकाश में सूर्य की भांति शोभायमान हैं ।। 112 ।। अतः हमारी पुण्याई है इसलिए इन मस्जिद माई से भेंट हुई । हमारा संकल्प हमसे पूर्ण कराया साथ ही दर्शन दिया ।। 113 ।। हमारे लिए हमारे दत्ता हैं, इसी से व्रत के करने की वह आज्ञा दी , इसी से हमे नाव में बैठवाया , दर्शन के लिए शिरडी लाए ।। 114 ।। इस प्रकार सर्वव्यापकता , निज सर्वअन्तर्यामित्व, सर्वत्र साक्षीत्व का साईं ने वास्तविक ज्ञान दिया ।। 115 ।। मुस्कारते हुए (सस्मित) मुख को देखकर मन में परम सुख हुआ | प्रपंच में प्रपंचदुःख भूल गए । परमार्थ का हर्ष समा नहीं रहा है ।। 116 ।। जो होना है प्रारब्ध की गति से होवे । ऐसी निश्चित मति होनी चाहिए । साईं चरणों में अखण्ड प्रीति रहे , यह मूर्ति नित्य नयनों में रहे ।। 117 ।। साईं लीला अगाध अगम्य है । उपकार की सीमा नहीं है । लगता है कि तुम्हारे लिए यह शरीर , हे दयालु , न्यौछावर कर दूं ।। 118 ।। इस प्रकार अब एक कथांतर । क्षणभर सावधान हो , साईं मुख से जो अक्षर कहे गए , वे निर्धार ब्रह्मलेख है ।। 119 ।। सखाराम औरंगाबादकर निवास स्थान सोलापुर शहर । पुत्र संतान के लिए आतुर , पत्नी शिरडी पहुंची ।। 120 ।। साई बाबा पवित्र संत उनका अगाध चरित्र सुनकर सौतेले पुत्र के साथ सत्पात्र के दर्शन के लिए आयीं ।। 121 ।। सत्ताईस वर्ष नहाते बीत गए थे पर सन्तान का समाचार नहीं हुआ । देव देवी का व्रत करते थक गयीं निराश चित्त हो गयीं ।। 122 ।। इस प्रकार ऐसी वह सुवासिनी उद्‌देश्य लेकर बाबा के दर्शन के लिए आयीं शिरडी । मन में विचार उत्पन्न हुआ ।। 123 ।। बाबा सदा भक्तजन से घिरे रहते हैं कैसे मुझे एकांत मिलेगा कैसे अपनी हृदय की इच्छा कहूंगी । इसलिए चिंतित हो गयीं ।। 124 ।। मस्जिद खुली है , आंगन भी खुला है , बाबा के इर्द - गिर्द सदा भक्तगण , कैसे एकांत क्षण मिलेगा , दुःख निवेदन करने के लिए ।। 125 ।। वह और उसका पुत्र , नाम जिसका विश्वनाथ , दोनों महीने भर रहे । बाबा की सेवा करते ।। 126 ।। एक बार माधवराव से विनती की । विश्वनाथ अथवा कोई को बाबा के पास न देखकर उन्होंने जो कामना की

वह सुनिए ।। 127 ।। कम से कम आप ही अवसर देखकर , बाबा को शांत व स्थिर देखकर मेरे मन की यह अभिलाषा उनके कान में डाल दें ।। 128 ।। वह जब अकेले हों भक्त परिवार से घिरे न हों तभी यह शीघ्रता से कह दीजिएगा जिससे कोई सुन न ले ।। 129 ।। माधवराव प्रत्युत्तर देते हैं , " मस्जिद तो कभी भी खाली नहीं रहती , कोई न कोई दर्शनार्थी निरंतर आता रहता है । ।। 130 ।। साईं का यह दरबार खुला है यहां किसी को मत जाओ ' नहीं होता । फिर भी यह बात रखकर तुझे बुलाऊंगा , खुलेपन का ध्यान रखते हुए ।। 131 ।। प्रयत्न करना मेरा काम है , यशदाता मंगलधाम (भगवान) है । अन्त में तुझे आराम देंगे चिन्ता का उपशमन होगा ।। 132 ।। तूं मात्र बैठी रहना हाथ में एक नारियल और अगरबत्ती लेकर , सभामण्डल में पत्थर पर , बाबा भोजन करने बैठे तब ।। 133 ।। फिर मैं भोजन समाप्त होने पर जब आनंद वृत्ति देखूगा, तुझे संकेत करूंगा तब ऊपर तुम आ जाना ।। 134 ।। इस प्रकार ऐसे करते - करते समय का योग प्राप्त होता है । एक बार साईं के भोजन समाप्त कर लेने पर , वह (समय की) संधि अचानक आ गयी ।। 135 ।। साईं ने अपना हाथ धो लिया , माधवराव के वस्त्र से पोंछा । आनन्दवृत्ति के मध्य होते वे क्या करते हैं, देखिए ।। 136 ।। प्रेमोल्हास से माधवराव का गालगुच्चा बाबा तब पकड़ लेते हैं । देव - भक्त की ऐसी संधि में प्रेम की वाणी का संवाद हुआ ।। 137 ।। माधवराव ने विनय सम्पन्न किन्तु क्रोध का दिखावा किया विनोद पूर्वक बाबा से बोलते हैं , " यह क्या अच्छे लक्षण हैं ? " ।। 138 ।। " ऐसा शरारती देव नहीं चाहिए , जो गालगुच्चा जोर से पकड़े । मै क्या तुम से अनुबंधित हूं | घनिष्टता का यह फल है क्या ? " 139 ।। तब बाबा प्रत्युत्तर देते हैं , " कभी पूरी बहत्तर(७२) पीढ़ी मैंने तुझे हाथ लगाया क्या रे ? जो हुआ , अच्छा , उसे स्मरण करके देखो " ।। 140 ।। माधवराव ने तब कहा , " हमे ऐसा देव चाहिए जो भूखे को सदैव अभिनव मिठाई खाने को दे ।। 141 ।। तुम्हारा मान मुझे नहीं चाहिए अथवा स्वर्गलोक का विमान , इतना दान मुझे दे दो कि तुम्हारे चरणों में ईमानदारी से ध्यान लगा रहे ।। 142 ।। तब बाबा बोलने लगे , " इसीलिए मैं यहां आया , तुम्हें खिलाने लगा मुझे तुमसे प्रीति हो गयी " ।। 143 ।। इतना होने पर काठ की रेलिंग के पास बाबा अपने आसन पर बैठ गए । माधवराव ने संकेत किया । बाई निज कार्य के लिए सावधान हो गयी ।। 144 ।। संकेत होते ही तत्काल उठी शीघता से सीढ़ियां चढ़ गयी बाबा के संमुख आकर सविनय नम्र हो गयी ।। 145 ।। तत्काल चरणों में श्रीफल अर्पित किया । फिर चरण कमल की वंदना की बाबा ने अपने हाथ से वह नारियल जोर से लकड़ी की रेलिंग पर पटका ।। 146

।। " बोलो शामा यह क्या बोलता है नारियल बहुत गुड़गुड़ा रहा है ।" शामा उस अवसर का लाभ उठा कर क्या बोलते हैं बाबा से ।। 147 ।। मेरे पेट में ऐसी गुड़गुड़ हो । बाई मन में कहती हैं वह ही मन तुम्हारे चरणों में अखण्ड जुड़ जाये । उसकी अभिलाषा पूरी हो ।। 148 ।। उसे कृपा दृष्टि से देखें । वह नारियल उसकी आंचल में रख दो तुम्हारे आशीर्वाद से पेट में बेटा - बेटी उपजेंगे ।। 149 ।। तब बाबा उनसे बोले , "क्या नारियल से बच्चे होते हैं । ऐसी कैसी बेवकूफी की समझ । लोग पागल हो गए हैं । " ।। 150 ।। शामा बोले , ' मालूम है तुम्हारे बोलने का कौतुक । ऐसा अनमोल बोल है तुम्हारा कि उसके पीछे अपने आप बच्चे होंगें ।। 151 ।। परन्तु तुम इस समय भेद कर रहे हो । सच्चा आशीर्वाद नहीं दे रहे हो । बिना कारण बैठकर वाद - विवाद कर रहे हो उसे नारियल - प्रसाद दो " ।। 152 ।। " नारियल फोड़ " बाबा बोले , " आंचल में रखो " शामा बोले । ऐसे ही हुज्जत होती रही तब बाबा हार गए ।। 153 ।। बोले , " जा रे बच्चा होगा ।" शामा बोले , " कब , उत्तर दो ।" बोले , " बारह महीने बाद " | नारियल पटक कर फोड़ दिया ।। 154 ।। आधा भाग दोनों ने सेवन किया । आधा शेष बाई को दिया । माधवराव बाई से बोले , " मेरे बोल की तू साक्षी है ।। 155 ।। बाई तूने आज से बारह माह पूर्ण होते पेट से संतान न पैदा किया तो मैं क्या करूंगा वह सुन " ।। 156 ।। ऐसे ही नारियल सिर पर फोड़ूंगा। इस देव को मस्जिद से यदि न बाहर कर दिया तो माधव न कहलाऊं ।। 157 ।। ऐसे देव को मस्जिद में रहने नहीं दूंगा । निश्चित कह रहा हूं । समय आने पर इसकी अनुभूति निर्धार निश्चित ही मानो ।। 158 ।।" ऐसे आश्वासन मिलने पर बाई मन में सुखायमान हुई पावों में साष्टांग दण्डवत किया । स्वस्थ मन अपने गांव गयी ।। 159 ।। शामा को नित्यांकित देखकर , भक्त के मनोगत की रक्षा करते साईं जो प्रेम रज्जु से नियंत्रित है उन्हें किचित क्रोध नहीं आया ।। 160 ।। भक्त वचन को सत्य करने के लिए करूणा घन , प्रणतपाल , साईं दयाल भक्त के आश्वासन प्यार से पूरा करते ।। 161 ।। शामा अपना लाड़ला भक्त प्यार में युक्त अयुक्त नहीं समझता । संत भक्त संकल्प पूरा करते हैं । यही उनका निज व्रत है ।। 162 ।। इस प्रकार बारह मास होते होते किया गया निश्चय पूरा हुआ । तीन ही महीने बीतते बाई को संतान गर्भ हो गया था ।। 163 ।। भाग्य से पुत्रवती हुई । पांच महीने बाद बालक को साथ लेकर शिरडी आयी । पति के साथ दर्शन के लिए ।। 164 ।। पति ने भी आनंद से साईं समर्थ की वंदना की । चरणों में पांच सौ रुपये अर्पित किए , निज मन में कृतज्ञ हो गए।। 165 ।। बाबा के श्यामकर्ण के लिए, उसके वर्तमान में बसने के स्थान पर, उसकी भीत बंधवाने के काम रुपया

लागाया गया, बाद में ।। 166 ।। इसलिए साईं का ध्यान करो , साईं को स्मरण करें , साईं का चिंतन करो । यही हेमाड का अपना विश्राम है। इधर - उधर दौड़ता नहीं है कहीं ।। 167 ।। अपनी नाभि में कस्तूरी होते हुए किसलिए भ्रमण करे गली - गली । साईं पदों में अखण्ड लीन होकर हेमाड निरवधि सुख पाता है ।। 168 ।। अगला अध्याय इससे भी रसीला है । कैसे बाबा के प्रेमल भक्त मस्जिद से चावड़ी के निकट लाते हैं सरल आनन्द से ।। 169 ।। वैसी ही बाबा की हांडी की कथा है , प्रसाद दान , विनोद वार्ता । अगले अध्याय में श्रोता सुनेंगे । श्रवण से उल्हासता बढ़े ।। 170 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईं समर्थ सच्चरित में “साईं सर्वव्यापकता तदाशीर्वचन साफल्यता ” नामक छत्तीसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्गुरुसाईनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

卐

।। अध्याय सैतीसवां (चावडी वर्णन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

धन्य है साई की कहानी । धन्य है उनका नित्य व्यवहार । क्रिया भी समझ से परे अति अद्‌भुत है । विस्तृत विवरण अकथ्य है ।। 1 ।। उनकी सच्ची कहानी अगाध है । उनका जीवन वृत्त धन्य है । धन्य है उनका वह अप्रतिबंधित तलवार की धार का व्रत ।। 2 ।। कभी ब्रह्मानंद में उन्मत्त , कभी वे निजबोध में तृप्त । कभी सब करते हुए अलिप्त । ऐसी अनिश्चित उनकी स्थिति थी ।। 3 ।। कभी सर्वप्रवृत्ति शून्य होने पर भी वे निद्रा संपन्न नहीं होते । निज स्वार्थ में मन लगाकर निजरूप में सदा सावधान रहते ।। 4 ।। कभी सागर के समान प्रसन्न परन्तु अन्तहीन अगाध व गहन । कौन इस अगाध रूप का निरूपण यथार्थ कर सकता है ।। 5 ।। पुरुषों के प्रति बंधुता धारण किए थे । स्त्रियां उनकी बहिन , माता थीं । सभी को ज्ञात था कि वह सर्वदा ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी थे।। 6 ।। ऐसे के सत्संग में जो मति प्राप्त होगी वह निश्चल स्थिति मृत्यु प्राप्ति तक रहेगी ।। 7 ।। सेवा वृत्ति पर्याप्त हो , चरणों में अनन्य भक्ति जड़ जावे , सर्व भूतों में भगवद् भाव , उसके नाम में अखण्ड प्रीति हो।। 8 ।। उनका एक से एक कृत्य देखकर जो , जो कारण खोजने जाते वे , वे अन्त में कुंठित होकर स्वस्थ चित्त तटस्थ हो कर बैठ जाते ।। 9 ।। कितने ही स्वर्ग सुख के लिए झगड़ते हैं। स्वर्ग की महिमा का अत्यन्त वर्णन करते हैं । वे भूलोक को तुच्छ मानते हैं। कहते हैं यहां मरने का भय रहता है ।। 10 ।। किन्तु अव्यक्त से आकार आता है उसी को व्यक्त स्थिति कहते हैं। पुनः उसी में प्रवेश करने को अव्यक्त , उसी को मृत्यु कहते हैं ।। 11 ।। अधर्म अज्ञान राग द्‌वेष इत्यादि, ये मृत्युपाश हैं , इनका जो उल्लंघन पूर्णरूप से करे उसका प्रवेश स्वर्ग लोक में होता है ।। 12 ।। स्वर्ग . स्वर्ग है , और क्या है उसमें ? उस स्वर्ग लोक में वैराग्य हैं । विराट आत्म स्वरूप देखकर मन दुःख से वर्जित हो जाता है ।। 13 ।। जहां रोग आदि निमित्त नहीं हैं न ही चिंता व्याधि दुःख है । जहां न क्षुधा व तृष्णा की व्याकुलता है । कोई वृद्‌धावस्था के भय से व्यथित नहीं है ।। 14 ।। जहां मृत्यु भय नहीं है ; न ही विधि - निषेध की जोड़ी है । जीव अत्यन्त निर्भय भ्रमण करता है वही दिव्य

स्वर्ग स्थिति है ।। 15 ।। ब्रह्म से लेकर अचल के अन्त तक पूर्ण अचल - चल में वही तत्व वहां अथवा यहां है । नानात्व से विहीन वही एक है ।। 16 ।। उपाधि समन्वित होने के कारण अविद्या मोहित जीव को , संसार धर्म से वर्जित हो तो भी , वही (तत्व) अब्रह्मवत आभासित होता है ।। 17 ।। परब्रह्म मुझसे भिन्न है । वह मैं नहीं हूं मै तो अन्य हूं । ऐसा जिनका भेद ज्ञान है । वे सर्वदा मरणाधीन हैं ।। 18 ।। जन्म के पीछे मरण लगा है । मरण के पीछे पुनर्जन्म । यह संसार चक्र का परिवर्तन चिरंतन (सदा) उसके पीछे लगा है ।। 19 ।। दुष्कर यज्ञ तप दान से प्राप्त किया गया वह नारायण पदस्मृति विहीन है , तो स्वर्ग में रहने का क्या अर्थ ।। 20 ।। केवल विषय भोग का स्थान स्वर्ग भुवन हमें नहीं चाहिए , जहां गोविन्दनामस्मरण न हो , किस कारण उसे (चाहें) ।। 21 ।। स्वर्ग में जाओ चाहे नरक में जाओ विषय सुख में फरक नहीं है । इन्द्र अथवा गर्दभ को देखो । सुख एक ही दिखता है ।। 22 ।। इन्द्र नंदनवन में झूमते हैं , वह भी कूड़े की ढेर पर लुढ़कता है । सुख की तुलना करने पर एक ही दिखता है थोड़ा भी अन्तर उसमें नहीं है ।। 23 ।। जहां से पुण्यक्षय होने पर पतन हो जाता है उसके लिए किस निमित्त यत्न करें । उससे अच्छा यहां का जन्म है । भू लोक का गहन महत्व है ।। 24 ।। जहां आयु कल्प से अधिक है उस ब्रह्मलोक की क्या महानता है ? क्षणभर की ही पूरी आयु हो तो भी भू लोक की और है ।। 25 ।। क्षण भंगुर जीवनकाल में एक क्षण किया गया कर्म, जो सब ईश्वर को अर्पण करके किया गया है, तो अभय स्थान प्राप्त होता है ।। 26 ।। जहां भगवद् भक्त जन नहीं हैं, न हरि गुरु कथा का वर्णन किया जाता है, न संगीत - नृत्य - भगवत्पूजन, उस स्थान का क्या काम ।। 27 ।। ब्रह्म व आत्म के एकत्व का ज्ञान विशेष परम का साधन है । वह तो स्वर्ग से भी गहन है, यह भूलोक उसका स्थान है ।। 28 ।। शरीर , वाणी , मन से पंच प्राण को समर्पण करें , निश्चयात्मक बुद्धि को लीन करें , सर्वस्व के अधीन होकर ।। 29 ।। इस प्रकार सद्गुरु की शरण में जाने पर भवभय की कैसी वार्ता | प्रपंच की किस लिए चिंता, सर्वस्व निवारित होते रहने पर ।। 30 ।। जहां अविद्या का वास है, वहां पुत्र व पशु आदि के बंधन हैं, रातदिन संसार की चिंता है, सुविचार रंचमात्र भी नहीं है ।। 31 ।। अविद्या सबका मूल कारण है, नानात्व का भ्रम उत्पन्न होता है । आचार्य व संस्कृत के शास्त्रों (आगम) से ज्ञान का इसके लिए संपादन किया जाये ।। 32 ।। अविद्या का निवर्तन होने पर नानात्वज्ञान अणुमात्र भी शेष नहीं रहता । उसका जन्म मरण समाप्त हो जाता है, एकत्व विज्ञान इसका मूल है ।। 33 ।। जो अति अल्प भी भेद दृष्टि धारण करता है वह जन्म मरण के कष्ट में

पड़ता है । उसके पीछे विनाश और सृष्टि सदा लगी रहती है ।। 34 ।। ' श्रेय ' जिनका वह विषय है उनका वह निःसंशय ज्ञान है । जिनका विषय केवल प्रेय' है उसका नाम अविद्या है ।। 35 ।। मृत्यु ही बड़ा भवभय है उसी से निर्भय होने के लिए गुरु के दोनों चरणों को मजबूती से धर लो , अद्वय बुद्धि देगा ।। 36 ।। जहां द्वितीय (प्रेय) प्राप्ति के प्रयास है वहीं इस भय का प्रवेश है, अतः जहां रंचमात्र भी भय न हो उस निर्विशेष पद की सेवा करो ।। 37 ।। शुद्ध प्रेम का चन्दन उनके माथे पर लगाएं , भावार्थ रूपी पीताम्बर पहनाएं ; अपने भक्त को विश्वंभर दिखाएंगे ।। 38 ।। दृढ़ श्रद्धा के सिंहासन पर अष्टभाव से पूर्ण मंडित आनंद के अश्रुजल से स्नान कराने पर उसी समय प्रसन्न हो प्रकट होंगे ।। 39 ।। कमर के चारो ओर भक्ति मेखला बांध कर उन्हें स्वाधीन कर लो । सर्वस्व ही प्रीति से अर्पण करके नजर उतारो फिर आरती करो ।। 40 ।। किसी भी कार्य (वस्तु) का पूर्ण विलय अस्तित्व के आश्रय को धरे रहता है । मिट्टी के घड़े को फोड़ा जाय तो आकार की निवृत्ति होती है ।। 41 ।। घट का अस्तित्व लेषमात्र भी नहीं । ऐसा नहीं होता । फूटे हुए घड़े के टुकड़े पुनः स्थान पर लगा दें घड़े की अनुवृत्ति हो जायेगी ।। 42 ।। अतः कार्य का जो पूर्ण नष्ट होना है वह चिरंतन अस्तित्व पर आधारित है । इसलिए किसी का भी देहावसान शून्यत्व में समाप्त नहीं होता है ।। 43 ।। कारण के बिना कार्य नहीं है । यदि व्यक्त अव्यक्त हुआ तो यह सदैव सत्य से अन्वित रहता है । यह सुप्रतीति सर्वत्र है ।। 44 ।। सूक्ष्मता में भी न्यूनाधिक्य है । परंपरा भी यही दर्शाती है । स्थूल कार्य के विलय होने पर सूक्ष्म कारण अवशेष रहता है ।। 45 ।। उसके भी विलय होने पर उससे भी सूक्ष्म अवशेष रहता है । सरल इन्द्रियां - मन बुद्धि की ग्राहकता ग्रहण करने में कमजोर हो जाती हैं ।। 46 ।। तात्पर्य यह कि जहां बुद्धि भी समाप्त हो जाये वहीं मूर्त अमूर्त होकर खड़ा होता है । किन्तु उसका सद्भाव छिपता नहीं है सर्वत्र बराबर झलकता है ।। 47 ।। बुद्धि इच्छा को आश्रय देती है इसलिए उसका विलय होने पर आत्मोदय तत्काल होता है ' अक्षय पद ' वहीं हो जाता है ।। 48 ।। अविद्या , माया , काम , कर्म ही मृत्यु के मुख्य धर्म हैं । इन सब का निरोध होने पर बंधनों का नाश होता है ।। 49 ।। सर्वबंधन का नाश होने पर अप्रयास आत्मा प्रकट होती है , जैसे मेघ के अवकाश पर जाने से रवि स्वयं प्रकाश चमकता है ।। 50 ।। शरीर मैं हूं, धन मेरा है, इसका नाम है दृढ़ देहाभिमान । यही हृदयग्रन्थि का जकड़ना है । माया के दुःख का आह्वाहन है ।। 51 ।। यद्यपि यह देह एक बार मर जाये , कर्मबीज से दूसरा शरीर प्राप्त हो वह बीज पूर्णरूप से समाप्त न होने पर , उसे चुकाने के लिए पुनर्जन्म होता है ।।

52 ।। बीज से पुनः वृक्ष होता है । वासना रूपी बीज से देहान्तर की प्राप्ति होती है । ऐसे ही चक्र की निरन्तर गति है, वासना जब तक निमित्त है ।। 53 ।। इच्छाओं का जब समूल विनाश हो जायेगा , तब हृदय ग्रन्थि साफ हो जायेगी , तभी मर्त्य मनुष्य अमर हो जायेगा । यही उपदेश है वेदान्त (उपनिषदों) का ।। 54 ।। ' अधर्म - धर्म ' के पार की स्थिति जिसका नाम ' विराज ' बोलते हैं । अविद्या , काम का निर्मूलन करने वाली , जहां की थोड़ी भी गति नहीं है ।। 55 ।। वासना का परित्याग ही ब्रह्मानंद का योग है | शब्द - प्रयोग में वह " निरालेख्या " (न लिख पाने योग्य) है , वाणी - प्रयोग में वह- ' अनिर्वाच्य ' (न बोल पाने योग्य) है ।। 56 ।। ' परब्रह्म ' का ज्ञान हो जाने पर वही सकल अनिष्ट की निवृत्ति है । वही मनोवांछित इष्ट की प्राप्ति है, यही श्रुति - स्मृति द्वारा प्रमाणित है ।। 57 ।। " ब्रह्मविद को परम की प्राप्ति होती है यही चरम साध्य ब्रह्मानंद है । उससे आगे क्या अन्य परम है ? जो शोक को पार कर जाये वह ' आत्म' का साक्षात्कार कर चुका है ।। 58 ।। यह संसार सागर तम (अज्ञान) का मूल है । उस पार पहुंचने के लिए ब्रह्मज्ञान एक मात्र उपाय है । सकल प्राप्ति का साधन है ।। 59 ।। पूर्ण श्रद्धा और धैर्य, यह मूर्त उमा - महेश्वर है जिनकी कृपा का हाथ मस्तक पर न होने पर हृदयस्थ विश्वंभर दिखते नहीं हैं ।। 60 ।। गुरुओं के श्रेष्ठ साईं नाथ ने कहा है । जिनके उद्गार अमोध सामर्थ्यवान हैं । " **निष्ठा व थोड़ा धैर्य होना चाहिए महत् ऐश्वर्य प्राप्त होगा"** ।। 61 ।। संपूर्ण दृश्य असत्य मात्र है इतना अवश्य मानना होगा । प्रत्यक्ष स्वप्न दर्शन को लीजिए जागने पर सब अदृश्य हो जाता है ।। 62 ।। जहां तक बुद्धि की पहुंच है वहीं तक आत्म का सद्भाव है । पर जहां सद् व असत् नहीं जाना जा सकता वह तत्व भाव वह आत्मा है ।। 63 ।। सद् असद् आदि प्रतीति से वर्जित , अलिंग , सर्व विशेष रहित वही शब्द शब्दांतर वर्णित , वही गुरुरूप सर्वव्यापी है ।। 64 ।। आत्मा सर्व विशेष रहित है । जरा , जन्म - मरण से परे है । यह पुराण व शाश्वत है सर्वदा अपक्षय से वर्जित है ।। 65 ।। यह नित्य , अजन्मा , पुरातन , गगन जैसे सर्वव्यापी , अनादि और अविच्छिन्न , वृद्धि शून्य , अपरिवर्तनीय है ।। 66 ।। जो अशब्द और अरूप है , अनादि अनंत और अभूप है , अव्यय (अविनाशी) अगंध अरस व अलेप है , कौन स्वरूप का वर्णन कर सकता है ।। 67 ।। किन्तु ऐसा निर्गुण न दिखे , यदि अज्ञानता कारण ज्ञान नहीं होता है , तो ज्ञान से अज्ञानपन को भगा दो । कभी भी न कहो कि आत्मा शून्य है ।। 68 ।। क्या वह परमहंस स्थिति है । श्रीसाई की निज संपत्ति है । काल हाथोंहाथ चुरा लेगा तो क्या फिर दिखेगी ।। 69 ।। धनसुतदारा में आसक्तभक्त ,

की बात रहने दें , विरक्त योगी दर्शन के लिए आते कमलपद पर आसक्त रहते ।। 70 ।। काम - कर्म के बंधन से विमुक्त , सभी इच्छाओं से विनिर्मुक्त , देह घर आदि से विरक्त जग में जो भक्त है वह धन्य है ।। 71 ।। साईं जिसकी दृष्टि के विषय हैं उसे अन्य वस्तु दिखेगी क्या ? साईं के बिना रिक्त स्थान दृश्य जगत में नहीं दिखेगा ।। 72 ।। मुंह में श्रीसाईं का नाम , हृदय में श्री साई का प्रेम, उसे आराम व कुशलता सदा रहेगी । साईं स्वयमेव उसकी रक्षा करते हैं ।। 73 ।। श्रवण की भी वही स्थिति हो। साईं के अतिरिक्त कोई शब्द नहीं हो। घ्राण में साईं की गंध भरी हो । रसना से साईंरस पिघलता हो ।। 74 ।। साईं का क्या सुहास्य मुख था शुद्ध सुख प्रदान करता था । वे धन्य हैं जो उसे देखते थे व अमृतवाणी का सेवन करते थे ।। 75 ।। कल्याण का खजाना , सुख शान्ति का जन्म स्थान , सद् असद् का विवेक रखने वाले व वैराग्यवान सदा अन्दर से सावधान (थे साईं) ।। 76 ।। गोरस से संतुष्ट होकर भी बछड़ा मां के पास से नहीं हिलता । वैसे ही मन को रोकना चाहिए गुरु चरणों में रस्सी से बांधकर ।। 77 ।। गुरु कृपा से अनुरक्त होने के लिए उनके कमल पराग रूपी पद की वंदना करो । करने से हितबोध जागृत होगा । पद - पद पर अनुभव प्राप्त होगा ।। 78 ।। इन्द्रियार्थ में यथेच्छ रमते हुए हृदय में साईंप्रीति रखो | स्वार्थ परमार्थ दोनों में उससे काम (इच्छा) का अन्त हो जायेगा ।। 79 ।। मंत्रसिद्ध यांत्रिक अंजन से , पैर के बल पैदा हुआ व्यक्ति भी , भूमिगत धन दिखाता है । वैसे ही गुरुपद रस से धूसर नयन ज्ञान विज्ञान प्राप्त करते हैं ।। 80 ।। सिद्धों के जो जो लक्षण हैं साधकों के वे ही साधन हैं । साध्य करने के लिए दीर्घ प्रयत्न से अभ्यास विवेक से करना चाहिए ।। 81 ।। दुग्ध के अन्दर घी होता है किन्तु आम्लयुक्त न किया जाये तो न मट्ठा नहीं नवनीत (प्राप्त होगा , उसके लिए भी क्रिया अपेक्षित है ।। 82 ।। मट्था को मथे बिना नवनीत प्राप्त नहीं होता । उसे आग पर पकाए बिना स्वादिष्ट धृत नहीं प्राप्त होता है ।। 83 ।। संस्कार की बलवत्तता चाहिए पूर्वाभ्यास से बुद्धिमत्तता । अभ्यास के बिना चित्त शुद्धता नहीं होती, उसके बिना ज्ञान की दुर्गमता है ।। 84 ।। चित्तवृत्ति निर्मल होगी तभी आत्म प्राप्ति होगी । वह स्वरूप स्थिति जब तक हाथ न आए भगवद् भक्ति नहीं छोड़नी चाहिए ।। 85 ।। आत्मज्ञान का मंदिर उठाने के लिए भगवद्भक्ति का पाया लगता है । चारों मुक्ति (सालोक्य , सामीप्य , सारूप्य , सायुज्य) का कलश चमकता है तथा विरक्ति की ध्वजा फड़कती है ।। 86 ।। रात दिन कीचड़ में लोटते हैं कुत्ते व शूकर विष्टा खाते हैं । विषय भोग वे भी भोगते हैं । क्या ये नरदेह में महत्वपूर्ण है ।। 87 ।। जिससे चित्तशुद्धि हो , जिससे

अखण्ड ब्रह्मसिद्धि हो , पहले वे स्वधर्म आचरण का तप साधना है नरदेह में ।। 88 ।। साधु सेवा मुक्ति का घर है , स्त्री का संग नरकद्वार है , यह पूज्य वृद्धजनों के उद्गार हैं सर्वथा विचार करने योग्य ।। 89 ।। सदा सदाचार संपन्न देह निर्वाह करने के लिए अन्न लेते हैं , गृह , दारा आदि की इच्छा से शून्य ऐसा है जो , धन्य है वह साधु है ।। 90 ।। जो - जो साईं का निरंतर चिंतन करते हैं अनुभूति की नवलाई देखने योग्य होती है । स्वयं साईं उनका ध्यान करते हैं उनसे अनुग्रहीत होकर ।। 91 ।। धन्य है नामस्मरण का महत्व । गुरु भी भक्त का स्मरण करते हैं । ध्याता ध्येय स्थिति में प्रवेश करता है । परस्पर पूर्ण विस्मृति हो जाती है ।। 92 ।। " तुम्हारी करनी तुम्हीं जानो मैं रात दिन तुम्हें रटता हूं "। ऐसी बाबा की प्रेमल वाणी बहुतों को स्मरण रहेगी ।। 93 ।। मुझे ज्ञान कथा नहीं चाहिए एक साईं की गाथा ही पर्याप्त है । कितने ही पाप सिर पर हों, वह हमारे त्राता (तारणकर्ता) है, संकट में ।। 94 ।। यदि परायण नहीं करते हैं, तो उसमें से गुरुभक्ति के प्रकरण नित्य नियम से श्रवण करके श्रोता हृदय में भर लें ।। 95 ।। दिवस में किसी भी प्रहर यदि चरित्र नित्य वाचते हैं, निज गुरुराज के साथ श्रीहरि श्रद्धालु (भक्त) से निश्चित भेंट करेगें ।। 96 ।। जो निरंतर वाचन करेंगे अखण्ड लक्ष्मी घर में वास करेगी । जो कम से कम एक सप्ताह (वाचन) करेंगे उनका दरिद्र दूर होगा ।। 97 ।। ऐसा न कहो कि यह मैं बोल रहा हूं । उससे मन को संशय घेर लेगा । साईं ही मेरे मुख से बोल रहे हैं । क्लिष्ट कल्पना छोड़ो ।। 98 ।। वह सकल गुण की खान है। साईं निज भक्त को कैवल्य दान करते हैं , जिनकी कथा कलियुग के मल को हरने वाली है, श्रोता कान लगाकर सुनें ।। 99 ।। ऐसी ही संत कथा के आगे यह बेचारा स्वर्ग सौख्य क्या है ? कौन उधर झांककर देखेंगें, तुरन्त मिलने वाले पुरस्कार को छोड़कर ।। 100 ।। यह सुख - दुःख तो चित्त विकार है । सत्संग सर्वदा निर्विकार है । चित्त को चैतन्य का आकार दो , सुख - दुःख को रुकने का स्थान नहीं देगा ।। 101 ।। जो सुख, विरक्त को एकांत में , जो भक्त को भक्ति करने में है , वह सुख, इन्द्र हो या चक्रवर्ती , उन्हें कल्प के अंत तक नहीं मिलता ।। 102 ।। प्रारब्ध भोग बलवती है । बुद्धि कर्म के अनुसार उपजती है । पर इस भाग्य को भक्त टालने में तत्पर है ।। 103 ।। भगीरथ परिश्रम करिए , प्रारब्ध कर्म भोग समाप्त नहीं होता । अवश्यभावित्व के योग से छुटकारा असंभव है ।। 104 ।। जैसे ये दुःख अवांछित, वैसे ही सुख भी अकल्पित होता है। संत पहले से ही अवगत होते हैं, देह प्रारब्ध की इस गति से ।। 105 ।। उनके नाम का अखण्ड पाठ ही हमारा व्रत, तप, दान है । समय - समय पर शिरडी जाना हमारा

तीर्थाटन है ।। 106 ।। " साई , साई " नाम स्मरण ही मन्त्र का अनुष्ठान है , यही ध्यान , यही पुरश्चरण है । उनकी अनन्य शरण में जाओ ।। 107 ।। निष्कपट प्रेम से लक्ष्य करके उनकी इतनी सच्ची पूजा करो कि उनकी अतर्क्य लीलाओं का हृदय में अनुभव हो ।। 108 ।। अब यह गन्ने की पिराई जैसी कथा पूरी हुई । हमें तुरन्त गुड़ चाहिए । पूर्व सूचित रसमय कथा सुनने के लिए सभी उत्सुक हैं ।। 109 ।। श्रोता वृंद के ऐसे भाव जानकर सूचित नवल कथा को नियन्त्रित रखूगा, इस ग्रंथ के गौरव , ध्यान के सौष्ठव , को सुरक्षित रखने के लिए ।। 110 ।। काव्य पद बंध व्युत्पत्ति मैं पामर मंदमति नहीं जानता । लेखनी हाथ में पकड़वाकर हाथ धर कर साईं जो लिखवाते हैं , वह लिखता हूँ ।। 111 ।। साईं बुद्धि न देते तो मैं कौन चरित्र लिखने वाला ? उन्हीं की कथा, वह ही बोलने वाले और लिखवाने वाले भी वही ।। 112 ।। अतः अब कथा का क्रम , चावड़ी , हाड़ी प्रसाद का कथन करता हूं, इसलिए कि आश्वासन दिया था । उस कथा निरूपण को सुनिए ।। 113 ।। और कुछ उससे संबंधित अथवा दूसरी कथा जो याद आए वह वह श्रोताओं को सुनाता हूँ , उसे सुनिए ।। 114 ।। साईं कथा की नवलता धन्य है । धन्य - धन्य श्रवण प्रभाव ।। मनन करने से निज स्वभाव प्रकट होता है , साईं चरणों में सद्भाव बढ़ जाता है ।। 115 ।। अब पहले चावड़ी वर्णन , समारंभ का दिग्दर्शन करते हैं । बाबा एक दिन छोड़ कर , नियम से , चावड़ी में शयन करते ।। 116 ।। एक रात मस्जिद में दूसरी क्रम से चावड़ी में । ऐसा यह बाबा का क्रम सतत समाधि पर्यंत चला ।। 117 ।। बाद में 10 दिसम्बर 1909 से चावड़ी में साईं की अर्चना भजन पूजन होने लगी ।। 118 ।। वह चावड़ी का सभारंभ यथामति आरंभ करता हूं । साई कृपा से उत्साहित करेंगे । विश्वंभर पूरा करेंगें ।। 119 ।। चावड़ी की रात आने पर भजन मंडली मस्जिद में आती । भजन दो प्रहर पर्यत मंडप में चलता ।। 120 ।। पीछे शोभायमान रथ , दक्षिणांगी तुलसी वृंदावन , सन्मुख बाबा बैठे हुए , मध्य में भजनार्थी भक्त जन ।। 121 ।। हरिभजन में जिनका आदर होता , ऐसे नर नारी भक्त सभामंडप में तुरन्त मिलकर भजन तत्पर हो जाते ।। 122 ।। कोई हाथ में टाल पकड़ता कोई चिपली, करताल , कोई मृदंग खजरी, ढोल । भजन का कल्लोल चलता ।। 123 ।। साईं समर्थ चुम्बकमणि , निजसत्ता से आकर्षित करते , लोहे की भांति जड़ भक्तों को खींच लाते । बिना उन्हें ज्ञात हुए चरणों में खीच लेते ।। 124 ।। हरकारे आंगन में दीपक जलाते , वहीं कोई पालकी का श्रृंगार करते , द्वार पर तैयार दण्डधारी जय घोष की ललकार करते ।। 125 ।। चौराहे पर सिंहासन, तोरण, आकाश में चमकती ऊंची पताका । नूतन दिव्यतापूर्ण वस्त्र । बालक आभूषण

से श्रृंगारित ।। 126 ।। मस्जिद परिसर में प्रकाशित दीपकों की कतारें , आगनद्वार पर श्यामकर्ण (बाबा का प्रिय घोड़ा) पूर्ण श्रृंगार में विराजमान ।। 127 ।। इसी में तात्या पाटिल आते हैं , मंडली को साथ लेकर । बाबा के पास आकर बैठते हैं , बाबा के साथ निकलने के लिए उद्यत ।। 128 ।। यद्यपि बाबा तैयार होते , तात्या पाटिल के आने तक तात्या की राह देखते, उसी जगह बैठे रहते ।। 129 ।। जब कांख में हाथ डालकर तात्या पाटिल बाबा को उठाते , तभी बाबा वहां से चावड़ी को निकलने के लिए तैयार होते ।। 130 ।। तात्या बाबा को मामा कहते । ऐसा उनका परस्पर प्रेम था । ऐसा उनका आप्तधर्म (जिसकी) उपमा देने के लायक़ नहीं ।। 131 ।। अंग पर नित्य ही कफनी, अपने बगल में सटका दबाए , तमाखू और चिलिम लिए हुए , कंधों पर फड़का डाले हुए ।। 132 ।। बाबा जब ऐसे तैयार रहते . तात्या शरीर पर जरी के बार्डर का सुन्दर शेला डालते , सिर पर ठीक करते हुए ।। 133 ।। फिर बाबा , पीछे की दीवाल की तली में लकड़ी का गट्ठर होता , उसके अग्रभाग को दक्षिण पांव की अंगुली से उस स्थान पर क्षणभर हिलाते ।। 134 ।। वहीं ज्योति जल रही होती , दाहिने हाथ से स्वयं मारकर पहले साईं बुझाते फिर चावड़ी के लिए निकलते ।। 135 ।। साईं जाने के लिए निकलते , वाद्य बजने लगते , चन्द्रज्योति तथा मशालें चारों ओर प्रकाशित होतीं ।। 136 ।। कोई गोल कोई धनुष की आकृति के सिंगे , कोई तुरही कान में फूकते । कोई घंटा, कोई झांज बजाते । ताली बजाने वालों की गिनती नहीं होती ।। 137 ।। मृदंग व वीणा टंकार (झंकार) साईंनाम की गूंज भजन के साथ , पंक्ति में , प्रेम से नर नारी चलते ।। 138 ।। कोई गरुड़ के चित्र की पताका बनाकर जुलूस में चलते , नाचते , कूदते भजन करते, फिर सभी जाने के लिए निकलते ।। 139 ।। सभी अति आनंदित होते । चित्रित पताका लेकर निकलते । घंटे बजते, तुरही फूंकते, जयकार करते, घोड़े के नाचने व शोर मचाने के साथ ।। 140 ।। ऐसे वाजंत्र के शोर में मस्जिद से निकलती सवारी ।सीढ़ी के पास जब बाबा होते चोपदार ललकार लगाते ।। 141 ।। उस स्थान पर , टाल झांज मृदंग का मेला । कोई वीणा , कोई चिपली , लेकर भक्तमण्डली सुखपूर्वक भजन करती ।। 142 ।। शोर गुल में पताका हाथ में पकड़कर भक्त आनंद निर्भर चलते दोनों बाजू दो चवर धारी पंखा करते ।। 143 ।। शेला एकहरा (मफलर) व दुशाला पावों के नीचे मार्ग में फैलाते बाबा का हाथ धर कर चलवाते , उनपर चावर घुमाते ।। 144 ।। तात्या बायां हाथ पकड़ते, म्हालसापति दाहिना हाथ, बापू साहब जोग सिर पर छत्र पकड़ते । सवारी चावड़ी को चलती ।। 145 ।।आगे ताम्रवर्ण का वह घोड़ा , जिसका नाम श्यामकर्ण था , के पावों में घुघरू

झनझनाते , जो सब आभूषणों से मडित था ।। 146 ।। दण्डधारी आगे चलता साईंनाम की ललकार करता , छत्रधारी छत्र पकड़े रहते, चवरधारी चवर चलाते ।। 147 ।। ताश व वाजंत्र बजते । भक्त जयजयकार गरजते । इस प्रकार भक्त वृंद चलते, भालदार प्रेम से पुकारते ।। 148 ।। हरिनाम की एक तेज गूंज , घंटे झांज मृदंग के सुस्वर , सब ताल पर भक्तवृंद गर्जते ललकारते ।। 149 ।। भक्त वृंद भजन में आनंद निर्भर होकर मार्ग में साईं की जय जयकार करते चौराहे पर रुकते ।। 150 ।। घण्टा , झांझ , ढोल , मिलकर बाजे अति तेज आवाज में बजते । साईं नाम की एक ही कल्लोल भजन प्रेमल की मौज से होता ।। 151 ।। सभी नर नारी चलते , सब भजनानंद से भरे हुए , साईं नाम की पुकार करते हुए । अंबर नाद से भर जाता ।। 152 ।। गगन में बाजों की अंतरगर्जना होती । प्रेक्षक समुदाय मन में प्रसन्न होता । चावडी की सवारी ऐसी दर्शनीय होती । भव्य शोभा अनुपमेय होती ।। 153 ।। सुबह - सायं नभ की लालिमा , व तप्त कंचन की प्रभा जैसी वैसी जब चावडी के सन्मुख खड़े होते उनके (श्रीसाईं के) श्रीमुख की शोभा होती ।। 154 ।। उस समय उनके मुख की शोभा ऐसे फैली होती मानो बाल अरुण की प्रभा , केवल चैतन्य का केन्द्र । कौन उस लाभ को टालेगा ।। 155 ।। धन्य उस समय का दर्शन , मुखप्रभा , आरक्तवर्ण , उत्तराभिमुख एकाग्र मन हो जानो किसी को आमन्त्रित करते ।। 156 ।। ताश व वाजंत्र की मिली धुन से महाराज आनंद से भर जाते । दाहिना हाथ नीचे ऊपर करते बारबार वहीं पर ।। 157 ।। फूलों से भरी चांदी की थाली लेकर भक्त प्रवर दीक्षित , उस समय , बार - बार , सभी अंगों पर पुष्प वृष्टि करते ।। 158 ।। साईं के मस्तक पर (सिर पर) गुलाल मिश्रित गुलाब पुष्प काका साहेब दीक्षित प्रेम भक्ति संयुक्त होकर डालते रहते ।। 159 ।। इस प्रकार जब गुलाल युक्त पुष्प कलिका काका डाल रहे होते , घण्टे झांज व टाल को ठोकने से एक ही तेज आवाज वाद्यों की होती ।। 160 ।। ग्रामीण बाबा के भक्त थे । प्रीतियुक्त दर्शन के लिए आते । उस समय मुख अभिनव , अरूणरक्त व सुन्दर स्पष्ट दिखता ।। 161 ।। उस तेज विलास को देखकर देखने वालों के नेत्र खुलकर बड़े हो जाते । प्रेम से मन उल्लसित होता , संसार के कष्ट से निवृत्ति हो जाती ।। 162 ।। अहा ! वह दिव्य अद्‌भुत तेज । शोभित होता जैसे बाल भाष्कर । सन्मुख ताशा की गर्ज होती ; बहुत समय तक खड़े रहते ।। 163 ।। सतत नीचे ऊपर हिलाते दाहिने हाथ , एक ही स्थान पर उत्तर मुख होकर अर्द्‌ध प्रहर तक ।। 164 ।। केतकी के गाभ का पीतवर्ण , किंचित आरक्त , मुख की प्रभा । वह शोभा जिह्वा से वर्णित नहीं हो सकती है । नेत्र ही लाभ का सेवन कर सकते हैं ।। 165 ।। इतना कि

जब संचार होने पर म्हालसापति नाचने लगे, तब भी बाबा की एकाग्र स्थिति देखकर चित्त को आश्चर्य होता ।। 166 ।। दाहिनी ओर भगत (म्हालसापति) खड़े होते हाथ में बाबा का अंचल पकड़े । वायीं ओर तात्या कोटे चलते हाथ में लालटेन लिए ।। 167 ।। क्या मौज का होता वह उत्सव ? भक्तिप्रेम का वह गौरव । उसकी नवलाई देखने के लिए अमीर व बड़े लोग एकत्र होते ।। 168 ।। अपने तेज से परिपूर्ण मुखचन्द्र दमकता हुआ आरक्त । अवर्णनीय शोभा शोभित होती । लोगों के नेत्र आनंद से भर जाते ।। 169 ।। हौले - हौले मार्ग पर चलते भक्त समुदाय दोनों बाजू थाट (ठाट) से ,अत्यधिक भक्तिप्रेम से भीड़ में । स्वानंद की अधिकता से घुटन की अनुभूति करते हुए गला भर जाता ।। 170 ।। अब आने वाले समय में ऐसा उत्सव कोई भी आंखों से नहीं देख सकेगा । वे दिन और वह समय गए । स्मृति ही मन के लिए सन्तुष्टि है ।। 171 ।। वाजंत्री अपार बाजते । मार्ग में जयजयकार करते । चावड़ी में आसन पर लाकर दिव्य उपचार अर्पित करते ।। 172 ।। सफेद तिरपाल बंधा होता । छत से लटकते दीप व झुंबर शोभायमान होते । सीसे में प्रकाश परावर्तन होता । देखने में दैदीप्यमान होता ।। 173 ।। भक्त मंडली सब मिलकर चावडी तक जाकर एकत्र होते । फिर तात्याबा आसन तैयार करते । बाबा को पकड़ कर बैठाते ।। 174 ।। इस प्रकार सुन्दर आसन (व) टेक लगाने के लिए पीछे लम्बा तकिया तैयार होने पर बाबा के स्थापन्न हो जाने पर अंगरखा पहनाते ।। 175 ।। शरीर पर दिव्य वस्त्र डालते। हर्ष पूरित हो पूजा करते । तेज आवाज में आरती करते । हार व पुष्पगुच्छ अर्पित करते ।। 176 ।। सुगंध चन्दन लगाते , साई के हाथ पर सुगन्धित इत्र लगाते । सुन्दर वस्त्र से अलंकृत करते । मुकुट लगाते ।। 177 ।। कभी स्वर्ण मुकुट शोभित होता, कभी सिर पर गहरे रत्न जड़ित पगड़ी चमके, जिसके ऊपर कलँगी तुर्रा लगी होती । कंठ में हीरा व माणिक ।। 178 ।। धवल मोतियों की माला फिर उनके गले में डालते । दिए की रोशनी से चमचमाती निराले पहनावे का तेज ।। 179 ।। सुगंध कस्तूरी रचित काली उर्ध्व रेखा माथे पर खींचते , भाल पर कृष्ण तिलक लगाते जैसे वैष्णव कुल के लोग लगाते हैं ।। 180 ।। वह गहरा वैगनी मखमली भरजरी अंगरखा दोनों कंधों पर , धीरे से पीछे से , अक्सर सरकने पर , दोनों बाजुओं पर यथास्थान कर दिए जाते ।। 181 ।। वैसे ही सिर पर मुकुट की सजावट अथवा पगड़ी के पलटने पर अक्सर पीछे से हौले से पकड़कर , बिना जाने , ठीक कर दिए जाते ।। 182 ।। वह मुकुट हो या पगड़ी स्पर्श होते फेंक देंगें , होती यह प्रबल चिंता यद्वपि, किन्तु प्रेम कौतूहल भी असीम था ।। 183 ।। साईं जो सर्वातर ज्ञानी थे वह क्या भक्तों को यह

छिपाना जानते नहीं थे किन्तु उनका कौतुक देखकर जानबूझ कर मौन धारण किए रहते ।। 184 ।। जो ब्रह्मानुभव में विराजमान है, उसके लिए सोने - चांदी के धागों से जड़ा अंगरखा-आभूषण। जो निज - शांति में शोभायमान है, उसे मुकुट का अलंकरण ।। 185 ।। फिर भी नाना प्रकार से सुरूचि से बाबा का अंलकार होता , माथे पर मनोहर तिलक केशर मिश्रण से रेखांकित करते ।। 186 ।। हीरे मोती की माला कोई वहां गले में डालता , कोई ललाट पर तिलक लगाता । भक्तों की लीला चलती रहती ।। 187 ।। जब सब श्रृंगार चढ़ जाता , मस्तक पर मुकुट विराजित हो जाता, मोती की माला कंठ से चमकने लगती, वह शोभा अद्भुत दिखती ।। 188 ।। नाना साहेब निमोणकर बाबा के ऊपर छत्र लटका कर पकड़े रहते । वह काठी से लगा गोलाकार झालर के साथ फिरता रहता ।। 189 ।। बापू साहेब अति प्रेम से चरण प्रच्छालन करते , अर्घ्य ,पाद्य आदि भाव से अर्पित करते । यथोचित पूजा करते ।। 190 ।। सामने चांदी की थाली रखकर उसमें बाबा के चरण रखकर अति आदर से प्रच्छालन करते, पुनः हाथ में इत्र लगाते ।। 191 ।। फिर केसर की वाटी लेकर हाथ में उबटन लगाते , कर संपुट में तांबूल अर्पित करते , साईं प्रसन्न दिखते ।। 192 ।। बाबा जब गद्दी पर बैठते, तात्याबा आदि खड़े रहते , हाथ धर कर बाबा को बैठाते आदर से उनके चरणों में नमन करते ।। 193 ।। चावडी की निर्मल शुद्ध स्फटिक मढ़ी हुई घुटी हुई भूमि पर बाल - वृद्ध एकत्र होकर श्री के चरणों से प्रेम पूर्वक बंधे हुए मिलते ।। 194 ।।गादी पर विराजमान होकर, तकिया से टेक लगाकर बैठते । चवरी - चामर घुमाया जाता । दोनों बाजू पंखे चमकते ।। 195 ।। माधवराव तमाखू मसलते , तत्काल चिलिम तैयार करते । तात्याबा के हाथ में देते । तात्याबा आरंभ में फूंकते ।। 196 ।। तमाखू से ज्वाला निकलने पर तात्याबा बाबा के हाथ में देते । बाबा प्रथम सुडुक लेकर फिर भगत को दे देते ।। 197 ।। फिर वह चिलम समाप्त होने तक यहां से वहां तक गोलाई में भगत शामा तात्या तक बराबर निरन्तर घूमती रहती ।। 198 ।। किन्तु वह निर्जीव वस्तु धन्य थी । कितना बड़ा भाग्य था उसका, हम सजीव उसके सरीखे नहीं हैं । उसकी सेवा खरी थी ।। 199 ।। तपश्चर्या भी महाकठिन । बालकपन में लात से रौंदी गयी । फिर शीतोष्ण की तपन सहन किया । अग्नि में पका कर निकाली गयी ।। 200 ।। भाग्य से बाबा के कर का स्पर्श हुआ पुनः धूनी में सेंकी गयी । पुनः गेरू की परत चढ़ायी जाती । तब मुख चुंबन प्राप्त होता ।। 201 ।। इस प्रकार कपूर , केशर , चंदन का दोनों हाथों में विलेपन होता गले में पुष्पमाला डाल कर फूल के गुच्छे का घ्राण करवाते ।। 202 ।। जिनका मुख सदा सुहास्यपूर्ण रहता अति सप्रेम सदया अवलोकन

करते , उन्हें क्या श्रृंगार का अभिमान । वह भक्तों का मान रखते ।। 203 ।। जिनके अंग पर भक्ति का आभूषण था , जो शांति भूषण से श्रृंगारित थे , उनको इस लौकिक माला मणि से अलंकृत करने से क्या होता है ? ।। 204 ।। वह जो वैराग्य के पुतला हैं उनके लिए पन्ना मणि की माला किस काम की ? किन्तु अर्पित होने पर गले में पहनते भक्तों के उत्सव को पूरा करने के लिए ।। 205 ।। स्वर्ण , पन्ना , व मोती का दिव्य हार, अभिनव पुष्कर मिश्रित , जिनके पदर आठ या सोलह होते गले में विराजता ।। 206 ।। जाई - जुई- तुलसी की माला गले से पैर तक लोटती । मोतियों की अपूर्व चमकती हुई माला कंठ में होती ।। 207 ।। साथ में पन्नों का हेमहार ,हृदय पर सुवर्ण पदक, माथे पर सुन्दर श्याम तिलक अति मधुर शोभा देते ।। 208 ।। उनको फकीर क्यों कहा जाये ? सतेज महान वैष्णव लगते । छत्र चामर उनके ऊपर डोलती रहती । सिर पर सोने की जरी वाली शेला शोभती ।। 209 ।। बहुधा जोग प्रेमपूर्वक मंगल वाद्य के शोर में बाबा के चारों ओर घुमाकर पंचारती करते ।। 210 ।। पूजा समेत पंचोपचार करते । बड़ी पंचारती लेकर कपूर वाती से बाबा के चारों ओर नीरांजन (आरती) घुमाते ।। 211 ।। फिर जब यह आरती संपन्न हो जाती एकेक - एकेक सकल भक्त बाबा को साष्टांग प्रणिपात करके अपने - अपने घर जाते ।। 212 ।। चिलिम , गुलाब का इत्र, पान देकर बाबा की अनुज्ञा लेकर तात्याबा अपने घर जाने के लिए निकलते तब बाबा बोलते " मुझे संभालना । ।। 213 ।। जाते हो तो जाओ पर रात्रि में बीच - बीच में मेरी खबर लेना " । फिर तात्या जी ' अच्छा ' कहकर चावडी छोड़ घर जाते ।। 214 ।। इस प्रकार सभी लोगों के जाने पर बाबा अपने हाथ से गांठ खोलते ; धोतियों की परत पर परत फैलाते स्वहस्त से निज शेज रचते ।। 215 ।। साठ पैंसठ शुभ्र चादरें बाबा स्वयं एक के ऊपर एक क्रम से रचकर बिछाते फिर उसके ऊपर पहुड़ते (लेटते) ।। 216 ।। इस प्रकार चावड़ी की घटना जिस प्रकार होती थी , कही गयी । अब दूसरी शेष कथा दूसरे अध्याय में वर्णित होगी ।। 217 ।। तब श्रोता क्षमा करें । इन साईं की महिमा अगाध है संक्षिप्त बोलने पर भी सीमा नहीं रहती । बढ़ती जाती है ।। 218 ।। अब साईं की हाँडी की कथा और जो - जो कथा रह गयी है , सब आगे के अध्यायों में कही जायेगी । सादरचित्त सुनें ।। 219 ।। अखंड गुरुस्मरण ही हेमाड का स्वार्थ व निज परमार्थ है । गुरुचरणों के अभिवंदन में कृतार्थ (हेमाड) होता है । चारो ही पुरुषार्थ उसी में है ।। 220 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाडपंत विरचित ' श्रीसाईं समर्थ सच्चरित ' में " चावड़ी वर्णन " नामक सैतीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय अड़तीसवां (हांडी वर्णन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

सकल जगत को आनंद देने वाले , भक्तों के इष्ट को संपादित करने वाले , चरण आश्रित के त्रिताप हरने वाले गुरुवर तेरे चरणों में नमन है ।। 1 ।। प्रणत पालक , परमउदार , शरणागत भक्तों का उद्धार करने वाले लोकोपकार करने के लिए आपने अवतार धारण किया है ।। 2 ।। द्वैत का दमन करने वाले की जय हो , भक्तों के मनमोहन की जय हो , भव से अपहरण करने वाले (संसार से मुक्ति दिलाने वाले) की जय हो , करुणाघन गुरुराया की जय हो ।। 3 ।। कहां के भाग्य आकर फलित हुए जिससे इन चरणों को नयनों ने देखा ! समागम सुख - उत्सव का भोग किया , वह समय वापस न आने के लिए गया ।। 4 ।। केवल ब्रह्म का जो सांचा है , उसमें शुद्ध स्वरूप रस डाला । जो सुरस मूर्ति ने आकार लिया । वही वह संतो के संत साईं हैं ।। 5 ।। वह साईं ही आत्माराम हैं , वह ही पूर्णानंद धाम हैं , स्वयं सकल काम सिद्ध हैं , भक्तों को निष्काम करते हैं ।। 6 ।। जो सर्व धर्म विधारक व ब्रह्मक्षात्रतेज के साथ मृत्यु को घोटने वाले हैं , जिनके संक्षेप में ये लक्षण हैं ।। 7 ।। जन्म - मरण आदि के संबंध के बंधन को तड़ातड़ तोड़ने वाले उनको मैं , जड़ व अंधा , साष्टांग वंदन करताहूं ।। 8 ।। गत अध्याय में अति प्रेम से साईंनाथ की चावडी का वर्णन किया है । अब इस अध्याय में हाड़ी अखण्डित सुखदायी को सुनिए ।। 9 ।। नवजात बालक खाना जानता है क्या खाएं यह वह नहीं जानता । दूध अथवा कौर लाकर खिलाना है, यह ध्यान माता रखती है ।। 10 ।। वैसी ही हमारी साईंमाता हैं । मेरे हाथ में लेखनी पकड़ा कर अपने भक्तों की प्रीति के कारण यह प्रबन्ध (काव्यग्रंथ) बिना परिश्रम लिखवा लिया ।। 1 1 ।। युग - युग में मानव की सिद्धि का साधन धर्मशास्त्रों ने कहा है- **कृत (सत्युग) में तप , त्रेता में ज्ञान , द्वापर में यज्ञ , कलियुग में दान ।। 1 2 ।।** सदा सर्वदा दान धर्म करो । क्षुधा शांति परम महत्व की है । **नित्य नियम से अन्न दान कर्मो में मुख्य कर्म है** ।। 13 ।। दोपहर का बारह होते ही अन्न बिना जी घबराता है । जैसे अपना वैसे अन्य का ! जो हृदय से जानता है वह भला है ।। 14 ।। आचार धर्म में प्रधान व अग्रगण्य है अन्नदान।

देखें तो किसी अन्य में उससे अधिक श्रेष्ठत्व नहीं है ।। 1 5 ।। अन्न परब्रह्म स्वरूप है । उससे सभी भूतों की उत्पत्ति होती है । अन्न ही जग में जीवन का साधन है । मृत्यु के उपरांत अन्न में ही यह (भूत) लीन होता है ।। 16 ।। समय, असमय अतिथि के आने पर गृहस्थ अन्नदान से सुख देता है। अन्न बिना जो उन्हें वापस कर देते हैं, अचूक दुर्गति को आमन्त्रण देते हैं ।। 1 7 ।। वस्त्र , पात्र आदि के दान में विचार करना होता है, अन्न दान में आधार (पात्रता के विचार) की आवश्यकता नहीं होती है । कोई भी कभी भी दरवाजे पर आवे उसका अनादर करना अच्छा नहीं है ।। 18 ।। ऐसी है अन्न की महत्ता । एतदर्थ प्रमाण श्रुति (तैत्तिरीयोपनिषद्।। अ0 3।।), है इसलिए बाबा अन्न से सन्तर्पण करते थे । लौकिक रीति से आचरण करते थे ।। 19 ।। रुपया , पैसा , अन्य दान अन्नदान के बिना अपूर्ण है । चन्द्रबिना तारे कैसे , पदक बिना हार कैसे शोभित होगा ।। 20 ।। जैसे षडरसों में वरण , पुण्यों में पुण्य अन्नदान । शिखर कलश बिना नहीं शोभते जैसे कमल विहीन झील ।। 21 ।। जैसे प्रेम बिना भजन , कुंकुम बिना सुवासिनी , सुस्वर बिना गाने का श्रम , नमक बिना छाछ अस्वाद ।। 22 ।। उनमें भी व्याधिष्ट , शक्तिहीन , अंध, पंगु बधिर दीन को पहले अन्न देवें उसके बाद सगे संबंधी जन ।। 23 ।। अब बाबा की हांडी की कल्पना साधरणतः श्रोताओं के मन में होनी चाहिए, इसलिए जिज्ञासु जनों के प्रीत्यर्थ यत्न करता हूं ।। 24 ।। मस्जिद के आंगन में एक बड़ा चूल्हा बनाया जाता, उस पर चौणे मुँह वाला पात्र रखते आवश्यकतानुसार पानी भर कर ।। 25 ।। कभी मीठा चावल बनाते , कभी मांसमिश्रित पुलाव । कभी आटे की लोई बनाकर (मुटकुले) वरन के साथ पकाते ।। 26 ।। कभी बाटी (आग पर पकाई गयी आटे की लोई) बनाते अथवा ' लिट्टी ' (आटे की लोई) थाप कर बनाते । पक रहे वरन में धीरे से डालते ।। 27 ।। मसाला शील्ह पर पीसकर स्वयं पाक की तैयारी करते । अपने हाथ से मूंगदाल की केक बनाकर हाड़ी में धीरे से छोड़ते ।। 28 ।। स्वर्गादि भुवन की आशा में यज्ञार्थी पशु हिंसा करते हैं, ब्राह्मण भी अवशेष का सेवन करते हैं । इसे सशास्त्र हिंसा कहते हैं ।। 29 ।। वैसे ही मुल्लाओं को आज्ञा करते शास्त्रोक्त मन्त्रोच्चारण के लिए । विधि - विधान के बाद बाबा बकरा कटवाते ।। 30 ।। कभी बड़ी, कभी छोटी ,ये दो प्रकार की हाड़ियां थीं, जिनमें अन्न पकाकर अन्न की इच्छा करने वालों को भोजन कराते ।। 31 ।। पचास लोगों के लिए पर्याप्त अन्न आपूर्त जो करती वह हाड़ी छोटी थी । जिस पात्र में सौ लोगों के भोजन कर लेने पर भी अन्न शेष बच जाये वह बड़ी था ।। 32 ।। उसके लिए अपने स्वयं बनिया के पास जाकर हिसाब करते । उधार की बात वहां नहीं होती,

उसका पैसा नगद हाथों हाथ होता ।। 33 ।। नमक , मिरची , जीरा , कालीमिर्च , पत्तीदार भाजी , नारियल , गरी- सब बाबा स्वयं लाते पूर्ण सोच - विचार करके ।। 34 ।। स्वयं मस्जिद में बैठ कर अपने हाथ से जांता लगाते । गेहूं , दाल , जोंधरी (ज्वार) बाबा उसमें दलते ।। 35 ।। हाड़ी के लिए मुख्य परिश्रम बाबा बिना विश्राम स्वयं करते । मसाला पीसने का भी कर्म परम मनोभाव से करते ।। 36 ।। चूल्हे के अन्दर की अग्नि को सौम्य या प्रखर करने के लिए ईंधन को बाबा स्वयं ऊपर नीचे करते रहते ।। 37 ।। दाल को पानी में भिगोकर स्वयं पाटी पर पीसने लगते । हींग , जीरा , धनिया मिश्रित करके स्वयं स्वादिष्ट खाद्य बनाते ।। 38 ।। गुंथे हुए आटे का गोला सवा हाथ लम्बा बनाकर के फिर गोल - गोल बनाकर बड़ी चपाती बनाते ।। 39 ।। ज्वार के आटे में नाप कर पानी डालते उसमें मट्ठा मिश्रित करते हाँडी में आंबील बनाते ।। 40 ।। इसी आंबील में से बाबा परम प्रेम से हाथ से अन्य अन्न के साथ उस समय अति आदर के साथ परसते ।। 41 ।। इस प्रकार हांडी पूर्णरूप से पक गयी है ऐसा ठीक से परीक्षण कर के चूल्हे से नीचे उतारते मस्जिद में लेजाकर के रखते ।। 42 ।। विधि पूर्वक मौलवी के हाथ उस अन्न का फातिहा दिलवाकर पहले म्हालसापति और तात्या को प्रसाद भेजते ।। 43 ।। फिर वह शेष संपूर्ण अन्न बाबा अपने हाथों से परसते । गरीब दुबले लोगों को तृप्त करते सुख संतुष्टि पाते ।। 44 ।। वे अन्नार्थी तृप्ति होने तक उल्लास वृत्ति से अन्न का सेवन करते । उसके ऊपर बाबा आग्रह करते । प्रेम से कहते लीजिए , लीजिए ।। 45 ।। उनके पुण्य कितने गहन थे , जिन्हें यह तृप्ति भोजन प्राप्त हुआ । स्वयं बाबा जिन्हें अन्न खिलाते, वे भाग्य के कितने धन्य थे ।। 46 ।। यह सहज आशंका आती है प्रसाद कहकर बाबा लोगों को, अनेक भक्तों को, क्यों मास के साथ अन्न नि:शंक मन से बांटते ? ।। 47 ।। तो इस शंका का निराकरण कराने में थकान नहीं लगती । जो नित्य मांस खाते थे उन्हीं को यह अन्न बांटते ।। 48 ।। आजन्म खाया नहीं, उन्हें मांस का स्पर्श नहीं करने देते। कभी बिना सोचे नहीं करते । प्रसाद की लालसा जिन्हें होती उन्हें देते ।। 49 ।। गुरु के स्वयं प्रसाद देने पर , सेव्य असेव्य की कल्पना आवे तो शिष्य निज आत्मघात को प्राप्त होता है। अधः पात में जाता है ।। 50 ।। इस तत्व को कितना जान गए अपने भक्त , बाबा स्वयं अनुभव करते ,हास्य विनोद करते हुए ।। 51 ।। इस अर्थ की छोटी सी बात याद आ गयी लिखते - लिखते । श्रोता अपने हितार्थ स्वस्थ चित्त से सुनें ।। 52 ।। एक बार एकादशी आई । बाबा दादा केलकर से बोले , " क्या मेरे लिए कोर्हाला से मांस ला देंगें " ।। 53 ।। उसके लिए साईं ने रुपया निकाला दादा को गिन कर

दिया , आदेश दिया “ जाओ तुम्हीं को यह करना है ।। 54 ।। नाम गणेश दामोदर उपनाम जिनका केलकर । लोग उन्हें उम्र में बड़े मानकर सब ' दादा' संबोधित करते ।। 55 ।। हरि विनायक साठे के श्वसुर थे । साईं पदों में अत्यधिक प्रेम था । ब्राहमण थे । ब्रहम कर्म का आदर करते थे । आचार विचार संपन्न थे ।। 56 ।। अपने गुरु की रात दिन सेवा करते, जिनके मन की इच्छा पूरी नहीं होती थी, उन्हें इस आज्ञा की अद्भुतता की अनुभूति कैसे नहीं हुई ।। 57 ।। जिनके शरीर के अंग अक्षत हैं, जिनके पूर्वाभ्यास में बल है, उनका मन कभी भी चंचल नहीं होता, बुद्धि गुरुपदों में अचल (स्थिर) होती है ।। 58 ।। धन धान्य वस्त्र का अर्पण यही नहीं है, दक्षिणादान । गुरु की आज्ञा का अनुष्ठान (पालन) गुरु को संतुष्ट करना भी दक्षिणा है ।। 59 ।। काया - वाचा- मना आदि का, जो सभी का अर्पण करते हैं अन्त में गुरुकृपा को साधते हैं निज श्रद्धा की प्राप्ति होती है , उन्हें ।। 60 ।। फिर उस आज्ञा को सिर से वंदन करके तुरन्त कपड़े पहन कर वे गांव को निकलने वाले थे तब वापस बुला लिए गए ।। 61 ।। “ अरे यह खरीद करने के लिए किसी अन्य को भेज दो " बोले , " जाने आने की परेशानी । बिना कारण प्रयास न करें " ।। 62 ।। फिर मांस लाने के लिए दादा ने पांडु को भेजा । इतने में बाबा दादा से उस समय क्या बोले , जरा देखिए ।। 63 ।। पांडु जाने के लिए निकल पड़े । रास्ते पर आ गए थे कि बोले , “ आज के दिन रहने दो” वापस उसे बुला लिया ।। 64 ।। इसी प्रकार बाद में एक समय हाड़ी बनाने की इच्छा हुई | चूल्हे पर हांडा चढ़ाया | उसमें मांस डाला ।। 65 ।। चावल धोकर उसमें डाला । यथा प्रमाण पानी डाला । लकड़ी चूल्हे के नीचे लगाकर बाबा बैठकर फूंकने लगे ।। 66 ।। सारा गांव उनकी प्रजा था, कोई भी आनंद से बैठ कर फूंकता , परन्तु किसी की हिम्मत नहीं होती थी ।। 67 ।। पकाने के लिए अन्न भी लाने के लिए आज्ञा करने की देर थी, साई के दास परम उत्कंठित थे । साईं ही इसके लिए उदास थे ।। 68 ।। उदास कहिए यह भी उचित नहीं है । स्वयं पकाने में जिसका स्वार्थ था वह अन्यों को किसलिए कष्ट देता । अपरिचितों को अन्न दान के लिए ।। 69 ।। निज निर्वाह के लिए खाने के लिए स्वयं जो माधुकरी मागें। उसके लिए दरवाजे - दरवाजे घूमे , रोटी का टुकड़ा मांगे ।। 70 ।। वही अन्न दान करने के लिए जब स्वयं कष्ट सहन करते हैं, तब संतुष्टि होती है उन्हें । किसी पर निर्भर नहीं रहते हैं ।। 71 ।। सौ के पात्र में पकाने भर का गेहूं का आटा , चावल , दाल ठीक से देखकर स्वयं बाबा नगद लाते ।। 72 ।। स्वयं हाथ में डलिया लेकर बनिए की दुकान जब जाते , व्यवहार में कितना चोख होना चाहिए लोग इससे सीखते ।। 73 ।। वस्तु हाथ में

लेकर दर (मूल्य) को कसते कोई छल नहीं सकता था । गर्व हर लिया जाता था ।। 74 ।। हिसाब करने का ऐसा प्रदर्शन करते कि वहां एक पैसा भी जाने नहीं देते। (फिर) पांच मांगता दस देते । हाथों हाथ दाम चुकाते ।। 75 ।। स्वयं काम करने की बड़ी इच्छा थी । दूसरे के करने से उनका नहीं चलता था, किसी से आस नहीं रखते थे । पर किसी से असंतुष्ट नहीं होते थे ।। 76 ।। यह एक तत्व बाबा के पास रात दिन जागृत रहता । इस लिए हाड़ी के कार्य में किसी से सहायता नहीं मांगते ।। 77 ।। हांडी क्या , धुनी से लगी हुई सर्प की खोली (लकड़ी रखने का स्थान) की दीवार के पूर्व भाग का तीन चौथाई बाबा के हाथ का स्वनिर्मित है ।। 78 ।। महादू मिट्टी का गारा बनाता बाबा अपने हाथ में थापी (करनी) लेकर पर्त पर पर्त ईंटें रचते भीत खड़ी करने के लिए ।। 79 ।। और बाबा क्या नहीं करते थे ? अपनी मस्जिद स्वयं गाय के गोबर से धोते । हाथ से कफनी व लंगोटी सिलते । किसी से आस नहीं रखते ।। 80 ।। हाड़ी में से भयंकर वाष्प ऊपर उठने पर बाबा आस्तीन खींचकर अपना हाथ डालकर ऊपर नीचे चलाते ।। 81 ।। तपेले को उबलते देख , चलाने योग्य होने पर ऐसे समय पर बाबा अगाध नवल लीला दिखाते ।। 82 ।। कहां रक्त मांस का हाथ कहां तपेले की प्रखर तपन , परन्तु न यत्किंचित जलने का निशान न भयभीत मुखचर्या ।। 83 ।। जो भक्तों के मस्तक पर पड़ते ही तत्काल समस्त त्रिताप दूर कर देता उसको कैसे अग्नि से दुख होगा , क्या उसकी महानता नहीं जानती ।। 84 ।। भिगोई हुई दाल पटिया (पत्थर की शील) पर फैलाकर स्वयं बिनते , स्वयं लोढ़ा लेकर पीसते । अपने हाथ से मूंगबडा बनाते ।। 85 ।। फिर वे हाड़ी में धीरे से छोड़ते नीचे न लग जाये इसलिए चलाते । तैयार होने पर हाड़ी उतारते । सभी को प्रसाद बांटते ।। 86 ।। श्रोता बोलेंगे क्यों सभी को ? साईं बाबा तो यवन होते । फिर इस प्रकार अधर्माचरण कैसे करवाते ।। 87 ।। इस शंका का एक ही उत्तर है । धर्म और अधर्म का विचार साईं के पास वस्तुतः निरंतर जागृत रहता ।। 88 ।। हाड़ी में पका हुआ पदार्थ सभी सेवनार्थ लें ऐसा यत्किंचित दुराग्रह कभी भी साईं ने नहीं धारण किया ।। 89 ।। पर वह प्रसाद प्राप्त होना चाहिए ऐसी सदिच्छा से जो - जो प्रेरित होते उनकी ही केवल इच्छा पूरी होती , कभी भी प्रपंच नहीं करते ।। 90 ।। इसके सिवाय जाति किसको ज्ञात है । मस्जिद में रहते हैं यवन कहलाते हैं । पर उनकी आचरण रीति देखकर जाति नहीं जानी जा सकती ।। 91 ।। भक्त जिसे देव मानते , जिनके चरण की धूल में लेटते, क्या उसकी जाति देखी जाती है । उनके परमार्थ प्राप्ति का धिक्कार है ।। 92 ।। इस लोक में व परलोक में जिसकी दृढ़ विरक्ति थी , विवेक वैराग जिसकी संपत्ति थी । उसकी

जाति का क्या देखना । उसकी परमार्थ प्राप्ति को धिक्कार है ।। 93 ।। धर्म - अधर्म से परे स्थिति है , जिनकी शुद्ध आनंद वृत्ति है उसकी जाति क्या देखना । उसकी परमार्थ प्राप्ति को धिक्कार है ।। 94 ।। ऐसा यह बाबा का चरित्र मैं इसे निजसुखार्थ गाता हूं किसी में श्रवण की आतुरता हो तो उसका भावार्थ पूरा होगा ।। 95 ।। अतः इस कथा के तार बहुत पीछे रह गए हैं , लौटकर उसे ध्यान दें जो बाबा ने दादा से कहा ।। 96 ।। नमकीन पुलाव बनाया है । देखा क्या कैसा हुआ है ? दादा ने औपचारिकतावश प्रशंसा में कहा ," हाँ , हाँ अच्छा है" ।। 97 ।। दादा पुराने वरिष्ट भक्त थे । स्नान संध्या में नियम निष्ठ थे । शिष्ट अशिष्ट को सदा देखते । उन्हें यह उचित नहीं लगा ।। 98 ।। "नहीं कभी दृष्टि से देखा नहीं कभी जिह्वा से चखा , ऐसे ही कैसे कह दिया अच्छा है" तब दादा से बाबा बोले ।। 99 ।। डेगी का ढक्कन हटाओ , अन्दर हाथ डालकर देखो । फिर स्वयं उनका हाथ पकड़ कर डेगी के अन्दर डाल दिया ।। 100 ।। फिर कहा , " हाथ निकालो, कलछुल लेकर थाली में परोसो , सोवाला से लगाव मत रखो । बिना कारण डींग मत मारो ।।" 101 ।। संत शिष्य के लिए अनुचित कहेंगे पहले तो कल्पना ही आश्चर्यपूर्ण है । संत कृपा से पूर्णरूप से भरे होते हैं , उनका मार्ग वही जानते हैं ।। 102 ।। प्रेम की खरी लहर उठने पर माता भी बच्चे को चुटकी काटती है । फिर जब बालक चीख मारता है तब वही गोद में चिपका लेती है ।। 103 ।। अभक्ष्य का भक्षण करने का जिनका मन होता , उनकी इच्छा का शमन करते । वे जो मन का दमन करते उसे साई अनुमोदन देते ।। 104 ।। यह आज्ञा पालन - मी मांसा कभी इतने चरमोत्कर्ष पर चली जाती कि जिन्होंने आजन्म मांस का स्पर्श नहीं किया उनका भरोसा भी डगमगा जाता ।। 105 ।। वस्तुस्थिति देखकर ऐसे किसी भी भक्त को बाबा कभी स्वयं ऐसे मार्ग पर नहीं लगाते जिसे वह विपरीत समझता ।। 106 ।। इस प्रकार सन 1910 तक होता रहा । उस वर्ष के पूर्व हाड़ी का योग निरन्तर होता था बहुत उत्साह के साथ ।। 107 ।। उसके बाद मुम्बई शहर में दासगणू की फेरी आयी । साईं का माहात्म्य, कीर्तन के संगीत से सभी के हृदय में जड़ दिया ।। 108 ।। तब से बाबा की महत्ता बाल वृद्धि सभी को मालूम हो गयी । तब से लोग जाने लगे शिरडी जिनकी गणना नहीं ।। 109 ।। फिर पूजा पंचोपचार नाना प्रकार के नैवेद्य से बाबा का आहार - उपहार शुरू हुआ , दोपहर त्रिपहर ।। 110 ।। वरण - भात , शीरा - पुरी , चपाती - चटनी व कोशिंबिरी , नानाविध पंचामृत ,खीर , अन्न की वस्तुएं बहुतायत में आने लगीं ।। 111 ।। अपरिमित यात्री आने लगे । जो उनके दर्शन के लिए दौड़ता हुआ जाता साईचरणों में नैवेद्य अर्पित करता । सहज ही भूख

से पीड़ित संतृप्त होते ।। 112 ।। राजोपचार होने लगा । छत्र चामर झलने जाने लगा , टाल ढोल वाद्यों के शोर में । भजक परिवार में वृद्धि होने लगी ।। 113 ।। महिमा सर्वत्र बढ़ने लगी । स्तुतिस्तोत्र गाये जाने लगा । फिर यात्रार्थियों के लिए शिरडी परम पवित्र क्षेत्र हो गया ।। 114 ।। इससे हाड़ी का कारण समाप्त हो गया । नैवेद्य इतना आने लगा कि उससे फकीर फुकरे को संतुष्ट करने के बाद बहुत शेष रह जाता ।। 115 ।। अब एक और कथा कहता हूं । सुनने से चित्त आनन्दित होगा । आराध्य वस्तु का अनादर करने पर बाबा का अपना चित्त अप्रसन्न होता है ।। 116 ।। कुछ भी अनुमान करके कोई साईं को ब्राह्मण कहता कोई उन्हें मुसलमान । वह ज्ञात नहीं हो सके ।। 117 ।। जिनका ठाव ठिकाना नहीं कौन जानता है कहां जनन हुआ । किसे माता - पिता , मुसलमान वा ब्राह्मण का ज्ञान ।। 118 ।। यदि मुसलमान थे कैस मस्जिद में अग्नि की आराधना करते । क्या वहां तुलसी वृंदावन होती ? घंटावादन सहते क्या ? ।। 119 ।। क्या शंख बजाने देते, साथ में कथा कीर्तन का कहना , टाल ढोल मृदंग वादन हरिनामगर्जन मस्जिद में ?।। 120 ।। यदि मुसलमान होते तो क्या मस्जिद में स्वयं बैठकर गंध माथे पर लगाने देते , उनके साथ भोजन करते क्या ? ।। 121।। यदि मुसलमान होते तो क्या कान छिदे होते , अपने पल्ले से धन खर्च करके क्या देवालयों का जीर्णोद्धार कराते ।। 122 ।। क्या स्नान के बाद महावस्त्र पीतांबर धारण करते | उलटे आराध्य दैव का अनादर होने पर क्षणभर बर्दास्त नहीं करते ।। 123 ।। इस संबंध में बोधक कथा जो लिखते - लिखते स्मरण हो आयी ,अति विनीतता के साथ प्रस्तुत करता हूं , स्वस्थचित्त सुनिए ।। 124 ।। देखो एक बार ऐसा घटित हुआ । बाबा लेंडी से वापस, आए मस्जिद में आकर बैठे । भक्त दर्शन के लिए आ गए ।। 125 ।। उनमें से बाबा के बहुत प्रिय सच्चे भक्त प्रवर नाना साहेब चांदोरकर थे । दर्शन के भूखे विनीवाला (साढू) के साथ आए थे ।। 126 ।। साईं नाथ को नमस्कार करके वे दोनों सन्मुख बैठ गए । कुशल वार्ता चल रही थी कि बाबा अचानक क्रोधित हो गए ।। 127 ।। बोले , “ नाना तुमसे यह विस्मरण कैसे हो सकता है ? क्या यही तुमने प्राप्त किया है । मेरे साथ दिन व्यर्थ व्यतीत किए ।। 128 ।। तुमने जो मेरी संगति की , आखिर क्या उसकी यही गति है ? ऐसे कैसे मति भ्रमित हो गयी ? सावधानीपूर्वक जो हुआ, मुझे बताओ “।। 129 ।। सुनकर नाना ने मुख नीचे कर लिया । मन में कोप का कारण विचारने लगे । कुछ भी याद नहीं आ रहा था । मन उद्विग्न हो गया ।। 130 ।। कहां चूक गए समझ में नहीं आ रहा था । कोप का कुछ कारण नहीं दिख रहा था । पर कहीं कुछ हुए बिना बाबा

किसी को दुखी नहीं करते ।। 131 ।। इसलिए बाबा के चरण पकड़ लिए , बहुत प्रकार विनती की । आखिर नाना जी ने अपना उपर्ण (आंचल) फैलाकर पूछा क्यों क्रोधित हैं, डाल दीजिए ।। 132 ।। " सालों साल मेरी संगति । तुम्हारी यह क्यों गति है । क्या हो गया तुम्हारी मति को ।" बाबा बोले नाना से ।। 133 ।। कोपर गांव जब आए मार्ग में क्या घटना घटी । मार्ग के मध्य कहीं उतरे कि सीधे तांगा हांक दिया " ।। 134 ।। " कुछ नवल घटित हुआ मार्ग में ? विस्तार से सुनावें इस रास्ते का | बताएं कहां क्या हुआ छोटा हो या बड़ा "।। 135 ।। ऐसा सुनकर नाना समझ गए । तत्काल उनका चेहरा उतर गया । यद्यपि बोलने में मन शरमा रहा था फिर भी उन्होंने निवेदन किया ।। 136 ।। यहां लुका - छुपी नहीं चलेगी मन में यह निश्चित किया , फिर जो घटित हुआ था विस्तार से नाना ने बाबा को बताया ।। 137 ।। साईं से असत्य नहीं चलेगा । असत्य से साईं की प्राप्ति नहीं होगी । असत्य से अधोगति जानो । असत्य से अन्त में दुर्गति है ।। 138 ।। गुरु के साथ धोखा महादुष्कृत्य है । इस पाप की निष्कृति (निराकरण) नहीं है । जान कर नाना ने बाबा से विस्तार से जो घटित हुआ अवगत करा दिया ।। 139 ।। बोले , " प्रथम तांगा तय किया, सीधा शिरडी में रुकने का । गोदावरी तट पर दत्तमूर्ति छूट रहे थे । बिनीवाले का उनसे जुड़ाव है ।। 140 ।। बिनीवाले दत्त भक्त हैं मार्ग में दत्त मंदिर होने पर दत्ता के दर्शन के लिए नीचे उतरने का मन में आया ।। 141 ।। पर मेरे जल्दी में होने के कारण मैनें ही उन्हें मना कर दिया । शिरडी से वापसी में देखेंगे । आकर दर्शन ले लेंगे ।। 142 ।। ऐसा उतावला होकर कि शिरडी आने में समय हो जायेगा इसलिए मैंने टालमटोल किया । दत्ता से भेंट का अपमान हुआ ।। 143 ।। फिर गोदावरी में स्नान किया । बड़ा कांटा पांव में घुस गया ! मार्ग में अत्यन्त परेशानी हुई । प्रयत्न से बाहर निकाला "।। 144 ।। तब बाबा ने इशारा किया , " ऐसी जल्दी अच्छी नहीं है दर्शन का अनादर करने के लिए अच्छा तुम कांटे से छूट गए । ।। 145 ।। दत्ता सरीखे पूज्य देव । मार्ग में सहज ही बैठे हों, अभागे हैं जो दर्शन से वर्जित हों , मुझे उनसे क्या मिलेगा ।। 146 ।।" अब , अतः हाड़ी की वार्ता । मस्जिद में साईं के साथ अपरान्ह भोजन की क्या पावनता थी , साईं की भक्त प्रेमलता थी ।। 147 ।। मध्यान्ह पूजा होने के बाद प्रतिदिन बाबा की आरती हो जाने पर भक्तजन जब वापस मुड़ते तब सभी को ऊदी देते ।। 148 ।। मस्जिद के किनारे पर बाबा आकर खड़े हो जाते । भक्तगण आंगन में बैठते । एकेक चरण वंदन करते ।। 149 ।। पांवों पर सर रखकर जो , जो संमुख खड़ा होता उसे एकेक के भाल पर उस समय साई ऊदी लगाते ।। 150 ।। " अब छोटे बड़े सभी

अपने घर जेवन के लिए जायें । " बाबा की इस आज्ञा का वंदन सिर से करके जन वापस मुड़ते ।। 151 ।। फिर बाबा के पीछे मुड़ते ही पर्दा परिपाटी के अनुसार खिंच जाता ।थाली वाटी खड़खड़ाने लगती फिर प्रसाद का ठाट होता ।। 152 ।। साईं के कर स्पर्श से पावन हुए बचे हुए नैवेद्य वापस मिलते , इसलिए कितने आंगन में बैठे प्रतीक्षा करते ।। 153 ।। इधर ताखे के निकट बाबा जब पीठ करके बैठते , दोनों बाजू पंक्ति की भीड़ होती सभी आनन्दपूर्ण ।। 154 ।। जो अपना , अपना नैवेद्य साईं समर्थ के समक्ष खिसकाते। फिर वह भी एक थाल के भीतर अपने हाथ से एकत्र करते ।। 155 ।। बाबा के उन हाथों से एक बूंद पाने के लिए अपरिमित भाग्य चाहिए | जिससे भोक्ता अन्दर - बाहर से पुनीत हो जाता है उसका जीवन सफल हो जाता है ।। 156 ।। बड़ा, अपूप , सांजोरि, पूड़ी , कभी शिखरण , धारग , फेणिया , विविध सब्जियां , खीर , कोशिंबरी , बाबा फिर सब एक में मिला देते ।। 157 ।। इस विधि से फिर वह अन्न बाबा ईश्वर को अर्पण करते । फिर शामा व नाना निमोणकर थाली में भर - भर कर परसते ।। 158 ।। फिर भक्तों को एक - एक कर बुलाते हुए अपने पास बैठाते हुए , परमानंद से प्रीति करते हुए आकंठ भोजन कराते ।। 159 ।। स्वादिष्ट घी में डुबोई हुई पूड़ी व वरन मिस्सी करते । ऐसा करके स्वादिष्ट मिश्रण बनाकर बाबा सब को परसते ।। 160 ।। यह मिश्रण प्रेम से सेवन करने से क्या स्वादिष्ट ब्रह्मानंद प्राप्त होता , भोक्ता अंगुली चाटते अखंड तृप्ति प्राप्त करते ।। 161 ।। कभी मांडा , पूर्णपोली ,कभी पूड़ी शर्करा में घोलकर, कभी बासुंदी शीरा व सांजोरी स्वाष्टि गुलवरिया परसते ।। 162 ।। कभी शुभ्र (सफेद) अंबेमोहोर (चावल की एक प्रजाति) उस पर सुन्दर वरण स्वादिष्ट रुचिर ताजा घी , चारों ओर शाखाओं से (सब्जी की) लिपटा हुआ ।। 163 ।। अचार , पापड़ और रायता , नाना प्रकार भांजी , भरता , कभी - कभी खट्टी दही , मट्ठा या पंचामृत । वे धन्य जो दिव्य अन्न सेवन करते ।। 164 ।। जहां भोक्ता साईंनाथ हों उस भोजन से बढ़कर क्या । वहां भक्त आकंठ सेवन करते, तृप्ति की डकार लेते ।। 165 ।। ग्रास - ग्रास में संतुष्टि थी , तुष्टि , पुष्टि व क्षुधानाशन ऐसे वे मधुर सुग्रास अन्न थे, प्रेम से परम पावन ।। 166 ।। प्रत्येक ग्रास के साथ नाम लेकर दिव्य अन्न से सब आहुति देते , पात्र अणुमात्र भी खाली नहीं होता, निरन्तर परोसने पर भी ।। 167 ।। जिस पकवान में जिसकी आसक्ति उसे वह प्रेम से परोसा जाता । किसी एक की आम्ररस में प्रीति, उसे प्रेम से रस परसते ।। 168 ।। ऐसे यह अन्न परसने के लिए बाबा प्रतिदिन नाना साहेब निमोणकर अथवा माधवराव देशपाण्डे को आज्ञा देते ।। 169 ।। उनका भी नियम से नित्य नैवेद्य

परसना ही काम । उसके लिए अति परिश्रम करते , परम प्रेम समन्वित ।। 170 ।। स्वादिष्ट जीरेसा भात का ग्रास मोगरे की कली की भांति उस पर तुरी की पीली दाल सब पर चम्मच - चम्मच घी ।। 171 ।। परसने पर इसकी सुगंध चारों ओर फैल जाती | चटनी के साथ भोजन चटपटा होता । जरा भी कम पका या अरुचिकर नहीं होता । यथेष्ट सेवन निश्चित किया जाता ।। 172 ।। उस स्वानंदता की थाली पर सेवई , सप्रेम भक्ति की कुरडिया , शांति सुख स्वानुभव करने वाले को छोड़कर कौन सेवन करने आयेगा ।। 173 ।। " **हरिरन्नं हरिर्भोक्ता** ' ; हरि ही रस को चाव से चखने वाले , वहां अन्न परसने वाला धन्य है धन्य उसका सेवन करने वाला और दाता भी ।। 174 ।। इन सब मधुरता का जो मूल है वह गुरुपदों में एक प्रबल निष्ठा है। शक्कर या गुड़ मीठा नहीं होता है, वह समूल श्री श्रद्धा मीठी होती है ।। 175 ।। इसी प्रकार नित्य श्रिर्नित्यमंगल , खीर शीरा के मिश्रण की बहुलता होती । पात्र में परसने में ढिलाई थोड़ी भी वहां नहीं चलती ।। 176 ।। विभिन्न प्रकार की पाक क्रिया । सेवन करने से उदर पूर्ति हो जाती है । किन्तु बिना दही - चावल के तृप्ति नहीं होती । नहीं तो कुछ मट्ठा मांगते ।। 177 ।। एक बार स्वच्छ मट्टे का प्याला जो गुरुराया द्वारा अपने हाथ से भरा गया था पीने के लिए मुझे दिया । मैनें ओठों से लगाया ।। 178 ।। शुभ्र स्वच्छ मट्ठा देखा । देखकर सुख संतुष्टि हो गयी। औंठों पर वह प्याला लाते ही स्वानंद की पुष्टि हो गयी ।। 179 ।। पहले ही पकवान से पेट भरा है, वहां यह कैसे प्रवेश करेगा । ऐसी क्लिष्ट आशंका आते ही वह घूट स्वादिष्ट लगने लगी ।। 180 ।। ऐसा मुझे संकोचित देख कर बाबा बोलते , “ सब पी जाओ रे “ | जानो यह योग पुनः वापस नहीं आयेगा ।। 181 ।। इस प्रकार का अनुभव बाद में हुआ। उसके दो माह बाद बाबा ने अपना अवतार समाप्त कर लिया । वस्तुतः निर्वाण को प्राप्त हो गए ।। 182 ।। अब उस मट्ठे से प्यास बुझाने का और कोई मार्ग नहीं है, साईंकथामृत पान के बिना । वही अपना अवलंबन है ।। 183 ।। हेमाड साईंनाथ की शरण में है । साईं आगे जो स्मरण दिलायें, वही कथा निवेदन होगा । श्रोता ध्यान देते रहें ।। 184 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित ” में ' हाड़ी वर्णन ' नामक अड़तीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथर्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय उन्तालिसवा (गीता विशिष्ट श्लोकार्थ निवेदन तथा समाधि मन्दिर निर्माण) ।।

॥ श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईनाथ को नमन ।।

धन्य , धन्य शिरडी स्थान , धन्य द्वारिकामाई भवन , जहा पुण्यपावन श्री साई ने निर्वाण तक निवास किया ।। 1 ॥ धन्य , धन्य , शिरडी के लोग , जिनके लिए इतनी लम्बी दूरी से , जाने किस भी निमित्त आये। पूर्णरूपेण ऋणी बना गये ।। 2 ।। पहले शिरडी एक छोटा सा गांव था , साईं के निवास करने से महान हो गया , उन्हीं के कारण अति पावन हो गया , उन्हीं से उसका तीर्थपन है ।। 3 ।। उस शिरडी की नारियां धन्य हैं , धन्य है उनकी अनन्य श्रद्धा , जो स्नान करते , अनाज को दलते , काड़ते असामान्य श्री साईं के गीत गाती है ।। 4 ।। धन्य , धन्य , उनका प्रेम । अति उत्तम गीत गाती हैं । उनमें से कुछ अनुत्तम को सुनने से मन को विश्रान्ति मिलती है ।। 5 ।। श्रोताओं के प्रति यथासमय व कथा की प्रासंगिकता के अनुसार इन विश्रांतिदायक गीतों को कहूगा , जिससे उनकी जिज्ञासा की तृप्ति हो सके ।। 6 ।। निजाम के राज्य में मार्ग के निकट एक आम्रवृक्ष के नीचे श्री साईं प्रकट हुए । धूपखेड़ा से एक बारात के साथ अचानक शिरडी आ गये ।। 7 ।। इसी खेड़ा के चाद पाटिल नाम से शोभायमान पुण्यवान ने सर्वप्रथम इस खजाने की खोज की , इसी से औरों को “ दर्शन " मिला ।। 8 ।। कैसे उनकी घोड़ी खो गयी , कैसे श्री साईं से सम्पर्क हुआ , कैसे उन्हें चिलम पिलायी और उनकी घोड़ी मिलवा दी ।। 9 ।। चांद भाई के कुटुम्ब में एक भतीजे (साले के लड़के) का लग्न होना था । शिरडी की बहू से शादी तय होने का योग था । अतः बारात वधू के गांव आयी ।। 10 ।। इस विषय की प्रारंभ से अंत तक की कथा श्रोताओं के लिए पहले ही (पांचवे अध्याय में) कही जा चुकी है । फिर भी प्रसंगवश स्मरण हो आया , उक्त की पुनरावृत्ति आवश्यक नहीं है ।। 11 ।। चांद पाटिल केवल निमित्त थे । भक्तों के उद्धार की अत्यन्त चिंता थी । इसलिए साईं ने यह अवतार लिया और स्वयं ही शिरडी आ गये ।। 12 ।। साईं के बिना कौन इस चेतनाहीन , मूर्ख , गरीब , अपंग व व्रत , तप एवं संस्कार से विहीन भोले - भाले श्रद्धावान जन का उद्धार करता ।। 13 ।।

अठारह वर्ष की आयु से ही वे एकांतवास के अभ्यस्त थे । रात्रि में कहीं भी निर्भय पड़ाव डालते थे । सम्पूर्ण प्रकृति ईश्वरमय थी जिनके लिए ।। 14 ।। जहां पहले गड्ढा था , कुछ समय बाद जो गांव का कूड़े का ढेर बन गया उसी स्थान पर , दिन भर चारों ओर भ्रमण करने के बाद , रात्रि में पड़ाव डालते थे ।। 15 ।। ऐसे बहुत वर्ष बीत गये । गड्ढे के भाग्योदय का समय आया । इस दीनदयाल साईं का विशाल वाडा इसके चारों ओर खड़ा हो गया ।। 16 ।। अन्त में उसी गड्ढे का श्री साईं के शरीर के विश्राम के लिए गर्भ गृह बना । वहीं उनका स्थायी विश्राम स्थान है , जहां पर समाधि का निर्माण किया गया ।। 17 ।। यही साईं समर्थ , गरीबों के आश्रयदाता हैं , जिन्होंने दुस्तर भवरूपी सागर को पार करने हेतु भक्तजनों के हित के लिए अपने चरित्र रूपी नौका का उचित निर्माण किया ।। 18 ।। यह संसार रूपी नदी बहुत दुस्तर है और उनके भक्त परिवार के लोग अंधे व पंगु हैं, जिनके प्रति वे बहुत उत्सुक हैं कि वे दूसरे किनारे तक कैसे पहुंचेंगे ।। 19 ।। इस भवसागर को पार करना सभी के लिए आवश्यक है, उसके लिए अन्तःकरण शुद्ध होना चाहिए । चित्त शुद्धि मुख्य साधन है तथा भगवद्भजन उसका मूल है ।। 20 ।। श्रवण सरीखी कोई भक्ति नहीं । श्रवण से गुरुचरणों में सहज ही आसक्ति हो जाती है । निर्मल शुद्ध बुद्धि उत्पन्न होती है । जिससे परमार्थ की उत्पत्ति होती है ।। 21 ।। साईं की ये अगणित कथाएं गाते - गाते गाथा बन जायेंगी । अतः संक्षिप्त विवरण दिया जाये तो भी उनकी विस्तृतता अनियन्त्रणीय है ।। 22 ।। ज्यों ज्यों श्रोताओं की श्रवण चाह , त्यों त्यों वर्णन करने की इच्छा बढ़ती है । हम परस्पर इच्छायें पूरी करें तथा वह निजहित से जुड़ने की साधना भी करें ।। 23 ।। यहां साईं ही कर्णधार हैं , दृढ़ ध्यान ही नाव है , श्रद्धा एवं आदर से कथा श्रवण अविलम्ब (व्यक्ति को भवसागर के) उस पार उतार देता है ।। 24 ।। गत अध्याय में हांडी का संक्षिप्त वर्णन , दत्ता भगवान के प्रति भक्ति के दृढ़ीकरण तथा नैवेद्य से भक्तों का संतुष्टीकरण का निरूपण किया गया है ।। 25 ।। सभी लोग अवगत हैं । ऐसी व्यवस्था रही है कि प्रत्येक अध्याय के अन्त में अगले अध्याय की विषय वस्तु का उल्लेख किया गया है ।। 26 ।। किन्तु गत अध्याय का समापन करते समय अगले अध्याय की कथा वस्तु मुझे स्मरण नहीं हो सकी । अतः जो विषय मुझे स्मरण करायेंगे उसी का वर्णन करुंगा ।। 27 ।। जैसा कि मैंने स्पष्ट कहा था वैसे ही साईं कृपा से मुझे स्मरण हो रहा है वही यहां श्रोताओं के लिए तुरंत सादर प्रस्तुत है ।। 28 ।। अतः अब श्रोताओं से प्रार्थना है कि अपने सभी व्यवधानों को दूर करके शांत चित्त से ध्यान लगायें । इससे उनका मन आनन्दित होगा

।। 29 ।। एक बार सद्भक्त चन्दोरकर मस्जिद में बैठे हुए बाबा के चरण दबा रहे थे तथा श्री भगवद्गीता मुख से गुनगुना रहे थे ।। 30 ।। भगवद्गीता का चतुर्थाध्याय । अपनी जिह्वा को उसके व्यवसाय में व्यस्त कर हाथ से साईं के पांव दबाने लगे । देखो क्या अद्भुत घटित हुआ ।। 31 ।। भूत - भविष्य - वर्तमान का पूर्ण ज्ञान साईं समर्थ को था । उनके मन में आया कि नाना को गीता का अर्थ समझा दूं ।। 32 ।। ज्ञान , कर्म , संन्यास , ब्रह्मार्पण व योग संबंधी अध्याय के पठन में नाना द्वारा अस्पष्ट गुनगुनाना प्रश्न "।। 33 ।। "सर्व कार्मखिलम पार्थ "- हे पार्थ सभी सम्पूर्ण कर्म (अपने अस्तित्व के साथ) ज्ञान में समाप्त हो जाते हैं, यह तैतीसवां श्लोक समाप्त हुआ । प्रारंभ हुआ " तद्विद्धि प्रणि पातेन " ।। 34 ।। यह जो चौतीसा श्लोक है यहीं नाना का पाठ बन्द हो गया । बाबा के चित्त में प्रश्न पूछकर नाना को ज्ञान प्रदान करने की इच्छा हुई ।। 35 ।। कहा " नाना क्या गुनगुना रहे हो । जो तुम धीरे - धीरे कह रहे हो उसे स्पष्ट कहो जिससे मैं सुन सकू जो तुम ओठों से बुदबुदा रहे हो " ।। 36 ।। बोलने के लिए कहे जाने पर आज्ञा का पालन करते हुए श्लोक की चारों पंक्तियाँ उन्होंने सुना दी । फिर बाबा ने स्पष्टीकरण पूर्वक उनका अर्थ निवेदन करने के लिए कहा ।। 37 ।। तब वे नाना हाथ जोड़कर अतिविनीत प्रसन्न होकर मधुर वचन से प्रत्युत्तर देते हैं । भगवान के मनोगत को बोलते हैं ।। 38 ।। अब साईं - नाना संवाद सभी को स्पष्ट करने के लिए हम मूल श्लोक के एक - एक शब्द को गीता से उद्धृत करते हैं ।। 39 ।। प्रश्न के रहस्य तथा संतों के मनोधर्म को समझने के लिए हमें ऐसा उपक्रम करना चाहिए जिससे भ्रमरहित अर्थ स्पष्ट हो सके ।। 40 ।। पहले ही संस्कृत भाषा दुर्गम भाषा है । साईं के लिए यह कैसे सुगम हो गयी । आश्चर्य है कि उन्होंने धर्मसम्यक् प्रश्न किया । संतों का ज्ञान अगम्य है ।। 41 ।। संस्कृत का अध्ययन कब किया ? कब गीता को बिना किसी के जाने पढ़ा कि ऐसा प्रश्न किया जैसे कि गीता के अर्थ के हृदगत ज्ञाता हो ।। 42 ।। श्रोताओं की संतुष्टि के लिए तथा वे मूल श्लोक का आशय समझ सकें इसके लिए भगवान के वचन को अक्षरशः प्रस्तुत करुंगा जिससे विवेचना में भी सहायता मिलेगी ।। 43 ।।

तद्विद्धि प्रणिपातेन , परि प्रश्नेन सेवया । उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्व दर्शिनः ।। 44 ।।

यह गीता का मूल श्लोक है । भाषा के अनुसार अर्थ को देखें । अनेक टीकाकार हुए किन्तु वे सभी इसके अर्थ के लिए एक मत हैं ।। 45 ।। नाना भी बहुत विद्वान थे , गीता भाष्य में पारंगत थे । श्लोक के एक - एक शब्द के अर्थ को यथा विदित कहना प्रारम्भ किया ।। 46 ।। नाना ने रसपूर्ण मधुर वाणी से , नम्रतापूर्वक सविनय , शब्दों के स्वाभाविक क्रम को दृष्टिगत रखते हुए सादर अर्थ निवेदन करना प्रारंभ किया ।। 47 ।। बोले , " गुरु के चरणों में साष्टांग दण्डवत् कर दें , गुरु की सेवा में जीवन अर्पित कर दें , आदरपूर्वक प्रश्न करें , ज्ञानी उसे ज्ञानार्थ का उपदेश देते हैं ।। 48 ।।" सारांश कि कृपामूर्ति कृष्ण अर्जुन को प्रेम से बताते हैं कि गुरु सेवा तथा गुरु के समक्ष साष्टांग दण्डवत् ही ज्ञान प्राप्ति के साधन हैं ।। 49 ।। हे अर्जुन , यदि तुम इस मार्ग पर जाते हो तो तत्वदर्शन ज्ञानी तुम्हें ज्ञान का मार्ग दिखायेंगे ।" बाबा , यही अर्थ मैं जानता हूं ।। 50 ।। शंकराचार्य , आनन्दगिरि , शंकरानन्द , श्रीधर , मधुसूदन , तथा नीलकण्ठ इन सभी विद्वानों ने भगवान श्रीकृष्ण के ही उपदेश मार्ग की व्याख्या अपने भाष्यों में की हैं ।। 51 ।। साईं समर्थ ने पहली दो पंक्तियों के अर्थ को मान्यता दे दी । किन्तु श्लोक के उत्तरार्ध के विषय में श्री साईं ने जो कहा , सुनो ।। 52 ।। अन्य चार रूपी भक्तगण बैठे हुए चन्द्रमा रूपी साईं के मुख को लक्ष्य करके अमृतकण सेवन कराने के लिए मुंह खोलकर देख रहे थे ।। 53 ।। उन्होंने कहा , " **नाना तृतीय पंक्ति को पुनः पूर्ण ध्यान दो " ज्ञान " शब्द के पूर्व स्वर लोप चिह्न लगाकर अर्थ जानो ।। 54 ।। क्या मैं विपरीत बोल रहा हूं ? क्या मैं अर्थ का अनर्थ कर रहा हूं ? क्या पूर्व में लिखे गये भाष्य असत्य हैं ? इस प्रकार की निरर्थक धारणा मत बनाओ ।। 55 ।। तुम कहते हो कि ज्ञानी व तत्वदर्शी ज्ञान का उपदेश देंगे , किन्तु यदि तुम " अज्ञान " शब्द का प्रयोग करो तो यथार्थ का प्रबोध होगा ।। 56 ।। ज्ञान बोलने का विषय नहीं है फिर उस पर उपदेश कैसे हो सकता है । ज्ञान शब्द का विपर्यय कहो फिर इसका अनुभव करो ।। 57 ।। तुम्हारे द्वारा बताये गये ज्ञान के अर्थ को मैंने सुना है अज्ञान शब्द का प्रयोग करने से क्या खर्च होता है ? अज्ञान बोलने का विषय है , ज्ञान स्वयं ही शब्दातीत है ।। 58 ।। जैसे जन्म के बाद शिशु गर्भपोष से ढका होता है , सीसा धूल से ढक जाता है , अग्नि राख (विभूति) से आच्छादित हो जाती है वैसे ही ज्ञान भी अज्ञान से ढक जाता है ।। 59 ।। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में स्वयं कहा है ज्ञान अज्ञान से आवृत्त है । एक बार यह अज्ञान हटा दिया जाता है तो ज्ञान स्वाभाविक रूप से चमकने लगता है ।। 60 ।। ज्ञान स्वतः सिद्ध है , शैवाल से ढके शुद्ध जल की तरह । प्रबुद्ध लोग जो शैवाल को हटा देते हैं शुद्ध जल पाते हैं ।। 61**

।। जैसे चन्द्र और सूर्य ग्रहण । वे तो सर्वदा . प्रकाशमान है , राहु केतु आड़े आ जाते हैं हमारी दृष्टि को अवरोधित कर देते हैं ।। 62 ।। चन्द्र व सूर्य बाधित नहीं होते हैं । यह हमारी दृष्टि है जो अवरोधित होती है । वैसे ही ज्ञान निर्बाध है , स्वयंसिद्ध हैं , स्वस्थानी है ।। 63 ।। आँखें अवलोकन करती है , उनकी देखने की शक्ति वह ज्ञान है । उसके ऊपर का आच्छादन जो बढ़ता रहता है वह अज्ञान है , उसको हटाना आवश्यक है ।। 64 ।। उस आच्छादन को हस्त कौशल से पूरा दूर कर देना चाहिए । अज्ञान रूपी अंधकार को झाड़ कर देखने की शक्ति प्रकट करनी चाहिए ।। 65 ।। यह समस्त दृश्यमान जगत अवर्णनीय माया द्वारा रचित है , यही अनादि अव्यक्त अविद्या है , यह है अज्ञान , यही विलास करता है ।। 66 ।। ज्ञान बोध की वस्तु , उपदेश का विषय नहीं है , प्रणिपात , परिप्रश्न तथा सेवा गुरु की कृपा प्राप्त करने के साधन हैं ।। 67 ।। विश्व का सत्यत्व ही महा भ्रम है । यही अंधकार ज्ञान को ढके है , सर्वप्रथम इसको तितर - बितर करना चाहिए तभी प्रज्ञान ब्रह्म प्रकट होगा ।। 68 ।। अज्ञान संसार का बीज है । जब गुरु रूपी अंजन आंखों में पड़ता है माया का आवरण उठ जाता है , वह स्वाभाविक ज्ञान शेष बचता है ।। 69 ।। ज्ञान साध्य नहीं है यह तो पहले से ही सिद्ध है यह तो आगम - निगम (वेदशास्त्र) द्वारा प्रमाणित है । ज्ञान का विरोध अज्ञान है ।। 70 ।। देव और भक्त को भिन्न - भिन्न मानना ही मूल विलक्षण अज्ञान है , उस अज्ञान को तितर - बितर करने से जो शेष बचता है वह ज्ञान है ।। 71 ।। रस्सी से सर्प की उत्पत्ति शुद्ध स्वरूप का अज्ञान है । इसके स्वरूप के उपदेश से अज्ञान मिटता है । रस्सी का ज्ञान शेष बचता है ।। 72 ।। सुवर्ण के अंदर बाहर मैल है , मैल के अंदर वह चमक है परंतु इसको उस प्रकार प्रकट करने के लिए अग्नि आवश्यक है ।। 73 ।। माया इस शरीर की उत्पत्ति का मूल है । शरीर का चलायमान रहना भाग्य के अधीन है । समस्त द्वंद्व भाग्य के अधीन हैं । शरीर का अभिमान अज्ञान है ।। 74 ।। इसलिए जो लोग स्वयं के अभिमान से बरी हैं उन्हें दुःख का ज्ञान नहीं रहता है । जब अहंकार का स्फुरण समाप्त हो जाता है । तब अज्ञान का नाश होता है ।। 75 ।। जहां स्वरूप का अज्ञान है वहीं माया का जन्म स्थान है गुरु की कृपा से माया समाप्त हो जाती है तब स्वरूप का स्वाभाविक ज्ञान होता है ।। 76 ।। भगवत्भक्ति के बिना अन्य थकाने वाले साधनों का क्या अर्थ है ? ब्रह्मदेव भी माया के अधीन है केवल भक्ति से उनको मुक्ति मिलती है ।। 77 ।। ब्रह्मलोक की ही प्राप्ति क्यों न हो गयी हो बिना भक्ति के मुक्ति नहीं है वहां भी भगवत्भक्ति से चूकने पर मानव जीवन मृत्यु के चक्र में फंस जाता है ।। 78 ।।

इसलिए माया को समाप्त करने के लिए भगवत्भजन ही एक मात्र उपाय है । भगवत्भक्त का पतन नहीं होता है न ही वह भवबन्धन में फंसता है ।। 79 ।। लोग कहते हैं कि माया मिथ्या है , किन्तु वह बहुत बड़ी जादूगरनी है , ज्ञानी भी कदम - कदम पर फंसते हैं , पर भक्त उसे चुटकी पर नचाते हैं ।। 80 ।। जहां ज्ञान सम्पन्न लोग ठग जाते हैं वहां श्रद्धावान जन टिकते हैं क्योंकि वे हरि के चरणों में नित्य समर्पित है, जबकि ज्ञानी को अपने ज्ञान का अभिमान होता है ।। 81 ।। अतः माया के पार जाने के लिए एक सद्गुरु के चरणों को पकड़ लो, तथा पूर्णरूप से समर्पित हो जाओ । संसार का भय तत्काल समाप्त हो जायेगा ।। 82 ।। मृत्यु को अवश्य आना है, आने दो, किन्तु हरि को विस्मृत न करो । इन्द्रियों को वर्णाश्रम के अनुसार आचरण करने दो किन्तु चित्त को हरि चरणों का चिंतन करने दो ।। 83 ।। जैसे रथ से घोड़े जुते रहते हैं वैसे ही शरीर से इन्द्रिया हैं । मन दृढ़ लगाम है । अपने हाथ रूपी बुद्धि से उसे नियंत्रित करो ।। 84 ।। मन संकल्प - विकल्पों से भरा हुआ है वह अपनी इच्छानुसार इधर - उधर विचरण करता है । बुद्धि अपनी दृढ़ निश्चय से उसे रोकती है निजसत्ता की लगाम से नियंत्रित करती है ।। 85 ।। बुद्धि सरीखे कुशल नेता , ऐसे सारथी के रथ पर होते हुए रथ के स्वामी को क्या चिंता । उसे स्थिर चित्त से व्यवहार करना चाहिए ।। 86 ।। एक बार मन , शरीर संबंधी सभी क्रियाओं को बुद्धि का निजकर्तव्य मानने का अभ्यस्त हो जाये , तो सब कुछ हितमय होता है ।। 87 ।। जब शब्द स्पर्श रूप आदि विषयों के मार्ग में इन्द्रियां लग जाती हैं शक्ति का व्यर्थ क्षरण होता है और पग - पग पर पतन का भय होता है ।। 88 ।। जब शब्द स्पर्श रूपादि पांच विषयों में जो भी सुख हो वह अन्त में असुख में बदल जाता है अज्ञान ही परम दुख है ।। 89 ।। शब्द विषय के भ्रम में हरिण अन्त में अपना प्राण दे देता है । हाथी को स्पर्श - विषय में आनन्द के कारण अंकुश का खिंचाव सहना पड़ता है ।। 90 ।। रूप विषय के भुलावे में पतिंगा अपने शरीर को जला देता है । मछली रस विषय भोग को भोगने में अपने प्राण तत्काल खो देती है ।। 91 ।। सुगंध से मोहित होकर भंवरा कमल कोश में बंद हो जाता है । यदि एक इतनी हानिकारक है तो पांचों मिलकर कितना भयंकर परिणाम देंगी ।। 92 ।। यह तो स्थलचर , जलचर व पतिंगों की दुःखद स्थिति देखी । विद्वान मानव भी विषयोन्मुखी हो जाते हैं । यह अज्ञान के अतिरिक्त क्या है ।। 93 ।। जब अज्ञान का नाश हो जाता है व्यक्ति विषयों से विमुख हो जाता है । ऐसा होने पर उन्मनी (समाधि) का आनन्द प्राप्त करता है । ज्ञानस्वरूप की ओर उन्मुख होकर जीव अत्यधिक सुख पाता है ।। 94 ।। चित्त में हरि गुरु का चिंतन करो

। कानों से चरित्र श्रवण करो | मन से ध्यान अनुसंधान करो । जिह्वा से नाम स्मरण करो ।। 95 ।। चरणों से हरि गुरु के ग्राम की ओर गमन करो । नाक से उसके " निर्माल्य " को सूंघो । उसके चरण के प्रति हाथों को जोड़ो । आँखों से उसका दर्शन करो ।। 96 ।। इस प्रकार जब सभी इन्द्रियों की वृत्ति उसके प्रति प्रेमपूर्वक प्रेरित कर दी जाये तो भक्त की स्थिति धन्य हो जाती है । भगवद्भक्ति क्या दूसरी है ।। 97 ।। सारांश यह कि अज्ञान को समूल पलट दो । जो शेष बचता है उसे सिद्ध ज्ञान जानो । इस श्लोक की जो श्रीकृष्ण भगवान द्वारा अर्जुन को बताया गया , इस प्रकार हृदयंगम करो ।। 98 ।।" नाना पूर्व से ही विनय संपन्न थे । इस मधुर व्याख्या को सुनकर वे बाबा के चरणों में दण्डवत लेट गये । चरणों की दोनों हाथों से वंदन करने लगे ।। 99 ।। तब उन्होंने श्रद्धा व निष्ठा से बाबा से प्रार्थना की " **मेरे अज्ञान को दूर भगाइये , यथार्थ शासन से मेरे दुरभिमान को दण्डित करिये ।। 100 ।। मेरी सात्विकता सतही है मेरे अंदर अखंड विकल्प है । क्षणभर का भी अपमान सह्य नहीं है । अज्ञान कुछ और है क्या ? ।। 101 ।। (मन के) अंदर प्रतिष्ठा के प्रति इच्छा बाह्य रूप से आध्यात्मिक प्रदर्शन , काम क्रोध का मन के भीतर सुलगते रहना अज्ञान नहीं तो क्या है ।। 102 ।। अंदर सकल कर्म नष्ट , बाह्य रूप से ब्रह्मनिष्ठ का प्रदर्शन , आचारहीन , भ्रष्ट विचार , स्पष्ट अज्ञान क्या और है ।। 103 ।। बाबा आप कृपाघन हैं । कृपा रूपी जल से मेरा सिंचन करें । अज्ञान रूपी दावानल का शमन करें । मैं इतने से ही धन्य हो जाऊँगा ।। 104 ।। मुझे ठोस ज्ञान नहीं चाहिए । मेरे पूर्ण अज्ञान को दूर करो । मेरे ऊपर कृपा दृष्टिपात करो । उसमें मेरी सुख व संतुष्टि है ।। 105 ।।"** साईं सप्रेम करुणाघन है । नाना को निमित्त रूप आगे करके तुम्हें , हमें सकल जन के लिए उन्होंने गीता का प्रवचन किया ।। 106 ।। " गीता " श्री भगवान का वचन है । इसलिए इसे प्रत्यक्ष शास्त्र जानो । यह वर्तमान , भूत व भविष्य तीनों कालों में प्रमाणिक है , कभी भी अवगणना नहीं करनी चाहिए ।। 107 ।। किन्तु जो विषयों में अत्यन्त लिप्त है या जो वास्तव में जीवन - मुक्त हो चुके हैं इन दोनों के लिए ही शास्त्रार्थ आवश्यक नहीं है । ये मात्र उनके लिए है जो जन्म से मुक्ति की इच्छा रखते हैं ।। 108 ।। मैं विषय पाश में पूर्ण रूप से बंधा हूं , मुझे उनसे मुक्ति कब मिलेगी । ऐसा जो मुक्ति चाहने वाला बोलता है उसके उद्धार के लिए ही शास्त्र बने हैं ।। 109 ।। ऐसे निज भक्त देखकर संत द्रवित हो जाते हैं और कोई बहाना ढूंढकर बिना प्रयास के उपदेश सुलभ कराते हैं ।। 110 ।। ईश्वर को देखें अथवा गुरु को, वे पूर्णरूप से भक्त के अधीन होते हैं । वे भक्त के कल्याण की चिंता करते

हैं एवं उनके कष्टों को अपने ऊपर ले लेते हैं ।। 111 ।। अब साईं की (कार्य करने की) विधि का एक दूसरा लघु कथन करता हूं । कैसे कुछ कार्य , वे प्रारंभ करते थे , किसी को कोई खबर हुए बिना ।। 112 ।। चाहे काम छोटा या बड़ा वास्तविक कारण कभी भी उद्घाटित नहीं होता था । कार्य धीरे - धीरे उठता इसकी कहीं चर्चा हुए बिना ।। 113 ।। जब कोई काम सहज गति से आता , तो बिना मूल कारण अथवा नाम निर्देश के ही उपक्रम प्रारंभ कर दिया जाता । और बाह्यरूप से संभ्रम बना रहता ।। 114 ।। " जो बोलता है वह क्या करेगा । जो गरजता है वह क्या बरसेगा ।“ इस कहावत का जैसे वास्तविक अनुभव श्री साईं , बिना संदेह कराते हैं ।। 115 ।। बाबा सरीखे अवतार मूर्ति परोपकार के लिए संसार में अवतरित होते हैं । इच्छित कार्य की समाप्ति पर अन्त मे अव्यक्त मे समरस हो जाते हैं ।। 116 ।। हम अपने अस्तित्व का मूल कारण नहीं जानते , कहां से आये हैं , कहां जाना है , किस अर्थ के लिए हमारा निर्माण हुआ , हमारे जन्म का प्रयोजन क्या है ।। 117 ।। अच्छा है , आजीवन स्वच्छन्द परिश्रम करते हैं , फिर मृत्यु का समय आता है । सभी इन्द्रियां क्षीण हो जाती हैं तब भी सुविचार नहीं आते हैं ।। 118 ।। यद्यपि हम अपनी पत्नी , पुत्र , बन्धु , जननी , इष्टमित्र आदि सभी अपने लोगों को देह त्यागते हुए आँखों से देखते हैं तब भी मन में सुविचार नहीं होता है ।। 119 ।। संतजन उस प्रकार के नहीं होते हैं वे तो अत्यन्त सावधान होते हैं । उन्हें अन्त काल का पूर्ण ज्ञान होता है । अपने निर्वाण को जानते हैं ।। 120 ।। शरीर में रहने तक , अति प्रेम से , अपने भक्तों के लिए शरीर को दुर्बल करते हैं । देहावसान के बाद समाधि स्थल को अपने भक्तों के हितों के लिए प्रयोग करते हैं ।। 121 ।। शरीर छोड़ने से पूर्व कुछ संतजन अपनी समाधि बनवा लेते हैं जिससे निश्चित रूप से उनके शरीर को उस स्थान पर विश्रांति मिले ।। 122 ।। वैसे ही देखो , बाबा ने किया । किन्तु इसके पूर्व किसी ने इसे जाना नहीं । उन्होंने समाधि मंदिर बनवा लिया । अद्भुत है उनकी लीला ।। 123 ।। बाबा साहेब बुट्टी नामक एक धनी व्यक्ति नागपुर के थे उनके हाथ से बाबा ने बाबा का स्मारक , देखो , खड़ा कराया ।। 124 ।। बापू साहेब परमभक्त थे । साईं चरणों में सदा अनुरक्त रहते थे । अपने परिवार के साथ आते , उनकी सेवा के लिए शिरडी में रहते थे ।। 125 ।। श्री साईं के चरणों को पकड़ने के लिए सदैव अनुवर्ती रहते हुए वहीं आकर रहते । बाद में उसी प्रकार सदा रहते , जैसे कि शिरडी में सदैव रहना चाहते हों ।। 126 ।। उन्होंने , कोई एक बिकने वाले भूखण्ड को लेकर और उस पर एक छोटी इमारत बनवा कर स्वतंत्र रूप से रहने के लिए सोचा ।। 127 ।। यह , यहां पर मूल बीज बोया गया

, उसी का वृक्ष आज मंदिर है जो भक्तों के काज के लिए साईं महाराज के प्रेम का दृश्य स्मारक है ।। 128 ।। कैसे - कैसे इसका निर्माण हुआ , किस प्रकार इसका प्रारंभ हुआ , कैसे यह आकार लिया पूरा वृत्तांत सुनो ।। 129 ।। ऐसा विचार करते हुए बापू साहेब दीक्षित वाडा के ऊपरी मंजिल पर निद्रिस्त स्थिति में थे कि एक स्वप्न देखा ।। 130 ।। और अब माधवराव भी उसी स्थान पर एक बिस्तर पर सो रहे थे उन्हें भी वही स्वप्न दिखा, दोनों को बहुत विस्मय हुआ ।। 131 ।। बापू साहेब ने स्वप्न देखा , बाबा उन्हें आज्ञा दे रहे हैं । " आप भी अपना वाड़ा निश्चित रूप से बनवायें , इसमें एक मंदिर का समावेश करते हुए " ।। 132 ।। जैसे ही यह स्वप्न समाप्त हुआ , बापू साहेब जाग गये । अपने बिस्तर पर बैठकर पूरे स्वप्न को याद करने लगे ।। 133 ।। जब इधर ऐसा हो रहा था , माधवराव को रोते हुए सुना गया । बुट्टी ने उन्हें जगाने के लिए आवाज दी , निद्रावस्था समाप्त हो गयी ।। 134 ।। " आप क्यों रो रहे थे ऐसा माधवराव से पूछा गया तो उन्होंने कहा , " श्री साईं के प्रेमोद्गार सुनकर मैं प्रेम से अभीभूत हो गया ।। 135 ।। मेरा कंठ भर आया । आँखों से आँसू बहने लगे । मेरा उत्कट प्रेम जिसे मैं नियन्त्रित नहीं कर सका , रुलाई में प्रस्फुटित हो गया ।। 136 ।। बाबा ने मेरे निकट आकर मुझे स्पष्ट आज्ञा दी । “ वाड़ा मंदिर के साथ बनने दो , सभी की इच्छायें पूरी होंगी इससे " ।। 137 ।। बापू साहेब , अपने हृदय में विस्मित हो गये । दोनों को एक ही दृष्टांत हुआ । मन में कोई संशय नहीं रह गया । कार्य प्रारंभ करने का निश्चय हो गया ।। 138 ।। बुट्टी स्वयं जन्मजात धनाड्य थे । वाड़ा व मंदिर बनवाने में समर्थ थे । माधवराव के पास मात्र सुखी जीवन यापन करने भर का धन था । दोनों को एक ही दृष्टांत हुआ ।। 139 ।। उनके स्वप्नों में परस्पर मेल था । (दोनों) परमानन्द से भरे हुए थे । रूप रेखा निश्चित की गयी । काका साहेब हरी सीताराम दीक्षित ने भी योजना को अनुमोदित कर दिया ।। 140 ।। अतः प्रातःकाल उदय होते ही जब तीनों बाबा के पास थे , बाबा ने शामा (माधवराव देशपाण्डे) के मुख को नित्य की भांति प्रेम से निहारा ।। 141 ।। शामा बोले , “ देवा , यह तुम्हारा क्या अगम्य खेल है ? आप हमें शांतिपूर्वक सोने भी नहीं देते । वहां भी हमसे प्रलाप कराते रहते हैं " ।। 142 ।। तब यह सुनकर , बाबा ने अपने कान हाथ से बन्द करके बोले , “ मैं अपने ठिकाने पर ही रहा हूं कोई कुछ भी कहे ।। 143 ।।“ फिर पूर्वोक्त योजना बाबा के समक्ष उनके अनुमोदन के लिए रखी गयी । समन्दिर भवन बनवाने की बाबा की अनुज्ञा तत्काल मिल गयी ।। 144 ।। माधवराव ने कमर कस ली । तलघर (तहखाना) तथा प्रथम तल तैयार हो गया । उनकी

देखरेख में कुंआ भी तैयार हो गया । कार्य इस स्तर पर पहुंच गया ।। 145 ।। लेंडी (बाग) तक जाते अथवा वहां से फिर वापस आते बाबा उत्सुकता से खिड़की दरवाजों को लगते हुए देखते थे ।। 146 ।। तर्जनी अंगुली से इंगित करते हुए बोलते थे " यहां दरवाजा , यहां खिड़की , यहां पूर्व में दीर्घा (गैलरी) बनाने से शोभा अच्छी दिखेगी ।। 147 ।। बाद में कार्य कारण के निमित्त बाबा साहेब जोग के हाथों आगे जो कार्य होना निश्चित था , वह उन्हें सौंप दिया गया ।। 148 ।। इस प्रकार कार्य होते - होते बुट्टी के चित्त में स्फुरण हुआ , " यहां एक गर्भ गृह हो तो उसमें मुरलीधर को स्थापित किया जाये ।। 149 ।। कल्पना का उदय हुआ , किन्तु बाबा के मनोदय को पूछे बिना , बिना गुरु की आज्ञा के , बुट्टी कोई कार्य आरम्भ नहीं करते थे ।। 150 ।। यह उनका नित्य का नियम था । बाबा की अनुज्ञा उनके लिए महत्वपूर्ण थी । कोई भी कार्य उन्होंने उनके बिना प्रारम्भ नहीं किया ।। 151 ।। मध्य में विभाजन का क्या अर्थ ? उसका प्रयोजन क्याहै ? दोनों ओर की दीवार गिराकर मुरलीधर की स्थापना कर दी जाये ।। 152 ।। विभाजित स्थान पर देवालय हो ऐसा बापू साहेब का मनोदय था , किन्तु बाबा का आशय पूछ लेना चाहिए । ऐसा है तो निःसंशय इसे कराना चाहिए ।। 153 ।। इसलिए माधवराव से कहा गया , आप बाबा के विचार लीजिए । जैसी देवा की रुचि होगी वैसे हम आगे की योजना बनायें ।। 154 ।। जब बाबा दैनिक फेरी (भ्रमण) पर जैसे ही वाडा के पास आये , दरवाजे के निकट सवारी पहुंचते ही शामाराव ने क्या पूछा ? ।। 155 ।। " देवा । बापू साहेब बोलते हैं कि विभाजित करने वाली दोनों दीवारों कोगिराकर यहां पर कृष्णमूर्ति मुरलीधर को प्रेमपूर्वक स्थापित कर दिया जाये ।। 156 ।। " मध्य भाग में चौक बनाकर उस पर सिंहासन रखकर उस पर मुरलीधर को विराजमान किया जाये । शोभायमान दिखेंगे " ।। 157 ।। इस प्रकार बापू साहेब की योजना है । किन्तु आपकी अनुमति चाहिए । इस रीति से वाड़ा और मंदिर दोनों ही शीघ्र तैयार हो जायेंगे ।। 158 ।।" शामा की बात सुनकर बाबा ने आनन्द से कहा " मन्दिर बनने के पश्चात हम यहां आकर रहेंगे ।। 159 ।। वाड़ा को देखकर बाबा मधुर वाणी बोलते " जब वाड़ा पूर्ण हो जायेगा , हम इसे अपने उपयोग में लायेंगे ।। 160 ।। वहां हम बोलचाल करेंगे । वहां हम खेल करेंगे । प्रेम से एक दूसरे को आलिंगन करेंगे । आनन्दमय समय का भोग करेंगे " ।। 161 ।। इस प्रकार तब माधवराव ने श्री साईं से ऐसे पूछा , " यदि यह निश्चित अनुज्ञा है तो नींव डालने का मुहूर्त किया जाये ।। 162 ।। देवा , यह शुभ घड़ी है ना , अब नारियल ला कर फोडू ।" जैसे ही बाबा ने कहा " फोड ,फोड ", तत्काल श्रीफल लाकर फोड़ा गया ।।

163 ।। इस प्रकार बाद में मुरलीधर देवताके चबूतरे के साथ गर्भगृह पूर्ण किया गया । मूर्ति भी बनवाने के लिए एक कारीगर को कार्य सौंप दिया गया ।। 164 ।। बाद में ऐसा समय आया , बाबा बहुत बीमार हो गये । अन्तकाल निकट आ गया । भक्तों का मन आशान्त हो गया ।। 165 ।। बापू साहेब का भी चित्त अस्थिर हो गया कि अब बाद में वाड़ा की क्या स्थिति होगी । क्या होगा यह निश्चित नहीं कर सकते थे इसलिए बहुत दुःखी थे ।। 166 ।। इसके बाद क्या बाबा के पांव मंदिर को स्पर्श करेंगे ? लाखों रुपये व्यय हो चुके हैं और अब यह समस्या आ गयी ।। 167 ।। बाबा द्वारा देह त्यागने के बाद कैसे मुरलीधर अथवा घर , कैसे वाडा अथवा मंदिर । बुट्टी का अन्तर चित्त दुःखी था ।। 168 ।। बाद में कर्म धर्म के संयोग से , अन्त समय में , वाड़ा के महाभाग्य से , सभी लोगों की राय से तथा बाबा की आज्ञा के अनुरूप सब सम्पन्न हुआ ।।169 ।। अन्तकाल में बाबा के वचन " मुझे वाड़ा में रखो" जैसे ही उनके मुख से निकले सभी के मन निश्चित हो गये ।। 170 ।। तब बाबा का वह पवित्र शरीर गर्भगृह में स्थिर किया गया । वाड़ा समाधि मंदिर बन गया । साईं बाबा का चरित्र अगाध है " ।। 171 ।। उन बुट्टी के धन्य भाग्य जिनके स्वयं के घर में श्री साईं का शरीर विश्राम पा रहा है । जिनका नाम अति पावन है ।। 172 ।। इस प्रकार ऐसी है पवित्र कथा जिसके सुनने से श्रोता सुखी व सम्पन्न हो जाता है । हेमाड साईंनाथ की शरण में है । वह एक मिनट के लिए भी उनके चरणों से अलग न हों ।। 173 ।। इष्ट अनिष्ट जो कुछ भी हो , यथोपदिष्ट मार्ग का अनुकरण करके एक साईं को संतुष्ट कर लिया तो निश्चित रूप से अभीष्ट को प्राप्त कर लोगे ।। 174 ।। जब कथा कथावाचक और वाच (वाणी) स्वयं साईं समर्थ हों तब यह हेमाड कौन है , चलतू नाम मात्र ।। 175 ।। इसलिए भविष्य में जैसी प्रेरणा होगी वैसी ही कथा सुनायी जायेगी । जो रचना जिस समय होगी , उसकी चिंता आज क्यों ? ।। 176 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जनों द्वारा प्रेरित भक्त हेमाड पंत द्वारा विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित " का " गीता विशिष्ट श्लोकार्थ - निवेदन तथा समाधि मन्दिर निर्माण " नामक उन्तालिसवा अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय चालीसवां (उद्‌यापन कथा कथन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

श्री साईसमर्थ धन्य हैं । इस ग्रन्थ रूप में स्वार्थ व परमार्थ का बोध कराकर भक्तों को कृतार्थ किया है ।। 1 ।। जिनका हाथ माथे पर पड़ते ही , तत्काल शक्तिपात करते , अप्राप्यवस्तु प्राप्त कराते , भेद को नष्ट करते ।। 2 ।। मैं तूं के भिन्नता के भाव को मिटा कर , अनन्य शरण में प्रवेश करके जिसे साष्टांग नमन करके , आलिंगन करके हृदय में धारण करते हैं ।। 3 ।। सागर व सरिता के नाम में भिन्नता है पर रूप में एकरूपता है । वर्षा काल में मिलाप हो जाता है , उनके हृदय में भिन्नता नहीं रह जाती है ।। 4 ।। उसी भाव में सद्‌गुरुनाथ, भक्त के अनन्य शरण में जाते ही भक्त की सद्‌भक्तता देखकर, उस भक्त को अपनी गुरुता देते हैं ।। 5 ।। दीनदयाल की जय हो । परम प्रेम से भक्तों के उद्‌धार के लिए अखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त होते हुए शिरडी में निराले बसते हो ।। 6 ।। पांव पसार कर जाँता घुमाते संत होते हुए अनाज पीसकर , खूटा ठोक कर , तय किए गए गेहूँ की मात्रा समाप्त करते , मेरे चित्त को विस्मय हुआ था ।। 7 ।। वही इस ग्रन्थ का मूल है। मन में प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई कि ये सकल कर्मो का वर्णन कर दिया गया तो पाप मिट जायेंगे ।। 8 ।। हरी स्वयं प्रसन्न होंगे । उन्हें अपने से अधिक अच्छा लगता है जब कोई उनके भक्त का कीर्तन करता है अथवा भक्त का गुण वर्णन करता है ।। 9 ।। श्रोता सज्जन आशंकित होंगे जिन्हें यह नियम निराधार लगता है । उन्हें भविष्योत्तरपुराण देखना चाहिए । त्रिपुरारी ने यह कथन किया है ।। 10 ।। यह सब साईं की प्रेरणा भी थी । किन्तु लौकिक रीति का पालन करते हुए उन्होंने रचना का अनुमोदन किया , भक्तों के कल्याण के कारण ।। 11 ।। तब से प्रत्येक मास साईंसमर्थ के कथानक ' साईंलीला ' पत्रिका में श्रोता बहुत प्रेम से सुनते रहे हैं ।। 12 ।। उन्हीं साईं ने इसे अनुमोदित किया था , वही तो मेरे बुद्‌धिदाता हैं । वह ही मूल चेतना को चेताने वाले हैं उन्होंने ही अपनी कथा की है ।। 13 ।। इस हेमाड ने अपने मति से इसकी रचना की है यह विकल्प (संदेह) मन में न धारण करें । इसलिए श्रोताओं से विनती करता हूँ कि गुणदोष मेरे सिर न मारें ।। 14 ।। यदि गुण हैं तो वह साईं का ।

यदि दोष दिखता है तो वह उनका । मैं साईं के हाथ की कठपुतली हूँ , डोर के आधार पर नाचता हूँ ।। 15 ।। सूत्रधार के हाथ में जो चित्र उनके मन में आएगा रंगबिरंगी अथवा विचित्र चरित्र के साथ नचवाएंगे ।। 16 ।। इस प्रकार अब यह प्रस्ताव । नयी अद्भुत कथा क्या है? श्रोता स्वभाव से उत्कंठा से भरे होंगे । उन्हें गुरुभक्त गौरव गाता हूँ ।। 17 ।। गत अध्याय पूर्ण करते समय अगले अध्याय का कथन (सूतोवाचता) बुद्धि में जो स्मरण आएगा वह होगा । अब जो स्फुरण हुआ उसे सुनें ।। 18 ।। अब यह मधुर आख्यान , श्रोता सावधान हो सुनें । भक्त द्वारा प्रेम से भोजन परोसने पर साईं को परम सन्तुष्टि होती है ।। 19 ।। अपने दुधमुहें बच्चे के प्रति माँ की करुणा जैसे ही साईं अपने भक्तों के प्रत्यक्ष थे । कहीं भी होते दौड़े आते । कौन उनके ऋण को चुका सकता है ।। 20 ।। शरीर में शिरडी में घूमते । पर तीनों लोकों में संचरित रहते । इस अर्थ का मधुर वृतांत है । अपने शांत मन से सुनें ।। 21 ।। एक बार साईं चरणों में सन्निष्ठ भक्त श्रेष्ठ बाला साहेब , जिनकी माता सबके अभीष्ठ को संपादित करने के लिए धार्मिक अनुष्ठानों में निष्ठा रखने वाली थीं ।। 22 ।। विभिन्न प्रकार से अनेक व्रत उनके हाथों से किए गए । उनका उद्यापन रह गया , सम्पूर्ण, वह जैसा होना चाहिए ।। 23 ।। व्रत संख्या पूर्ण होने पर उद्यापन कराते हैं अन्यथा उसका पुण्य आंचल में नहीं पड़ता । उसके बिना वे व्रत अपूर्ण होते हैं ।। 24 ।। पचीस अथवा तीस व्रत , इतने के उद्यापन के लिए देव ने सौ दो सौ ब्राह्मणों को भोजन के लिए आमंत्रित किया था ।। 25 ।। इसलिए एक तिथि निश्चित की , यह उद्यापन करने के लिए । देव ने सखाराम हरी जोग को बाबा से विनती करने के लिए लिखा ।। 26 ।। देखिए , आपके आए बिना उद्यापन पूर्ण नहीं होगा , अतः यह प्रार्थना मान कर इन दीन को आभारी बनाएं ।। 27 ।। मैं तो सरकार की सेवा करता हूँ पेट भरने के लिए चाकरी करता हूँ । उसी को साधने के लिए परमार्थ करता हूँ । आप अन्दर से जानते हैं ।। 28 ।। डहानू से इतनी दूर स्वयं आने में मैं लाचार हूँ अतः यह आमन्त्रण स्वीकार करेंगे यह मेरी बड़ी आशा है ।। 29 ।। इस प्रकार बाबा साहेब जोग ने पूरा पत्र बाबा को सुनाया , बोले , “ देव का यह कार्य जैसा चाहा है पूर्ण रूप से संपादित कर दें । ।। 30 ।। शुद्ध भाव से बाबा ने संपूर्ण आमन्त्रण सुना” , बोले , " जिसे मेरा स्मरण है मैं उसको निरन्तर याद करता हूँ " ।। 31 ।। " मुझे गाड़ी - घोड़ी नहीं लगते , न विमान अथवा रेलगाड़ी (अग्नि रथ) । जो मुझे प्रेम से हांक मारता है, उसी घड़ी मैं अबिलंव प्रकट हो जाता हूँ ।। 32 ।। तूं मैं और एक तीसरा - तीनों मिलकर जायेंगे देखना । ऐसा लिखकर भेज दो । लिखने वाला पाकर

प्रसन्न हो जायेगा "।। 33 ।। इस प्रकार बाबा जो जो बोले , जोग ने वह वह देव को सूचित कर दिया । देव मन में आनन्दित हुए | बाबा के बोल अमोध हैं ।। 34 ।। देव को पूर्ण विश्वास था कि बाबा अब निश्चित आएंगे । किन्तु जब यह अनुभव का दिन आएगा वह स्वर्णिम होगा ।। 35 ।। पर देव यह भी जानते थे कि शिरडी के अलावा तीन ही गांव हैं जहां बाबा कभी कभी जाते हैं । शिरडी में निरन्तर रहते हैं ।। 36 ।। छठे - छमाही मन में आया तो कभी बाबा राहाता जाते , कभी रुई या नीमगांव । शिरडी में अखंड बसते ।। 37 ।। इन तीन गांवों से आगे वह कहीं किसी भी दिशा में नहीं जाते । तो फिर इतने लंबे यहां तक डहाणू में मुझ तक कैसे आएंगे ।। 38 ।। पर वे पूर्ण लीलावतारी (विष्णु के अवतार) हैं , इच्छामात्र से स्वच्छन्दचारी हैं । आना - जाना तो लोकाचार है । वह बाहर अन्दर परिपूर्ण (व्याप्त) हैं ।। 39 ।। वहां से यहां आना होगा, अथवा यहां से वहां जाना ये दोनों ही आकाश नहीं जान सकेगा । वह अन्दर बाहर पूर्ण रूप से व्याप्त हैं ।। 40 ।। बाबा की ऐसी दुर्गमगति है। वे चर - अचर में भरे हुए हैं । उनका कैसा आना जाना । स्वच्छन्द प्रकट हो जाते हैं ।। 41 ।। फिलहाल इससे लगभग एक मास पहले एक संन्यासी डहाणू स्टेशन के स्टेशन मास्टर के पास अपने काम से आया था ।। 42 ।। वह गोशाला प्रचारक था। गोसंस्था का स्वयंसेवक था । आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए योगदान मांगने आया था ।। 43 ।। पहनावे से वह बंगाली लगता था । मास्टर ने युक्ति बतायी । नगर में , वहां , आप जायें अच्छी व्यवस्था हो जायेगी ।। 44 ।। वहां मामलेदार हैं उनके आगे यह विचार रखें । सेठ साहूकारों से मिलिए , आपको धन के रूप में सहायता देंगे ।। 45 ।। एक मामलेदार के मुड़ने से पट्टी हां हां कहने लगेगी । यह धर्म का कार्य है स्वस्थ मन से वहां जाइए ।। 46 ।। यह जो अन्दर मास्टर बोल रहे थे कि बाहर घोड़े की टाप बजने लगी । स्वयं मामलेदार वहां आए । उतरकर स्टेशन के अन्दर गए ।। 47 ।। मास्टर से भेंट करने के लिए कमरे में जैसे ही उन्होंने प्रवेश किया मास्टर ने संन्यासी से कहा, " यह मामलेदार यहीं आ गए । ।। 48 ।। लो , अब तुम्हें क्या बोलना है । भाग्य से बिना तुम्हारे प्रयास यह भेंट हो गयी "। संन्यासी ने निज मनोगत उनसे निवेदित किया ।। 49 ।। फिर वे दोनों बाहर आए । वहां एक पेटी पर बैठे । देव से संन्यासी ने विनती की । यह कार्य संपादित होना चाहिए ।। 50 ।। गोरक्षण का धर्म कार्य है । आपके अपने हाथ में लिए बिना मुझे बाहरी के हाथ यह कार्य क्या तिल मात्र भी हो पाएगा ।। 51 ।। आप तालुके के अधिकारी । मैं तो एक ऐसा भिखारी हूँ । लोगों के दरवाजे दरवाजे गायों की भूख मिटाने के लिए फिरता रहता हूँ ।। 52 ।। यदि एक शब्द

बोल देंगे मेरा कार्य जल्द हो जाएगा । गोमाता का आशीर्वाद मिलेगा । निर्विवाद यश प्राप्त होगा ।। 53 ।। संन्यासी की विनती सुनकर देव क्या प्रत्युत्तर करते हैं ? नगर में दूसरे कार्य के लिए वर्तमान में योगदान हाथ में ले रखा है ।। 54 ।। राव साहब नरोत्तम सेठ जिनमें दीनों के लिए दया है नगर सेठ हैं , बहुत क्रियाशील हैं , वे एक लोकहित के कार्य के लिए चन्दा एकत्र कर रहे हैं ।। 55 ।। उसी में तुम्हारे धर्म कार्य के लिए चन्दे की उगाही फिर कैसे पूरी होगी ? यह समय तुम्हारे उपयोग का नहीं है । अतः बाद में मांगने के लिए देखते हैं ।। 56 ।। फिर आप दो चार मास रुककर इस नगर में आए । बाद में फिर उस समय देखते हैं । आज उसकी अनुकूलता नहीं है ।। 57 ।। इस प्रकार फिर वह वहां से चला गया । इसे एक महीना हो गया । तब वह तांगे में बैठकर आया, पुनः डहाणू में वापस ।। 58 ।। देव के दरवाजे के सामने वकील परांजपे का घर था । वहां तांगा रुकने पर सन्यासी को उतरते देखा ।। 59 ।। वही है जो पूर्व में निश्चित किया था चन्दे के लिए पहले ही आ गया । इस प्रकार देव लड़के से बोले मन में शंकित होते हुए ।। 60 ।। महीना पूरा नहीं हुआ वह यहां किसलिए आया है । पहले की बात बिसर गयी क्या ? शंका का मूल यही था ।। 61 ।। वहीं तांगा उनके द्वारा छोड़ दिया गया । वहीं कुछ समय रुके । फिर देव के घर आए । फिर क्या बोलने लगे ? ।। 62 ।। दस बजे का समय , ब्राह्मण भोजन का आरंभकाल , देव की परेशानी देखकर बोले , “ मुझे पैसे की उतावली नहीं है । " ।। 63 ।। “ पैसे के लिए नहीं आया हूँ । आज तो हमको भोजन चाहिए ।“ देव बोले , " आओ आनन्द है , यह घर अपना समझिए” ।। 64 ।। तब सन्यासी इतने में बोले , " हमारे दो बच्चे हैं साथ । " फिर देव उनसे बोले , “ बहुत अच्छी है यह बात “ ।। 65 ।। भोजन में बिलम्ब था इसलिए देव उनसे पूछे , आप किस स्थान पर उतरे हैं । जहां मैं देखने के लिए भेजूं” । ।। 66 ।। " क्या जरूरत है ? कब मैं आऊँ ? किस घण्टे मैं हाजिर रहूँ ? जब बोलोगे तब आता हूँ ? “ सन्यासी बोलने लगा ।। 67 ।। " अच्छा बच्चे साथ लेकर बारह बजे होने के समय (बखत) आओ भोजन पाओ , ओ संत । " इस प्रकार तब देव उनसे बोले ।। 68 ।। इस प्रकार वह सन्यासी गए । बराबर बारह होने पर वापस आए जेवन करने के लिए तीनों ही बैठे , यथेष्ठ भोजन से संतुष्ट हुए ।। 69 ।। भोजन तैयार हो जाने पर ब्राह्मणों के पंक्ति में बैठ जाने पर सपरिवार सन्यासी को यजमान ने भोजन से सन्तुष्ट किया ।। 70 ।। साथ में दो लोगों को लेकर सन्यासी अपने आप आए । किन्तु उनके पूर्व प्रयोजन ने माया का आवरण फैला दिया ।। 71 ।। इसी से , यह कोई अतिथि भोजन प्राप्ति के लिए आया था , इतना ही देव

के मन में आया । मोह की वृत्ति दृढ़ हो गयी ।। 72 ।। इस प्रकार भोजन , उत्तरापोशन , शुद्धाचमन , सुगंधशीतल जलप्राशन हो जाने पर मुख शुद्धिदान सम्पादित किया गया ।। 73 ।। देव ने आनन्द से सभी को बहुत मान से शिष्टाचार में गंध , सुमन , तांबूल गुलाबदान में अत्तर दिया ।। 74 ।। इस प्रकार फिर इसके बाद लोग अपने - अपने घर गए । सन्यासी भी अपने परिवार के साथ अपने स्थान को वापस गए ।। 75 ।। यद्यपि आगन्तुक अनिमन्त्रित थे, फिर भी वे समय पर आकर जेवन किए । परन्तु देव को बाबा नहीं लगे । मन में संशय रहा ।। 76 ।। ऐसा यद्यपि प्रत्यक्ष घटित हुआ ,आए हुए तीनों लोगों को सामने परसा गया, फिर भी देव के मन में जोग से साक्ष्य प्राप्त करने की आकांक्षा हुई ।। 77 ।। इस प्रकार उद्यापन पूर्ति होने के बाद तब देव जोग को लिखते हैं । इस प्रकार कैसे बाबा ने फंसा दिया । क्यों उन्होंने वचन दिया था ।। 78 ।। आप साथ में आते , अन्यथा बोला न होते । कुछ विश्वसनीय साक्ष्य होता । मुझे ऐसा कैसे न लगे ।। 79 ।। फिर ऐसी गति क्यों हुई । मुझे ही क्यों निराश किया ? बहुत आशा से वाट देखता रहा । कुछ प्रतीति नहीं हुई ।। 80 ।। प्रेम से बाबा को निमन्त्रित किया । मुझ शरणागत को आने के लिए बोले , परन्तु सब अन्यथा हो गया , कैसे यह सर्वथा हुआ, मुझे समझ में नहीं आ रहा है ।। 81 ।। मेरे आने में परतन्त्रता थी , अति विनीत भाव से पत्र लिखा था, फिर भी आपके आने का सुनकर मैं बहुत धन्य अनुभव करने लगा था ।। 82 ।। अब आप किसी बहाने किसी वेष में आयेंगे । किन्तु ऐसा कुछ क्यों नहीं हुआ । विशेष आश्चर्य हो रहा है ।। 83 ।। जोग ने सकल वृत्तान्त साईं चरणों में निवेदित किया , बाबा आश्चर्यचकित हो उनके लिए क्या बोलते हैं ? ।। 84 ।। **" मेरे समक्ष पत्र खोलते ही , पत्र के अन्दर की मनोवृत्ति, पढ़ने के पहले ही निश्चित ही मूर्तिमंत हो खड़ी हो जाती है ।। 85 ।। वह कहते हैं मैंने अपने वचन का विश्वास दिलाकर उन्हें फंसा दिया । उनसे कहो तुम मुझे पहचानते नहीं तो मुझे बुलवाया क्यों था ? ।। 86 ।। लौकिक रूप से यहां से हिला नहीं हूँ किन्तु मैं उद्यापन में जेवन करने आया । दो के साथ आने का बोला वैसे ही दो के साथ गया ।। 87 ।। भोजन होने में समय होने पर तब पहले अकेला आराम से इस प्रकार प्रथम प्रवेश किया । सन्यासवेष तुम्हें याद नहीं है ।। 88 ।। आया हुआ देखकर अकल्पित विचार आया । तुझे यह भय हुआ कि पैसे मांगने के लिए | क्या तुम्हें यह चिन्ता नहीं हुई थी । मैंने संशय निवृत्ति की थी ।। 89 ।। केवल जेवन के लिए आया साथ में दो को लेकर ऐसा समय से कहा था क्या दो के साथ भोजन नहीं किया ।। 90 ।। देखो , अपने वचन के कारण चाहे मेरे जीवन प्राण मर जावें किन्तु मेरे मुख के**

वचन कभी अन्यथा नहीं होंगे ।। 91 ।।" साईंनाथ के ऐसा बोलने पर जोग के चित्त में असीमित आनन्द हुआ । सभी को यह अनुभव हो गया कि दिया हुआ वचन अन्यथा नहीं होगा ।। 92 ।। बाद में फिर यह वृत्त जोग ने देव को अति मुदित मन से एक पत्र सविस्तार लिखकर भेजा ।। 93 ।। देव ने जब पत्र पढ़ा प्रेम के आवेग से नेत्र भर गए । धिक्कार है व्यर्थ साईं को दोष दिया । मन में बहुत लज्जित हुए ।। 94 ।। बाबा की महिमा धन्य है , धिक्कार है मेरे ज्ञान के अभिमान को । पर मुझे समझ नहीं आ रहा है कि यह संन्यासी बाबा ही हैं,यह अनुमान मुझे कैसे होता ।। 95 ।। कारण, बाबा को निमन्त्रित किया उसके पहले उनका प्रथम अभिगमन । वह भी अपने कार्य के लिए , भेंट का प्रयोजन चन्दा था ।। 96 ।। उसे निश्चित समय दिया था , दो चार मास में वापस आने का । वही जब भोजन मांगते हैं, तो बाबा होने का निष्कर्ष कैसे होगा ।। 97 ।। मात्र बाबा का एक ही वचन, जब भोजन करने आयेंगे मेरे संग दो आएंगे , इसका भान मुझे बिसर गया ।। 98 ।। बाबा के आमन्त्रण के बाद यदि इनसे प्रथम भेट हुई होती वह केवल जेवन के लिए तब यह दृष्टि धोखा नहीं खाती ।। 99 ।। परन्तु वे आए गोरक्षण के निमित्त , गायों को खिलाने के लिए धन लेने के लिए । उसके बाद, साईं के लिए वह आमन्त्रण उद्यापन के लिए गया ।। 100 ।। इसीलिए ऐसा मोह पड़ गया । जिससे यह इस प्रकार घटित हो गया । यद्यपि दो के साथ जेवन के लिए आए फिर भी अन्नार्थी लगे थे ।। 101 ।। कोई पूर्व परिचित न होते, भोजन के समय अकल्पित आते किन्हीं दो को साथ लेकर तो निश्चित ही साईं लगते ।। 102 ।। पर इन संतों की यही रीति है अघटित लीला अद्भुत कृति । भक्तों के घरों में कार्यस्थिति वे स्वयं पहले ही योजित करते हैं ।। 103 ।। भक्त जब उनके चरणों से जुड़ता है , उसका शुभ कार्य संपादित हो जाता है । ऐसा अकल्पित होता है । संतों की करनी अतर्व्य है ।। 104 ।। चितामणि इच्छित वस्तु देती है । कल्पवृक्ष मन द्वारा कल्पित वस्तु देता है । कामधेनु इच्छित को उत्पन्न कर देती है । गुरुमाँ वह देती है जिसे सोचा भी न गया हो ।। 105 ।। इस प्रकार इस स्थान पर बाबा निमन्त्रित थे । सन्यासी के रूप में प्रकट हुए थे । किन्तु उनकी लीला अघटित है कभी बिना बुलाए ही आ जाते हैं ।। 106 ।। कभी छायाचित्र के रूप में , कभी पार्थिव मूर्ति स्वरूप में । उनकी कृपा का पार नहीं है । कभी अपने आप प्रकट होते हैं ।। 107 ।। इस संदर्भ में मेरा अनुभव है । सुनकर श्रोताओं को आश्चर्य की अनुभूति होगी । साईलीला का प्रभाव जानेंगे । कथा भी अभिनव अपूर्व है ।। 108 ।। यह कथा है या यह कहानी है ऐसा भी कोई इसे कह सकता है । वे कहें जिसमें उन्हें खुशी हो ।

परन्तु इसे सादर श्रवण करना चाहिए ।। 109 ।। आलस निद्रा दूर करके सावधान हो करके इस कथा को सुनने का दान देंगे फिर मुझे सन्तुष्टि होगी ।। 110 ।। व्यग्रता , क्षणभर के लिए हटा दो , स्वस्थ चित्त अव्यग्र मन होने पर श्रवण उपयोगी होगा, फिर बाद में मनन व चिन्तन ।। 111 ।। उसके बाद साक्षात्कार , परन्तु इस सबका आधार श्रवण होगा । इस सबका यही सार है निश्चित ही उससे भव पार होंगे ।। 112 ।। सन् 1917 में, फागुन शुद्ध पौर्णमासी बिस्तर पर निद्रिस्त रहते हुए सूर्योदय से पूर्व मुझे एक स्वप्न हुआ ।। 113 ।। साईं की कुशलता देखिए । सन्यासी का सुन्दर वेष था । मुझे जगाकर दर्शन दिया । बोले , “ आज मैं भोजन के लिए आता हूँ " ।। 114 ।। स्वप्न में जागृतपन उसी स्वप्न का अंश है । कारण जागृत होने पर मैं स्मरण करने लगा ।। 115 ।। आँखें खोलकर देखने लगा । उस जगह न साईं थे न कोई । क्षण भर पूर्व जो था वह स्वप्न ही था जागृतपन थोड़ा भी नहीं था ।। 116 ।। ऐसा मन निश्चित हो जाने पर स्वप्न स्थिति स्मरण होने लगी । एक एक अक्षर चित्त में स्मरण होने लगा , थोड़ी सी विस्मृति के बिना ।। 117 ।। " आज भोजन के लिए आता हूँ " साईं की यह स्पष्टोक्ति सुनकर मन आनंदित हो गया । यह समाचार पत्नी को बताया ।। 118 ।। मन व विचारों में साईं का ध्यान रहता, यह निरंतर का अभ्यास था । यद्यपि सात वर्षों का साथ था । भोजन की आस का आभास नहीं हुआ ।। 119 ।। इस प्रकार उनसे कह दिया , " आज होली का त्यौहार है। एक पावसेर अधिक चावल उबलते पानी में डालना , याद रखना ।। 120 ।।“ यह इतना कहते ही वह कारण पूछने लगीं । मैंने कहा , " आज भोजन के लिए पाहुन इस त्यौहार पर आने वाले हैं ।। 121 ।।“ तब वह बोली , “ बताओ कौन है।“ उनकी जिज्ञासा तीव्र हो गयी । परन्तु मेरे सही कारण बताने पर उपहास भाजक होना होता ।। 122 ।। यह भी मैं पूर्ण जानता था। फिर भी सत्यप्रतारण न हो इसलिए श्रद्धापूर्वक सत्यत्व का निवेदन मैंने किया ।। 123 ।। यद्यपि यह श्रद्धा पर है , जैसी अन्त चेतना , वैसी बात सही या गलत । यह तो सर्वथा मन पर है ।। 124 ।। कितना ही उसे आश्वासन देता , बात उनके अन्दर नहीं बैठ रही थी । वह बोली , " बाबा शिरडी से इतनी दूर से क्या आयेंगे " ।। 125 ।। अपने यहां का क्या भोजन ? अपना होली का त्यौहार क्यों ? शिरडी के स्वादिष्ट भोजन छोड़कर क्यों यहां रूखा - सूखा अन्न का सेवन करेंगे ।। 126 ।। इस प्रकार उनका भाषण हुआ । मैं बोला , “ एक पावसेर चावल उबलते पानी में डालने में अपना क्या श्रम होगा । पावसेर की तुझे कमी नहीं है ।। 127 ।। प्रत्यक्ष साईं पाहुन आयेंगे “ , ऐसा तुझसे मैंने नहीं कहा । परन्तु किसी का आना

होगा यह मुझे निःशंक लग रहा है ।। 128 ।। फिर तुम मन में कैसे ही मानना , मैं उन्हें साईं समान मानूंगा , बल्कि प्रत्यक्ष साईं , अन्य नहीं । मेरा स्वप्न सत्य हो जायेगा ।। 129 ।।“ इस प्रकार भाषण (वार्तालाप) हुआ । फिर मध्याह्न का समय आ गया । यथाविधि होलिका पूजन हुआ । भोजन के लिए पत्तल लगा दिए गए ।। 130 ।। पुत्र - पौत्र , बेटी - दामाद , इष्टमित्र आदि के लिए पंक्ति में पीढ़ा व पत्तल लगाया गया , रंगोली के चिह्न बनाए गए ।। 131 ।। उनमें , मुख्य पंक्ति में एक पीढ़ा रखकर साईं के लिए पात्र में अन्य के भोजन परसा गया ।। 132 ।। पात्र के चारों ओर चमचमाती रंगबिरंगी रंगोली डाली गयी । प्रत्येक के लिए तांबे का पंचपात्र (गिलास), चम्मच । सभी के लिए एक समान ।। 133 ।। पापड़ , सांडगे , सलाद , अचार , रायता विभिन्न प्रकार की सब्जियां , खीर सजाकर परोसी गयी । बहुत एक तैयारी की गयी थी ।। 134 ।। देखकर कि बारह हो गए हैं जेवन करने वालों ने सोवली (रेशम की धोती) ओढ़ कर एक - एक आए पीढ़ों पर बैठ गए, तो भी कोई दूजा नहीं आया ।। 135 ।। सभी पात्र भर गए थे भात रोटी व वरण परोसी गयी । मध्य के रिक्त पात्र को छोड़कर कहीं उस जगह न्यूनता नहीं थी ।। 136 ।। कोई पाहुन अथवा अतिथि आएगा , इसलिए मार्ग देख रहे थे । मेरा मन सशंकित हो गया । उनकी कितनी राह देखी जाये ।। 137 ।। इसलिए दरवाजे की सांकल लगा दी गयी । अन्नशुद्धि के लिए घी तुरंत परोसा गया । वैश्वदेव (अग्नि) को नैवेद्य अर्पित किया गया । अन्न अर्पण की घड़ी आ गयी ।। 138 ।। अब प्राणाहुति लेनी थी इतने में जीने पर पदचाप की आवाज हुई वह बोले , “ राव साहब कहां हैं ? " बैठने वाले शांत बैठे रहे ।। 139 ।। तब मैं वैसे ही दरवाजे पर गया सोचा कोई आया है । धीरे से दरवाजे की सांकल जब खोली जीने पर दो जने दिखे ।। 140 ।। उनमें से एक अल्लीमुहम्मद , दूसरे संत मौलाना के शिष्य थे । जिनका नाम इस्मू मुजावर था । दोनों आनन्दप्रद थे ।। 141 ।। पत्र पर भोजन परोसा गया है । मंडली बैठी है । भोजन की तैयारी देखी । देखकर अल्ली ने विनती की , " क्षमा करें मैंने तकलीफ दी ” ।। 142 ।। लगता है जेवन छोड़कर मेरे लिए दौड़े आए हैं । आपके लिए हाथ धरे पंक्ति भी प्रतीक्षा कर रही है ।। 143 ।। अब अपनी वस्तु लें फिर फुरसत में भेंट होने पर इससे संबंधित अद्भुतता बताऊँगा । यह विषय अति अद्भुत है ।। 144 ।। ऐसा बोलकर बांह के नीचे से अल्ली ने एक पार्सल निकालाटेबुल पर सन्मुख रखा । गांठ खोलने लगे ।। 145 ।। अखबार के आवरण को हटाते तत्क्षण साईं की मूर्ति दीख पड़ी । बोले यह अपनी वस्तु रखें । मेरी यह विनती मान लें ।। 146 ।। साईं की तस्वीर देखकर

शरीर में रोमांच उठ आया । चरणों में सिर रखा , हृदय द्रवित हो गया ।। 147 ।। लगा कि बड़ा चमत्कार हुआ । यह साईं की लीला विचित्र है । लगा कि मुझे पवित्र किया यह ऐसा चरित्र दिखाकर ।। 148 ।। मन में प्रबल उत्कंठा उठी । यह तस्वीर कहां से लाए ? वह बोले मैं एक दुकान से खरीद कर, लेकर आया हूँ ।। 149 ।। बाद में फिर वे दोनों जन एक भी क्षण खड़े नहीं रहे। बोले अब अपन जाते हैं, सहज होकर भोजन करें ।। 150 ।। अब ही इस गोष्ठी का कारण कहने लगूंगा , तो निष्कारण मंडली को भोजन में प्रतीक्षा करनी होगी । वह मैं फिर आराम से कहूँगा ।। 151 ।। मुझे भी वह उचित लगा । समय पर तस्वीर आने का वह आनन्द । मैं उसी में लीन हो गया । आभार प्रदर्शक उद्‌गार किया ।। 152 ।। " अच्छा अब आप जावें । मैं भी बाद में निवेदन करुंगा । तस्वीर यहां आने का कारण । आज ही उसका क्या प्रयोजन ।। 153 ।।“ इस प्रकार , बाद में , उनके जाने के बाद साईं के लिए यथानिश्चित मध्यवर्ती स्थापित पीढ़े पर लाकर उन्हें स्थापित किया गया ।। 154 ।। सबका मन सुखी था । साईं लीला अतर्क्य है । इसी बहाने आगमन किया स्वप्न का वचन सत्य किया ।। 155 ।। यदि कोई अतिथि आता है, आकर वहां पंक्ति में बैठेगा । जिनके चित्त में यही अपेक्षा थी उन्हें कितना आश्चर्य हुआ ।। 156 ।। चित्त की सुन्दर मूर्ति देखकर सभी को परम आनन्द हुआ । यह अकल्पित रीति से कैसे घटित हुआ सभी को आश्चर्य हुआ ।। 157 ।। इस प्रकार प्रतिष्ठापन होने के बाद अर्घ्यपाद्‌य आदि पूजन किया गया । भक्ति प्रेम से नैवेद्‌य समर्पण किया गया । फिर सभी ने भोजन आरंभ किया ।। 158 ।। उसके बाद इस समय तक प्रत्येक होली को इस तस्वीर का अष्टोपचार पूजन के साथ शिष्टाचार करवाया जाता है ।। 159 ।। अन्य देवों के साथ पूजने में यह भी विधिवत पूजे जाते हैं । ऐसा अपूर्व चरित्र साईं पद पद पर भक्तों को दिखाते हैं ।। 160 ।। इस प्रकार बाद में यह दोनों जन आज कल में भेंट करेंगे कहते रहे । नौ वर्ष व्यतीत हो गए तब भी उनके दर्शन नहीं हुए ।। 161 ।। कर्मधर्म के संयोग से अंत में अल्लीमोहम्मद से भेंट इस वर्ष हो गयी । सहज ही वाट चलते मेरी भेंट हो गयी ।। 162 ।। भेंट होने पर उत्सुक था । तस्वीर का कौतुक पूछने के लिए । क्यों इतने वर्षों से मूक - वृत्ति के सेवक बने हो ? ।। 163 ।।“ जैसे पहले वैसे ही आज हमारी भेंट अचानक हो गयी है यह योग सहज आया है वह समग्र मौज बताओ ।। 164 ।। तुम भी श्री साईं के भक्त हो मुझे सब मालूम है, किन्तु उसी दिन अचानक कैसे आना उचित समझा ।। 165 ।।“ फिर उन अल्ली ने वृत्तांत बताया । बोले , ' सुनो साद्‌यंत बताता हूं । देखो साईं की लीला अति अद्‌भुत है वह सब आश्चर्य भरित है ।।

166 ।। इस लीला का क्या अर्थ है ? इसके अन्दर क्या निज कार्यार्थ है ? इसमें भक्तों को क्या संकेत हैं ? साईं ही सुसंगत जानते हैं ।। 167 ।। हमें तो केवल एक दूसरे से इन लीलाओं को सुनना चाहिए अथवा अपने मुख से उन्हें गाना चाहिए । बोलने से अपने लिए हितकर होती हैं ।। 168 ।।" इस प्रकार अब आगे का भाग अगले अध्याय में वर्णित किया जायेगा । श्रोता समुदाय आनन्दित होंगे । साईं का चरित्र अमोघ है ।। 169 ।। साईं निर्द्वेष आनंदघन हैं । निरन्तर सदा भजने से निज सुख - सन्तुष्टि उपलब्ध होगी , मन वासनाहीन होगा ।। 170 ।। चातक अपने स्वार्थ के लिए विनती करता है , मेघ सकल सृष्टि को संतुष्ट कर देता है । बालासाहेब ने बाबा को बुलाया, बाबा ने तब सभी भक्तों को बुलाया ।। 171 ।। भक्तों की पंक्ति में श्रोता भी बैठते हैं प्रेम से उद्यापन कथा सुनते हैं । साईं समागम का आनंद भोगा है, तृप्ति की डकार भी दी है ।। 172 ।। बिना बुलाए वह कैसे आए , कैसे पार्थिव शरीर में प्रगट हुए, कैसे अपने दास को आभारी करते हैं, कैसे पद पद पर जागरूक करते हैं ? ।। 173 ।। इस प्रकार हेमाड साईं की शरण में है । आगे की कथा की भी व्यवस्था अपने आप यथेष्ठ करके निरूपण करेंगे ।। 174 ।। शरणागत को संरक्षण देते हैं । उनके इसी वचन के कारण हेमाड चरणों का आलिंगन करता है, वह इसे पीछे नहीं ढकेलते हैं ।। 175 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईसमर्थ सच्चरित का " उद्यापन कथा कथन " नामक चालीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सदगुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय इकतालिसवां (साईं कृपा अनुग्रह दान) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

ऐसी है साईकथा की महिमा , कितना भी सुनें , प्रोत्साहन की आवश्यकता नहीं पड़ती । श्रोता ही पूर्व संदर्भ को रखते हैं, श्रवणार्थी अति सावधान हैं ।। 1 ।। कथापान करवाने के लिए जहां श्रोता ही सावधान हैं , फिर किस कारण ध्यान के लिए उनसे प्रार्थना की जाये, पहले से ही जिनकी वृत्ति एकाग्र है ।। 2 ।। अपने गुरु की महिमा का गान व श्रवण करने से चित्तवृत्ति निर्मल होती है । दृढ़ ध्यान से नाम जपने से सुख देने वाली मूर्ति प्रकट हो जायेगी ।। 3 ।। गत अध्याय में कथन किया गया था कि कैसे एक व्रत का उद्यापन पूर्ण रूप से संपादित हुआ, दृष्टांत के संकेत से जुड़ कर ।। 4 ।। वैसी ही साईं की पार्थिव छवि (तस्वीर) किस प्रकार अकस्मात आयी । कैसे उचित समय पर इच्छा पूरी करने के लिए | अब यह कथा सुनिए ।। 5 ।। एक होली के त्यौहार पर , मैं आज भोजन लेने आता हूँ ' साईं ने ऐसा स्वप्न देकर मनोकामना पूर्ण की ।। 6 ।। यह कथा पूर्व में ही सविस्तार कही गयी है । पर वह प्रतिमा कैसे समय पर आयी, वह चमत्कार क्या है, वह आज सादर सुनें ।। 7 ।। अलीमुहम्मद ने कथा सुनायी , परम आश्चर्यप्रद लगी, यद्यपि यह एक विशद लीला है, अति विनोदकारक ।। 8 ।।वही जो होली के दिन , हम दोपहर के जेवन के लिए बैठने वाले थे कि ऐन समय पर लाकर मुझे उल्लासित कर दिया था ।। 9 ।। यह तो पूर्व कथा का संदर्भ है । अब श्रोता सावधान होकर आगे का निरूपण सुनें , साईं के पावन चरित्र का ।। 10 ।। यह कथा भी सरसपूर्ण है । श्रोता पहले से ही सावधान है , वक्ता साईं पदों में लीन हैं , साईं का चरित्र गहन है ।। 11 ।। वह परोपकार की प्रतिमा हैं , परोपकार के लिए आत्मा को कष्ट दिया । सदा सर्वदा निर्वैर धर्म का पालन किया , अखण्ड सत्कर्मी रहे ।। 12 ।। अच्छी या बुरी कैसी भी स्थिति देह कर्म से देह को छुटकारा नहीं है फिर भी प्रीतिपूर्वक गुरुचरणों में चित्तवृत्ति को लगाओ ।। 13 ।। फिर जिन भक्तों का योगक्षेम गुरु कैसे ,बिना विश्राम किए, चलाते हैं उन गुरु के चरणों में प्रेम लगाकर अत्युत्तम अनुभव देखो ।। 14 ।। यह स्थिति जो मांगने से नहीं मिलती , गुरु कीर्तन के योग से वही हो जाती है । जो बहुत प्रयत्न से भी

नहीं होता है, वह गुरुकृपा के बल पर चल कर आता है ।। 15 ।। दुरभिमान धर कर जो सूक्ष्म निरीक्षण करने आए, वे भी सब अभिमान त्यागकर वापस हो गए दर्शनसुख से सुखायमान होते हुए ।। 16 ।। यश , श्री, उदारता (औदार्य) , ज्ञान , शांति व वैराग्य - ये षड्गुण । श्री साईं भगवंत इन से पूर्ण थे । हरि (विष्णु) जैसा संपूर्ण ऐश्वर्य था ।। 17 ।। कितना गहन है हमारा भाग्य जिससे यह साईं चैतन्यघन बिना अर्चन - पूजन - भजन के हमें दर्शन दिये ।। 18 ।। कहते हैं भक्ति के पास देव होते हैं । हमारे पास भक्ति का अभाव है फिर भी यह साईं महानुभाव हैं । दीनों के लिए करुणा का स्वभाव है ।। 19 ।। इस प्रकार अली जो बोले श्रोता सद्यन्त वार्ता सुनें ।। साईंलीला की गहनता को जानें और उनकी निजसत्ता को ।। 20 ।। एक दिन मुंबा नगर के रास्ते परचल रहा था । मनोहर चित्र और तस्वीरें बेचते हुए व्यापारी को देखा ।। 21 ।। नाना प्रकार के सुन्दर चित्र संतो , महन्तों व अवलियों के , देखकर मन में विचार आया कि देखू किस - किस के हैं ।। 22 ।। इसलिए एक एक देखने लगा यह तस्वीर चित्त को अच्छी लगी , सबसे अधिक इसकी मोहकता थी, इसके अतिरिक्त यह आराध्य देवता भी हैं ।। 23 ।। पहले से मन में साईं की चाह थी । संमुख उनकी मूर्ति भी खुली थी । देखकर तुरन्त लेने की इच्छा हुई कीमत नगद चुका दी ।। 24 ।। फिर वह तस्वीर घर लाया भीत (दीवार) पर टांग दी । आनंद से नित्य दर्शन करता । प्रेम भी मेरा भारी था, बाबा से ।। 25 ।। इसे ही मैंने तीन महीने पहले तुम्हें दिया था। । मैं साले के साथ रहता था । मेरे जीवन में आराम नहीं था ।। 26 ।। नूर मुहम्मद पीर भाई मेरा साला होता था, मेरे पैर में सूजन थी, उसका उपाय मैंने शल्यक्रिया से किया ।। 27 ।। ऐसा दुःखी होते मैं वहां तीन महीने रहा। मेरे घर में कोई नहीं रह रहा था , इन तीन महीनों में ।। 28 ।। प्रसिद्ध बाबा अब्दुल रहमान , मौलाना साहब , मुहम्मद हुसैन , बाबा साईं तथा बाबा ताजुद्दीन , इन्होंने उस स्थान (मेरे घर) को नहीं त्यागा ।। 29 ।। इन सबके और ऐसे अन्य के मनोहर छाया चित्र मेरे घर के अन्दर भीत पर थे । इन्हें भी कालचक्र ने नहीं छोड़ा ।। 30 ।। मेरी यहां ऐसी गति , चित्रों के पीछे साढ़ेसाती क्यों ? लगता है वस्तु की उत्पत्ति होती है तो उसका अंत (प्रलय स्थिति) भी अटल होगा ।। 31 ।। इस प्रकार ऐसी परिस्थिति होने पर साईं कैसे उससे बच गए इतने समय तक । मुझे कोई नहीं बता सका ।। 32 ।। इस विषय की समूल कथा सुनकर तुम्हें विस्मय होगा । साईं की जड़चेतन में व्यापकता , उनकी अतक्र्य शक्ति का ज्ञान होगा ।। 33 ।। संत बाबा अब्दुल रहमान का एक छोटा चित्र मुहम्मद हुसैन थारियाटोपण के पास था ।। 34 ।। बहुत वर्ष हुए

उसकी एक प्रति मुझे दी थी, वह मैंने साले को दे दी थी, वह उनका शिष्य था ।। 35 ।। वहां आठ वर्षों तक उसकी मेज की दराज में पड़ा रहा । सहज ही एक बार उसने अचानक देखा । मुम्बई के एक फोटोग्राफर की दुकान पर उसे ले गया ।। 36 ।। जिससे महान बाबा अब्दुल का सुन्दर चित्र बनवाया, उसे लेकर उन्हें भेंट करने के लिए | उसके अन्दर प्रेम उमड़ रहा था ।। 37 ।। वहां से प्रतियां लेकर सभी रिश्तेदारों - मित्रों को दिया । उन्हीं में से एक मुझे दिया | मैंने भीत (दीवार) पर लगा दिया ।। 38 ।। फिर वह परम सुन्दर तस्वीर , अब्दुल रहमान के दरबार भरे रहने पर , नूरमुहम्मद उस संत को भेंट करने के लिए तत्पर हुए ।। 39 ।। उनका मन देखकर और चित्र देखकर अब्दुल रहमान अत्यन्त कोपायमान हुए, उन्हें पीटने के लिए उठे ।। 40 ।। भर्त्सना करते हुए उन्हें बाहर निकाल दिया । उससे वे अत्यंत खिन्नवदन हो गए । गहन चिन्ता उत्पन्न हो गयी ।। 41 ।। फिर वह , दीन - हीन , उदास और उद्धिग्न हो गए । पैसा का पैसा गया गुरुकृपा में विघ्न उत्पन्न हो गया ।। 42 ।। आज मैं गुरुकृपा से संपन्न होता ,वहीं मैं क्रोध का कारण बन गया । ऐसा बोलते हुए शंका करते हुए चित्र विसर्जन आरम्भ कर दिया ।। 43 ।। बोले , " अब यह संत प्रतिमा कभी भी घर में रखने का काम नहीं है, इन्हीं के कारण अपने गुरु के प्रेम में अन्तर आया । किसलिए ऐसा व्यर्थ का धंधा ? " ।। 44 ।। बोले , " जिस चित्र को आधार लेकर मेरे गुरु मुझसे नाराज हुए , कभी विपत्ति पड़ने पर वह मेरे काम का नहीं होगा ।। 45 ।। यह प्रतिमा पूजन का प्रकार है। मेरे गुरु को अच्छा नहीं लगा। फिर जिससे नाराज होते हैं मेरे लिए उस चित्र का प्रयोजन क्या है ? ।। 46 ।। बहुत द्रव्य व्यय हो गया इन चित्रों का संचय करने में । फिर भी दूसरा कोई उपाय नहीं है अब सिवाय उनके विसर्जन के ।। 47 ।।“ इसलिए फिर मेरा साल चित्र को साथ लेकर गया , किसी के मांगने पर भी ने देते हुए ,घाट पर विसर्जन के लिए ।। 48 ।। अपोलो बन्दर को सीधे गए । एक भाड़े की बोट लेकर सीधे जहां तक जा सकते थे जाकर समुद्र में वे सब विसर्जित कर दिये ।। 49 ।। इस प्रकार से यहीं नहीं रुके । बान्द्रा में भी यही आरंभ किया । सभी रिश्तेदारों - मित्रों से विनती करके चित्र मांगकर ले लिये ।। 50 ।। बोले , " अब्दुल बाबा क्रोधित हैं आपके पास जो फोटो हैं उन्हें वापस दे दें । विसर्जन करना चाहिए । " सभी से इस प्रकार विनती की ।। 51 ।। मुझे भी दी गयी प्रति ले ली , मेरे भाई की भी प्रति । बहन की भी हस्तगत कर ली । सभी छः प्रतियां प्राप्त कर ली ।। 52 ।। फिर उन सभी प्रतियों को लेकर , बान्द्रा शहर समुद्र के किनारे जहां जमीन समाप्त होती, वहाँ क्रोध के साथ पहुंचे ।। 53 ।। एक

मछुआरे को बुलाकर फिर वे सभी चित्र उसी समय उसके हवाले करके समुद्र के जल में विसर्जित करा दिए ।। 54 ।। मैं भी तब व्यथाग्रस्त था । उन्हीं के घर पर था । मुझे भी उन्होंने ऐसे ही उपदेशित किया , " ये चित्र संकट लाते हैं " ।। 55 ।। इसलिए ये सभी एकत्र करके जब समुद्र में विसर्जन करोगे तभी तुम्हारी व्यथा का निवारण होगा, यह निश्चित जानो ।। 56 ।। मैंने भी अपने सहायक को बुलाया उसके हाथ में चाभी , संतों की सभी तस्वीरें लाने के लिए दी । साले को व्यवस्था सौंप दी ।। 57 ।। उन्होंने अपने माली को बुलवाया तत्काल चिंबई देवालय के निकट समुद्र के जल में उन्हें निपेक्षित करने के लिए ।। 58 ।। दो माह व्यतीत हो गए । मेरे जीव को आराम हुआ तो अपने घर जाने पर अति आश्चर्य हुआ ।। 59 ।। आपको मैंने जो तस्वीर दी उसे द्वार के सामने भीत पर पूर्ववत स्थिर देखकर मुझे बड़ा विस्मय हुआ ।। 60 ।। मेहता (सहायक) समस्त चित्रों को लाया था यही तस्वीर कैसे रह गयी, इसलिए मैंने उसे तत्काल उतारा कपाट के पीछे छिपा दी ।। 61 ।। साले की दृष्टि पड़ गयी तो तुरंत जल समाधि के लिए ले जायेगा, ऐसा मेरे मन में आया ।। 62 ।। अपने घर में रखने का कोई उपयोग नहीं था । साला देखते ही हाथ से डुबो देगा और अभक्त के उपयोग के लिए भी देव निश्चित ही नहीं होते ।। 63 ।। बिना विचारे किसी को दे दूँ । फिर यथोचित देखभाल न हो मन सदा अस्वस्थ रहेगा । यह चिन्ता लम्बे समय तक सर्वदा रही ।। 64 ।। इसलिए वह जहां सुरक्षित रहे उसके लिए ऐसा उचित स्थल देखकर , जो अपने घर में व्यवस्थित रख सकें , उसे ही हस्तगत कराना चाहिए ।। 65 ।। ऐसा मेरा मन उलझन में पड़ा था, साईं ने मन में सुविचार सोचवाया । अब मौलाना के दरबार में जाते हैं । इस्मू से वृत्तांत कहते हैं ।। 66 ।। फिर मैं तुरंत वैसे ही वहां पर पीर मौलाना के दरबार में गया । मुजावर इस्मू से सारी बात एकांत में अति आदर से सूचित किया ।। 67 ।। हम दोनों का यह निर्णय हुआ कि आप के पास यह (चित्र) निर्भय रहेगा । इसलिए उसी दिन हम दोनों ने मन में निश्चय किया ।। 68 ।। यह साईंसमर्थ की तस्वीर आपके यहां रखी जानी चाहिए , स्वयं आपको समर्पित करेंगे , इसीलिए यह यहां पर रहेगी ।। 69 ।। तब उस कृतनिश्चय के अनुसार आपको वह प्रतिमा भेंट की । आपके भोजन के लिए तैयार देखकर वैसे ही मैं तुरंत वापस आ गया ।। 70 ।। यह लम्बी कथा सुनने के लिए आपके पास तब समय नहीं होगा ,यह उद्देश्य धारण कर मैं चला गया ।। 71 ।। आज कल करते - करते नौ वर्ष बीत गए । आज भी अचानक भेंट हो गयी हम दोनों की परस्पर ।। 72 ।। तब पूर्वकथा स्मरण हो आयी आपने भी स्वप्न कौतुक सुनाया । अपूर्व कथानक का संबंध जुड़

गया । क्या यह लीला अद्‌भुत नहीं है ? ।। 73 ।।“ अब एक दूसरी कथा । श्रोता सावधान चित्त सुनें । साईं कैसे प्रेमल (अनुरागी) भक्तों से अति स्नेह से व्यवहार करते थे ।। 74 ।। जिन्हें वस्तुतः परमार्थ में रुचि थी उनके प्रति साईं का बहुत प्रेम था । उनके सभी कठिनाईयों को हरकर उन्हें स्वानन्द से जोड़ते थे ।। 75 ।। इस संबंध में मधुर अनुभव है । बाबा साहेब देव का प्रण पूरा करने के लिए उनकी इच्छा पूरी की । उन्हें भक्ति से जोड़ दिया ।। 76 ।। दिन में नौकरी के सिवाय योग क्षेम का उपाय नहीं था परन्तु रात्रि में परमार्थ व्यवसाय करने में विघ्न क्यों आता था ।। 77 ।। बहुत दिनों से इच्छा थी नित्य ज्ञानेश्वरी वाचन कराने की । पर कोई न कोई विघ्न आने पर नहीं हो पा रहा था ।। 78 ।। भगवद्‌गीता का एक अध्याय जैसे रोज नियम से होता था । वैसे ही ज्ञानेश्वरी का निश्चय था । बिना विघ्न नहीं चल पा रहा था ।। 79 ।। अन्य ग्रन्थ हाथ में लेते ही नित्य नियम से पाठन हो जाता । ज्ञानेश्वरी का प्रबल उद्‌देश्य नियम से पूरा नहीं होता ।। 80 ।। तीन माह का अवकाश लेकर एक बार देव शिरडी गये।वहां से अपने घर पौड में सुख से विश्राम करने के लिए ।। 81 ।। वहां भी अन्य कार्य हो गए , अन्य नाम की पोथी पढ़ी । ज्ञानेश्वरी की कामना पूर्ण नहीं हुई । उसका समय नहीं आया ।। 82 ।। ज्ञानेश्वरी हाथ में लेते ही कुछ भ्रम चित्त में उठता, जिससे वाचन ऊपरी तौर पर हो जाता । चित्त में प्रेम नहीं उपजता था ।। 83 ।। उद्‌विग्नता का क्या करें ? किये गये निश्चय की सिद्‌धि प्राप्त नहीं होती थी । पांच पद भी नित्य नियम से प्रतिदिन नहीं पढ़ पाते थे ।। 84 ।।“ प्रतिदिन पांच पद कम से कम का मन निश्चय किया था , वह भी नियम से उल्हासपूर्वक मेरे द्‌वारा वाचा नहीं जा सका ।। 85 ।। इसलिए फिर जब साईं प्रेम देंगे, कहेंगे ,”पढ़ो “ , तब ही उपक्रम उद्‌वेग रहित होकर करेंगे ।। 86 ।। साईं के पांवों के निकट निष्ठा है । जब साईं आज्ञा देंगे तब ही ज्ञानेश्वरी का वाचन करूंगा ।“ कृत निश्चय हो बैठ गए ।। 87 ।। इस प्रकार जब महोदय पर्व (सन 1814 का फरवरी मास) आया , देव माँ व बहनों के साथ गुरुपूजा गौरव देखने तब शिरडी पहुंचे ।। 88 ।। वहां जोग ने देव से पूछा , “ इस समय आप नित्य ज्ञानेश्वरी क्यों नहीं पढ़ते ? " प्रत्युत्तर दिया उसे सुनें ।। 89 ।। “ज्ञानेश्वरी की बड़ी कामना है किन्तु वह पूरी नहीं होती । अब जब बाबा वाचन के लिए कहेंगे उस समय से वाचन करुंगा ।। 90 ।।“ तब जोग ने युक्ति बतायी , " ज्ञानेश्वरी पोथी लाओ साईंबाबा के हाथों में दे दो, तब तुम्हें वे वाचन के लिए देंगे " ।। 91 ।। “मुझे किसी युक्ति की आवश्यकता नहीं है, बाबा मेरे मन को जानते हैं। वे क्यों नहीं मेरी इच्छा पूरी करते हैं ?” ।। 92 ।। समर्थ का दर्शन

प्राप्त करके एक रुपया अर्पण किया । " एक ही क्यों बीस लाओ " तब बाबा ने उनसे कहा ।। 93 ।। लाकर बीस रुपये दिये । रात्रि में बालकराम से भेंट की । उनसे पूर्व की घटना पूछी कि साईं की कृपा कैसे प्राप्त की ? ।। 94 ।। " अगले दिन आरती होने के बाद तुम्हें संपूर्ण सुनाऊँगा " ऐसे बालक ने आश्वासन दिया । देव ने उनसे कहा , " अच्छा " ।। 95 ।। पुनः देव के दूसरे दिन मस्जिद दर्शन के लिए जाने पर , उनसे बीस रुपये मांगे । देव ने सुख संतोष से दिया ।। 96 ।। वहां अत्यंत भीड़ देखकर देव बाजू में आड़ में खड़े हो गए । बाबा पूछे , " कहां बंध गया है । संकरी जगह में छिप गया है" ।। 97 ।। देव वहां से उत्तर देते हैं , " बाबा , मैं यहां हूँ न । " बाबा तब उनसे पूछते हैं , "क्यों सात ही दिये थे "।। 98 ।। देव बोले , " बीस दिए थे ।" बाबा ने पूछा , " पैसा किसका है ? " तब वे बोले , " बाबा आपका " " फिर तुम क्यों भाग रहे हो ।। 99 ।। आओ यहां निकट आओ । स्वस्थ चित्त से निकट बैठो ।" देव ने आज्ञा का पालन किया। मनोभाव से वे बैठ गए ।। 100 ।। नित्य की भांति आरती हुई । भक्तगण अपने अपने स्थान को वापस हुए । बालकराम व देव की भेंट हुई पूर्व की भांति पूछना आरंभ किया ।। 101 ।। उनसे पूर्व वृत्तांत पूछा । उन्होंने साद्यंत कहा । देव ने तब उनसे कहा , " उपासना के लिए कैसे पथ प्रदर्शन किया ।। 102 ।। क्या आपको बताया था कि ब्रह्मचिंतन कैसे करें । मेरी यह जिज्ञासा पूर्ण करिए । देव फिर उनसे प्रार्थना करने लगे ।। 103 ।।" बालकराम देव की ओर उन्मुख होकर उनकी जिज्ञासा की पूर्ति करने के लिए उत्तर देना जो आरंभ किया बाबा ने देव को बुला लिया ।। 104 ।। साईं कैसे परम दयालु हैं । चन्द्रू को देव को बुलाने के लिए भेजा । देव ने क्षण का भी बिलंब नहीं किया साईं से भेंट के लिए आये ।। 105 ।। तीन प्रहर हो गए थे । मस्जिद की दीवार पर दोनों हाथ टेके हुए सामने साईं को देखा ।। 106 ।। देव ने जाकर वंदन किया । बाबा ने उनसे प्रश्न पूछा , " कहां , किससे , क्या संभाषण आपका हो रहा था " ।। 107 ।। फिर देव ने उत्तर दिया । " काका के ऊपरी मंजिल पर बालकराम के साथ कीर्ति सुन रहा था " ।। 108 ।। बाबा देव को आज्ञा दी " पचीस रुपये लाओ । " उसी समय लाकर रुपये बाबा को समर्पित किए ।। 109 ।। पूछे , " कितने लाये हो ? " देव बोले ," पचीस " | बाबा बोले ," चलो आओ बैठो ।" तब बाबा के साथ मस्जिद में गए ।। 110 ।। बाबा खंभे के पास बैठे । दूसरा कोई मस्जिद में नहीं था । बोले , " तुमने मेरी चिन्दी ,बिना मेरी जानकारी के, चुरा ली ।। 111 ।।" "मुझे चिन्दी नहीं मालूम ।" कहकर देव गवाही देने लगे । " "फिर यहीं कहीं देखो । " फिर साईं उनसे बोले ।। 112 ।। उस समय देव बोले , " यहां कहां

चिन्दी है " बाबा उठते हुए बोले , " तुम खोजो । यह खोटी बुद्धि चोरी की है " ।। 113 ।। " कोई नटखट बच्चा उसे ले गया होगा । देखो - देखो यहीं होगा । " सुनकर देव और ढूंढने लगे । फिर भी वह मिली नहीं ।। 114 ।। फिर भृकुटि तान कर इधर - उधर देखते हुए देव को गुर्राते हुए घूरा ।। 115 ।। बोले ," तुम झूठे हो । तुम्हारे बिना कौन इस समय चिंदी चुराने आएगा | मैं तुम्हें ही चोर समझता हूं ।। 116 ।। इस प्रकार यहां जो आते हो, तो क्या चोरी करन के लिए | बाल काले से सफेद हो गए बुराइयां लेशमात्र भी नहीं गयीं ।। 117 ।। तुम पर कुल्हाड़ी से वार करुंगा । तुम्हें काट डालूंगा , मार डालूंगा । कहीं भी जाओ अपने हाथ से आकर वहीं तुझे मारुंगा ।। 118 ।। घर से जो शिरडी आए हो तो क्या चोरी करने के लिए । यह लो अपना (रुपया) वापस । मेरी चिंदी लाकर दो ।। 119 ।।" क्रोध से लाल हो गए साईं । गाली देने लगे । गालियाँ और शाप देने लगे । क्रोध (संताप) से जलने लगे ।। 120 ।। साईंनाथ का क्रोध देखकर देव कौतुक देखते रहे आश्चर्य भरित मन से अनुशासित भाव खड़े रहे ।। 121 ।। देव निकट और अकेले थे ।" लगता था मार पड़ने की बारी आ गयी है । क्या यह सुन्दर विश्वरूप दर्शन हैं जानकर आनन्द से गला भर गया ।। 122 ।। क्या अब सटका पकड़ेंगे ? क्या उससे आघात करेंगे । अकेला मैं हाथ पड़ गया । जो मन में आए करें ।। 123 ।।" किन्तु यह चिंदी की क्या पहेली है ? यह तो देव का कुछ भी समझ में नहीं आया । एकतरफा बोले , "जाओ निकल जाओ । " तब वे सीढ़ी की ओर सरके (चले) ।। 124 ।। चिंदी का गुह्यार्थ क्या है ? जानने में मैं समर्थ नहीं हूँ । साईं कृपा से जब स्वार्थ प्राप्त होगा तब श्रोताओं के लिए निवेदन करुंगा ।। 125 ।। आधे घटका (12 मिनट) बाद देव बाबा के समक्ष आए । गलियों का गजर चालू था । बोले , " क्यों आए हो ।। 126 ।। जाओ , वाडा चले जाओ । " बोलते ही देव ने आज्ञा का पालन किया । चरणों में नमन किया । वाडे में वापस आ गए ।। 127 ।। इसके बाद सभी वास्तविकता , जैसे जैसे घटित हुआ था , यथार्थ , जोग और बालकराम से साद्यंत निवेदन किया ।। 128 ।। फिर पूरे 24 मिनट तक गलियों और शाप की बौछार तेजी से पड़ती रही । प्रहर दो प्रहर बाद बाबा लोगों को देखने के लिए आमन्त्रित करने लगे ।। 129 ।। देव भी फिर वहां आए । अन्य लोगों के मध्य जाकर बैठ गए । फिर साईं बोले , " बूढ़े आदमी को अवश्य ही बुरा लगा होगा ।। 130 ।। चिंदी की यह कथा क्या है ? फिर भी मैंने बुरा (गालियाँ) कह कर उसको ठेस पहुंचाई । चोरी हुई थी , उसका क्या उपाय था ? बोले बिना रह नहीं सका ।। 131 ।। यह सब अल्लाह लेकिन देखेंगे । वह भी उसका भला करें ।"

तब क्षमाशील श्रीसाईं ने पूछा , “ ए भाऊ , दक्षिणा दोगे " ।। 132 ।। देव ने पूछा , " कितना लाऊँ ” “ बारह लेकर जल्दी आओ”। देखने पर नोट थी उसके रुपये नहीं मिले (फुटकर नहीं मिले) ।। 133 ।। देव ने बाबा से वैसे ही कह दिया । वह बोले , “ रहने दो मुझे नहीं चाहिए । सुबह तुमने दोगुना दिया था । मुझे उसका स्मरण नहीं रहा " ।। 134 ।। फिर देव ने रुपये प्राप्त करके (व्यवस्था करके) बाबा के पास आकर दिए । साथ ही उनके चरणों की वंदना की । सुनिए फिर जो बोल निकले ।। 135 ।। " आजकल तुम क्या कर रहे हो ? " उन्होंने कहा , " कुछ नहीं । ” “ जा नियम से पोथी वाचो " । देव ने आज्ञा दी ।। 136 ।। " वाडे में जाकर बैठो । नित्यनियम से वाचते जाओ । वाचने के साथ - साथ भावपूर्वक सबका निरूपण होना चाहिए " ।। 137 ।। जरी से मढ़ी हुई पूरी शेला तुम्हें देने के लिए बैठा हूं , चिंदी की चोरी के लिए क्यों जाते हो । तुम्हारी चोरी की प्रवृति क्यों ? ।। 138 ।।“ “इस प्रकार पोथी वाचन कराने के लिए साईं मुख के ये वचन । मुझे संकेत मिल गया । मेरा अन्तर्मन अति सुख सम्पन्न हो गया ।। 139 ।। उनकी आज्ञा को प्रमाण मान कर फिर मैंने उस दिन से नित्य ज्ञानेश्वरी का वाचन (और) वैसे ही निरूपण प्रारम्भ कर दिया ।। 140 ।। अब वांछित आज्ञा मिल गयी थी । व्रतस्थ मन की चिंता दूर हो गयी थी । यहां से मेरा ज्ञानेश्वरी का पठन हुआ । पठन में नियमितता आयी ।। 141 ।। अब मैं गुरु की अनुज्ञा को धारण किए हूं । अब ज्ञानेश्वरी मुझसे प्रसन्न है । आज तक जो हुआ पीछे रह गया । अतः इसके बाद नियम का पालन करना है ।। 142 ।। मेरा मन मेरा साक्षी है । और साईं की आज्ञा प्रमाण है । आज्ञा के बल से पोथी - परायण अब मुझसे निर्विघ्न होता है ।। 143 ।। बाबा , मैं साष्टांग प्रणाम करके अनन्य भाव से तुम्हारी शरण में आता हूं अपने इस बालक को शरण में लो । मुझसे पारायण करवाओ ।। 144 ।। वह चिंदी क्या थी अब ध्यान में आ गया | बालकराम से जो पूछा था इसलिए वह बाबा को अच्छा नहीं लगा था ।। 145 ।।बालकराम से मेरा यह पूछना कि आप को उपासना व परब्रह्म चिंतन में कैसे लगाया, बाबा को अच्छा नहीं लगा।। 146 ।। स्वयं उन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए तत्पर है फिर किसलिए परस्पर पूछताछ करें। इसलिए मुझे घोर यंत्रणा दी थी ।। 147 ।। ' यंत्रणा ' यह बोलना धृष्टता होगी । जो भक्तों के लिए प्रेम से भरे हैं भक्त के साथ छल जिन्हें स्वप्न में भी नहीं दिखता उनके लिए ‘यंत्रणा ' अनुचित क्रियापद है ।। 148 ।। यंत्रणा नहीं दी मुझे सिखाया , तुम्हारे चित्त में जो - जो उदित हो वह सब मुझे स्वयं पूरा करना है । चोरी किया हुआ कुछ काम का नहीं है ।। 149 ।।“ साईं बाह्यरूप से क्रोधित दिखते ,

अन्दर से वह नित्य आनन्दित रहते । बाहर से संताप से संतप्त दिखते । अन्दर से आनन्द से तृप्त रहते ।। 150 ।। बाहर से लौकिक क्रोध की कुशलता अन्तर्मन में परमानन्द का गौरव उस साईं की लीला का वैभव गाने के लिए अच्छा भाग्य चाहिए ।। 151 ।। अपना स्वार्थ सिद्‌ध करने के लिए जिनके अन्दर तीव्र उत्कंठा है, गाली व शाप की वर्षा को फूलों की वर्षा मानेगा । दृष्टि निजहित पर तत्पर रहेगी ।। 152 ।। कर्णकटु अश्लील वचन सुनकर देव का मन विचलित नहीं हुआ हृदय की गहराई से प्रेम भर गया । लगा जैसे पुष्पों का वार हो रहा है ।। 153 ।। गाय का थन दुग्ध से भरा हो । भाग्यवान को गोरस का लाभ होता है । थन के पास जोंक का वास हो तो उसके भाग्य में रक्त होता है ।। 154 ।। मेढक कमलदल (कमल की जड़) का पड़ोसी होता है । कमल रस को भ्रमर लूटता है । दुर्भाग्य से मेढक कीचड़ का आहार करता है । भ्रमर के भाग्य का पार नहीं है ।। 155 ।। वैसे ही आप भाग्यवान हैं मेरा आपका मिलन हुआ है मन में जो है ले लो शंका का समाधान पूछ लो बोले साईं ।। 156 ।। देखिए मेरा पोथी के लिए हठ कि पढ़ो कहेंगे उसी समय पढ़ूंगा । तब तक ज्ञानेश्वरी मैं नहीं खोलूंगा | बाबा ने शीघ्र ही पूरा कर लिया ।। 157 ।। कैसे माँ लाड़ करती है अपने बालक की इच्छा को पूरी करके , उसकी सुन्दर अनुभूति , भक्ति को जोड़ने की यह कथा है ।। 158 ।। “ पढ़ो ” कहकर रुके नहीं । “ देव बोले , “ वर्ष पूरा नहीं हुआ कि स्वप्न में आकर दर्शन दिए । " आश्चर्य मुझसे जो पूछा उसका श्रवण करें ।। 159 ।। सन् 1814 , अप्रैल की दूसरी तारीख तब गुरुवार का दिन उदित होते एक बार स्वप्न प्रसाद प्राप्त हुआ ।। 160 ।। समर्थ साईं स्वप्न में आए । वाडे के ऊपर खण्ड में बैठे हुए थे । मुझसे पूछा कि पोथी समझ में आयी क्या ? उत्तर दिया कि नहीं समझा ।। 161 1। वैसे ही अगला प्रश्न हुआ कि फिर कब समझोगे ? मेरी आँखों में आँसू आ गये । मैंने क्या प्रत्युत्तर दिया ।। 162 ।। " आपकी कृपा प्राप्त हुए बिना पोथी वाचन केवल श्रम है समझना तो उससे भी कठिन है, बाबा मैं निष्कपटता से बोलता हूं ।। 163 ।।“ बाबा बोले , “ पोथी पढ़ते तुम बहुत शीघ्रता करते हों । पढ़ो, देखो मैं देखता हूं । मेरे पास निकट बैठो ” ।। 164 ।। देव बोले , “ क्या पढ़ूं " | आध्यात्म (अध्यात्म विषयक अध्याय) की आज्ञा दी । देव पोथी लेने के लिए जाते हैं नेत्र तत्काल खुल गए ।। 165 ।। देव तब जाग गए थे । स्वप्न की स्थिति निश्चित देख रहे थे । उनके चित्त को कैसा लगा होगा , श्रोता इसकी कल्पना करें ।। 166 ।। वर्ष भर वाट देखकर बालक ने आज्ञा मानी कि नहीं , नित्य पोथी का पाठ क्या करता है यह चिन्ता किसे होगी ।। 167 ।। अनुशासित होकर पालन कर रहा है नित्य पाठ

के अक्षरों का ध्यान से स्मरण कर रहा है या किसी निमित्त चूक कर रहा है कौन यह सतत देखेगा ? ।। 168 ।। वाचक को कैसा दक्ष होना चाहिए कहां विशेष लक्ष्य करना चाहिए साईं माँ के बिना प्रत्यक्ष कौन यह साक्ष्य सुनिश्चित करता होगा ।। 169 ।। ऐसी साईं समर्थ की लीला ! ऐसा स्वानंद का उत्सव । असंख्य भक्तों को आनन्द भोगते समय मैंने प्रत्यक्ष आँखों से देखा है ।। 170 ।। अब हम श्रोता मंडली का पदकमल में लीन होकर आगे की नवल कथा को सुनना चाहिए यथा समय अगले अध्याय में ।। 171 ।। श्री साईंसमर्थ चरण का स्मरण करके सद्भाव से मैं साष्टांग दण्डवत में आता हूं उसी से सकल सांसारिक दुःखों का विमोचन होगा शुद्ध भाव से हेमाड शरण में है ।। 172 ।। साईं ही एक स्वार्थ है उनका साईं ही अतिशय विहीन परमार्थ सुख है, साईं ही उनको कृतार्थ करेंगे । यह उनका निश्चित भाव है ।। 173 ।। स्वस्ति श्री संतसज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित का " साईं कृपानुग्रहदान " नामक इक्तालिसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय बयालीसवां (श्री साईंनाथ निर्याण)।।

श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

ॐ सद्गुरु को नमन जो उदार हैं । श्री मद्गोदातट पर बिहार करने वाले ब्रह्ममूर्ति , कौपीन वस्त्र हैं जिनका , संतों में श्रेष्ठ तुम्हें नमन है ।। 1 ।। जो भव रूपी नदी को पार करने की दिशा दिखाते हैं, दीनों को अपने चरणों में विश्राम देते हैं, वही हैं भक्त काज के कल्पतरु संतावतार साईं ।। 2 ।। गत अध्याय में अदभुत लीला की सुन्दर कथा थी कि कैसे साईं की तस्वीर पानी में डूबने से बच कर सुरक्षित रही थी ।। 3 ।। वैसे ही एक भक्त की कामना साईं ने स्वप्न में आकर पूरी की । उसे ज्ञानेश्वरी के पारायण में लगाया , विशेष स्पष्ट अनुज्ञा देकर ।। 4 ।। सारांश यह कि गुरुकृपा उदित होने पर भवभय का संकट शांत हो जाता है , मोक्ष का मार्ग द्वार खुल जाता है, असुख सुख में बदल जाता है ।। 5 ।। सद्गुरु चरणों का नित्य स्मरण करने से विघ्नों का विघ्नपन नष्ट हो जाता है , मृत्यु को भी मृत्यु आ जाती है, सांसारिक दुःख विस्मृत हो जाते हैं ।। 6 ।। इसलिए साईंसमर्थ की इस कथा का श्रवण श्रोता अपने हित के लिए करें , जिसके श्रवण से वास्तव में अति पावनता प्राप्त होगी ।। 7 ।। अब इस अध्याय में मैं साईं स्वभाव का निरूपण करता हूं कैसे उनके मन का तीव्रपन अथवा कोमलता थी ।। 8 ।। अब तक चित्त को समाहित करके आचरित का श्रवण जैसे किया वैसे ही दत्तचित्त होकर बाबा के देहोत्सर्ग - चरित को सुनें ।। 9 ।। धन्य - धन्य हैं शिरडी के लोग जिन्हें बाबा के साथ रहने का सुख मिला , अर्द्धशतक से भी अधिक समय तक अति सुखकारक रहा ।। 10 ।। शक संवत् 1840 (सन् 1918) , दक्षिणायन के प्रथम मास में शुक्ल पक्ष में विजयदशमी के दिन बाबा का देहान्त हुआ ।। 11 ।। मुसलमानी नौ तारीख , उस दिन कत्ल की रात थी । तीसरे प्रहर साईंनाथ ने निर्याण की तैयारी की ।। 12 ।। जैसे बुद्ध की बुद्ध जयंती वैसे ही साईं की पुण्य तिथि । जैसी देवादिकों की जयंती वैसे ही संतों की पुण्य तिथि ।। 13 ।। साढ़े बारह का घंटा बजा , दशमी का काल पूर्ण हुआ , एकादशी उदित हुई । निर्याण काल में एकादशी थी ।। 14 ।। सूर्योदय की उदय तिथि से दसवीं तिथि को मानते हैं । इसलिए विजयदशमी हुई उसी दिन उत्सव करते हैं ।। 15 ।।

मंगलवार कत्ल की रात , ऐसा वह दिवस अति विख्यात है । इसीलिए उस दिन साईं महंत ने ज्योति से ज्योति का मिलन करा दिया ।। 16 ।। बंगदेश का प्रसिद्ध उत्सव दुर्गापूज़ा का समाप्ति दिन । वही उत्तर भारत पर्यंत सभी का उत्सव दिन होता है ।। 17 ।। शक संवत् 1838 (सन 1916) विजय दशमी के ही दिन सायंकाल प्रदोष समय में भविष्य की सूचना दी थी ।। 18 ।। वह अपूर्व लीला कैसी थी , कहता हूं । श्रवणकर्ताओं को विस्मय होगा | समर्थ साईं की अचिंत्य योजना को इससे सब लोग जान सकेंगे ।। 19 ।। ईसवी सन् 1916 दशहरा उत्सव की ' शिलंगण ' वेला (धूमधाम से जुलूस गांव की सीमा पार तक जाकर वापस आता है , जो नव विजय का प्रतीक होता है) , सायंकाल की फेरी से वापस आने पर अद्भुत लीला घटित हुई ।। 20 ।। आकाश में बादलों की गड़गड़ाहट , अचानक विद्युत - लता की कड़कड़ाहट, जैसे जमदग्नि स्वरूप में परिवर्तित होकर चमक कर बाबा ने स्वयं को प्रकट किया ।। 21 ।। सिर का बंधा वस्त्र उतार दिया तुरन्त कफनी खींच ली , कौपीन उतार ली , धुनी में डाल कर जला दिया ।। 22 ।। अग्नि तो पहले ही प्रज्ज्वलित थी प्रबल आहुति की सहायता से ज्वाला कल्लोल करते हुए ऊपर उठने लगी । भक्त व्याकुल हो गए ।। 23 ।। यह सब अचानक घटित हुआ ! बाबा के चित्त में क्या था कोई नहीं जानता था । शिलंगण काल में यह वृत्ति बहुत भयभीत करने वाली थी ।। 24 ।। अग्नि ने अपने तेज का प्रसार किया उससे भी सतेज बाबा दिखे । नयन सहज ही झपकने लगे । लोगों ने मुंह घुमा लिया ।। 25 ।। संत के हाथ की आहुति की सेवा से अग्नि नारायण प्रसन्न हुए । वे यमदग्नि के पुत्र परशुराम दिगम्बर बने थे । देखने वाले नयन धन्य हैं ।। 26 ।। क्रोध से जलते नयन से देख रहे थे । क्रोध से नयन आरक्त हो गए थे । बोले , " मैं हिन्दू हूं या मुसलमान अब निदान (लक्षण देखकर व्यक्ति के वर्ण का स्थिरीकरण) कर लो " ।। 27 ।। गर्जते हुए बाबा बोले , " देखो जी , मैं हिन्दू हूं कि मुसलमान , आओ जी | मन में यथेच्छ निर्धारण कर लो , जी ! आशंका दूर कर लो " ।। 28 ।। यह दृश्य देखकर मंडली कंपायमान हो गयी । निरंतर चिंतन चल रहा था कि कैसे शांत होंगे ।। 29 ।। महाव्याधि से ग्रसित थे भागोजी शिंदा किन्तु बाबा के श्रेष्ठ भक्त थे । हिम्मत करके बाबा के निकट आए बाबा को लंगोट पहनाए (बांधे) ।। 30 ।। बोले , " बाबा यह क्या बवाल है ? आज दशहरा का शिलंगण उत्सव है । " बोले , " मेरा यही शिलंगण है " सटके से सण - सण मारते हुए ।। 31 ।। इस प्रकार धुनी के निकट दिगंबर वेश में बाबा खड़े थे । वह चावड़ी का दिन होता था । कैसे होगा यह चिन्ता थी ।। 32 ।। नौ (बजे) की चावड़ी थी दस हो गए थे । पर बाबा स्थिर

नहीं हुए थे । लोग जगह - जगह तटस्थ फटी आँखों से देख रहे थे अनुशासित होकर ।। 33 ।। होते - होते ग्यारह हो गए । तब बाबा जरा शान्त हो गए । नया लंगोटा बांधा फिर कफनी पहनायी गयी ।। 34 ।। चावड़ी के लिए घंटा हुआ । मंडली ने , जो तटस्थ बैठी हुई थी , पालकी का फूलों से श्रृंगार किया । आज्ञा लेकर आंगन में लाए ।। 35 ।। चांदी की दण्ड , पताका , चवरी , छत्र , ध्वजा आदि राजोपचार से श्रृंगारित जुलूस की सवारी एक दिन के अंतर पर बाहर निकलती थी ।। 36 ।। वाद्‌ययंत्र ऊँची आवाज में एकसाथ बजने लगे , साईंनाथ की जयजयकार हुयी । उस जय जयकार का वर्णन कौन कर सकता है । आनंद की बाढ़ आ गयी ।। 37 ।। फिर शुभ्र वस्त्र का टुकड़ा ढूंढकर बाबा ने वस्त्र के टुकड़े को सिर पर बांधा । चिलम , तमाखू , सटका लिया मानो वही उपयुक्त शुभ मुहूर्त है ।। 38 ।। किसी ने छतरी, किसी ने चवर, कोई ने मोरपंख का सुन्दर गुच्छा , कोई ने गरुड़ चित्र अंकित पताका , आभूषणों से सुसज्जित छत्र ,कोई ने चोपदार का दंड अपने अपने हाथ में लिया ।। 39 ।। इस प्रकार करने के बहाने बाबा ने सर्वत्र संकेत दिया कि भवसागर सीमोल्लंघन की शुभ मुहूर्त एक दशहरा है ।। 40 ।। उसके बाद एक ही दशहरा बाबा ने शिरडी वासियों को दिखवाया । अगले दशहरे की अच्छी शुभ मुहूर्त में अपनी देह पृथ्वी को अर्पित कर दी ।। 41 ।। यह केवल सूचित नहीं किया , स्वयं अनुभव कराया , अपने शरीर के शुद्‌ध वस्त्र की आहुति इसी दिन योगाग्नि को अर्पित करके ।। 42 ।। सन्‌ 1918 , उस साल का वह दशहरा उत्सव । वस्तुतः उसी सुमुहूर्त में अपने को ब्रह्म में समरस कर लिया ।। 43 ।। ऐसा ही बाबा का एक और अनुभव लिखते - लिखते चित्त में स्मरण हो आया कि यही विजयदशमी की तिथि पहले से ही निश्चित थी ।। 44 ।। शिरडी के पाटिल रामचन्द्र दादा एक बार बहुत बीमार हो गए । जीव आपदा को बर्दाश्त नहीं कर पा रहा था । भोक्तृत्व अति तापदायक था ।। 45 ।। कोई उपाय बाकी नहीं रहा । जब बीमारी नियन्त्रित नही हुई । जीवन से उदास हो गए । पाटिल अत्यन्त परेशान हो गए थे ।। 46 ।। उनकी ऐसी मनःस्थिति होने पर एक दिवस मध्य रात्रि में एकाएक बाबा की मूर्ति उनके सिरहाने प्रकट हुई ।। 47 ।। तब वे पाटिल पांव पकड़ लिए । निराश होकर बाबा से बोले , " निश्चित रूप से मेरा मरण कब आएगा ? इतना ही मुझे बता दो ।। 48 ।। अब जीवन से तंग आ चुका हूं, मुझे मरण का संकट नहीं है । मरण कब मुझसे भेंट करेगी इसकी ही वाट देख रहा हूं " ।। 49 ।। तब उस करुणामूर्ति बाबा ने कहा , " चित्त में चिंता न करो । तुम्हारी गंभीर बीमारी का भय टल जायेगा । किस लिए चिंता करते हो ।। 50 ।। तुम्हारे लिए कुछ भी भय नहीं है । तुम्हारी हुण्डी वापस ले ली

गयी है ! किन्तु तात्या की सुरक्षा का अवसर मुझे नहीं दिख रहा है , रामचन्द्र ।। 51 ।। शक 1840 (सन 1918) , दक्षिणायन आश्विन मास , विजयदशमी शुक्ल पक्ष को तात्या अक्षय पद प्राप्त करेगा ।। 52 ।। किन्तु उससे मत बोलना । मन में भय बैठ जायेगा । रात दिन क्षीण होता जायेगा । मरण किसी को अच्छा नहीं लगता ।। 53 ।।" केवल दो वर्ष ही शेष थे । तात्या का समय निकट आ गया था । रामचन्द्र चिंतित थे । बाबा के बोल ' वज्रलेप ' थे ।। 54 ।। तात्या से गुप्त रखा | बाला शिंपी के कान में डाल दिया । किसी से न बताने की प्रार्थना की । दोनों को इसकी चिंता थी ।। 55 ।। वस्तुतः रामचन्द्र पाटिल स्वस्थ हो गए उनका बिछौना तभी से सिमट गया । दिन एक - एक करके व्यतीत होने लगे । बिना पता लगे वह (दो वर्ष का) समय निकल गया ।। 56 ।। बाबा के वचन का प्रतिबंध अद्भुत है । चालीस (1940 = 1918) का भाद्रपद समाप्त हुआ । अश्विन मास प्रारम्भ हुआ । तात्या चटाई पर पड़ गए ।। 57 ।। वहां तात्या ज्वर से पीड़ित थे । यहां बाबा कंपकपी से भर गए । तात्या का भरोसा बाबा पर था । बाबा श्री हरि से रक्षित थे ।। 58 ।। तात्या का बिछौना सिमट नहीं रहा था बाबा के दर्शन के लिए नहीं आ पा रहे थे । शरीर की यातना अनियन्त्रणीय थी । उनसे सहा नहीं जा रहा था ।। 59 ।। एक तो निज व्यथा से व्यथित , बाबा के पास चित्त लगा रहता , न ही चलना, न हिलना । उनका दुःख बढ़ता ही गया ।। 60 ।। इधर बाबा का कराहना . कूखना दिन - दिन दुगुना बढ़ता गया , आह , आह करते । उनके भी दुःख की अनियन्त्रणीयता कम नहीं हो रही थी ।। 61 ।। कहते - कहते जिस दिवस की बाबा ने भविष्यवाणी की थी निकट आ गया । बाला शिंपी को पसीना छूटने लगा । वैसे ही रामचन्द्र पाटिल को हुआ ।। 62 ।। बाबा के बोल सही होते हैं । अब ऐसा उन्हें लगने लगा । कोई अच्छे लक्षण नहीं दिख रहे हैं । दुःख का प्रमाण बढ़ता गया ।। 63 ।। शुद्ध दशमी आ गयी । नाड़ी का चलना कम होने लगा । तात्या मरणासन्न पड़ गए । निकट संबंधी घबड़ा गए ।। 64 ।। इस के बाद अद्भुत हुआ । तात्या का संकट टल गया । तात्या रुक गये बाबा चले गए | जानो परस्पर अदल - बदल कर लिया ।। 65 ।। अब बाबा की वाणी देखो । नाम दिया तात्या का , लागू किया अपने प्रयाण की तैयारी करने पर एक पल का भी अन्तर हुए बिना ।। 66 ।। कहा नहीं फिर भी सूचित किया । भविष्य की जानकारी दे दी थी । घटित होने तक यह योजना किसी के मन को नहीं दिखी ।। 67 ।। लोग कहते हैं तात्या के मरण के बदले में अपनी देह दिया । बाबा ने इस प्रकार निवारण किया । उनकी लीला वही जानें ।। 68 ।। बाबा का शरीर रात में रखा हुआ था , अरुणोदय सुप्रभात में बाबा

ने स्वप्न में पंढरपुर में गणुदास को दृष्टांत दिया ।। 69 ।। " मस्जिद ढह गयी है । पूरे शिरडी में तेली व व्यापारी मुझे परेशान कर छोड़ दिए । अब मैं वहां से जाता हूं ।। 70 ।। इसीलिए यहां तक आया हूं । मुझे ढेर सारे फूलों से ढक दो । इतनी इच्छा पूरी कर दो । तुरन्त शिरडी चलो।। 71 ।।" इसी बीच शिरडी से पत्र जाता है । बाबा की समाधिस्थता का ज्ञान हुआ | सुनकर गणुदास को एक भी क्षण नहीं लगा , शिरडी के लिए चल दिए ।। 72 ।। साथ में शिष्य परिवार लेकर , समाधि के समक्ष आकर आठो प्रहर नामा , कीर्तन , भजन गजर प्रारंभ कर दिया ।। 73 ।। हरिनाम के फूलों की माला स्वयं ही अति मनोहारी गूंथी , समाधि पर प्रेम से चढ़ाया , अन्न संतर्पण के साथ ।। 74 ।। अखण्ड नाम का गजर सुनकर शिरडी भूमि वैकुंठ लगने लगी । नाम घोष से नगर भर गया । गणुदास के हाथों में लूट हो रही थी ।। 75 ।। दशमी से ही बाबा की क्यों प्रीति थी । क्योंकि साढ़े तीन मुहूर्त में से यह मुहूर्त प्रयाण करने के लिए शुभ काल होता है । यह सभी को अच्छी तरह से ज्ञात है ।। 76 ।। यह भी कहना सही नहीं है जिसका गमनागमन नहीं होता , उसका कैसे निर्याण होगा । उसके लिए मुहूर्त का क्या प्रयोजन ? ।। 77 ।। जिसके लिए धर्म अधर्म का बन्धन नहीं , सकल बंधन का उपशमन कर चुका हो , जिसके प्राण का उत्क्रमण नहीं उसके लिए क्या निर्याण ? ।। 78 ।। " ब्रह्मैव सन्ब्रह्माप्येति " " ब्रह्म के साथ एकाकार होकर ब्रह्म को प्राप्त होता है " -ऐसा ही साईं महाराज के साथ ।। न आना न जाना । निर्याण स्थिति कैसी उनकी ।। 79 ।। अतः उत्तरायण हो या दक्षिणायण जिसे प्रयाण नहीं करना , जिसके प्राण समरसता में रहते हैं जैसे समय पर दीप का निर्वाण ।। 80 ।। देह तो उधार ली गयी है पंचभूतों की साहूकारी से , निजस्वार्थ सिद्धि करने तक , फिर जिसकी है उसे वापस कर दिया ।। 81 ।। आगे होने वाली घटना की सूचना बाबा ने पहले ही दे दी थी , आश्चर्य है । वह अनमोल घड़ी निकल गयी । स्थायी कीर्ति रह गयी ।। 82 ।। ज्वर आना तो निमित्त था । लौकिक रीति का अनुकरण कर रहे थे कभी कूखते कभी कराहते । अन्तर्मन में सदैव सावधान रहते ।। 83 ।। दिन का आठ घटक पूरा होते (लगभग 9.30-10.00 सुबह) निर्याण काल के निकट आने पर वे स्वयं उठकर बैठ गए । चित्त के अन्दर अविकल ।। 84 ।। बाबा की मुद्रा देखकर आशा का समुद्र भर आया , कि वह भयंकर अभद्र बेला टल गयी है , सबको लगा ।। 85 ।। इस प्रकार दुःख करते हुए सभी चिंतित बैठे थे । बाबा का अंत निकट आ गया था । जो वृत्तांत घटित हुआ उसे सुनो ।। 86 ।। प्राणोत्क्रमण में एक क्षण का समय था । न जाने क्या मन में आया । हाथ कफनी की जेब में डाला उसे धर्म वेला जान कर ।। 87

।। लक्ष्मी नाम की सुलक्षिणी , नाम की भांति जिसकी करनी थी, जो साईंचरणों में नित्य विरत थी , उनके निकट वही थी ।। 88 ।। क्षण में देहावसान होने वाला था , बाबा ने बिना समय गवाएं अति सावधानी से उन्हें कुछ द्रव्यदान किया ।। 89 ।। यही लक्ष्मीबाई शिंदे मस्जिद के मध्य बाबा के निकट , नियम व निबंधों का पालन करते अक्षय काम काज से संबंधित थी ।। 90 ।। नित्य दिवस की परिपाटी थी , दरबार सभी के लिए खुला रहता , बहुशः किसी के लिए रुकावट नहीं थी । रात्रि का नियम कड़ा था ।। 91 ।। सायंकाल की फेरी (भ्रमण) हो जाने पर , वहां से मंडली अपने - अपने घर वापस जाती । वे जब दूसरा दिन निकलता तभी मस्जिद आते ।। 92 ।। परन्तु भगत म्हालसापति , दादा व लक्ष्मी , जिनकी भक्ति देखकर उन्हें रात्रि के भी समय बाबा की मनाही नहीं थी ।। 93 ।। यही लक्ष्मी अति प्रीति से प्रतिदिन बाबा को भाजी भाकर समय पर भेजतीं । सेवा का वर्णन कितना किया जावे ।। 94 ।। इस भाकरी का इतिहास सुनकर बाबा की दयार्द्रता सीधा समझ सकेंगे । श्वान व सूकर के साथ बाबा की एक्यता से चित्त को आश्चर्य होगा ।। 95 ।। बाबा एक बार सायंकाल को दीवार (भीत) से छाती टेके हुए थे । प्रेम पूर्वक वार्ता चल रही थी । उस स्थान पर लक्ष्मी आयी ।। 96 ।। तात्या पाटिल निकट थे और शेष अन्य वहां थे । लक्ष्मी ने बाबा का अभिवंदन किया । बाबा ने तब उनसे कहा ।। 97 ।। “ लक्ष्मी मुझे भूख लगी है |” “ बाबा मैं भाकर लेकर आती हूं । जाकर अभी आती हूं । " वापस गयीं ।। 98 ।। ऐसा कहकर निकल गयीं भाकर भाजी लेकर लौटीं । भाजी चटनी आदि सहित अविलंब आयीं । वह नाश्ता सामने रख दिया ।। 99 ।। बाबा ने पत्तल उठाया कुत्ते के समक्ष वैसे ही रख दिया । लक्ष्मी ने तत्काल पूछा , “ बाबा यह क्या आपने किया ।। 100 ।। मैं इतनी शीघ्रता से गयी हाथोंहाथ भाजी व भाकरी के लिए । उसका यह क्या , आश्चर्य । श्वान को खरा धन दे दिया ।। 101 ।। तुम्हें भूख लगी हुई थी, उस भूख का यह क्या कौतुक मुंह में एक टुकड़ा भी नहीं डाला । व्यर्थ में मेरी चुटकी ली ।। 102 ।।“ फिर बाबा उनसे बोले , " **व्यर्थ कैसा दुःख करती हो । इस कुत्ते की जो उदरपूर्ति है उसे मेरी ही तृप्ति जानो ।। 103 ।। इस श्वान का जीव नहीं है क्या ? प्राणिमात्र की एक ही भूख होती है । यद्यपि वह मूक है और मैं बोलता हूं । भूख में कोई भेद है क्या ? ।। 104 ।। क्षुधा से जिनके प्राण व्याकुल हैं, उन्हें जो अन्नदान दिया जाता है उसे मेरे मुख में डालना जानो । सर्वत्र सत्य इसे मानो ।। 105 ।।** यह प्रसंग साधारण व्यवहार का है बोध पूरा आध्यात्मिक है । ऐसे थे उपदेश परक साईं के बोल । प्रेमरस पूर्णरूप से पका हुआ ।। 106 ।। साधारण प्रपंच भाषा बोलकर परमार्थ

की रूपरेखा योजित करते थे । किसी के रहस्य या दोष को ढूंढे बिना शिष्य को संतुष्ट रखते ।। 107 ।। वहीं के उपदेशानुसार लक्ष्मी की भाकरी शुरू हो गयी । दूध में मींज कर डालकर प्रतिदिन प्रेमपूर्वक अर्पित करती ।। 108 ।। फिर बाबा भी भक्ति - प्रेमवश नियम से उस भाकर को खाने लगे । समय में बिलंव होने पर इतना याद करते कि बाबा को भोजन का स्वाद नहीं आता ।। 109 ।। लक्ष्मी के भाकर में समय होने पर यद्यपि पात्र में सकल भोजन परसा गया होता ,भोजन का समय टल जाता किन्तु मुख में ग्रास नहीं डालते ।। 110 ।। पात्र में अन्न ठंडा हो जाता , भूखे रहकर प्रतीक्षा करते रहते किन्तु लक्ष्मी की भाकर आए बिना अन्न सेवन नहीं होता था ।। 111 ।। बाद में कुछ दिवस तक बाबा प्रतिदिन तीसरे प्रहर लक्ष्मी के हाथ की सेवयीं मांगते थे । समीप बैठ कर खाया करते थे ।। 112 ।। बाबा बहुत थोड़ा खाते थे । शेष राधाकृष्णा बाई को देते । उसे लक्ष्मी के हाथों दिलवाते । उनका प्रसाद स्वरूप जूठन बहुत प्रिय था ।। 113 ।। देह विसर्जन वार्ता के चलते हुए यह भाकरी की निरर्थक कथा किस लिए , ऐसा श्रोता न कहें, यह साईं की व्यापकता की निदर्शक है ।। 114 ।। यह सकल दृश्य चराचर व इसके विपरीत सर्वोच्च में साईं निरंतर व्याप्त है । जो अजर अमर हैं वह साईं हैं ।। 115 ।। यह एक तत्व इस कथा के अन्दर है, ऐसी ही मधुर लक्ष्मी की कथा सहज तत्काल स्मरण हो आई । श्रोताओं के संचय के लिए थी, मैं मानता हूं ।। 116 ।। इस प्रकार ऐसी थी लक्ष्मी की सेवा । साईं को कैसे विसर सकती थीं ? ध्यान देने की क्या अद्भुतता थी ? वृत्तांत को आस्थापूर्वक सुनें ।। 117 ।। यद्यपि कंठ प्राण तक आ गये थे , शरीर गिर चुका था , शक्ति नहीं थी बाबा अपने हाथ से दान करते हैं, देहावसान के समय उन्हें ।। 118 ।। एकबार पांच एक बार चार रुपये जेब से बाहर निकाल कर उनके हाथ पर रखा । यही बाबा का अन्त था ।। 119 ।। क्या यही नवविधा भक्ति का संकेत था या नवरात्र अम्बिका पूजन । आज शिलंगण था या सीमोल्लंघन की दक्षिणा थी यह ।। 120 ।। अथवा श्रीमद् भागवत में उद्धव के प्रति श्री कृष्ण के कथन । शिष्य स्थिति के वे नव लक्षण । उसकी स्मृति बाबा दिला रहे थे ।। 121 ।। ग्यारहवें के दसवें अध्याय के छठे श्लोक की नवलाई देखें । शिष्य को कैसे कमाई करनी चाहिए (लाभ उठाना चाहिए) कौन उपाय व्यवहार में लाना चाहिए ।। 122 ।। पहले पूर्वार्ध में पांच कहे गये हैं उत्तरार्ध में चार ही हैं वस्तुतः । बाबा ने भी ऐसा ही क्रम धारण किया । लगता है , जानो यही हेतु उनके मन में था ।। 123 ।। मान रहित , दक्ष (चौकस) , ईर्ष्यारहित (निर्मत्सर), निर्मम (मोह रहित) होकर गुरु सेवा में समर्पित , परमार्थ की जिज्ञासा में तत्पर जिनका अन्तर्मन निश्चल

हो ।। 124 ।। जिसमें असूया (ईर्ष्या) का स्थान न हो , निरर्थक बातें न करें । इन्हीं लक्षणों से अपने गुरुराया का संतुष्ट रखने के लिए कड़ा परिश्रम करना चाहिए ।। 125 ।। यही श्रीसाईंनाथ का हेतु था । इस रूप में व्यक्त किया । केवल अपने भक्त के हितार्थ संत सदा करुणावंत रहते हैं ।। 126 ।। लक्ष्मी खाने - पीने से संपन्न थी । उनके लिए नौ की कथा क्या ? वह तो उतना दान आरती में दे सकती थीं । तथापि वह दान उनके लिए अपूर्व था ।। 127 ।। बहुत बड़ा भाग्य , करोड़ों में एक । इसी से ऐसी अद्भुत कृपा । नौ रत्न प्राप्त किया साई के निज कर कमलों से ।। 128 ।। कितने ही नौ चले गए होंगे । यह दान अति अभिनव था क्योंकि यह उन्हें जीवन के अन्त तक साईं की याद दिलाता रहेगा ।। 129 ।। देहावसान सन्निकट आया फिर भी सोद्येश्य चार पांच का योग बाट कर उन्हें आमरण स्मरण दिलाया ।। 130 ।। सतर्कता का प्रदर्शन करते हुए निकटवर्ती लोगों को भोजन के लिए भेज दिया । मात्र ग्राम के एक या दो लोग देखने के लिए वितान के नीचे बैठे रह गए ।। 131 ।। परन्तु कुछ प्रेमल भक्तों ने हठ धारण किया बाबा के पास से कहीं भी न जाने की , समय को कठिन मानते हुए ।। 132 ।। पर अन्त समय के प्रसंग में मोहबाधा में न पड़ जायें, इसलिए शीघ्रता से उस समय लोगों को भेज दिया ।। 133 ।। निर्याण समय अति निकट जान बुट्टी काका आदि से कहा , " वाडे में जाओ , जाओ , भोजन के बाद फिर आना " ।। 134 ।। अन्यों की व्यग्रता देखकर बाबा का अपना चित्त दुःखी होने लगा । इसलिए सभी को आज्ञा दी , " जाओ जाओ भोजन करके आओ , अब जाओ " ।। 135 ।। ऐसे ये नित्य के साथी , रातदिन के निकटवर्ती , सखे , यद्यपि मन में दुःख था आज्ञा पाकर उठ कर चले गए ।। 136 ।। यद्यपि आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहते थे । उस समय सानिध्य भी नहीं त्यागना चाहते थे । बाबा का मन भी नहीं तोड़ना चाहते थे वाडे में भोजन के लिए गए ।। 137 ।। भयंकर दुःख का प्रमाण था । क्या जेवन क्या, खाना बाबा के पास ध्यान (प्राण) लगा हुआ था । क्षणभर का विस्मरण सहन नहीं था ।। 138 ।। इस प्रकार जब जेवन के लिए बैठे , तत्काल बुलावा आया । आधे पेट दौड़े आए । तब वे भेंट नहीं कर पाये ।। 139 ।। आयु का तेल समाप्त हो गया था । प्राण ज्योति मंद हो गयी थी । बयाजी अप्पा कोते की गोद में देह को विश्रांति मिल गयी थी ।। 140 ।। न पड़े हुए , न सोये हुए , स्वस्थपन में गादी पर बैठे हुए , ऐसे में अपने हाथ से धर्म करते, देह का विसर्जन किया ।। 141 ।। समर्थ के मनोगत का ज्ञान किसी को हुए बिना , सहजता से देह विसर्जन करके ब्रह्मीभूत हो गए ।। 142 ।। माया का नश्वर वस्त्र जैसा देह धारण करते संत सृष्टि

में अवतरित होते हैं । उद्धार कार्य पूर्ण होने पर तत्काल अव्यक्त में समरस (विलीन) हो जाते हैं ।। 143 ।। नट नाना प्रकार का वेष धारण करता है , अन्दर से अपने को पूर्णरूप से जानता है । जो परिपूर्ण अवतार हैं उसे मरण से क्या संकट ? ।। 144 ।। लोक संग्रह (लोगों का मार्ग दर्शन करने) के लिए जो अवतरित हुआ , कार्य संपन्न होने पर अवतार को समेट लिया । उसका जन्म और मृत्यु से क्या बंधन जिसने स्वेच्छा से शरीर धारण किया हो ।। 145 ।। परब्रह्म जिनका वैभव है, उनका निधन कैसे संभव है । निर्ममत्व जिनका अनुभव है, कैसे उत्पत्ति और संहार उसके लिए हानिकारक है ? ।। 146 ।। यद्यपि कर्म में प्रवृत दिखते थे, कभी यत्किंचित कर्म नहीं किया । सदा कर्म में अकर्म देखते , अहंकार रहित होकर ।। 147 **।। " बिना भोगे कर्म का क्षरण नहीं होता** " (नाभुक्तं क्षीयते कर्म) , यह स्मृतियों में कर्म का रहस्य बताया गया है । परन्तु ब्रह्मज्ञानी को भ्रम नहीं होता , जो वस्तु मात्र में ब्रह्म को देखता है ।। 148 ।। क्रिया के कारक से फल उत्पन्न होता है, यह द्वैत पूर्णरूप से प्रसिद्ध है। उसे भी ब्रह्म विद ब्रह्म मानते हैं सीप में चांदी दिखाई देने की तरह ।। 149 ।। बाबा सरीखे दयालु माँ काल के मुंह में कैस पड़ गयी, यह कहानी वैसे हुई जैसे दिवस को अंधेरी रात ग्रास बना ले ।। 150 ।। अब यह अध्याय यहीं समाप्त करते हैं मासिक मर्यादा को रखते हुए । अन्यथा अति विस्तार से श्रोता को व्याकुलता प्राप्त होगी ।। 151 ।। आगे अवशेष निर्याण कथा आने पर यथाक्रम सुनें । हेमाड साईंसमर्थ की शरण में हैं जिनकी कृपा पाकर कृतार्थ है ।। 152 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जनप्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित श्री साईंसमर्थ सच्चरित में " श्री साईं निर्याण " नामक बयालीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय तैंतालिसवां (श्री साईंनाथ निर्याण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

पूर्व अध्याय में संत साई समर्थ के निर्याण का निरूपण हुआ था । अब जो अवशेष अपूर्ण था इस स्थान पर वह संपूर्ण होगा ।। 1 ।। साईं के प्रति अद्भुत प्रेम , वही समर्थ उत्पन्न करते हैं उसे । हेमाड उनके चरणों में लिप्त है । उनका वह चरित लिखता है ।। 2 ।। वही भक्ति प्रेम देते हैं । वही चरित्र महिमा को बढ़ाते हैं । उससे भजन धर्म का गौरव है । संसार से विरक्ति होती है ।। 3 ।। इसलिए काया वचन व मन से उन्हें सहस्रबार नमन करता हूँ। केवल चिन्तन करने से उनकी महिमा का ज्ञान नहीं हो सकता , अनन्य शरण में प्रवेश करने से होता है ।। 4 ।। पाप का एकत्र मल , निकाल कर सकल धोने के लिए , अन्तर मन को निर्मल करने के लिए अन्य साधन निष्फल हैं ।। 5 ।। हरिभक्त के यश का स्मरण , उनका भजन वा कीर्तन , इसके बिना चित्त शुद्धि का सरल साधन खोजने पर नहीं मिलेगा ।। 6 ।। इस प्रकार गत कथा के सम्बन्ध में संकलित दृष्टिपात करके , साईं , जो निज आनंद के अवस्थान हैं , का व्याख्यान आगे चालू करते हैं ।। 7 ।। पहले साद्यंत कथन किया गया है । विजयदशमी को ही क्यों प्रयाण , तात्याबा के बहाने भविष्य निवेदन पहले ही , कैसे हुआ है ।। 8 ।। फिर होता है देहावसान , धर्म का ध्यान रखते हुए कैसे लक्ष्मी को दान किया । समग्र निरूपण हुआ है ।। 9 ।। अब इस अध्याय में कथन , कैसे निधन निकट आने पर साईं रामायण श्रवण करते हैं ब्राह्मण मुख से , हित कि लिए ।। 10 ।। कैसे समाधि स्थान नियोजन , कैसे अलक्षित ईंट का गिरना , ध्यान से सुनें ।। 11 ।। वैसे ही एक बार ब्रह्माण्ड में प्राण को चढ़ाकर तीन दिन बैठना । कैसी समाधि ? यह देहावसान है , लोग निश्चित मन हो गये थे ।। 12 ।। अंतिम क्रियाकर्म की तैयारी कर ली , अचानक बाबा शरीर में आ गए । इससे लोगों के मन में अचम्भा हुआ । यह किस प्रकार हुआ , सुनें ।। 13 ।। अतः अब यह निर्याण कथा श्रोता श्रवण करते थक गए | यह तो देहावसान की वार्ता है । किसी के चित्त में रुचती नहीं ।। 14 ।। परन्तु यह साधु संत का निर्याण श्रोता व वक्ता को पावन करेगा । विस्तार के भय से खण्ड में श्रवण करें । सन्तुष्ट हो जावें ।। 15 ।। देह त्याग कर

अगम्य गति , अक्षय स्थिति , पुनरावृत्ति रहित आत्म सुख की प्राप्ति बाबा को हुई ।। 16 ।।देह धारण करने पर वह व्यक्त थे, देह त्यागने पर अव्यक्त को प्राप्त हो गए । यद्यपि एकांग अवतार समाप्त हुआ, सर्वांग सुव्यक्त प्राप्त हुआ ।। 17 ।। एक स्थान विशेष से सम्बन्ध समाप्त होकर सर्वगत्वता प्राप्त हो गयी । अपने निजत्व में समरस होकर पूर्णपन में सनातन हो गए ।। 18 ।। साईं सब के जीवन थे , साईं सभी के जीव प्राण थे , साईं बिना ग्राम वासी जन दीन सभी हीन हो गए ।। 19 ।। देह निचेष्टित पड़ते ही रोने की ऊँची आवाज हुई । बाल व वृद्ध चिन्तित हो गए , सभी के प्राणों का जैसे अन्त हो गया हो ।। 20 ।। ज्वर आदि लौकिक बाधाएं प्रपंच में बंधे लोगों के लिए हैं, योगियों के मार्ग में कभी अमर्यादा नहीं करतीं ।। 21 ।। अपने तेज को प्रकाशित कर संत निजदेह का दान करते हैं । उसी प्रकार अपने हाथ से बाबा ने किया ।। 22 ।। नहीं होना चाहिए था , हो चुका था । महाराज लीन हो गए थे। आत्मा के परमात्मा में विलीन होने पर लोग हतोत्साहित थे । मन सिसक रहे थे।। 23 ।। अच्छा होता न गया होता , अन्त समय की भेंट से रह गया । हो सकता है किसी काम आया होता । संकट के समय विस्मृति छा गयी ।। 24 ।। इस प्रकार के नाना विधि विचारों से उनके मन खिन्न हो गए । बाबा के अन्तःकरण में क्या था वह कौन जानता था ।। 25 ।। न ही घरघर , न ही श्वास (का वेग) , न ही खांसी , न ही घबराहट , न जीव की दर्द से छटपटाहट , उल्लास पूर्वक प्रयाण किया ।। 26 ।। अब कैसे साईं दर्शन , कैसे पद संवाहन , कैसे साईंचरण प्रक्षालन , उनका तीर्थ प्राशन कैसे ? ।। 27 ।। यद्यपि वे भक्त प्रिय थे, फिर भी अंत समय आता देखकर जो निकट थे उन्हें दूर क्यों भेज दिया , क्यों उन्हें खिन्न किया ? ।। 28 ।। सबसे प्रिय भक्त मण्डली को अंतकाल में निकट देखकर उस समय बाबा का प्रेम उमड़ आता अन्तकाल आने पर ।। 29 ।। मोक्ष प्राप्ति में ये प्रेम बंधन आड़े आते हैं । उस समय उनको नहीं तोड़ा जायेगा तो मन इच्छाविहीन कैसे होगा ? ।। 30 ।। ऐसा हुए बिना यदि शरीर पड़ गया , मृत्यु होती है , तो जीव तुरन्त नये संसार से जुड़ जाता है । वासना का बाजार खुल जाता है ।। 31 ।। इस प्रक्रिया को टालने के लिए साधु संत निरंतर सावधान रहते हैं । बाबा का मन संकल्पित था , लोक व्यवहार से बचने के लिए ।। 32 ।। अंतकाल में सावधान होकर शांति और एकान्त में विक्षेप रहित होकर मन में ध्येय मूर्ति को लाना चाहिए ।। 33 ।। "**अंते मतिः सा गतिः** " (अन्त समय मन के विचार जैसी गति होती है) - यह प्रसिद्ध है , सब जानते हैं । भगवद्भक्त स्वयं लोक संग्रह रीति से आचरण करते हैं ।। 34 ।। चौदह दिन शेष थे बाबा का काल निकट

आने में । बाबा ने वझे (एक भक्त) को ' रामविजय ' का पाठ करने में लगाया ।। 35 ।। वझे मस्जिद में बैठे , पोथी परायण शुरु किए , बाबा श्रवण करने लगे । आठ दिन व्यतीत हो गए ।। 36 ।। फिर बाबा ने आज्ञा की , " पोथी का अखण्ड पाठ चलता रहेगा ।" ऐसे तीन दिन तीन रात वझे उसे वाचते रहे ।। 37 ।। पूरे ग्यारह दिवस बैठे , फिर अशक्त होकर थक गए | पढ़ते - पढ़ते थक गए । ऐसे तीन दिन चले गए ।। 38 ।। फिर बाबा ने क्या किया ? पोथी वाचन समाप्त कराया । वझे का वहां से भेजकर स्वयं शान्ति में रहने लगे ।। 39 ।। भेजने का कारण श्रवण कराने के लिए श्रोता कहेंगे । यथामति निवेदन करता हूँ । सावधान होकर सुनें ।। 40 ।। देहावसान निकट आने पर साधुसंत और सज्जन पोथी पुराण का पाठ करवाते हैं सावधान होकर सुनते हैं ।। 41 ।। शुक्राचार्य ने सात दिन महाभागवत् कही थी । राजा परीक्षित सुनकर संतुष्ट हो गए । सुख पूर्वक देहान्त प्राप्त किया ।। 42 ।। भगवद् लीला श्रवण करते आखों से भगवमूर्ति को देखते हुए जिनका अन्त काल होता है वही निज स्वार्थ साध पाता है ।। 43 ।। यही लोक प्रवृत्ति स्थिति है संत स्वयं निरंतर आचरित करते हैं । लोक संग्रह मार्ग से मुड़ते नहीं हैं। यूं कहिए कि इसीलिए अवतार लेते हैं ।। 44 ।। जिनकी इस भौतिक पिंड में अनास्था है, उन्हें देहावसानावस्था में दुःख सुख का वेग नहीं होता । यह उनकी स्वाभाविकता है ।। 45 ।। अतः यहां श्रोताओं को शंका होगी । जो ब्रह्म सुख का आनन्द ले रहे हैं उनके लिए यह कहना कैसे शोभा देता है कि माया मोह से प्रभावित होते ।। 46 ।। जो स्वरूप में सावधान है अल्ला मालिक का ध्यान करता है उसके लिए भक्तों का सानिध्य प्रतिबन्ध कैसे ? ।। 47 ।। उनके लिए तो प्रपंच खत्म हो गया था , परमार्थ (आध्यात्मिकता) स्थिर हो गया था , द्वंद्व भाव समूल चला गया था , स्वयं स्वरुप में लीन हो गये थे ।। 48 ।। एक - एक अक्षर सब सत्य हैं । इसमें अणुमात्र असत्य नहीं है । पर संतजन अवतार कार्य , लोक संग्रह को करके कृतकृत्य होते हैं ।। 49 ।। संत षड्भाव - विचारों को त्याग चुके होते हैं (काम , क्रोध , लोभ , मोह , मद व मैत्सर्य) , जो निरन्तर अप्रकट स्थिति में रहते हैं भक्तों के उद्धार के लिए प्रकट होते हैं उनका निधन कैसे हो सकता है ।। 50 ।। देह व इन्द्रियों से संयोग जनन हैं , देह व इन्द्रियों से वियोग मरण है । इस पाशबंधन व मुक्ति का नाम जन्म - मरण है ।। 51 ।। जन्म के पीछे मृत्यु चिपकी हुयी है एक से एक अभिन्न हैं । मरण जीव की प्रकृति का लक्षण है । जीव का जीवन उसकी विकृति (परिवर्तित रूप) है ।। 52 ।। जो मृत्यु मारकर शेष हो , काल के सिर पर पांव रखता हो (प्रकृति लय योगी) , जो स्वेच्छा से अवतार लेता हो, जीवन काल

की क्या चिंता करे ।। 53 ।। भक्त कल्याण ही एक वासना हो , उसके लिए जो नाना अवतार धारण करते हैं, वे क्या जन्म - मरण के सम्पर्क में आ सकते है । ये दोनों कल्पनाएं मिथ्या हैं ।। 54 ।। देह पात देख जिसने पहले ही देह को राख कर दिया उसे मृत्यु का क्या भय ? उसके आगे मृत्यु खाक है ।। 55 ।। मरण देह की प्रकृति है । मरण देह की सुख स्थिति है । जीवन देह की विकृति है । विचारवान विचार करते हैं ।। 56 ।। साईं समर्थ आनन्द घन हैं ,जिनके देह के जनन का ज्ञान नहीं उनके शरीर का मरण कैसा । वे देह के आभास का त्याग कर चुके थे ।। 57 ।। साईं पूर्ण परब्रह्म थे । उनका कैसे जन्म - मरण । ब्रह्म के सत्यत्व में जगत का मिथ्यापन है । उन्हें शरीर का भान कैसे ।। 58 ।। प्राण धारण या विसर्जन , अलक्ष्य रुप में परिभ्रमण स्वच्छन्द योग क्रीड़ा है , भक्तोद्धारण के निमित्त ।। 59 ।। कहते हैं रवि को ग्रहण लग गया है । वह पूर्णरूप से अदृश्य हो गया । यह तो केवल दृष्टि का दोषगुण है । वैसे ही संतो का मरण ।। 60 ।। देह तो केवल उपाधि (बाह्य प्रतिबंध) है, उनके लिए कैसी आधि - व्याधि । प्रारब्ध से संबंधित कुछ होने पर भी उनकी सुध उन्हें नहीं रहती ।। 61 ।। जो भक्त की पूर्वार्जित संचित भक्ति से अव्यक्त रूप में परिपूर्ण थे, वह भक्त के उद्धार के लिए प्रकट हुए । वहाँ शिरडी में दिखे ।। 62 ।। कहते हैं अब भक्तों का कार्य संपूर्ण हो गया इसीलिए देह त्याग दिया । कौन विश्वास करेगा इस बात पर ? क्या ये गति (जन्म - मरण) के योग्य हैं ? ।। 63 ।। साईं इच्छा मृत्यु में समर्थ थे । देह को योगाग्नि में जला दिया । स्वयं अव्यक्त में समरस हो गए । भक्तों के हृदय में वे रहते हैं ।। 64 ।। जिनका केवल नाम स्मरण करने से जन्म - मरण का विचार नष्ट हो जाता है उनकी कैसी मरणावस्था । पूर्व की अव्यक्तता को प्राप्त हो जाते हैं ।। 65 ।। जड़स्थिति का उल्लंघन कर के बाबा अव्यक्त में समरस हो गए । वहाँ भी स्वरुपस्थिति भोगते हुए भक्तों को जागृत रखते हैं ।। 66 ।। जो चैतन्य के साथ स्पन्दन करता था वह भक्तों के हृदय में दृढ़ता से स्थिर हो गया है । वह रूप क्या मरा हुआ कहा जा सकता है, यह बात मन मानता नहीं ।। 67 ।। इसीलिए ये साईं अनादि , अनंत विश्व प्रलय तक अमर रहेंगे । जन्म - मरण की बाधा कदापि नहीं पड़ेगी ।। 68 ।। महाराज ज्ञानोबा (ज्ञानेश्वर) क्या चले गए । तीन सतक के बाद दर्शन दिए । एकनाथ महाराज से भेंट करने आए । जगत पर उपकार किया ।। 69 ।। जैसे वे कृपावंत नाथ , पैथान की ज्योति थे , तुकाराम महाराज देहू में , नरसिंह सरस्वती आलंदी में थे ।। 70 ।। परली में समर्थ रामदास अट्टलकोट में अट्टलकोटकर , हुमणाबाद में प्रभुमाणिक वैसे ही यह साईं शिरडी में ।। 71 ।। जिसके मन में जैसा भाव

वैसा उसका अनुभव आज भी है । जिसकी शक्ति प्रमाणित है उसका कैसे मरण भाव ।। 72 ।। ऐसे थे भक्तों के कार्य पूर्ण करने वाले । देह शिरडी के अंदर रखते हुए स्वरूप में चराचर में भरे हैं समर्थ लीलावतारी ।। 73 ।। अब शिरडी में क्या है ? समर्थ ब्रह्म लीन हो गए हैं । । मन में ऐसी शंका न लाओ । श्री साईं मरणातीत हैं ।। 74 ।। मूल रूप से संत गर्भातीत होते हैं । परोपकार के लिए प्रकट होते हैं । ये अवतार ब्रह्मस्वरुप मूर्तिमंत भाग्यवंत होते हैं ।। 75 ।। जन्म और मरण स्थिति अवतारियों को कभी नहीं आती , कार्य पूर्ण होने पर वे स्वरूप में मिल जाते हैं वे अव्यक्त में समरस हो जाते हैं ।। 76 ।। पूरा शरीर साढ़े तीन हाथ का बना , क्या उसमें समाते ? यह कहना अयुक्त है कि वह विशिष्ट वर्ण व स्वरूप युक्त हैं ।। 77 ।। अणिमा गरिमा अष्ट सिद्धियों के आने जाने से बुद्धि का क्षय नहीं , जिसकी समृद्धि स्वयं ही अखण्ड है ऐसी उनकी प्रसिद्धि है ।। 78 ।। ऐसे महानुभावों के उदय का आशय लोक कल्याण ही होता है । उदय के साथ विलय की स्थिति है । संत लोक - संग्रह मय होते हैं ।। 79 ।। जन्म की भ्रान्ति , मृत्यु की भ्रान्ति ; आत्म एकत्व की अविनाश स्थिति स्वप्न में सुख संपत्ति जैसी , ऐसी इनकी परिस्थिति है ।। 80 ।। अन्यथा भी , जो ज्ञान का खजाना हो, जिसका सदैव आत्मानुसंधान हो , उसकी देह का पालन - पोषण और पतन एक समान होता है ।। 81 ।। इस प्रकार बाबा का शरीर पड़ गया । दुःख के बोझ से लोग दब गये , शिरडी भर में हाहाकार चरमोत्कर्ष पर मचा हुआ था ।। 82 ।। बाबा का निर्याण- समाचार सुनकर , जैसे बाण चुभ गया हो , नित्य व्यवसाय रुक गया , भ्रमित हो कर उदास होकर लोग इधर - उधर बिखरे हुए थे ।। 83 ।। यह अमंगल समाचार फैलते ही लगा कि सबको वज्राघात हो गया हो , विचारवान लोग शांत बैठ गए , अन्य दहाड़ मार कर रोने लगे ।। 84 ।। प्रेम अत्यधिक था ; उनके कंठ रुंध गए थे , दुःख के आँसू आँखों से वह रहे थे । शिव शिव हरे का उद्गार होने लगे ।। 85 ।। प्रत्येक घर में हड़बड़ी मची थी । लोग भ्रमित व उदास थे । छाती धड़कने लगी थी । लोग तेजी से भाग रहे थे ।। 86 ।। महाराज का देहावसान हुआ । समस्त ग्राम वासियों के प्राण निकलने लगे । बोले " देवा यह प्रसंग दारुण है हृदय विदारण हो गया है ।। 87 ।।" जो उठे वे पागल हो दौड़ पड़े । मस्जिद मंडप भीड़ से खचाखच भर गया । अवस्था देखकर हृदय फटने लगा । भीड़ के कंठ रुंध गए थे ।। 88 ।। शिरडी का वैभव समाप्त हो गया । सुख सौभाग्य सब लुट गया था । सभी की आँखों में आँसू भरे थे । सब के धैर्य भंग हो गए थे ।। 89 ।। क्या थी उस मस्जिद की महानता ! जिसकी गणना सप्तपुरियों (सात शहर - अयोध्या , मथुरा , हरिद्वार

काशी , कांची , उज्जैन (अवन्तिका) द्वारका) में होती थी । जिसे बाबा सदैव निश्चित रुप से द्वारका माई कहा करते थे ।। 90 ।। इस प्रकार , निर्याण , निर्वाण अथवा निधन हो द्वारका सायुज्यमुक्ति का स्थान है । जो ईश्वर से नित्य जुड़ा है उसे वहां स्थान मिलता है ।। 91 ।। ऐसे ही गुरुराज साईं राम भक्तों के लिए दयालु माँ - बाप , भक्तों के लिए विश्रांति का स्थान । नित्य स्मरण किए जाते हैं ।। 92 ।। बाबा के बिना शिरडी उजाड़ थी । दसों दिशाएं शून्य व उदास थी जैसे शरीर से प्राण चला गया हो शिरडी ऐसे लगने लगी ।। 93 ।। तालाब का जीवन (पानी) सूख जाने पर , जैसे उसमें मीन तड़फड़ाती है, वैसे शिरडी के लोग कांति हीन व उद्विग्न हो गए थे ।। 94 ।। कमल बिना सरोवर , पुत्र बिना शून्य घर , दीप बिना मन्दिर जैसे वह मस्जिद परिसर वैसे ही ।। 95 ।। स्वामी बिना घर , राजा बिना नगर , द्रव्य बिना भण्डार , शिरडी बाबा बिना जंगल हो गयी थी ।। 96 ।। जैसे बच्चे के लिए माता , अथवा चातक के लिए मेघ का जल , वैसे ही उनका प्रेम शिरडी के लोगों के लिए और सभी भक्तों के लिए था ।। 97 ।। शिरडी कांतिहीन हो गयी मृतपाय हीन , दीन ; जैसे जल बिना मछली वैसे ही लोग छटपटा रहे थे ।। 98 ।। अपने पति से वर्जित पत्नी , अथवा माता के स्तन से (वर्जित) बच्चा , जैसे गाय से बिछुड़ा बछड़ा छोटे - बड़े वहां पर वैसे थे ।। 99 ।। यह दुःखावस्था असहय हो गयी थी शिरडी के सभी लोगों के लिए । गली - गली अस्तव्यस्त चारों ओर लोग दौड़ रहे थे ।। 100 ।। साईं के कारण शिरडी पवित्र हुई , साईं के कारण शिरडी का चरित्र बना , साईं के कारण शिरडी तीर्थ क्षेत्र बना साईं सभी के छत्र थे ।। 101 ।। कोई क्रन्दन कर रहा था , कोई वहां लोट रहा था , कोई मूर्छित पड़ा था लोग दुःखी हो गए थे ।। 102 ।। नयनों से दुःख के अश्रु झर रहे थे । नर - नारी अति उद्विग्न थे ।। 103 ।। बाबा की वह अवस्था देखकर ग्रामवासी परम अवस्था में पहुंच गए । सभी बाल , बृद्ध व भक्त महती अस्वस्थता को प्राप्त हो गए ।। 104 ।। जहां सुरस व आकर्षक कथा होती , जहां रोज बहुत प्रकार के आनन्द होते, जहां शीघ्रता से प्रवेश नहीं मिलता था वह मस्जिद तब उजाड़ व वीरान दिख रही थी ।। 105 ।। जो पहले पूरे शिरडी में नित्य ' श्री नित्यमंगल ' था बाबा उसके मूल कारण थे । इसी से ग्रामवासी दुःखी थे ।। 106 ।। आनंदकंद आनंद स्वरुप भक्त के कार्य के लिए शरीर धारण किए वह अर्थ संपादित करके आह , शिरडी नगर में विदेही हो गए ।। 107 ।। आठो प्रहर , व्यस्त होकर , कल्याणार्थ हितोपदेश रात - दिन करते हम भ्रमित बुद्धि वालों को ।। 108 ।। जैसे उल्टे घड़े पर पानी उपदेश वैसे ही हम लोगों के लिए हुआ , निरन्तर बहता गया एक बूंद भी नहीं बची ।। 109

|| " तुम किसी से गलत बोलते हो तो मुझे तत्काल दुःख होता है |" पद पद पर यह आपने कहा पर हमने उसे नहीं माना || 110 || ऐसे हमने कितना अपराध किया जो सयुक्ति नहीं मानी उसी आज्ञाभंग के बदले को इस रीति से चुकाया || 111 || बाबा उन सभी पापों का पूरा माप हैं , अब अनुताप का क्या होना ? भोक्तृत्व को अपने आप भोगना है || 112 || इसी कारण हमसे ऊब गए | इसी लिए क्या परदे की आड़ में हो गए | आह , हमपर अचानक आक्रमण हुआ | काल ने कैसा घात किया है || 113 || कान से कपाल में तेज आवाज करते कंठ तुम्हारे सूख गए | हमारी उदासीनता देख कर आप का चित्त थक गया || 114 || इसलिए हम पर रूठ कर पूर्व प्रेम सारा विसार कर आज पूर्वजन्म के सम्बन्ध समाप्त कर लिए क्या ? स्नेह रूपी स्तन का दूध कम हो गया क्या ? || 115 || आप इतने शीघ्र चले जायेंगे यदि ऐसा पहले समझते तो बहुत अच्छा होता , लोग पहले से सावधान रहते || 116 || हम सभी सुस्त रहे | आलस में निश्चिंत बैठे थे | आखिर में ऐसे फंस गए | रहना न रहना एक समान हो गया || 117 || हम गुरुद्रोही हो गए | समय पर कुछ नहीं किए | यदि निश्चित वहां बैठे रहते , हमसे वह भी नहीं हुआ || 118 || लम्बी दूरी से शिरडी जाते वहां भी व्यर्थ के वार्तालाप में लगे रहते | तीर्थ पर आए हैं यह पूर्णरूप से भूल कर वहां भी यक्षेच्छ आचरण करते || 119 || तरह - तरह के अनेक भक्त - ज्ञानी , अभिमानी , भावार्थी , तार्किक - जिनमें सद्रूप (आत्मा) केवल एक होता ,बाबा न्यूनाधिक भेद करना नहीं मानते थे || 120 || जग में ईश्वर के अतिरिक्त अन्य पदार्थ पर दृष्टि नहीं जाती , ऐसे जिनका देखना होता , जो अपने को भी दूसरा नहीं जानते || 121 || भक्त स्वयं ईश्वर ही है | मैं और गुरू भी अन्य नहीं हैं, दो का स्वरूप विसार कर परस्पर यह भेद त्यागने योग्य है || 122 || वस्तुतः ईश्वर ही हैं हम परन्तु परमार्थ स्वरूप का विस्मरण ही भेद का मुख्य लक्षण है , यही अधःपतन है || 123 || सम्राट को स्वप्न होता है कि भिक्षार्थ दर - दर जा रहा है | निजबोध की जागृति आने पर अपने को उसी अवस्था में देखता है || 124 || जागृति में जो प्रवृत्ति है स्वप्न स्थिति में वहीं निवृत्ति है | वास्तविक जागृति स्वयं की अनुभूति , पूर्ण अद्वैत में समरस होने से आती है || 125 || ज्ञानी - अज्ञानी सब आश्रितों पर अत्यन्त प्रेम करते थे | अपने से भी अधिक निकट का समझते थे | यत्किंचित भेद उनमें नहीं करते थे || 126 || वे मनुष्य रूप में देव थे | यद्यपि इसका अनुभव प्राप्त हुआ था किन्तु उनके स्नेह के कारण वे सभी बलपूर्वक शांत बैठे रह गए || 127 || किसी को धन सम्पत्ति दी , किसी को संसार सुख , संतति , उससे महान भ्रांति में पड़ गए | ज्ञान प्राप्ति का अवसर खो

दिए ।। 128 ।। कभी जिसके साथ हंसते थे , उसके शरीर में अहंकार भर जाता कि उसके प्रति अद्भुत प्रेम है, वे इतना अन्य को नहीं देते ।। 129 ।। वही किसी से क्रोध से बोलते , लोग कहते उसे स्नेह नहीं करते ; हमारे प्रति ही अधिक आदर है , वह मान अन्य को नहीं देते ।। 130 ।। इस प्रकार हम नंबर लगाते , बाबा के स्वप्न में भी यह नहीं होता । अपने स्वार्थ में व्यर्थ ही लुट गए , कर्तव्य भूल गए ।। 131 ।। परब्रह्म सगुणमूर्ति देव सिरहाने थे , वास्तविक कार्य की विस्मृति हो गयी । विनोद प्रीति से प्रभावित हो गए ।। 132 ।। आते ही बाबा का दर्शन प्राप्त करते , फलफूल पूर्ण समर्पित करते । फिर दक्षिणा मांगने पर दबाव में आकर उस स्थान पर नहीं रहते थें ।। 133 ।। हितकारी कहानियां सुनाते थे । हमारी छुद्र दृष्टि देखकर , लगता है आपको सचमुच कष्ट हुआ , शीघ्रता से आप निजधाम चल दिए ।। 134 ।। अब क्या वह आपकी स्वानंदस्थिति पुनः ये नयन देख सकेंगे । वह आनंदमूर्ति समाप्त होकर चली गयी जन्म अजन्म में अदृश्य हो गयी ।। 135 ।। हाय ! दारूण कर्म देखो साई सखा को खो दिया। उनके जैसा निःस्वार्थ व दयालु हमारे लिए अपरिचित हो गया ।। 136 ।। " किसी को कष्ट देना अच्छा नहीं होता उससे मुझे दुःख होता है" । बाबा के इस कथन पर ध्यान नहीं दिया , यथेच्छा झगड़ा करते रहे ।। 137 ।। भक्त अभक्त को कष्ट देते - देते हम साईं नाथ को खो बैठे । अब उसका अनुताप हो रहा है, उनकी वार्ता का स्मरण करके ।। 138 ।। " आठ वर्ष के बालक के रूप में फिर प्रकट होऊंगा । " इस प्रकार महाराज भक्तों से कहते रहे थे ।। 139 ।। यह संत की वाणी है कोई इसे अर्थहीन न माने चक्रपाणि (विष्णु) ने ऐसे ही कृष्णातार में कार्य किया था ।। 140 ।। आठ वर्ष की सुन्दर कांति , चतुर्भुज हाथों में आयुध (शंख , चक्र , गदा और पद्म) बंदीशाला में देवकी के समक्ष कृष्णमूर्ति प्रकट हुई थी ।। 141 ।। वहां कारण भू भार - हरण था । यहां दीन भक्तों का उद्धारण । इसलिए किस लिए शंका उत्पन्न हो । संतो की लीला अतर्व्य है।। 142 ।। यह क्या एक जन्म का संबंध है ? बहत्तर पीढ़ियों का ऋणानुबंध है। भक्तों से बाबा का पूर्व संबंध कथा के संदर्भ में कहा था ।। 143 ।। ऐसे प्रेम फास बांधकर लगता है महाराज प्रवास पर गए हैं वापस आऐंगे यह पूर्ण भरोसा है भक्त मानस को ।। 144 ।। कितनों को साक्षात्कार हुआ । बहुतों को स्वप्न में अनुभव हुआ । चमत्कार तो अनेक गुप्त रूप से दिखाते हैं ।। 145 ।। अविश्वास करने वालों के लिए गुप्त रहते हैं । भाविक भक्तों को वहीं प्रकट हो जाते हैं। जैसी जिसकी चित्तवृत्ति वैसी तुरन्त अनुभूति ।। 146 ।। चावड़ी में गुप्त रूप में , मस्जिद में ब्रह्मरूप में , समाधि मन्दिर में समाधिरूप में सर्वत्र सुख स्वरूप में (अनुभूत

होते हैं) ।। 147 ।। इसलिए वर्तमान में यही विश्वास भक्त अपने मन में धारण करें , साईं समर्थ का वास भंग नहीं है अक्षय अखण्ड है ।। 148 ।। देवता अपने धाम को जाते हैं । संतो की यहीं ब्रह्मस्थिति होती है ।गमनागमन वे नहीं जानते आनंद में समरस रहते हैं ।। 149 ।। इसलिए अब यही विनती , नम्रतापूर्वक प्रणाम , करता हूँ छोटे - बड़े सभी के प्रति , सादर चित्त से ध्यान दें ।। 150 ।। उत्तम प्रतिष्ठा वालों की संगति से जुड़े , गुरुचरणों में निष्काम प्रीत रखें , गुरू के गुणों का अनासक्ति से अनुकथन हो निर्मल भक्ति प्रकट हो ।। 151 ।। अनवाच्छिन्न प्रीति से जुड़ें , स्नेह पाश न टूटे , रात दिन गुरू चरणों में भक्त सुख संपन्न रहें ।। 152 ।। इस तरह बाद में इस शरीर की उचित रूप से अन्तिम क्रिया कैसे निश्चित की जाये , यह विचार सभी लोग शिष्य व ग्रामवासी करने लगे ।। 153 ।। श्री मंत बुट्टी बहुत भावुक थे । जानो इस बाद के भविष्य का स्मारक हो , विशाल सुख कारक वाडा स्थायी रूप से बनवा लिया था ।। 154 ।। फिर बाद में देह कलेवर (मृत शरीर) कहां होना चाहिए इस विषय पर छत्तीस घण्टे विचार होता रहा । जो होना था वह हुआ ।। 155 ।। एक बोला , अब हिन्दुओं को इस शरीर को स्पर्श नहीं करने देंगे । मुसलमानों के कब्रिस्तान में उत्सवपूर्वक ले जायेंगे ।। 156 ।। दूसरा बोला , यह कलेवर ले जाकर खुले में रखकर उस पर एक सुन्दर मकबरा बना देना चाहिए , वहीं निरन्तर रहना चाहिए ।। 157 ।। खुशाल चंद अमीर शक्कर का भी यही विचार हुआ . किन्तु “**यह शरीर वाडे में रखा जाये ”** बाबा के ये उद्‌गार थे ।। 158 ।। रामचन्द्र पाटिल बहुत दृढ़ थे , वह भी एक ग्रामाधिकारी , बाबा के प्रिय सेवक । वे ग्राम वासियों से बोले ।। 159 ।। " **तुम्हारे विचार कुछ भी हों । कुछ भी समूल मुझे मान्य नहीं हैं , वाडे से बाहर अन्य स्थान पर क्षणभर भी साई को नहीं रखेंगे ।।“** 160 ।। हिन्दू अपने धर्मानुसार विचार कर रहे थे । योग्य - अयोग्य की हर प्रकार की चर्चा होती रही पूरी रात भर ।। 161 ।। इधर लक्ष्मण मामा घर में सुबह निद्रा से भरे थे । बाबा उन्हें पकड़ कर बोले , " **तुरन्त उठो चलो "** ।। 162 ।। “ **बापू साहेब आज नहीं आयेंगे । मैं मर गया हूँ । तो तू पूजन के साथ मेरी आकर आरती करो "** ।। 163 ।। तत्काल नित्यक्रमानुसार सब पूजन सामग्री लेकर लक्ष्मण मामा समय से सादर पूजन करने के लिए आए । ।। 164 ।। वे शिरडी के ग्राम - जोशी (ज्योतिषी) थे , माधवराव के सखा मामा थे । नित्य बाबा की पूजा करते थे , प्रातः काल के समय ।। 165 ।। मामा बहुत कर्मठ ब्राह्मण थे । प्रातः काल स्नान करके , धुले वस्त्र धारण करके बाबा का दर्शन करते ।। 166 ।। पाद प्रक्षालन गंधाक्षत चर्चन पुष्प - पत्र तुलसी समर्पण धूप दीप नैवेद्य नीराजन (आरती

) फिर दक्षिणा प्रदान करते ।। 167 ।। प्रार्थना पूर्वक साष्टांग नमन होने पर आशीर्वचन लेकर फिर सब को प्रसाद देकर तिलक लगाकर जाते ।। 168 ।। वहीं फिर गजानन , शनिदेव , उमारमण (शिव) अंजनिपुत्र मारूति की पूजा करते ।। 169 ।। इसी प्रकार सभी ग्राम देवताओं की नित्य पूजा जोशी बूवा करते । इसलिए उस शव की सम्पूर्ण पूजा प्रेम भाव लाकर की ।। 170 ।। मामा पहले ही निष्ठावान थे । ऊपर से यह साक्षात दृष्टांत । हाथ में काकड आरती लेकर आए साष्टांग प्रणिपात किया ।। 171 ।। मुख के ऊपर से वस्त्र हटाया सप्रेम निरीक्षण किया , हाथ - पैर धोकर शुद्धाचमन किया यथाविधि पूजन किया ।। 172 ।। मौलवी आदि मुसलमानों ने स्पर्श करने पर प्रतिबंध किया । मामा ने न मानते हुए गंध लगाया व संपूर्ण पूजा की ।। 173 ।। फिर वह शव श्रीसमर्थ , अपने आराध्य देव का था , हिन्दू या मुसलमान , मामा को स्वप्न में भी नही थे ।। 174 ।। पूज्य शरीर के सजीव रहते उसके पूजन का कितना उत्सव होता उसी के अब शव होने पर पूजा वैभव औपचारिक नहीं होना चाहिए ।। 175 ।। ऐसी स्थिति में बाबा का संकेत देखकर मामा पहले ही दुःख से खिन्न थे , पुनर्दर्शन दुर्लभ था , आखिरी पूजन करने आये थे ।। 176 ।। आँखों में आँसू भरे थे, उस स्थिति में ठीक से दर्शन भी नहीं कर पा रहे थे । हाथ पैर काँप रहे थे , मामा का मन उदास था ।। 177 ।। इस प्रकार बन्द मुट्ठी को खोल कर पान का वीणा व दक्षिणा उसमें रखा । पूर्ववत शव को ढक कर फिर मामा वापस चले गए ।। 178 ।। बाद में फिर साई की दोपहर की आरती नित्य की भांति मस्जिद में अन्य लोगों के साथ बापू साहब जोग ने की ।। 179 ।। इस प्रकार इसके आगे का वृत्तांत का कथन अगले अध्याय में होगा । कैसे बाबा के देह का संस्कार हुआ अति प्रशस्त स्थान पर ।। 180 ।। कैसे उनकी अति प्रिय, बहुत वर्षों की साथी, ईंट के भंग होने पर अशुभ संकेत देहान्त की सूचना थी ।। 181 ।। कैसे जो अब ' प्रसंग आया बत्तीस वर्ष पूर्व आता , जब ब्रह्मांड में प्राण चढ़ा लिया था , देह की कठिन अवस्था थी ।। 182 ।। कैसे भक्त महान म्हालसापति अहोरात्रि बाबा को जपते रहे ? कैसे सभी ने आशा छोड़ दी थी फिर अचानक उत्थान को प्राप्त हो गए ।। 183 ।। ऐसा आमरण ब्रह्मचर्य का आचरण जिस योगाचार्य ने किया , जो ज्ञानियों में श्रेष्ठ थे , उनके ऐश्वर्य का क्या वर्णन करें ।। 184 ।। इस प्रकार जिसकी महिमा हो उन्हें सद्भाव से प्रणाम करें । दीन हेमाण्ड अनन्य भाव से उनकी शरण में आता है ।। 185 ।। स्वस्ति श्रीसंत सज्जन प्रेरित भक्त हेमांड पंत विरचित " श्रीसाई समर्थ सच्चरित ” का " श्री साईनाथ निर्याण ” नामक तैतालिसवां अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय चौवालीसवाँ (श्री साईंनाथ निर्याण) ।।

॥ श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईनाथ को नमन ।।

ॐ नमो श्री साई चिद्घन , सभी सुखों के श्रोत , सकल संपदा के कोष , जिसकी कृपा से दैन्य दूर हो जाता है ।। 1 ।। सामान्यतः चरण वन्दन करने से समस्त पापों का नाश हो जाता है । फिर जो भाव से भजन पूजन करते हैं, वे उनसे भी धन्य हैं ।। 2 ।। जिनका स्मित मुख देखने से समस्त सांसारिक दुःख विस्मृत हो जाता है , भूख प्यास वहीं मिट जाती है । ऐसा अलौकिक दर्शन होता है ।। 3 ।। जिसका ध्यान अल्लाह मालिक पर है , जो निष्काम , निरभिमान है , जिसका मन निर्लोभ, वासना विहीन है , उसकी महिमा का क्या वर्णन करूँ ।। 4 ।। अपकार करने वालों का भी उपकार करने वाले, ऐसा शांत जिनका स्वाभाव है, उसे कोई भी क्षणभर के लिए भी विस्मृत न करे ! अपने हृदय में उनको निवास करायें ।। 5 ।। राम - कृष्ण सुन्दर नयन वाले थे। संत बिना आँख के या एक आँख के होते हैं । देव का रूप सुन्दर सुरूप होता है संत सदा आनन्द स्वरूप होते हैं।। 6 ।। देव की कृपादृष्टि श्रवण के बाद होती है संत की कृपा दृष्टि का अंत नहीं है । देव कहते हैं **"ये यथा मां"-** जब मानव मेरी ओर आता है तब मैं उसे स्वीकार करता हूँ । संत निन्दक के लिए भी द्रवित होते हैं ।। 7 ।। राम कृष्ण और साईं में थोड़ा भी अन्तर नहीं है , नाम से देखने में तीन वस्तुएँ हैं किन्तु बिल्कुल एक रूप हैं ।। 8 ।। इन वस्तुओं (आत्माओं) की मरणावस्था की वार्ता तो समूल मिथ्या है । जिनकी सत्ता काल के ऊपर है , उसके (काल के) हाथों उनको क्या व्यथा हो सकती है ।। 9 ।। प्रारब्ध व संचित मुझे नहीं मालूम ! क्रियामान को मैं नहीं जानता हूँ । गुरुराणा करुणाकर साईं को जानता हूँ , करुणा के लिए प्रार्थना करता हूँ ।। 10 ।। वासना के नाना वेग होते हैं । इनसे मन को विश्राम नहीं है । तुम्हारी वास्तविक कृपा के बिना जीव को स्थैर्य नहीं आता ।। 11 ।। गत अध्याय के आरंभ में वचन दिया था किन्तु पालन नहीं किया । निरूपण कथन नहीं हो पाया । साद्यंत संपूर्ण सुनें ।। 12 ।। अंत काल समीप जान कर ब्राहमण के मुख से रामायण श्रवण बाबा ने अनुसंधान पूर्वक चौदह

रात -दिन किया ।। 13 ।। इस प्रकार दो सप्ताह पूरा हुआ । रामायण श्रवण करते विजयादशमी का दिन आया । बाबा विदेहिता को प्राप्त हो गए ।। 14 ।। गत अध्याय में कहा गया है कि बाबा का प्राणोत्क्रमण होने पर लक्ष्मण मामा ने पूजन किया, जोग ने नीरांजन आरती की ।। 15 ।। उसके बाद छत्तीस घण्टे लग गए हिन्दू और मुसलमानों को विचार करने में कि कैसे इनके शव की सद्‌गति करें ? ।। 16 ।। कैसे समाधि स्थान का नियोजन , कैसे " ईंट " का अकल्पित गिरना , कैसे एक बार बाबा का प्राण तीन दिनों तक ब्रह्मांड में चढ़ा रहा ।। 17 ।। समाधि या देहावसान सभी संशयापन्न हो गए । श्वासोच्छ्‌वास का रुकना देखकर समाधि विसर्जन असम्भव लगने लगा ।। 18 ।। इस प्रकार तीन दिन व्यतीत हो गए । प्राणोत्क्रमण निश्चित लगने लगा । फिर सभी में सहज ही अन्तिम क्रियाकर्म करने की वार्ता उदित हुई ।। 19 ।। उस अवसर पर भी , ऐसे ही , बाबा चित्त में परम सावधान थे। अचानक अपने देह में आकर लोगों की चिंता दूर की थी ।। 20 ।। आदि से अन्त तक सकल कथा प्रेम भाव से श्रोता सुनें । श्रवण से चित्त आनन्दित होगा । कंठ भर आएंगे ।। 21 ।। कथा नहीं एक संदूक है इसके गर्भ में साईंरत्न अनमोल है। खोलकर प्रेमपूर्वक देखो दर्शन सुख का अनुभव करो ।। 22 ।। इन सभी अध्यायों में साईं नाथ भरे दिखेंगे । श्रवण से मनोरथ पूरा होगा । स्मरण करने से सनाथ होओगे ।। 23 ।। परम उदार जिनका आचरण उन साईं की कहानी है। श्रवण करने के लिए उद्‌यत हों , सप्रेम , अव्यग्र चित्त होकर ।। 24 ।। ऐसी पावन कथा सुनने से भक्त चित्त की इच्छा नहीं भरती पूर्ण परमानंदता सघन हो जाती है , संसार की थकान से विश्राम मिलता है ।। 25 ।। चित्त प्रसन्नता का सुख , निज आनंद सन्मुख प्रकट होता है । सभी सुखों से शुद्‌ध सुख । ऐसा है साईं का कथानक ।। 26 ।। कितना ही सुनें नित्य नूतन लगता है रमणीयता का यही लक्षण है , इस लिए पावन संत कथा को अनन्य भाव से सुनें ।। 27 ।। इस प्रकार आगे कलेवर (शव) की सद्‌गति का वादविवाद कि ' हो या न हो ' करते - करते सभी थक गए । अन्त में अनुभूति को देखें ।। 28 ।। बुट्‌टी के वाडे का हाल जिसके गर्भ का प्रयोजन मुरलीधर को स्थापित करने के लिए होना था, वह स्थान बाबा का निश्चित हुआ ।। 29 ।। आरंभ में जब नींव खोदी जा रही थी लेंडी बाग जाते समय , माधवराव की विनती पर बाबा ने सर हिलाया था ।। 30 ।। माधवराव ने विनती की थी बाबा के हाथ में नारियल देकर , मुरलीधर का गाभार खोदते समय , बोले थे कृपा दृष्टि डालिए ।। 31 ।। उसे शुभ वेला देख कर बाबा बोले , " **नारियल फोड़ो । आपन समस्त बाल गोपाल यहीं काल क्रमण करेंगे ।। 32 ।। यहीं आपन बैठते - उठते , सुख - दुख की वार्ता**

करेंगे । यहीं समस्त बालबच्चे चित्त स्वस्थता प्राप्त करेंगे ।" ।। 33 ।। बाबा ने कुछ यों ही कह दिया , आरंभ में सबको ऐसा ही दिखा । बाद में जब अनुभव हुआ, तब उस बोल को न समझने का ज्ञान हुआ ।। 34 ।। बाबा का देहावसान होने पर मुरलीधर की स्थापना रह गयी । यही उत्तम स्थान प्रतीत हुआ साईंनिधान को संरक्षित रखने का ।। 35 ।। **" वाडा में यह शरीर पड़े "** बाबा के अन्तिम उद्गार थे । यही अन्त में विचार निश्चित हुआ । बाबा ही मुरलीधर हो गए ।। 36 ।। श्रीमंत बुट्टी के साथ अन्य हिन्दू - मुसलमान सभी जन इसी विचार पर राजी हुए । वाडा सत्कार्य में लग गया ।। 37 ।। इतना बहुमोल वाडा होते हुए बाबा का देह कहीं और पड़ता, फिर वह वाडा भी सूना रहता । अत्यन्त भयानक भासता ।। 38 ।। आज वहां जो भजन - पूजन , कथा - कीर्तन , पुराणश्रवण , अतिथि के अभ्यागत में अन्नदान होता है। उसका कारण श्री साईं हैं ।। 39 ।। आज वहां जो अन्नसंतर्पण , लघु रुद्र - महारुद्र का आवर्तन करने देश विदेश से लोग आते हैं उन सब का कारण श्री साई हैं ।। 40 ।। अतः संतों की ऐसी वाणी का एक - एक अक्षर कान में सुरक्षित करना चाहिए । उसे त्याग कर अवमानित नहीं करें कि कहने के लिए यों ही कह दिया होगा ।। 41 ।। आरम्भ में वे कितनी ही अनिश्चित अथवा कितनी ही संदिग्ध दिखें , यद्यपि आरंभ में दुर्बोध हों समय होने पर अर्थ का बोध होता है ।। 42 ।। देहावसान होने में समय रहते, आगे होने वाली घटना के सम्बन्ध में शिरडी में मस्जिद में पहले ही कुछ दुश्चिन्ह घटित हुए ।। 43 ।। अब उनमें से एक मैं श्रोताओं के लिए निवेदित करता हूँ, क्योंकि सकल कहने पर ग्रंथ विस्तारिता को प्राप्त हो जायेगा ।। 44 ।। बहुत कुछ वर्षों तक एक पुरानी ईंट बाबा की थी जिस पर वह हाथ टेकते थे आसन लगाकर बैठते समय ।। 45 ।। उस ईंट को आधार बनाकर नित्य रात में , एकांत होने पर , बाबा मस्जिद में स्वस्थ मन (स्थिर मन) से आसन लगाकर बैठते थे ।। 46 ।। ऐसा कितने वर्षों का क्रम बिना रुकावट, बिना विश्राम चलता रहा । परन्तु होनी के आगे नियम नहीं चलता अकल्पित अतिक्रम घटित होता है ।। 47 ।। बाबा मस्जिद में नहीं थे , एक लड़का सफाई कर रहा था फर्श का कूड़ा साफ करने के निमित्त ईंट को किंचित उठाया ।। 48 ।। टूटने का समय आ गया था । ईंट बालक के हाथ से फिसल गयी धड़ाम से नीचे गिर गयी । तत्काल दो खण्ड हो गयी ।। 49 ।। सुनते ही बाबा ने कहा , " **ईंट नहीं कर्म ही फूट गए** " | ऐसा अति दुःखी मन से बोले आँखों में दुःख के आँसू आ गए ।। 50 ।। नित्य योगासन जिस ईंट से बाबा करते वह जब टूटी , उसके दुःख से हृदय फट गया, उनका कंठ भर आया ।। 51 ।। ऐसी बहुत काल की पुरानी निज आसन की मूल

पीठ ईंट को अचानक टूटी देख कर, मस्जिद उन्हें सूनी लगने लगी ।। 52 ।। वह ईंट बाबा को प्राणों से भी अति प्रिय थी, उसी की ऐसी स्थिति देखकर बाबा मन में अति दुःखी हुए ।। 53 ।। उस ईंट पर कोहनी टेक कर बाबा प्रहर - प्रहर भर योगतत्पर होकर आसन पर बैठे रहते इसी लिए उसके प्रति अत्यधिक प्रेम था ।। 54 ।। **" जिसके साथ आत्मचिंतन , जो मेरे जीवन का प्राण वह मेरी साथी टूट गयी । मैं भी उसके बिना नहीं रहूंगा ।। 55 ।।"** जन्म की साथी ईंट आज मुझे छोड़कर चली गयी । ऐसे उसके गुण स्मरण करके बाबा रुदन करने लगे ।। 56 ।। यहां सहज शंका आएगी कि ईंट क्षणभंगुर नहीं है क्या ? इसके लिए क्यों शोक करना ? लोग क्या कहेंगे ? ।। 57 ।। प्रथमदृष्ट्या यह आशंका किसी के भी मन में उठ सकती है । साईं के चरणों में नमन करके समाधान में मैं लगता हूँ ।। 58 ।। कैसे होगा जगदुद्धार ? कैसे दीन पामर तरेंगे ? इसीलिए संतों का अवतार होता है, उनका कर्तव्य अन्य नहीं है ।। 59 ।। हास्य रुदन लौकिक नाट्य क्रीड़ा के प्रकार हैं , यहाँ यही सार है । जैसा उनका श्रेष्ठ आचरण, लोक व्यवहार भी वैसा ।। 60 ।। यद्यपि संत पूर्ण ज्ञानी होते हैं सरल संकल्प पूर्ण लोग होते हैं ये । फिर भी लोगों को तारने में लगे कर्म - आचरण के लिए उद्यत होते हैं ।। 61 ।। फिलहाल समाधि से बत्तीस वर्ष पूर्व यह देहावसान पहले ही हो जाता, किन्तु म्हालसापति की बुद्धि , होनी टल गयी , इस कुयोग की त्रिशुद्धि हो गयी ।। 62 ।। यदि यह दुष्टयोग न टलता, कैसे साईंसुयोग का लाभ मिलता । तैतालीस वर्ष पहले ही वियोग हो जाता , ऐसा कुयोग होता तो ।। 63 ।। मार्गशीर्ष (दिसम्बर) माह की शुद्ध पूर्णिमा , बाबा दमा उठने से अस्वस्थ हो गए । देहधर्म को सहन करने के लिए आत्मा को ब्रह्मांड में चढ़ा दिया ।। 64 ।। **" अब से तीन दिन तक मैं प्राण को ब्रह्मांड में चढ़ा कर (समाधि में) रहूँगा ! मुझे उठाने का प्रयास नहीं करें ।"** बाबा ने पहले ही कह दिया था ।। 65 ।। **" सभा मंडप के कोने को देखो ' ,** बाबा ने अंगुली से स्थान को दिखाया बोले , **" वहां समाधि खोद कर मुझे उस जगह रख दो "** ।। 66 ।। स्वयं म्हालसापति को लक्ष्य करके बाबा तब स्पष्टतः बोले थे , **" मुझे उपेक्षित न छोड़ना , तीन दिन पर्यंत ।। 67 ।। उस स्थान पर दो निशान (पताका) स्थान निदर्शक संकेत के रूप में लगा दो ।"** ऐसा बोलते - बोलते उन्होंने प्राण को ब्रह्मांड में चढ़ा लिया (समाधि में चले गए) ।। 68 ।। एकाएक चक्कर आया वहीं निचेष्टित शरीर गिर गया | म्हालसापति ने अपनी जांघ (का सहारा) दिया । अन्यों ने आशा छोड़ दी ।। 69 ।। रात्रि का दस का समय था वहां की यह स्थिति देखकर लोग स्तब्ध रह गए " क्या अचानक प्रसंग है । " ।। 70 ।। न श्वास, न नाड़ी ;

लगता है प्राण ने शरीर छोड़ दिया । लोगों के लिए यह बहुत भयंकर अवस्था थी, साई के लिए सुख की अवस्था थी ।। 71 ।। उसके बाद म्हालसापति दिनरात सावधान चित्त साईं बाबा की सुरक्षा करते रहे वहीं जाग्रत बैठे रहे ।। 72 ।। यद्यपि साईंमुख से आज्ञा हुयी थी समाधि खोदवाने की , किन्तु वैसा करने की किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी ।। 73 ।। बाबा को समाधिस्थ देखकर समस्त गांव वहां एकत्र हो गया। जन तटस्थ होकर विस्मित देखते रहे । भगत (म्हालसापति) ने जांघ पर से हटाया नहीं (बाबा को) ।। 74 ।। प्राण निकल गया , जानकर एकाएक धक्का न लगे इसीलिए बोले तीन दिन मुझे रखना । साईं ने लोगों को मूर्ख बनाया ।। 75 ।। श्वासोच्छवास बंद हो गया । सभी इन्द्रियाँ तटस्थता को प्राप्त हो गयीं । हिलने - डुलने की गंध नहीं । तेज भी मंद हो गया है ।। 76 ।। बाह्य व्यवहार का मान समाप्त हो गया, वाणी दृढ़ मौन हो गयी । सभी को गहन चिन्ता थी कि कैसे वापस चेतनावस्था में आएंगे ।। 77 ।। शरीर चेतनता में नहीं आ रहा था । दो दिन का समय व्यतीत हो गया । मौलवी , मुल्ला , फकीर आए आगे की व्यवस्था पर विचार करने लगे ।। 78 ।। अप्पाकुलकर्णी व काशीराम आए दृढ़ विचार किया कि बाबा निजसुखधाम को प्राप्त कर लिए हैं इनकी देह को विश्राम दिया जाये ।। 79 ।। कोई कहता क्षणभर रूकिए । इतनी शीघ्रता अच्छी नहीं है । बाबा दूसरों की भांति नहीं हैं। बाबा के बोल अमोल हैं ।। 80 ।। तत्काल अन्य ने प्रत्युत्तर दिया कि शरीर ठंडा पड़ गया है तो चैतन्यता कहां से आएगी । सभी कैसे अविचारी हो गए हैं ।। 81 ।। दिखाए गए स्थान पर कबर खोदी जावे । सभी लोगों को बुलाओ समय रहते दफन कर दो । सभी तैयारी कर लो ।।। 82 ।। इस प्रकार हो या न हो , होते - होते तीन दिन की मियाद पूर्ण हो गयी । फिर सुबह तीन बजे चेतना आती दिखने लगी ।। 83 ।। हौले - हौले दृष्टि खुलने लगी । शरीर में हरकत होने लगी । श्वासोच्छवास होने पर पेट भी हिलता दिखा ।। 84 ।। मुख प्रसन्न दिखने लगा । नेत्र खुलने लगे । अचेतनता चले जाने पर जीवन के लक्षण स्पष्ट हो आए ।। 85 ।। मानो विसरा हुआ देहभाव पुनः स्मरण हो आया हो । जो खजाना खो गया था, पुनः मिल गया । भण्डार खुल गया है ।। 86 ।। साईं को सावधान देखकर सभी प्रसन्नवदन हो गए । देव की दया से विघ्न टल गया था । भक्तजन आश्चर्य निमग्न थे ।। 87 ।। भगत ने कौतुक से मुख देखा । साईं ने भी धीरे से सिर हिलाया । मौलवी फकीर फीके पड़ गए । वह भयंकर प्रसंग टल गया ।। 88 ।। मौलवी की दुराग्रहता देख कर भगत आज्ञा पालन में चूक जाते , यत्किंचित भी निश्चय डगमगा जाता , तो उस समय कठिनाई होती ।। 89 ।। तैतालीस वर्षों पहले ही कबर

बन गयी होती फिर यह खबर कैसे , कैसे फिर साईं के सुखकर मनोहर दर्शन होते ।। 90 ।। लोक - उपकार के ही कारण साई ने समाधि का विसर्जन करके प्राणों की उत्थानता प्राप्त की एवं भक्तों को सन्तोष हुआ ।। 91 ।। भक्त कल्याण के लिए जो थक कर परमानंद में लय होने में लगा हो, कैसे पहले जागृत किया जा सकता है । उनकी लीला अपरम्पार है ।। 92 ।। बाबा को सावधान देखकर भक्त जन सुखी हो गये । वे दर्शन प्राप्त करने के लिए दौड़े पुनर्जीवन सुखद था ।। 93 ।। इस प्रकार पूर्व कथा के संदर्भ में उनका आखिर देहावसान, जैसा आज तक स्मरण था, सम्पूर्ण कथन हो गया ।। 94 ।। इसलिए आप सभी श्रोता मन में एक क्षण विचार करें कि हर्ष और शोक क्यों करें ? दोनों ही अविवेक मूलक हैं ।। 95 ।। क्या निश्चित रूप से साढ़े तीन हाथ का स्थूल चौखटा देह व इन्द्रियों का ढांचा अपने साईं थे ? इस भ्रम को समूल त्याग दो ।। 96 ।। यदि साईं को देह कहा जाए तो विदेह की मर्यादा नहीं ; वस्तु (सत्) का भी रूप नहीं । श्री साईं रूपातीत है ।। 97 ।। यद्यपि देह नाशवान है । तो सत (आत्मा) स्वतंत्र नाश रहित है । देह पंचभूतो के अन्तर्गत है, आत्मा अनादि व अनंत है ।। 98 ।। उसमें शुद्ध सत्वात्मक ब्रह्मरूप चैतन्य को देखो जो जड़ इन्द्रियों का चालक है उस सत का नाम साईं है ।। 99 ।। वह इन्द्रियातीत है । जड़ इन्द्रियाँ उसे नहीं जानती हैं । वही इन्द्रियों को प्रवर्तित करता है । वही प्राण को संचालित करता है ।। 100 ।। उस शक्ति का नाम साईं है । उसके बिना रिक्त स्थान नहीं । उसके बिना दसों दिशाएं रिक्त हैं। वह चर अचर में व्याप्त हैं ।। 101 ।। उसके अवतार की भी वही स्थिति है। वह पहले अव्यक्त था। नामरूप लेकर व्यक्त हो गया। कार्य हो जाने पर अव्यक्त में समरस हो गया ।। 102 ।। अवतारकृत्य संपादित करके अवतारी देह त्याग कर जैसे निर्विकल्प भुवन में प्रवेश करते हैं वैसे ही साईं की करनी है।। 103 ।। गुप्त होने का मन में विचार आने पर जैसे स्वामी (श्री नृसिंह सरस्वती) गणगापुर से पर्वतयात्रा पर जाने की कह कर एकाकी निकल गए थे ।। 104 ।। भक्तों द्वारा रोके जाने पर उनको संतुष्ट कर दिया । मेरा गमन तो लोकाचार है गणगापुर नहीं छोड़ रहा हूँ ।। 105 ।। कृष्णा के तीर पर प्रातः स्नान , बिन्दुक्षेत्र में अनुष्ठान , मठ में पादुका पूजन करो । वहीं मेरा निरन्तर वास रहेगा ।। 106 ।। वैसे ही श्री साईं बाबा का निधन केवल लोकाचार है। चर अचर में सब के अन्तर में श्रीसाईं को देख सकते हैं ।। 107 ।। जैसी जिसकी भजन स्थिति वैसी उसकी नित्य अनुभूति। कुछ भी सन्देह चित्त में न धरें । श्री साई मरणातीत हैं ।। 108 ।। स्थिर - चर में श्री साई व्याप्त हैं साईं सब के अन्दर - बाहर हैं । साईं तुम्हारे हमारे भीतर निरन्तर सुखपूर्वक निवास करते

हैं ।। 109 ।। साईं समर्थ दीनदयाल हैं। भावार्थी विनीत भक्तों के पालक ह परम प्रेम के वे भूखे हैं, सभी के लिए अति स्नेही हैं ।। 110 ।। यद्यपि चर्म चक्षु से वे वहीं दिखते हैं, फिर भी वह सर्वत्र रहते हैं। यद्यपि स्वयं सूक्ष्मत्व में छिपे हैं, फिर भी हमें पागल बना देते हैं (मोह लेते हैं) ।। 111 ।। उनका निधन केवल ढोंग है । हमें धोखा देने के लिए एक स्वाँग है । वह पूर्ण हैं । नट का नाटक करते हैं । भंग होकर भी अभंग रहते हैं ।। 112 ।। उनका जो अनुराग है, उसे मजबूती से पकड़ लो, फिर उनको ढूढो अपना कार्य साधने के लिए ।। 113 ।। मनोभाव से पूजा करने से, भक्ति भाव से उन्हें स्मरण करने से, सभी भक्तों को अनुभव प्राप्त होगा । सर्वव्यापकता दिखेगी ।। 114 ।। उत्पत्ति स्थिति और लय जिनके चित्स्वरूप है उन्हें भय नहीं है। वे सदासर्वदा चिन्मय हैं। वहां विकारों का आश्रय नहीं है ।। 115 ।। जैसे सुवर्ण सुवर्णपन में ही रहता है , आभूषण बिना भी । नाना प्रकार की सजावट करने पर भी सोनापन (सुवर्णपन) का त्याग नहीं करता ।। 116 ।। विभिन्न प्रकार के अलंकार ये सब विनाशी व परिवर्तनीय है, संकुचन पर जो शेष रहता है, वह अविकार स्वर्ण है, न नाम, न रूप ।। 117 ।। तब यह हेमाडपंत स्वर्ण में समूल बिल्कुल पिघल जाये । इस प्रकार शुद्ध (गुण) स्वरूप साईं पदों में अंकित होकर प्रलय होने तक वास करे ।। 118 ।। बाद में तेरहवां दिन मनाया । भक्तरत्न बाबासाहेब ग्राम के ब्राह्मणों को एकत्र करके उत्तर विधान आरंभ किया ।। 119 ।। वस्त्र धारण किए स्नान करने के बाद बाबा साहेब के हाथों से तिलांजुलि , तिलतर्पण व पिंड प्रदान किया गया ।। 120 ।। सपिंडी आदि सभी उत्तर क्रिया शास्त्रों के आधार पर सही - सही समय पर मासिक सम्पन्न हुई बिना भेदभाव के ।। 121 ।। भक्त श्रेष्ठ उपासिनी, जोग के साथ, भगीरथी के पवित्र स्थान पर गए । होम हवन संपादित किया ।। 122 ।। ब्रहम भोजन, अन्न संतर्पण, यथा सामर्थ्य दक्षिणा प्रदान किया, सशास्त्र विधि विधान से । वे फिर वापस आए ।। 123 ।। न बाबा , न संवाद , अब यद्यपि यह अन्तर था किन्तु मस्जिद पर दृष्टि पड़ते ही गत सुखानुवाद स्मरण हो आया ।। 124 ।। बाबा की नित्य आसन स्थिति की सुखानुभूति प्राप्त करने के लिए कागज पर बनी उत्तमोत्तम तस्वीर मस्जिद में प्रेम पूर्वक स्थापित की गयी। ।। 125 ।। साईं के देहनिवृत्ति के पश्चात प्रतिमादर्शन से अनुवृत्ति होती । उनके विश्वास पात्र भक्तों को प्रतीति होती कि यह मूर्ति स्वयं बाबा ही हैं (पुनरावृत्ति है) ।। 126 ।। शामराव , उपनाम था जयकर , उन्होंने ही सुंदर रेखांकन किया था । ऐसी है यह प्रतिमा मनोहर कि निरन्तर स्मरण कराती है ।। 127 ।। जैसे ये प्रसिद्ध चित्रकार वैसे ही बड़े भक्त बाबा के । बाबा की आज्ञानुसार

विचारपूर्वक व्यवहार करते थे ।। 128 ।। इन्हीं के हाथों से कई सुन्दर छायाचित्र बनवाकर ध्यान धारणा करने के लिए भक्तों के घरों में स्थापित कराये गये थे ।। 129 ।। संतो का कभी भी मरण नहीं होता । पूर्व में अनेक बार इसका विवरण हो चुका है , वास्तव में याद हो तो । और स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है ।। 130 ।। बाबा आज देहधारी नहीं हैं । किन्तु जो उनका स्मरण करता है उसके लिए वे आज भी हितकारी हैं, जैसे पूर्व में सदेह थे ।। 131 ।। किसी से कुछ बोला हो , किन्तु कुछ अनुभव न हुआ हो तो, उनका देहावसान हो जाने पर, यह न माने कि बोला हुआ वह रह गया (अब नहीं होगा) ।। 132 ।। बाबा के बोल ब्रह्मलिखित हैं, विश्वास धर के अनुभव देखो । यदि अनुभव त्वरित नहीं होता है तो, कालांतर में निश्चित होगा ।। 133 ।। इस प्रकार इन जोग का नाम आते ही कथा के बीच में एक कथा स्मरण हो आयी । उसकी भी अपूर्वता सुनें । साईं की प्रेमलता दिखेगी ।। 134 ।। यद्यपि यह संवाद संक्षिप्त है, गुरुभक्तों के लिए अति बोधप्रद है। जिसे वैराग्य बोध हो वह सौभाग्यशाली है, संसार से बंधा हुआ अभागा है ।। 135 ।। एक बार जोग ने बाबा से पूछा , आज भी मेरी यह स्थिति क्यों है ? मेरी कर्मगति विचित्र है । मैं सुखस्थिति को कब प्राप्त होऊँगा ।। 136 ।। देवा , बहुत वर्षों तक अनन्य सेवा मैनें आपकी की है , फिर भी इस चंचल चित्त को आज भी विश्राम नहीं हैं , यह क्यों ? ।।137।। ऐसा कैसा मैं दुर्भागी ? संत के संग रह कर क्या यही प्राप्ति है ? सत्संग का परिणाम किस अवसर पर मुझे भोगने को मिलेगा ? ।। 138 ।। भक्त की यह विनती सुनकर साईं समर्थ परम प्रीति से जोग को क्या उत्तर देते हैं, स्वस्थचित्त से सुनें ।। 139 ।। "**दुष्कर्मो की होली हो जायेगी , पुण्य पाप राख रंगोली हो जायेंगे, तुम्हारी कांख में झोली देखूगा, तब तुझे भाग्यशाली मानूंगा ।। 140 ।। वासनाओं का त्याग होगा, नित्य भगवद्भक्ति में लग जाओगे, आशा के बंधन पूर्णरूप से टूट जाएंगे, तब तुझे सौभाग्यवान मानूंगा ।। 141 ।। विषयासक्ति को त्याग दोगे , मैं - तू पन को सर्वथा अयोग्य मानोगे , जिह्वा उपस्थ को नियंत्रित करने योग्य हो जाओगे, तब मैं तुझे सभाग्य मानूंगा ।। 142।।"** इस प्रकार कुछ समय पश्चात् बाबा के बोल सत्य हुए थे । सद्गुरु की कृपा से जोग को वैराग्य हो गया, जो बाबा ने कहा था ।। 143 ।। पुत्र संगति का बंधन नहीं था, पत्नी को सद्गति प्राप्त हो गयी , देहत्याग के पूर्व संन्यास ले लिया । सहज ही वैराग्य हो गया ।। 144 ।। इस प्रकार जोग भाग्यवान हुए । साईं वचन सत्य हुए । अंत में संन्यास संपन्न हुए । ब्रह्म में विलीन हो गए ।। 145 ।। जैसा - जैसा साईं ने कहा था वैसी ही परिणाम की स्थिति हुयी । साईं की उक्ति सार्थक हुई । जोग खरे भाग्यशाली

थे ।। 146 ।। तात्पर्य , बाबा दीनदयाल थे । भक्त कल्याण में , कृपालु , लगे थे। शिरडी में तीनों बेला बोध अमृत की समृद्धि अर्पित करते रहते , उनको सुनो ।। 147 ।। " **जिसे मुझसे अति प्रेम है, उसकी दृष्टि में मैं अखण्ड हूँ, उसे मेरे बिना सृष्टि रिक्त है, उसके मुख से मेरी ही कहानियां होती हैं ।। 148 ।। उसका मुझ पर अखंड ध्यान है , जिहवा पर मेरा ही नामावर्तन होता है, गमनागमन करते हुए वह मेरे ही चरित्र का गायन करता है ।। 149 ।। इस प्रकार मुझमें एकाकार हो जाने पर कर्म - अकर्म बिसर जाता है । जहां मेरी सेवा व आदर होता है, मैं निरन्तर वहीं रहता हूँ ।। 150 ।। जो मेरी अनन्य शरण में होता है, जिसे मेरा अखंड स्मरण रहता है, उसका मेरे माथे पर ऋण होता है, उद्धार करके चुकाता हूँ ।। 151 ।। पहले मुझे दिये बिना, जो भोजन - रस प्राशन नहीं करता , जो मेरा निदिध्यासन करता है, मैं उसके अधीन व्यवहार करता हूँ ।। 152 ।। मैं ही जिसकी भूख प्यास हूँ , दूसरा नहीं जिसके लिए मेरे समान, उसका मैं नित्य ध्यान करता हूँ । मैं उसके अधीन व्यवहार करता हूँ ।। 153 ।। पिता - माता , भाई - बन्धु नाते रिश्तेदार , पत्नी - पुत्र की निकटता से जिसने मुख मोड़ लिया है, वही मेरे पदों में अनुरक्त हो सकता है ।। 154 ।। वर्षाकाल में नाना सरिताएं उफनाते हुए समुद्र में मिलती हैं, सरितापन का व्यवहार विसर जाता है, महासागरता को प्राप्त होती है ।। 155 ।। रूप रंग गया , नाम गया, जल भी सागर में जाकर मिश्रित हो जाता है। सरिता सागर का लग्न हो जाता है, द्वैत एकत्व में खो जाता है ।। 156 ।। ऐसी समरसता प्राप्त होने पर चित्त नाम रूप को विसरा देता है। वह निज स्वभावता मुझ में देखता है, मेरे अतिरिक्त उसको कोई ठाव नहीं ।। 157 ।। पारस नहीं मैं पत्थर हूँ, यह लोगों को उजागर करने के लिए पुस्तक - पंडित बड़बड़ करते हुए लोहे की सलाखें लेकर आए ।। 158 ।। उससे मुझ पर घाव किया । उल्टे स्वर्णभाव सलाखों में प्रकट हो गया । मेरा पत्थर होना व कहना व्यर्थ हो गया । भीड़ ने अद्भुतता की अनुभूति की ।। 159 ।। अणुमात्र अभिमान के बिना हृदयस्थ होकर मेरी शरण में आओ, अविद्या का तत्काल निरसन होगा । श्रवण की आवश्यकता समाप्त हो जायेगी ।। 160 ।। अविद्या देह - बुद्धि का जनन करती है । देह बुद्धि से है तुम्हारी आधि - व्याधि । यही विधि - निषेधि (करने योग्य, न करने योग्य) की ओर ढकेलती है । जो आत्मसिद्धि में विघ्न कारक है ।। 161 ।। पूछो , अब मैं कहाँ हूँ, अब मैं तुमसे कैसे भेंट करूँ ? तो मैं तुम्हारे हृदय में विराजमान हूँ, बिना कष्ट के सन्निकट हूँ ।। 162 ।। पूछो, हृदयस्थ कैसे कौन ? कैसे क्या उसके लक्षण हैं ? ऐसा क्या उसका चिन्ह है जिससे हम उसे जानें ? ।। 163**

।। अतः अब दत्तावधान होओ, उसका स्पष्ट व्याख्यान सुनो जिसकी शरण में जाना है वह हृदयस्थ कौन है ? ।। 164 ।। जो नाना नाम, नाना रूप में सृष्टिभर में अपार व्याप्त हैं, जिसकी कोई माप नहीं कर सकता , माया के पूर्ण स्वरूप में वह है ।। 165 ।। वैसे ही सत्व, रज, तम गुण हैं; इन त्रिगुणों को पार करने पर मन में जो स्फुरण होता है, वह रूप हृदयस्थ का जानो ।। 166 ।। नाम रूप से विरक्त होने पर जो तुम्हारा 'तूँपन' शेष होतहै वही हृदयस्थ का लक्षण है ; जानकर उसकी शरण में जाओ ।। 167 ।। जब तुम अपने को मेरी तरह देखोगे , इस दृष्टि का आगे विस्तार होगा। भूत मात्र में अपने गुरु को देखोगे मेरे बिना कोई स्थान रिक्त नहीं होगा ।। 168 ।। ऐसा अभ्यास करते - करते मेरी व्यापकता का अनुभव प्राप्त होगा, फिर तुम मुझसे समरसता को प्राप्त होओगे । पूर्ण अनन्यता का भोग कर पाओगे ।। 169 ।। चित्तस्वरूप में ध्यान करोगे तो शुद्ध अन्तःकरण की प्राप्ति होगी। तुझे गंगा स्नान होगा गंगाजल को छुए बिना ।। 170 ।। प्रवृत्ति कर्म का अभिमान , जिससे दृढ बंधन प्राप्त होता है, ज्ञानी उससे चिपकते नहीं, सदैव अपने चित्त में सावधान रहते हैं ।। 171 ।। जो स्वरूप में (आत्मा में) मजबूती से बैठ गया है, अणुमात्र भी वहां से नहीं हिलता है, उसकी समाधि या उत्थान दोनों का ही प्रयोजन नहीं है ।। 172 ।।" इसलिए श्रोताओं के चरणों में माथा रखकर अति सप्रेमता से विनती करता हूँ की देव संत भक्त सभी का सप्रेम आदर करो ।। 173 ।। बाबा ने कितनी बार कहा था कोई किसी को अनुचित बोलता है उससे मेरा ही हृदय दुःखता है जानो मेरे हृदय में छेद हो रहा है ।। 174 ।। " **कोई किसी को दुर्वचन कहता है उससे मुझे तत्काल दुःख पहुंचता है उन्हें जो धैर्य से सहन करता है उससे मुझे बहुत समय तक तुष्टि मिलती है " ।। 175** ।। इस प्रकार भूतमात्र में हर जगह अन्दर - बाहर साईं व्याप्त हैं । एक प्रेम के अतिरिक्त उन्हें कुछ अच्छा नहीं लगता ।। 176 ।। परम मंगल यह परम अमृत साईंमुख से सर्वदा निकलता रहता , यह अत्यन्त प्रेम भक्तों के लिए था कोई कभी भाग्यशाली हो सकता है जो इससे अवगत न हो ।। 177 ।। जिन्हें पंक्ति (भोजन के समय)का लाभ मिला , जिनके साथ हंसे खेले , उन्हें अपार दुःख पड़ा है । उनका मन क्या अनुभव करता होगा ? ।। 178 ।। ऐसे शिष्ट जनों के भोजन के अवशेष से , मैं धनी हो गया , एक एक दाना उठाकर । उसी का आनन्द बांट रहा हूँ ।। 179 ।। अब तक जो कथा हुई है उसे हेमाडपंत क्या जानते हैं ? समर्थ साईं उनके वक्ता हैं वही लिखते हैं वही लिखवाते हैं ।। 180 ।।ऐसी यह साईं समर्थ कथा कहते हुए मेरा मन भरता नहीं है, सदैव चित्त में उत्कंठा लगी रहती है । श्रोता भी आनंद से सुनते हैं ।।

181 ।। इसके अलावा, जो साई कीर्ति का गुणगान करते हैं ,वैसे ही जो जो सद्भाव से सुनते हैं दोनों ही साईं स्वरूप होते हैं । इसे चित्त में दृढ़ता से धारण करो ।। 182 ।। अब यह अध्याय पूर्ण करने पर हेमाड साईं को समर्पित करते हुए प्रेम से साईं के चरणों को धरते हैं । आगे का निरूपण आगे होगा ।। 183 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित ” का “ श्री साईंनाथ निर्याण ” नामक चौवालीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्रीसद्गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय पैतालीसवां (श्री गुरुचरण महिमा) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

सहज ही जाता (चक्की) रखकर अन्न पीसना; जिससे निजसच्चरित में प्रेरित कर दिया । उनकी कुशलता कितनी अलौकिक है ? भक्त को सत्पथ पर लगा दिया ।। 1 ।। परमपुरुषार्थ जो मोक्ष है, उससे भी अधिक समर्थ गुरुचरण हैं । ऐसे गुरुचरणों का तीर्थ सेवन करने से मोक्ष अनजाने ही घर में प्रवेश कर जाता है ।। 2 ।। गुरु करुणाकर होंगे तब ही यह संसार सुखकर होगा, न घटने वाला भी घट जायेगा, आधे क्षण में (भवसागर के) उस पार ले जायेंगे ।। 3 ।। पोथी इतनी बड़ी हो गयी है यद्यपि कथा अति संक्षेप में कही गयी है । साईं की तो अगाध कीर्ति है । उसका मैं कितना वर्णन करूँ ।। 4 ।। जिसके दर्शन से नित्य तृप्ति होती थी, जिसके साथ रहने से आनंद मिलता था, जिससे भवभय से विनिर्मुक्ति मिली थी, वह साईंमूर्ति खो गयी है ।। 5 ।। जिससे परमार्थमार्ग में प्रवृत्ति होती थी, जिससे मायामोह से निवृत्ति होती थी , जिससे आत्यंतिक क्षेम प्राप्ति होती थी, वह साईमूर्ति खो गयी है ।। 6 ।। जिससे भवभय की भीति नहीं होती थी , जिससे न्यायनीति जागृत होती थी, जिससे संकट में मन में धैर्य होता था, वह साईं मूर्ति खो गयी है ।। 7 ।। निज मूर्ति को ध्यान में स्थापित करके साईं निजधाम को चले गए । निजावतार की समाप्ति कर ली । यह योग स्थिति अतर्क्य है ।। 8।। अवतार कार्य पूर्ण कर लेने पर वह पार्थिव आकृति खो गयी , यद्यपि वांग्मय मूर्ति यह ग्रन्थ पद पद पर स्मरण कराता है ।। 9 ।। इसके अतिरिक्त जिसकी कथा सुनने से मन को जो एकाग्रता लाभ होता है, उससे उत्पन्न शान्ति की अपूर्वता होती है , अवर्णीयता का कैसे वर्णन करें ।। 10 ।। आप श्रोता सभी अच्छे ज्ञानी हैं, मैं तो आपके आगे अल्पज्ञ हूँ तथापि यह साईं का वाणी - यज्ञ है कृतज्ञ बुद्धि से आदर करें ।। 11 ।। यह कल्याणप्रद वाग्यज्ञ मुझ सम अज्ञानी को सामने करके सर्वज्ञ साईं अपना निज कार्य पूर्ण कर रहे हैं, श्रोता जानते हैं ।। 12 ।। मन को एकाग्र करके , साईंचरणों का अभिवंदन करके जो महामंगल परम पावन इस कथा का श्रवण करेगा ।। 13 ।। जो भक्त भक्ति समन्वित निजस्वार्थ साधने के लिए उद्यत एकाग्रचित्त होकर इस कथामृत का सेवन

करेगा ।।14।। साईं उसके अर्थ पूर्ण करेंगे , स्वार्थ और परमार्थ पूर्ण करेंगे । सेवा कभी भी व्यर्थ नहीं जाती । अंत में वह कृतार्थ करते हैं ।। 15 ।। चौवालिस अध्यायों की पोथी , साईं निर्याण सुन लिया गया है अंत में , फिर भी यह पोथी आगे बढ़ रही है यह क्या चमत्कार है समझ में नहीं आता ।। 16 ।। गत अध्याय में साईं निर्याण यथानुक्रम पूर्ण हो गया फिर भी साईंलीला का ' कातिण ' (एक कीड़े का नाम) क्षणभर भी विश्राम नहीं कर रहा है ।। 17 ।। देखा जाय तो कोई नवलाई नहीं है निर्याण केवल शरीर का देखें । साईं जन्ममरणातीत हैं, पूर्ववत अव्यक्त हैं ।। 18 ।। देह गया, आकार गया , अव्यक्त जैसा तैसा ही रहा । देह निर्याण के बाद भी लीला होती है सब अवगत है ।। 19 ।। वर्णन करूँ तो वह अपार है किन्तु ग्रन्थ का विस्तार न होवे , इसलिए उनमें से सार लेकर श्रोताओं को प्रस्तुत करता हूं ।। 20 ।। अपनी भाग्य स्थिति धन्य है , जिस काल में साईं अवतार हुआ , उसी काल में हमें बार - बार सत्संग का लाभ हुआ ।। 21 ।। चित्त वृत्ति ऐसी होवे फिर भी भव निवृत्ति न हो पाये , फिर भी भगवत्प्रीति स्थिर न हो, इससे बढ़कर क्या दुर्गति है ।। 22 ।। सर्वेन्द्रियों से साईं भक्ति ही सच्ची भजन स्थिति है । यद्‌यपि मूर्तिदर्शन करती आँखें , वाणी के लिए मुँह न खुले ।। 23 ।। कान सुनते साईं कीर्तन , रसना मधुर आम्ररस में निमग्न ; करते साईं पाद स्पर्श , कोमल तकिए का वर्जन न खपे ।। 24 ।। क्या वह साईं भक्त है, जो साईं के पास से क्षण भर भी दूर हुआ होगा , जिन्हें भव विरक्ति न मालूम उसे चरणासक्त क्या कहें ।। 25 ।। उसके (स्त्री) मार्ग में एक पति के अतिरिक्त कोई भी आये वो श्वसुर , देवर , भाऊ जानकर सादर वंदन करती है । 26 ।। पतिव्रता का निश्चल अंतर अपना घर कभी न छोड़े , निज पति के प्रति अपार प्रेम ही आजन्म आधार है ।। 27 ।। पतिव्रता साध्वी सती , अन्य को मानकर निजपति , उसके दर्शन करने को कभी भी मन नहीं करती ।। 28 ।। उसका अपना पति ही पति , इतर किसी से उसे न तुलती ; उसी प्रकार उसी रीति से शिष्य भी गुरु चरणों में अनन्य प्रीति रखते हैं ।। 29 ।। पतिव्रता के पति प्रेम की उपमा , गुरु प्रेम से देते हैं पर गुरु प्रेम की सीमा नहीं है , सद् शिष्य उसकी महिमा को जानें ।। 30 ।। फिर जो इस जग में सहायक न हुआ, परमार्थ में क्या उसकी सहायता आयेगी , जमाता व पुत्री किसी का भरोसा नहीं रखिए ।। 31 ।। माता पिता ममता करेंगे , उनका पुत्र सम्पदा का लक्ष्य करेगा । पत्नी बच्चों की भाँति बिलखेगी,किंतु परमार्थ में कोई ।साथी नहीं होगा । 32 ।। फिर अब कौन बचा जिससे होवे परमार्थ, करें विचार अन्त में, तो अंत में बचा अपने आप ।। 33 ।। नित्य - अनित्य का विवेक करके , ऐहिक आमुष्मिक फलभोग त्याग के, जो

शामदाम आदि मोक्ष के छः नियम साध ले , वह साधक धन्य है ।। 34 ।। जो दूजे की आस छोड़ दे अपने आप में दृढ़ आत्मविश्वास रखके जो कांछ को मार ले उसे ही परमार्थ सिद्ध होगा ।। 35 ।। ब्रह्म नित्य, जग अनित्य है , गुरु ही एक सत्य ब्रह्म है । अनित्य को त्याग कर गुरु पर ध्यान लगाना है ,यही सतत भावना एक साधन है ।। 36 ।। अनित्य त्याग से वैराग्य जनन , सद्गुरु ब्रह्म चैतन्यघन , भूतो में उपजे भगवंतपन, इसका नाम है अभेद भजन है ।। 37 ।। भय अथवा प्रेम से , जिसका जिसपर नित्य ध्यान , ध्याता स्वयं ध्येय बन जाता है, जैसे कंस कीट और रावण हुए (कंस कृष्ण में रावण राम में लय हो गये। कीट भ्रमर बन जाता है) ।। 38 ।। ध्यान में अनन्यपन होवे तो ध्यान सरीखा साधन नहीं । जो स्वयं अपने आप अभ्यास करता है, उनका तुरन्त निज उद्धार होता है ।। 39 ।। फिर जन्म - मरण नहीं होता , जीव भाव का पूर्ण विस्मरण होता है । प्रपंच का भान मिट जाता है , आत्मानुसंधान का सुख लाभ होता है ।। 40 ।। इसलिए निज गुरु नामावर्तन उससे परमानंद की उत्पत्ति । भूतों में भगवान दिखते हैं , नाम की क्या दूसरी महिमा है ।। 41 ।। जिसके नाम की ऐसी महत्ता है मैं उसको सद्भाव से प्रणाम करता हूं । कायावाचामन से उसके प्रति मैं अनन्यगति से शरण आऊँ ।। 42 ।। इस अर्थ की एक द्योतक कथा , अब मैं श्रोताओं से कहता हूँ । इसलिए निजहितार्थ एकाग्र चित्त करके सुनें ।। 43 ।। कैलाशवासी काका दीक्षित , साईं समर्थ से आज्ञाकिंत हो नित्य नियम से भागवत वाचते , सभी इस बात से अवगत हैं ।। 44 ।। एक दिन काका महाजन के घर , चौपाटी पर काका दीक्षित ने भोजन किया तथा नियम से पोथी वाचन किया ।। 45 ।। एकनाथी भागवत का एकदास व द्वितीय , ऐसा सरस और अद्वितीय, अध्याय सुनकर श्रोता हृदय आनंद विभोर हो गया ।। 46 ।। माधवराव बाबा के भक्त थे। काका महाजनी उनके साथ बैठे कर एकाग्र चित्त होकर भागवत् सुनने बैठे ।। 47 ।। भाग्य से कथानक भी अति उत्तम , जिससे श्रोताओं का प्रेम भगवद् भक्ति में दृढ़ हुआ ।। 48 ।। ऋषभ कुल के नौ दीपक थे ,कवि , हरि , अंतरिक्षा आदि (कवि , हरि , अंतरिक्ष , प्रबुद्ध , पिप्पलायन , आविहेत्रि , दुर्मिल , चमस , करभाजन) जिनका कथानक मधुर , बोधप्रद और आनन्दजनक होगा ।। 49 ।। वे, भगवद्स्वरूप , नौ थे, जिनमें शांति व क्षमा एकादश अमूप थी। भागवत का धर्म व प्रताप सुनकर , जनक स्थिर व तटस्थ होगाए ।। 50 ।। वे उच्चतम क्षेम क्या हैं , हरि की परम भक्ति क्या है , हरिमाया कैसे सुगम हो , निश्चय ही गुरुचरण उत्तम हैं, ।। 51 ।। कर्म , अकर्म और विकर्म , इन सबका, एक ही मर्म है - गुरु ही परमात्मरूप हैं , तथा

गुरु भक्ति भागवत धर्म है। ।। 52 ।। दुर्मिलनाथ ने हरि चरित्र अवतार के गुण का निरूपण किया है । पुरुषावतार के लक्षण दिखाकर नारायण के रूप का वर्णन किया ।। 53 ।। चमसनाथ ने फिर जनक को अभक्त की गति का विन्यास कहा , जो वेद विहित कर्म को छोड़े, उसका सर्वस्व विनाश हो जाता है ।। 54 ।। सबके अन्दर हरि का वास है , इसलिए किसी से द्वेष न करो , पिंड - पिंड में ईश्वर देखो जो इससे रत्ती भर खाली नहीं है ।। 55 ।। अंत में नौवें करभाजन ने कृत त्रेता आदि युगों मे कैसे कैसे मूर्ति का पूजन व ध्यान किया जाना है, सबका परिभाषन किया ।। 56 ।। कलियुग में हरि व गुरु का चरण स्मरण ही शरणागत की निज शरण का एक साधन है । उसी से भव भय हरण होते हैं ।। 57 ।। पोथी की ऐसी समाप्ति होने पर , काका साहब पृच्छा करते हैं।इन नवनाथों की कृति क्या है, उनकी वृत्ति अतर्क्य है ।। 58 ।। प्रेम से माधवराव से पूछते ,यह भक्ति कितनी कठिन है? हम जन्म जन्म से कैसे मूर्ख हैं कि यह शक्ति न जान पाए ।। 59 ।। कहाँ ए नाथ महाप्रतापी , कहां मैं ठहरा जन्म से पापी। क्या यह भक्ति सरल है। वे सच्चिद के अवतार धन्य हैं ।। 60 ।। हम से भक्ति होगी क्या , कैसे होगा तरणो पार । पांव असमर्थ होने पर हताशा होगी । क्या यह जन्म ही व्यर्थ होगा ।। 61 ।। काका साहेब प्रेमल भक्त हैं, मन में इतनी हलचल क्यों है ।शामा को यह खलबल हो गयी कि सुस्थिर वृत्ति चंचल क्यों हो गयी ।। 62 ।। शामा नाम के माधवराव , जिनका काका से सद्भाव रहा था । उनको काका का यह स्वभाव अच्छा न लगा ।। 6 3 ।। बोले , " जिनके भाग्य में बाबा सरीखे आभूषण प्राप्त हो गये हैं तब भी जिनके मुख पर दीनता है, उनका जीवन व्यर्थ है ।। 64 ।। साई चरणों में श्रद्धा अटल है , फिर भी मन क्यों व्याकुल है। नाथों की भक्ति प्रबल होवे , हम भी क्या प्रेमल नहीं हैं ।। 65 ।। एकनाथी भागवत् एकादश स्कंध टीका सहित रामायण को नित्य वाचने की आपको आज्ञा निश्चित है ।। 66 ।। वैसे ही हरिगुरु नाम का स्मरण , बाबा की आज्ञा प्रमाण है । उससे आपका भवभय तारण , तथा चिंता का हरण होगा ।। 67 ।।“ पर उन नौ योगियों का चरित , उनके वे असिधारा व्रत अपने को यत्किंचित सिद्ध होंगे, काका का यही सतत चिंतन था ।। 68 ।। उनके मन में खलबल लगी थी नौ योगियों की प्रबल भक्ति किस उपाय से प्रकट होगी, तभी फिर देव सचमुच निकट आयेंगे ।। 69 ।। अतः ऐसी हुर हुर लगी थी ।यही विचार सोते बैठते । दूसरे दिन ही चमत्कार घटा, श्रोता उसे सविस्तार सुनें ।। 70 ।। अनुभाव का नवलाव देखो प्रातः काल ही आनंदराव ' पाखाडे ' जिनका उपनाम था, माधवराव को खोजते हुए आए ।। 71 ।। प्रातः काल वे भागवत वाचन

करने के वेला में आये । माधव राव के पास बैठकर स्वप्न की नवलाई कहने लगे ।। 72 ।। इधर पोथी चल रही थी उधर दोनो की कानाफूसी हो रही थी । उससे श्रोता वक्ता के चित्त की स्थिति अस्थैर्य सी हो गयी ।। 73 ।। आनंदराव की चंचल वृत्ति , माधवराव से स्वप्न कहते , बोलते सुनते दोनों फुसफुसाते क्षणभर को पोथी भी रुकती है ।। 74 ।। काका साहेब तब उनसे पूछते , क्या है वह ऐसी नवल स्थिति । तुम दोनों की आनंद वृत्ति , हमारे प्रति क्या नहीं कहोगे ।। 75 ।। तब वे माधवराव बोलते हैं , कल की आपकी शंका थी । उसका समाधान हाथोंहाथ हो गया। यहां तारक भक्ति लक्षित है ।। 76 ।। पाखाडे का वह स्वप्न सुनो , बाबा ने कैसे दर्शन दिए । तुम्हारी शंका निरसन होगी , गुरुपद वंदन भक्ति पूर्ण है ।। 77 ।। फिर सबकी वह स्वप्न सुनने की प्रबल जिज्ञासा थी । उनमें काका साहेब की विशेष थी । आरंभ में शंका भी उन्हीं की थी ।। 78 ।। आनन्द राव ने सबके भाव देखकर स्वप्न सुनाया । चित्त में सद्भाव धारण किए श्रोताओं को भी नवलाव लगा ।। 79 ।।“ एक समुद्र के अन्दर खड़ा था पानी में कमर भर । वहां अकल्पित साईं समर्थ मेरी दृष्टि के समक्ष आये ।। 80 ।। एक रत्न जड़ित सिंहासन पर साईं विराजमान थे, उनके चरण पानी में थे ऐसे रूप का दर्शन किया ।। 81 ।। ऐसा मनोहर तन देखकर मन अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। किसे भान था वह स्वप्न है , दर्शन से मन सुख संपन्न हुआ ।। 82 ।। क्या उस योग का नवलाव , माधवराव वहीं खड़े थे । मुझसे भाव से बोले हे आनन्दराव पांव पड़ो ।। 83 ।। तब मैनें उन्हें प्रत्युत्तर दिया , मेरे अन्तर चाह बहुत है । पर उनके चरण जल के अन्दर हैं, मेरे हाथ में कैसे आयेंगे ।। 84 ।। उनके चरण जल के अन्दर हैं उन पर माथा कैसे रखूँ । अब मुझे क्या करना है, वस्तुतः कुछ भी समझ में नहीं आता ।। 85 ।। ऐसा सुनकर माधवराव बाबा से क्या बोले , सुनो , “ देवा अपने चरण ऊपर खींच लो, जो जल के अन्दर ढके हैं " ।। 86 ।। ऐसे बोलते ही तत्क्षण , बाबा ने बाहर चरण निकाले । आनंद राव ने फिर उन्हें धरकर अबिलंब अभिवंदन किया ।। 87 ।। ऐसे दृढ़ चरण धरने पर , बाबा ने आशीर्वचन दिए, " जा रे तेरा कल्याण होगा, भीति का कोई कारण नहीं है” ।। 88 ।। और बाबा बोले ,” देख , रेशमी किनारे की एक धोती , मेरे शामा को देने से निश्चित तुझे सुख सुख मिलेगा ।। 89 ।।“ इसीलिए आज्ञा को सिर से वंदन कर , मैं रेशमधारी धोती लाया हूँ देने के लिए । काका साहेब आप निज कर से माधवराव को इसे स्वीकार करायें ।। 90 ।। मेरी इस विनती को मान देकर माधवराव को परिधान पहनाएँ । ऐसा करने से मुझे सुख होगा । मैं उपकारी होऊँगा ।। 91 ।। आनंद राव की यह बात , माधवराव स्वयं सुनते हैं

काका साहेब ने जब उन्हें वस्त्र दिया , तो उस वस्त्र को उन्होंने अस्वीकार कर दिया ।। 92 ।। उनके मन में आया कि यह स्वप्न है, चिह्न देख कर हम संतुष्ट हों तो । बिना कुछ दृष्टांत देखे मैं यह वस्त्र नहीं लूंगा ।। 93 ।। तब काका साहेब बोले , अब बाबा की अनुभूति देखो । स्वीकारना उचित या अनुचित है यह पर्ची से सूचित होगा ।। 94 ।। जैसी बाबा पर्ची देंगे तैसी उनकी आज्ञा मानूँगा कृतसंकल्प होकर पर्चियां बाबा के चरणों पर रख दीं ।। 95 ।। काका साहेब जिनका सर्वस्व भार ही साईं पर होता, पहले उनका विचार ध्यान करते आगे वे व्यवहार करते ।। 96 ।। यही क्रम बाबा के जीवित रहते रहा , उनके पश्चात भी वही क्रम रहा । पर्चियां डाल कर आज्ञा लेते , वैसे ही वे निश्चय वर्तते ।। 97 ।। कार्य छोटा हो या बड़ा , पर्ची से आज्ञा लिए बिना कुछ नहीं करते । चाहे जायें प्राण , अनुज्ञा सर्वथा प्रमाण है ।। 98 ।। एक बार साईं चरणों में अर्पित कर जब देह ही नहीं रहा अपना । फिर उसके चलन वलन पर , कैसा अपना अधिकार है ।। 99 ।। देखो इस एक भावना पर , लाखों रुपए की कमाई पर लात मार दी पर संकल्प दृढ़ आमरणान्त रखा ।। 100 ।। " तेरा ईमान फलित होगा , मैं तुझे विमान भेजूंगा । उसमें बैठाकर ले जाऊँगा तू निश्चिंत मन रहना ।।“ 101 ।। यह बाबा प्रसादोक्ति , अक्षर - अक्षर अनुभव की गयी । साईं - लीला वाचकों को काका की निर्गम स्थिति ज्ञात है ।। 102 ।। उस स्थिति का स्मरण होने पर इससे भिन्न और क्या विमान प्रयाण होगा | क्या वह गुरुनाम का आवर्तन करते करते आनन्द का मरण ।। 103 ।। दीक्षित ऐसे दृढ़ संकल्प थे , साईं चरणों में मन अविकल्प रहता। इष्टमित्रों को सीख देते कि गुरुचरणों में विलीन हो जाओ ।। 104 ।। अब पूर्व कथा के संदर्भ की स्थिति में दोनों ने पर्ची की युक्ति मानी । कारण , दोनों की काका पर प्रीति , फिर पर्चियां अबिलंब लिखी ।। 105 ।। एक पर्ची पर " धोती स्वीकारें” दूजी पर “ धोती अस्वीकारें” । ऐसा लिखकर साईं के छायाचित्र के पास रख दिया ।। 106 ।। वहां उपस्थित एक अबोध से आगे से एक पर्ची उठवायी । धोती माधवराव को स्वीकारने की आज्ञा मिली । 107 ।। जैसा स्वप्न वैसी पर्ची उठी ; सभी आनंदित हो उठे । फिर रेशम की धोती , शामा के हाथ में दिया ।। 108 ।। उनका स्वप्न इनकी चिट्ठी परस्पर जब मिल बैठी । दोनों को ही सुख सन्तुष्टि हुई परमानन्द पेट में नहीं समा रहा था ।। 109 ।। माधवराव के अन्तर में खुशी , आनंदराव को भी सन्तोष हुआ । काका की आशंका का समाधान हुआ , साईं भक्ति पुष्ट हुयी ।। 110 ।। इस कथा का यही है सार , हम सब को विचार करना है । गुरु चरणों में सिर रख कर गुरुवंदनोंद्गार को लक्षित करें ।। 111 ।। अपने से भी अच्छी अपनी स्थिति , अपनी भूमिका

, चित्तवृत्ति व उद्धारगति अपने से भी अच्छा वही गुरु जानते हैं ।। 112 ।। जैसा रोग वैसा निदान , वैसी औषधि का अनुपान । सद्गुरु शिष्यों के प्रति भवरोग निवारण हेतु नियमन करते ।। 113 ।। सद्गुरु जो करनी करते हैं , स्वयं नक़ल नहीं करो । तुम्हारे कारण गुरु मुख से जो वाणी निकले उसका सम्मान करो ।। 114 ।। उन शब्दों पर मन लगाओ , उन्हीं का नित्य चिंतन करो , वही तुम्हारे उद्धार का कारण है , यह स्मरण निरन्तर रहे ।। 115 ।। गुरु वचन ही पोथी पुराण , उनका स्पष्टीकरण वही है । मुख उपदेश पर ध्यान रखो वही अपना निगम ज्ञान है ।। 116 ।। कोई भी सन्त वचन हो , उसका अवमान नहीं करो । अपनी मां जो अपना जतन करती है वह अन्य कौन करे ।। 117 ।। बच्चे के प्रति माँ का प्यार व उसका दुलार खरा होता है । बच्चा उस सुख को क्या जाने जो लला को पालने में माँ को मिलता है ।। 118 ।। सृष्टि में सतं भरे हैं, निज कोरे हृदय पर अंकित करो।“ अपना बाप तो अपना बाप " साईं मुख का यह करुणालाप देखो ।। 119 ।। इसीलिए साईं मुख के वचन पर अपना ध्यान रखो अंत में वही कृपा निधान तापत्रय शमन कर देंगे ।। 120 ।। वही जाने उसकी कला , हम कौतुक दृष्टि से देखें । उनकी लीला कितनी अद्भुत है जब सहज ही कैसे लीला घटती है ।। 121 ।। जो भी वचन कोई बोले , वो सब ध्यान देकर सुनें । अपने लक्ष्य न छूटने पायें , न गुरु का वचन बिसरने पाये ।। 122 ।। यहीं पर परमकल्याण है यहीं पर भव भयतरण है । यहीं पर पूर्ण पोथी पुराण एवं जप तप अनुष्ठान हैं ।। 123 ।। सारांश , गुरुवर से प्रेम करो , अनन्य भाव से नमस्कार करो । दिनकर के आगे कैसा अंधकार , वैसे ही वहाँ भवसागर नहीं है ।। 124 ।। सृष्टि में कहीं भी रहो , निकट अथवा कितनी ही दूर । सात समुद्र के पार भी , भक्तार्थ प्रेम अपार है ।।125 ।। अतः ऐसे यह लिखते लिखते , एक कथा चित्त में याद आयी , एक को देख दूसरे के करते , कैसे जीव को आफत होती है ।। 126 ।। एक बार बाबा मस्जिद में , म्हालसापति के साथ बैठे थे अचानक पूर्व की लकड़ी की शैया उनकी स्मृति में अकल्पित हुयी ।। 127 ।। चौड़ी पूरी सवा वीते की , दोनों किनारे चिथड़ों से बंधी हुई , मस्जिद की छत से टंगी हुई ; उसी पर झूला करते ।। 128 ।। रात को अंधेरे में नहीं सोते , तदर्थ सिर व पायताने पर रात भर मिट्टी के दिए जलते रहते , बाबा लकड़ी की तख्ती पर सोते ।। 129 ।। लकड़ी की तख्ती का वृत्त पिछले एक अध्याय में पहले ही यहां वर्णित है , उसका महत्त्व यहां सुनें ।। 130 ।। एकबार इस तख्ती की महत्ता , मनोभाव से बाबा ने वर्णित की , उसे सुनें काका साहब दीक्षित के चित्त में क्या वृत्ति उठी ।। 131 ।। वे बाबा से बोले , यदि तख्ते पर सोना प्रिय है तो मैं प्रेम

से टांग देता हूँ फिर शांत चित्त होकर लेटे ।। 132 ।। बाबा उनका उत्तर देते म्हालसापति को नीचे छोड़कर मैं ऊपर कैसे सोऊँ मैं यहां नीचे अच्छा हूं ।। 133 ।। उस पर काका अति प्रीति से बोले , दूसरी तख्ती टांग दूं एक पर आप दूसरी पर म्हालसापति सोवें ।। 134 ।। उस पर बाबा का उत्तर देखो, " तख्ती पर यह सोयेगा । जिसका तन है गुणों के ऊपर है , वही तख्ती पर सोता है ।। 135 ।। तख्ती पर शयन सरल नाहीं है , उस पर मुझ बिन कौन सोये । नयन खुले हो निद्रा दूर , उस पर सोना तभी संभव है ।। 136 ।। जब मैं शयन करने लगता हूँ , तब मैं इन्हें आज्ञा देता हूँ कि मेरी छाती पर हाथ रख कर सन्निकट बैठे रहो ।। 137 ।। वह भी काम इनसे नहीं होता ,जहां बैठते हैं, वही झपकी ले लेते हैं । तख्ती इनके काम की नहीं है मेरे सोने की तख्ती है ।। 138 ।। नामस्मरण हृदय में चलता रहता है , चाहो हाथ रखकर देख लो । ऐसी आज्ञा निरन्तर जागृत रहने के लिए उन्हें देते, यदि सोवें ।। 139 ।। निद्रा आते ही उनका हाथ जड़ पत्थर ता होवे तब ' भगत ' कहने पर उसकी निद्रा घबड़ाकर उड़ जाती है ।। 140 ।। जो ज़मीन पर बैठ न सके , जिसका आसन स्थिर नहीं है , जो नर निद्रातम का किंकर, कैसे ऊपर सो सकता है ।। 141 ।।**" आप अपने साथ रहो , दूसरे को उनके साथ (आप अपना विहित कार्य करो, दूसरे को उसका करने दो) ।"** यह भक्तों को प्रेम के साथ बाबा बोलते ।। 142 ।। अगाध साईंनाथ की करनी , इसीलिए हेमाड लगते चरणों में , उनकी कृपा व आशीर्वचन को निज स्मरण में अखण्ड रखते हैं ।। 143 ।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित " का श्री गुरुचरणमहिमा ' नामक पैंतालीसवाँ अध्याय संपूर्ण ।।

।। श्रीसद्‌गुरु साईंनाथर्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय छियालीसवां (काशीगयागमन अजाजन्मकथन) ।।

श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

श्री साईं तेरे चरण धन्य हैं , श्रीसाईं तेरा दर्शन धन्य है जो कर्मबन्ध मोचक हैं ।। 1 ।। यद्यपि संप्रति अदृश्यमूर्ति , किन्तु धरने से भाव भक्ति , भक्तों की सद्यः प्रतीति के लिए समाधि में ज्योति जागती है ।। 2 ।। ऐसी सूक्ष्म डोरी धरे हैं जो देखो तो दिखती नहीं कैसी है । देश में हो या परदेश में पर निज भक्तों को निकट खींचते हैं ।। 3 ।। अपने चरणों में खींचकर ढीला कर देते हैं , प्रेम से धर कर आलंबन देते हैं । जैसे माता निज बालक का , वैसे ही तू सहज ही पोषण करता है ।। 4 ।। ऐसे कुछ सूत्र खींचते , न जाने कहाँ रहते हो , पर परिणाम देखकर लगता है कि तुम भक्तों के पीछे हो ।। 5 ।। ज्ञानी , पंडित व चतुर पुरुष सब संसार के गर्त में अभिमान से फसते हैं, पर भोले भाले अनुभवहीन अज्ञानी को निज सत्ता में खेल खेलाते हो ।। 6 ।। अन्दर से सब खेल खेलते , बाहर से अलिप्त रहने का बहाना | करके, स्वयं को अकर्ता कहते हो , तेरा चरित्र कोई न जान सके ।। 7 ।। इसीलिए कायावाचामन को तेरे पद में अर्पण करता हूं मुख से निरन्तर नामस्मरण करने से पापों का क्षालन होगा ।। 8 ।।, सकामी के काम पूरे करते, निष्काम को निज सुख धाम देते, ऐसा तेरा मधुर नाम (जप) सदभक्तों का सुगम उपाय है ।। 9 ।। उससे पापों का क्षय होगा , रज , तम निःसंशय जायेगा । सत्त्व गुणों का क्रम से विकास , उसके जप से , धर्म संचय होता है ।। 10 ।। धर्मवृत्ति जागृत होने पर , फिर वैराग्य दौड़ता आए । निजज्ञान तत्काल प्रकटता है, विषय नाम मात्र को रहता है ।। 11 ।। विवेक से ज्ञान जब मिलता है , स्वस्वरूप में अनुसंधान होता है । यही है गुरुपद में अवस्थान , इसका नाम है पूर्ण गुर्वर्पण ।। 12 ।। मन का साईं पदों में अर्पण हुआ , इसका केवल एक प्रमाण है । संपूर्ण निजभक्ति उल्हसित हो , साधक शान्ति प्रवण होता है ।। 13 ।। सप्रेम गुरुभक्ति का नाम ' धर्म ' है । "सभी कुछ मैं ही " यह ज्ञान का मर्म । विषयों से विमुख होना परम वैराग्य है। यही सांसारिक जीवन का उपरम है।। 14 ।। जीव द्वारा अनन्य भाव से की गयी ऐसी भक्ति की महिमा धन्य है। शांति विरक्ति व कीर्ति ये तीनों , सर्वदा जीव के अधीन होती हैं ।। 15 ।।

जिसकी गुरु भक्ति ऐसी हो , फिर किस वस्तु की कमी हो उसको । इच्छा जो जो मन में होवे , वह वह अप्रयास पूरी होवे ।। 16 ।। ऐसी भक्ति जिसके पास, ब्रह्मस्थिति उसकी आंदण (दिया गया उपहार विशेष) दासी हैं । वहां कोई मोक्ष को नहीं पूछता , तीर्थ पावों में लगता है ।। 17 ।। दीक्षित का भागवत वाचन , नवयोगियों का भक्ति वर्णन , साईं के चरण दर्शन का कथन पूर्व अध्याय में हुआ है ।। 18 ।। आनंदराव साईं भक्त थे, पाखाडे जिनका उपनांव था, के स्वप्न की नवलता तथा साईं भक्ति की वैभवता का कथन किया था ।। 19 ।। साईं जिसे अपनी छांव के अन्दर लेते , वह घर पर या किसी द्वीप पर हो । उसके पास आठो प्रहर साईं निश्चित रहते हैं ।। 20 ।। जहाँ जहाँ भक्त जाता वहाँ वहाँ पहले जाकर खड़े रहते हैं , अकल्पित दर्शन देते हैं ।। 21 ।। इस अर्थ की अभिनव कथा तुम श्रोताओं के लिए कहता हूं । विस्मित होकर श्रवण करो, चित्त आनंदित होगा ।। 22 ।। साई मुख से अक्षर आयेंगे , श्रवणद्वार भाव से सेवन करेंगे । फिर समाधि सौख्य पीछे रह जायगे, सदभक्त स्वानन्द में डूब जायेंगे ।। 23 ।। ऐसी मधुर कथा सुनने पर , जहाँ चमत्कार पद पद पर होता हो , श्रोता अपने आप को बिसरा देते हैं , अति भाव विभोर हो जाते हैं ।। 24 ।। काका साहेब दीक्षित का , ज्येष्ठ पुत्र , जिनका नाम बाबू था, उसका नागपुर में उपनयन कराने का निश्चय हुआ ।। 25 ।। नाना साहेब चन्दोरकर , उनका भी ज्येष्ठ पुत्र था । उसके भी लग्न के विचार के लिए ग्वालियर शहर जाना था ।। 26 ।। उपनयन हो जाने पर , ग्वालियर में लग्न के लिए । काका को विलम्ब न हो, नाना के मन में यह था ।। 27 ।। काका स्वस्थ मन से नागपुर से ग्वालियर तक आयें इसकेलिए ऐसा सुमुहूर्त निकलवाये जो दोनों को ही स्वीकार्य था ।। 28 ।। तदन्तर लग्न के आमन्त्रण के लिए भक्त मणि , नाना साहेब साईं दर्शन के लिए उत्साह से शिरडी पहुंचे ।। 29 ।। काका साहेब के वहीं होते , नाना मस्जिद जाकर , कर संपुट जोड़कर बाबा को लग्न में आने का न्योता दिये ।। 30 ।। तब बाबा बोले , " ठीक है , श्यामा को ले जाओ साथ " । दो दिन बाद काका भी उपनयन में बाबा को न्योते को पूछे ।। 31 ।। उनसे भी बाबा वैसे ही बोले , " श्यामा को ले जाओ साथ " । बाबा से स्वयं काका साहेब आने को आग्रह करते हैं ।। 32 ।। उसका भी उत्तर तत्काल ," काशी प्रयाग तत्काल होकर, श्यामा से भी आगे आता हूँ , ।। 33 ।। अब श्रोता इन शब्दों पर , इसके अर्थ पर चित्त देवें । इसकी प्रतीति में बाबा की व्यापकता सर्वत्र देखें ।। 34 ।। अतः भोजन कर लेने पर , माधवराव विचार करते है कि एक बार ग्वालियर पहुंचकर , फिर काशी दूर ही कितना है ।। 35 ।। नन्दराम से सौ रुपये खर्च

के लिए उधार लेकर ,अति आदर पूर्वक बाबा की अनुमति लेने गये ।। 36 ।। अब लग्न - उपनयन निमिति ग्वालियर तक जाना है । इसी समय काशी - गया जाना उचित होगा ,मन करता है ।। 37 ।। फिर देव के पांव पड़ने पर बाबा ने माधवराव को सानंद काशी- गया कर आने की आज्ञा दी ।। 38 ।। और आगे उनसे कहते है, "तुम व्यर्थ का क्या पूछते हो, अप्रयास जो सहज मिल जाये, अचूक उसे निश्चित ले लो" ।। 39 ।। अतः ऐसी जब आज्ञा मिली माधवराव ने गाड़ी कर ली , वाट कोपर गांव की धर ली , तब रास्ते में आपा कोते से भैंट हो गयी ।। 40 ।। अपनी नातिन को ले आने आपा चांदवड जा रहे थे   , काशी जाने की बात सुनकर वे तांगा छोड़कर कूद पड़ते हैं ।। 41 ।। काशी प्रवास करने को अपने पास पैसा नहीं था पर माधवराव सरीखे का साथ आपा कोते नहीं छोड़ते हैं ।। 42 ।। माधवराव ने आपा कोते को धीर दिया , फिर क्या देर , आनंद से प्रसंग तत्पर होकर गाड़ी में बैठे गये ।। 43 ।। आपा कोते पाटिल सधन थे पर पैसे का साधन मार्ग में नहीं था । इस कारण यह चिन्ता दारुण थी कि उनका काशी प्रयाण बाधित न हो ।। 44 ।। बहती गंगा में , हाथ धोने का मन में आया । आपा का मनोगत माधवराव सरीखे की सोहवत साधने को था ।। 45 ।। ऐसा उनका समय जानकर माधवराव ने उन्हें धीर देकर साथ लिया; काशी में होने का लाभ दिया ।। 46 ।। फिर वे उपनयन संस्कार को नागपुर गये । काका साहब ने माधवराव को , सौ रुपये खर्चे के लिए दिये ।। 47 ।। वहां से वह ग्वालियर शादी समारोह को गये । उस समय नाना साहेब ने माधवराव को सौ रुपये दिये ।। 48 ।। नाना के समधी श्रीमंत जठार ने भी सौ रुपये दिये । इस प्रकार नाना के गुरुबंधु के पास प्रेम से धन एकत्र हुआ ।। 49 ।। काशी के मंगल घाट पर , जड़ाव की सुन्दर कारीगरी से युक्त लक्ष्मी - नारायण का मन्दिर , उसके मालिक जठार थे ।। 50 ।। जठार का अयोध्या में भी श्री राम का एक सुन्दर मन्दिर था। दोनों क्षेत्रों का आदर सत्कार उन्होंने अपने मुनीम पर छोड़ दिया था ।। 51 ।। ग्वालियर से वे मथुरा गए ; साथ में ओझे , बिनी वाले व पेंडारकर भी होलिए । तीनों ही वहाँ से वापस हुए ।। 52 ।। माधवराव और कोते , वहां से प्रयाग होते हुए आये । अयोध्या में रामनवमी के उत्सव में प्रवेश किए ।। 53 ।। इक्कीस दिवस वहां रहे, दो मास काशी में बिताए । चन्द्र सूर्य ग्रहण हो गए . फिर दोनों गया को निकले ।। 54 ।। गया में ग्रन्थि ज्वर की महामारी थी , गली गली जन चिंतित थे । ऐसी वहां ग्रन्थि का होना दोनो ने ट्रेन में सुना ।। 55 ।। रात होने पर अग्निरथ स्टेशन पर पहुंची । फिर वहीं धर्मशाला में दोनों ने आराम से विश्राम किया ।। 56 ।। इस तरह प्रातः काल होते ही गयावाले   मिलने आये

। वह बोले," जल्दी कीजिए सभी यात्री चल दिये हैं "।। 57 ।। माधवराव उद्विग्न चित्त , उन से धीरे से पूछते हैं । क्या ज्वर की महामारी तुम्हारी बस्ती में भी है ।। 58 ।। फिर उसने उन्हें उत्तर दिया , "आकर देखो कि वहां पर क्या है । वहां इस प्रकार नहीं है , मेरे साथ चिंता छोड़कर चलो" ।। 59 ।। इस प्रकार ये दोनों जन फिर गयावाले के यहां गए । उसका विशाल घर देखकर दोनों का अन्तर प्रसन्न हुआ ।। 60 ।। उनके वहां बैठने पर प्रसन्नता का एक कारण और था । सामने बाबा की छबि देखकर , माधवराव का गला भर गया ।। 61 ।। कभी मन में ध्यान नहीं था गया सरीखे दूर स्थान पर साईं की छवि नयनों में पड़ेगी, दोनों के मन में आश्चर्य था ।। 62 ।। माधव का गला भरने लगा , नयनों से आनंदाश्रु गिरने लगे । " आप क्यों रोने लगे ", ऐसा उनसे गयावाले पूछने लगा ।। 63 ।। बिना कोई कारण माधवराव को रुदन करते हुए देख गयावाले उद्विग्न मन से संदेहापन्न हुए ।। 64 ।। गया में ग्रन्थि ज्वर है यात्रा कैसे निर्धार होगी । माधवराव के मन में यह विचार था ,गयावाले को यह चिंता अपार थी ।। 65 ।। पहले ही आपको मैं बता चुका हूँ , यहाँ ग्रन्थि ज्वर नहीं है , फिर भी आप चिंता करते हैं ; मुझे आश्चर्य होता है ।। 66 ।। यदि मुझ पर न हो विश्वास , तो फिर यहां सभी से पूछ लो यहां तुम्हें किसी से भय नहीं, फिर आँखों से पानी क्यों आता है ।। 67 ।। ग्रन्थि महामारी का झटका खाकर जिसका धैर्य टूट कर बैठ गया है । इसलिए यह यात्री निष्कारण ही निरन्तर रुदन कर रहा है ।। 68 ।। इसलिए गयावाले ने समझाया । माधवराव के मन में आया, मुझसे पहले मेरी मायी , कैसे आयी ।। 69 ।। " काशी प्रयाग करके सत्वर , शामा से भी अग्रेतर आता हूं । " ये जो बाबा के पूर्व के उद्गार , प्रत्यंतर वही मूर्तिमंत हुए ।। 70 ।। बाबा की छवि आंखों के सामने दिखी जैसे ही गृहप्रवेश करने गये । यह अकल्पित प्रकार देखकर उन्हें अत्यंत चमत्कार हुआ ।। 71 ।। कंठ प्रेम से रुंध गया , आंखों में आनंदाश्रु भर गया । सब अंग रोमांचित हो पड़े , पसीने की बूंद फूट पड़ी ।। 72 ।। माधव की स्थिति इस रीति | गयावाल की चिंता के विपरीत थी । ग्रन्थि ज्वर से भयभीत हुए इसीलिए सच में रोते हैं ।। 73 ।। फिर शामा जिज्ञास प्रेरित हो , गयावाले से पृच्छा करते हैं । कैसे यह तुम्हें प्राप्त हुयी, यह साद्यंत हमें कहो ।। 74 ।। फिर गयावाले माधवराव को पुराने वृत्तांत सुनाने लगे । बारह वर्ष पूर्व जो घटित हुआ । उसे सुन कर जो अचम्भा हुआ, उसे सुनो ।। 75 ।। एक नहीं दो तीन नौकर थे , गयावाले के पगारदार । मनमाड और पुणतांबे के यात्रियों का विस्तृत विवरण नोट करते थे ।। 76 ।। गयावाले का नित्य काम यात्रियों का भोजन व विश्राम कराना था

। ऐसे सब काम चलते रहे , गयावाले शिरडीधाम गय ।। 77 ।। साईं समर्थ महान संत हैं, ऐसी उन्होंने बात सुनी थी। उनके पुनीत दर्शन पाने का लक्ष्य बनाया ।। 78 ।। साईं का दर्शन पाने को चरणों का वंदन करने को , साईं छवि का संपादन करने की इच्छा का सृजन हुआ ।। 79 ।। माधवराव के पास एक छवि भीति पर टंगी हुयी थी, गयावाले उसे मांगने लगे । बाबा से पूछ कर दिया ।। 80 ।। यह तो वही अपनी छवि है । फिर याद आया वही गयावाले हैं । बाबा ने मुझे यहां कैसे भेजा , कैसे मुझे दीर्घ काल बाद मिलवाया ।। 81 ।। वस्तु स्थिति देखो , बारह वर्ष पहले की बात कोई क्यों रखे याद , कभी भी मन में याद नहीं आयी ।। 82 ।। पर बाबा की लीला अगाध , वहीं भेजा शामा को । वहीं निज दर्शन दिया गयावाले भी अत्यन्त प्रसन्न हुए ।। 83 ।। अपने यहां से , यही दिया था साईं बाबा की आज्ञा लेकर , इसी गयावाले को , शामा को स्मरण हुआ ।। 84 ।। इन्हीं के यहां पहले आप शिरडी आकर उतरे थे । गयावाले को स्मरण हुआ कि इन्होंने ही बाबा का दर्शन कराया था ।। 85 ।। फिर परस्पर कृतोपकार हुआ , आनन्द का पारावार नहीं था । उन्होंने गया में शामा की अत्युत्तम व्यवस्था की ।। 86 ।। कितना वैभवपूर्ण था उनका घर , हाथी उनके द्वार पर झूमते । अपना पालकी में बैठते , शामा हाथी पर बैठते ।। 87 ।। आनन्द से विष्णु पद तक जाकर , सब पूजा सामग्री लेकर , देव का अभिषेक स्नान किया , यथाविधि पिंड प्रदान किया ।। 88 ।। फिर ब्राह्मण संतर्पण हुआ, भोजन पूर्व नैवेद्य समर्पण हुआ । आनंद से यात्रा संपूर्ण हुई , या बाबा ने करवाई ।। 89 ।। अतः सभी इन कथाओं का सार , सार्थक है बाबा के मुखोद्गार । भक्तों के प्रति अपार प्रेम भी अक्षर - अक्षर अनुभव होता है ।। 90 ।। यह भक्त प्रेम क्या था , अन्य जीवों को भी सम देखते थे । उनसे भी परम तादात्म्य था । उनके प्रति निःसीम रुचि थी ।। 91 ।। कभी लेंडी से मस्जिद आते , सहज मार्ग में चलते - चलते , एक बार बकरों के झुंड से भेंट हो गयी , बाबा को परमानंदता मिल गयी ।। 92 ।। तब उन समस्त बकरों पर निज अमृत दृष्टि घुमा कर , उनमें से एक दो छाँटकर , कुछ बकरे ले लेते ।। 93 ।। उस समय जो भी कीमत मांगते , बाबा तत्काल दे देते । कोड़ा जी के पास रखते , ऐसी पद्धति बाबा करते ।। 94 ।। एक दिन बाबा दो बकरे , बत्तीस रुपये कीमत देकर खरीद कर लाये तो सभी आश्चर्य में पड़ गए ।। 95 ।। इन दोनों पर अचानक दृष्टि पड़ते ही रुचि उपजी । उनके निकट जाकर उनकी पीठ थपथपायी ।। 96 ।। साईं समर्थ में उन दोनों को पशुजन्म में देखकर कृपा उपजी । स्थिति देख चित्त पसीजा प्रेमोद्रेकता भर गयी ।। 97 ।। उन्हें निकट खींच कर प्रेम से पुचकारा । बाबा की अभिनवता

देखकर भक्त मण्डली आश्चर्यचकित हुई ।। 98 ।। पूर्वजन्म का लोभ परम , स्मरण आते ही साईं को प्रेम आया । उनका पशुजन्म देखकर अप्रतिम दया उपजी ।। 99 ।। जिनकी दो या तीन या चार रुपये कीमत थी इसके विपरीत सोलह दिये । देख तात्याबा चकित हुए ।। 100 ।। मुंह मांगा दाम देकर प्राणी लेते , अपनी आंखों से प्रत्यक्ष देखकर तात्या के साथ माधवराव ने बाबा का विरोध किया ।। 101 ।। दो के माल का सोलह क्यों दिया , क्या बाबा को धन की कीमत नहीं ज्ञात है । यथेच्छ कुछ भी करते हैं ; यह तर्क भी सन्तोषजनक नहीं है ।। 102 ।। दोनों अन्दर - अन्दर ही जलते - भुनते रहे , बाबा ने ऐसा सौदा क्यों किया । दोनों ही बाबा को दोष देते , सौदे की यह क्या रीति है ।। 103 ।। ऐसे कैसे बाबा फंस गए देखकर सभी लोग वहां इकट्ठा हो गए । बाबा का अन्तर निश्चिंत था, मानो कुछ भी खोया न हो ।। 104 ।। यद्यपि दोनों ऐसे क्रोधित होकर बाबा को दोष दे रहे थे किन्तु बाबा थोड़ा भी परेशान नहीं थे, शान्ति सुख में अचल थे ।। 105 ।। फिर आदर से विनय वृत्ति से दोनों ने बाबा से पूछा , यह क्या उदारपन की रीति है रुपये बत्तीस गये न ।। 106 ।। केवल पैसे के लिए उस प्रश्न को सुन बाबा मुस्कराए । मन में बोले ये पागल लोग है। कैसे मैं सन्तुष्ट करूं ।। 107 ।। पर बाबा की शान्ति विलक्षण थी , अणु प्रमाण स्थैर्य न कम हो । यही परम शान्ति के लक्षण है , सभी जन आश्चर्य करते हैं ।। 108 ।। जो क्रोध नहीं जानता जो परम शान्ति का अनुभव करता . भूतमात्र में जो ईश्वर को देखता , उसे अविवेकता कैसे छुए ।। 109 ।। विवेक दृष्टि में जो स्थिर है, वह क्रोध को आगे नहीं आने देता। अकल्पित ऐसा प्रसंग आ जाए तो शान्ति का खजाना खोल देता है ।। 110 ।। निरन्तर अल्ला मालिक ध्यान , उसकी महिमा का क्या वर्णन करूं । उनका चरित्र अगाध और गहन अतिपावन व हितकर है ।। 111 ।। ज्ञान गर्भ , वैराग्य निधि , निज शान्ति के जो उदधि है , करूणा से परिपूर्ण जिसकी बुद्धि है, वे त्रिशुद्धि से क्या बोले , सुनो ।। 112 ।। दोनों का आग्रह देखकर बाबा ने भी निग्रह किया । जिसका ठाव, न गृह , अतः मुझे संग्रह की क्या आवश्यकता है ।। 113 ।। बोले , “पहले जाओ दुकान से खरीद कर लाओ सेर भर दाल , मन भर उसे चारा दो , फिर उन्हें गड़ेरियों को वापस कर दो” ।। 114 ।। आज्ञानुसार फिर तत्काल , बकरों को दाल खिलाई, फिर कुछ भी न वक्त गवाएं वापस उन्हें झुंड में भेजा ।। 115 ।। परोपकार की मूर्ति वह साईं प्रत्यक्ष अवतार, उनको तात्या शामा व इतर सुविचार कैसे सोचाते ।। 116 ।। चारा डाल परम प्रीति से, देखकर कि बकरे तृप्त हो गए , बोले , " गड़रियों को दे दो ,झुंड में इन्हें विश्राति मिलेगी” ।। 117 ।। इस प्रकार रुपया का रुपया

गया , बकरे भी गए फोकट में , फिर बाबा ने गत जन्म की अद्भुत सारी कहानी सुनायी ।। 118 ।। जैसे तात्या वैसे शामा दोनों के प्रति बाबा का प्रेम । उनके क्रोध को शान्त करने के लिए मनोरम कथा सुनायी ।। 119 ।। साईं ने स्वयं , अपने आप , दोनों को बकरों के पूर्व जन्म की कथा सुनाई श्रोता उन्हें श्रवण करें ।। 120 ।। पूर्व जन्म में भाग्यवान थे । तब ये मानव जीव थे । मेरे पास रहते थे । कर्म प्रभाव से जानवर बने ।। 121 ।। ये जो बकरे तुम्हें दिख रहे हैं । पूर्व जन्म में ये बन्धु थे । परस्पर लड़ते - लड़ते सीमा पार कर गए | इस परिणाम को प्राप्त हुए ।। 122 ।। बंधु बंधु में आरंभ में प्रेम था । एक साथ नियम से खाना , सोना , नित्य कुशल क्षेम की चिंता । दोनों में एकात्मता परम थी ।। 123 ।। ऐसे दोनों यद्यपि सहोदर थे , कर्म - धर्म संयोग कठिन हुआ , द्रव्यलोभ भयंकर हुआ , परस्पर बैर पड़ गयी ।। 124 ।। ज्येष्ठ बन्धु महा आलसी । कनिष्ठ रात दिन व्यवसाय में रत रहता । उससे धनराशि जोड़ लिया | ज्येष्ठ में मत्सर (ईर्ष्या) का संचय हुआ ।। 125 ।। ' कांटा निकाल कर फेंक दे तो फिर द्रव्य की कमी नहीं रहेगी । इस प्रकार गलत मार्ग के विचार के प्रति ज्येष्ठ को लोभवश रुचि हुई ।। 126 ।। धन के मोह से दृष्टि पर प्रतिबंध लग गया। आंखे होते भी अंधा हो गया । बंधु प्रेम संबंध भूल गया | उसका विनाश करने में सन्नद्ध हो गया ।। 127 ।। प्रारब्ध भोग परम कठिन , निष्कारण बैर योग उपजा , गुप्त कपट प्रयोग फूट पड़ा । लोभ का वेग अनियन्त्रणीय हो गया ।। 1 28 ।। उनके जीवन का अंत होने को था । बन्धुत्व प्रेम समूल विस्मृत हो गया । दुरभिमान से अत्यन्त क्रोधित हो गए। परस्पर बैरी सम झगड़ने लगे ।। 129 ।। सोटा माथे पर मार कर एक ने दूजे को नीचे गिरा दिया । डूजे ने कुल्हाड़ी से आघात किया। इस प्रकार अपने भाई को लगभग मार डाला ।। 130 ।। फिर वे दोनों मूर्छित हो गए । छिन्न - भिन्न , रक्तरंजित । थोड़ी देर में प्राण रहित हो दोनों पंचतत्व को प्राप्त हुए ।। 131।। ऐसा उनका अन्त होने पर इस योनि में इनका प्रवेश हुआ । ऐसा है इनका वृत्तान्त । उन्हें देखकर मुझे सद्यन्त स्मरण हो आया ।। 132 ।। वे कृतकर्म को भोगने के लिए बकरे के जन्म में आए । अचानक झुंड में उन्हें देखकर मैं प्रेम के वशीभूत हो गया ।। 133 ।। इसलिए अपने पल्लू से दाम देकर लगा उन्हें विश्राम दे दूं। किन्तु तुम्हारे वेश में उनके कर्म उनके आगे आड़े आ गए ।। 134 ।। बकरों के प्रति दया आयी किन्तु तुम्हारे आग्रह के कारण मैं भी अन्त में मान गया, उन्हे गड़ेरियों को वापस कर दिया ।। 135 ।। इस प्रकार यहां कथा समाप्त होती है श्रोता मुझे क्षमा करें । आगे के अध्याय में आगे सुनने पर आनन्दचित्त होंगे ।। 136 ।। वह भी परम प्रेम भरित

है। वह भी साईं मुख का अमृत है । हेमाड साईं चरणों में विनत होकर श्रोताओं से विनती करता है ।। 137 ॥ स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित , भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित ' में काशी गया गमन - अजजन्म कथन ” नामक छियालीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्‌गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय सैतालीसवां (श्री साईंमुखश्रुत कथाकथन)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

जिसके मुख को एक क्षण देखने में अनंत जन्मों का दुःख दलन हो जाता है वह परमानंद की उत्पत्ति का स्थान साईं का श्री वदन धन्य है ।। 1 ।। जिनके कृपावलोकन हो जाने पर तत्काल कर्म बंधन विमोचन होता है, निज भक्तजनों को स्वानंद का लाभ मिलने में एक क्षण भी नहीं लगता है ।। 2 ।। जिसकी कृपा दृष्टि के आगे कर्म अकर्म की गांठ खुल जाती है, जिनकी कृपा का सूरज उगते ही भव खद्योत निस्तेज हो छिप जाता है ।। 3 ।। जग का पाप भागीरथी धोती है, उससे स्वयं मलयुक्त हो जाती है । इस प्रकार एकत्र अपने मल को धोने के लिए साधु के चरणरज की इच्छा होती है ।। 4 ।। कब साधु के पांव लगेंगे ? कब मुझमें स्नान के लिए आएंगे जिनके बिना निज पाप की निर्गति नहीं होवे, यह वह निश्चित जानती है ।। 5 ।। ऐसे साधुओं के मुकुटमणि समर्थसाईं की वाणी जान अति आदर से आस्थावान सज्जन इस पावन कथा को सुनें ।। 6 ।। इस कथा की अद्‌भुत महिमा है कि श्रोता सज्ञान हो या अज्ञान ; सुनते ही कर्मबंधन टूट जाता है । यह कथा परम पावन है ।। 7 ।। श्रीसाईं नयनों के नयन हैं श्रोत्रों के श्रोत्र हैं देखो इसी से मेरे हृदय में प्रवेश करके यह बातें कही है ।। 8 ।। साईं स्वयं महानुभाव हैं। इस कथा की अद्‌भुतता सुनने से श्रोता देहभाव को भूल जायेंगे । अष्टप्रेमभाव से ओतप्रोत हो जायेंगे ।। 9 ।। साईं मुख की यह कथा , इसके वास्तविक आशय का लक्ष्य करके , तात्पर्य पर दृष्टि रखने से, श्रोता को कृतकर्तव्यता (संतुष्टि) होती है ।। 10 ।। इसलिए श्रोताओं से सुनने के लिए विनती है । यद्यपि मैं इस कथा का वक्ता हूं फिर भी मैं भी तुम्हारी तरह ही खाली रहूंगा यदि इसके मथित अर्थ को नहीं ग्रहण करुंगा ।। 11 ।। उनके भक्तप्रेम का स्मरण करके मन अपने धर्म (चंचलता) को भूल जाता है , संसारत्रस्तता से मुक्त हो जाता है । इससे बड़ा लाभ क्या है ।। 12 ।। पूर्व कथा से संबंध को श्रोता सावधान हो सुनें । जीव को संतुष्टि होगी, कथा का बिना व्यवधान श्रवण करने से ।। 13 ।। गत अध्याय के अंत में श्रोताओं ने बकरों की कथा सुनी , उनके लिए बाबा का प्यार , उनके गत जन्म की स्मृति ।। 14 ।। वैसी ही अब यह कथा

, द्रव्यलोभ की परमावस्था कैसे लाती है अधःपतन । सावधान हो सुनें ।। 15 ।। साईं की पूर्ण कृपा दृष्टि है , एक के बाद एक कथा सोचते रहते हैं , श्रवण में कमी नहीं आने देते । सुख संतुष्टि बढ़ती है ।। 16 ।। कथा के वक्ता और बोल स्वयं साईं समर्थ ही हैं वहां हेमाड किसलिए और कौन ? व्यर्थ , कहने के लिए नाम मात्र ।। 17 ।। साईं कथाओं के सागर के तट पर बैठे हैं , तो हमें कथा के लिए श्रमपूर्वक प्रयास क्यों करना । कल्पतरु की जड़ में कामना उठते ही उसकी सिद्धि होती है ।। 18 ।। क्या दिनकर के घर में कोई दीपक की चिंता करता है । जो निरंतर अमृतपान करता है, उसे विष की लहर क्यों ? ।। 19 ।। हमारे साईं सरीखे रक्षक के सदैव रहते हुए कथा पीयूष की कमी क्या । यथेच्छ चखें उस आनन्द को ।। 20 ।। कर्मसूत्र बहुत गहन है, किसी से आंकलन नहीं होता । महा ज्ञानी भी ठगा जाता है, सरल अज्ञानी निकल जाता है ।। 21 ।। वैसा ही दुर्गम ईश्वरी नियम , कौन करेगा उसका अतिक्रमण ? नित्य लौकिक धर्म का आचरण करें , सर्वदा सत्कर्म करें ।। 22 ।। नहीं तो अत्यन्त अधर्म । मरण धर्म को प्राप्त होकर, जैसे - जैसे जिसके कर्म तदनुरूप जन्म प्राप्त होगा ।। 23 ।। **"यथा कर्म यथाश्रुत"** के अनुसार शुक्र बीज से मिलकर कहीं योनिद्वार में प्रवेश करता है , कहीं स्थावर भाव में ।। 24 ।। " **यथा प्रज्ञं हि संभवाः "** श्रुति का अर्थ कौन नहीं जानता । जन्म लेते हैं जिसे वह ध्यान करते हैं , जिस जीव को जो रुचे ।। 25 ।। शरीर ग्रहण में उद्यत को मूढ अविद्यावंत जानो । जैसा जिसका उपार्जित उसे वैसे ही शरीर प्राप्त होता है ।। 26 ।। इसलिए शरीर गिरने से पहले , नरजन्म का अमोल उद्देश्य आत्मबोध का समय (अवसर) जो जाने नहीं देता , उसी को एक समझदार जानो ।। 27 ।। वही संसार बंध मुक्त होगा, अन्य संसार चक्र में पड़ जाते हैं, कभी भी शरीर कष्ट से मुक्त नहीं होते, जन्म लेने की यातना समाप्त नहीं होती ।। 28 ।। अब इस कथा की अद्भुतता , दुष्टवृत्ति का अन्तर्भाव " मैं शरीर हूँ ' की स्मृति समाप्त होती है, सात्विक अष्टभाव उदित होता है ।। 29 ।। गांठ में अमूप धन होते हुए स्वभाव से जो अत्यन्त कृपण हैं, उनका जीवन धिक्कार है। आमरण थकान का अनुभव करता है ।। 30 ।। उसमें भी बैर वृत्ति किसी भी समय उचित नहीं है । उसके पास से मन को दूर रखो , जन्म को नष्ट कर देगा ।। 31 ।। परस्पर बैर का परिणाम उत्तम का भी जन्म अधम होता है । ऋण - बैर - हत्या का धर्म जन्म परम्परा से समाप्त होता है (अर्थात कर्म फल जन्मजन्मांतर भोगना पड़ता है) ।। 32 ।। इस अर्थ की अमृतवाणी साईं मुखोद्गार परमपावन श्रोताओं के लिए निवेदन करता हूं सावधान हो श्रवण करें ।। 33 ।। वही कथा जैसी सुनी थी , जैसा मुझे

स्मरण है । वैसे ही कहता हूं उनकी बोली जो माँ ने बोला था ।। 34 ।। साईं स्वयं चरित्रकार हैं, कथा विस्तार लिखवाया है । हेमाड केवल निमित्तमात्र है । उसके सूत्रधार वह हैं ।। 35 ।। **" एक प्रातःकाल के प्रहर आठ बजे के समय नित्य का आहार करके घूमने के लिए बाहर निकला ।। 36 ।। मार्ग में जाते - जाते थकान होने लगी । एक नदी किनारे पहुंचने पर पाव, धोया , स्नान किया । अन्तर बहुत संतुष्ट हुआ ।। 37 ।। नदी भी उतनी थी जितनी बड़ी रहाता के पास बहने वाली नदी । उसके दोनों तट जल से भरे थे । वहाँ ' लावला ' की घनी घास उगी थी ।। 38 ।। वहां एक पगडंडी थी । गाड़ी चलने का निशान स्पष्ट था । तट पर वृक्ष भी सघन थे । छाया भी उत्कृष्ट पड़ रही थी ।। 39 ।। वायु मन्द - मन्द वह रही थी । उससे मन को बहुत आनंद हुआ । वृक्षवंद को दृष्टि से देखते हुए छाया में स्वच्छंद बैठ गया ।। 40 ।। चिलम भरने हेतु छापी गीली करने के लिए गया तो ' डरांव - डरांव ' शब्द सुना । मुझे ध्वनि मेढक की लगी ।। 41 ।। आश्चर्य क्या ? जहां पानी, वहाँ मेढक सहज ही होते हैं। छापी भिगोकर जब मैं वापस आया, हाथ में चकमक उठाया ।। 42 ।। पत्थर से चिंगारी उत्पन्न की , चिलम जलकर तैयार हो गयी । वहीं एक यात्री आया । वंदन करके मेरे पास बैठ गया ।। 43 ।। नम्रता से चिलम मुझसे अपने हाथ में लेकर बोला , " बहुत लंबे टहलते आ गए हैं " आदर से मुझसे पूछता रहा ।। 44 ।। मस्जिद यहां से बहुत दूर है। वहां जाते - जाते धूप (गर्मी) हो जायेगी । यहीं निकट मेरा घर है । चिलम पीकर वहां चलेंगे ।। 45 ।। वहां थोड़ी सी रोटी खाकर क्षणभर निश्चिंत हो आराम वहीं करें । फिर धूप नीचे आ जाने पर खुशी - खुशी वापस चले जायें ।। 46 ।। मैं भी साथ चलूंगा । ऐसा कहकर यात्री ने चिलम जलाकर (फूककर) सादर मुझे पीने के लिए दी ।। 47 ।। वहां वह मेढक आर्त स्वर में तेज आवाज में चिल्लाने लगा । तब यात्री ने पूछा , कौन भला चिल्ला रहा है ।। 48 ।। तब मैं बोला , " नदी के तट पर एक मेढक संकट में पड़ा है । उसके कर्म उसके पीछे लगे हैं । सुनो उसकी कहानी तुझे सुनाता हूं ।। 49 ।। पूर्व जन्म में जैसा किया इस जन्म में वैसी ही भरपायी करनी होती है । कर्मभोग के लिए तैयार रहना चाहिए । अब रोना किस अर्थ का ? " ।। 50 ।। फिर ऐसा सुनकर चिलम मेरे हाथ में देकर यात्री वहां से चला गया कहते हुए कि मैं जरा देखकर आता हूँ ।। 51 ।। वास्तव में वह मेढक है अथवा कोई और प्राणी अतः मन को निःशंक कर लूं । उसे क्या दुःख है ।। 52 ।। ऐसी उसकी इच्छा देखकर , उससे मैंने कहा जाकर देख आओ एक बड़े सर्प के मुंह में मेढक चिल्ला रहा था ।। 53 ।। दोनों ही महा हरामखोर । दोनों के ही कृत्य भयंकर । पूर्वजन्म के पाप भयंकर**

। भोग के लिए देहान्तर प्राप्त हुआ ।। 54 ।। ऐसे विचार चल रहे थे कि यात्री उस जगह पर प्रत्यक्ष घटना को देखकर आया । वास्तविक वृत्तांत सुनाया ।। 55 ।। वह काल जैसा सर्प । जबड़ा ऐसा बड़ा विशाल है । मेढक भी बहुत विकराल । किन्तु वह सर्प का भोजन है ।। 56 ।। घड़ी आधी घड़ी का साथ है । सांप के मुंह में आहुति पड़ जायेगी । कितनी विचित्र कर्म गति है । क्षण में वह निश्चिंत हो जायेगा ।। 57 ।। तब मैंने उससे कहा, " वह निश्चिंत कैसे रह सकता है । उसका मैं बाप हूं न यहां ! फिर मेरी आवश्यकता क्या है ? ।। 58 ।। छोड़कर अपना स्थान बैठा हूं जो यहां आकर, तो मेढक को खाने दूंगा ? देखो मैं उसे कैसे छुड़ाता हूं ।। 59 ।। अब इनको लड़ाई से अलग - अलग करके अपने - अपने घर चले जायेंगे हम । जा जा एक बार चिलम भरो । देखते हैं फिर सांप क्या करता है ।। 60 ।। चिलिम तत्काल तैयार की गयी । यात्री ने स्वयं जलाई कश मार कर मेरे सामने कर दी । मैंने पीने के लिए हाथों में लिया ।। 61 ।। मैंने दो कश मारा । यात्री को साथ लिया । पास से होता हुआ जाकर स्थान विशेष पर पहुंचे ।। 62 ।। पुनः सर्प को देखकर यात्री घबरा गया । बोला , " कितना भयानक है यह ", भय से मुझे रोकने लगा ।। 63 ।। बोला , " आगे न जाओ । सांप अपनी ओर आएगा । भागने के लिए बोला , यह स्थान संकरा है । उधर मत जाओ मत ।। 64 ।।" ऐसा दृश्य देखकर यात्री को जान का भय होने लगा । फिर उन दोनों को बैर भाव के संबंध में उपदेश सुनो ।। 6 5 ।। " अरे बाबा वीरभद्राप्पा यह बसाप्पा क्या तेरा बैरी नहीं था ? क्या अनुताप करने के लिए मेढक के रूप में नहीं आया ? ।। 66 ।। तुम भी सर्प योनि में आये । फिर भी घनघोर बैर , अब तो शर्म करो । बैर छोड़ कर स्वस्थ रहो ।। 67 ।। मुख से शब्द निकलते ही सर्प मेढक को छोड़कर भाग गया । तुरन्त पानी के नीचे चला गया । वहां से अदृश्य हो गया ।। 68 ।। मेढक भी मृत्यु के मुंह से बचकर कूद कर भागा । वह भी झाड़ियों में छिप गया । यात्री आश्चर्य चकित रह गया ।। 69 ।। बोला , "यह क्या हुआ मुझे समझ नहीं आया । मुख से शब्द क्या निकला , मेढक को सांप ने कैसे छोड़ दिया । सांप भी कैसे अदृश्य हो गया ।। 70 ।। इनमें से वीर भद्राप्पा कौन था । वैसे ही इनमें से बसाप्पा कौन था । यात्री ने पूछा बैर का कारण । बोला , " मुझे कृपया बताएं " ।। 71 ।। अच्छा पहले पेड़ के नीचे चलते हैं । फिर चिलम पीते हैं तुम्हारी जिज्ञासा पूर्ति करने के लिए बताता हूं । फिर मैं अपने स्थान के लिए जाता हूं ।। 72 ।। दोनों पेड़ के नीचे आए । वहां घनी छाया थी । मंद - मंद वायु चल रही थी । पुनः चिलम जलायी गयी ।। 73 ।। यात्री ने पहले कश ली । तत्पश्चात मेरे हाथ में दी । मैंने कश लेते लेते उस अद्भुत

कथा को यात्री से कहा ।। 74 ।। देखो मेरे स्थान के पास दो या तीन कोस की दूरी पर महिमा संपन्न एक पवित्र स्थान था ।। 75 ।। वहां एक महादेव का जीर्ण शीर्ण पहले समय का मंदिर था । उसी के जीर्णोद्धार के लिए सब का मन हुआ ।। 76 ।। इसके लिए चंदे से भारी रकम एकत्र की । अच्छी रकम इकट्ठी हो गयी । पूजा अर्चना की व्यवस्था कर मंदिर निर्माण की रूप रेखा तैयार की गयी ।। 77 ।। वहां एक बड़ा धनाड्य व्यक्ति था । उसे व्यवस्थापक नामित किया गया । उसके हाथ पैसा देकर उसे पूर्ण निर्णायक बनाया गया ।। 78 ।। उसे अलग - अलग लेजर बनाकर उसमें स्वयं चंदा नगद जमा करने का कार्य अचूक व प्रमाणिक ढंग से करना था ।। 79 ।। पर वह स्वभाव से बहुत कंजूस था । अपनी जेब का नमक भी न लगे ऐसी चालाकी से काम चला रहा था । इससे काम पूरा नहीं हो रहा था ।। 80 ।। सारी रकम खर्च कर दी । आधा अधूरा हुआ । अपनी जेब का दान खर्च नहीं किया । गांठ से दमड़ी भी अलग नहीं किया ।। 81 ।। यद्यपि बड़ा साहूकार था, किन्तु कृपणपन का भी पूर्ण अवतार था । बात मीठी - मीठी करता, किन्तु काम को आकार नहीं मिल रहा था ।। 82 ।। बाद में चंदे का पैसा देने वाले लोग उसके घर पर एकत्र हुए । बोले, " तुम्हारी साहूकारी किस काम की है ? ।। 83 ।। महादेव (मंदिर) का जीर्णोद्धार आप के हाथ लगाए बिना कैसे पूरा होगा, समझ में नहीं आता । इसका कुछ विचार करिए " ।। 84 ।। लोगों से प्रार्थना करके पुनः और चंदा एकत्र करते हैं, वह भी आप को ही दे देंगे । यह काम पूरा कर दीजिए ।। 85 ।। फिर और पैसा एकत्र हुआ। अच्छी तरह से हाथ में आ गया । उसका कुछ भी उपयोग नहीं हुआ । धनी व्यक्ति निश्चित बैठा रहा ।। 86 ।। इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हो गए । देवता के मन में आया । उस धनी की पत्नी को उस समय स्वप्न दिखा ।। 87 ।। तुम तो उठ कर जागो । उस देवालय का गुंबद बनवाओ । जो खर्च होगा उसका सौगुना तुझे नीलकंठ देंगे ।। 88 ।। उस स्वप्न को दूसरे दिन पति के कान में साद्यंत डाल दिया । कौड़ी खर्च करने में जिसके प्राण निकल जायें, उसके लिए यह अत्यन्त उद्वेग कारक था ।। 89 ।। जो निशदिन वित्त संचय में लगा हो, दूसरा कुछ जिसके चित्त का विषय न हो, उसे इस स्वप्न के अनुसार द्रव्य का व्यय कैसे स्वीकार हो ।। 90 ।। उसने पत्नी से कहा , " मैं नहीं मानता दृष्टांत को । मुझे बिल्कुल विश्वास नहीं है । उससे लोग उपहास करेंगे " ।। 91 ।। जैसी जिसकी वृत्ति वैसी उसकी जगत्स्थिति । वास्तव में स्वयं सठप्रकृति का जो हो उसे अन्य भी वैसे ही दिखते हैं ।। 92 ।। यदि ईश्वर के मन में होता , मेरा पैसा निकाल कर लेने का , तो क्या मैं तुम्हारे पास से दूर था । तुम्हीं को स्वप्न क्यों हुआ ।। 93 ।।

तुम्हें ही क्यों दृष्टांत, हुआ मुझे देव ने दर्शन क्यों नहीं दिया । इसलिए मुझे भरोसा नहीं हो रहा है। इसका भाव मुझे समझ में नहीं आ रहा है ।। 94 ।। यह स्वप्न खोटा है अथवा यह ईश्वरीय यत्न है पति - पत्नी में मनमुटाव कराने का । दो ही चिह्न मुझे दिख रहे हैं ।। 95 ।। जीर्णोद्धार के काम में मेरी सहायता में क्या कमी है । महीना महीना खाली होती रहती है थैली। मैं भरता हूं ।। 96 ।। लोग ला रहे हैं रकम सारी, वस्तुतः यह बाहर से दिखता है । व्यापार की जमाखर्च की यह पद्धति मेरे लिए नुकसान दायक है ।। 97 ।। लोग ही अवगत नहीं हैं तो मुझे कैस समझ में आएगा । वह जो तुम्हारा स्वप्न है यथार्थ नहीं माना जा सकता है ।। 98 ।। सही मानने पर फस जायेंगे । निद्रा भंग होने पर दृष्टांत होता है । उसे क्या कोई सच मानता है ।" धनिक ने यह सिद्धान्त निश्चित किया ।। 99 ।। सुनकर बाई चुप बैठ गयी । पति के आगे वह निरुत्तर हो गयी । यद्यपि लोग पैसा जमा कर रहे थे । किसी को ही संतोष मिल रहा था ।। 100 ।। प्रेम के बिना जुड़े से , आग्रह करने पर अथवा संकट पड़ने पर देने से देव को अच्छा नहीं लगता । प्रेम से दिया गया थोड़ा भी बहुत है ।। 101 ।। जैसे - जैसे पैसा जमा होता काम भी वैसे - वैसे होता । पैसा थमता, काम रुकता । ऐसे धीरे - धीरे कार्य चल रहा था ।। 102 ।। धनिक ने कृपण की भांति अपनी जेब से एक भी पैसा नहीं निकाला | पुनः दृष्टांत कैसा हुआ धनिक की पत्नी को उसे सुनें ।। 103 ।। पति से आग्रह मत करो , मंदिर के लिए पैसा देने हेतु । तुम्हारा भाव पर्याप्त है । जो तुम्हारी इच्छा हो देव को दे दो ।। 104 ।। मनोभाव से दिया गया एक पैसा अपने को एक लाख है । पति से विचार करके देव को अर्पण कर दो ।। 105 ।। व्यर्थ थको नहीं । मन में आए वह अपना दे दो । अर्पण करो जो तुम्हारा अपना हो कितना ही कम क्यों न हो ।। 106 ।। यहां केवल भाव कारण है , तुम्हें यह मालूम हो । इसलिए कुछ भी दे दो देव का आग्रह जान कर ।। 107 ।। अतः जो अल्प वित्त हो , तुम निश्चित हो दे दो , भाव के बिना दिया जाना अनुचित है। देव को यत्किंचित अच्छा नहीं लगता है ।। 108 ।। बिना भाव जो देगा , उसका वह सब मिट्टी के मोल है। अंत में समूल निष्फल हो जायेगा । इसका अनुभव भी अबिलंब होगा ।। 109 ।। इस प्रकार यह दृष्टांत सुनकर उसने मन में निश्चय किया । पिता द्वारा प्रदत्त आभूषण बेचकर मांग पूरी करेंगे ।। 110 ।। फिर उसने पति से निश्चय को बताया । पति उसे सुन लेने पर मन में उद्विग्न हो गए ।। 111 ।। जहां लोभ हो वहां कैसे विचार हो सकता है । देवधर्म का आचरण नहीं हो सकता । मन में बोला , यह क्या कुविचार है भ्रांतिष्ट होकर आचरण कर रही है ।। 112 ।। बोले , " यह

तुम्हारा आभूषण सब का एक बार एक हजार रुपये मूल्य लगाकर तुम्हारे नाम जमीन लिख देते हैं ।। 113 ।। आभूषण स्वयं खरीद लिया । पैसे के एवज में पत्नी के नाम अपनी खारे पानी की रेतीली जमीन दे दी , जो किसी की गिरवी रखी थी ।। 114 ।। वह जमीन बंजर थी । बरसात में भी कुछ पैदा नहीं होता था । पत्नी से कहा त्याग करो , भगवान शंकर को अर्पण कर दो ।। 115 ।। हजार की ऐसी जमीन देवता को दान कर के दृष्टांत के अनुरूप प्रसन्न हो गयी । ऋण से उत्तीर्ण हो गयी ।। 116 ।। इस प्रकार पति के वचन मान कर कृपण की पत्नी ने उस जमीन को प्रेम भाव से अर्पण किया , शंकर को संतुष्ट करने के लिए ।। 117 ।। वस्तुतः देखा जाये तो दो सौ रुपये का कार्य करने पर धनिक के पास गिरवी थी , इसका स्वामित्व ' डुबकी ' का था ।। 118 ।। डुबकी एक अनाथ बाई थी । जमीन उसी के स्वामित्व की थी । उसी ने जमीन गिरवी रखी थी , द्रव्य की कमी होने पर ।। 119 ।। पर धनिक महा लोभी था । शंकर को भी धोखा देने से नहीं डरा । पत्नी का स्त्रीधन हड़प लिया । कपट लाभ से सुख की अनुभूति करने लगा ।। 120 ।। विषय लालसा बहुत खोटी है, विषयासक्त का नाश कर देती है । यदि जीवन का सुख लेना है तो विषयों के पाँस में न उलझें ।। 121 ।। श्रवण लालसा के कारण हिरण मर जाता है, तो सुन्दर मणि धारण करने के कारण सांप , रोशनी देखना अच्छा लगने के कारण पतंगा । विषयों का कुसंग ऐसा ही है ।। 122 ।। विषय भोग के लिए धन चाहिए उसके लिए गहन यत्न करते हैं । विषय तृष्णा भयंकर बढ़ जाती है । उसका निवारण असभव हो जाता है ।। 123 ।। निःसंशय जमीन वंजर थी । प्रयत्न से भी अन्न नहीं उत्पन्न होता था । इस लिए उसका कृष्णार्पण कराया । उस दान से क्या पुण्य ।। 124 ।। जहाँ यत्किंचित भी संकल्प न हो वह कृष्णार्पण (ईश्वर को भेंट) निर्विकल्प होता है । इस प्रकार जो नहीं है, उससे पाप होता है। अंत में जो संताप कारक होता है ।। 125 ।। इधर गरीब ब्रह्मण जो देवता का पूजन करता था देवता के लिए जमीन प्राप्त कर अत्यन्त संतुष्ट हुआ ।। 126 ।। इसके कुछ समय बाद विपरीत घटित हो गया । कृतिक नक्षत्र में अपार बर्षा हुई । भयंकर तूफान आया ।। 127 ।। एकाएक बिजली गिरी सारी इमारत ही नष्ट हो गयी । केवल बिना यथोचित अधिकारी के जमीन सुरक्षित रही । शेष सब जल कर नष्ट हो गया ।। 128 ।। धनिक के यहां भी बर्बादी हुई । उसकी भी निज पत्नी के साथ मृत्यु हो गयी । डुबकी भी पंचतत्व को प्राप्त हुई । तीनों का अंत हो गया ।। 129 ।। बाद में वह धनिक मथुरा नगर में एक गरीब ब्राह्मण के उदर से , उसकी धर्म निष्ठ पत्नी पुजारी के घर पैदा हुयी ।। 130 ।। उसका नाम गौरी रखा गया । डुबकी

का भाग्य और था । वह नारी से नर हो गयी । शंकर की सेवा करने वाले गुरव जाति के उदर से ।। 131 ।। उस नर का बारहवें दिन नामकरण किया गया । चेनबासप्पा नाम रखा गया । इस प्रकार तीनों की स्थिति में अन्तर हुआ उनके कर्म फलोन्मुख हुए ।। 132 ।। धनिक का पुनर्जन्म होने पर उसका नाम वीरभद्र रखा गया । प्रारब्ध कर्म का यही मर्म है कि भोग से उसका निरोध होता है ।। 133 ।। शंकर का जो पुजारी था उसका मुझसे बहुत लगाव था । नित्य मेरे घर आता चिलिम मेरे साथ - साथ पीते ।। 134 ।। फिर हम खुशी से रात भर वार्तालाप किया करते । गौरी बढ़कर शादी के योग्य हो गयी । उसे भी बराबर लाता ।। 135 ।। वह भी मेरी भक्ति करती । एक दिन पुजारी ने पूछा , घूम कर सारे जगह देख लिया कहीं भी लड़का नहीं जमा " ।। 136 ।। " बाबा स्थान देखते - देखते थक गया हूं । प्रयल असफल हो ,पड़ गए । " किसलिए चिंतित होते हो ” मैं बोला , “ वर रास्ते चला आ रहा है " ।। 137 ।। " तुम्हारी लड़की भाग्यशाली है । बहुत पैसे वाली होगी । उसे ढूंढता अपने पैरों पर उसका वर चला आ रहा है ।। 138 ।। थोड़े समय में तुम्हारे घर आकर तेरी मनोकामना पूरी करेगा । गौरी का पाणिग्रहण करेगा । तुम्हारे वचनों के अनुसार ।। 139 ।।“ इधर वीरभद्र का गरीबी का घर संसार था । माँ बाप को धीरज देकर घर छोड़ कर वह निकल पड़ा ।। 140 ।। वह गांव - गांव भिक्षाटन करता , कभी मोल मजूरी करता , जहां कुछ मिला खाते संतुष्ट फिरता रहा ।। 141 ।। फिरते - फिरते मंदिर आया । पुजारी के घर पहुंचा । अल्लामियां की अघटित लीला । सभी को अच्छा लगने लगा ।। 142 ।। होते - होते लोभ हो गया । उसे गौरी देने का विचार आया नाड़ी - गोत्र - गण - योग मिल गया । पुजारी आनंदित हो गया ।। 143 ।। वीरभद्र को साथ लेकर एक दिन पुजारी आया । उस समय दोनों को देखकर एकाएक विचार स्फुटित हुआ ।। 144 ।। विचार की भांति उच्चार हुआ , “ वर्तमान में शुभ मुहूर्त हो तो तुम गौरी को इसे देकर मुक्त हो जा ।। 145 ।। पत्नी की अनुमति लेकर वीरभद्र को वर निश्चित किया । यथोचित विवाह मुहूर्त देखकर विवाह कर दिया ।। 146 ।। निज कार्यार्थ पूर्ण होने पर कुटुंब दर्शन के लिए आया , मेरे आशीर्वाद के लिए , सांसारिक जीवन सफलता पूर्वक व्यतीत करने के लिए ।। 147 ।। उल्हास से आशीर्वचन दिया । सुख का अन्न मिलने की संभावना से वीरभद्र की मुद्रा प्रसन्न थी । सुख संपन्न हो गया ।। 148 ।। वह भी मेरी भक्ति में लग गया । अल्प काल में संसार बस गया । पर यहा कौन भाग्यवान हुआ है जो पैसे बिन परेशान न हो ।। 149 ।। यह पैसा बहुत पेंचीदा है छोटे - बड़े सब उससे परेशान हैं ।वीरभद्र को भी समय पर लालच हुआ । द्रव्य का ऐसा ही

खेल है ।। 150 ।। " बाबा यह बेड़ी बड़ी दुर्धर है । पैसे के बिना मैं बेजार हो गया हूं । कुछ उपाय बताएं जिससे मैं सांसारिक कर्तव्य निपटा सकूं ।। 151 ।। साष्टांग दण्डवत चरणों में करता हूं । अब प्रतारण अच्छा नहीं है । मेरे संकट का निवारण करें । तुम्हीं इस शादी के कारण हो " ।। 152 ।। मैं भी उसे बहुत सलाह दिया करता था | प्रेम से आशीर्वचन दिया करता था । " अल्ला मालिक ही यह जानते हैं तुम्हारा संकट दूर करेंगे" ।। 153 ।। वीरभद्र का मनोगत जानते हुए इच्छित मनोरथ पूरा हो इसलिए मैं उसे आश्वासन देता रहता कि यत्किंचित दुःखी न हो ।। 154 ।। तुम्हारा भाग्य काल निकट है व्यर्थ व्याकुल मत होओ । द्रव्य तुम्हारे हाथ का मैल है । तुम्हारी समृद्धि का समय होगा ।। 155 ।। द्रव्य मुझसे तिरस्कार पूर्ण बर्ताव करता है और पत्नी की मांग रुकती नहीं । यह अपमान बहुत हो गया । यह वैवाहिक पदवी नहीं चाहिए ।। 156 ।। इस तरह बाद में एक विचित्र घटना घटित हुई । गौरी के ग्रहों का गौरव देखो । बंजर भूमि का भाव चढ़ गया । देव की माया समझ नहीं आती ।। 157 ।। एक खरीददार आया । लाख रुपये देने को तैयार था । आधा मूल्य उसी जगह दे दिया । आधा किस्त में देने को राजी को गया ।। 158 ।। प्रतिवर्ष ब्याज सहित दो हजार देने का विचार हुआ । पच्चीस वर्ष में शेष राशि की भरपाई करेगा । गौरी के पास भरपूर हो जायेगा ।। 159 ।। यह निर्णय सभी को पसन्द आया । गुरव चेनबसाप्पा उठ कर बोला , " जो पैसा शंकर को अर्पित किया जाता है उसका पहला मालिक गुरव होता है ' ।। 160 ।। वह बोला , “ मुझ गुरव को वर्ष के ब्याज का आधा हिस्सा मिलना चाहिए । उसके बिना मुझे संतुष्टि नहीं " ।। 161 ।। वीरभद्र कुछ भी देने वाला नहीं । चेनबसप्पा शान्त नहीं रहने वाला । वाद विवाद में जुट गए । दोनों मेरे पास आए ।। 162 ।। “शंकर इसके पूर्ण स्वामी हैं । जमीन तुममें से किसी के काम नहीं आनी है । व्यर्थ लोभ के भ्रम में मत पड़ो ।“ दोनों से फिर मैंने कहा ।। 163 ।। जो शंकर के प्रति अर्पित की गयी है उसके मोल की निश्चित रूप से गौरी के बिना जो जो इच्छा करेगा उसकी मृत्यु होगी ।। 164 ।। देव की आज्ञा के बिना जो कोई इस पैसे को छुयेगा देव के कोप का कारण बनेगा । यह धन पूर्ण देव का है ।। 165 ।। जिस पर प्रभुत्व पुजारी का था । गौरी इस नाते वारिस है । दूसरा उस पर क्या कर सकता है । वह धन गौरी की सत्ता का है ।। 166 ।। इसलिए मैंने उन दोनों से कहा , ” गौरी का स्वामित्व है उसकी अनुमति लेकर व्यवहार करोगे तब ही कृतार्थ होओगे ।। 167 ।। उसकी इच्छा के बाहर बर्ताव करोगे देव राजी नहीं होंगे । वीरभद्र को स्वतंत्र व्यवहार करने का अधिकार नहीं है ।। 168 ।।“ ऐसा यद्यपि अपना विचार वहां

वस्तुतः प्रकट किया किन्तु वीरभद्र मुझ पर क्रोधित हो गया । गाली की बौछार करने लगा ।। 169 ।। वह बोला , " बाबा तुम्हारे मन में मेरी पत्नी को मालिक स्थापित करके सभी रकम हड़प कर बैठकर अपना हित साधने का है" ।। 170 ।। उसके यह शब्द सुनकर स्तब्ध रह गया । अल्लामियां की करणी अगाध है । व्यर्थ में क्यों खेद करना ।। 171 ।। वीरभद्र मुझसे यह बोला , घर पर पत्नी से लड़ाई की , तब वह दोपहर में मेरे दर्शन के लिए आकर विनती करने लगी ।। 172 ।। " बाबा किसी के बोल पर ध्यान देकर मुझ पर अप्रसन्न मत होना । मैं अपना आंचल फैला रही हूं । मुझसे कन्या की भांति प्रेम रखें ।। 173 ।।" ऐसे उसके शब्द सुनकर मैंने उसे पूर्ण आश्वासन दिया कि सात समुद्र पार कर भी तुम्हारी रक्षा करुंगा । तुम खिन्न मत होओ ।। 174 ।। उस रात्रि सोते हुए गौरी बाई को स्वप्न दिखा । शंकर स्वप्न में आए उससे जो कहा उसे सुनें ।। 175 ।। " यह सब पैसा तुम्हारा है, किसी को कुछ देना नहीं । जैसा कहा नित्य वैसी ही व्यवस्था करते रहना ।। 176 ।। चेनबसप्पा जैसा कहें वैसे ही मंदिर के लिए धन लगाओ । मुझे उस पर भरोसा है । ऐसा नियम बना लो ।। 177 ।। अन्य कार्य में पैसा लगाने में पैसे की अव्यवस्था न हो, इसलिए मस्जिद में बाबा से बिना पूछे कुछ व्यवस्था न करना ।। 178 ।।" गौरी बाई ने मुझसे साद्यान्त दृष्टान्त बताया । मैंने भी उसे दृष्टांत मानने की यथोचित सलाह दी ।। 179 ।। मूल धन तुम ले लो | चेनबासप्पा को ब्याज का आधा दे दो । नियमित रूप से इसी का पालन करो । वीरभद्र का संबंध नहीं है ।। 180 ।। ऐसे हम बात कर रहे थे कि दोनों ही वहां लड़ते हुए आए । उन्हें परस्पर शांत करने के लिए मुझे एक उपाय समझ में आया ।। 181 ।। शंकर का वह दृष्टांत जो गौरी ने देखा था , साद्यंत दोनों से कह दिया । सुनकर वीरभद्र उन्मत्त हो गया ।। 182 ।। वीरभद्र ने गालियों की बौछार कर दी । प्रतिपक्ष पर यथेच्छा अनाप - शनाप संभाषण करने लगा । दूसरे लोग भौचक्के रह गए ।। 183 ।। उन्मत्त होकर गाली - गलौज करते बड़बड़ाता रहा | मुंह से बोला , जहां पकड़ लूंगा वहीं नष्ट कर दूंगा ।। 184 ।। चेनबासप्पा को लक्ष्य करके वीरभद्र , उन्मत्त होकर बोला , " मैं तुझे टुकड़े कर दूंगा पूरा निगल जाऊँगा " ।। 185 ।। चेनबासप्पा भीतिग्रस्त होकर मेरे पांव कस कर पकड़ लिए | बोला , " मुझे संकट मुक्त करो " मैंने उसे अभय दिया ।। 186 ।। तब मैंने चेनबासप्पा को धीर देते हुए कहा था , " वीरभद्र के हाथ तुझे मरने नहीं दूंगा ।। 187 ।। इस प्रकार बाद में बीरभद्र का अंत हो गया । वह फिर सर्प योनि में जन्मा । इस प्रकार उसका देहान्तर हो गया ।। 188 ।। चेनबासप्पा को दहशत हो गयी । उससे उसका अंत हो गया । जन्म पाया

मेढक योनि में । इस प्रकार इनकी कथा है ।। 189 ।। पूर्व जन्म के वैर के कारण सर्प योनि में जन्म पाकर बासप्पा को मेढक के रूप में , पकड़ लिया ।। 190 ।। बेचारा बासप्पा मेढक के रूप में भद्रप्पा सर्प के मुंह में पड़ गया । उसकी करुण पुकार सुनकर मेरा मन द्रवित हो गया ।। 191 ।। पूर्व का दिया वचन स्मरण करके सर्प के मुंह से चेनबासप्पा को मुक्त करा कर मैंने अपने बचन का पालन किया ।। 192 ।। अल्ला अपने भक्तों के लिए संकट के समय दौड़ते आते हैं । उन्होंने ही मुझे यहां भेजा , भक्त की रक्षा करने ।। 193 ।। यहां तो यह प्रत्यक्ष अनुभव किया गया । वीरभद्र को भगा दिया गया । चेनबासप्पा की संकट से रक्षा की गयी । यह सब देव ने किया ।। 194 ।। अतः यह चिलिम भरो । पीकर अपने धाम जाऊँगा । तू भी अपने गांव जाओ । लक्ष्य मेरे नाम पर दिए रहना ।। 195 ।।" ऐसा बोलकर हम चिलम पिए । सत्संग का सुख मिला । फिरते - फिरते वापस आया । अपने मन में परम सुख प्राप्त हुआ ।। 196 ।।" स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित , भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित " में " श्री साईंमुखश्रुत कथा कथन " नामक सैंतालीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय अड़तालीसवां (साशंकभक्तानुग्रह करण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

अब इस अध्याय को शुरु करने पर , जो अत्यन्त आदर से श्रवण कर रहा था, ऐसा श्रोता प्रश्न करने लगा , " **श्रीसाई गुरु है या सद्गुरु** ? " ।। 1 ।। उसी का समाधान करने के लिए सद्गुरु के लक्षण का संक्षिप्त कथन करता हूं जिससे साईं समर्थ के चरणों में सद्गुरु के लक्षण मिलते हैं ।। 2 ।। जिनसे वेदाध्ययन प्राप्त करते हैं अथवा छहों शास्त्रों का ज्ञान , जो वेदान्त निरूपण करते हैं ज्ञानी उन्हें सद्गुरु नहीं कहते हैं ।। 3 ।। कोई एक प्राण वायु को नियन्त्रित करते हैं , तप्त मुद्रा धारण करते हैं, ब्रह्मानुवाद से श्रोताओं को रिझाते हैं ज्ञानी उन्हें सद्गुरु नहीं कहते हैं ।। 4 ।। शिष्यों को शास्त्रोक्त मंत्र भी देते , जप करने के लिए आज्ञा करते , कब होगी फल प्राप्ति किसी के चित्त में विश्वास नहीं है ।। 5 ।। तत्त्व निरूपण अति रसाल , शब्दज्ञान अलंकारिक हो किन्तु स्वानुभव (आत्म साक्षात्कार) का काल होने पर उनका ज्ञान शाब्दिक खोखला होता है ।। 6 ।। निरूपण को ठीक से सुनने पर क्षण भर के लिए दोनों भोगों (लौकिक व पारलौकिक) से विरक्ति हो सकती है पर जिसने सही अनुभव का स्वाद लिया है वही अनुभव प्रकट कर सकता है ।। 7 ।। संपूर्ण शब्द ज्ञानी होने पर , पूर्ण अनुभवी ,आत्म ज्ञानी को ही शिष्य को बोध कराने का अधिकार है , उसी को सद्गुरु कहा जाता है ।। 8 ।। जिन्हें स्वय अनुभव नहीं है वह शिष्यों को क्या देंगे। जिन्हें कुछ भी अपरोक्ष अनुभव नहीं है, सद्गुरु कभी भी नहीं कहा जा सकता है ।। 9 ।। शिष्य से सेवा करानी है ऐसा भाव स्वप्न में भी धारण न करें । इसके विपरीत शिष्य के हित के लिए निज शरीर लगाने की इच्छा रखें उसे सद्गुरु जानो ।। 10 ।। शिष्य है तो क्या चीज , गुरु क्या , वह श्रेष्ठों में श्रेष्ठ । ऐसे अहंभाव से विरहित हो वही हितकारी सद्गुरु है ।। 11 ।। शिष्य ही पूर्ण ब्रह्म है , उसके प्रति पुत्र प्रेम रखें , उससे योगक्षेम की इच्छा न करें वह सद्गुरु जगत में परम श्रेष्ठ है ।। 12 ।। जो परम शान्ति का निधान है , जहां विद्वता का अभिमान नहीं है , छोटे - बड़े एक समान हैं वही सद्गुरु का स्थान जानो ।। 13 ।। आमतौर से , सद्गुरु के , संक्षिप्त लक्षण मैंने अनन्य - शरण में आकर श्रोताओं के

लिए संकलित कर निवेदन किया ।। 14 ।। साईं दर्शन से जिनके लोचन तुष्ट हो गए हैं ऐसे भाग्यवान लोगों के लिए मैं इससे अधिक सत्य सद्गुरु लक्षण क्या वर्णन करूँ ।। 15 ।। जन्मजन्मांतर के अतिशय पुण्य के संचय का फल है कि सद्गुरु साईं के चरण हमें प्राप्त हुए हैं ।। 16 ।। पूर्ण तरुणाई से अपरिग्रही थे , निराधार , न वस्त्र न गृह । तमाखू चिलम भी क्या संग्रह है । भयंकर मनोनिग्रह (आत्म संयम) था ।। 17 ।। अठारह वर्ष की वय होने पर ही उनके पास पूर्ण मनोजय था । सदा एकान्त में निर्भय रहते स्वरूप में लय होकर ।। 18 ।। भक्तों की शुद्ध चाहत देखकर , " **मैं भक्त पराधीन हूं** " इस कथन को भक्त वृंद को प्रमाणित दिखाने के लिए भक्तों के प्रेम के अनुसार व्यवहार करते ।। 19 ।। जय परब्रह्म सनातना , जय दीनोद्धार प्रसन्न वदना , जय चैतन्यघना , भक्ताधीना , अपने भक्त को अपना दर्शन दो ।। 20 ।। जय हो जो द्वंद्वों से परे है, जय हो जो अव्यक्त का व्यक्त है , सर्वसाक्षी , सर्वातीत है सभी भक्तों की समझ से परे है ।। 21 ।। भव संताप हरनेवाले की जय हो , भव रूपी गज का विदारण करने वाले की जय हो , आश्रित के प्रति प्रेमपूर्ण की जय हो , संकट का निरसन करने वाले सद्गुरु राया ।। 22 ।। अव्यक्त में तुम्हारे समरस होने पर आकार निराकारता को प्राप्त हो गया, परन्तु तुम्हारी भक्त कल्याणकारिता , देह छोड़ने के बाद भी, उसका अन्त नहीं हुआ ।। 23 ।। देह रहते जो जो कृति थी वही अव्यक्त में समरस होने पर भी । जो तुम्हारी भक्ति में लगे हैं वही अनुभव आज भी कर रहे हैं ।। 24 ।। तुमने मुझ पामर को निमित्त बना कर , अविद्या रूपी रजनी का निरसन करने के लिए अपनी चरित्रतरिणी प्रकट किया जो भक्तोद्धार करने में समर्थ है ।। 25 ।। बुद्धि में आस्तिकता हो , श्रद्धा की स्थिति हो , भक्त अपने हृदय में प्रेम की वाती उत्पन्न करें तो ज्ञान ज्योति प्रकट होगी ।। 26 ।। प्रेम के बिना ज्ञान शुष्क होता है । उसका कोई क्या प्रयोजन , बिना प्रेम संतुष्टि नहीं , प्रेम अविच्छिन्न है ।। 27 ।। प्रेम की महिमा का वर्णन कैसे करूं । उसके आगे सब कुछ तुच्छ है । हृदय में गहन प्रेम के न होने पर श्रवण वाचन निष्फल है ।। 28 ।। प्रेम के पास ही भक्ति सुख पूर्वक रहती है । वहीं पूर्ण शांति व विरक्ति है । वहीं, पीछे, मुक्ति अपनी सम्पत्ति के साथ प्रतीक्षा में खड़ी रहती है ।। 29 ।। प्रेम भाव के बिना नहीं उपजता। जहां भाव हैं वहीं ईश्वर जानो । भाव से पूर्ण प्रेम उत्पन्न होता है । भव से तरने का एक ही साधन है, वह है भाव ।। 30 ।। गंगा जल की भांति पवित्र साईं चरित्र बहुत मधुर है। उन्होंने ही उसमें स्तोत्र अलंकृत किया है, हेमाड निमित्त मात्र है ।। 31 ।। साई सच्चरित का श्रवण करने से श्रोता व वक्ता नित्य पवित्र होते हैं । पाप

पुण्य के धुल जाने से दोनों ही नित्य मुक्त होते हैं ।। 32 ।। कान के भाग्य विशेष जो श्रवण करें । वाणी के भाग्य विशेष जो वाचन करे। धन्य है यह साईं स्त्रोत जो इनके भक्तों के लिए अति पावन है ।। 33 ।। शुद्ध चित्त होकर सद्भाव से जो चरित को सुनते हैं उनके सकल मनोरथ सदैव सुफलित होते हैं ।। 34 ।। परम भावार्थ व आदर से इस साईं को सुनने से अनायास ही, अबिलम्ब, उसे निजपद (आत्मा) की भक्ति का लाभ होगा ।। 35 ।। भक्ति भाव से साईं चरण की सेवा करने से, साईं स्मरण करने से, इन्द्रियों का आचरण यथेच्छ नहीं होगा , सहज ही भव - तरण तुरन्त होगा ।। 36 ।। भक्त के लिए , चातक के निज जीवन स्वाती नक्षत्र की बूंद की भांति, साई सच्चरित कथन है । श्रोता श्रवण के बाद मनन करें । श्री कृपा का पात्र बनें ।। 37 ।। सभी अवस्था में सावधान होकर श्रोता श्रवण करें भव तरण सहज होगा , कर्म बंधन टूटेगा ।। 38 ।। इस प्रकार श्रोता मन में कह रहे होंगे , " कथा का आरम्भ कब होगा । " उनकी व्याकुलता को दूर करने के लिए प्रस्तावना करता हूँ ।। 39 ।। पूर्व अध्याय में कथन हुआ था , बैर, हत्या और ऋण , इन्हें चुकाने के लिए, अपने कर्म को भोगने के, लिए पुनः जन्म लेना होता है ।। 40 ।। उन्हें पूर्व स्मरण नहीं रहता, किन्तु इन संतों को कभी विस्मरण नहीं होता है। अपने निज भक्त का संकट निवारण करते हैं , कहीं भी जन्म हो ।। 41 ।। वैसी ही अब दूसरी कथा। लेते , देते , बैठते , उठते संतों के चरणों में विश्वास रखने पर निज भक्त को सफलता मिलती है ।। 42 ।। कर्म आरम्भ करने पर, कर्म में अपनी दक्षता का उपयोग करने पर , पहले हरि गुरुचरण का स्मरण करने पर , वही अपने भक्त की चिंता का निवारण करते हैं , ।। 43 ।। कर्म का मैं मात्र करने वाला हूँ, समर्थ हरिगुरु फल देने वाले हैं। ऐसा जिनका दृढ़ निश्चय है उनका वेड़ा पार हो जाता है ।। 44 ।। संत आरंभ में उग्र लगते हैं, किन्तु उनके अन्दर निःस्वार्थ प्रीति होती है । मन में थोड़ा धैर्य होना चाहिए , अन्त में कल्याण करते हैं ।। 45 ।। शाप , ताप , सांसारिक माया सत्संग की छाया पड़ते ही वहीं की वहीं विलय हो जाती है । इसलिए उनके चरणों में समर्पित हो जाओ ।। 46 ।। सविनय और अहंकार रहित होकर संतों की शरण में जाकर अपनी गुप्त इच्छाएं उनसे निवेदन करने पर चित्त को शान्त कर देते हैं ।। 47 ।। अभिमान में अल्पज्ञान के कारण संतो के वचन पर अविश्वास करने वालों की , पहले ही , कैसी हानि हो जाती है । विश्वास से निदान होता है , कल्याण होता है ।। 48 ।। शुद्ध मन से या कपट से जो सर्वथा सच्चे संत के पांव पकड़े रहता है , अंत में उसे निर्मुक्तता मिलती है । संतों की योग्यता अगाध है ।। 49 ।। इस अर्थ की बोधक कथा है । सावधानी

पूर्वक श्रवण कीजिए । श्रोता स्वानंद निर्भर होगा , वैसे ही वक्ता उल्लसित होगा ।। 50 ।। अक्कल कोट निवासी वकील , जिनका नाम सपटणेकर , उनका अनुभव सुनकर मन उल्लसित होगा ।। 51 ।। रात दिन वकालत की पढ़ाई करते हुए उनकी भेंट विद्यार्थी शेवडे से हुई परस्पर विचार विमर्श करने लगे ।। 52 ।। सह अध्यायी और आ गए वहीं खोली में एकत्र हो बैठ गए । प्रश्न एक एक कर पूछने लगे अध्ययन का परीक्षण करने के लिए ।। 53 ।। यह देखने के लिए कि कौन चूकता है किसका उत्तर सही आता है , संशय की निवृत्ति कराने के लिए , चित्त शान्त करने के लिए ।। 54 ।। शेवडे जिनके उत्तर गलत थे , अंत में सारे विद्यार्थी बोले , " कैसे ये परीक्षा उत्तीर्ण होंगे इनका सारा अध्ययन अपूर्ण है ।। 55 ।।" यद्यपि उनका उपहास किया गया । शेवडे को पूर्ण विश्वास था ,अध्ययन पूर्ण या अपूर्ण मैं समय आने पर पास होऊँगा ।। 56 ।। मैंने यद्यपि अध्ययन नहीं किया है, मेरे साईबाबा मुझे पास कराने के लिए बैठे हैं। मैं चिन्ता क्यों करूँ ।। 57 ।। ऐसे बोल सुनकर सपटणेकर को आश्चर्य हुआ। शेवडे को एक बाजू ले जाकर पूछने लगे ।। 58 ।। अहो ! ये साईं बाबा कौन हैं, जिनका इतना गुण वर्णन किया, जिन पर तुम्हारा पूर्ण विश्वास है, किस स्थान पर बसते हैं ।। 59 ।। फिर उनसे साईबाबा की महिमा ,प्रत्युत्तर में, शेवडे ने कही । साथ ही सरलता से अपनी विश्वास स्थिति उनसे कही ।। 60 ।। सुप्रसिद्ध नगर (अहमद नगर) जिला में शिरडी गांव में एक मस्जिद में फकीर बैठते हैं । बहुत नाम वाले सत्पुरुष हैं ।। 61 ।। संत जगह - जगह हैं किन्तु उनसे (साईं बाबा से) भेंट का अमोध संचित पुण्य न होने पर कितना ही प्रयत्न कर लें सुयोग प्राप्त नहीं होता है ।। 62 ।। उन पर मेरा पूर्ण विश्वास है जो वे करेंगे वही होगा , वाणी से जो बोलेंगे वही घटित होगा । काल के अन्त तक वह टल नहीं सकता ।। 63 ।। कितना ही प्रयास इस वर्ष करू , परीक्षा में मुझे पास नहीं होना है , किन्तु अगले वर्ष अप्रयास ही मुझे पास होना है , निश्चित ।। 64 ।। मुझे उनका आश्वासन है, उन पर मेरा भरोसा पूरा है । उनके वचन अन्यथा नहीं होंगे, मैंने मन में गाठ बांध ली है(ऐसा मेरा अटल विश्वास है) ।। 65 ।। इसमें आश्चर्य क्या यह होगी , उसी तरह आगे की परीक्षा होगी । सपटणेकर को ये बोल हास्यास्पद लगे व निःसंशय अर्थहीन ।। 66 ।। उनका मन विकल्पपूर्ण था । यह कथन उन्हें क्या अच्छा लगता । इस प्रकार शेवडे वहां से चले गये । आगे का समाचार सुनें ।। 67 ।। बाद के समय में अनुभव से शेवडे की उक्ति सत्य साबित हो गयी । दोनों ही परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो गए । सपटणेकर के चित्त में आश्चर्य हुआ ।। 68 ।। फिर दस वर्ष बीत गए । सपटणेकर उद्विग्न हो गए । दुर्भाग्य

एकाएक टूट पड़ा । तब वे उदास हो गए ।। 69 ।। इकलौता एक पुत्र था उनका । कंठ रोग से निधन को प्राप्त हो गया , सन 1913 में । संसार से अत्यन्त विचलित हो गए ।। 70 ।। पंढरपुर , गणगापुर आदि समग्र तीर्थों की यात्रा की परन्तु मन को सुख नहीं मिला । वेदान्त का पठन फिर किया ।। 71 ।। ऐसे कुछ समय बीतने पर, चित्त में कुछ शांति आये इसलिए प्रतीक्षा करते हुए, शेवडे का वृतान्त स्मरण हुआ ।। 72 ।। शेवडे का निश्चय स्मरण हुआ , साईं पदों में विश्वास याद आया । उनके मन में आया कि हम भी श्रीदर्शन को जायें ।। 73 ।। संत दर्शन करने के उद्देश्य से सन 1913 में शिरडी जाने का निश्चय किया और भाई के साथ निकल पड़े ।। 74 ।। शेवडे तो निमित्त थे जिनका स्मरण हुआ । अपने चरण की वंदना करवाने के लिए साईं ने उन्हें बुलाया था । उसका सावधान चित्त से श्रवण करें ।। 75 ।। कनिष्ट सहोदर पंडितराव को साथ लेकर सपटणेकर संत दर्शन के लिए शिरडी के लिए सपरिवार निकल पड़े ।। 76 ।। इस प्रकार वे दोनों वहां आए | आते ही श्री के दर्शन के लिए निकले । दूर से ही बाबा का दर्शन हुआ । चित्त अत्यंत संतुष्ट हो गया ।। 77 ।। दूर से ही उनके नेत्र मिलते ही तुरन्त निकट गए दोनों ही कर संपुट जोड़कर प्रतीक्षा में बाबा के सामने खड़े हो गए ।। 78 ।। दोनों ही अति विनीत बाबा के सन्मुख साष्टांग दण्डवत किए । श्रीफल साईं चरणों में समर्पित किए , सप्रेम शुद्ध हृदय से ।। 79 ।। सपटणेकर द्वारा समर्थ के चरणों पर श्रीफल अर्पित करने पर ' चल हट ' शब्द से बाबा ने धिक्कारा सपटणेकर को।। 80 ।। सपटणेकर चिंताग्रस्त हो गये । बाबा क्यों संतप्त हैं ? मन में कहा कि बाबा के परिचित से इनके इशारे को पूछना चाहिए ।। 81 ।। जहां दर्शन से प्रसन्नता हुई थी, वहीं इन शब्दों से अत्यंत खिन्न हो गए । चितित हो नीचे मुंह करके खिसक कर पीछे बैठ गए ।। 82 ।। अब किसके पास जावें, किस भक्त से पूछें, बाबा के बोल का मनोगत क्या है किस से पूछें ।। 83 ।। ऐसे उनका भाव देखकर , किसी ने उनको संतुष्ट करने के लिए बाला शिप्पी का नाम बताया । उनका घर ढूंढ लिया ।। 84 ।। उनसे सपटणेकर ने पूर्ण वृत्तांत निवेदित किया , बोले , “ बाबा ने मुझे धिक्कार दिया, अति उग्र वाणी से " ।। 85 ।। आप जरा मेरे साथ आओ, दर्शन शांति से करवा दो । बाबा का कृपावलोकन होवे, हम पर क्रोधित न हों ।। 86 ।। इस प्रकार बाला को मना करके सपटणेकर निश्चिंत हो गए । बाबा की फोटो खरीद कर बाबा के दर्शन के लिए निकले ।। 87 ।। बाला शिप्पी साथ में थे । फोटो को अपने हाथ में लेकर बाला ने फिर बाबा को दिया । बाबा से सादर प्रार्थना की ।। 88 ।। क्यों देवा , यह कैसा चित्र है ? देखकर बाबा उत्तर देते हैं । यह फोटो इसके यार की

है , सपटणेकर की ओर इंगित करते हुए ।। 89 ।। ऐसा बोलकर बाबा हंसे । मंडली को भी हंसी आ गयी | बाला ने बाबा से पूछा , इससे क्या इंगित होता है ।। 90 ।। बाला ने तत्काल सपटणेकर से कहा , " तुरन्त दर्शन करिए "। फिर जैसे ही नमस्कार किया ,"चल हट " उद्गार सुना ।। 91 ।। वही पहले का "चल हट " अभी भी मेरे पीछे पड़ा है । अब कौन मार्ग अपनाएं । सपटणेकर को बहुत आश्चर्य लग रहा था ।। 92 ।। फिर वे दोनों हाथ जोड़कर बाबा के समक्ष प्रतीक्षारत खड़े रहे ।" निकल जाओ यहां से तुरन्त " उन्हें बाबा ने आखिर में आज्ञा दी ।। 93 ।।" समर्थ स्वामी आपके वाक्य किसी के लिए भी सर्वथा अनुल्लंघ्य हैं । हम पामर की क्या कथा । इसी घड़ी निकल जाता हूं ।। 94 ।। सुनकर कि आप महा उदार हैं, दर्शन के लिए आया तो धिक्कारते हुए "चल हट " शब्दों से मेरा सत्कार हुआ । यह क्या चमत्कार है, समझ में नहीं आता ।। 95 ।। हमें आश्वासन दें कि शीघ्र ही पुन: दर्शन हो, तब कृपावलोकन हो ।" ऐसे आश्वासन की प्रार्थना की ।। 96 ।। ऐसा कौन ज्ञानी है जो बाबा के मन को जान ले । परन्तु हुई आज्ञा को मानकर स्वस्थान को वापस गए ।। 97 ।। इस प्रकार उनका प्रथम दर्शन , उससे वे दोनों अति उद्विग्न थे । अपने गांव को वापस गए । यत्किंचित भी बिलंब नहीं किया ।। 98 ।। फिर एक और वर्ष बीत गया तब भी मन स्थिर नहीं हुआ । पुनः गणगापुर की यात्रा की । चित्त अधिक भटकने लगा ।। 99 ।। इसके बाद विश्राम के लिए सपटणेकर माढ़े गांव गए । आखिर में काशी क्षेत्र में जाने का विचार उन्होंने किया ।। 100 ।। अब काशी के लिए निकलने में कुछ दो दिन शेष बचे थे । उनकी पत्नी को स्वप्न हुआ, काशी प्रवास रह गया ।। 101 ।। दृष्टांत का ही चमत्कार कैसा अभिनव । साईं की लीला चरित कहता हूं। श्रवण तत्पर हो जावें ।। 102 ।। शेज पर सोते हुए आँखों के समक्ष स्वप्न सृष्टि हुई । बाई गागर लेकर लक्कड़ शाह के कुएं पर जा रही है ।। 103 ।। वहां एक नीम के पेड़ के नीचे जिसके सिर पर फड़का बंधा था । ऐसा एक फकीर उस समय मेरे पास आया , बोला ।। 104 ।। "क्यों व्यर्थ श्रम कर रही हो बालिका । भर देता हूं तुम्हारी सकल गागर निर्मल जल से । " फकीर ने कोमल स्वर में उद्गार किया ।। 105 ।। फकीर से भय लगने लगा | गागर लेकर वापस आने लगी । घर के लिए वापसी का मार्ग पकड़ लिया । साथ में पीछे - पीछे फकीर ।। 106 ।। ऐसा स्वप्न देखकर जाग गयी नयन खुल गए । पत्नी का स्वप्न निवेदन सुनकर शिरडी गमन निश्चित किया ।। 107 ।। उसी समय दोनों निकले । अगले दिन शिरडी ग्राम पहुंचे । आते ही मस्जिद गए । बाबा उस समय लेंडी में थे ।। 108 ।। बाबा के वापस आने तक दोनों वहीं बैठे रहे । बाबा के मार्ग की प्रतीक्षा

करते । तब इतने में बाबा आ गए ।। 109 ।। जिस मूर्ति को स्वप्न में देखा था उसी को वहां नख से सिर तक देखकर बाई विस्मित रह गयी । फिर वह निहारती रह गयी ।। 110 ।। बाबा का पद प्रक्षालन होने के बाद बाई दर्शन करने गयीं । साईं पदों का अभिवंदन करके बैठकर अवलोकन करने लगीं ।। 111 ।। उसकी विनीतता देखकर साईंनाथ का चित्त उल्हसित हुआ । बाबा ने धीरे से कथा आरंभ की, बाई की व्यथा निवारण के लिए ।। 112 ।। वहां नित्य क्रमानुसार बाबा अपनी व्यथा सविस्तार प्रेमपूर्वक निवेदन करने लगे वहीं एक तीसरे व्यक्ति से ।। 113 ।। बाई की कथा बाई को सुनाना था। उसी के समक्ष तीसरे से कहने लगे, बाई अति सावधान होकर सुनने लगी ।। 114 ।। " मेरे हाथ पेट कमर बहुत दिनों से बहुत दुःख रहे हैं । दवा करते मैं बेजार (तंग) हो गया । व्यथा से छुटकारा नहीं मिलता ।। 115 ।। मैं औषधि खाकर ऊब चुका हूं वास्तव में औषधि फलित नहीं हो रही है । पर अब मुझे आश्चर्य हो रहा है । एक एक व्यथा कहां चली गयी " ।। 116 ।। ऐसी ही कथा तीसरे व्यक्ति से कही । बाई के नाम का निदेशन न करते हुए उसी की यह सर्वथा वार्ता होते हुए, उसी से इसका संबंध था ।। 117 ।। बाद में मास दो मास में बाबा ने जिसे अपना कहकर वर्णित किया था उसकी व्यथा की निवृत्ति हो गयी तब उसे अनुभव हुआ ।। 118 ।। बाई की कामना पूर्ण हो गयी , तब सपटणेकर ने दर्शन किया उनकी पूर्व की ' चल हट ' की संभाना बाबा ने पुनः कर दी ।। 119 ।। न मालूम मेरी क्या चूक है , मुझे बाबा हमेशा धिक्कारते हैं । नमस्कार का उनका उत्तर एक मेरे लिए सामान्य है ।। 120 ।। मेरे पूर्वाजित क्या हैं कि मुझसे नाराज होते हैं। मेरे देखते हुए दूसरों से अत्यन्त प्रेम से व्यवहार करते हैं ।। 121 ।। सुबह या शाम जाकर देखो बाबा के पास पूरी मंडली नित्य दीवाली के आनन्द का अनुभव करती है। मेरे भाग्य में ' चल हट ' है ।। 122 ।। कुछ मेरे कर्म के कारण क्रोध है । मेरे धर्म का विलोप हो गया है। अनन्त पाप के आश्रय में हूं । इसीलिए मेरे प्रति अप्रसन्नता है ।। 123 ।। आरम्भ में बाबा के विषय में कुतर्की और संशयी था । इसीलिए लगता है इस उपाय से बाबा मुझे स्थान पर ला रहे हैं ।। 124 ।। इसीलिए निश्चय किया , बाबा का अनुग्रह होने तक वहीं वृति स्थिर करने, सुस्थिर मन से रहने का ।। 125 ।। त्रिविध तापों से तपित , साईं के दर्शन का भूखा ऐसा कौन निराश गया हो, जो मन में संतुष्ट न हुआ हो ।। 126 ।। उस दिन अति उद्विग्न थे , अन्न पान अच्छा नहीं लगा । गमनागमन अच्छा नहीं लगा , विस्तर पर खुले नयन पड़े थे ।। 127 ।। जब कोई आस - पास नहीं होगा , बाबा गादी पर अकेले होंगे , ऐसा अवसर देखकर बाबा के चरण पकड़ लूंगा ।। 128

।। सपटणेकर ने निश्चय किया | उसका निश्चित फल आया । भाव विभोर होकर बाबा के चरण पकड़ लिए ।। 129 ।। पावों पर सिर रखते ही बाबा ने उस पर अपना हाथ रख दिया । सपटणेकर पाद संवाहन करने लगे । तभी एक गड़ेरिन बाई आयी ।। 130 ।। बाई वहां आते ही बाबा की कमर बैठकर दबाने लगी । बाबा नित्य क्रमानुसार उससे वार्ता करने लगे ।। 131 ।। वार्ता का चमत्कार , सपटणेकर ध्यान देकर सुनने लगे तो हूबहू उन्हीं की समग्र थी ।। 132 ।। यद्यपि गड़ेरिन हुंकारी भर रही थी , सपटणेकर आश्चर्य भरित थे । अपनी कहानी बैठकर सुन रहे थे । उनका अन्तःकरण चकित था ।। 133 ।। कथा वह एक बनिए की थी । पर वस्तुतः थी उनकी । उसी में उनके मृत लड़के की मृत्यु का उल्लेख था ।। 134 ।। कोई अत्यन्त परिचित रिश्तेदार कहानी कह रहा हो, जन्म से लेकर मरण पर्यंत तक, वैसे वे साद्यंत कहे ।। 135 ।। बाई से कथा कही गयी, जिसका कथा से संबंध नहीं था, वास्तव में । वह तो पिता पुत्र की कहानी थी, विषय सर्वथा दोनों का ।। 136 ।। इस प्रकार निज कथा साईं मुख से सपटणेकर सुनकर चित्त में परम विस्मित हुए । साईं चरणों में आदर भाव दृढ़ हो गया ।। 137 ।। उन्हें बहुत कौतुक हुआ। बाबा को यह कैसे मालूम , जैसे हथेली पर आंवला उसी की भांति बाबा को सकल था ।। 138 ।। अपने स्वयं ब्रह्मस्वरूप हैं । सम्पूर्ण जगत उनका कुटुम्ब जानो । क्या बहुत कहें , पूर्ण विश्व को ढके हुए वस्त्र हैं, वही साईं का चिह्न है ।। 139 ।। एकात्मता का विस्तार ,वही साईं का अवतार है। उनके लिए कैसा अपना और दूसरे का । स्वयं के विस्तार से जगरूप है ।। 140 ।। जो परमपुरुष में लीन है उसके लिए कैसी द्वैतभाषा , दृष्टा , दर्शन , अथवा दृश्य , जैसे आकाश को लेप छू नहीं सकता ।। 141 ।। बाबा महान अन्तर्ज्ञानी । इस प्रकार इनके मन में आते ही, बाबा उनसे क्या बोले, उसे सज्जन सुनें ।। 142 ।। उनके सामने अंगुली से इशारा करके बाबा ने साश्चर्य उद्गार निकाले , “ कहता है मैंने इसके पुत्र को मारा है । यह आरोप मुझ पर लगाता है " ।। 143 ।। मैं लोगों के बच्चों को मारता हूं ये क्यों मस्जिद में आकर रोते हैं । अच्छा मैं ऐसा करता हूं कि उसका पुत्र पेट में लाता हूं ।। 144 ।। जैसे मरे हुए रामदास को वापस दिया था उस बाई को, वैसे ही पुनः उसके पुत्र को उसके पेट में डालता हूं ।। 145 ।। यह सुनकर सपटणेकर बाबा पर नजर टिकाए प्रतीक्षा करते रहे । उनके मस्तक पर हाथ रखकर बाबा ने उन्हें धीरज दिया ।। 146 ।। बोले , “ ये पांव बहुत पुरातन हैं तुम्हारा कष्ट दूर हो गया । मुझ पर पूर्ण भरोसा रखो । शीघ्र ही कृतार्थ (संतुष्ट) हो जाओगे " ।। 147 ।। इस प्रकार पाद संवाहन करते बाबा मधुर वचन सुनते सपटणेकर अश्रुपूरित नयन से पदाभिवंदन

करने लगे ।। 148 ।। अष्टभाव से गला रुंध गया । नयनों में आनन्द के अश्रुजीवन आ गये उनसे बाबा के पद प्रक्षालन । फिर प्रेम से प्रक्षालन किया ।। 149 ।। पुनः बाबा मस्तक पर हाथ रखकर बोले , " शान्ति से रहो । “ फिर सपटणेकर वापस निवास पर आनन्दित मन से आए ।। 150 ।। नैवेद्य की तैयारी की। अपनी पत्नी के हाथ में दिया । पूजा आरती हो जाने पर बाबा के समक्ष वह थाली परोस दी ।। 151 ।। फिर पात्र के चारों ओर जल छिड़क कर सविधि नेत्रों का स्पर्श करके , प्राण, अपान , व्यान आदि को अर्पित करके बाबा को समर्पित किया ।। 152 ।। फिर नित्यक्रम के अनुसार बाबा का हस्त स्पर्श हुआ . नैवेद्य की स्वीकारता हुई सपटणेकर को हर्ष हुआ ।। 153 ।। फिर वहां के अन्य भक्तों के बाबा के पांव पड़ते ही भीड़ में सपटणेकर ने घुसते हुए जल्दी से बाबा को पुनः प्रणाम किया ।। 154 ।। इस प्रकार , ऐसे जब शीघ्रता के लिए , मस्तक से मस्तक टकरा रहे थे बाबा ने तब सपटणेकर से शांत स्वर में कहा ।। 155 ।। अरे किसलिए बार - बार नमस्कार पर नमस्कार, एक बार करना ही पर्याप्त है , आदर सत्कार पूर्वक ।। 156 ।। इस प्रकार वह चावड़ी की रात्रि थी । सपटणेकर अति चाह से , आनन्द से दण्ड धारण करके प्रेम से पालकी के आगे - आगे निकले ।। 157 ।। इस प्रकार चावड़ी शोभा यात्रा से श्रोता पहले ही अवगत हैं । यद्यपि पुनरुक्ति आवश्यक है किन्तु विस्तारता के कारण वर्जित है ।। 158 ।। इस प्रकार फिर उस रात्रि में बाबा की अगाध लीला । बाबा सपटणेकर को दिखे मानो पांडुरंग को देख रहे हों ।। 159 ।। अतः फिर आज्ञा मांगने पर उन्हें भोजन ग्रहण करने के पश्चात जाने की आज्ञा हुई । यत्किंचित अवज्ञा न करते हुए निकलने पर पूर्व फिर दर्शन के लिए गए ।। 160 ।। इतने में फिर उनके मन में एकाएक कल्पना उठी, अब बाबा दक्षिणा मांगेंगे तो पूरा कैसे करुंगा ।। 161 ।। गांठ का पैसा समाप्त हो गया था। गाड़ी भाड़े के लिए ही पर्याप्त शेष थी । यदि बोले “ दक्षिणा दो ” उत्तर मन में बनाया ।। 162 ।। मांगने से पहले ही दे दूंगा । एक रुपया हाथ में रख दूंगा | पुनः मांगने पर एक और अर्पित कर दूंगा । उसके बाद कह दूंगा कि नहीं है ।। 163 ।। रेलवे के भाड़े के लिए आवश्यक जो है उतना ही गांठ में है ऐसी स्पष्टोक्ति बाबा से कह देंगे । निश्चित करके भेंट के लिए वे गए ।। 164 ।। पूर्व के निश्चय के अनुसार एक रुपया हाथ पर रखा । और एक उनके मांगने पर दिए जाने पर भरपूर बोले ।। 165 ।। बोले , “ यह लो एक नारियल । अपनी स्त्री की गोद में डाल और फिर तूं खुशहाल जाओ । जीवन की चिंता छोड़ दो ।। 166 ।। फिर बारह महीने व्यतीत होने पर उसके उदर से पुत्र आया । आठ मास का बच्चा लेकर दोबारा दर्शन के लिए वह आयीं ।।

167 ।। बच्चे को बाबा के चरणों में रखकर , संतो की करणी कितनी नवल है , फिर दोनों ने हाथ जोड़कर विनती की उसे सुनो ।। 168 ।। "यह उपकार साईंनाथ कैसे उतरेगा , हमें सर्वथा नहीं मालूम । हम चरणों में माथा रखते हैं ।। 169 ।। हम दीन हीन पामर हैं अनाथ, पर कृपा करते रहें । अब अभी से आगे निरन्तर तुम्हारे चरणों का संरक्षण रहे ।। 170 ।। जागृति में , वैसे ही स्वप्न में, मन मानी तरंग उठती है, दिन रात आराम नहीं है । इस लिए अपने भजन में हमें लगा लो ।। 171 ।। अब यह पुत्र मुरलीधर और दो भास्कर और दिनकर जिनके साथ सपटणेकर बाद में प्रसन्न हो गये ।। 172 ।। फिर वे भार्या को साथ लेकर साईं दयावान का वंदन किये । चंचल मन को स्थैर्य प्राप्त हो गया । कृतकार्य हो वापस गए ।। 173 ।। आरम्भ में कथा को संक्षिप्त कहने का मन था, पर बोलवाने वाले साईंनाथ हैं उसी से ग्रन्थ विस्तार हो गया ।। 174 ।। हेमाड उनकी शरण में हैं। आगे कथा का संबंध तात्पर्य अर्थ दिग्दर्शन श्रोताओं के लिए करता हूं ।। 175 ।। कथा इससे भी मधुर है । चमत्कार जिन्हें पसन्द था ऐसे भक्त की इच्छा अनुपम साईं ने पूरी की ।। 176 ।। लोग साईं के गुणों का वर्णन करते हैं दोष देखने वाले अवगुण देखते हैं। स्वयं स्वार्थ परमार्थ परायण नहीं है उनका मन दोष दर्शन हेतु है ।। 177 ।। साईं बाबा संत होंगे , यदि वे मुझे प्रत्यक्ष अनुभव कराते हैं । मुझे अनुभव होवे बिना , मैं उन्हें यत्किंचित नहीं मानता ? ।। 178 ।। केवल परीक्षा करके देखने के लिए जो गया उसकी भी इच्छा पूर्ण हुई । यही कथा अगले अध्याय में सज्जन श्रोता श्रवण करेंगे ।।179।। स्वस्ति श्री संत सज्जन प्रेरित , भक्त हेमाड पंत विरचित " श्री साईं समर्थ सच्चरित " में " साशंक भक्तानुग्रहकरणं ' नामक अड़तालीसवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरु साईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय उन्चासवां (संत परीक्षण - मनोनिग्रहण) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्‍गुरुसाईनाथ को नमन ।।

सांगोपांग सद्‍गुरु का गुणगान करने में वेद और पुराण थक गए , वहां मैं अज्ञानी , नासमझ , अच्छा हो कि चुप रहूं ।। 1 ।। वास्तव में देखिए तो मौन धारण करना ही वस्तुतः सद्‍गुरु स्तवन है । परन्तु साईं का एक - एक गुण मौन को विस्मरण में डाल देता है ।। 2 ।। धन्य है साईं की अगाध लीला जिसे देखकर मैं चुप नहीं रह सकता । पकवान जिह्वा को अच्छा लगता है , मन श्रोतावृंद का स्मरण कर रहा है ।। 3 ।। उनको भी पंक्ति में ले लें जिससे निज रसानंद दोगुना हो जाये । ऐसा मेरे मन में आया । इसी से भोजन में रंगत आ गयी ।। 4 ।। पकवान वास्तव में बहुत स्वादिष्ट हो , पर स्नेही सज्जन की पंक्ति न होने पर अकेले वह अच्छा नहीं लगता, उसका स्वादिष्टपन फीका लगता है ।। 5 ।। साईं की सभी इच्छाएं पूर्ण हो चुकी हैं । सभी संतों के शिरोमणि हैं साईं । साईं अपने भक्तों के विश्राम - धाम हैं , दुर्धर भव - भय निवारक हैं ।। 6 ।। उनकी लीला अवर्णनीय है । मेरी वाणी वर्णन नहीं कर सकती है । अतर्क्य की अतर्क्य कला कैसे मुझे समझ में आ सकती है ? ।। 7 ।। जो कल्याण के कल्याण हैं वही साईं , जानो , अपनी कृपा से अपनी कथा का स्मरण कराते हैं , ग्रन्थ परिपूर्ण कराने के लिए ।। 8 ।। अगाध महिमा का गायन करते हैं, तो उनका कथन करने में कौन समर्थ है । जहां परा ' असमर्थ हो जाती है वहां पश्यति ' और ' मध्यमा ' का क्या कहना ? ।। 9 ।। तीनों जहां मुंह नहीं खोलती चौथी वैखरी ' वहां कौन है ? यद्‍यपि मैं यह पूर्णरूप से जानता हूं , फिर भी मन नहीं मानता ।। 10 ।। सद्‍गुरु के चरणों में ध्यान न लगाने पर यथार्थ स्वरूप हाथ नहीं आता । संत स्वतः श्रीहरि स्वरूप है कृपा - हस्त के लिए प्रार्थना करनी चाहिए ।। 11 ।। गुरुचरणों के प्रति अनुराग , यही अपना सर्वस्व धन है । संत का सत्संग व उनका प्रेम हमें विभिन्न प्रकार से रुचिकर लगे ।। 12 ।। जिसे पूर्ण देहाभिमान है उसे ' भक्त ' नाम शोभा नहीं देता है । जो स्वयं पूर्ण निरभिमान है, वास्तव में भक्तपन उसके शरीर में है ।। 13 ।। जिसे ज्ञातृत्व का घमण्ड है , जिसे श्रेष्ठत्व का बड़ा अभिमान है , जो दंभ का घर है, उसकी क्या प्रतिष्ठा होगी ।। 14 ।। अपने

गुरु की कीर्ति ,जो अभागे प्रेम से नहीं गाते हैं , बधिर न होते हुए भी जो नहीं सुनते , वे मंदमति की मूर्ति हैं ।। 15 ।। तीर्थ, व्रत, यज्ञ व दान उससे भी बड़ा तप का आचरण , उससे भी अधिक हरि भजन , निजगुरुधाम सर्वाधिक है ।। 16 ।। साईं ही उन भक्तों के ध्यान हैं । साईं ही उनके देव देवता अर्चन हैं । साईं ही उनके गुप्त खजाने हैं ; रक्षा करनी चाहिए , किन्तु अकृपण की भांति ।। 17 ।। यदा कदा मुझे आलस आता है पर अन्तर्यामी साईं कथानक को भूलते नहीं , मुझे समय से स्मरण करा देते हैं ।। 18 ।। इसलिए एक क्षण के लिए चुप होकर बैठ जाता चाहूं , वहां मेरी कुछ नहीं चलती । कथा ऐसे अकल्पित स्फुरित होती है कि लेखनी हाथ में लेनी पड़ती है ।। 19 ।। ऐसी ही उनकी अगाध उसे अपने भक्तों को सुनवाने के लिए और मेरे अपने स्वार्थ के लिए मुझे इस सच्चरित में लगा दिया ।। 20 ।। कम से कम संतों की कथा के वे ही रचयिता व लेखक होते हैं । उनकी स्फूर्ति न होने पर पद - पद में केवल नीरसता होगी ।। 21 ।। इस प्रकार , कृपालु साईंनाथ द्वारा मेरे मन के अन्दर प्रवेश करके अपना ग्रन्थ करवा लिया गया , मेरा भी मनोरथ पूर्ण हो गया ।। 22 ।। मुख से श्री साईंनाथ के नाम का जप , चित्त में उनके वचन का चिंतन , मन में उनकी मूर्ति का ध्यान इससे मुझे पूर्ण संतुष्टि मिली ।। 23 ।। ओठों पर श्री साईं का नाम , हृदय में श्रीसाईं का प्रेम , जिनके कर्म श्री साईं की प्रीति के लिए हैं साईं उसके परम ऋणी हैं ।। 24 ।। संसार बंधन से मुक्ति का इसके अतिरिक्त कोई साधन नहीं है । साईं कथा परम पावन है । सदा सेवन सुखदायी होता है ।। 25 ।। पांवों से साईं की प्रदक्षिणा करो , कानों से सच्चरित का श्रवण करो , सर्वांग से प्रेमालिंगन करो , आँखों से साईं के दर्शन करो ।। 26 ।। प्रणाम करने के लिए साष्टांग दण्डवत करो , उनके चरणों पर मस्तक रख दो , जिह्वा को उनके नाम के स्मरण में लगा दो , व नासिका को निर्माल्य को सूंघने में ।। 27 ।। अब पूर्वकथा से संबंध ; गत अध्याय में श्रोताओं को चमत्कार प्रिय भक्त - कथा का कथन करने का वचन दिया था ।। 28 ।। स्वयं न स्वार्थ , न परमार्थ परायण था , संतों की शक्ति से वह अनजान था । किसी के द्वारा उनका वर्णन करने पर उसके मन में अविश्वास होता था ।। 29 ।। स्नेही (मित्रगण) साईं की कथाएं कहते तो सुनता किन्तु उनके प्रति दोष दृष्टि से । स्वानुभव से पुष्टि हुए बिना सृष्टि में किसी पर विश्वास नहीं करता था ।। 30 ।। हरि कानोबा नाम था उनका । मित्रों के साथ मुम्बई से साईं की परीक्षा लेने के लिए , व पर्यटन के लिए निकले ।। 31 ।। परन्तु साईं की कला कुशलता ; जो सबके हृदय में प्रकाशित है , उनकी कुशलता , अद्भुतता कौन निश्चित रूप से जान सकता है ।।

32 ।। हरि भाऊ शिरडी के लिए निकले , साईं समर्थ कारण जान गए । केवल चमत्कार का भोक्ता है, इतनी ही पात्रता है उसकी ।। 33 ।। उतनी ही अनुभव की बानगी उन्हें दी गयी । लेकर अपने को परिपूर्ण कर लिया । उनका श्रम भी सार्थक हो गया । संत वास्तव में युक्ति प्रयोजन होते हैं ।। 34 ।। कोपरगांव में स्नेही के साथ हरिभाऊ तांगे पर बैठे । गोदावरी में स्नान किया , शिरडी के लिए अबिलब निकल पड़े ।। 35 ।। कोपरगांव से आते ही हाथ पैर धोकर हरिभाऊ संत का अवलोकन करने के लिए , मानो , निकले ।। 36 ।। पांवों में नयी चप्पलें , सिर पर जरी का फेटा बांधकर साईं बाबा का दर्शन प्राप्त करने के लिए हरिभाऊ उत्कंठित थे ।। 37 ।। फिर वे मस्जिद आ गए । दूर से साईं को देखते ही उनके निकट जाकर , इच्छा हुई , साष्टांग दण्डवत कर वंदन करने की ।। 38 ।। किन्तु चप्पलों की अड़चन थी रखने का सुरक्षित स्थान नहीं था । वहीं एक कोना देखकर वहीं किनारे रख दीं ।। 39 ।। फिर वे दर्शन करने के लिए गए । प्रेम से साई के चरणों की वंदना की । ऊदी प्रसाद लेकर वापस हुए , वाडा जाने के लिए निकले ।। 40 ।। पावों में चप्पलें डालने के लिए जाने पर ढूंढ - ढूंढ कर देखने पर भी नहीं मिली । समूल आस्था छोड़कर खिन्नवदन नंगे पांव वापस हो गये ।। 41 ।। कारण वहां बहुत लोग थे । बार - बार आ जा रहे थे । फिर वस्तुतः किससे पूछते । कुछ विचार सोच नहीं पाए ।। 42 ।। इस प्रकार उनका मन दुःखी हो गया । आँखों के सामने चप्पलें , चित्त में चप्पलों का चिंतन , सारा ध्यान चप्पलों पर ही था ।। 43 ।। कितने शौक से खरीदी थी । चप्पलें खो गयीं । अर्थात किसी चोर ने चुरा लिया । उन्हें यह निश्चय विश्वास हो गया ।। 44 ।। इस प्रकार फिर स्नान किया । पूजा नैवेद्य आदि अर्पित करके पंक्ति में बैठकर भोजन किया । पर चित्त को संतोष नहीं हुआ ।। 45 ।। सभा मण्डप साईं का स्थान है वहां साईं की दृष्टि से बचकर कौन मेरी चप्पलें ले जा सकता है ? यह क्या छोटा आश्चर्य है ? ।। 46 ।। उन्हें व्याकुलता थी । चित्त अन्नपान पर नहीं था । मंडली के साथ बाहर आए । हाथ मुंह धोने के लिए ।। 47 ।। इतने में एक मराठी बालक खोयी हुई चप्पलों का झंडा, एक डंडे के सिरे पर लटका कर, अचानक उस स्थान पर पहुंचा ।। 48 ।। मंडली भोजन के बाद हाथ मुंह धो रही थी । लड़का ढूंढता हुआ आया , बोला , “ बाबा ने मुझे भेजा है यह डंडा हाथ में देकर " ।। 49 ।। “ हरी का बेटा जरी का फेटा ” ऐसी पुकार करते हुए जा बेटा । “ यह तो मेरी है " ऐसी उत्कंठा से जो पकड़ ले उसे दे देना " ।। 50 ।। पर जो हरि का बेटा है और जिसका जरी का फेटा है पहले यह निश्चित कर लेना अंत में बिना शोर किए दे देना ।। 51 ।।“ कान में ऐसी पुकार आने पर अपनी

आँखों से उन चप्पलों को पहचान कर हरिभाऊ दौड़ते हुए गए , मन में आश्चर्य के साथ ।। 52 ।। आँखों में आनन्द अश्रु आ गये । हरिभाऊ का गला भर आया , चली गयी चप्पलों को देखकर अत्यन्त चकित हो गए ।। 53 ।। लड़के से बोले , “ ये , ये इधर ले आओ , चप्पलें मुझे दिखाओ । देखकर बोले , “ ये तुम्हें कहां से , मुझे पूरा बताओ " ।। 54 ।। बालक बोला , “ यह मैं नहीं जानता । मुझे तो बाबा की आज्ञा माननी है जो हरि का बेटा है उसे मुझे जरी का फेटा दिखाना होगा ।। 55 ।। उसी को मैं चप्पलें दूंगा । मैं अन्य को नहीं पहचानता । जो बाबा के चिहन से संतुष्ट कर देगा वही ये चप्पलें ले लेगा ।। 56 ।। " अरे बालक ये मेरी चप्पलें हैं हरिभाऊ के कहने पर भी दिया नहीं । फिर वे बाबा के सरल चिह्न से बालक का मन संतुष्ट किया ।। 57 ।। बोले , “‘बालक मैं ही हरि हूं कान्होबा का बेटा , यह वचन सर्वथा सत्य हैं, मुझ पर ही यह सबसे ऊपर लागू होता है ।। 58 ।। अब जरी का फेटा देखो । तुम्हारे मन का संशय दूर हो जायेगा । फिर मैं ही चप्पलों का मालिक हूं प्रमाणित हो जायेगा । इस पर अन्य का दावा नहीं होगा ।। 59 ।। तब बालक समझ गया हरिभाऊ को चप्पलें दे दी । उनका मनोरथ पूर्ण हो गया अनुभव हो गया कि साईं संत है ।। 60 ।। मेरा फेटा जरी का है इसमें क्या बड़ी अद्भुतता है,वह तो मेरे मस्तक पर सर्वतोपरि दृश्यमान है ।। 61 ।। पर मैं अपने स्थान से भिन्न स्थान पर हूं शिरडी की मेरी पहली यात्रा है साईं बाबा को कैसे मालूम हुआ कि मेरा नाम हरि है ।। 62 ।। कान्होबा मेरे पिता हैं यहां निकट किसी ने नहीं देखा है । का ” इस नाम से उन्हें उपलक्षित किया गया , बहुत आश्चर्य हुआ ।। 63 ।। पूर्व में साईं संत की महत्ता , मेरे स्नेही मुझसे कहते थे उनकी वार्ता की मैं अवमानना करता था । अब मुझे पश्चाताप हो रहा है ।। 64 ।। अब मुझे अनुभव हो रहा है साईंबाबा का प्रभाव ज्ञात हुआ है । संशय शेष नहीं रहा कि श्रीसाईं महानुभाव हैं ।। 65 ।। जिसके मन में जैसा भाव हरिभाऊ को वैसा ही अनुभव हुआ । संत परीक्षण की लालसा उनका स्वभाव था । मन में परमार्थ की इच्छा नहीं थी ।। 66 ।। साईंसमर्थ महानुभाव हैं ,स्नेही व संबंधियों ने अनुभव बताया था । स्वयं अद्भुतता देखने हेतु शिरडी जाने का कारण था ।। 67 ।। संत चरणों में मन लगाकर देव का ध्यान करना थोड़ा भी मन में नहीं था । गिरगिट की दौड़ कहां तक ? ।। 68 ।। संत के द्वार पर जाकर चमत्कार देखना चाहते थे । तब उनकी खोई हुई सैंडिल वापस घर आ गयी ।। 69 ।। अन्यथा मामूली सैंडिल जाने से इतना क्या बिगड़ गया ? किन्तु उसके लिए मन व्याकुल था । वे सैंडिल के बिना नहीं रह सकते थे ।। 70 ।। संत प्राप्ति के मार्ग दो हैं । एक भक्ति दूसरा ज्ञान । ज्ञान मार्ग के लिए गहन

प्रयास । भक्ति का साधन सरल है ।। 71 ।। भक्ति ऐसी सरलता से सुलभ है तो फिर सभी उसे क्यों नहीं करते हैं ? वहां भी महाभाग्य की संपत्ति होने पर ही उसकी प्राप्ति होती है ।। 72 ।। करोड़ों जन्मों के पुण्य होने पर संतों से संबंध होता है । संत समागम का सुख मिलता है । उसी से निज भक्ति विकसित होती है ।। 73 ।। हम सब की जानने में प्रवित्ति हैं उसी से आसक्ति है , निवृत्ति नहीं जानते । ऐसी जहां मन की वृत्ति है, उसे क्या भक्ति कहेंगे ।। 74 ।। जैसी - जैसी हमारी भक्ति वैसी ही हमारी प्राप्ति । यह तो कभी भी घटित होना निश्चित है, इसमें तिलमात्र भ्रांति नहीं है ।। 75 ।। रात दिन विषय भोग के लिए हम साईं के पास गये हैं । तो बदले में प्राप्ति भी हमें वैसी ही होगी । परमार्थियों को परमार्थ ।। 76 ।। अतः अब एक और कथा । सोमदेव नामक स्वामी साईं की परख करने शिरडी में प्रत्यक्ष पहुंचे ।। 77 ।। सन् 1906 में उत्तरकाशी में धर्मशाला में रह रहे गृहस्थ भाई जी से भेंट हो गयी ।। 78 ।। प्रसिद्ध कैलासवासी दीक्षित , भाई जी उनके नामी भाई थे । बद्री केदारनाथ की यात्रा करते मार्ग में उनसे भेंट हो गयी ।। 79 ।। बद्रीकेदार के बाद भाई जी फिर नीचे उतरे । जगह - जगह विश्राम करने के स्थान लगे थे यात्री बैठे दिखे ।। 80 ।। उन्हीं में से एक बाद में हरिद्वार के स्वामी नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध हुए । बाबा से जुड़े ।। 81 ।। उनकी ही बोधप्रद कथा है । बाबा का स्वरूप स्पष्ट करती है । श्रवणकर्ता को प्रसन्नता देगी । सभी को निज आनंद होगा ।। 82 ।। प्रातः शौच आदि के लिए भाई जी के जाते समय इन स्वामी जी से भेंट हो गयी । सहज ही बोलते - बोलते आपस में प्रेमभाव उत्पन्न हो गया ।। 83 ।। गंगोत्री के नीचे का क्षेत्र है । स्वामी उत्तर काशी में रहते थे । देहरादून से सत्तर कोस है जहां उनकी भेंट हुयी ।। 84 ।। लोटा लेकर खुले में प्रातः समय बुवा निकले थे । भाई भी उसी जगह उसी काम से जा रहे थे ।। 85 ।। पहिले दोनों में देखा देखी हुई । बाद में मार्ग में परस्पर भेंट हुयी तो परस्पर सुख संतुष्टि व कुशलता की वार्ता चलने लगी ।। 86 ।। बातचीत करते हुए परस्पर प्रेम हो गया । एक दूसरे का ठाव ठिकाना पूछने लगे ।। 87 ।। हरिद्वार में आपका वास नागपुर में मेरा वास है । कभी जब उस ओर आना हो, तो दर्शन दें ।। 88 ।। यात्रा करते जब आना हो तो, हमारा घर भी पवित्र करें। पुनः हमें दर्शन देकर थोड़ी सेवा मेरी भी लें ।। 89 ।। हमें याद रखना | हमारे घर को चरण लगावें यही हमारी प्रार्थना है । नारायण यह इच्छा पूरी करें ।। 90 ।। सन् 1906 में उत्तर काशी के नीचे परस्पर यह भाषा दोनों ने बोलकर इस तरह चले गए ।। 91 ।। परस्पर ठाव ठिकाने पूछे , फिर खुले मैदान में पहुंचकर दोनों ने एक दूसरे से विदा ली ।। 92 ।। पांच वर्ष का समय व्यतीत हुआ । साईं

समागम की बेला आयी । स्वामी जी को भाई जी से भेंट करने की तीव्र इच्छा हुई ।। 93 ।। सन 1911 में स्वामी जी नागपुर आए । वहां श्रीसाईंनाथ की पवित्र कथा सुनकर आनंदित हो गए ।। 94 ।। भाई जी ने सिफारिशी पत्र दिया । सुख से शिरडी क्षेत्र में पहुंचने की सभी तैयारी करके स्वामी जी ने नागपुर छोड़ दिया ।। 95 ।। उनके मनमाड उतरने पर कोपरगांव के लिए गाड़ी तैयार थी वहां तांगे पर सवार होकर आनंद से दर्शन के लिए निकले ।। 96 ।। कहीं भी जायें साधु का आचरण , उनका रहन - चलन , एक का एक, दूसरे का अन्य । कहीं एक समान नहीं होता ।। 97 ।। एक संत का आचरण दूसरे संत के लिए प्रमाण नहीं होता । योग्य अयोग्य का अनुमान करने का साधन यह नहीं है ।। 98 ।। पहले तो, संत दर्शन के लिए जाते यह उनकी विवंचना किसी अर्थ की। उनके रहन सहन देखना चाहे, तो अपना कल्याण खो देंगे ।। 99 ।। स्वामी जी के मन की रचना ऐसी थी कि उसमें तर्क कुतर्क नाना उठते । दूर से शिरडी की ध्वजा दिखते ही स्वामी जी की कल्पना चलने लगी ।। 100 ।। उनके साथ होने वाले लोग मस्जिद के कलश का निशान दूर से देखते ही प्रेम से वंदन किए ।। 101 ।। बाद में साईं दर्शन होगा, इसलिए मन यद्यपि उत्कंठित था, पर वहां निशान दिखने पर उसकी अवमानना भी नहीं कर पा रहे थे ।। 102 ।। निशान दर्शन से प्रेम स्फुरण का अनुभव सर्वत्र ज्ञात है, यह तो प्रेम व भक्ति का लक्षण है कुछ भी विलक्षण इसमें नहीं है ।। 103 ।। पर स्वामी के कुत्सित मन में दूर से उस निशान को देखकर शंका पर शंका उठती जा रही थी । मन की विचित्र रचना ।। 104 ।।" ध्वजों के लिए मन लालसा , क्या यह साधुत्व का तरीका है । मंदिर के ऊपर ध्वज फहराया जाये यह तो साधुत्व का हीन पन है ।। 105 ।। साधु इस प्रकार मान मांगे यह तो उसकी केवल प्रसिद्धि की लालसा है । ऐसा साधुत्व मन को प्रभावित नहीं करता, यह उनकी कमी है ।। 106 ।।" सारांश यह कि जैसा मन का विचार , साधु के निर्णय में तैसा आग्रह । स्वामी के मन में निर्णय हुआ कि मुझे साईं का अनुग्रह नहीं चाहिए ।। 107 ।। व्यर्थ में आया मैं यहाँ तक । स्वामी में बहुत अनादर उपजा । वहीं से वापस होने का निर्णय, फिर, तुरन्त कर लिया ।। 108 ।। " कीर्ति की इच्छा में दुरभिमान होता है। साधु को कैसा मान चाहिए ? इस ध्वज को देख कर मुझे अन्य कोई कारण समझ नहीं आता ।। 109 ।। निशान में अपना बड़प्पन साधु दर्शाना चाहता है । यही संतत्व की कमी है । मैं दर्शन के लिए क्यों जाऊँ ।। 110 ।। ऐसे दर्शन प्राप्त करके मन को शांति कैसे प्राप्त होगी। यह तो दंभ ध्वज प्रदर्शन है । इससे संतुष्टि नहीं है ।। 111 ।। इसलिए वापस जाऊँ जिस रास्ते से आया हूं अपने घर। यह विचार अच्छा नहीं है । मैं

बिल्कुल ठगा गया हूं ।। 112 ।। " साथियों ने फिर उनसे कहा , " इतनी दूर क्यों आए ? केवल निशान से चित्त वृत्ति में ऐसी खलबल क्यों ? ।। 113 ।। अब हम निकट आ गए हैं । रथ पालकी घोड़ा सब वस्तुएं देखेंगे तब कितनी परेशानी होगी ।।" 114 ।। यह सुनकर स्वामी अधिक बिगड़ गए । "जिसे नगाड़े पालकी घोड़े की इच्छा हो, ऐसे साधु जो स्वयं को बड़ा समझते हैं, क्या मैंने कम देखे हैं ।। 115 ।।" ऐसे विचार मन में लिए सोमदेव जी वापसी के लिए मुड़े ।" शिरडी का विचार अच्छा नहीं है । नदी का रास्ता धरा जाये ।। 116 ।।" फिर बराबर के सहयात्री उनसे आग्रह करने लगे ।" आप यहां तक आ गए हैं वापस न लौटिए ।। 117 ।। जैसे आये हैं थोड़ा आगे चलें । ऐसा कुतर्क न करें । यह निशान जो मस्जिद में लहरा रहा है साधु से संबंध नहीं है ।। 118 ।। इस साधु को ध्वज की आवश्यकता नहीं है । न कीर्ति की न मान की आवश्यकता है । गांव वालों को भूषण अच्छा लगता है यह कारण भक्ति का प्रमाण है ।। 119 ।। तुम निशान को मत देखो । जाओ सीधे दर्शन प्राप्त करो । एक क्षण भी तुम रुकना नहीं । जाकर वापस लौट आओ ।। 120 ।।" इतने में शिरडी निकट आ गया । उस सरल उपदेश को सुनकर लगा , " मन की उथल - पुथल को निकाल फेकें । पुनः पाश्चाताप नहीं होगा " ।। 121 ।। इस प्रकार श्री समर्थ का दर्शन किया । बुवा द्रवित हो गए । प्रेम से आँखों में आँसू आ गये । कंठ भाव विभोर होकर रुंध गये ।। 122 ।। चित्त सुप्रसन्न हो गया । नयन उल्हास से सुख संपन्न हो गए । उनका चरण स्नान ऐसा कब हुआ था ।। 123 ।। वे स्थिर रूप देखते रहे । मन व नयन स्थिर हो गए । एक टक देखते रह गए । मोह के वशीभूत हो गए ।। 124 ।। मन के कुतर्क समाप्त हो गए । चित्त दर्शन के आनन्द से द्रवित हो गया । सगुण रूप नयनों में बस गया । बुवा तल्लीन हो गये ।। 125 ।। महात्मा को आँखों से देखकर सोमदेव को परम आह्लाद हुआ । आत्माराम को विश्राम मिला । उसी स्थान पर बसने का मन हुआ ।। 126 ।। दर्शन से विकल्प का समाधान हो गया । बुद्धि वहीं जकड़ गयी । भेदभाव समस्त दूर हो गया । अन्दर बाहर एकाकार हो गया ।। 127 ।। वाणी भी निःशब्द होकर मौन हो गयी । आँखें पलक झपकना भूल गयीं । अन्दर बाहर चैतन्यघन हो समरसता में संतुष्टि हो गयी ।। 128 ।। निशान देख कर पहले मुड़ गए | बाद में आँखें प्रेमाश्रु से भर आयीं । सात्त्विक अष्टभाव उमड़ आया । बाबा के प्रेम से चारों ओर से पूर्ण रूप से बंध गए ।। 129 ।। जहां मन पूर्ण रंग जाये | उसी को अपना स्थान समझो । निजगुरु के ये बोल स्मरण हो आए । बुवा प्रेम से भावविभोर हो गये ।। 130 ।। बुवा धीरे धीरे (हौले - हौले) आगे आते, त्यों त्यों महाराज को क्रोध चढ़ता

| गालियों की बौछार बहती, त्यों त्यों उनकी प्रीति दुगुनी होती ।। 131 ।। समर्थ बाबा की करनी असाधारण थी । उनकी तो विलक्षण रीति थी । नरसिंहावतार साक्षात व पूर्ण था ।। 132 ।। " हमारा ढोंग हमारे पास रहने दो ," बोले ," चल जा घर । खबरदार मेरी मस्जिद में यदि तूं पुनः आया ।। 133 ।। जो मस्जिद में निशान लगाए हो , उसका दर्शन कैसे होना चाहिए । यह क्या संत के लक्षण हैं । यहां एक क्षण नहीं गवांना चाहिए ।। 134 ।।" इस प्रकार शंका भरे चित्त से स्वामी सभा मण्डप में प्रवेश किए, दूर से ही साईं की मूर्ति देखकर स्वामी शान्त नहीं रह सके ।। 135 ।। यह अपने ही विचारों की प्रति ध्वनि शब्दतः जो कानों से टकरायी, बुवा उसी स्थान पर शर्माए । "महाराज अन्तर्ज्ञानी हैं " ।। 136 ।। मैं कितना बुद्धिहीन हूँ, महाराज कितने प्रबुद्ध हैं। मेरी कल्पना कितनी विरुद्ध, उनका हृदय कितना शुद्ध।। 137 ।। साईं किसी को आलिंगन देते । किसी को हाथ से स्पर्श करते । किसी को आश्वासन देते । किसी पर कृपावलोकन करते ।। 138 ।। किसी को मुस्कराते मुख से देखते किसी के दुःख में सांत्वना देते किसी को ऊदी प्रसाद दान । सभी को संतुष्ट करते ।। 139 ।। ऐसे में मुझ पर क्रोधित होना लगता है मेरे व्यवहार के कारण है । क्रोध नहीं मेरे लिए बोध है । वह सुख दायी होगा ।। 140 ।। इस प्रकार बाद में वैसे ही हुआ । स्वामी बाबा के पास ही रम गए । साईं कृपा से निर्मल हो गए । निरंतर चरणों में रहने लगे ।। 141 ।। साईं की भक्ति की महानता व शक्ति से दुर्वासना व मत्सैर्य दूर भागे । शांति श्री धैर्य उत्पन्न हो । निज भक्त के सभी कार्य पूर्ण हों ।। 142 ।। यह चराचर गंधर्व यक्ष सुरासुर से भरा है , यद्यपि वह विश्वंभर अखिल विश्व में निरंतर व्याप्त है ।। 143 ।। पर यदि आकार न स्वीकारता सदैव निराकार रहता । हम मानव , जो साकार हैं , का लेशमात्र उपकार न होता ।। 144 ।। तात्पर्य यह कि साईं लीला से शरीर धारण करके लोक संग्रह न करते (मार्ग दर्शन) अथवा दुष्टों , दुर्जनों का विरोध न करते तो भक्तों पर कैसे अनुग्रह करते ।। 145 ।। अध्याय समाप्त होने को आया तो एक वृत्तांत मुझे स्मरण हो आया । साईं सदुपदेश का उदाहरण है, जो मानेगा उसके लिए हितकारी होगा ।। 146 ।। वृत्तांत अति संक्षिप्त है । स्मरण रहेगा तो कल्याण होगा । इसलिए श्रोताओं से विनती करता हूं क्षण भर अन्तःकरण मुझे दे दें ।। 147 ।। एक बार भक्त म्हालसापति के साथ नाना साहेब मस्जिद में बैठे हए थे । जो चमत्कार घटित हुआ उसे सुनें ।। 148 ।। समर्थ साईं के दर्शन को उत्सुक कोई एक श्रीमान गृहस्थ वैजापुर निवासी , वहां परिवार के साथ पहुंचे ।। 149 ।। स्त्रियों का बुर्का देख नाना अपने मन में संकोच करने लगे । उनकी संतुष्टि के लिए जगह

देने के लिए स्वयं उठ कर जाने को हुए ।। 150 ।। इसलिए नाना उठकर जाने लगे तो बाबा ने उनसे कहा , “ आने वाले ऊपर आ जायेंगे तुम शांत मन से बैठो ” ।। 151 ।। “ये भी दर्शनार्थ आए हैं, आएं , कोई रोक टोक नहीं है " ऐसा किसी ने उन् गृहस्थ को सुझाव दिया । ऊपर आकर साईं की वंदना किए ।। 152 ।। उनमें से एक महिला ने वंदना करते समय बुर्का हटाया । अति सुसज्जित सौन्दर्य को देखकर नाना अपने मन ही मन मोहित हो गए ।। 153 ।। लोगों के समक्ष देखने को छिपाना चाहते किन्तु देखे बिना मन नहीं मानता । कैसे क्या करें । मोह प्रबल था ।। 154 ।। मन में बाबा की बड़ी लज्जा थी । इसलिए वे मुख ऊपर नहीं उठा रहे थे । दृष्टि अपने को भूलकर वहीं लग जाती । तब नाना संकट में पड़ गए ।। 155 ।। सभी के मन में रहनेवाले बाबा जान गये । अन्य को उसका आभास नहीं हुआ, वे तो शब्दार्थ से ही समझते ।। 156 ।। नाना की ऐसी बाबरी वृत्ति बाबा ने अपने मन से जानकर उसे अपने स्थान पर वापस लाने के लिए जो उपदेश किया उसे सुनें ।। 157 ।। **“ नाना किसलिए मन में गड़बड़ है । जिसका जो धर्म है, शांति से उसके व्यवहार करने में किसी को रुकावट नहीं डालनी है । उसमें कोई हानि नहीं है ।। 158 ।। ब्रह्मदेव ने सृष्टि की रचना की है, हम उस पर कौतुक नहीं करेंगे तो देखने की रसिकता व्यर्थ होगी । बनते बनते बनेगा ।। 159 ।। " आगे का द्वार खुला हो तो पीछे के द्वार से क्यों जाना । जहां एक शुद्ध मन है वहां कोई संकट नहीं है ।। 160 ।। कुविचार मन में न हो , उसको क्या किसी से छिपाना । दृष्टि को दृष्टि का कर्तव्यकरने दो । यहां फिर उपेक्षा क्यों ? " ।। 161 ।।** वहां माधवराव थे वे जिज्ञासु प्रवृत्ति के थे । अपनी जिज्ञासा की पूर्ति के लिए नाना से उस बोल का भाव पूछा ।। 162 ।। इस प्रकार माधवराव के पूछने पर नाना ने कहा अभी रुको । वाडे में जाते हुए मार्ग में बाबा का मनोगत बताऊंगा ।। 163 ।। कुशल क्षेम वार्ता समाप्त होने पर साईं समर्थ का अभिवंदन करके नाना अपने स्थान को वापस हुए तब माधवराव साथ हो लिए ।। 164 ।। तब नाना से तत्काल पूछा , “ नाना “ बनते बनते बनेगा ” आदि बाबा के बोल का स्पष्ट अर्थ क्या बताएंगे " ।। 165 ।। मन अर्थ बताने का नहीं हुआ । बहुत टालमटोल कर दिये । उससे माधवराव का मन अशान्त हो गया अधिक संशय का जन्म हुआ ।। 166 ।। फिर हृदय को खोल कर नाना ने जो घटित हुआ वहां , वह सब माधवराव को बताया । उनकी समस्या टल गयी ।। 167 ।। बाबा कितने दक्ष हैं । किसी का कहीं भी ध्यान जाये वे तो स्वयं अन्तःसाक्षी हैं, उन्हें सब प्रत्यक्ष हो जाता है ।। 168 ।। ऐसी संक्षिप्त व अभिनव वार्ता को सुनकर श्रोता आश्चर्य करेंगे । इसका निहितार्थ

देखें तो बहुमूल्य स्थैर्य व गंभीरता है ।। 169 ।। मन जाति से चंचल है । उसे उच्छृखल नहीं होने देना चाहिए । इन्द्रियों में खलबल हो किन्तु शरीर को उतावला नहीं होने देना चाहिए ।। 170 ।। इन्द्रियों का भरोसा नहीं है । विषयों की लालसा नहीं करनी चाहिए । हौले - हौले अभ्यास करने से चंचलता का निरसन होगा ।। 171 ।। इन्द्रियों के अधीन नहीं होना चाहिए । उन्हें भी सर्वथा दबाते नहीं रहना चाहिए । प्रसंग देखकर विधिपूर्वक उनका नियमन करना चाहिए ।। 172 ।। रूप तो दृष्टि का विषय है वस्तु के सौन्दर्य को निडर होकर देखना चाहिए उससे लाज का क्या कारण है ? दुर्बुद्धि को स्थान मत दो ।। 173 ।। मन को वासना रहित करके ईश्वर की कृति का निरीक्षण करें । सहज ही इन्द्रिय दमन होगा । विषय सेवन का विस्मरण होगा ।। 174 ।। रथ को इष्ट स्थान तक ले जाने का जैसे मूल कारण सारथी होता है । वैसे ही हितकारिणी बुद्धि इन्द्रियों का नियन्त्रित करने में दक्ष होती हैं ।। 175 ।। सारथी रथ को नियन्त्रित करता है । बुद्धि भी इन्द्रिय दमन करके शरीर के स्वेच्छा गमन व मन की अनुचित चंचलता का निरोध करती है ।। 176 ।। इस प्रकार से शरीर , इन्द्रिय व मन से युक्त जीव का जो भोक्तृत्व है उसके समाप्त होने पर वैष्णव पद प्राप्त हो जाता है । ऐसी सामर्थ्य बुद्धि में है ।। 177 ।। चक्षु आदि इन्द्रियां भिन्न - भिन्न स्थानीय घोड़े हैं । रूप रस आदि जो विषय हैं ,वे नर्क को ले जाने वाले मार्ग हैं ।। 178 ।। यत्किंचित विषयों की अभिलाषा होने पर आध्यात्मिक सुख का नाश हो जाता है । इसलिए पूर्णरूप से इनका त्याग कर दो तभी तुझे मोक्ष लाभ होगा ।। 179 ।। यद्यपि बाह्य इन्द्रियां निवृत्त हो गयीं हो अन्तःकरण आसक्त हो तो जन्म मरण का अन्त नहीं होता है । विषय अत्यन्त घातक है ।। 180 ।। विवेकी सारथी मिल जाये तो विवेक से लगाम हाथ में रखेगा । इन्द्रिय रूपी घोड़े स्वप्न में भी लेशमात्र भी कुमार्गी नहीं होंगे ।। 181 ।। ऐसा मन को संतुष्ट करने वाला , निग्रही , दक्ष , कुशल चतुर सारथी भाग्य से मिल जाये तो विष्णुपद कैसे दूर है ? ।। 182 ।। वही पद परब्रहम है उसका दूसरा नाम “ वासुदेव ” है वही सर्वोत्कृष्ट परम पद सर्वोच्च परमधाम है ।। 183 ।। इस प्रकार यह अध्याय पूर्ण हुआ । इससे भी मधुर अगला अध्याय है । सद्भक्तों के मन को लीन कर देगा । क्रम से श्रवण करें ।। 184 ।। इस प्रकार अन्त में हेमाड आभार पूर्वक मस्तक अर्पित करते हैं उन सद्गुरु के चरणों में जो बुद्धि प्रेरक है , सारे जगत के संचालक हैं ।। 185 ।। स्वस्ति श्रीसंत सज्जन प्रेरित , हेमाडपंत विरचित " श्रीसाईं समर्थ सच्चरित ” का “ संत परीक्षण - मनोनिग्रह " नामक उन्चासवां अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय पचासवां (अज्ञाननिरसन)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईनाथ को नमन ।।

जन्मदाता माता - पिता के उपकार का अन्त नहीं है, मुझे मानव देह प्रदान किया । उनके पेट की आंत के कीड़े के रूप में नहीं पैदा हुआ ।। 1 ।। न मां के उदर को पीड़ा पहुंचाई अंधा , पशु , काना , कोतरा , गूंगा , बहरा होकर जन्म लेकर । पूरा स्वस्थ शिशु के रूप में जन्म लिया ।। 2 ।। जिनके चरणों की वंदना देव भी करते हैं, ऐसा जो उत्तम ब्राह्मण वर्ण है, वहां मैं ईश्वर की कृपा से अवतीर्ण हुआ । पूर्ण भाग्य है ।। 3 ।। प्रत्येक जन्म में माता पिता होते हैं । करोड़ों बार जन्म लेते हैं । पर इस जन्म - मरण को रोकने वाले का मिलना अत्यन्त कठिन है ।। 4 ।। जो जन्मदाता है वह पिता होता है, दूसरा जनेऊ संस्कार कराता है । तीसरा वह जो अन्न प्रदान कर पालन - पोषण करता है और चौथा भय व कठिनाईयों से मुक्त करवाता है ।। 5 ।। जग में ये सब समान हैं । किन्तु कृपालु सद्गुरु बिना खरा जनक अन्य नहीं है । अद्भुत लीला को देखें ।। 6 ।। जननी की योनि में वीर्य निक्षेपित करके योनिद्वार से जन्म देने वाला तो केवल लौकिक पिता है सद्गुरु आलौकिक जनन करते हैं ।। 7 ।। वह वीर्य कण दिए बिना नीच योनिद्वार बिना अपने पुत्र का जनन करके पूर्ण अनुग्रह करते हैं ।। 8 ।। जन्म - मरण से मुक्त करने वाले करुणाघन ज्ञान प्रकाशक वेद गुह्य सच्चित्प्रतिपादक सर्वव्यापक उस गुरुवर को नमन है ।। 9 ।। संसार तम के दिनकर , आत्म अनुभव संत शेखर , भक्तचित्त चकोर चन्द्र कल्पतरुवर गुरुवर को नमन है ।। 10 ।। गुरुराया की महिमा अगाध है । वर्णन करने में वाणी अभिमान त्याग देती है । अच्छा हो गूंगे के समान गुरुचरणों में अपना सिर नीचे झुका लें ।। 11 ।। पूर्ण पूर्व जन्मों में तप संपन्न हुए बिना किसी को संत दर्शन नहीं होता जो त्रिताप निरसन कारक है ।। 12 ।। परमार्थ , मोक्ष या निजहित साधने का जिनका उद्देश्य है उसे संत से अंकित होना चाहिए फिर उसमें यत्किंचित कमी नहीं रह जायेगी ।। 13 ।। धन्य धन्य संत संगति उसकी महानता का क्या वर्णन करुं उससे सद्भक्तों को विवेक विरक्ति परमशांति मिलती है ।। 14 ।। साईं केवल चैतन्य मूर्ति , अव्यक्त से वह व्यक्त होकर आए , उनकी निर्विषय स्थिति को कौन

निश्चित रूप से वर्णित कर सकता है ।। 15 ।। श्रद्धालु भक्तों व प्रिय श्रोताओं के प्रति वह कृपालु , प्रेम से रसमय निज चरित बोलते हैं। उनके लिए यह केवल मंदिर है ।। 16 ।। जिनके सिर पर हाथ पड़ता अहंभाव चूर हो जाता । 'सोहम ' भाव का गजर चलने लगता । दृश्य जगत आनंद निर्भर हो जाता ।। 17 ।। मुझ पामर में क्या शक्ति कि उनकी कीर्ति का वर्णन करूं । यह तो उनकी भक्त प्रीति है कि पोथी को कृपा करके प्रकट किया ।। 18 ।। उन साईं चरणों में साष्टांग प्रणाम करता हूं श्रोतागणों का अभिवंदन करता हूं साधुसंत सज्जनों को नमन करता हूं । सभी का प्रेमालिंगन करता हूं ।। 19 ।। सहज हंसते - खेलते वार्तालाप किया करते । जिन के गर्भ में संपूर्ण नीति होती । जो नित्य शांति का आभूषण धारण किए थे, जिनका ध्यान महानुभाव करते ।। 20 ।। उनकी सूर्य से उपमा नहीं की जा सकती है, क्योंकि सूर्य तो डूब जाता है। चन्द्र से उपमा करूं तो, वह क्षय होता है । यह साईं सदैव संपूर्ण हैं ।। 21 ।। उनके चरणों में हेमाड विनीत है । प्रेम से श्रोताओं से विनती करता है कि वे श्रद्धायुक्त होकर कथा का श्रवण करें । दत्तचित्त हो आनन्द लें ।। 22 ।। उत्तम भूमि जोतकर बीज डालकर ढक दिया गया है पर आप कृपाघन की वर्षा न हुयी तो क्या वह फसल उग सकेगी ।। 23 ।। कानों में संत कथा पड़ने पर पाप की कहानी शेष नहीं बचती। कथा श्रवण से पुण्य अंकुरित होता है । इस पर्व का लाभ उठाओ ।। 24 ।। सालोक्य आदि चार मुक्तियां हैं (सालोक्य , सामीप्य , सारूप्य , सायुज्य) उनमें मेरी आसक्ति नहीं है उन साईं की निश्चल भक्ति से जुड़ जाऊं हमारी यही परम प्राप्ति है ।। 25 ।। हम मूल से बंधे नहीं हैं , मुक्ति से हमारा क्या संबंध । साईं भक्ति का उद्बोध हो उसी से अंतर शुद्ध हो जायेगा ।। 26 ।। जहां ' मैं ' ' तू ' पन की स्फूर्ति नहीं है ऐसी जो वह “ सहज” स्थिति है । हमारी उनमें अभेद भक्ति है । यही साईं से मांगता हूं ।। 27 ।। अब श्रोताओं से यही विनती है । हाथ में लेकर ग्रंथ पढ़े । वाच्य वाचन और वाचक व्यक्ति में एकात्म स्थिति देखें ।। 28 ।। हेमाडपंत को छोड़ो , यह इस सच्चरित का कर्त्ता नहीं है केवल भक्तों के निज हितार्थ एक कारण निमित्त है ।। 29 ।। भाग्यवश मिली शीप को त्याग देते हैं, उनके हाथ से मोती निकल जाता है । इस पीपल की उत्पत्ति का क्या करेंगे (पीपल सांसारिक वृक्ष जिसकी जड़ें ऊपर शाखाएं नीचे होती हैं) अपने कल्याण के विषय के प्रति उदास नहीं होना चाहिए ।। 30 ।। यहां शब्द में मात्रा लगाने वाला साईं के अतिरिक्त कोई नहीं है । वही श्राव्य , श्रवण व श्रोता है। इस एकात्मता को चूकना नहीं चाहिए ।। 31 ।। कम से कम वह वाचन नहीं है जहां कान श्रवणको समर्पित नहीं हैं । जहां वृत्ति की एकतानता नहीं है , शब्दार्थ की

परख कौन करेगा ।। 32 ।। श्रवण में निरभिमानता धारण करें। श्रोता ही साईं है, यह भाव चित्त में होना चाहिए तभी उस श्रवण की सार्थकता है। अखंड अद्‌वैतता रखनी चाहिए ।। 33 ।। तभी सकल इन्द्रियों की प्रवृत्ति निश्चित रूप से साईंरूप होगी । जल में जलतरंग की स्थिति ऐसी वृत्ति समरस हो जाती है ।। 34 ।। तभी ज्ञानियों को परमार्थ बोध विनोदियों को विनोद का आमोद , काव्यरस के ज्ञानी को ग्रंथ में पद प्रबंध का यह आनन्द सभी को होगा ।। 35 ।। इस प्रकार पहले इस सच्चरित में अध्याय उन्तालीस में समर्थ ने जो एक निज भक्त के लिए उत्तम उपदेश किया था ।। 36 ।। वे भक्त बाबा के पास थे । ' भगवद्‌गीता ' के चौथे अध्याय का आरंभ से आवर्तन उस समय कर रहे थे ।। 37 ।। एक ओर चरण सेवा कर रहे थे , मुख से धीरे पाठ बोल रहे थे । बोलकर तैतीसवां समाप्त किया । चौतीसवां बोलने के लिए लिया ।। 38 ।। निश्चल मन से लय होकर मन ही मन बोल रहे थे। इसलिए लोगों को नहीं ज्ञात हो पा रहा था कि कहां से क्या है ।। 39 ।। बोलने के लिए चौतीसवां लिया कि साईंनाथ के मन आया कि अब यहां अनुग्रह करना चाहिए, उत्तम भक्त को सन्मार्ग दिखाने के लिए ।। 40 ।। उन भक्त का नाम था नाना । तब बाबा ने उनसे कहा , “ नाना , क्या रे मन मन में बुदबुदा रहे हो । क्यों न मुख से स्पष्ट बोलते हो रे ।। 41 ।। कब से मुंह देख रहा हूं । कुछ बुद बुद चल रहा है, पर आवाज स्पष्ट नहीं हो रही है। ऐसा गुह्य क्या है रे “।। 42 ।। फिर नाना स्पष्ट बोले । गीता का पाठ कर रहा हूं । अन्यों को परेशानी न हो इसीलिए यह बुदबुदाहट है ।। 43 ।।“ इस प्रकार वह लोगों के लिए ठीक है । पर मेरे लिए तो स्पष्ट बोला करो । तुझे देखू कि पाठ तुम समझ पा रहे हो कि नहीं” यह स्पष्ट श्री साईं ने कहा ।। 44 ।। फिर नाना ने प्रणिपात करके उच्च स्वर में श्लोक पढ़ा , " तद्‌विद्‌धि प्रणिपातेन---- ।“ सुनकर बाबा को संतुष्टि हुई ।। 45 ।। फिर इस श्लोक का अर्थ पूछा । पूर्व आचार्यो द्‌वारा कथित अर्थ जैसा सुना था नाना ने कहा | बाबा ने माथा हिलाया ।। 46 ।। पुनः नाना से प्रश्न करते हैं “ उपदेक्ष्यंति ते ज्ञानं ” नाना इस तीसरी पंक्ति को देखो । उस पर मनन करो ।। 47 ।। “ उसमें ' ते ' अक्षर को न पढ़कर उस स्थान पर ' अ' कार अर्थ लगाएं, तो ' अज्ञान ' पद में अर्थ की व्यवस्था करें । देखो क्या पलट जाता है ।। 48 ।। “ शंकरानंद ज्ञानेश्वर आनंदगिरि श्रीधर और मधुसूदन आदि भाष्यकारों ने ज्ञान पर जो अर्थ किया है ।। 49 ।। वह सभी को मान्य है, वैसा ही मुझे भी मालूम है । पर अवग्रह से होने वाले कौतुक को जानते हुए क्यों व्यर्थ चुप रहें ।। 50 ।। ऐसे साईं कृपाघन कहकर चकोर -चातक रूपी भक्तों के कारण जिस बोधामृत कण की वर्षा की उसका निरूपण पूर्व में

(अध्याय उनतालीसवां) हो चुका है ।। 51 ।। परन्तु आश्चर्य है कि साईं लीला " (संस्थान की द्विमासिक पत्रिका) के पाठक इस अर्थ के पूर्ण कौतुक को नहीं समझ पाए । सशंकित रह गए ।। 52 ।। इस प्रकार उनका समाधान करने के लिए सप्रमाण एक और प्रयत्न ' अज्ञान ' के प्रतिपादनार्थ करता हूं ।। 53 ।। बाबा का कहां से संस्कृत ज्ञान था, ऐसी भी शंका किसी को हो सकती है । जान लो कि संत के लिए कुछ भी अज्ञात नहीं होता । शंका का कारण कुछ और है ।। 54 ।। " एकेन ज्ञातेन सर्वं हि विज्ञातं भवति " एक का ज्ञान हो जाने पर सब ही जान लिया जाता है । श्रुतिवचन के इस प्रमाण को कौन नहीं मानता । साईं को अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) ज्ञान था ।। 55 ।। जैसे हथेली पर आंवला वैसे संपूर्ण विश्व उन्हें दृष्टिगोचर था । उन संतों को क्या नहीं मालूम, जो सूर्य के भी प्रकाशक हैं ।। 56 ।। जिनके पास यह ज्ञान है उनमें कहां अज्ञान शेष रहेगा । वे विद्याओं से अवगत होते हैं, ऐसा जानो । संस्कृत का क्या महत्व ।। 57 ।। इस प्रकार साईं लीला मासिक के कुछ पाठक बोले , " नाना अप्रमाणिक हैं । उनकी यह अपनी कल्पना है । अज्ञान व्यंजक अवग्रह अनावश्यक है ।। 58 ।। उन्होंने ही रचना की है काल्पनिक कहानी की , अवग्रह समन्वित अज्ञान काण्ड की । व्यर्थ में यह वादवितंड उठाया , अपने ज्ञान का अखंड प्रदर्शन करने के लिए ।। 59 ।। न होते हुए भी अवग्रह को प्रस्थापित करके ज्ञान की जगह अज्ञान की खोज कर दी । ऐसा कुछ कि गीता के अर्थ का विपरीत हो गया ।। 60 ।। परन्तु वस्तुस्थिति को देखें । मन में सूक्ष्म विचार करें । साईं लीला के उन्तालीसवें अध्याय में कुछ विसंगति नहीं कही गयी है ।। 61 ।। नाना प्रामाणिक या अप्रामाणिक है ; किसी की कुछ भी कल्पना हो । किन्तु उनके कथन को वृथा ' बकझक' नहीं करना चाहिए ।। 62 ।। नाना के प्रति द्वेष को छोड़ दें । पाठक विकार के वश में न होकर, दृष्टिदोष को दूर करलें। अशेष निर्दोष दिखेगा ।। 63 ।। साईं लीला के सर्वोत्तम उन्तालीसवें अध्याय को पढ़े बिना, इस अध्याय में प्रवेश सुगमता से नहीं होगा ।। 64 ।। ' भगवद्गीता ' श्री कृष्ण के मुख से है चतुर्थ अध्यायी ज्ञान मुखी है चौतीसवें श्लोक में अज्ञान मुखी प्रवचन है ।। 65 ।। तद्विद्धि प्रणिपातेन , परिप्रश्नेन सेवया । उपदेक्ष्यति ते ज्ञानं , ज्ञनिनस्तत्त्वदर्शिनः ।। 66 ।। यह गीता का मूल श्लोक है उसके तृतीय चरण को देखें । ' ज्ञान ' पद के पहले एक अवग्रह (अज्ञान) बनता है देखने में ।। 67 ।। अवग्रह (अ) को मन में न लावें तो ज्ञान ही पद निःसंदेह है । इसके विरुद्ध किसी का दुराग्रह नहीं है। यही अर्थ सर्वत्र ग्राह्य है ।। 68 ।। " ज्ञानादेव तु कैवल्यम "(केवल ज्ञान से कैवल्य हो सकता है) यह श्रुति वचन सर्वत्र मान्य है । इस ज्ञान का उपदेश

तत्त्वज्ञानी ही दे सकते हैं ,यह बंधन भी अनावश्यक है ।। 69 ।। मैं आत्मा , साक्षी , निर्मल शुद्ध बुद्ध मुक्त केवल प्रत्यग्भूत चैतन्य सोज्ज्वल । अद्वयानंद से परिपूर्ण हूं ।। 70 ।। परन्तु मैं अज्ञान नहीं हूं । अज्ञान का कार्य भी मेरा नहीं है । " अयमात्मा ब्रह्म" मुझे जानो (अथर्ववेद) । मैं " प्रज्ञानमानंद " का संग्रहालय हूं (ऋग्वेद) ।। 71 ।। " अहं ब्रह्मास्मि " के नित्य स्फुरण को ही शुद्ध विद्या ' जानो (यजुर्वेद का महावाक्य) । मैं पापी अभागा देवहीन हूं इस वृत्ति को अविद्या की खान जानो ।। 72 ।। ये माया की जीवात्मा के लिए पुरातन शक्तियां हैं एक के पांव में बंधन की स्थिति है दूसरी से बंधन से निर्मुक्ति ।। 73 ।। नाम रूप सकल भ्रम है यह तो पूरा माया संभ्रम है । माया परम अनिर्वचनीय है उससे तरना बहुत दुर्गम है ।। 74 ।। कल्पना का प्रत्येक स्फुरण माया का निवासस्थान है । बद्ध मुक्त स्थिति का जनन निश्चित ही कल्पना से होता है ।। 75 ।। " ज्ञानादेव तु कैवल्यं " यह अत्यन्त सत्य श्रुति सिद्धांत है । किन्तु पाप कर्म के क्षय हुए बिना ज्ञान का उदय असंभव है ।। 76 ।। जिसे शुद्ध ज्ञान मिल गया उसका संकल्प त्यागा हुआ जान । उसे माया का बंधन नहीं और न ही वहां विकारों को स्थान है ।। 77 ।। शुकदेव जैसे परमज्ञानी को विकल्प के कारण उनको हानि हुई । विकल्प से अज्ञान प्रकट होता है, जो गुरु के अतिरिक्त किसी से समाप्त नहीं होता है ।। 78 ।। ज्ञान में संशय के प्रवेश करते ही ज्ञानी भी अभिमानी हो जाता है । जैसे बर्तन में रखे दूध में चावल का खट्टा पानी गिरने से दूध खराब हो जाता है ।। 79 ।। इसलिए पहले ' अज्ञान ' को समझो । उसके निरसन से मन शुद्ध होता है । आत्यंतिक ज्ञान प्रकट होता है अभेद समाधि प्राप्त होती है ।। 80 ।। जिसे द्रव्य वैभव का ध्यान रहता है उसका मन विषय सेवन से अतृप्त रहता है । स्त्री पुत्रों का ही अखण्ड चिंतन करता है, उसका ज्ञान अज्ञान ही है ।। 81 ।। ज्ञानी होते हुए भी ऐसा व्यक्ति जो धन , सुत , पत्नी से मोहित हो वह निजहित नहीं जानता। इसलिए जो भक्ति विहीन है उसका ज्ञान अज्ञान से आवृत है ।। 82 ।। जीव समुदाय अज्ञानयुक्त है । अज्ञान से मुक्त होकर ज्ञानी और ज्ञानातीत होना निश्चित ब्रह्म रूप है ।। 83 ।। अज्ञान के जाते ही ज्ञान प्रकट होता है ।जो क्षमाशील है वह सज्ञान है । जब तक देहाभिमान नहीं जाता तब तक वह प्रकृति (माया) के अधीन है ।। 84 ।। रामकृष्ण आदि जो अवतार हैं , सनत सनकादि ज्ञानियों में जो श्रेष्ठ हैं, उनकी आज्ञा की प्रकृति दासी है , जो औरों को वश में किये है ।। 85 ।। सभी भूतों के हृदय में होते हुए किसी को स्वरूप स्थिति नहीं ज्ञात है ऐसी ही माया की अतर्क्य स्थिति । आ वरण शक्ति अगाध है ।। 86 ।। " मैं कर्ता, मैं ही भोक्ता " इस

खोटे अहंकार को छोड़े बिना, उस हृदयस्थ की शरण में गए बिना, निज निर्मुक्तता का लाभ नहीं होता ।। 87 ।। नित्य ,अनित्य वस्तुओं में विवेचन करो। श्रवण ,मनन, निदिध्यासन करो । शम दम आदि छ : साधनाओं को प्राप्त करो । उससे अज्ञान समाप्त होगा ।। 88 ।। " सारा जग मुझसे भिन्न है" , "मैं तो अल्प व मर्यादित हूं " मैं शरीर हूं ' ऐसा भान शुद्ध अज्ञान है ।। 89 ।। वेदान्त शास्त्र ज्ञान के प्रतिपादक हैं उनमें परम करुणाकर भाष्यकारों ने विस्तार पूर्वक अनुबंध चतुष्टय के प्रकार का वर्णन किया है ।। 90 ।। ' अधिकारी ' विषय ' ' संबंध ' तीन ; कहते हैं चौथा अनुबंध प्रयोजन है । प्रयोजन में होता है विवेचन । अज्ञान का निवर्तन होने तक ।। 91 ।। जीव ब्रह्म की ऐक्यता-यही मुख्य विषय है वेदान्त का । उस ऐक्य को सिद्ध करने में जो अज्ञानता है उसका निवर्तन इसका प्रयोजन है ।। 92 ।। उस मूल अज्ञान की निवृति ही स्वरूपानंद प्राप्ति है । इसलिए युक्ति प्रयुक्ति करके अज्ञान का नाश करना आवश्यक है ।। 93 ।। जब तक भेद का निरसन नहीं , तब तक कोई भी सज्ञान नहीं हो सकता । देहाभिमान के ज्ञान का नाम पूर्ण अज्ञान है ।। 94 ।। स्वयं ज्ञानी होने का प्रदर्शन करते हैं और करते हैं अविहित (अनिर्धारित) कर्माचरण । उनका जागृत पन जल जाता है, कुंभकर्ण निद्रा में सो जाते हैं ।। 95 ।। जिनका आचरण वेदों के अनुसार नहीं है , जो वर्णाश्रम धर्म का परिपालन नहीं करते , उनके चित्त की शुद्धि का साधन एक अविद्या निरसन ही है ।। 96 ।। सत्व आदि तीन प्रकार के त्रिगुण शब्द आदि विषय नाना विकार उपस्थ और जिह्वा द्वारा ब्रह्मादि सभी ठगे गये हैं ।। 97 ।। विश्व के सभी प्राणी अनादि अविद्या रूपी माया से परिवृत्त हैं, रागद्वेष आदि विकारों से मोहित हैं, वे सब अज्ञान से आवृत हैं ।। 98 ।। अविद्या में जीव बंधा हुआ है । उसका शुद्ध रूप प्रकट करवाने के लिए अविद्या - कार्य कर्मबंध से संबंध टूटना चाहिए ।। 99 ।। जोंक गाय के दूध भरे हुए स्तनों से चिपक जाती है परन्तु उसे अशुद्धि (रक्त) अच्छी लगती है दूध की चाह उसे क्या ? ।। 100 ।। मेढक और भ्रमर को देखो । दोनों का घर सुन्दर कमल है परन्तु भ्रमर पराग में विहार करता है मेढक का आहार कीचड़ है ।। 101 ।। सन्मुख ज्ञान का भण्डार हो मूर्ख अज्ञान की ओर खिंचा चला जाता है। मूढ को अज्ञान ही ज्ञान लगता है ज्ञान के प्रवचन से उसे क्या ? ।। 102 ।। अविद्या का निर्मूलन होने पर ब्रह्म ज्ञान स्वयं प्रकट होता है इसलिए अविद्या का प्रतिपादन आवश्यक जान, आरंभ में किया जाये ।। 103 ।। एक ब्रह्मज्ञान के समान पवित्र , तीनों जगत में , अन्य कुछ नहीं है । उसका उपदेश अत्यंत महत्वपूर्ण है, उसके बिना जीवन निष्फल है ।। 104 ।। बुद्धि आदि की चेष्टा का विषय

यदि ब्रह्म होता तो कम से कम एक इन्द्रिय उसके होने को दिखाती ।। 105 ।। ब्रह्म तत्त्व बुद्धि से ग्राह्य है । " बुद्धि ग्राह्यमतींद्रिय" (भगवद्गीता) अर्थात बुद्धि द्वारा ग्राह्य है । इन्द्रियों द्वारा नहीं ; देखें । ऐसे स्मृति घोषणा करती है । परन्तु श्रुति को यह भी मान्य नहीं है ।। 106 ।। बुद्धि आदि का अभाव हो जाने पर ग्रहण का कारण अनुपलब्ध हो गया । फिर ब्रह्म के अस्तित्व भाव को मानने का स्थान शेष नहीं रहेगा ।। 107 ।। इन्द्रिय गोचर जो कुछ भी है, वही है, अन्य नहीं, यह सर्वत्र प्रसिद्ध है । तो ब्रह्म कदापि विद्यमान नहीं है ।। 108 ।। ऐसा इसका अर्थ होगा । पर इससे अनर्थ हो जायेगा | सूक्ष्म तारतम्य परंपरा के लिए बुद्धि निरंतर है ।। 109 ।। उसका प्रलय हो भी जाये तो वही एक सत्प्रत्यय रहती है । निःसंशय आत्मा विश्व का मूल है सब के लय होने पर भी उसका अस्तित्व रहता है ।। 110 ।। मटके पर पत्थर मारने पर आकार का विलय होकर खपड़े शेष बचते हैं । घट के आकार की यद्यपि निवृत्ति हो गयी होती है खपड़े घट के विद्यमान होने के प्रमाण हैं ।। 111 ।। यद्यपि घट कार्य का ध्वंस हो गया, घट के अस्तित्व का नाश नहीं हुआ । खपड़े के कारण विद्यमान होने का प्रमाण है, उसमें कार्य के अस्तित्व का अंश है ।। 112 ।। शून्य जिसका अन्त हो ऐसा लय होना किसी कार्य का नहीं होता । अस्तित्व निष्ट लय का प्रमाण है, सत्य की प्रतीति में लय सद्बुद्धि ।। 113 ।। सब तीर्थो में व्रत पावन है । पावन से पावन है ज्ञान । उसमें ब्रह्मज्ञान के बिना भजन पूजन निरर्थक है ।। 114 ।। अविद्या से चित्त मलिन रहता है । ईश भक्ति के बिना उस चित्त से मल प्रक्षालन नहीं होता । भक्ति के बिना ज्ञान नहीं उत्पन्न होता है ।। 115 ।। इसलिए पहले अज्ञान को जानो , उसका बोध , उसका निरूपण । होते होते उस बंध का निरसन हो गया । भक्ति ही उसका प्रमाण है ।। 116 ।। नवजात शिशु की आँखों में अंजन पड़ते ही वह भूमिगत धन देखने लगता है उसी प्रकार भक्ति का अवलम्बन मिलने पर अज्ञान का निरसन व ज्ञान का उदय होना है ।। 117 ।। ज्ञान ही स्वरूप प्राप्ति है उसका मूल अज्ञान निवृत्ति है । ईश भक्ति सिद्ध किए बिना माया की शक्ति नियंत्रित नहीं की जा सकती है ।। 118 ।। ज्ञान और अज्ञान एक दूसरे से मिले हुए हैं। इस मिश्रण से अज्ञान को सावधानी से बाहर निकालना चाहिए । पत्थर के टुकड़ों को बाहर छोड़कर केवल चावल के दानों को ही गर्म पानी में डालकर पकाना चाहिए ।। 119 ।। भूतों में भगवान हर जगह है , ज्ञान - यज्ञ आदि उपासना में विश्वतोमुख श्रीकृष्ण को जो देखते हैं उनका ज्ञान अज्ञान का दहन कर देता है ।। 120 ।। अब ज्ञान यज्ञ का स्वरूप - अहं ब्रह्मस्मि ' खंभ है जहां , पंच महाभूत यज्ञमण्डप, जीवेश्वर भेद पशु है जहां

।। 121 ।। पंच इन्द्रियों, पंच प्राण, इस यज्ञ की सामग्री है, मन बुद्धि रूपी कुंड में ज्ञान अग्नि का प्रदीप्तिकरण करना है ।। 122 ।। यज्ञकर्ता यजमान जीव है । अज्ञान रूपी धृत का अवदान (आहुति) करता है, आत्मानंद रस में निमग्न होना जीव का अवभृथ स्नान (शुद्धि स्नान) है ।। 123 ।। तात्पर्य यह कि अज्ञान रूपी धृत के अभाव में ज्ञान अग्नि कभी नहीं प्रकट होती जो जीव - ईश्वर के भेद को जलाकर अभेद ज्ञान प्रकट करती है ।। 124 ।। स्वच्छ दर्पण धूल से आच्छादित होता है , अग्नि का प्रकाश धुएं से ढक जाता है । वैसे ही काम क्रोध से अभिभूत अज्ञान से ज्ञान तिरोहित रहता है ।। 125 ।। चन्द्र बिंब को राहु ग्रस लेता है , अथवा शैवाल जैसे स्वच्छ जलको ढक देता है ,वैसे ही स्वयं प्रकाशित ज्ञान को माया अच्छादित कर देती है ।। 126 ।। बड़े से बड़े ज्ञानियों की मति भ्रष्ट होकर अधोगति को जाती है। उपाय जानते हैं, पर करते नहीं , यथेच्छ आचरण करते हैं ।। 127 ।। आँखें होते हुए अंधे हो जाते हैं । सत्संग छोड़कर निर्लज्जता का व्यवहार करते हैं । उसी कारण बाध्य होकर यथेच्छ आचरण करते हैं ।। 128 ।। वानप्रस्थ आश्रम से वापस गृहस्थाश्रम ग्रहण कर लेते हैं । जो नहीं करना चाहिए उसे बिना त्रुटि के करते हैं। जिस वस्तु से घृणा करते थे उसी को स्वीकारते हैं, प्रिय कहकर ।। 129 ।। प्रयत्न करके जिन्होंने पाप चुका दिए वही भाग्यवश पाप में पड़ते हैं । ऐसी स्थिति को क्या कहा जाये । यह क्या ज्ञानियों की जाति है ।। 130 ।। यद्यपि बड़ा ज्ञानी हो पाप की छाया की भी इच्छा न करता हो, वही फिर कार्य अकार्य के भेद को न जानकर , पतंगे की तरह दीपक से भ्रमित होता है ।। 131 ।। पाप करना अज्ञान है इसको वह पूर्णरूप से जानता है , परन्तु वह काम प्रवृत्ति के कारण उसका ध्यान नहीं करता है ।। 132 ।। ये सभी क्रिया कलाप केवल एक कम वासना के कार्य हैं । काम वासना सब अनर्थों का कारण है। वही क्रोधरूप में परिवर्तित होता है ।। 133 ।। इच्छा के मार्ग में अवरोध जब होता है तब वह काम क्रोध बन जाता है । पद पद पर यह मोक्ष के विरुद्ध है । यही वृत्ति ज्ञान प्रतिबंधन है ।। 134 ।। काम क्रोध जिसके दुःख से जीव जुड़ा हुआ है ,ज्ञान की पंक्ति में ब्रह्मस्वरूप के निकट वास है इसका ।। 135 ।। पानी के बिना डुबो देती है । अग्नि के बिना जला देती है । शस्त्र के बिना मार देती है । बिना डोर के बांध देती है ।। 136 ।। उनके आगे ज्ञानी भी नहीं टिकते । ज्ञानियों को दाव लगाकर चित कर देती है । इसमें महा प्रलय करने की सामर्थ्य है । पता लगे बिना प्राणी को ग्रस लेती है ।। 137 ।। चंदन वृक्ष के मूल में जैसे कालसर्प लिपटा रहता है वैसे ही काम क्रोध की गर्भ नाल ज्ञान गर्भ को लपेट कर रखती है ।। 138 ।। इन्द्रियां , बुद्धि और

मन ये उस काम के बैठने के स्थान हैं उनके योग से जीव के ज्ञान को ढक कर माया उत्पीड़न करती है ।। 139 ।। अगर तुम्हें चन्दन चाहिए तो सर्प को नष्ट करो । काम क्रोध के आवरण को हटा कर ज्ञान के खजाने को प्राप्त करो ।। 140 ।। बिना सर्प को नष्ट किए क्या कोई चंदन प्राप्त कर सकता है ? कृष्ण सर्प का संहार किए बिना गड़ा धन मिल सकता है क्या ? ।। 141 ।। वैसे ही परतत्व आत्मज्ञान पर पड़े आवरण के कारण माया को हटाना ही एक मात्र साधन है , उसके लिए ।। 142 ।। इसलिए पहले इन्द्रिय नियमन हो , उससे काम क्रोध का निर्दलन होगा । जीव काम क्रोध के अधीन है । अज्ञान ज्ञान का आवरण है ।। 143 ।। देह से इन्द्रियां सूक्ष्म हैं , मन उनसे भी परम सूक्ष्म है । बुद्धि मन से भी सूक्ष्म है । बुद्धि से भी सूक्ष्म परमात्मा ।। 144 ।। संसार के सभी धर्मों से परे ऐसा यह परम सत्य सर्वश्रेष्ठ है । वही परमहित परमात्मा है वही अमृत निजरूप है ।। 145 ।। यही तत्त्व शुद्ध, बुद्ध, नित्य मुक्त अभेदस्थित है । वही परमानंद हैं वही प्रत्यग्भूत चैतन्य है ।। 146 ।। जिसका नाम पंचीकरण है (पंच महाभूतों का निश्रण) वही माया के रूप का दर्शन है । उसको समझने के लिए एक साधन है अध्यारोप और अपवाद । (यह वेदान्त शास्त्र में एक प्रक्रिया है । अध्यारोप कहते हैं सत्य ब्रह्म के स्थान पर मिथ्या जग का आरोपण व " अपवाद " कहते हैं यह आरोप समूल मिथ्या है यह जानना) ।। 147 ।। अपंचीकृत पंचमहाभूतो में जिन्हें पंचतन्मात्रा कहते हैं उनका कार्य है आत्मा सूक्ष्म शरीरता को प्राण इन्द्रिय मन बुद्धि तक ले जाना ।। 148 ।। पंचीकृत पंचमहाभूतों को देखो वहीं से विराट उदित होता है । वह आत्मा का स्थूल देह है किसे ज्ञानी ' विराट ' कहते हैं ।। 149 ।। स्थूल -सूक्ष्म- शरीर का कारण केवल स्वस्वरूप का अज्ञान है । उसी व्यक्त को आत्मा का “ अव्याकृत ” (अव्यक्त) कारण शरीर जानो ।। 150 ।। जो ‘ कारण शरीर ' जाना जाता है वह चैतन्य का प्रतिबिम्ब है । केवल अज्ञान के कारण है। अव्याकृत अव्यक्त जो नाम है ।। 151 ।। आत्मा का अज्ञान इसका कारण है । उसे न शरीर के अंगो के साथ, न इसके बिना ही, न दोनों जानो । केवल ब्रह्म व आत्मा का एकत्व ज्ञान ही इस शरीर का निरसन कर सकता है ।। 152 ।। स्वस्वरूप में अवस्थान ही का नाम ' मोक्ष ' है । इसके अतिरिक्त मोक्ष अन्य नहीं है । स्वस्वरूपावस्थान ही मोक्ष है ।। 153 ।। केवल ब्रह्मात्मैकत्वज्ञान होने पर अज्ञान निरसन होगा । इसलिए अज्ञान को समझाने के लिए उसका निरूपण आवश्यक है, यह जानो ।। 154 ।। अविद्या के कारण ' शबल ' हुआ । उससे ब्रह्म का शबलत्व आया । उसको ' सत् ' नाम दिया । इस प्रकार वह वाणी का विषय बना ।। 155 ।। यद्यपि मूलतः वह

अतीन्द्रिय था , वाणी ने ' बुद्धिग्राह्य ' बना दिया । वहां से वह मन में प्रवेश हुआ । ' ॐकार ' का आकार लिया ।। 156 ।। इस ॐकार ब्रह्म के ध्यान के साथ ईश्वर स्मरण करते हुए जिनका देहावसान होता है उनका जन्म सार्थक होता है ।। 157 ।। इस प्रकार इस वाच्य - ब्रह्म से अव्यक्त का प्रादुर्भाव हुआ । अव्यक्त से महत्तत्व उसमें से अहंभाव उत्पन्न होता है ।। 158 ।। अहंकार में पंचतन्मात्रा होती है । उनसे पंचमहाभूत बनते हैं । पंचमहाभूतों के उदर से निश्चित रूप से जग का जन्म हुआ ।। 159 ।। अविद्या माया का रूप दर्शन है। वही इस जग का रूप लक्षण है । इस अविद्या का निरसन करने के लिए अज्ञान विवेचन आवश्यक है ।। 160 ।। अत्यन्त विशुद्ध और निर्मल जो केवल चिन्मात्र स्वरूप (चेतन) है , उससे भिन्न जो शबला है, दोनों का मिश्रण नहीं किया जा सकता है ।। 161 ।। लक्ष्य ब्रह्म तो निराला होता है । वाणी का जो विषय है वह अत्यन्त निराला है । इसीलिए अज्ञान के आवरण को उपदेश के बल पर दूर किया जाना चाहिए ।। 162 ।। निद्रा में स्वप्न आने पर आँखें न होते हुए भी मन आँख बनकर देख लेता है स्वयं अखिल त्रिभुवन । यह सब अविद्या के कारण है ।। 163 ।। वस्तु देखने में एक है किन्तु आभास में वह और है । रस्सी में सर्प को , घौंधे के खोल मैं चाँदी को आभासित देखो ।। 164 ।। देखो , केवल सूर्य की किरणें होती हैं, लोग उसे मृगजल ' कहते हैं । पर यह केवल माया का खेल है । इनके आगे ज्ञानी भी शक्तिहीन हो जाते हैं ।। 165 ।। हाथ में जलती हुई मशाल लेकर जब कोई गोल - गोल घुमाता है तब अग्नि का गोला दिखायी पड़ता है । माया की ऐसी ख्याति है ।। 166 ।। देखने में शुद्ध अग्नि होती है अग्नि का चक्र नहीं होता है । वैसे ही यह सारा माया मोह है , अस्तित्वहीन संसार की उत्पत्ति हुयी है ।। 167 ।। भ्रम को इस प्रकार सुनिश्चित कर लेने पर, तब संसार का उपरम (समापन) हो जाता है । मेरा शरीर, मेरी पत्नी,मेरा धर यह सब व्यर्थ परिश्रम है ।। 168 ।। पुत्र पशु आदि तृष्णा के पास है, इसमें पूर्ण बंधे जिन्हें ज्ञानी पडित कहते हैं , लेशमात्र सुख नहीं मिलता उन्हें ।। 169 ।। शास्त्र कुशल प्रज्ञावान , अपने समान दूसरा नहीं है, यह बड़ा अभिमान मन में हो , यह असंतुष्टि कारक है ।। 170 ।। यही माया या अज्ञान है अथवा अविद्या प्रकृति प्रधान है । आरंभ में ज्ञानी जिसका निरसन करते हैं फिर ज्ञान प्रकट होता है ।। 171 ।। यह ज्ञान तो स्वयं प्रकाश है । इसका उपदेश करने की आवश्यकता नहीं है । अज्ञान का निरसन होने पर ज्ञान का उल्हास प्रकट होगा ।। 172 ।। कोई एक रत्न तेजपुंज होता है । मिट्टी से ढक जाने पर । बर्षो वर्ष पड़ा रहे । उसका स्मरण बुझ जावे ।। 173 ।। कर्म - धर्म के संयोग प्राप्त होने पर किसी

समय हाथ लगने पर पत्थर व मिट्टी की संगति के कारण लगता है समूल दीप्ति खो चुकी है ।। 174 ।। फिर साफ करने पर ऊपर की मिट्टी की परत हटने पर पूर्व की तेजपुंजता उसे प्राप्त हो जाती है । वैसी ही अवस्था ज्ञान की है ।। 175 ।। धूल की परत ही अज्ञान है जिससे अज्ञान से ज्ञान आवृत है । धूल की परत का निरसन करने पर सहज ही रत्न चमक उठेगा ।। 176 ।। पाप कर्म विनाशक नित्य - अनित्य वस्तु विवेक है, वही सत्व शुद्धि प्रदायक है, वही ज्ञान का उत्पादक है ।। 177 ।। यह जग माया का बाजार है। खरी व नकली वस्तुएं अपार हैं। खरा समझ कर नकली लेने वाले कई ग्राहक हैं यहाँ ।। 178 ।। यद्यपि नकली कैसी है यह सुनिश्चित करने में अच्छे अच्छों की बुद्धि थक जाती है । जिन लक्षणों से धोखा होता है हमें उन लक्षणों को समझना चाहिए ।। 179 ।। इसलिए साथ में पारखी होना चाहिए । नकली असली की तरह क्यों दिखती है यह वह देखते देखते दिखा देगा । अज्ञान अन्त में चला जायेगा ।। 180 ।। अज्ञान के जाने पर ज्ञान रह जायेगा । सहज ही माया का निरसन होगा | जो शेष बचेगा उसे ही सद्वस्तु जानो । प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता ।। 181 ।। यद्यपि बुद्धि की आँखें सोज्ज्वल होती हैं। कल्पना के तिमिर से ढक जाती हैं । यह तिमिर उपदेश से दूर होता है । जो शेष बचता है वह सब ज्ञान है ।। 182 ।। वस्तुतः यह मार्ग में (दिखायी पड़ने वाली)माला है। सायंकाल आँखों से देखने पर माला होते हुए सर्प भासती है । इसका कारण अज्ञान की परत है ।। 183 ।। जेब में रखी गुप्त दीप (टार्च) चलाने पर अज्ञान लोप हो जाता है । खरा स्वरूप प्रकट होता है सर्प का भ्रम अपने आप दूर हो जाता है ।। 184 ।। इसलिए अज्ञान के कारण हानि को दूर करने के लिए उपदेश उपाय है । उसके लिए ज्ञानी शरीर को जीर्ण - क्षीण कर देते हैं । अज्ञान क्या है उसका उपदेश देते हैं ।। 185 ।। सांसारिक व्यवसाय में संलिप्त रहते जो वर्तमान समय का दुःख है वह अज्ञान जन्य भूतकाल के कार्य प्रारब्ध के कारण है । पहले यह ज्ञान आवश्यक है ।।186।। " सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म“ ज्ञान सत्य है ब्रह्म अनंत है । अविद्या माया सब भ्रम है । इनका जब उपरम होगा तब ही ज्ञान का सम्मान होगा ।। 187 ।। जिसका देहाभिमान नहीं गया उसे कौन सज्ञान कहेगा । अभिमान के अधिष्ठान का नाम मूर्तिमंत अज्ञान है ।। 188 ।। जिसे माया की नगरी कहते हैं जिसमें यह जगत खोया हुआ है , वह दिखायी पड़ने वाला मदहोश संसार का मूलाधार अज्ञान है ।। 189 ।। अज्ञान से जिसका उद्भव हुआ हो , जिसका वैभव अज्ञान जनित हो , एकत्व में जो अनेकत्व भाव है, उसका आधार अज्ञान है ।। 190 ।। किंचित प्रकाश किंचित अंधकार ऐसे समय में मार्ग की रस्सी ऐसे लगे जैसे सर्प

हो , अपार भय लगता है ।। 191 ।। सर्पाभास केवल अज्ञान है, उस अज्ञान ने ज्ञान को ढक लिया है । जब तक उस अज्ञान का निरसन नहीं होता है, मन निर्भय नहीं होता है ।। 192 ।। किसी को सुमन हार भांसता है किसी की आँखों को डंडा दिखता है । संक्षेप में यह सब जो भासित हो रहा है असीमित अनियन्त्रणीय भ्रांतियां हैं ।। 193 ।। वेद शास्त्र के वचन का अनुसरण करके जो आस्तिक बुद्धि धारण करते हैं वही ब्रह्म ज्ञान के अधिकारी होते हैं नास्तिक जन्म जन्मांतर उसे नहीं ले पाते ।। 194 ।। यह विश्व विपरीत दर्शियों के लिए भ्रम है उनके जन्म - मरण का क्रम समाप्त नहीं होता है। उनके लिए जो ब्रह्मतत्व दुर्गम है, अधिकारियों के लिए अत्यन्त सुगम है ।। 195 ।। यहां प्रवचन किसी काम नहीं आते , अथवा वेदों का ज्ञान , अथवा ग्रन्थों के अर्थ को धारण करने वाली मेधा , ग्रन्थावलोकन व निपुणता उसमें काम नहीं आती है ।। 196 ।। शब्द से शब्द ज्ञान होगा | उससे वस्तुज्ञान (ब्रह्मज्ञान) कैसे होगा । बुद्धि अति विवेक संपन्न है । ब्रह्म उसके अधीन कभी भी नहीं है ।। 197 ।। श्रुतियों ने बड़ी आशा बाँध रखी थी किन्तु ब्रह्म की थाह नहीं पा सके । इसके विपरीत ब्रह्म का ऐसा वैभव कि वे जाने बिना दौड़ कर हार गयी ।। 198 ।। ' षड्दर्शन ' थक गए । फिर भी वाद - विवाद करते रहे । आत्म ब्रह्म वहीं का वहीं रहा । शब्द कभी भी आंकलन नहीं कर सके ।। 199 ।। बड़े बड़े शब्द पंडित ब्रह्म के पीछे ऐसे पड़े जैसे सूर्य के पीछे जुगनू । एकबार ब्रह्म प्राप्त हो जाने पर समस्त शब्द जाल लुप्त हो जाता है ।। 200 ।। देखो , जगत में रात के अंधेरे में दीपक के प्रकाश में क्रिया चलती है, पर प्रभात को सूर्योदय होते ही दीपक उपेक्षित हो जाता है ।। 201 ।। जब वह वाणी का विषय नहीं है फिर कैसे उपदेश्य होगा । इसलिए कथाकार वक्ता का अज्ञान निरसन का ध्येय होना चाहिए ।। 202 ।। जब आत्मा के एक अस्तित्व पर विश्वास करके उपासना की जाती है, उससे ही आत्मा प्रसन्न होती है। निजतत्व - भाव का प्रकाशन करती है। उपासक को उपलब्ध हो जाती है ।। 203 ।। आत्मा का स्थान परमात्मध्यान में है। जो दोनों को एक ही मान कर इस प्रकार उपासना करते हैं आत्मा उपासक से प्रसन्न होती है ।। 204 ।। इसके लिए अन्य साधन नहीं है , इससे ही प्रसन्न हो जाना चाहिए । साधक को अपनी ओर खिंचा देखकर आत्मा उस पर अपने आप कृपा करती है ।। 205 ।। ग्रन्थ के विषय समाप्ति पर वक्ता श्रोता से सदैव प्रार्थना करते हैं । श्रवण श्रम के लिए क्षमा मांगते हैं । शिष्ट (प्रबुद्ध) जनों की सर्वत्र यही रीति है ।। 206 ।। वैसा इस सच्चरित में नहीं है । इसका कर्तृत्व मेरे माथे पर नहीं है । स्वयं साईं ने निज कथा लिखवायी है लेखनी मेरे हाथों में देकर ।। 207 ।।

इसलिए मैं ग्रन्थकर्ता नहीं हूं । यहां मेरे कारण किसी को थकावट नहीं हुई है । 'क्षमा कीजिए ' श्रोताओं से कहूंगा तो कर्तृत्व माथे पर आ जायेगा ।। 208 ।। यहां मेरी योग्यता नहीं है नहीं मेरा दोष छू गया है । जहां साईं स्वयं कर्ता है उन्हीं से विषय संपूर्ण होता है ।। 209 ।। साईं की आज्ञा लेकर उन्होंने जैसे कथन किया वैसे - वैसे मैंने लेखन किया , अज्ञान विवेचन श्रवण के लिए ।। 210 ।। अपने वैभव को प्रकट करने के लिए , अपना प्रताप , अपना गौरव , स्वयं ही मुझमें प्रवेश करके गुरुदेव ने विषयार्थ को प्रकाशित किया ।। 211 ।। जो इस ग्रन्थ को दोष देंगे , अथवा उसमें अच्छाई मानेंगे वे दोनों ही मेरे लिए पूर्ण वंदनीय हैं , निज नारायण स्वरूप हैं ।। 212 ।। भक्तों के परम हित के लिए स्वयं निज चरित्र का निर्माण किया । हेमाड का हाथ धर कर कथा श्री साईं ने लिखवाई है ।। 213 ।। जिनका शरीर धारण करना केवल लोगों पर अनुग्रह करने के लिए , कुतर्क दुराग्रह को खंडित करने के लिए , लोक संग्रह (सद् मार्गदर्शन) की रक्षा के लिए था ।। 214 ।। इसलिए हेमाड उनके चरणों में अनन्यभाव से साष्टांग प्रणाम करता है । आगे की रसमय कथाओं का श्रवण श्रोतागण एकाग्र मन से करें ।। 215 ।। स्वस्ति श्रीसंत सज्जन प्रेरित , हेमाडपंत विरचित " श्रीसाईं समर्थ सच्चरित " का " अज्ञान निरसनं " नामक पचासवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय इक्यावनवां (भक्तत्रयवृत्तकथन) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईंनाथ को नमन ।।

जय जय साईं भक्तों के आधार , गीता के अर्थ को प्रकाशित करने वाले , गुरुओं में श्रेष्ठ , सर्व सिद्धियों के दाता मुझ पर कृपा करें ।। 1 ।। उष्णता के शमन के लिए मलयगिरि में चंदन उगता है । अथवा विश्वजन को सुख देने के लिए बादल पृथ्वी पर वर्षा करते हैं ।। 2 ।। अथवा देवताओं का पूजन हो, इसके लिए वसंत समय में सुमन प्रकट होते हैं । अथवा श्रोताओं की संतुष्टि के लिए यह कथा परंपरा उदित होती है ।। 3 ।। इस साई सच्चरित्र को सुनने से श्रोता वक्ता दोनों ही पवित्र होते हैं । सुनने से उनके श्रोत्र पवित्र होते हैं , वक्ता की वाणी पवित्र होती है ।। 4 ।। गत अध्याय में अज्ञान निरसन होते ही, कैसे ज्ञान प्रकट होता है ? “तद्विद्धि प्रणिपातेन” श्लोक के अर्थ का निरूपण हुआ है ।। 5 ।। भगवद्गीता की परिसमाप्ति पर अठारहवें अध्याय के अंत में बहत्तरवें श्लोक में अर्जुन से श्रीकृष्ण पूछते हैं ।। 6 ।। “ अब तक जो प्रवचन हुआ है उससे क्या मोह निरसन हुआ है ? " उन्होंने स्पष्ट प्रश्न किया था । यह नहीं पूछा था , “ क्या ज्ञान हुआ ? ।। 7 ।। वैसे ही पार्थ ने भी स्वीकारोक्ति की थी , “ मेरा मोह दूर हो गया है । " यह नहीं कथा , “ ज्ञान प्राप्त हो गया है । मोह विच्छिन्न हो गया है ।। 8 ।। मोह नाम केवल अज्ञान है । देखने मात्र में दो शब्द हैं अर्थबोध भिन्न नहीं हैं । गीता के अर्थ को जानने वाले जानते हैं ।। 9 ।। यत्त्वयोक्तं वचस्तेन ' ' मोहोऽयं विगतो ' " आप ने जो वाणी बोली उससे यह मोह नहीं रहा " ग्यारहवें अध्याय में आरंभ में अर्जुन ने श्री कृष्ण से यह कथन किया था ; जानो ।। 10 ।। अब वर्तमान नूतन अध्याय । आरंभ में (हरी सीताराम दीक्षित उर्फ) काका साहेब को कैसे शिरडी का निवासी बना दिया , इस नवलाई का विवेचन करता हूं ।। 11 ।। उनका शिरडी से ऋणानुबंध था । उनका साईं से दृढ़ संबंध था । सबसे पहले कैसे निर्बन्ध का कारण इस संबंध में पूर्ण रूप से सुनें ।। 12 ।। उनकी कथाएं बहुत हैं । छोटे बड़े सभी को विदित हैं । पर आरंभ में कैसे शिरडी को आए यह सब ही ने नहीं सुना है ।। 13 ।। पूर्व संचित पुण्य से, परमेश्वर की कृपा दृष्टि होती है। उससे पहले सद्गुरु से भेंट होती है। शिष्य को स्वानंद

की पुष्टि होती है ।। 14 ।। इसके साथ अब इस अध्याय में तीन कथाओं का वर्णन श्रोताओं के लिए करेंगे , तीन भक्तों के सौभाग्य का । सुनकर हृदय भाव विभोर होगा ।। 15 ।। करोड़ों अन्य उपाय परमार्थ प्राप्ति के लिए करें किन्तु सद्गुरु कृपा दृष्टि न होने पर परमार्थ से भेंट नहीं होती ।। 16 ।। इस अर्थ की एक मधुर कथा का श्रवण करने से प्रबल इच्छाएं पूरी होंगी । श्रोताओं के मन में प्रेम उत्पन्न होगा । निजस्वार्थ की चाह बढ़ेगी ।। 17 ।। गुरु भक्तों की संतुष्टि हो इसके लिए यह अध्याय परम पावन है श्रोता सावधान चित्त से हितकर श्रवण करें ।। 18 ।। हरी सीताराम दीक्षित काका साहेब के नाम से विख्यात , सभी साईं बाबा के भक्त आदर प्रेम से जिनका स्मरण करते ।। 19 ।। उनके भूतकाल का वृत्तांत है जो ज्ञानियों के लिए आनंद दायक है जिसे मैं सरल हृदय भक्तों को सुनाता हूं , चरित्र श्रवण के उत्सुक लोगों के सुखार्थ ।। 20 ।। सन 1909 तक पहले जो साईं नाम से अपरिचित थे वही बाद में साईं के परम भक्त सब में प्रसिद्ध हुए ।। 21 ।। विश्वविद्यालय की शिक्षा के बाद कितने ही वर्ष व्यतीत हो गये थे कि एक बार नाना साहेब चन्दोरकर लोनावाला आए ।। 22 ।। दीक्षित उनके पुराने मित्र थे । बहुत वर्षों पर भेंट हुई थी । परस्पर सुख दुःख की वार्ता उन लोगों ने की ।। 23 ।। लंदन शहर में गाड़ी पर चढ़ते दीक्षित का पांव फिसल गया था उससे जो पांव में दर्द हुआ वह सैकड़ो उपाय पर भी शमन नहीं हुआ ।। 24 ।। उस व्यथा की साद्यंत वार्ता सहज ही बातचीत करने में शुरू हो गयी । वहां श्री साईं बाबा की उपयुक्तता का स्मरण नाना के मन में आया ।। 25 ।। “ उस पांव का लंगड़ापन समाप्त हो जावे , ऐसा क्या मन में है ? चलें मेरे गुरु के दर्शन के लिए । " ऐसा तब नाना ने उनसे कहा ।। 26 ।। फिर नाना ने संत शिरोमणि साईं की महिमा के नवलविशेष संपूर्ण वृतांत आनंद से दीक्षित से कहा ।। 27 ।। " अपने आदमी को , कितनी ही दूर , सात समुद्र पार ही क्यों न हो , चिड़िया की भांति छोर बांध कर मैं तुरन्त खींच लाता हूं ।। 28 ।।“ ऐसे बाबा के नित्य वचन होते , नाना ने आगे कहा , " बाबा के अपने न होने पर उनसे आकर्षण नहीं होता ।। 29 ।। तुम्हारे उनके असली हुए बिना तुम्हें दर्शन नहीं होगा । यही बाबा का बड़ा चिह्न है , तुम क्या अपने आप वहां जा सकते हो ? " ।। 30 ।। इस प्रकार साईं का वर्णन सुनकर दीक्षित का अन्तःकरण संतुष्ट हो गया । फिर उन्होंने नाना से कहा , " मुझे साईं के दर्शन कराओ " ।। 31 ।। मेरे पांवों की क्या कथा । सकल देह ही नश्वर है । पांव की व्यथा कितने ही समय तक रहे इसके लिए मुझे चिंता नहीं है ।। 32 ।। मैं आपके गुरु के दर्शन के लिए जाता हूं तो आत्यंतिक मोक्ष सुख के लिए जाऊँगा । अल्प सुख की मुझे कामना नहीं है,

उसकी याचना मैं नहीं करता हूं ।। 33 ।। ब्रह्म के अतिरिक्त कोई सुख नहीं है। वही एक अमूल्य सुख है । इस एक अमूल्य सुख के वास्ते मैं आपके गुरु का सेवक बन जाऊँगा ।। 34 ।। इस प्रकार पांव के लंगड़ेपन की मुझे कुछ चिंता नहीं है, किन्तु प्रार्थना है कि मेरे लंगड़े मन को उसके सही स्थान पर ला दो ।। 35 ।। बहुत थक गया हूं उपासना करके , पर मन निश्चल नही रहता इसलिए प्रयत्न करके स्वाधीन रखता हूं फिर बिना मेरे जाने चंचल हो जाता है ।। 36 ।। कितना ही सावधान रहूं , अत्यन्त मनोनिग्रह करके , नजर चुकते ही वहीं चला जायेगा । मन का यह गहन आश्चर्य है ।। 37 ।। इसलिए नाना मैं मन से तुम्हारे गुरु का दर्शन प्राप्त करुंगा । मेरे मन का लंगड़ापन दूर करने की उनसे प्रार्थना करुंगा ।। 38 ।।" नश्वर शरीर के सुख के प्रति उदास जिसकी आत्यंतिक की लालसा हो ऐसे भक्त के परमार्थ के लिए साईं बहुत प्रसन्न रहते हैं ।। 39 ।। विधान सभा का चुनाव ही सब जगह एक विषय था । जहां तहां अनेक लोग सामान्य रूप से इस काम में लगे हुए थे ।। 40 ।। काका साहेब भी अपने लिए लोकमत प्राप्त करने की पुष्टि में मित्रों से भेंट कर रहे थे । अचानक अहमद नगर पहुंचे ।। 41 ।। काका साहेब मिरीकर नाम के एक सरदार वहां थे । दीक्षित के अच्छे संबंध थे उनके सुखकर स्थान पर उतर गए ।। 42 ।। उस समय के बाद नगर में घोड़े की प्रदर्शनी होने वाली थी । उसके लिए नाना प्रकार के लोग काम में निमग्न थे ।। 43 ।। बाला साहेब मिरीकर कोपर गांव के मामलेदार प्रदर्शनी के लिए अहमद नगर शहर में हाजिर थे ।। 44 ।। जिस लिए दीक्षित आए थे वहां , वह पूरा कार्य समाप्त हो गया था । शिरडी कैसे जाना हो पायेगा । कौन मुझे वहां तक ले जायेगा ।। 45 ।। वहां का कार्य पूर्ण होते ही शिरडी का मार्ग दिखने लगा । बाबा का दर्शन योग हो यही एक उद्योग दीक्षित का था ।। 46 ।। कौन मेरे साथ आएगा । कौन बाबा के समक्ष ले जायेगा । मैं उनके पांव पर फैल जाऊँगा । दीक्षित को असीमित उत्सुकता हो रही थी ।। 47 ।। सुनिश्चित किया गया कार्य पूर्ण हो गया । अब शिरडी कैसे जाऊँ । दीक्षित को चिंता लगी हुई थी । मिरीकर से सादर विनती की ।। 48 ।। काका साहेब मिरीकर जिनके बाला साहेब पुत्र थे । परस्पर विचार करने लगे दीक्षित के साथ कौन जाये ।। 49 ।। दोनों में से कोई एक साथ होगा तो अन्य की आवश्यकता नहीं होगी। आवश्यक विचार चल रहा था कि फिर निश्चित रूप से कौन जाये ।। 50 ।। मनुष्य की मानवी कल्पना , ईश्वर की और योजना । दीक्षित के शिरडी गमन के लिए अकल्पित घटना घटी ।। 51 ।। इधर ऐसी उत्सुकता दूसरी ओर की गतिविधि देखो । भक्त की प्रबल इच्छा देख कर समर्थ साईंनाथ कैस करुणा से भर गये ।। 52 ।।

इस प्रकार दीक्षित विचारारूढ़ थे। वहां चिंतित बैठे हुए थे । माधवराव अहमद नगर आए । सभी लोग आश्चर्य चकित रह गए ।। 53 ।। माधवराव के श्वसुर ने अहमद नगर से तार किया कि सासू आपकी बहुत बीमार हैं आकर तुरन्त सकुटुंब भेंट कर लें ।। 54 ।। तार आते ही तैयारी की । बाबा की अनुज्ञा मिलने के बाद साथ में पत्नी को लेकर दोनों चिथली (स्टेशन) गए ।। 55 ।। तीन बजे की गाड़ी पकड़ी और दोनों अहमद नगर गये । तांगा गाड़ी आकर द्वार पर रुकी दोनों नीचे उतरे ।। 56 ।। इतने में ' नाना साहेब पानशे ' व ' आपा साहेब गद्रे ' प्रदर्शनी देखने उसी मार्ग से जाते, प्रसंगवश वहां पहुंचे ।। 57 ।। माधवराव उतर रहे थे कि उन पर अचानक दृष्टि पड़ी उन्हें अति विस्मयता हुयी । चित्त में आनंद समा नहीं रहा था ।। 58 ।। बोले , “ देखो भाग्य यहां का । माधवराव शिरडी के 'बडवा' आए हैं अब उनसे अच्छा कौन है, दीक्षित को शिरडी ले जाने वाला ।। 59।। फिर उन्हें आवाज दी । बोले , “ दीक्षित काका आए हैं । मिरीकर के यहां जाकर देखें । बाबा का कौतुक अवलोकित करें ।। 60 ।। दीक्षित हमारे अलौकिक मित्र हैं । आप का उनसे परिचय हो जायेगा । शिरडी जाने के लिए वे अत्यंत उत्सुक हैं । आपके आगमन से उन्हें सुख होगा ।। 61 ।। इस प्रकार उनको विदा करके दीक्षित को भी घटना की सूचना दे दी । सुनकर उनकी परेशानी दूर हो गयी । मन को अत्यन्त संतोष हुआ ।। 62 ।। श्वसुर के घर जाकर देखते हैं सास का स्वास्थ्य ठीक है । माधवराव ने थोड़ा विश्राम किया । मिरीकर ने उन्हें बुलवा भेजा ।। 63 ।। बुलाने को मान देते हुए , थोड़ा सूर्यास्त होने पर माधवराव दीक्षित से भेंट करने जाने के लिए निकले ।। 64 ।। यह उनकी प्रथम भेंट थी । बाला साहेब ने मिलवा दिया । रात दस बजे की गाड़ी से जाने का निश्चय दोनों ने किया ।। 65 ।। इस प्रकार निश्चय हो जाने पर इसके बाद की अद्भुतता को देखो । बाला साहेब ने बाबा की छवि (चित्र) पर से परदा खिसका दिया ।। 66 ।। यह बाबा का छायाचित्र था । मेघा बाबा का असीम भक्त था । परम प्रेम से पवित्र त्रिनेत्र शंकर की भावना से पूजा करते थे ।। 67 ।। कांच टूट जाना निमित्त हुआ । इसीलिए , दुरुस्त करवाने के लिए , बाला साहेब आरंभ में अहमद नगर शिरडी से लेकर आये थे ।। 68 ।। वही तस्वीर ठीक होकर दीक्षित की जानो वाट देख रही थी । मिरीकर के दीवानखाने में कपड़े से ढक कर रखी हुयी थी ।। 69 ।। अश्व प्रदर्शन की समाप्ति पर बाला साहेब के वापस होने में अभी थोड़ा समय था इसीलिए माधवराव को सौंप दिया ।। 70 ।। परदा खिसका कर अनावृत किया , माधवराव के हवाले किया । बोले बाबा के साथ सुख से शिरडी जावें ।। 71 ।। तब वह सर्वांग मनोहर दृष्टि पहली बार पड़ी ,काका साहब

तस्वीर को प्रणाम करके आनंद से भरे देखते रहे ।। 72 ।। उस विचित्र घटना को , वैसे ही, अकल्पित रम्य पवित्र समर्थ साईं के छायाचित्र को , देखकर दीक्षित के नेत्र आकर्षित हो गए ।। 73 ।। जिनके दर्शन का लक्ष्य है, उनकी प्रतिमा मूर्तिमंत मार्ग में आ गयी, देखकर अत्यन्त आल्हाद हुआ ।। 74 ।। वहां शिरडी से आयी काका साहेब मिरीकर के घर पर । उस समय दीक्षित वहां थे । देखो यह विचित्र योग ।। 75 ।। जैसा दीक्षित के मन में भावार्थ था वैसा पूरा करने के लिए साईं समर्थ भक्त मिरीकर के घर लगता है इस बहाने वहां आ गए ।। 76 ।। लोनावाला में नाना का दर्शन, वहां उनके साथ वार्तालाप , वहीं बाबा का गुरुत्वाकर्षण , भेंट से बीजारोपण हो गया ।।77।। अन्यथा यह शिरडी की छवि इस समय यहाँ क्यों आयी ? इतने समय क्यों रही इस स्थान पर ढकी क्यों रही ।। 78 ।। इस प्रकार निश्चित होने पर साथ में वह छवि लेकर माधवराव व दीक्षित आनंदित मन से निकल पड़े ।। 79 ।। उसी रात भोजन के बाद दोनों स्टेशन पर गए । दूसरे दर्जे का किराया भर कर उचित टिकट लिया ।। 80 ।। दस घण्टा कान में पड़ते ही रेलगाड़ी की ध्वनि आने लगी । नयन देखने लगे कि दूसरी श्रेणी का डिब्बा खचाखच भरा है ।। 81 ।। ऐसा प्रसंग आ पड़ने पर दोनों को दुर्धर चिंता लगी । अब समय भी थोड़ा बचा था । कैसे व्यवस्था की जा सकती है ।। 82 ।। अतः अब उस भीड़ को पाकर अपने अपने स्थान को वापस जाने का निश्चय दोनों ने किया कि शिरडी दूसरे दिन जायेंगे ।। 83 ।। इतने में गाड़ी का गार्ड अचानक दीक्षित को परिचित दिखा । पहले दर्जे में बैठने की व्यवस्था बड़े आराम से उसने करवा दी ।। 84 ।। फिर गाड़ी में आ जाने के बाद बाबा की कहानियां दिल खोलकर हुई । माधवराव ने कथामृत कहा दीक्षित आनंद में बह गए ।। 85 ।। इस प्रकार उनका मार्ग का समय सुखपूर्वक अति शीघ्रता से बीत गया । कोपर गांव गाड़ी पहुंची । खुशी - खुशी उतरे ।। 86 ।। उसी समय स्टेशन पर नाना साहेब चन्दोरकर दीक्षित को देखकर आनंद से भर गए । परस्पर अकल्पित भेंट हो गयी ।। 87 ।। वे भी बाबा के दर्शन प्राप्त करने शिरडी के लिए निकले थे । यह अनपेक्षित योग देखकर दोनों विस्मित थे ।। 88 ।। फिर तीनों ने तांगा किया । बोलते चालते वहां से निकले । मार्ग में गोदावरी में स्नान किया । पावन शिरडी पहुंचे ।। 89 ।। फिर साईं का दर्शन होने पर दीक्षित का मन द्रवित हो गया । नयन अश्रुपूर्ण हो गए । स्वानंद जीवन में बह गए ।। 90 ।। “ मैं भी तुम्हारी वाट देखकर बाद में शामा को सीधे भेज दिया अहमद नगर में तुमसे भेंट करने । " फिर बाबा ने स्पष्ट कह दिया ।। 91 ।। दीक्षित का शरीर रोम हर्षित हो गया । गला रुंध गया । चित्त हर्षित हो गया । सर्वांग पसीने से भीग गया ।। 92 ।। देह धीरे -

धीरे कांपने लगी, चित्तवृत्ति स्वानंद में निमग्न हो गयी । नेत्र आधे खुले रह गये आनंदघन से भर कर ।। 93 ।। आज मेरे नेत्र सफल हो गये । कहकर चरणों में लिपट गए । मन में बड़ी धन्यता लगी । आनंद सृष्टि में नहीं समा रहा था ।। 94 ।। इसके बाद वर्षों वर्ष बीत गए । साईं चरणों में निष्ठा बलवती हो गयी । साईं की पूर्ण कृपा संपादित हो गयी । अपने शरीर को सेवा में लगा दिया ।। 95 ।। सेवा पूर्ण रूप से अच्छी हो ; करने के लिए मठ (घर) बनवाया । शिरडी में बहुत वर्षों तक वसे रहे । साईं की महिमा फैलाई ।। 96 ।। सारांश यह जो इच्छा (काम) धारण किए होते उन्हें निश्चित ही निष्काम (इच्छाविहीन) कर देते । साईं निज भक्तों के विश्रामधाम , भक्तों के लिए परम सुखदायी हैं ।। 97 ।। चन्द्र के लिए चकोर अनेक होते हैं चकोरों के लिए एक ही चन्द्र हैं । वैसे ही उसके पुत्र यद्‌यपि बहुत हो सकते हैं उनकी सभी की माता एक ही होती है ।। 98 ।। सूर्य के लिए कुमुदिनी अपार पर कुमुदिनियों के लिए सूर्य एक ही है। तुम्हारे भक्तों की भी गिनती नहीं है किन्तु आप ही उनके पिता व गुरुवर हैं ।। 99 ।। अनेक चातक मेघ के लिए आतुर हैं मेघ वहाँ चातकों के लिए एक है, वैसे ही उनके भक्त कई हैं किंतु मतपिता स्वरूप सई एक ही हैं ।। 100 ।। जो - जो सहज ही सद्‌भाव से साईं शरण में जाते हैं उन उन की लाज की रक्षा करते हैं । आज भी प्रत्यक्ष देखा जाता है कि स्वयं प्रेम पूर्वक उनके कार्य पूरा करते हैं ।। 101 ।। जग में जो - जो प्राणी जीवित है मरण के लिए उनका अंत होता है । साईं ने दीक्षित को अभय दिया था , **" तुझे मैं विमान से ले जाऊँगा "** ।। 102 ।। जैसा साईं ने वचन दिया था वैसे ही दीक्षित का अन्त हुआ , वाणी से साईं के गुणगान गाते । यह मैंने अपनी आँखों से देखा था ।। 103 ।। रेलगाड़ी में एक वीरों में श्रेष्ठ बैठा था हम परस्पर साईं समर्थ की वार्ता में चूर थे मानो विमान शीघ्रता से ले उड़ा ।। 104 ।। देखो अचानक अवसर का लाभ उठाया । मेरे कंधे सर रखकर, अनपेक्षित विमान पर बैठ गए दीक्षित को असीम सुख प्राप्त हो गया ।। 105 ।। न मुड़ना , न मरोड़ , न घरघराहट,न दर्द, बोलते चालते सबको देखते शरीर निश्चल हो गया ।। 106 ।। मानव भूमिका इस प्रकार विसर्जित करके निजरूप निजज्योति में मिल गए । विमान मार्ग से स्वरूप में स्थापित हो गए । ज्योति में निजज्योति को लय कर दिया ।। 107 ।। साईं चरणों में ध्यान लगते ही पूर्ण देहाभिमान नष्ट हो गया था । वृत्ति संतुष्ट हो गयी थी । देह पूर्ण रूप से कृष्ण (ईश्वर) को अर्पित हो चुकी थी ।। 108 ।। सन 1927 ज्येष्ठ माह कृष्ण पक्ष की एकादशी को दीक्षित ब्रह्मपद को प्राप्त हुए, इस कर्मभूमि को त्यागकर ।। 109 ।। इसे उनका देहावसान कहें अथवा उनके लिए आया विमान

। वे साईपद में विलीन हो गए । यह घटना किसी के लिए भी प्रमाण है ।। 110 ।। ऐसे उपकार से उत्तीर्ण हुआ जा सकता है, ऐसा जिसका भाव हो वह पूर्ण अभक्त है । दृश्य जगत का दान करके उत्तीर्ण हो पाना , जानो स्वप्न में भी संभव नहीं है ।। 111 ।। ' चिंतामणि ' देते हैं तो नित्य की चिंताओं में वृद्धि होगी । इससे अचिंत्य का दान करने वाले का ऋण चुकाना बालनिर्णय होगा ।। 112 ।। अच्छा , कल्पतरु दें , गुरु के जाल से निकलने के लिए । गुरु तो बिना सोची वस्तु का दान करने में कुशल हैं उससे उत्तीर्ण कैसे होंगे ।। 113 ।। अतः अब पूर्ण पारस गुरु को दें तो । पारस लोहे को सरस सुवर्ण कर देता है । गुरु ब्रह्मरस पिलाते हैं ।। 114 ।। गुरु को कामधेनु अर्पित करें । गुरु के उपकार से उत्तीर्ण मान लें । अत्यन्त कामना की वृद्धि होगी । गुरु तो निष्काम बिना प्रयास देते हैं ।। 115 ।। अखिल विश्व की संपत्ति देकर जो गुरु के उपकार चुकाने की इच्छा रखते हैं , जो अमायिक (वास्तविक) का दाता है उसे मायिक (मायावी , अवास्तविक) अर्पित कर । इससे क्या उत्तीर्णता प्राप्त होगी ।। 116 ।। गुरु पर देह अर्पित कर दें तो इसे तो नश्वर जानो । जीवन ही त्याग दें अर्पित करने के लिए तो वह स्वयं ही मिथ्या है ।। 117 ।। सद्गुरु सत्य वस्तु का दाता है । उसे मिथ्या वस्तु अर्पित करके दाता की उतराई कैसे होगी । यह बात असंभव है ।। 118 ।। इसलिए अनन्य श्रद्धा पूर्णभाव से दण्डवत करते हुए सद्गुरु चरणों में मस्तक रखकर वंदन करो उपकार का स्मरण करते हुए ।। 119 ।। गुरु के उपकार की अखंड स्मृति ही शिष्य को शोभा देती है । जो शिष्य उनके ऋण को चुकाना चाहते हैं वे अपना सुख खो बैठते हैं ।। 120 ।। कथा का यहां तक श्रवण होने पर श्रोताओं की प्यास बढ़ गयी । जिज्ञासा पूर्ण आतुरता देखकर एक छोटी कथा कहता हूँ ।। 121 ।। संत भी संसारियों की भांति अपने बन्धु प्रेम को व्यक्त करते हैं , या मार्गदर्शन करने में परम दक्ष हैं, यह सार जानते हैं ।। 122 ।। अथवा स्वयं साईं ही अपने आप , अपने भक्त का कल्याण करने के लिए वे सभी भूमिकाएं अपने शरीर से निभाते हैं, परमार्थ का शिक्षण देने के लिए ।। 123 ।। इस अर्थ की अलग कथा श्रोता सादर श्रवण करें, जिससे पता चल जाये कि संत अन्य संतों की निशानी बिना बताए पहचान लेते हैं ।। 124 ।। एक बार श्री गोदावरी के तीर पर प्रसिद्ध राजमहेन्द्री शहर में “ सरस्वती " उपनाम धारी श्री वासुदेवानंद की सवारी आयी ।। 125 ।। वे महान अन्तर्ज्ञानी थे । कर्ममार्ग के कट्टर अनुयायी थे । उनकी कीर्ति की अखंड गंगा पृथ्वी पर गुंजायमान है ।। 126 ।। कानों कान वार्ता सुनकर पुंडलीकराव आदि नांदेड़ शहर के सज्जन भक्तों ने उनके दर्शन करने का निश्चय किया ।। 127 ।। इस प्रकार बाद में वह मंडली

निकली । राज महेन्द्र नगर में पहुंची । गोदावरी के तट पर प्रातःकाल स्वामी जी के दर्शन के लिए आए ।। 128 ।। सुप्रभात के समय नांदेड की समस्त मंडली गंगा - गोदावरी में स्नान के लिए निकली, मुख से स्तोत्र पाठ करते हुए ।। 129 ।। वहां स्वामी को उपस्थित देख कर मंडली ने सद्भाव से साष्टांग नमन किया । सहज ही कुशलता का प्रश्न चलते शिरडी की बात निकल पड़ी ।।130 ।। कान में साई नाम पड़ते ही स्वामी ने अपने हाथों से प्रणाम किया व बोले **," वे हमारे निष्काम बन्धु हैं हमारा उनसे असीम प्रेम है ।। 131 ।। वहां से एक श्रीफल लेकर पुडलीकराव को देकर बोले , " बन्धु के कमल पद की वंदना करके यह अर्पित करिएगा , जब शिरडी जाना हो " ।। 132 ।। मेरा नमस्कार कहना । कहना इस दीन पर कृपा करते हुए विस्मृत न करें , प्रेम निरन्तर बढ़ावें ।। 133 ।। आप शिरडी ग्राम को जब पुनः गमन करें इसे मेरे बन्धु को अर्पित करना , आदर से स्मरण पूर्वक ।। 134 ।। हम स्वामी प्रणाम नहीं करते इस प्रकार यद्यपि हमारे लिए बंधन है । किन्तु इस नियम का उल्लंघन करना कुछ अवसरों पर कल्याण कारक होता है ।। 135 ।। इसलिए साईं दर्शन करते समय इस घटना का विस्मरण न कर देना । साईं चरणों में यह श्रीफल अर्पण स्मरण पूर्वक करना ।। 136 ।।"** उनके वचन सुनकर पुंडलीकराव चरणों में लगकर बोले , " जैसी स्वामी जी की आज्ञा उसका वैसे ही पालन किया जायेगा ।। 137 ।। आज्ञा को स्वीकार करके मैं अपने को धन्य मानता हूं । " स्वामी की अनन्य शरण में जाकर वहां से पुंडलीकराव निकले ।। 138 ।। स्वामी जी ने बाबा को बन्धु कहा तो क्या यह पूरा निरर्थक था । जब तक जीवो अग्निहोत्र का पालन करो (यावज्जीवमग्नि होत्रं जुहुयात्) बाबा इस श्रुति संमत आचरण को करते थे ।। 139 ।। लोग जिसे धूनी कहते हैं वह बाबा के सन्मुख नित्य आठो प्रहर प्रज्वलित रहती । यह बाबा का व्रत था ।। 140 ।। अग्निहोत्र आदि कर्म जो चित्त शुद्धि के साधन हैं , बाबा ब्रह्म प्राप्ति के लिए करते थे, जिससे लोगों का मार्ग दर्शन हो सके ।। 141 ।। श्री वासुदेवानंद सरस्वती भी संन्यासी (यती) थे, वैसे ही व्रती । फिर उन्होंने बाबा को बन्धु कहा हैं यह उक्ति क्या निरर्थक है ।। 142 ।। फिर वह महीना पूरा नहीं हुआ कि चार मित्रों को साथ लेकर पुंडलीक को अवसर मिला , साईं दर्शन के लिए निकले ।। 143 ।। उन्होंने अपना सामान , फल फूल और बिना भूले वह नारियल ले लिया आनंद व शान्त चित्त से सभी साईं दर्शन को निकले ।। 144 ।। फिर मनमाड में उतरने पर कोपर गांव की गाड़ी छूटने में समय था इसलिए जलधारा तक गए । तेज प्यास लगी थी ।। 145 ।। खाली पेट पानी पीने से प्रकृति की हानि होती है , इसलिए एक छोटी पोटली में चिवड़ा कोई लाया था,

निकाला ।। 146 ।। चबाने के लिए मुंह में चिवड़ा डालने पर वह अत्यन्त तीखा लगा । नारियल के बिना केवल चिवड़ा खाना व्यर्थ की परेशानी है ।। 147 ।। तब ,एक ,उन सबसे बोला , " युक्ति एक मुझे याद आयी है । नारियल फोड़ चिवड़ा में मिला लें फिर देखो चिवड़ा का स्वाद " ।। 148 ।। नारियल बोलते ही नारियल तैयार था । फोड़ने में कैसी देर ? मिला देने पर चिवड़ा रुचिकर लगने लगा । फिर उस पर पानी पिया ।। 149 ।। नारियल बोलते ही नारियल आ गया । वह किसका है , विचार नहीं किया गया । क्षुधा ने ऐसा कहर किया था कि सब विस्मृत हो गया था ।। 150 ।। इस प्रकार फिर पूर्व स्थान पर आए । कोपरगांव की गाड़ी पर बैठे । मार्ग में पुंडलीक राव के मन में नारियल की याद आयी ।। 151 ।। यह देखकर कि शिरडी निकट है पुंडलीकराव को व्याकुलता होने लगी । वासुदेवानंद का श्रीफल चिवड़ा में मिलाकर समाप्त कर दिया था ।। 152 ।। नारियल तोड़ा जा चुका है, यह अहसास होने पर पुंडलीकराव भयभीत हो गए । उनका सारा शरीर कांपने लगा । संत का अपराध हो गया ।। 153 ।। उससे अति संताप हुआ , " कितना बड़ा पाप लग गया । सिर पर स्वामी का श्राप पड़ गया । मैंने व्यर्थ ही प्रलाप किया था ।। 154 ।। श्रीफल की ऐसी गति होती देख , अपने फस जाने पर पुंडलीकराव का चित्त विस्मय से तटस्थ हो गया ।। 155 ।। अब बाबा को क्या दूंगा । किस रीति से उन्हें समझाऊँगा । कैसे मैं उन्हें मुंह दिखाऊँ । श्रीफल गवां बैठा हूं ।। 156 ।। साईं चरणों में जो अर्पित होना था, उसका फलाहार हुआ देखकर पुंडलीकराव का मन खिन्न था बोले , " यह संत का अपमान है “ ।। 157 ।। अब जब बाबा नारियल मांगेंगे , सभी मुंह झुका लेंगे । कारण मनमाड में उसका फलाहार कर लिया । सबके मन मे यही पश्चाताप था ।। 158 ।। नारियल आज पास नहीं है । सही बताने में शर्म आती है , झूठ बोलने से कारण दूर नहीं होगा । साईं महाराज सर्वसाक्षी हैं ।। 159 ।। इस प्रकार साईं के दर्शन किए । मंडली सुख संपन्न हो गयी | नयन आनन्द अश्रु भर गए । वे सभी प्रसन्न मुख हो गए ।। 160 ।। आज हम रातदिन बिना तार के संदेश भेज कर , विशेष बुद्धिमत्ता को दिखा कर के , अभिमान करते हैं ।। 161 ।। इसके लिए स्थान विशेष पर निर्माण करना होता है, अपार पैसा खर्च करना पड़ता है । वहीं संतों को साधन की आवश्यकता नहीं होती है । मन से संदेश भेजते हैं ।। 162 ।। जिस समय स्वामी जी ने पुंडलीकराव को नारियल दिया था, साईंनाथ को पहले ही यह संदेश भेज दिया था, बिना तार के ।। 163 ।। पुंडलीकराव के दर्शन करने पर साईंबाबा अपने आप बोले , “मेरी चीज लाओ जो बंधु के पास से लाए हो " ।। 164 ।। फिर खिन्न पुंडलीकराव ने बाबा के पांव पकड़ कर

बोले , " क्षमा बिना दूसरा उपाय नहीं , मैं क्या कहूं ।। 165 ।। नारियल की मुझे याद थी किन्तु भूख की तृप्ति करने के लिए जब हम जलधारा पर गए , सब विस्मृत हो गया ।। 166 ।। वहां चिवड़ा का फलाहार करते इसी नारियल को फोड़कर मिला दिया । इसलिए लाता हूं दूसरा श्रीफल । निश्चय मन से स्वीकारें ।। 167 ।।" ऐसा कहकर उठने लगे। पुंडलीकराव श्रीफल के लिए उठने लगे तो साईं महाराज को हाथ पकड़कर उन्हें रोकते देखा गया ।। 168 ।। अनजाने में विश्वासघात हो गया है । आप कृपालु अपनी छाया में लीजिए । क्षमा करके मुझ पर कृपा करें । मैं नितांत अपराधी हूँ ।। 169 ।। स्वामी जैसे सज्जन साधु के वचन का अपमान किया । जो फल आपको अर्पण करना था उसका भक्षण मैंने कर लिया ।। 170 ।। यह तो संतो का अतिक्रमण है कितना बड़ा अपराधी मैं हूँ ? इस पाप का निवारण क्या है । मैं कैसा बेशरम हो गया ? ।। 171 ।। जो कुछ हुआ सुनने के बाद श्री साईंनाथ हंसकर बोले , " **"यदि व्यवस्थित रख नहीं सकते थे तो नारियल हाथ में कैसे ले लिया ।। 172 ।। तुम मेरी वस्तु मुझे दे दोगे, ऐसा निश्चिंत जान कर मेरे बन्धु ने तुमसे कहा था, अत्यन्त विश्वास करके । उसका यह क्या परिणाम हुआ ।। 173 ।। क्या यही तुम्हारी विश्वास पात्रता है । मेरे बन्धु का काम पूरा नहीं किया । ऐसा ही क्या तुम करते हो ।। 174 ।। उस फल की योग्यता नहीं आ सकती अन्य चाहे कितने ही दे दो । जो घटना था घट गया अब व्यर्थ दुशचिंतता किस लिए ।। 175 ।। स्वामी जी ने तुझे नारियल दिया वह केवल मेरी इच्छा थी । मेरी इच्छा से ही वह फल फोड़ा गया । व्यर्थ कर्त्तापन का अभिमान क्यों धारण करते हो ।। 176 ।। अहंकार की बुद्धि धारण किए हो, इससे अपने को अपराधी मानते हो । इतना निरहकर्तृत्व (कर्तापन का अहंकार न होना) साधो कि सारी परेशानी दूर हो जाये ।। 177 ।। पुण्य का ही क्यों अभिमान , पाप का अभिमान क्यों नहीं करते । प्रताप दोनों का ही समसमान है । इस लिए निरभिमान हो आचरण करो ।। 178 ।। तुमसे मुझे भेंट करने का जब मेरे मन में आया तब नारियल तुम्हारी अंजलि में पड़ा । यह पूर्ण सत्य है ।। 179 ।। तुम भी मेरे बच्चे हो । फल जो तुम्हारे मुंह से लगा वह तुमने मुझे ही अर्पित किया । निश्चित समझो कि मैं पा गया ।। 180 ।।"** ऐसे जब समझाया गया , तब पुंडलीकराव का चित्त साईंमुख के वचन से शान्त हुआ । उद्विग्नता धीरे - धीरे दूर हो गयी ।। 181 ।। नारियल का जाना तो निमित्त था । उपदेश से चित्त शान्त हो गया । इस प्रकार वे सभी अहंकारों से जो चमक रहे थे अभिमान निर्मुक्त हो कर निर्दोष हो गए ।। 182 ।। **इतना ही इस कथा का सार है वृत्ति ज्यों - ज्यों निरहंकार होगी त्यों - त्यों परमार्थ की अधिकारिता**

प्राप्त होगी । सहज भव से पार होगा ।। 183 ।। अब तीसरे भक्त के अभिनव व मधुर अनुभव का श्रवण करो । बाबा का अतुल वैभव दिखेगा , सामर्थ्य गौरव एक साथ ।। 184 ।। बान्द्रा तालुका में उत्तरी भाग में , बान्द्रा शहर के निकट सांताक्रुज नामक बस्ती में धुरंधर नामक हरिभक्त रहते थे ।। 185 ।। सभी भाई संत प्रेमी थे । जिनकी निष्ठा श्री राम में दृढ़तर थी । राम नाम में अनन्य श्रद्धा थी । व्यर्थ हस्तक्षेप उन्हें पसन्द नहीं था ।। 186 ।। उनका रहन सहन सीधा - सादा था । वैसा ही बाल - बच्चों का रहना । स्त्री वर्ग का आचरण भी निर्दोष था । इसलिए चक्रपाणि (श्री विष्णु) उनके ऋणी थे ।। 187 ।। उनमें से एक बालाराम थे , बिट्ठल भक्त पवित्र आत्मा थे । राज दरबार में उनकी प्रसिद्धि थी । सभी उन्हें पसन्द करते थे ।। 188 ।। तारीख 19 फरवरी सन् 1878 एक राम भक्त के उदर से धरती पर उत्पन्न हुआ था यह रत्न ।। 189 ।। पाठारे प्रभु जाति के इस श्रेष्ठ व्यक्ति का जन्म मुम्बई के एक प्रसिद्ध परिवार में सन् 1978 में हुआ ।। 190 ।। पाश्चात्य विद्या में पारंगत , एडवोकेट पदवी से भूषित तत्त्वज्ञान (दर्शन शास्त्र) विशेषज्ञ विद्वान के रूप में सर्वत्र विख्यात थे ।। 191 ।। पांडुरंग से अति प्रेम था , परमार्थ में परम रुचि थी। पिता के आराध्य देव राम थे । पुत्र के लिए विट्ठल निजधाम थे ।। 192 ।। सभी भाई पदवी धारक थे , वृत्ति सदैव धर्म पर थी । शुद्ध बीज (पिता) के अपूर्व शुद्ध संस्कार बलराम के थे ।। 193 ।। तर्क वितर्क करने की मोहक शैली । सरल शुद्ध विचारधारा , कुशाग्र बुद्धि सदाचारी आचरण , उनके ये गुण अनुकरणीय थे ।। 194 ।। नितांत समाज सेवा की थी । समाज वृत्तांत स्वयं लिखने का अंगीकृत व्रत पूर्ण करके परमार्थ के लिए निकल पड़े ।। 195 ।। वहाँ भी अच्छा स्थान बनाया । भगवद्गीता , ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ को वाचने में प्रवीणता प्राप्त कर ली । आध्यात्मिक विषयों में प्रसिद्ध हो गए ।। 196 ।। वे साईं के परम भक्त थे । सन् 1925 में अल्प आयु में ब्रह्मीभूत हो गए । उनके अल्प चरित को सुनें ।। 197 ।। तारीख 7 माह जून सन् 1925 को इहलौकिक यात्रा समाप्त कर विठ्ठल में विलीन हो गए ।। 198 ।। एप्रिल 1912 में एक अच्छा दिन देखकर साईं दरबार में संत दर्शन के लिए धुरंधर बन्धुओं को संयोग मिला ।। 199 ।। छ : मास पूर्व ज्येष्ठ भाई बाबुल जी ने वामनराव को साथ लेकर शिरडी में दर्शन किया था । आनन्द से वापस लौटे थे ।। 200 ।। वहां का मधुर अनुभव स्वयं करने के लिए अन्य सब , अभिनव दर्शनलाभ प्राप्त करने बलराम आदि तब गए ।। 201 ।। इनके आने के पूर्व ही देखो , “ बाबा सबको देखते हुए बोले , " आज मेरे दरबार के अनेक लोग यहाँ आने वाले हैं " ।। 202 ।। ऐसी प्रेम की वार्ता सुनकर धुरंधर बन्धु

अतिविस्मित हुए । शिरडी का आना किसी को सूचित नहीं था । बाबा कैसे इस बात को जान गए ।। 203 ।। फिर साईं को आँखों से देखकर दौड़ कर चरण पकड़ कर लिपट गए । धीरे - धीरे बातचीत होने लगी । सबको सुख संतुष्टि हो गयी ।। 204 ।। इसके अतिरिक्त मंडली को आया देख बाबा के वचन निकले थे , "देखो मेरे दरबारी आ गए हैं इनके आने की मैंने पहले कही थी " ।। 205 ।। और बाद की बाबा की भाषा एक - एक शब्द सुनो जो सत्य थे , "तुम्हारा मेरा साठ पीढ़ियों पहले का अच्छा परिचय है ।।" 206 ।। बालाराम आदि बन्धुजन , वे सभी विनय संपन्न हाथ जोड़ कर सामने खड़े थे श्रीचरणों को लक्ष्य करके ।। 207 ।। श्री साईं के दर्शन होने पर बालाराम आदि के सबके चित्त सोल्लास असीमित प्रेमावस्था में थे । लगा आना सार्थक हो गया ।। 208।। नयन अश्रुपूर्ण हो गए । कंठ रुंध गये , भर गए । सारे शरीर में रोमांच उठ गया । अष्टभाव सुनिश्चित आया ।। 209 ।। बालाराम की अवस्था देखकर साईंनाथ के चित्त में उल्लास हुआ । उन सबसे प्रेम से उपदेश वार्ता बोलने लगे ।। 210 ।। **" शुक्ल पक्ष की बढ़ती हुई कलाओं की भांति जो मुझे भजता है , मेरे लिए अर्पित कर दिया है अपना सब मनोधर्म, वह धन्य है ।। 211 ।। मन में दृढ़ विश्वास धारण कर जो निजगुरु भजन में लगा है , ईश्वर हर प्रकार से उसके ऋणी रहते हैं कोई भी उस पर बुरी दृष्टि नहीं डाल सकता है ।। 212 ।। जो अर्धघड़ी व्यर्थ नहीं जाने देता, जिसकी हरिगुरु भजन में रुचि है उसे वे अपार सुख देंगे , भव सागर के उस पार उतार देंगे " ।। 213।।** ऐसे वचन सुनकर सबके नेत्रों में आनन्द अश्रु थे । चित्त सुप्रसन्न हो गए । अन्तःकरण सद्गदित (भाव विभोर) हो गए ।। 214 ।। साईं वाक्य की सुमनमाला गले में धारण कर सब ने वंदन किया, इससे सबको आनंद हुआ। कारण, भक्ति उमड़ पड़ी ।। 215 ।। इस प्रकार फिर वे वाड़ा गये । भोजन के बाद थोड़ा विश्राम किए । तीसरे प्रहर पुनः गए । बाबा को साष्टांग दण्डवत किए ।। 216 ।। बालाराम विनय संपन्न हो पांव दबाने लगे । बाबा ने चिलम आगे कर दी । पीने का इशारा किया ।। 217 ।। फिर उस चिलम को प्रसाद कहकर आदत न होते हुए भी कष्ट से पिया (कश लगाया) । पुनः बाबा के हाथ में देकर सद्भाव से अभिवंदन किया ! ।। 218 ।। बालाराम के भाग्य का दिन था । तभी से लाभ हो गया , उनकी दमा व्यथा चली गयी । पूर्ण संतोष हुआ ।। 219 ।। दमा एक या दो दिन का नहीं था । विकार पूर्ण छ : वर्ष का था । कान में मंत्र बोलने जैसा चिलम का प्रभाव हुआ ।। 220 ।। चिलम का एक कश मारकर सविनय नमन करते हुए वापस किया । दमा जो तब से गया वापस कभी भी नहीं उठा ।। 221 ।। इस मध्य मात्र एक दिन बालाराम को खांसी उठी थी तब

सभी को परम विस्मय हुआ था कोई इसका कारण नहीं जान सका था ।। 222 ।। बाद में इसकी पूछताछ करने पर सब को ज्ञात हुआ कि बाबा ने उसी दिन निज शरीर छोड़ा था यह भक्तों को संकेत दिखाया था ।। 223 ।। बालाराम को जिस दिन श्वास का दौरा आया उसी दिन बाबा ने देह पृथ्वी को समर्पित करके इसका संकेत दिया था ।। 224 ।। उसके बाद से पुनः उनको कभी भी आमरण खांसी नहीं उठी । चिलम के इस अनुभव को कोई भूल सकता है ।। 225 ।। इस प्रकार वह दिन गुरुवार का था , वही चावड़ी उत्सव का भी । उससे आनन्द द्विगणित हो गया । वास्तव में वह स्मरणीय हो गया ।। 226 ।। आठ से नौ बजे तक बाबा के सन्मुख आंगन में ताल मृदंग की ताल पर भजन का मजे से धूमधाम रहती ।। 227 ।। एक ओर अभंग गाते दूसरी ओर पालकी सजाते पालकी तैयार हो जाने पर बाबा फिर चावड़ी के लिए निकलते ।। 228 ।। पूर्व में सैंतीसवें अध्याय में चवड़ी की नवलाई का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है , देखो । इस स्थान पर दुहराना हो जायेगा ।। 229 ।। एक रात मस्जिद में दूसरी रात चावड़ी में बिताते । ऐसा बाबा का सतत नियम था । आमरण निर्विघ्न चलता रहा ।। 230 ।। चावड़ी के उत्सव, के प्रति प्रेमी बालाराम में उल्हास था । इसके लिए चावड़ी के समय धुरंधर बन्धु वापस आ गए ।। 231 ।। शिरडी क्षेत्र के नारी नर बाबा को साथ लेकर उल्लास से जयजयकार करते चावड़ी जाने के लिए निकले ।। 232 ।। श्याम सुन्दर जरीदार वस्त्रों से ढका हुआ व सुन्दर आभूषणों से अलंकृत था । जुलूस के आगे नाचता थिरकता चलता था ।। 233 ।। विभिन्न प्रकार के भोंपू व तुरही की ध्वनि में उस अलंकृत श्यामकर्ण सहित , साथ में पालकी , सिर पर छत्र भक्तों से घिरे साईं जुलूस में चलते ।। 234 ।। ध्वजा पताका हाथ में लिए , छत्र श्री साईं के सिर के ऊपर पकड़े , मोर के पंख की चवरी डोलाते , चारों ओर मशाल लिए हुए ।। 235 ।। भक्त समूह बाबा के दोनों ओर भजन करता ताल ढोल मृदंग आदि वाद्यों के मधुर स्वर के साथ चलता ।। 236 ।। इस प्रकार वह भव्य जुलूस जैसे ही चावड़ी के सन्मुख पहुंचता बाबा उत्तर मुख करके रुक जाते विधि पूर्वक हस्त क्रिया करते ।। 237 ।। दाहिने हाथ बाबा के भगत अपने हाथ से बाबा के आँचल पकड़ रहते बाएं हाथ तात्या पाटिल हाथ से लालटेन लेकर चलते ।। 238 ।। बाबा के मुँह का रंग पहले से ही पीतवर्ण था उस पर दीप आदि के तेज का मिश्रण ताम्र मिश्रित पीले सुवर्ण जैसे अरुण प्रभा मुख शोभायमान होता ।। 239 ।। उस समय का यह पवित्र दर्शन धन्य था । उत्तराभिमुख एकाग्र मन लगता किसी का आहवान दाहिना हाथ आधा उठा कर कर रहे हैं ।। 240 ।। वहाँ से फिर चावड़ी में ले जाकर बाबा को सम्मान से बैठाते । दिव्य अंलकृत वस्त्र

समर्पित करते, अंगो में चंदन लेपते ।। 241 ।। कभी कलगी लगी सुन्दर रत्न जड़ित पगड़ी , कभी सुवर्ण मुकुट या कभी गहरे रंग की पगड़ी सिर पर अलंकृत की जाती । जरीदार सुन्दर व भव्य वस्त्र भी अर्पित किए जाते ।। 242 ।। हीरे मोती पन्नो की माला प्रेम से बाबा के गले में डालते । कोई सुगन्धित कस्तूरी का टीका ललाट पर लगाता ।। 243 ।। कोई चरण प्रक्षालित करता । अर्घ्य पाद्य आदि पूजा अर्पित की जाती । कोई केसर का उबटन लगाता । मुँह में पान का बीड़ा डालते ।। 244 ।। पंचारती , कपूर नीरांजन लेकर जब बाबा की आरती घुमाई जाती तब बाबा की शोभा अनुपम दिखती ।। 245 ।। पांडुरंग की मूर्ति के समान दिव्य तेज उनके बदन पर शोभायमान होता । उनका वह तेज साईमुख मंडन देखकर धुरंधर विस्मयापन्न हो गए ।। 246 ।। नभोमंडल में बिजली जब तड़पती है तो कोई भूतल पर उसे नहीं देख पाता है । वैसा ही तेज साईं के ललाट पर चमकता जिससे आँखें चकाचौंध हो जाती ।। 247 ।। प्रातःकाल काकड़ आरती होते समय धुरंधर बन्धु वहाँ गए । वहां भी उन्होंने बाबा के मुख मंडल की उसी प्रभा का पुनः अवलोकन किया ।। 248 ।। तब से आमरण बालाराम की अत्यन्त निष्ठा साईं चरणों में निश्चित जुड़ी रही । यत्किंचित भी नहीं हिली ।। 249 ।। हेमाड साईं चरणों की शरण में है । अगले अध्याय में ग्रन्थ पूर्ण हो जायेगा । सिंहावलोकन में निरूपण होगा अन्तिम बार मुझे ध्यान दें ।। 250 ।। स्वस्ति श्रीसंत सज्जन प्रेरित , हेमाडपंत विरचित " श्रीसाईं समर्थ सच्चरित ” में “ भक्तत्रयवृत्तकथन ' नामक इक्यावनवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ ।।

।। श्री सद्‌गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय बावनवां (ग्रंथ सिंघावलोकन)।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईनाथ को नमन ।।

अब करता हूं सिंहावलोकन तदन्तर ग्रन्थ संपूर्ण । अवतरणिका देकर ग्रंथ का सारांश निवेदन ।। 1 ।। देह में रहते हुए अपने भक्तों को समय - समय पर जो अनुभव कराया स्मरण रहे, इसलिए ग्रंथ लिखवाया । इसी का संकलन " साईंलीला " है ।। 2 ।। " साईंलीला " परम पवित्र है । इसमें सच्चरित कथा क्रमबद्ध है। इसमें कहा गया निजगुरु चरित्र इस व उस लोक में बोधप्रद है ।। 3 ।। जिनके पास असंख्य कथाओं का संग्रह था किन्तु व्युत्पत्तिविद्या (शास्त्रज्ञान) रहित थे, उन हेमाड पंत का हाथ पकड़ कर निज सच्चरित लिखवाया ।। 4 ।। कुछ अपनी ख्याति स्वयं स्वमुख से शिष्यों को श्रवण कराते हैं उनके निजधाम चले जाने के बाद इसी से इस ग्रन्थ का स्फुरण हुआ ।। 5 ।। परस्पर गहन वार्ता का कथन जब साईं करते, श्रोता अत्यन्त तल्लीन हो जाते भूख प्यास बिसार कर ।। 6 ।। जिसने भी साईं स्वरूप देखा, उसके त्रिविध ताप हर गए । ऐसा जिसका तेज प्रताप, साद्यंत कैसे वर्णन किया जा सकता है ।। 7 ।। ऐसी साईं की उदार कीर्ति है । जो - जो उनकी भक्ति में लगा , उसके उद्धार के लिए निज ख्याति लिख डाली ।। 8 ।। गोदावरी में पवित्र स्नान , फिर समाधि दर्शन के बाद इस सच्चरितका श्रवण करने से त्रिताप शमन होगा ।। 9 ।। सहज ही जिसकी कथाओं को कहते अनजाने परमार्थ गले पड़ जाता है । प्रेम भाव से इस ग्रन्थ को दृष्टि डालने से करोड़ो पापों का नाश हो जाता है ।। 10 ।। जन्म - मरण के यातायात को खत्म करने की मन में जब इच्छा हो, तो गुरुपदों में अखंड स्मरण भक्ति व आसक्ति से जुड़ जाएँ ।। 11 ।। प्रमाद व मिथ्या ज्ञान के कारण आत्मरूप में अनिश्चय होता है, जिससे जनन - मरण का उद्भव होता है , सभी अनर्थ का कारक है, जो ।। 12 ।। मोह को मिथ्या ज्ञान कहते हैं । अनात्म में आत्म के अभिमान को मृत्यु का लक्षण विद्वान जन बताते हैं ।। 13 ।। साईं कथा - सागर मंथन तथा साईं कथा कथन करने से , जो नित्य नूतन है , श्रोताओं का अद्यः पतन नहीं होगा ।। 14 ।। साईं गुणमय स्थूल स्वरूप का निरंतर ध्यान करने से सूक्ष्मतम आत्मस्वरूप प्रकट होगा , सगुण का लोप होकर ।। 15 ।। सगुण रूप का प्रवेश न

होने पर आत्म ज्योति का ज्ञान नहीं होता है । परब्रह्म जो निर्विशेष (निराकार) है, उसे पूर्णरूप से जानना कठिन है ।। 16 ।। जिन्होंने अपने चरण दिखाकर प्रेम से अपने निष्कपट भक्तों को देही होते हुए भी विदेही कर दिया, अनजाने ही परमार्थ पर ला दिया ।। 17 ।। सागर का आलिंगन करते ही नदी अपना सरितापन भूल जाती है, वैसे ही भक्त जब शरण में आता है भक्त का द्वैत भाव शेष नहीं बचता है ।। 18 ।। दो दीप जब एक होते हैं एक से एक का आलिंगन होता है द्वैत स्थिति तत्काल खो जाता है एकत्व में एक ही दीप्त प्राप्त होता है ।। 19 ।। कपूर अपनी सुवास छोड़कर , सूर्य अपना प्रकाश छोड़ कर, कनक अपनी कांति छोड़ कर क्या निश्चित अलग रह सकता है ।। 20 ।। जैसे सागर में सरिता प्रवेश करती है,तुरंत सागर बन जाती है । लवण सागर में प्रवेश करते ही तत्काल सागर में समरस हो जाता है ।। 21 ।। उसी प्रकार साईं पदों की शरण में आते ही भक्तों का द्वैतपन शेष नहीं रहता । भक्त समसमान हो जाता है , अपना मैंपन त्याग कर ।। 22 ।। जागृति , स्वप्न अथवा सुषुप्ति उनमें से कोई भी स्थिति हो साईंमय वृत्ति हो जाने पर संसार निवृत्ति क्या और है ।। 23 ।। इस प्रकार अब साष्टांग होकर ,चरणों में आकर , यही मांगता हूँ, तुम्हारे बिना अन्यत्र मेरी इच्छा कहीं न भटके ।। 24 ।। ब्रह्म से लेकर तिनके तक घट मठ में अन्दर बाहर आकाश की भांति सर्व भूतों में परिपूर्ण है, विषमता जो यत्किंचित नहीं जानता है ।। 25 ।। सकल भक्त जिसके लिए सम समान हैं, जो मान अवमान नहीं जानता, जिसके मन को प्रिय अप्रिय नहीं ज्ञात , जिसमें तिलभर विषमता नहीं है ।। 26 ।। उस साईंसमर्थ की शरण में प्रवेश करता हूँ, जो निज स्मरण से सर्वार्थ देते हैं, कृतार्थ होकर उनके चरणों में अखंड माथा टेकना चाहिए ।। 27 ।। अब श्रोता सज्जन भक्त प्रवर सभी को मेरा नमस्कार । आप महान मित्रों से विनती करता हूं, कृपया सुनें ।। 28 ।। प्रत्येक माह समय निकाल कर कथा श्रवण किया, उन्हें क्षण भर के लिए भी विस्मृत नहीं पड़ने देना है ।। 29 ।। आप जब - जब सप्रेम चित्त से साईं की इस कथा का श्रवण करेंगे तब तब , मैं जो इसका वक्ता हूं , उसे साईं उल्लासिता देंगे ।। 30 ।। उसी प्रकार जब श्रोता एकाग्रचित्त नहीं होंगे वक्ता कभी भी सुप्रसन्न नहीं होंगे। परस्पर प्रसन्नता के बिना श्रवण का श्रम व्यर्थ जायेगा ।। 31 ।। भव सागर परम दुस्तर है (पार करना कठिन) । मोह की अनियंत्रित लहरें हिलोरे लेती अविचार के तट पर टकराती हैं । धैर्य के वृक्षों को उखाड़ देती हैं ।। 32 ।। अहंकार रूपी वायु की प्रबलता से हृदय रूपी समुद्र में तूफान उठ गया है जिसमें क्रोध और द्वेष आदि महामगर बड़े निर्भयपन में रह रहे हैं ।। 33 ।। ' मैं ' ' मेरा ' ये मगर हैं । वासना विकल्प की अपार

भवरों में निंदा, घृणा व ईर्ष्या रूपी असंख्य जलचर, विहार कर रहे हैं ।। 34 ।। यद्यपि यह सागर ऐसा भयंकर है अगत्स्य रूप में गुरुवर इसे पी जाते हैं जो उनकी चरणरज के दास हैं उन्हें इससे लेशमात्र भी भय नहीं है ।। 35 ।। इसलिए साईं समर्थ सद्गुरु भव सागर से पार उतारने वाले है । हम जो केवल आंचल पकड़े हैं उन्हें उस पार सुरक्षित उतारेंगे ।। 36 ।। यह भवसागर पार करना कठिन है । साईं के चरणों को नाव बना लो निर्भय दिखायेंगे दूसरा किनारा । दृढ़ निष्ठा की यही महिमा है ।। 37 ।। ऐसा व्रत पालन करने से संसार दुःख की तीव्रता का आभास नहीं होता है । इससे बड़ा कोई अन्य लाभ नहीं है । यही समर्थता सेव्य है ।। 38 ।। साईं के चरणों में अत्यन्त भक्ति हो , नयनों में साईं मूर्ति जड़ी हो , सर्वभूतों में साईं ही दिखते हों, ऐसी स्थिति भक्तों की हो जावे ।। 39 ।। स्वच्छन्द आचरण करके पूर्वजन्म में पतन हुआ । अब कम से कम सद्गति प्राप्त हो । वासनाओं से निर्मुक्त होकर ।। 40 ।। पीछे साईं समर्थ के रहते कोई भी हाथ नहीं लगा सकता , ऐसे संकल्प में जिनकी निष्ठा है वे साईं भक्त धन्य हैं ।। 41 ।। अब इस प्रकार मन में आता है कि बाबा के चरण पकड़ कर उनसे एक प्रार्थना करूं , सभी भक्त जन के लिए ।। 42 ।। यह ग्रन्थ सब घरों में हो , नित्य पाठन हो , नियम प्रेम से पारायण हो , उससे संकट दूर हों ।। 43 ।। शौचादि के बाद प्रेम और श्रद्धायुक्त होकर जो इसका सात दिन तक पाठ करेगा उनके अनिष्ठ शान्त हो जायेंगे ।। 44 ।। यह अध्यात्म के तंतुओं से बुना गया है , श्रीकृष्ण व ब्रह्म की कथाओं से भरा है, आत्मा व ब्रह्म से एकत्व की मधुरता से रसमय हो गया है अद्वैत में अपूर्व जड़ा गया है ।। 45 ।। एकनाथ के इस काव्य नन्दन वन में बत्तीस खण्डों के वृन्दावन में ज्ञानी अज्ञानी रमते हैं , स्वादिष्ट दूध के आनन्द में ।। 46 ।। इस सच्चरित का श्रवण करने से अथवा नियम से पारायण करने से, साई मधुर समर्थ के चरण अबिलंब संकट निवारण करेंगे ।। 47 ।। धन की इच्छा करने वालों को धन का लाभ , शुद्ध व्यवहार में पूर्व यश मिलेगा । निष्ठा के अनुरूप फल मिलेगा । भाव के बिना अनुभव नहीं होता ।। 48 ।। आदर से ग्रंथ का पाठ करने से, साईं समर्थ सुप्रसन्न होकर अज्ञान व दारिद्रय विच्छिन्न करेंगे , ज्ञान धन की संपन्नता देंगे ।। 49 ।। ग्रंथ रचना के लिए साईं का संकेत था , वैसा ही उनका गुप्त मनोगत था । उस भक्त का जीवन धन्य होगा जो उनके चरणों में अनुरक्त होगा ।। 50 ।। चित्त को सुसमाहित करके नियम व निष्ठा से यह सच्चरित पढ़कर एक अध्याय प्रतिदिन करें , अमित सुखदायी होगा ।। 51 ।। जिसके मन में स्वहित विचार है, उसे इस सत्य ग्रन्थ को पढ़ना चाहिए । जन्म जन्मान्तर साईं के उपकार का सहर्ष

स्मरण करता रहेगा ।। 52 ।। गुरु पूर्णिमा , गोकुल अष्टमी, पुण्यतिथि और रामनवमी जैसे श्री साईं के उत्सवों पर नियम से ग्रन्थ को अपने घर पढ़ना चाहिए ।। 53 ।। मन में जैसी - जैसी इच्छा वैसी - वैसी जन्म प्राप्ति । अन्त के समय जैसी मति वैसी गति शास्त्र का इस संबंध में यही विचार है ।। 54 ।। श्रीसाईं भक्तों के आधार हैं । उनके बिना विघ्नों का नाश नहीं हो सकता । इसमें आश्चर्य क्या है , बच्चों के प्रति माँ की करुणा होगी ही ।। 55 ।। इससे आगे क्या कथा कहूं । शब्द जहां रुक जावें, मौन वृत्ति होनी चाहिए। यही योग्य स्तुति है ।। 56 ।। इसलिए मोक्ष की तीव्र इच्छा मन में धारण कर शुभ कर्म ही नित्य करो । श्रवण आदि नव विधा भक्ति का सेवन करने से अन्त: करण शुद्ध होगा ।। 57 ।। यह सद्गुरु के प्रसाद के बिना नहीं हो सकता है । उसके बिना परतत्त्व का ज्ञान नहीं हो सकता न ही " मैं ही ब्रह्म हूं" इसका स्मरण नित्य रह सकता है , न ही गुरु में निष्ठा का भाव उत्पन्न होगा ।। 58 ।। गुरु से संबंध जैसे पिता पुत्र का , यह उपमा नाम मात्र की है । पिता इस लोक में सुख का पात्र बनाता है। गुरु इस लोक व परलोक में सुख दाता है ।। 59 ।। पिता क्षणिक धन देगा , गुरु जो देगा वह क्षयातीत होगा । अविनाशी वस्तु की प्रतीति कराकर अपरोक्ष हाथ में दे देगा ।। 60 ।। माता नौ मास तक पेट में धारण करती है, जन्म देकर बाहर निकाल देती है । पर गुरु माता उल्टा करती है । बाहर को भीतर ले लेती है ।। 61 ।। अन्त में गुरु , गुरु , स्मरण करते शिष्य निःशंक सायुज्यता प्राप्त कर लेता है । फिर वह स्वयं गुरु से पिटने पर पूर्ण ब्रह्मता को प्राप्त हो जाता है ।। 62 ।। गुरु के हाथ का आघात जन्म मरण को पूर्ण समाप्त कर देगा । गुरु के द्वारा देह का अन्त कर देने पर, फिर उससे बड़ा भाग्यवंत कौन होगा ।। 63 ।। खड्ग , गदा , फरसा , माला आदि हाथ में लेना पड़ता है । आघात पड़ते ही शुद्धि हो जाती है । फिर सद्गुरु की मूर्ति दिखेगी ।। 64 ।। कितना ही शरीर का जतन करें कभी तो मृत्यु होगी, फिर उनका गुरु के हाथ हनन पुनर्जन्म हारक है ।। 65 ।। जब तक मेरा अंत न हो जाये, कृपया मुझे मारो । मेरे समूल अंहकार को नष्ट कर दो । जिससे पुनर्जन्म न हो ऐसा दुर्धर मार मुझे मारो ।। 66 ।। मेरे कर्म - अकर्म जला दो । मेरे धर्म अधर्म को निवारो । जिससे मुझे परम सुख होगा ऐसा मोहभ्रम नष्ट कर दो ।। 67 ।। मेरे संकल्प विकल्पों को दूर कर दो। मुझे निर्विकल्प कर दो । मुझे न पुण्य चाहिए न ही पाप । न ही जन्म की कष्ट पूर्ण पीड़ा चाहिए ।। 68 ।। शरण में बलपूर्वक प्रवेश करने जाता हूं तब तूं चारों ओर पूर्व पश्चिम सभी दिशाओं में नीचे ऊपर आकाश पाताल में खड़े हो जाते हो ।। 69 ।। हर जगह आप का वास होता है, तो मुझमें भी

तुम्हारा वास हो जाता है । अधिक क्या कहूं ' मैं ' ' तू ' का भेद का आभास करने के लिए मुझे प्रयास करना पड़ता है ।। 70 ।। इसलिए हेमाड अनन्य शरण में है । सद्‌गुरु चरणों को दृढ़ता से धरता है पुनर्जन्म मरण को समाप्त करके निज उद्‌धार संपादित करता है ।। 71 ।। क्या यह कृति कम अद्‌भुत है कि असंख्य भक्तों के उद्‌धार के लिए निज चरित का निर्माण किया, हेमाड को निमित्त बना कर ।। 72 ।। यह श्री साईं समर्थ चरित मेरे हाथों हुआ, यह आश्चर्य है, नहीं तो साईं कृपा के बिना मुझ पामर से यह होने वाला नहीं था ।। 73 ।। न ही अधिक दिनों तक साथ रहना हुआ था , न ही संत को जानने का अभ्यास था , न शोधक दृष्टि ने शरीर में साहस । अविश्वास पूर्वक शोध करता था ।। 74 ।। कभी भी अनन्य भाव से उपासना नहीं की । न ही कभी भी क्षण भर भजन के लिए बैठा । लोगों को दिखाने के लिए ऐसे हाथ से चरित लेखन कराया ।। 75 ।। अपने वचन के अर्थ को साधने के लिए साईं ने ही इस ग्रंथ का स्मरण कराया । निज कार्यार्थ को पूर्ण किया । हेमाड व्यर्थ नाम वाला है ।। 76 ।। मक्खी क्या मेरु पर्वत उठा सकती है । या टिटिहरी सागर को पी सकती है , किन्तु पीठ पीछे सद्‌गुरु खड़े हों तो अद्‌भुत करनी करा देते हैं ।। 77 ।। इस प्रकार अब श्रोता जन तुम्हारा अभिवंदन करता हूं । यह ग्रन्थ संपूर्ण हो गया है साईं का साईं को समर्पण ।। 78 ।। श्रोता बंद छोटे - बड़े एक ओर से सभी को मेरा प्रणाम । तुम्हारे ही धर्म से इन साई सच्चरित की कथाओं को क्रमानुसार पूर्ण करना संभव हुआ ।। 79 ।। मैं कौन यहां पूर्ण करने वाला हूँ, यह तो व्यर्थ का अहंकार है। जहाँ साई सूत्रधार वहाँ यह कहने वाला मैं कौन होता हूँ ।। 80 ।। इसलिए परेशानी का मूल अभिमान त्याग कर निज गुरु के गुणों का गुण गायन करो । ऐसे वाग्यज्ञ को समाप्त करता हूँ, जो बोधप्रद व सुखद है ।। 81 ।। यहां ग्रंथ पूर्ण होता है । मेरा मनोरथ पूर्ण हो गया । साईं कार्यार्थ पूर्ण हो गया । मैं भी कृतार्थ हो गया ।। 82 ।। ऐसे ग्रंथ का संपूर्ण अध्ययन करने पर मनोकामना पूर्ण होगी । हृदय में सद्‌गुरु चरण को धारण करने वाला भव सागर उत्तीर्ण हो जाएगा ।। 83 ।। रोगी आरोग्य प्राप्त करेंगे , दरिद्र धनाढ्य होंगे । संकल्प - विकल्प का स्थैर्य होगा । दीन उदार होवेंगे ।। 84 ।। पिशाच - बाधा व मिर्गी ,ग्रंथ पाठ करने से दूर होगी । मूक अपंग पंगु बधिर - उन्हें भी यह श्रवण सुखकर होगा ।। 85 ।। जो शक्तिमान परमेश्वर को भी विसर गए हैं, ऐसे जो अविद्‌या मोहित नर हैं, उनका भी उद्‌धार होगा ।। 86 ।। नर होकर जो असुरों का आचरण करते हैं, अपने देह को व्यर्थ गवाते हैं, संसार को सुख का खजाना मानते हैं, उनका भी उद्‌धार होगा ।। 87 ।। साईंनाथ की करनी अगाध है। हेमाड को चरणों में

पूर्णरूप से स्थापित कर लिया है। उन्हें निज सेवा में लगाकर यह सेवा करवा ली ।। 88 ।। अन्त में जो जगच्चालक है, प्रबुद्ध प्रेरक सद्गुरु है, उसके चरणों में लेखनी व मस्तक असीमितता के साथ अर्पित करता हूँ ।। 89 ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

।। अध्याय तिरपनवां (अवतरणिका) ।।

।। श्री गणेश को नमन ।। श्री सरस्वती को नमन ।। श्री गुरु को नमन ।। श्री कुलदेवता को नमन ।। श्री सीतारामचन्द्र को नमन ।। श्री सद्गुरुसाईनाथ को नमन ।।

श्री साईं साक्षात् ब्रह्म मूर्ति हैं । संत सम्राट चक्रवर्ती हैं । बुद्धि स्फूर्ति प्रदायक हैं । समर्थ सद्गुरु की कीर्ति जगत में प्रसिद्ध है ।। 1 ।। अनन्य भाव से उनकी शरण में हूँ । उनके पुण्य चरणों की वंदना करता हूं जो जन्म मरण को टाल देते हैं । सांसारिक भय को हर लेते है ।। 2 ।। गत अध्याय में वचन दिया गया था , " प्रथम सिंहावलोकन करुंगा तदन्तर अवतरणिका देकर ग्रंथ को पूर्ण करूंगा " ।। 3 ।। पंत हेमाड ने ऐसा कहा था । किन्तु वैसा हुआ नहीं । अवतरणिका रूप में सार लिख दिया या विस्मृत रह गया ।। 4 ।। जिसके द्वारा ग्रन्थ लेखन आरम्भ हो उसी के द्वारा वह पूर्ण हो अन्त में अवतरणिका देकर , ऐसा सर्वत्र नियम है ।। 5 ।। पर नियम का अपवाद भी होता है । उसी का प्रमाण यहां दिखता है । कुछ भी स्वेच्छा के वश में नहीं है, बाबा का मनोगत बली है ।। 6 ।। हेमाड अचानक दिवंगत हो गए । सभी के चित्त दुःखित हुए । किसी को कुछ समझ नहीं आ रहा था । अवतरणिका मिली नहीं ।। 7 ।। ग्रन्थकार अण्णा साहेब दाभोलकर का दफ्तर गहन था । उनके पुत्र श्री गजानन ने प्रयास करके ढूंढा । जितना जरूरी था मुझे दे दिया ।। 8 ।। अण्णा साहेब किफायती थे । कागज के छोटे टुकड़ों को व्यर्थ न जाने देते थे । काम निपुणता और सुन्दरता से करते थे । ऐसा उनका स्वभाव था ।। 9 ।। अध्याय को कागज के टुकड़ों पर लिखते थे । उसी को मुद्रक के हाथ में दे देते । व्यर्थ खर्च उनके मन को चुभता था । उनके समान कोई नहीं ।। 10 ।। निर्जीव बेचारे ये कागज के टुकड़े, उनके अन्दर करुणा उपजी होगी । संत केसरी की सेवा किए बिना इनका उद्धार किस प्रकार होगा ।। 11 ।। हेमाड के मन में आया होगा । कागज के छोटे टुकड़ों को एकत्र करके , उनके हाथ से सेवा करवायी । ऐसा उदात्त उद्देश्य था ।। 12 ।। अन्तिम अध्याय इसी प्रकार था । कागज के छोटे टुकड़ों पर लिखा था । बहुत मनन किया, किन्तु उसमें अवतरणिका नहीं मिली ।। 13 ।। गजाननराव व बाबा साहेब तर्खड आदि जो विषय से संबंधित थे, सबकी राय हुई कि अवतरणिका होनी चाहिए ।। 14 ।। बाबा साहेब ने श्री साईं लीला पत्रिका में मुद्रित करके प्रचारित कर दिया ।

निर्धारित समय समाप्त हो जाने पर भी अवतरणिका अवतरित नहीं हुई ।। 15 ।। हेमाङ गोविंद सद्गुणों की खान थे । वेदान्त पारंगत थे । ग्रन्थ में प्रसाद वाणी अभिव्यक्त हुयी है। गुरु कृपा की करनी अद्भुत है ।। 16 ।। सद्गुरु साई के भक्त अनंत हैं । उनमें कविरत्न हैं हेमाड पंत । उनके समान जो प्रज्ञावंत (ज्ञानी) होगा वही महंत कर सकता है यह कार्य ।। 17 ।। कहीं से अवतरणिका मिली नहीं । मेरा मन खिन्न हो गया । दत्त गुरु से प्रार्थना की । उनकी करुणा की याचना की ।। 18 ।। " मैं पामर मंदबुद्धि जिसमें न विचार है न विद्या की गंध है । कैसे मुझे काव्य लिखना आयेगा । मैं मूलतः कवित्व में शून्य हूँ ।। 19 ।। पर इसका एक आधार है । जब श्री दत्त की अनुकूलता हो तब मक्खी से भी मेरु पर्वत उठवा सकते हैं। उनकी शक्ति इतनी बड़ी है ।। 20 ।। पुनः उमारमणा से प्रार्थना की कि साईं नारायण की कृपा उत्पन्न हो , अवतरणिका लिखने की मेरे मन को तुरन्त प्रेरणा दें ।। 21 ।। कवित्व करने की शक्ति नहीं है । गुरुराया मेरी मंदमति को जानते हैं , उनके पांवों में नत मस्तक होकर अवतरणिका लिखने में लगता हूँ ।। 22 ।। अवतरणिका ग्रन्थ का खण्ड है । करने वाले वक्रतुंड साईं हैं । उनका वैभव अद्भुत व प्रचण्ड है । मेरा चेहरा तो निमित्त मात्र है ।। 23 ।। ' प्रथम ' अध्याय में मंगलाचरण है । विघ्नहर्ता , विश्वादि के कारण , गौरीशंकर के कंठ के आभूषण , श्री गजवदना को नमन किया गया है ।। 24 ।। जो अभिनव वाग्विलासिनी हैं, चातुर्य कला कामिनी हैं, उन श्री शारदा विश्वमोहिनी को इष्टार्थ प्रदान करने के लिए नमन किया गया है ।। 25 ।। कुलगुरु , सगे संबंधी, गुरुजन , सगुण अवतार , संतसज्जन, शरण में जाने योग्य कैवल्य निधान सद्गुरु साईं भगवान को नमन किया गया है ।। 26 ।। गेहूँ पीसने की पूरी कथा , महामारी का पूर्ण उपशमन कैसे किया , का वर्णन साईं सामर्थ्य को स्पष्ट करने के लिए किया है ।। 27 ।। प्रस्तुत ग्रंथ प्रयोजन , हेमाड पंत नामकरण , गुरु की आवश्यकता के विवाद का खंडन हेमाड को साईं दर्शन ' द्वितीय ' अध्याय में है ।। 28 ।। ग्रंथ लेखन अनुज्ञापन कैसे साईं मुख से निकला , रोहिला का वृत्त कथन पूर्ण रूप से 'तृतीय ' अध्याय में किया गया है ।। 29 ।। जगच्चालक के कंठ के आभूषण साधु संतो का अवतरण भूमंडल पर किस कारण , का विस्तार से विवरण दिया गया है ।। 30 ।। अत्रिनंदन दत्तावतार साक्षात कल्पवृक्ष श्री साईं के शिरडी क्षेत्र में प्रथम आगमन का समग्र वर्णन ' चतुर्थ ' में हैं ।। 31 ।। शिरडी क्षेत्र में गुप्त होने , पुनः वहाँ प्रकटने , सभी को विस्मयापन्न करने , श्रीमंत चाँद पाटिल के साथ ।। 32 ।। गंगागीर आदि संत सम्मेलन , अपने सिर पर दूर से जल ढोकर कैसे उद्यान का निर्माण करते , समस्त निरूपण

‘ पांचवे ' अध्याय में है ।। 33 ।। राम नवमी का महान उत्सव , बाला बुवा कीर्तनकार , मस्जिद माई का जीर्णोद्धार का सविस्तार कथन ' छठे ' अध्याय में है ।। 34 ।। बाबा का समाधि खंड - योग , धोती - पोती इत्यादि का प्रयोग , बाबा का हिन्दू या यवन का ढोंग , संतों की अगाध तरंग ।। 35 ।। बाबा का पहनावा , व्यवहार , दवा , चिलम , जाति , धूनी , दिया, उनकी बीमारी, उनकी सेवा , पूर्ण अगम्य दृश्य ।। 36 ।। भागोजी शिंदे की महा व्याधि , खापर्डे के पुत्र के ग्रन्थिज्वर की औषधि , नाना साहेब चन्दोरकर का पंढरी दर्शन का विचार , ‘ सप्तम ' में , उत्तम बुद्धि जिनकी है, उन कवि हेमाडपंत द्वारा कहा गया है ।। 37 ।। नर जन्म की अपूर्व महिमा , साईं की भिक्षा वृत्ति का वर्णन , बायजाबाई का संत सेवन , बाबा का अद्भुत भोजन ।। 38 ।। बाबा तात्या पाटिल और म्हालसापति ये तीनों लोग रात्रि में मस्जिद में सोते थे । बाबा की अपूर्व प्रीति दोनों के लिए एक समान थी ।। 39 ।। रहाता ग्राम के खुशाल चन्द और शांति - ज्ञान - कंद बाबा के परस्पर प्रेम संबंध के आनंद का निरूपण ' आठवें ' अध्याय में है ।। 40 ।। तात्या साहेब नूलकर , तात्या पाटिल भक्तवर तथा आंग्लभूमि के महाशय का आज्ञा भंग के कारण प्रायश्चित ।। 41 ।। पंचमहायज्ञ करवाकर बाबा भिक्षा के अन्न का सेवन करने , भिक्षा के अधिकार संपन्नता का लक्षण , का चतुराई से वर्णन किया है ।। 42 ।। श्रेष्ठ बाबा साहेब तर्खड , कट्टर प्रार्थना समाजी , एकनिष्ठ साई भक्त बन गए । उत्कृष्ट कथा ' नवें ‘ अध्याय में है ।। 43 ।। लम्बाई पूरे चार हाथ तथा एक वीतभर चौड़े लकड़ी के तख्ते पर , छत की लकड़ी से टांग कर , योगेश्वर बाबा शयन करते ।। 44 ।। कब शिरडी में चरण पड़े । वास्तव में कितने वर्ष रहे । देहावसान कब हुआ , का हृदय को छूने वाला निरूपण किया गया है ।। 45 ।। अन्दर शांत इच्छा रहित स्थिति , बाहर से पिशाच वृत्ति का दिखावा , नित्य चित्त में लोगों का मार्गदर्शन करने की अटल प्रवृत्ति गुरुराया की ।। 46 ।। वेद शास्त्र के धर्म लक्षण , परमार्थ और व्यवहार शिक्षण भक्त अभक्त का चित्त परीक्षण , सद्गुरु की विलक्षण कला ।। 47 ।। बाबा का आसन , बाबा का ज्ञान , बाबा का ध्यान , बाबा का स्थान उनकी सामर्थ्य और महिमा , संपूर्ण कथन ' दसवें ' अध्याय में है ।। 48 ।। सच्चिदानंद स्वरूप स्थिति , दिवंगत बाबा की प्रख्याति , डाक्टर पंडित की प्रेमभक्ति , सिद्दीक फालके की वृत्ति का वर्णन है ।। 49 ।। कैसे बादलों को खीच लिया , कैसी विलक्षण अग्नि पर अधिकारिता , अग्नि से संरक्षण सुरस विवरण ‘ ग्यारहवें ' में है ।। 50 ।। काका महाजनी , धुमाल , नाना साहेब निमोणकर , एक मामलेदार , एक डाक्टर , भिन्न - भिन्न प्रकार के प्रसंग का मधुर वाणी में वर्णन है ।। 51 ।। नासिक

के शंकालु अग्निहोत्री मुले , संत घोलप राम के अनुयायी , उनके साईं दर्शन की नवलाई ' बारहवें ' अध्याय में वर्णित है ।। 52 ।। बाला शिंप्पी के मलेरिया ज्वर का नाश काले कुत्ते को दही चावल देने से हुआ । बापू साहेब बूटी की महामारी का शमन अखरोट पिस्ता खिलाकर किया ।। 53 ।। आलंदी स्वामी का कर्णरोग , आशीर्वचन से किया निरोग । काका महाजनी के अतिसार को मूंगफली के दाने से ठीक कर दिया ।। 54 ।। हरदा के भक्त दत्तोपंत पेट की पीड़ा की व्याधि से ग्रस्त आशीर्वाद से मुक्त किया , सभी जन देखते रहे ।। 55 ।। एक भीमाजी पाटिल कफ - क्षय की व्याधि लगी थी , ऊदी लगाने से रोग हरण हो गया । वृतांत का वर्णन ' तेरहवें अध्याय में है ।। 56 ।। रतन जी पारसी , विख्यात व्यापारी , खिन्न मन , पुत्र संतान उसे देकर हर्ष के आकाश पर बैठा दिया ।। 57 ।। मौलवी साहेब गुप्त संत, नांदेड शहर में कुलीगीरी करते , साईं के संकेत से ज्ञात हो गए । ' चौदहवें में अद्‌भुत कथा है ।। 58 ।। नारदीय कीर्तन पद्‌धति बाबा ने दासगणु को बतायी । चोलकर का व्रत पूर्ण होने पर शक्कर के साथ चाय पिलवायी थी ।। 59 ।। औरंगाबाद से छिपकली आएगी , मस्जिद में छिपकली से भेंट करेगी , चहचहाहट पर बाबा ने बात कही थी । पन्द्रहवें ' में कथा का निरूपण है ।। 60 ।। संतति संपत्ति संपन्न , साईं यश की दुंदुभी सुनकर , एक सज्जन शिरडी आए ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने ।। 61 ।। जो ब्रह्म ज्ञान की इच्छा करते हैं उनकी संसार से विरक्ति होती है । धन के प्रति आसक्ति छूटनी चाहिए उनके चित्त से , पहले ।। 62 ।। पांच रुपए उधार जो बाबा को क्षणभर के लिए नहीं दे सका , वस्त्र के अन्दर नोट रहते हुए भी , कैसे उसे ब्रह्म मिले ।। 63 ।। साईं की सुन्दर बोध शैली हेमाड की दैवी वाणी का संयोग दूध में शक्कर जैसी । कथा मनोहर ' सोलहवें अध्याय में है ।। 64 ।। पूर्व कथा से संबंधित ब्रह्म ज्ञान का विस्तार से कथन जो निःसन्तान है उनके धन लोभ का मधुर वर्णन ' सत्रहवें अध्याय में है ।। 65 ।। साठे की गुरुचरित्र कथा , राधाबाई की उपेदश वार्ता , हेमाड की अनुग्रहता कथन कुशलता ' अठारहवें ' अध्याय में है ।। 66 ।। अनुग्रह कथा का विस्तार , साईं श्री के बोध के अनुसार बहुत - बहुत विचार ' उन्नीसवें अध्याय में है ।। 67 ।। ईशावास्य - भावार्थ बोधिनी " दासगणु ने प्रारम्भ की उनके मन में शंका उपजी उसे बाबा से पूछा ।। 68 ।। बाबा ने कहा काका (दीक्षित) की नौकरानी से उसका निवारण होगा । सद्‌गुरु महिमा असाधारण है । सुन्दर निरूपण ' बीसवें ' में है ।। 69 ।। एक सुलक्षण प्रांताधिकारी , दूसरे योग्य पाटणकर तीसरे एक विलक्षण वकील तीनों पर अनुग्रह ' इक्कीसवें अध्याय में है ।। 70 ।। मस्जिद माई भव तारिका है वही द्‌वारावती द्‌वारिका हैं । बाबा सभी

लोगों से कहते । भावार्थ एक भी नहीं जान सका ।। 71 ।। मस्जिद माई के गुणों का वर्णन , मिरीकर व बुट्टी के सर्पदंश को टालना , अमीर शक्कर की वात पीड़ा का हरण , उनके सर्पभय का निवारण ।। 72 ।। हेमाड का बिच्छू दंश संकट , औरों को दर्पदंश संकट से बचाकर अल्पायु मृत्यु की दुर्घटना टाली । प्रसंग ' बाइसवें ' में प्रकट है ।। 73 ।। योगाभ्यासी की शंका का निरसन , माधवराव के सर्पदंश का निवारण , धूनी , ईंधन , बकरे के हनन , का वर्णन अति रम्यता से किया गया है ।। 74 ।। बड़े बाबा का बडप्पन , गुरु आज्ञा के प्रति निष्ठा का अभाव , कितना भी हो फिर भी चाह , मूलतः अतृप्त स्वभाव ।। 75 ।। काका साहेब श्रेष्ठ भक्त थे , गुरु की आज्ञा के प्रति परम एकनिष्ठ , सद्गुरु लीला का विशिष्ट कथन, उत्कृष्ट ढंग से, तेईसवें ' अध्याय में है ।। 76 ।। भुने हुए चने को निमित्त कर हेमाड पंत को शिक्षा दी । सद्गुरु स्मरण किए बिना विषय सेवन नहीं करना चाहिए ।। 77 ।। अण्णा बाबरे और मौसीबाई दोनों के बीच झगड़ा साईं ने कराया उस विनोद मस्करी की नवलाई कवि श्रेष्ठ ने चौबीसवें ' अध्याय में गायी है ।। 78 ।। भक्त दामूअण्णा कासार , अहमद नगर के रहने वाले , की बहुत बड़ी इच्छा थी कपास और चावल का व्यापार करने की ।। 79 ।। उद्यम में वास्तव में हानि होगी । आम्रफल सेवन से सन्तान प्राप्त होगी | ज्ञान के सूर्य साईं ने बताया । निरूपण किया है , पच्चीसवें में ।। 80 ।। पंत नाम का एक भक्त था । संत से अनुग्रहीत था । उसे तुरन्त संकेत देकर संतुष्ट कर दिया संत प्रमोदित हो गए ।। 81 ।। हरिश्चन्द्र पितले भक्त थे , उनका पुत्र मिरगी रोग से ग्रस्त था । कृपावलोकन से समस्त रोग अस्त हो गया ।। 82 ।। पितले को तीन रुपये दिए । कहा पहले दो दिए थे । बाबा ने कहा पूजन किया करो । छब्बीसवें ' अध्याय में रुचिर कथा है ।। 83 ।। हाथ में भागवत पोथी दिया , स्वयं प्रसाद स्वरूप वापस लेने के लिए । काका महाजनी ने इस इच्छा से दिया था । भगवान साईं ने माधवराव देशपांडे को दे दिया ।। 84 ।। विष्णुसहस्र नाम की पोथी एक रामदास के पोथियों में थी उसे बाबा ने बिना उन्हें इसकी जानकारी दिए माधवराव को दे दी ।। 85 ।। विष्णुसहस्रनाम की पोथी देकर शामराव पर अनुग्रह कैसे साईं दयाधन ने किया । कथा निरूपण ' सत्ताइसवें ' में है ।। 86 ।। भक्त लक्ष्मीचंद मुन्शी , बुरहानपुर वासी चिड़ीबाई , पुण्य राशि ब्राह्मण मेघा बाबा के चरण में पहुंचे ।। 87 ।। स्वप्न में सबको दृष्टान्त देकर उसकी अनुभूति जागृतावस्था में देते । सद्गुरु साईं माँ की अगम्य लीलाओं को प्रेम से कहा गया है ' अट्ठाइसवें अध्याय में ।। 88 ।। मद्रास की भजन मंडली शिरडी क्षेत्र में आयी थी भोलाशंकर बाबा की दान औदार्य का उत्सव

देखने ।। 89 ।। रघुनाथ राव तेन्डुलकर के पुत्र का परीक्षा प्रकरण , उनकी पेंशन चिंता दूर करना । बाबा की मनोहर लीला ।। 90 ।। भक्त डाक्टर कैप्टन हॉटे , का साईं चरणों में बहुत प्रेम था । सुबह स्वप्न में दर्शन दिया । उन्तीसवें में सुन्दर कथानक है ।। 91 ।। सप्तश्रृंगी देवी उपासक काका जी वैद्य नामक कोई थे । देवी ने उन्हें दृष्टांत दिया एक संतनायक साईं को देखने का ।। 92 ।। शामराव का उसी देवी से किया गया एक संकल्प पूरा करने के तीस बर्ष के बाद वणी जाना हुआ 93 ।। राहटा के सेठ चन्द खुशाल पंजाबी ब्राह्मण राम लाल दोनों को स्वप्न में " शिरडी चल " ये साईं के बोल का कथन ' तीसवें अध्याय में है ।। 94 ।। विजयानंद मद्रास के संन्यासी , सरस मानसरोवर जाने के लिए निकले , को निजपदों के पास रोक लिया श्री हृषीकेश (साई) बाबा ने ।। 95 ।। भक्त - श्रेष्ठ मानकर , साईंपद कमल के मधुकर , हिंसक क्रूर व्याघ्र के उद्धार का सुन्दर कथन इकत्तीसवें में है ।। 96 ।। हम चार सज्जन संत देव का शोध करने जंगल में घूम रहे थे । मेरा अभिमान गलित होने पर गुरुराया ने दर्शन दिया ।। 97 ।। उपवास करने वाली गोखलेबाई और साईं की दूसरी कथाओं की नवलाई अपने मुख से हेमाड ने ' बत्तीसवें ' अध्याय में गायी है ।। 98 ।। नारायण जानी के मित्र को एकाएक बिच्छू ने डंक मार दिया । एक भक्त की कन्या को ज्वर से छुटकारा दिया ।। 99 ।। चांदोरकर की पुत्री भारी प्रसव वेदना से घबरा गयी थी । किसी को तिलभर भी समझ नहीं आ रहा था । स्वयं जान कर हृदय दुःखित हो गया ।। 100 ।। कुलकर्णी साहेब भक्तवर , बाला बुवा भजनकार , बलवत्तर ऊदी प्रभाव सभी को वस्तुतः ज्ञात हो गया था ।। 101 ।। भक्त हरीभाऊ कर्णिक , श्रद्धावंत और पवित्र थे उनकी दक्षिणा की कथा मोहक व बोध प्रदायक तेंतीसवें अध्याय में है ।। 102 ।। माले गांव के एक डाक्टर थे । भतीजा हड्डी के फोड़े से अति जर्जर । डाक्टर पिल्ले भक्त प्रवर नारू (गिनी वर्म के नासूर) से अत्यन्त पीड़ित थे ।। 103 ।। बापा जी श्री शिरडी के , पत्नी ग्रन्थि ज्वर से जर्जर थी । एक ईरानी छोटी कन्या शरीर अकड़ जाने से बहुत व्यथित थी ।। 104 ।। हरदा के एक सज्जन पथरी से अति अस्वस्थ थे । मुम्बई के एक प्रभु कायस्थ , पत्नी प्रसूति रोग से ग्रस्त थी ।। 105 ।। ऊपर बताई गयी व्याधियों का दूर भगाना केवल ऊदी के स्पर्श से बिना एक क्षण लगे कर दिया । रसाल निरूपण ' चौतीसवें ' अध्याय में है ।। 106 ।। एक महाजनी के मित्र थे । वे निर्गुण के पूर्ण उपासक , बन गए एकमात्र मूर्ति पूजक दर्शन करके ।। 107 ।। धरमसी जेठाभाई ठक्कर , मुंबई के एक सॉलीसिटर को सबीज अंगूर की तत्काल निर्बीज करके गुरुवर ने उन्हें दिया ।। 108 ।। बान्द्रा के एक कायस्थ , वह

शान्ति से सो नहीं पाते थे और नेवास के बाला पाटिल को ऊदी की अनुभूति पैतीसर्वे ' अध्याय में है ।। 109 ।। गोमांतक के दो महानुभावों ने अलग - अलग प्रतिज्ञा की एक सेवावृत्ति में लगने के लिए दूसरा चोरी का पता लगाने के लिए ।। 110 ।। दोनों को प्रतिज्ञा विस्मृत हो गयी । साईं समर्थ ने स्मृति दिलायी । त्रिकालज्ञान ब्रह्माण्डव्याप्त की कीर्ति का वर्णन कौन कर सकता है ।। 111 ।। औरंगाबाद सखाराम की पत्नी पुत्र के लिए साईं के चरणों में भागीं । इच्छा पूर्ति के लिए श्रीफल देने की कथा ' छत्तीसवें ' अध्याय में है ।। 112 ।। चावडी - सभारंभ उत्सव अन्यत्र देखने को बिरले ही मिलता है । हेमाड आँखों से देखा वर्णन किया । रसाल कथा सैतीसवें ' अध्याय में है ।। 113 ।। हाँडी में भिन्न - भिन्न पदार्थ पकाकर नाना पकवान तैयार करते । सभी को प्रसाद भोजन देते । मनोहर वर्णन अड़तीसवें में है ।। 114 ।। " तद्विद्धि प्रणिपातेन " गीता के इस श्लोक का विवरण चांदोरकर को कहा था संस्कृत के अभिमान को हरने के लिए ।। 115 ।। संतनृप (साईंनाथ) ने दृष्टांत देकर बापू साहेब बुट्टी को , मंदिर बनवाने की आज्ञा दी । वृत्तांत ' उन्तालिसवें अध्याय में है ।। 116 ।। माता श्री के व्रत उद्यापन के लिए बालकृष्ण विश्वनाथ देव ने ब्राह्मण भोज कराया । पत्र लेखन करके बाबा को निमन्त्रण दिया ।। 117 ।। संन्यासी का वेष धारण करके उस दिन तीन विभूतियां आयीं । ब्राह्मणों के साथ जेवन करके चली गयीं । गुरुराया की लीला को न जान सके ।। 118 ।। हेमाड को दृष्टांत देकर बाबा भोजन के लिए आए । छवि के रूप में वेष धारण किया । सुरस वर्णन ' चालीसवे ' अध्याय में है ।। 119 ।। छवि की कथा को विस्तार से कहा है कवि ने , भक्तों से सदगुरु की अतर्क्य महिमा का निरूपण रमणीय और रसाल है ।। 120 ।। रुद्रावतार धारण करके क्रोध से जलते हुए अंगारे की तरह लाल होते हुए गालियों की बौछार कर दी बालकृष्ण विश्वनाथ देव पर श्री साईं ने ।। 121 ।। " नित्य नियम से श्री ज्ञानेश्वरी पढ़ो कहा साईं श्री हरि ने ? वाचन की शैली स्वप्न में कही थी । हेमाड ने ' इक्तालीसवें अध्याय में वर्णन किया है ।। 122 ।। त्रिपुंडलेपना (श्रीसाईं) ने भक्तों को साईं निधन की पूर्व सूचना दी थी । रामचन्द्र के निधन को टाला था वैसे ही तात्या के मरण को ।। 123 ।। साईं सद्गुरु निर्याण वार्ता से श्रोता में उद्विग्नता उत्पन्न हो जाती है । हेमाड के चित्त को व्याकुल करती है । पुनीत कथा ' बयालीसवें अध्याय में है ।। 124 ।। बाबा के निधन का वृत्तांत पूर्व अध्याय में अपूर्ण था , उसी को बिना शंका के हेमाड ने तैंतालिसवें ' व चौवालिसवें ' अध्याय में संपूर्ण किया ।। 125 ।। एक बार काका साहेब दीक्षित काका महाजनी व माधव के साथ नाथ भागवत वाचते

हुए शंकित मन हो गए ।। 126 ।। माधवराव के शंका का निरसन करने पर दीक्षित का चित्त संतुष्ट नहीं हुआ । आनंदराव पाखाडे ने स्वप्न कह कर शंका का निरसन किया ।। 127 ।। छत से टंगी तख्ते की पट्टी पर म्हालसापति क्यों नहीं सो सकते । साईं समर्थ ने शंका निवारण किया । कथा कुशलता ' पैतालिसवें अध्याय में है ।। 128 ।। एक जगह पर बैठे - बैठे सर्वत्र भ्रमण करना , लोगों को चमत्कार दिखाने के लिए काशी गया का विचित्र गमन , बाबा का अद्भुत चरित्र है ।। 129 ।। चन्दोरकर के पुत्र के विवाह पर्व में शामा को जाने के लिए संतमणि ने कहा । शामा ने बाबा को गया में छवि रूप में देखा ।। 130 ।। दो बकरों के पूर्वजन्म का कथन त्रिनयन साईं ने अपने मुख से किया । कथा वर्णन रम्य मधुर पवित्र व गहन है , छियालीसवें अध्याय में ।। 131 ।। ऐसे ही एक सर्प व मेढक की , जैसे लोभी धनिक व ऋणी की हो . पूर्वजन्म की सच्ची कथा कही । साईं ब्रह्मा , विष्णु , महेश हैं ।। 132 ।। बैर हत्या और ऋण चुकाने के लिए पुनर्जन्म होता है । बाबा का कथामृतपान कराने का कथन ' सैतालीसवें अध्याय में है ।। 133 ।। एक भक्त प्रवर शेवडे थे । एक अभाविक (आस्था न रखने वाले) सपटणेकर थे । एक की वकालत की परीक्षा , दूसरे पर किस प्रकार कृपा की , ' अड़तालिसवें अध्याय में है ।। 134 ।। हरि कानोबा मुम्बई के निवासी स्वामी सोमदेव कुटिल मन से संत की परीक्षा लेने शिरडी आए अभिमान धर कर ।। 135 ।। दर्शन होने पर मनोगत कह दिया । दोनों तत्काल लज्जित हो गए । साईं चरणों में चित्त आकर्षित हो जाने पर जन्मों के पाप समाप्त हो गए ।। 136।। बाबा के पास बैठे हुए , स्त्रीरूप देखकर विकार उपजा चन्दोरकर के चित्त में । यह घटना वर्णित है उन्चासवें अध्याय में ।। 137 ।। " तद्विद्धि प्रणिपातेन" इसके अर्थ का विस्तार किया है । उसका समर्थन रघुनाथ नंदन करते हैं ' पचासवें अध्याय में ।। 138 ।। हरि सीताराम दीक्षित , भक्त धुरंधर बालाराम , नांदेड के वकील पुंडलीक नाम के कैसे पहली बार शिरडी पहुंचे ।। 139 ।। एक एक कथा अद्भुत है श्रवण करने से श्रोता विस्मत होते हैं। भक्त के मन में सागर उमड़ने लगता है । वृत्त का वर्णन ' इक्यावन ' अध्याय में है ।। 140 ।। ग्रंथ सिंहावलोकन करके ' पसायदान ' मांगते हैं । खल का खलत्व नष्ट कर सज्जन का संरक्षण करें ।। 141 ।। सद्गुरु के चरणोंमें लीन होकर मस्तक लेखनी अर्पित करके ग्रन्थ को संपूर्ण करके , कृतार्थ लेखन ' बावनवें ' अध्याय में है ।। 142 ।। एवं श्री साई सच्चरित अध्याय पूर्ण करके श्री गोविंदराव प्रेम से उनकी चरण वंदना करते हैं। विश्व की गुरु माँ को नमन करते है ।। 143 ।। अध्याय का सार कहा जाता है उसे ही अवतरणिका कहते हैं। जो मुमुक्षु रसिकजनों के लिए कैवल्य का सन्मार्ग

है ।। 144 ।। शेला का फटा किनारा है इसलिए अपमान करेंगे । परन्तु दास की विनती है कि चतुर श्रोता एक बार सुनें ।। 145 ।। शेला नहीं सुन्दर सीधा बालक है उसे किसी की नजर न लगे इसलिए अवतरणिका रूपी काला टीका बालकृष्ण विश्वनाथ देव ने निर्भयता से लगाया है ।। 146 ।। ग्रन्थ सुन्दर षड्रस अन्न है अध्याय के अर्थ भिन्न पदार्थ हैं । पूर्ण पाचन के लिए मट्ठे का पान । इसीलिए अवतरणिका का लेखन ।। 147 ।। ग्रन्थ सदाफल देने वाली कामधेनु है, अध्याय स्वच्छ शुद्ध अवयव हैं । नजर न लगे इसलिए गले में काले मोतियों की माला रूपी अवतरणिका डाली है ।। 148 ।। इस प्रकार अब अध्याय पद्धति जो हेमाडपंत ने क्रमबद्ध किया है । उसे यथामति मैं कहता हूँ । सादर श्रोता सुनें ।। 149 ।। प्रारंभ में सद्गुरु स्तवन है , तदन्तर वेदान्त निरूपण साईं ब्रह्म स्वरूप का वर्णन है । तदन्तर अनुभव कथन है ।। 150 ।। मूलतः हेमाड विद्वान थे , उसपर सद्गुरु साईं की प्रसन्नता । ग्रन्थ रूपी पकवान बनवाने के लिए तत्क्षण प्रतिभा संपन्न कर दिया ।। 151 ।। इसकी मधुरता का जो अनुभव करेंगे उसकी जन्म मरण का चक्र बन्द हो जायेगा । निर्वाण पद की अक्षय संपत्ति से जुड़ जायेगा ।। 152 ।। हेमाड की रसाल वाणी व साईं प्रसाद का सच्चा लाभ , दूध व गन्ने के रस का मिश्रण हो गया । ग्रन्थ के वैभव का कौन वर्णन करे ।। 153 ।। बहुत ग्रन्थकार होते है , किन्तु प्रसाद वाणी का अधिकार नहीं होता है , जो वास्तव में विश्वाधार रमा पति सद्गुरु से प्राप्त होता है ।। 154 ।। यद्यपि विद्या अध्ययन किया । किन्तु ऐसे ग्रन्थ का लेखन नहीं होता है सद्गुरु कृपा बिना । यह वचन तीन बार सही हैं ।। 155 ।। " श्री साई सच्चरित " का कौन गुणगान कर सकता है । कितनी अनुपम है ग्रन्थ योग्यता ? मुमुक्ष जनों का परम सौभाग्य कि हेमाड पंत समान कर्ता मिल गया ।। 156 ।। जब तक ग्रन्थ पृथ्वी पर रहेगा तब तक भूमंडल में इसकी कीर्ति रहेगी । मुमुक्षुओं के कारण गोविंदराय ने समय से दिवाली कर दी ।। 157 ।। साईं सद्गुरु के प्रसाद से उत्पन्न यह ग्रन्थ बहुत धन्य है । मुमुक्ष जन को मान्य होगा तो दैन्य विचार दूर होगा ।। 158 ।। अनन्त जन्मों के संचित सुकृत से साई सेवा हो सकी । गोविन्दराव को ग्रन्थ लेखन का मधुर मेवा मिला ।। 159 ।। पंत हेमाड कट्टर भक्त थे । वेदांत विद्यासक्त कवि थे । साईं सद्गुरु के चरणों में अनुरक्त दिन रात रहते थे ।। 160 ।। वेदान्त विषय अति गहन है । विरक्ति भक्ति - ज्ञान को जोड़कर ऐसे ग्रन्थ का निर्माण करना गुरु कृपा बिना कठिन है ।। 161 ।। ये अध्याय नहीं स्वर्ण कोटर है उनमें कथा रूपी अनमोल रत्न जड़े हैं उनका अर्थ प्रभा किरण है गोविन्द राव के महाप्रयल से ।। 162 ।। नाना अध्याय सुगन्धित सुमन मालाएं हैं ,

जिन्हें गोविन्द रूपी प्यारी बाला ने निर्मल भाव से श्री सद्गुरु साईं के गले में अर्पित की है ।। 163 ।। नाना अध्याय शुद्ध स्वर्ण कुंभ हैं उनमें श्री साईं चरित गंगोदक भरा है, रघुनाथ पुत्र गोविंद राव ने मुमुक्षुओं के अहंकार को नष्ट करने के लिए ।। 164 ।। ग्रन्थ रणभूमि का आकाश है नाना अध्याय रूपी यश स्तंभों को खड़ा किया है । दर्प अभिमान दंभ रूपी असुरों का मर्दन किया है रघुनाथ पुत्र ने वुद्धि रूपी तलवार से ।। 165 ।। ग्रन्थ रत्न जड़ित पंचारती है अध्याय में कथार्थ स्नेहसूत्र ज्योति है विरक्ति शान्ति आकर संतनृपति (श्री साईं) की आरती उतारती है ।। 166 ।। ग्रंथ विश्व मोहिनी माया है , अध्याय ऊँचे खड़े बाहु हैं , कथार्थ शरीर के श्रृंगार हैं , (माया) सजकर साईं रूपी ब्रह्म का आलिंगन कर रही है ।। 167 ।। साई सच्चरित ग्रन्थ सम्राट हैं , रम्य अध्याय चतुर भांट है ; श्रद्धा ज्ञान वेदान्त है वैभव का विस्तार से वर्णन किया है ।। 168 ।। साईं सच्चरित परमार्थ का बाजार है एक एक अध्याय उसमें व्यापार केन्द्र है, अनुभव कथाएं एकत्र वस्तुएं हैं , कविवर ने सफाई से रचा है ।। 169 ।। ग्रन्थ गंगा का विराट पाट है । अध्याय रचना स्वच्छ घाट है । गुरु कृपा व अपार सामर्थ्य से कथारस का अमृत प्रवाह प्रबल है ।। 170 ।। ग्रन्थ नहीं यह कल्पवृक्ष है , संसार जनों को सूख प्रतीत होता है मुमुक्षु व पवित्र के लिए केवल मोक्ष है । अनुभव प्रत्यक्ष करके देखें ।। 171 ।। इसे ही खरा स्मारक कहते हैं जो संसार के तम व ताप का हारक है , मोह माया के नरक से तारने वाला है, अक्षय शान्तिदायक है ।। 172 ।। ग्रन्थकार राव गोविन्द साईं सद्गुरु के चरण कमलों के नित्य नव मधु मकरंद को भंवरा बन कर चखते हैं ।। 173 ।। जिनका उपनाम दाभोलकर है, अंग्रेज सरकार की सेवा में तत्पर थे । विद्या विनय आचार विचार अधिकार संपन्न थे ।। 174 ।। रखुमाबाई उनकी गृहणी थीं । सुशील पवित्र सद्गुणों की खान , पतिपरायण विनम्रवाणी , साईं चरणों में दृढ़ भाव ।। 175 ।। वेंगुर्ला के निकट ' दोभोली ' में मूल बस्ती थी । कवि के पूर्वजों ने ' केलवे ' ग्राम में तदन्तर वास किया , ।। 176 ।। शक 1781 (सन् 1859) शुक्ल पंचमी मार्गशीष मास में इन पुण्यराशि गोविंद का रघुनाथ भार्या लक्ष्मी के पेट से जन्म हुआ ।। 177 ।। गौड़ सारस्वत ब्राह्मण जाति गोत्र भारद्वाज वय सत्तर अषाढ शुक्ल नवमी तिथि शक 1851 को दिवंगत हुए (सन् 1929) ।। 178 ।। शक 1844 (सन् 1922) के चैत मास में ग्रन्थ आरंभ किया । बावनवा अध्याय शक 1851 (सन् 1929) के ज्येष्ठ मास में पूर्ण किया ।। 179 ।। गोविंद राव के एक ही पुत्र थे पांच पुत्रियाँ , (जिनमें) एक अविवाहित थी । सुत विवाहित था वैद्यक पढ़ रहा था । अविवाहित पुत्री भी वही पढ़ रही थी ।। 180 ।। अब पारायण

पद्धति कहते हैं । सप्ताह की सुगम रीति वैसे ही | गुरु चरित्र व अन्य ग्रन्थों में दिया है । श्रोता कृपा करके ध्यान दें ।। 181 ।। भक्ति भाव से पारायण करें । एक दो या तीन दिनों में पूर्ण करें । साई नारायण प्रसन्न होंगे ।। 182 ।। या मधुर सप्ताह करें पुण्य संपत्ति से जुड़ेंगे । साई मन की इच्छा पूरी करेंगे । भव भय का अन्त होगा ।। 183 ।। गुरुवार को आरम्भ करें । सुबह नित्यकर्म स्नानादि के बाद तत्काल अपने आसन पर बैठ जायें ।। 184 ।। रम्य विस्तीर्ण मंडप बनाएं । रभा , कर्दली वस्त्र आदि से बनाएं । ऊपर से सुन्दर आच्छादन डाल कर विभूषित करें ।। 185 ।। उसमें एक उच्चासन रख कर भिन्न - भिन्न रंगों व आकार वाली रंगपूर्ण रंगोली उसके चारों ओर बनाओ जो आँखों को अच्छी लगे ।। 186 ।। साई सद्गुरु की प्रतिमा अथवा सुन्दर छवि लेकर उच्चासन पर ध्यान से रख कर प्रेम भाव से वंदन करें ।। 187 ।। रेशमी वस्त्र से ग्रन्थ बांधकर सद्गुरु के पास उसे रखकर पंचोपचार से दोनों की पूजा करके पाठ आरम्भ करें ।। 188 ।। आठ दिन व्रत रहें , गोरस या फलाहार करें अथवा भुने हुए धान्य एक बार रात में ।। 189 ।। पूरब दिशा में मुख करके मन में सद्गुरु की मूर्ति का ध्यान करके प्रसन्नचित्त शांत मन से ग्रंथ वाचन करें ।। 190 ।। आठ , आठ और सात , आठ , छ :, आठ और सात , इस प्रकार सात दिन पाठ करें । अवतरणिका केवल आठवें दिन ।। 191 ।। आठवें दिन व्रत पूर्ण करके साईं नारायण को नैवेद्य अर्पण करें । मित्र - बन्धुओं व ब्राह्मणों को सुग्रास भोजन करावें । उन्हें यथा शक्ति दक्षिणा दें ।। 192 ।। वैदिक ब्राह्मणों को आमन्त्रित करके रात में वेद का उच्च स्वर में पाठ करावें । दूध शक्कर का पान प्रेम से करावे उनके मन को संतुष्ट करें ।। 193 ।। अंत में सद्गुरु चरणों की वंदना करें । उन्हें उचित दक्षिणा अर्पित करें । जिसे शिरडी संस्थान के खजांची को भेजें , संस्थान निधि को बढ़ाने के लिए ।। 194 ।। इससे साईं भगवान प्रसन्न होंगे । भक्तों को पसायदान देंगे । भव भय सर्प को नष्ट करेंगे | मोक्ष के खजाने को दिखायेंगे ।। 195 ।। श्रोता संत मेरे आश्रय हों । अवतरणिका विसरे तो विसरने दें , ग्रन्थ के अर्थ पर नजर रखें । यह किंकर चरणों में वंदना करता है ।। 196 ।। श्रोता सज्जन हैं काल का अंत करने वाले हैं । इस प्रकार दास पर दया करते रहें , तुम्हारे चरणों पर मस्तक रखकर बाबा का बाल प्रार्थना करता है ।। 197 ।। जो जो अधिक कमी है वह वह मेरी मुझे दे दें । सार लेकर चित्त में विराजो । आप श्रोता ऐसा करें ।। 198 ।। साईं शिव नंदन को नमन , साईं कमल आसना को नमन , साईं मधुसूदन को नमन , पंचवंदना (शिव) को नमन ।। 199 ।। साई दत्तात्रेय (अत्रिनंदन) को नमन , साईं इन्द्र को नमन , साईं निशा

रमण (चन्द्र) को नमन , अग्नि नारायण साई को नमन ।। 200 ।। साईं रुक्मिणीवरा (विट्ठल) को नमन , साईं चिद्भास्करा को नमन , साई ज्ञान सागरा को नमन , ज्ञानेश्वर श्री साईं को नमन ।। 201 ।। अवतरणिका वाक्पुष्पांजलि हैं वैसी ही नमन नामावली प्रार्थी गुरुपद कमलों में अर्पित करता है साईं माँ को संतुष्ट करने के लिए ।। 202 ।। इति श्री साईसदगुरु प्रेरित दास बाबा बाल विरचित " श्री साई सच्चरित " का " अवतरणिका " नामक तिरपनवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ ।। ।।

।। श्री सद्गुरुसाईंनाथार्पणमस्तु ।। शुभं भवतु ।।

|| समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।।

।। श्री सद्गुरु साईं बाबा के वचन ।।

शिरडी में जिसके पड़ते पांय, टलते अपाय सब उसके ।। 1 ।।

मेरी समाधि की सीढ़ी चढ़ेगा जो, दुःख वह हरेगी सब उसके ।। 2 ।।

यद्यपि यह शरीर गया मैं छोड़कर, फिर भी दौड़ता हूँ भक्तों के लिए ।। 3 ।।

संकल्प पूरा करती है मेरी समाधि, धरो दृढ बुद्धि मेरे ऊपर ।। 4 ।।

नित्य मैं जीवंत , जानो यह सत्य , पाओ प्रतीति नित्य अनुभव से ।। 5 ।।

शरण मेरी आया , और खाली गया , दिखाओ , दिखाओ ऐसा कोई ।। 6 ।।

जो जो मुझे मजे , जिस जिस भाव में , तैसा तैसा पावे मुझे वह ।। 7 ।।

तुम्हारा मैं भार ढोऊँगा सर्वथा , न हों अन्यथा वचन मेरे ।। 8 ।।

जानो, यहां सहायता है सबके लिए, माँगे जो जो उसके लिए वह वह मिले ।। 9 ।।

मेरा जो हो गया काया वाचा मन से , उसका मैं ऋणी सर्वकाल ।। 10 ।।

' साई ' बोले जो ही वही हुआ धन्य , हुआ जो अनन्य मेरे पावों में ।। 11 ।।

(अभंग लेखन - श्रीयुत मोहनीराज पंडित,

पेन्शनर मामलेदार , नासिक।)